कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय, वाराणसी।

कादम्बिनी

भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका



और आठ लाख प्रबुद्ध पाठक

पृष्ठ २३४ मूल्य मात्र ४ रुपये

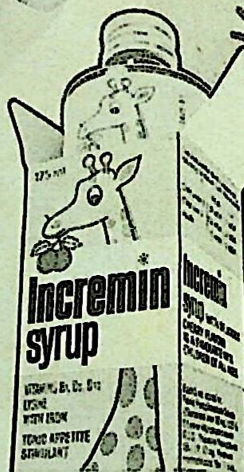
हिन्दुस्तान टाइम्स प्रकाशन

ंबर '७६ दीपावली विशेषांक

बढ़ता बचपन बलवान बने-
इनक्रिमिन* टॉनिक से

बचपन के दिन, फलने-फूलने, बढ़ने के दिन! इन दिनों बच्चों का शरीर फूल की तरह खिलता है- विकसित होता है, इन्हें इनक्रिमिन सिरप ज़रूर दीजिये। फिर देखिये, खाने से आनाकानी के बजाये इनकी भूख कैसे जाग उठती है—खाया पिया तन को लगने लगता है। लाभदायक विटामिन और लोहतत्वों से परिपूर्ण इनक्रिमिन में, विशेष अमीनो-एसिड, लॉयसिन भी शामिल है- जो आहार के सभी पोषक तत्वों को ग्रहण करने में सहायता देता है।

वाह वाह! क्या कहने!
घपाघप वो खाये-
झटपट बढ़ता जाये!



इनक्रिमिन* टॉनिक

ड्रॉप्स्— ६ महीने मे २ साल के बच्चों के लिये
सिरप—१४ साल तक के बच्चों के लिए

अधिक आहार से अधिक बढ़ाये-
खाया पिया अंग लगाये!

डाक्टरों का विश्वासपात्र नाम Lederle




ADVANI-OERLIKON

५४.६५





दिवाली आये
प्रकाश फैलाये
खटाऊ वॉयल
मनको लुभाये,
तनको सजाये
खटाऊ
वायल्स



दि खटाऊ मकनजी
स्पिनिंग एण्ड वीविंग कंपनी लिमिटेड
KMS/49-L/PREM ASSOCIATES/HIN.

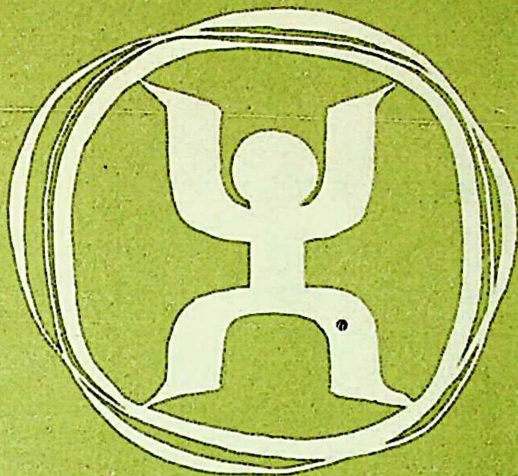
त्यौहार

भारतीय परम्परा का सुन्दर अंग



भारतीय महिला के
मनोरम बालों का पारम्परिक रहस्य

Shilpi DM-4A/74 hin



समय के हस्ताक्षर

दीपावली के अवसर
पर 'कादम्बिनी' के
प्रिय पाठकों, लेखकों
और शुभेच्छुओं को
सम्पादक की अमित
स्नेह कामनाएं—
राजेन्द्र अवस्थी

वर्ष १७, अंक १
नवम्बर, १९७६

कादम्बिनी

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

संपादक
राजेन्द्र अवस्थी

कथा-साहित्य

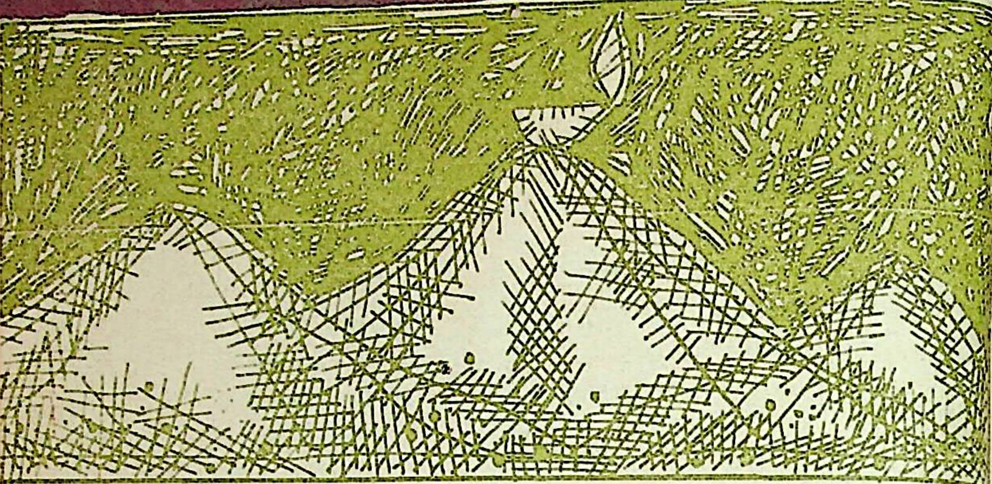
कविताएं

सार-संक्षेप

मुखपृष्ठ : छाया—लड़की : चन्द्र मीरचंदानी; सूरजमुखी (गंगोत्री में दस हजार फुट की ऊंचाई पर) : एम. एस. अग्रवाल

स्थायी स्तंभ

संपादकीय सहकर्मी
संयुक्त संपादक : शीला झुनझुनवाला
सह-संपादक : दुर्गाप्रसाद शुक्ल
उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा, चित्रकार : सुकुमार चटर्जी



काल-चिंतन

—वह रात भर दिये जलाती रही।

—वह रात भर तेल भरता रहा।

—वे सारी रात फुलझड़ियां चलाते रहे।

—बाहर रात्रि अंधकार का कफन ओढ़े निश्चित सोती रही। उसकी चादर में जरा भी न सरसराहट हुई और न सलवटें पड़ीं।

—दूर कोई बार-बार गुरुदेव रवीन्द्रनाथ का गीत गा रहा था: 'सूरज की रोशनी का भार उठाये एक नन्हा-सा दिया अंधकार को भेद रहा है!'

—क्या सचमुच अंधकार को भेदना इतना आसान है?

—अंधेरा और प्रकाश पृथ्वी की परिक्रमा का एक क्षण है। कोई पृथ्वी की गति को रोक सका है?

—परंपराओं से बातें करने के हम आदी हो गये हैं।

—कान फोड़ती परंपराओं में अंधेरे को डूबते देखने का एहसास खुनखुने के साथ खेलना ही तो है!

—खेलना बुरा नहीं है, उससे सिद्धियों और सफलताओं की सार्थकता को खोजना अपने को भ्रम में डालना है।

—अंधेरा और प्रकाश अपने-अपने क्षणों में सार्थक हैं। एक दिया यदि अंधेरे को पी सकता तो जलता हुआ फासफोरस समूचे सूरज को अंधेरे में उतार सकता!

—सब कुछ इतना आसान नहीं है। तब? आइए, विचार किया जाए वह दिया कहां है, कौन-सा है जो सही रोशनी देता है और अंधकार को उसी तरह खींचने की ताकत रखता है, जैसे गरम हवा सारी नमी को एक क्षण में पी जाती है।

—दूर पहाड़ की चोटी पर जलता हुआ दिया पथ-प्रदर्शक नहीं है, क्योंकि उसका अस्तित्व किसी और के हाथों में है।

—दूसरों के गंतव्य को अपना संबल मानकर चलनेवाले उनसे बेहतर नहीं, जो दूसरों की जूठन पर पलते हैं।

—फूलों की सुगंध चुराकर नकली सेंट और इत्र बनाये जा सकते हैं, उन सेंटों और इत्रों से फूल नहीं बनाये जा सकते।

—राम, कृष्ण, ईसा और बुद्ध के बताये मार्ग जीवन की विभीषिकाओं में मरहम लगा सकते हैं, हमें वह स्थान नहीं दे सकते।

—इसीलिए अन्वेषक, शोधकर्त्ता, खोजी और मौलिक चिंतक अपने पदचिह्न अपने आप बनाते हैं। जीवन-निर्माण की इस कठोरतम विभीषिका में वे संघर्षों की चेतना से बीहड़ अंधेरे को मुट्ठियों में दबाकर पहले तेल निकालते हैं और फिर अपनी आत्म-ज्योति से उसमें वह दीपक जलाते हैं, जो उनकी समूची आत्मा और सचाई को आलोकित करता हुआ, उनके व्यक्तित्व को उद्भासित करता है।

—अंधकार पर विजय पाना उतना ही कठिन है, जितना प्रकाश को पराजित करने के सपने देखना है।

—वास्तव में आसपास की दुनिया हमें इतना आत्मसात कर लेती है कि हम सचाई को खोज नहीं पाते।

—हमारे भीतर एक दीपक निरंतर जलता रहता है, जो अंधेरे कमरे के कोने में चमकती हुई हीरे की कनी की तरह सदाबहार प्रकाश से ओतप्रोत है।

—हीरे की कनी को जितना तराशा जाएगा, प्रकाश उतना ही बढ़ेगा।

—उस भीतरी दीपक को छोड़कर कस्तूरी मृग की तरह हम नकली दीपकों के प्रकाश में परंपराओं की चट्टानें तोड़ा करते हैं।

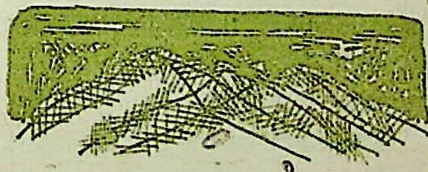
—दीपावली के साथ कितने ही सार्थक संदर्भ जोड़े जाएं, वह वास्तव में किसी सामंतशाही परंपरा का प्रतीक है।

—ऐसा न होता तो आज भी लक्ष्मी अंधेरे कमरों में रोशनी से दूर कैद न होती।

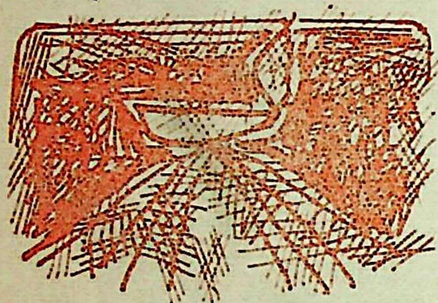
—स्वर्ण यदि प्रकाश का प्रतीक होता तो स्वर्ण-मुद्रापतियों के अक्षर इतिहास के अमर पृष्ठों में चमकते हुए दिखायी देते।

—सदियों से निरंतर प्रवहमान सांस्कृतिक चेतना के केंद्र-बिंदु वे व्यक्तित्व रहे हैं जिनके पास न ऊपरी दिखावे के लिए कोई दीपक था और न जिनको लक्ष्मी की तलाश थी।

—वे बीहड़ वनों में वनचारी मृगों की तरह



उन्मुक्त उछालें भरते हुए अपने पैरों से एक गीत को जन्म देते रहे, जो श्रम और सचाई का गीत था, जो उनके भीतर की ईमानदारी से उद्भूत हुआ था और जो हवा के साथ बहती रोशनी में दूर-दूर तक यूं गूंजा था जैसे वादियों में आवाजें झाईं बनकर गूंजती रहती हैं।



●●

—हम अपने प्रश्न के उत्तर के कगार पर खड़े हैं—यही वह दीपक है, जिसके प्रकाश में सार्थकता है।

—यह ईमान का दिया है।

—ईमान से टूटा आदमी छल, प्रपंच, संकट अनास्था, अश्रद्धा और अंधकार से ग्रसित होता है। उसकी नियति वृक्ष से टूटे हुए उस फल की तरह है जिसे अपने जीवन का सारा सत्व देकर भी दूसरे आसानी से उठाकर खा लेते हैं।

—ईमान का विरोधी शब्द नहीं है।

—व्याकरण ने जो शब्द दिया है वह निरर्थक है, व्याकरण आखिर में एक मशीनी प्रक्रिया है। मौलिकता का वह विरोध करती रही है और अपने विरोध से हमेशा पराजित भी हुई है।

—सत्य तो यह है कि ईमानदारी से अधिक प्रकाशित और आलोकित शक्ति दूसरी नहीं है।

—वह निर्भीक आत्मा का अभिनंदन-द्वार है और मनुष्य-चेतना के प्रकाश की सत्य-किरण है, जो सहस्र सूर्यों की किरणों से भी अधिक दीप्तमान है।

●●

—आइए, रोज नहीं तो आज इस सचाई को हम पहचान लें।

—परंपराओं की मर्यादा बनाये रखने के लिए हम भले ही आज भी हजारों दीपक जला लें, लेकिन अपनी पहचान खोजने की कोशिश हम उनमें न करें।

—हमारे अंधेरे कमरे के कोने में जो हीरे की कनी की तरह प्रज्ज्वलित ज्योति-पुंज है, वह है ईमानदारी!

—हमारे भीतर की ईमानदारी दुनिया के समूचे अंधकार से एकसाथ लड़ने की सामर्थ्य रखती है।

—तो हम केवल एक दीपक ही जलाएं और उसे ही अपनी जीवन-यात्रा का पथ-प्रदर्शक मान लें।

—ईमान के दीपक से बड़ा कोई दिया आज तक न स्थिर जल सका है और न अंधेरे को पी सका है।

राजेन्द्र अवस्थी

नाच रहे हैं सूर्यपुत्र

● शीला झुनझुनवाला

अपने सात घोड़ों के रथ पर बैठे-बैठे सूर्य देवता जब थक गये तब उन्हें विश्राम की आवश्यकता महसूस हुई। उन्होंने दर्पभरे स्वर में पूछा—

"है कोई जो मुझे अवकाश दे सके ?"

सूर्य के स्वर की प्रतिध्वनि दिशाओं में गूंज गयी। अंधकार की आशंका लोगों के दिलों को कंपित करने लगी। सभी देवता वारी-वारी से एक-दूसरे का मुंह देखने लगे। किसमें है इतनी क्षमता कि वह अंधकार को पराजित कर सके ?

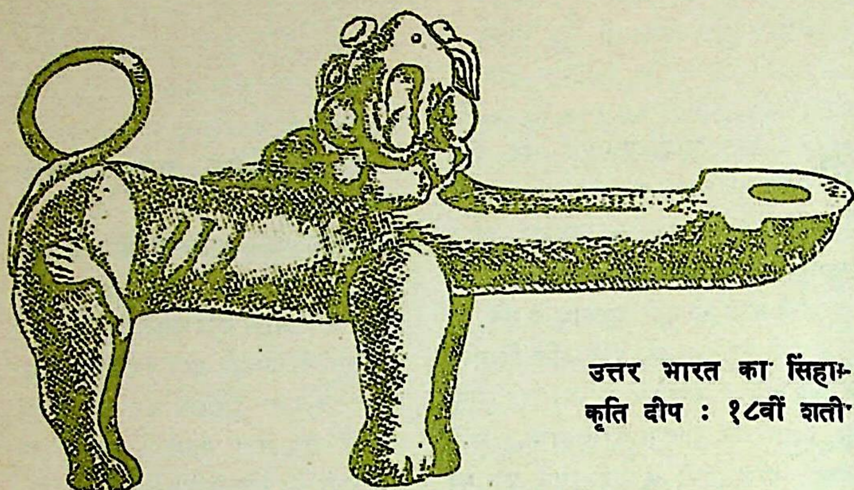
आदिम मानव गुफाओं और कंदराओं में रहता था। अंधकार उसके लिए भय का राक्षस था—डरावना, वीभत्स और आशंकाओं से भरा—मानव को उसकी अपनी सीमाओं में बंदी रखनेवाला दानव...

सूर्य के दर्प-भरे प्रश्न का उत्तर दिया था अनंत-अपार क्षितिज पर उभरते एक छोटे-से दीप ने। अक्षमता की कालिख पुछ गयी थी देवताओं के चेहरे पर से। तभी दीप का जन्म हुआ था—सूर्य के ही एक अंश से—सूर्यांश संभवो दीपः।

भय के राक्षस का सामना किया मनुष्य की अपनी विकास-ऊर्जा ने। उसने

दक्षिण भारत का एक दीप : १८वीं शती, तेल वापिकाओं की शक्ल में संगीतज्ञ बैठे दिखायी दे रहे हैं





उत्तर भारत का सिंहाकृति दीप : १८वीं शती

झट अग्नि का आविष्कार कर डाला—लपलपाती जिह्वावाली अग्नि, जिसका भोजन घी और लकड़ी है ।

सूर्य प्रकाश देता है, इसलिए देवता है । अग्नि भी प्रकाश देती है और जीवन का पोषण करती है, इसलिए अग्नि भी देवता है—घर, ग्राम और बलि का स्वामी, जिसके लिए ऋग्वेद में कहा गया है—'अग्निमीले पुरोहितम्' ।

वेद में सूर्य और अग्नि दोनों की महिमा गायी गयी है । देवताओं को अर्पित अर्घ्य उन तक पहुंचानेवाले के रूप में यज्ञ की अग्नि, मानवों और देवताओं के बीच संपर्क का माध्यम बनी । इसी यज्ञ-अग्नि से दीप की लौ का उद्भव हुआ ।

अग्निर्ज्योतीरविज्योतिश्चंद्रज्योतिस्तथैव च ।
उत्तमः सर्व ज्योतिषां दीपोऽयम् ।

—स्कंदपुराण

सूर्य और अग्नि के प्रतीक के रूप में दीप की उपस्थिति शुभ और मंगलदायक मानी गयी । पवित्र दीप में देवताओं का वास होता है, अतएव पूजा एवं अर्चना में आरती के दीपों की उपस्थिति अनिवार्य है । दीप समर्पण का प्रतीक और सघन अंधकार में सम्यक ज्ञान का संकेत देनेवाला है, अतः इसके बिना हर प्रार्थना अधूरी है । इस प्रकार की अनेक धारणाओं ने दीप को भारतीय संस्कृति का एक अभिन्न अंग बना दिया ।

एक बार दीप के पवित्र रूप का भान होने की देर थी कि उसे कलात्मक बनाने के प्रयास प्रारंभ हो गये । ऐसे सब प्रयासों को हम शिवम् के साथ सुंदरम् के समावेश की संज्ञा दे सकते हैं ।

दीपों का क्रमिक विकास कैसे हुआ और किन-किन युगों में किस तरह के दीपों

की प्रधानता रही—अपने आपमें यह बड़ा रोचक अध्ययन है। प्रारंभ में केवल प्रस्तर-दीप या सीप के दीप ही बनाये जाते थे। कालांतर में मृण-दीप या मिट्टी के दिये बनने लगे। रामायण और महाभारत-काल तक स्वर्णदीप और रत्नदीप बनने लगे थे। वाल्मीकि-रामायण के सुंदरकांड में 'रत्नदीप' का उल्लेख आता है। महाभारत में भी व्यास ने द्रोण-पर्व में रत्न-माला नाम से रत्नदीपों की पांत का विशद वर्णन किया है।

कालिदास ने इंदुमती-स्वयंवर के आख्यान में लिखा—

संचारिणी दीपशिखेव रात्रौ
यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।

—रघुवंश

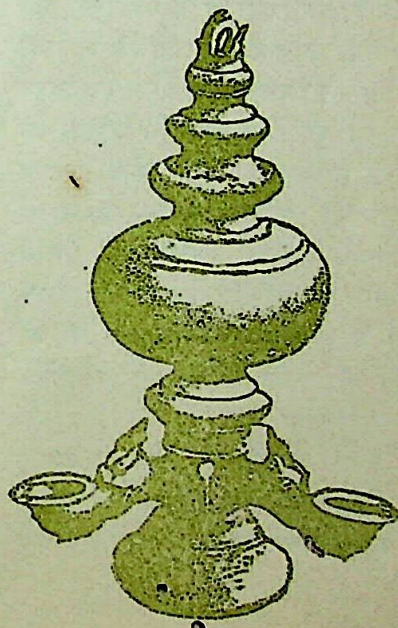
अर्थात्, स्वयंवर में इंदुमती दीपशिखा-जैसी घूम रही थी। आशा से भरे जिन राजाओं की ओर वह बढ़ रही होती, उनके आनन जगमगा उठते और जब आगे निकल जाती तब उन पर अंधेरा छा जाता।

साहित्य में ही नहीं, लोककथाओं में भी दीपक का स्थान सुरक्षित रहा—दीपा-रानी की ढेरों कहानियां और सैकड़ों आख्यान। दीपारानी घर की हर बात पर चौकस दृष्टि रखती हैं और षड्यंत्रों और बुरे प्रभावों से लोगों की रक्षा करती हैं। दुष्ट आत्माओं को खदेड़कर वातावरण को शुद्ध करना भी उनका ही काम है।

समय और स्थान के अनुसार दीप के आकार-प्रकार में भी परिवर्तन होता रहा। प्रारंभ में दीप का आकार कटोरे-जैसा होता था। उसमें वाती के लिए एक चोंच-जैसी बनी रहती थी। धीरे-धीरे इस आकार को अनेक कलात्मक रूप दिये गये। उदाहरण के लिए, दीपों के आसन को, जो गोल या आयताकार होते थे, प्रसिद्ध मंदिरों के शिल्प से प्रेरणा लेकर विविध आकारों में बनाया जाने लगा। पूजा-अर्चना में प्रयुक्त होनेवाले दीपों के कई नामकरण हुए जैसे घर में रोज होनेवाली पूजा का दीप 'निरंजन', अर्चना-दीप, आरती-दीप, मंदिर के प्रतिमा-कक्ष का दीप, नंदा-दीप, जिसे गर्भगृह का दीप भी कहते हैं।

कुछ मंदिरों में सुंदर नारी-आकृति के दीप भी मिले हैं। ये दीप धातु या प्रस्तर

कीर्तिमुख दीप : दक्षिण भारत, १८वीं शती



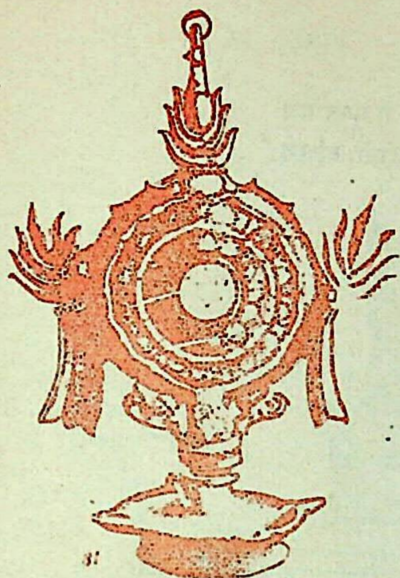
के बने हैं और ७ इंच से लेकर ७ फुट तक ऊंचे हैं।

मंदिरों के परिसर में प्रवेशद्वार के आगे सजग प्रहरी की भांति दीप पाये गये हैं। ये पत्थर के ऊंचे खंभों के आकार के हैं और इनकी ऊंचाई अकसर ४० से १५० फुट तक है। इस कोटि में एलोरा के कैलाश-मंदिर के एक ही पत्थर से बने दीप-स्तंभ विशेष उल्लेखनीय हैं। इन दीप-स्तंभों में दीप रखने के लिए बड़ी संख्या में आले आदि बने होते हैं। पांत की पांत अनेक दीपों से सजे ये दीप-स्तंभ वातावरण को यज्ञ-धूम-सा पवित्र कर देते हैं। अब होती है आरती। आरतियों के भी विभिन्न प्रकार हैं—कोई छोटी, कोई लंबी, कोई चौरस तो कोई तिकोनी। किसी में चार वाती जल रही होती हैं तो किसी में केवल एक। इन आरतियों के हत्थों पर विभिन्न आकारों में शेषनाग, मत्स्य, कमल, कालियादहन के कृष्ण सुशोभित होते हैं। आरती की लौ के माध्यम से उपासक अपनी आत्मा आराध्य को समर्पित करता है—**तमसो मा ज्योतिर्गमय**—मुझे अंधकार से प्रकाश की ओर ले चलो और सृजनकर्ता, पालनकर्ता के आलोक से आरती की लौ की भांति ही उसका मानस भी प्रकाशपुंज से भर उठता है।

दीपों का इतिहास बहुत ही पुराना है। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाइयों से पता चलता है कि पांच हजार वर्ष पहले भी शहर की मुख्य सड़क के दोनों ओर दीप-स्तंभ रखे जाते थे। घरों के प्रवेशद्वार पर छोटे दीपक रखने की प्रथा थी। इन दीपों का आकार गृहस्वामी की समृद्धि के अनुरूप होता था। साफ-सुथरे लिपे-पुते आंगन में तुलसीचौरा के समीप गृह-वधू के सुमंगल हाथों से दीप जलाने की प्रथा अब भी कहीं-कहीं देखी जा सकती है। विश्वास है कि गोधूलि-वेला में जब गायें घर लौटती हैं, अपने साथ लक्ष्मी लाती हैं, तब उनका स्वागत यदि आंगन में दीप रखकर किया जाए तो अंधकार में लक्ष्मी कहीं नहीं भटकेगी। संभ्रांत परिवारों में दीप घर के बाहर



जंजीर से लटका कमल दीप : १७वीं शती



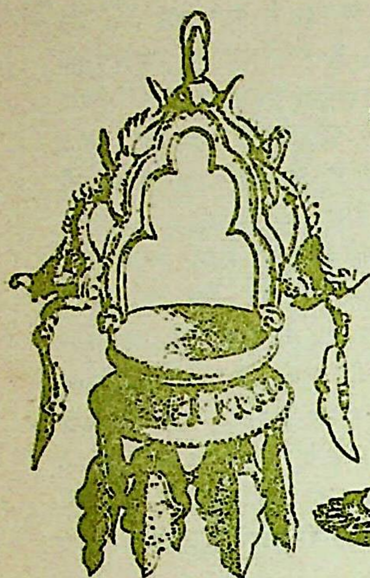
वैष्णव दीप : १७वीं शती

दालान में जलाया जाता था। पीतल के बने इन दीपों को 'वृंदावन' कहते थे।

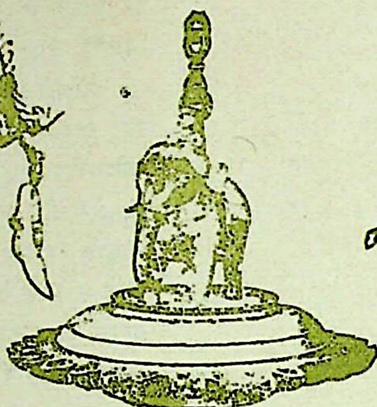
आंगन और वाह्य - कक्ष के अतिरिक्त भी हर कमरा और गलियारा प्रकाश से आलोकित रहता था। गलियारों और कमरों में रखे दीपों को 'समाई' की संज्ञा दी गयी। शायद यह फारसी शब्द 'शमा' का अपभ्रंश हो। इन दीपों के विभिन्न आकार के आसन होते थे तथा इनमें अनेक वातियां रखने के स्थान वने होते थे। कीड़े-पतंगों से बचाने के लिए इनके आवरण विभिन्न आकारों के होते थे, जिनमें प्रमुख थे मोर, हाथी, सर्प आदि। कुछ 'समाइयां' प्रसिद्ध मंदिरों की अनुकृतियां थीं। नेपाल में इस प्रकार के दीप बहुलता से पाये जाते हैं। इन 'समाइयों' में बने चित्रों में प्रमुख आकृतियां हैं—शुक, सिंह, गणेश या पीपल के पत्ते। नारी-आकृति के सिर, स्कंध या हाथों में दीप लिये आकृतियां भी मिलती हैं।

• मंदिरों और बड़े भवनों के प्रवेशद्वार पर ललाट-विंब बने होते थे, जिनमें गणेश-दीप या गजलक्ष्मी-दीप रखे जाते थे। ऐसे दीप प्रायः गज या अश्व या वृषभ आकृति पर रखे होते थे। कभी-कभी खड़ी नारी-आकृति के एक या दोनों हाथों में दीपक होता था। नृत्य-मुद्रा में भी नारी-आकृति दिखायी पड़ती है। इसे दीपांगना कहते थे।

दीपों के आकार में सर्वाधिक प्रयोग गज और सिंह आकृतियों में हुआ। कहीं गज की सूंड़ में छोटा-सा दीप, कहीं गज की पीठ पर वैठे गणेश के रूप में वड़ा दीप, कहीं मोर की शक्ल का दीप और उस पर सूंड से नमस्कार करते गज, कहीं छोटा गज-दीप, कहीं छत्तीस वातियों से युक्त वड़ा गज-दीप मिलता है, जिसमें घी या तेल वातियों तक पहुंचाने के लिए अनेक वाहिकाएं हैं। इनके अलावा हर कमरे की सज्जा और कार्य के अनुसार भी दीपों के रूप वदले। संगीत-कक्षों के लिए वाद्यों के आकार के दीप और नृत्य-मुद्रा के दीप भी वने। लटकाये जानेवाले दीपों के भी विभिन्न प्रकार मिलते हैं, जो कलाकार के अंतस की कामना को



३६ बातियों से युक्त गज दीपः १६वीं शती, दक्षिण





कीर्तिमुख दीप : नेपाल १८वीं शती,

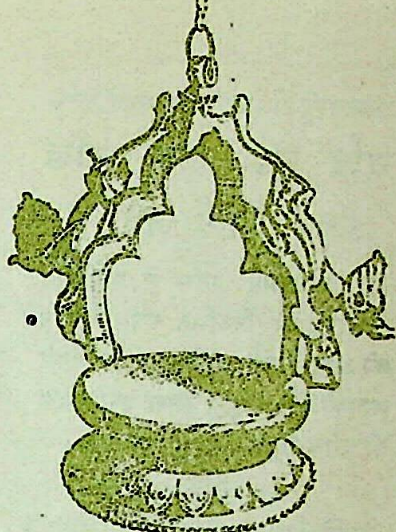
गजारूढ़ दीप-लक्ष्मी, गुजरात

दर्शाते हैं। एक दीपक में भागती हुई एक अल्हड़ किशोरी की आकृति है तो दूसरे में वाद्य वजाती सुंदरी की।

दीप की यात्रा अधूरी रह जाएगी, यदि मुगल-काल के दीपों की वानगी न ली जाए। समस्त उत्तर-भारत में पिछली कुछ शताब्दियों में पाये जानेवाले दीपकों पर मुगल-प्रभाव पूर्णतया स्पष्ट है। ये दीपक अकसर पीतल के वने होते हैं, जिनकी सतह पर वारीक, सघन पच्चीकारी और ऊपर गुंवद या मीनार होती है। लटकाये जाने पर दीवार और भूमि पर प्रकाश और छाया की आंखमिचौली खेलते हैं। मुग़ल-काल में वेगमों के हरम दीप-क्रीड़ा के केंद्र थे। गरमी की उमस-भरी रातों में जव नींद नहीं आती थी तव ये वेगमें घवराकर महलों से वाहर अपने क्रीड़ा-उद्यान में निकल आती थीं। सुगंधित जल से हमाम भरवाये जाते। उनके दोनों ओर छोटे-छोटे दीपों की कतारें होतीं। ये दीप रेशम के झीने आवरण से ढके होते। इनका झिलमिल प्रकाश पानी में इंद्रधनुषी प्रकाश फेंकता। पानी के दोनों ओर से वेगमें झीने पतले मलमल के वसन पहने उतरतीं और क्रीड़ा करतीं—जव तक कि रात गहरा नहीं जाती और हवा में खुनकी और नमी नहीं आ जाती। दीपों के इस खेल के पीछे



गौरय्या आकृति
दीप :
मध्यभारत
१८वीं शती



महराबदार हैंडिलों से युक्त लटकता दीपक

और रूमानी रातों के अंधियारे में कितने रहस्यों का जन्म होता था—कौन जाने ?

महलों के गलियारे और चौवारों में दीपों ने रहस्य की सृष्टि की तो ऊंचे बांस पर आकाशदीप लटकाने की परंपरा ने पता नहीं कितने भूले-भटके यात्रियों को एकांत पथ के अंतिम छोर पर जलती मशाल की भांति रास्ता दिखाया।

"प्रत्येक लौ दैवी प्रकाश अर्थात सूर्य से उत्पन्न होती है और उसकी ही पवित्रता का अंश है। इस प्रकार प्रकाश की लौ पराशक्ति की ज्योति है।"—'आईने-अकबरी' के ये भाव शायद अकबर को मिले थे अपनी हिंदू रानी जोधाबाई से। तभी अकबर जब कभी सलतनत के दौरे पर होता तब शाही तंबू के आगे १२० फुट ऊंचे स्तंभ पर आकाश-दीप जलवाना न भूलता। शायद वह कार्तिक में आकाशदीप जलाने की प्रथा से ही प्रभावित था।

पूजा, विवाह या अन्य कोई पवित्र अनुष्ठान हो . . . भारतीय परंपरा में सर्वप्रथम दीप जलाया जाता है—समारोह के साक्षी-रूप में रहनेवाला यह साक्षी-दीप। कुछ विशेष मांगलिक अवसरों पर आटे के दीप बनाने की परंपरा भी है। चैत्र और शारदीय नवरात्र में हर घर उत्सव के रंग से रंग उठता है। इस अवसर पर जला नंदा-दीप पूरे नवरात्र की पूजा की ऊर्जा के रूप में जन-जीवन को शक्ति और उल्लास देता है।

और फिर आती है दीपावली की रात्रि। दीपों की उजास धरती और आकाश को धवल कर देती है। दीप अपनी पूरी गरिमा और संभ्रम से प्रतिष्ठित होते हैं। चार दिवस के इस त्योहार

जनवरी से एक और नया स्तंभ

यदि मुझे एक लाख रुपये मिल जाएं ?

इस लोकप्रिय स्तंभ में प्रकाशित विचारों को नियमित रूप से पढ़ने की आप आदत डालिए ताकि कभी आपको इस तरह १ लाख रुपये मिलें तो सोच-विचार न करना पड़े ।

पर तीसरे दिन लक्ष्मी की पूजा होती है। साथ में रहती है दीपलक्ष्मी।

दीपों की परंपरा में दीपदान का अपना स्थान है। पुरुषोत्तम मास में पवित्र नदी के मनोरम तट पर सूर्यास्त के बाद सैकड़ों दीप पत्तों की बिछावन पर, लहरों पर चढ़ते-उतराते दिव्य सृष्टि की उत्प्रेरणा करते हैं—लगता है लहरों पर आलोक के फूल खिल गये हैं।

दीपों से संबंधित अगणित कथाएं, कहावतें, मुहावरे भारत की सभी भाषाओं और साहित्य में सुभाषित हैं। प्रेमी से मिलने जा रही नायिका ने साथ के लिए दीपक ले लिया है और उसे हवा से बचाने के लिए आंचल से ढक रखा है। नायिका के वक्ष का सौंदर्य निकट से देखकर रोमांचित दीप कांपने लगा :

दीपोवातभयान्नीतः कामिन्या वसनान्तरे
दृष्ट्वा तु कुचसौंदर्यं शिरः कम्पयते मुहुः

रात के अंधेरे में तिल-तिल जलती बाती की आचार-संहिता भी क्लिष्ट और रहस्यपूर्ण है। दीपशास्त्र में दीप जलाने की विधा का शास्त्रोक्त निरूपण है। शुद्ध हाथों से शुद्ध पात्र में, शुद्ध बरतन से लिये गये स्नेह या घृत द्वारा सात लपेटे पड़ी बाती से दीपक जलाना चाहिए।

दीप भविष्य के बारे में शुभ और अशुभ संकेत भी देते हैं, जिन्हें निपुण पंडित ही जानते हैं। पुरुषोत्तम-माहात्म्य के अनुसार क्षीण होती लौ धननाश की सूचक, श्वेत लौ अन्ननाश की, गहरी लाल युद्ध की और काली मृत्यु की सूचक होती है।

दीपक जलते-जलते बुझ जाए तो अशुभ होता है। हाथ से बुझाना भी निषेध है। दीपक सदैव हाथ हिलाकर या आंचल की ओट से बुझाते हैं। गाय के घी से जलाया दीपक सर्वोत्तम माना गया है। फूंक मारकर दीपक को बुझाना या दीपक का गिर जाना अंधकारमय भविष्य का द्योतक है।

दीपक का महत्त्व जीवन के साथ जुड़ा है। जीवन को गति देनेवाली शक्ति है ऊष्मा और दीप जीवन-ऊष्मा का प्रतीक है। ज्ञान और आलोक अज्ञान तथा अंधकार को पराजित करने के लिए आवश्यक हैं। नश्वर जीवन के, सार्थकता के चरण-चिह्न तभी मिलते हैं जब वह एक नन्हे दीपक की तरह विश्व-कल्याण के लिए अपने को समर्पित कर देता है। समर्पित जीवन सांसों को नये आयाम देता है और दीपों का पर्व समर्पित जीवन की ओर बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। —८५, रवींद्रनगर, नयी दिल्ली

अगले अंक में विशेष

लखनऊ के विख्यात डॉ. गौतम की हत्या के अपराध में आजीवन कारावास की सजा, इसके बाद जेल से मुक्ति और फिल्म-जगत में प्रवेश—ख्याति के सपने संजोती हुई शमीम रहमानी और डॉ. गौतम के प्रेम-प्रसंगों की अछूती दास्तान। अनेक ऐसे तथ्यों सहित जो अब तक प्रकाश में नहीं आये। उन्हें लिख रहे हैं प्रसिद्ध चिकित्सक डॉ. गौतम के भाई डॉ. मोहनकांत गौतम, अनेक दुर्लभ चित्रों सहित।

नवम्बर में 'कादम्बिनी' की ७०,००० प्रतियां प्रकाशित हुई थीं। दिसम्बर में हम इससे अधिक प्रतियां प्रकाशित कर रहे हैं। इसके बावजूद निराशा से बचने के लिए अपने निकटतम एजेंट से अपनी प्रति आज ही सुरक्षित कराइए।

हत्या और रहस्योद्घाटन

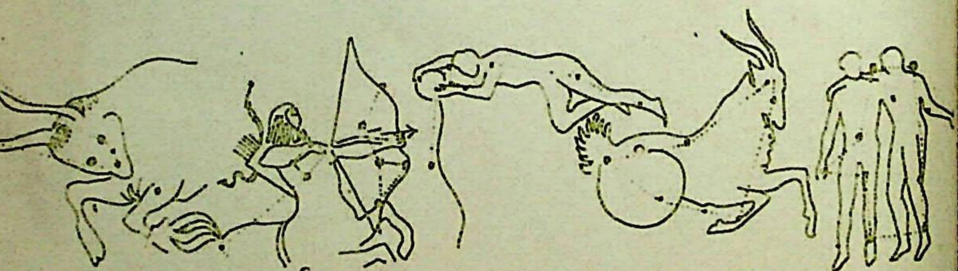
वैवाहिक संबंध बनाम राशि मेल

● केवल आनन्द जोशी

वैवाहिक संबंधों के विघटन ! कई तलाक इसीलिए हुए कि पति तेज खुर्राटे लेता है। ये बातें उन प्रकृति-प्रदत्त व्यवहार-प्रणालियों में मेल न होने से उत्पन्न होती हैं जो हर एक के स्वभाव में अलग-अलग रहती हैं। हिंदुओं में विवाह के समय जन्म-कुंडलियों के मिलान और राशि-नक्षत्रों के अध्ययन-विश्लेषण की प्रथा वास्तव में वैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है। यह यौन-व्यवहार से लेकर अंतरंग मामलों तक स्त्री-पुरुष के जीवन में सहायक होती है।

राशि मेल जन्म के समय चंद्र नक्षत्र और राशि के दूसरी राशि से ताल-मेल का अध्ययन है। चंद्रमा का मानव के मन-मस्तिष्क पर पूर्ण प्रभाव रहता है। चंद्रमा विकिरण-प्रणाली से प्रत्येक सजीव प्राणी को भौगोलिक स्थिति के अनुसार एक विशेष शारीरिक, मानसिक धरातल प्रदान करता है, जिसे राशि-गुण कहा जाता है। इसके मेलपाक से विवाह होने पर उनके टूटने के मौके कम होते हैं। यही कारण है कि हिंदू परिवारों में तलाक अन्य देशों की तुलना में कम होते हैं। राशि-निर्धारण जन्मकाल में संपूर्ण आकाशगंगा के बारह तारामंडलों के क्षेत्र में चंद्रमा की

बायें से : वृषभ, धनु, कुंभ, मकर, मिथुन



राशियों के वर्ग

वायु-तत्त्व : मिथुन, तुला, कुंभ

अग्नि-तत्त्व : मेष, सिंह, धनु

पृथ्वी-तत्त्व : वृष, कन्या, मकर

जल-तत्त्व : कर्क, वृश्चिक, मीन



स्थिति से होता है।

१, मेष

'सेक्स' के मामले में यह राशि बहुत सरल, उन्मत्त और बहुधा जल्दबाज होती है। बुद्धिजीवी, चिंतनशील जीवन-साथी के अनुकूल होते हैं। इनकी महत्त्वकांक्षा स्थिर होती है। जीवन-साथी इनकी स्पष्टता, सहृदयता तथा फुर्तीलेपन से प्रसन्न रहता है, परंतु व्यवहार-पक्ष के दूसरे क्षेत्र पर यह राशि तार्किक और विवादपूर्ण मामलों में उलझी रहनेवाली होती है। इन्हीं कारणों से बहुधा अलगाव की तनावपूर्ण स्थितियों से गुजरना पड़ता है।

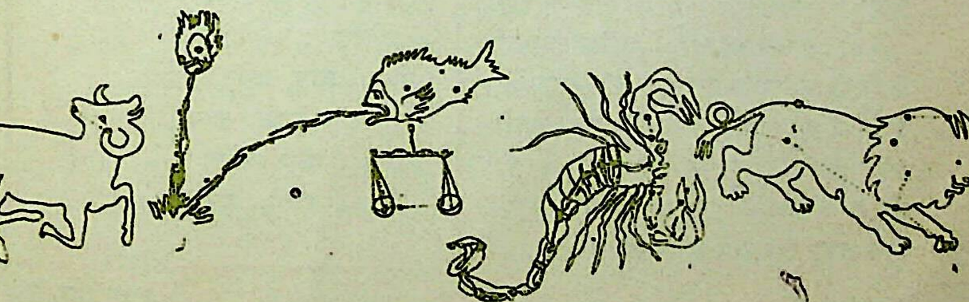
मेष राशिवाले अपने जीवन-साथी की भावना पर कुठाराघात नहीं करते परंतु स्वयं का महत्त्व चाहते हैं। कपट और धूर्तता से दूर रहते हैं। स्पष्टोक्ति की धुन में कटु सत्य बोल देते हैं या पर्याप्त प्रमाणों के बावजूद सफेद झूठ।

२. वृष

'सेक्स' के मामले में यह राशि बहुत विलासपूर्ण और कामुक लालसा की राशि है। कामानुभूति की संतुष्टि यह राशि आवश्यक समझती है। इनके विचार 'काम' से इतने प्रेरित रहते हैं कि उन्हीं व्यवसायों में रुचि होती है जहां उन्मुक्त प्रेम मिले।

वियोग अथवा अज्ञात वातावरण में

बायें से : मेष, मीन, मीन के नीचे तुला, वृश्चिक, सिंह



पल भर भी टिकना ये पसंद नहीं करते। इनकी इच्छा होती है कि सहचर हमेशा साथ रहे। इस राशि की मुख्य कमजोरी है लापरवाही, धीमापन, सुस्ती और अश्लील संकीर्ण मनोवेगों की अभिव्यक्ति। आम तौर पर वृष जातक प्रत्यक्ष रूप में झूठ नहीं बोलते, परंतु अर्ध-सत्य को पूर्ण-सत्य साबित करने में कुशल होते हैं। जीवन-साथी भोजन, विस्तर आर्थिक सुरक्षा की ओर ध्यान देता रहे तो राशि-मेल सफल और सार्थक रहता है।

जल-तत्त्व राशियां इनके शरीर और मन के सर्वाधिक अनुकूल हैं।

३. मिथुन

इस राशि के जातक सेक्स के मामले में संकोची और ठंडे समझे जाते हैं मिथुन जातकों को आसानी से नहीं समझा जा सकता। अपने जीवन-साथी पर ये अपनी चकाचौंध, वाक-चातुर्य तथा हास्यपूर्ण प्रवृत्ति से विशेष प्रभाव डालते हैं। अधिकांश मिथुन जातक बातूनी होते हैं, गप्पों का ताजा स्टाक रखते हैं। व्यावहारिक जीवन में सिद्धांतवादी होते हैं। संग्रह की महत्त्वाकांक्षा इनमें नहीं होती।

ये बोलते बहुत हैं। क्षणिक आवेश में किसी भी महत्त्वपूर्ण बात को ठुकरा देते हैं। ये खुले आम दूसरों को छल सकते और असत्य भाषण कर सकते हैं। इनको जीतने के लिए जीवन-साथी भ्रमण, पिकनिक तथा मिष्टान्न का प्रबंध करे।

४. कर्क

इस राशि में जन्मे लोग सेक्स को जीवन का अभिन्न और आवश्यक अंग तो मानते हैं, परंतु पारस्परिक जीवन को महत्त्व देते हैं।

ये विपरीत योनि से संबंध स्थापित करते समय आगे-पीछे सोच लेते हैं। यह दूरदर्शी स्वभाव उन्हें नैतिक-अनैतिक प्रेम-संबंधों में सतर्क तथा सुरक्षित रखता है।

व्यावहारिक जीवन में कर्क राशिवाले जीवन-साथी सावधान, कार्यव्यस्त, सामाजिक चिंतन में मशगूल होते हैं। यह घरेलू आदत उन्हें सर्वप्रिय बनाने और जीवन-

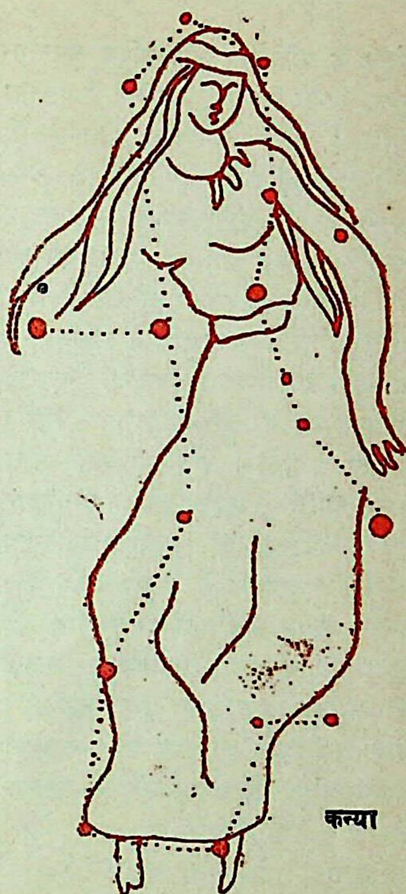
कौन राशि किस वर्ग में विवाह करे :

मेष : वायु
वृष : पृथ्वी, जल
मिथुन : वायु, अग्नि
कर्क : पृथ्वी, जल
सिंह : वायु, अग्नि
कन्या : पृथ्वी, जल
तुला : वायु, अग्नि
वृश्चिक : पृथ्वी, जल
धनु : वायु, अग्नि
मकर : पृथ्वी, जल
कुंभ : वायु, अग्नि
मीन : पृथ्वी, जल

साथी के प्रति प्रगाढ़ता लाने में सहायक होती है। बड़ों के प्रति कर्क जातकों का अगाध स्नेह होता है। इनका अधिकांश जीवन दूसरों के लिए होता हैं। कर्क राशि की कमजोरी यही है कि इनके चिंतन और कार्यक्षेत्र में दखल पड़ा तो ये चिड़चिड़े हो जाते हैं। कर्क राशि वालों को सुंदर वस्तु-संग्रह करने और और अनूठी वस्तुओं के संकलन का शौक रहता है। साथी इन्हें प्रसन्न रखने के लिए चापलूसी, प्रशंसापूर्ण रवैया तथा गंभीर सलाह देने के तरीके अपनायें।

५. सिंह

सिंह राशिवाले जातकों के मन में आराम और विलास की इच्छाएं गहराई तक जड़ जमाये रहती हैं। 'सेक्स' के प्रयत्न में उनका व्यवहार गंभीर और सुरक्षात्मक होता है। सहभागी उन्हें विस्तृत विचार-शक्ति, ईमानदारी, स्पष्टवादिता, और जगमगाते व्यक्तित्व के कारण पसंद करते हैं। मनपसंद अथवा सुंदर वस्तु पाने के लिए वे पागल-से हो जाते हैं। सिंह राशि अत्यधिक आलसी और दीर्घसूत्री मानी जाती है। दिखावापसंदी और विलासिता की तीव्र इच्छा उन्हें खर्चीला बना देती है। सिंह राशि के जातकों को जीतने के लिए हमेशा ही उनकी सराहना करनी चाहिए—चापलूसी के तौर पर नहीं बल्कि संवेदनशील होकर। सिंह राशि आम तौर पर दांपत्य-सुख के मामले में भाग्यशाली नहीं मानी जाती।



कन्या

६. कन्या

इस राशि के जातक बहुत शंकालु, पक्षपाती और भेदभाव की प्रवृत्तियों के होते हैं। अपने काम में ये चुस्त, नियमित और योजनाबद्ध होते हैं। सेक्स के मामले में बहुत असाधारण न होकर बुद्धिमानीपूर्ण। नये विचारों से कम प्रभावित होते हैं। एक विशेष अवस्था तक ही सेक्स में उत्सुक रहते हैं। यही आदत विपरीत

योनि के प्रति उन्हें औपचारिक अपनत्व-हीन, तटस्थ स्थिति में ला देती है। कन्या राशि के जातक वफादार जीवन-साथी होते हैं। प्रेमी स्वभाव के, हंसमुख, व्यवहार-कुशल और जीवन-साथी के प्रति उदार होते हैं। अपनी बात को महत्ता देने की तीव्र इच्छा कभी-कभी इन्हें स्वार्थी बना देती है। अतः कन्या राशि के महानुभावों को अपने पर नियंत्रण रखने और चतुराई से काम लेने का तरीका आना चाहिए। ये कोई प्रभावपूर्ण झूठ भी नहीं बोल सकते, क्योंकि आंतरिक रूप से ईमानदार होते हैं। उनकी आदतों का स्पष्टीकरण छोटी-सी मुलाकात में ही हो जाता है। इनका जीवन-साथी भी इनके—जैसा ही नियमित, विचारक, आदर्शवादी, सतर्क और पुराने विचारों का होना चाहिए। कन्या राशिवाले आमतौर पर मनोनुकूल जीवन-साथी पाने के मामले में दुर्भाग्य-पूर्ण माने जाते हैं।

७. तुला

इस राशि के लोग सेक्स के मामले में आदर्श साबित होते हैं। लिप्साओं और वास्तविक काम की अनुभूतियों के बजाय तुला जातक सुंदर और सजीव माहौल में जीवन बिताना अधिक पसंद करते हैं। यह धारणा कई बार तुला जातकों को अविवाहित रहने की प्रेरणा देती है। तुला जातक कला-संपन्न हो तो लंबी आयु तक विवाह नहीं करता अथवा अविवाहित रहने की सोचने लगता है। जीवन-साथी इन्हें एक जिम्मेदार प्रेमी के रूप में अधिक पसंद करता है। तुला राशि दयालु, उदार, व्यवहार-कुशल मानी जाती है। दूसरे को प्रसन्न रखने के लिए वे ऐसा वाग्जाल बिछा देते हैं कि दूसरे के जीवन में अप्रिय घटना घट सकती है। अपनी उदारता का प्रचार ये स्वयं करते हैं और फिर इस कारण तंग भी हो जाते हैं।

वायु-तत्त्व राशियां तुला जातकों के अनुकूल होती हैं जबकि अग्नितत्त्व राशियां उनके लिए सजीव और आदर्श प्रेमी।

८. वृश्चिक

यह राशि सेक्स के मामले में भाग्यशाली मानी जाती है। इस राशि का भी स्वभाव कभी-कभी अभूतपूर्व और घटनाप्रद बन जाता है। कामी स्वभाव के कारण वृश्चिक राशि के लोग विपरीत योनि से बड़ी चालाकी और कूटनीति से पेश आते हैं। अपने बारे में बढ़ा-चढ़ाकर कहने-सुनने की आदत होती है। नाटकीय तरीके से अस्तित्व जतलाने में इन्हें मजा आता है। ये अच्छे योजना-निर्माता, सजीव और स्पष्टवादी होते हैं। कामी प्रवृति के जातकों को वृश्चिक राशि बहुत भाती है।

मौका पड़ने पर तथ्यों को नकारने और सचाई छिपाने में ये सिद्धहस्त होते हैं। वृश्चिक राशि के लोग अच्छे रंगमंच-कलाकार, संगीतज्ञ, प्रचारक, चिकित्सक, अधिकारी तथा बुरे ग्रहों के प्रभाव से कभी-कभी निखट्टू भी होते हैं। वृश्चिक महिलाएं दूसरों के प्रति ईर्ष्या-द्वेष तथा

अन्य अपमान-सूचक बातों का पिटारा सजाये फिरती हैं और अपने अभिमान एवं हुकूमतशाही के कारण घर-वाहर के लिए सिरदर्द बनी रहती हैं। इन्हें जीतने के लिए जीवन-साथी इनके प्रति वफादार, सच्चा तथा मुस्तैद रहे और इनकी प्रवृत्तियों से समझौता करे।

९. धनु

सामाजिक आस्थाओं से जुड़ी रहनेवाली हंसमुख स्वभाव की यह राशि सेक्स के मामले में भाग्यशाली होती है। वहुत आवेगवाली इस राशि का आचरण कभी-कभी संतुलन खो सकता है। भ्रमण का शौक होता है; मिलने-जुलने में समय विताना, मित्रों के साथ सैर-सपाटे और पार्टियों में जाना विशेष भाता है। जीवन-साथी को जीतने के लिए यह राशि हमेशा ही प्रसन्न, मनोरंजक और हास्यप्रिय रूप में सामने आती है। जीवन-साथी इन्हें उत्तेजक, प्रेरक तथा मैत्रीपूर्ण व्यवहार के कारण पसंद करता है न कि प्रेमी या आत्मीय जीवन-साथी होने के नाते।

धनु राशि के पुरुष तथा महिलाएं जन्म से ही आशावादी, दार्शनिक, सुधारप्रिय तथा आडंवरपूर्ण जीवन के अभिलाषी होते हैं। कुछ मौलिक या अभूतपूर्व कार्य करने की भी चेष्टा करते हैं। कार्य के दौरान विपरीत योनि का सहयोग मिले तो ये भावुक होकर उसके प्रति आसक्त हो जाते हैं। इस राशि का वैवाहिक जीवन आनंदमय होता है।

१०. मकर

इस राशि के लोग एकांतप्रिय और तटस्थ रहनेवाले होते हैं। सेक्स के प्रति इनका व्यवहार रहस्यमय होता है। इनमें कामानुभूति की लालसा रहती है परंतु महत्त्वाकांक्षी विचारों और दृढ़ आदर्शों के मूल्य पर सेक्स की उत्तेजना शांत करना इनके स्वभाव के विरुद्ध है। अधिकांश मकर जातक जीवन-साथी के मामले में स्वतंत्र या अपनी इच्छानुसार विवाह करनेवाले होते हैं। इनका विवाह कभी-कभी विवादास्पद भी वन जाता है। इन्हें अपने पर नियंत्रण रखना और उग्रता से दूर रहना चाहिए।

मकर जातकों की कार्य-प्रणाली सीधी-सपाट होती है। ये एक ओर गंभीर होते हैं तो दूसरी तरफ वहुत बोलनेवाले। अपने, दृढ़ रूखे व्यवहार के कारण मकर जातक कभी-कभी उन्नति के अवसर छोड़ देते हैं। दूसरों की सहायता लेते अवश्य हैं, परंतु पक्षपात से लाभान्वित कभी नहीं

होते। इस राशि के जातकों में मुख्य दोष यह है कि अपने शुभचिंतकों की गलतियां या भूलें आसानी से क्षमा नहीं करते।

पृथ्वी-तत्त्व या जल-तत्त्व राशियों के अलावा अन्य राशियों के साथ इस राशि का दांपत्य-जीवन दु:खांत हो जाता है।

११. कुंभ

सेक्स के प्रति इस राशि का व्यवहार बहुत आदर्शपूर्ण होता है। काम-पिपासा का धरातल बहुत गहराई लिये हुए होता है। इसी कारण प्रायः असमान आयु के विपरीत-लिंगी जातकों से संबद्ध रहते हैं। प्रेम अथवा अवांछित यौन-संबंधों के विषय में उनकी धारणा कट्टर नहीं होती। सेक्स-संबंधों से सदाचार बिगड़ सकने की चिंता में नहीं पड़ते। प्रेम चाहे नैतिक हो या अनैतिक, ये वय, जाति, धर्म की परवाह किये बगैर बढ़ते रहते हैं। अधिकांश कुंभ जातक अंतरंग जीवन-साथी दो-तीन बार बदल लेते हैं या एक से ऊबकर दूसरे से जुड़ जाते हैं। अपने जीवन-साथी पर ये सब कुछ न्योछावर कर देते हैं और वैसी ही आशा उनसे रखते हैं। जीवन-साथी इनके मुंह पर ही इनकी वास्तविकता प्रकट कर दे या खामियां गिना डाले तो भी ये परवाह नहीं करते। कुंभ राशि लोगों के जीवन-साथी इन्हें जीतने के लिए, इनके प्रति ईमानदार न रहते हुए भी इन्हें पूरी आजादी से कार्य करने की प्रेरणा दें। इनकी विचारधारा का विरोध मुसीबत अथवा तनाव पैदा करता है। इन्हें औपचारिकता पसंद होती है परंतु इनको हमेशा तरंगमयी बातों में उलझाये रखना हितकर और उचित दांपत्य के लिए विचारणीय होगा। कुंभ जातक विवाह के बाद बहुत ऊंचे उठते हैं या संपन्न हो जाते हैं।

१२. मीन

सेक्स के मामले में मीन जातकों का व्यवहार बड़ा अजीबोगरीब, चौंकानेवाला और खतरनाक तक होता है। अधिकांश मीन जातक सेक्स के लिए मादक द्रव्यों के प्रयोग के शौकीन होते हैं। अनुकूल हालत में सेक्स के लिए मौका मिल जाए तो ये बाहर निकलना नहीं चाहते। आत्म-नियंत्रण या अनुशासन-जैसी कोई चीज इनके चारित्रिक गुणों में नहीं होती। जीवन-साथी के प्रति पूर्ण वफादार मीन जातक नहीं होते, फिर भी ये अच्छे जीवन-साथी साबित होते हैं। मीन राशि की पहली कमजोरी संदेह की प्रवृत्ति है। ये वहम के शिकार होते हैं, जिसकी खोज अपने जीवन-साथी में भी करते हैं। इस प्रकार की गुप्तचरी से स्वयं कुंठित और आत्महीन स्थितियों के शिकार हो जाते हैं।

मीन राशिवालों के जीवन-साथी इन्हें जीतने के लिए हमेशा इनके बदलते मूड का खयाल रखें और इनके झूठ को नकार दें। प्रसन्न रखने के लिए इन्हें कला, लेखन अथवा संगीत आदि में उलझायें और मनपसंद भोजन की व्यवस्था करें।

—से.-१/२६६, रामकृष्णपुरम, नयी दिल्ली

शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइये

• शांडिल्यायन

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइए और इसी पृष्ठ से आरंभ उत्तरों से मिलाइए।

१. आयतन—क. चतुर्भुज, ख. आगमन, ग. पथ, घ. किसी ठोस या तरल पदार्थ अथवा गैस से घिरनेवाली जगह, जिसे घनफुट आदि से व्यक्त करते हैं।

२. कसार—क. परिश्रम, ख. चीनी मिला भुना हुआ आटा, ग. कष्ट, घ. कसावट।

३. सुर्खरू—क. लाल, ख. जिसका मुंह गुस्से में लाल हो, ग. सफल, घ. अहंकारी, घमंडी।

४. अनुस्मारक—क. स्मारक, ख. किसी की याद में लिखी गयी रचना, ग. स्मारक के आसपास बनी संवद्ध चीजें, घ. स्मरण-पत्र।

५. अयाल—क. व्यर्थ का भार, ख. घोड़े या शेर की गरदन के बाल, ग. व्यर्थ के कामों में व्यस्त रहनेवाला, घ. आया के पेशे से संवद्ध।

६. अलकतरा—क. कतरा, ख. छोटा टुकड़ा, ग. तारकोल, घ. आकर्षक अलकोंवाली।

७. औसान—क. निशान, ख. अवश्य, ग. शाम, घ. सुध-बुध।

८. आवधिक—क. बहुत अधिक, ख. सभी का वध करनेवाला, ग. किसी विशेष अवधि का, घ. वधिक।

९. आलता—क. बड़ी लता, ख. महावर, ग. चमकता हुआ, घ. पेड़ की जड़ में पानी देने के लिए बनाया जानेवाला घेरा।

१०. कासनी—क. घास-फूस का बना, ख. कछौटा, ग. विशेष प्रकार का बैंगनी रंग, घ. क्रूर।

११. कठबाप—क. कठफोड़वा, ख. क्रूर पिता, सौतेला बाप, घ. वृक्ष विशेष।

१२. अधिभाषा—क. बोली, ख. उच्च कोटि की भाषा, ग. परिभाषा, घ. भाषा-विश्लेषण में काम आनेवाली भाषा।

१३. शशोपंज—क. उन्नीस-बीस ख. असमंजस, ग. धोखा, घ. आफत।

१४. बहिला—क. बाहरी, ख. आवारा, ग. बांझ पशु, घ. एक मछली।

उत्तर

१. घ. किसी ठोस या तरल पदार्थ अथवा गैस से घिरनेवाली जगह, जिसे घनफुट, घनलिटर आदि से व्यक्त करते हैं। अंगरेजी शब्द 'वॉल्यूम' के लिए प्रयुक्त। इस शहतीर का आयतन छह घन-फुट से कम न होगा। तत्., सं., पु.।

२. ख. चीनी मिला हुआ आटा। कथा के बाद प्रसाद में कसार वितरित किया गया। कहीं-कहीं चावल के आटे से बने

लड्डू को भी कसार कहते हैं। (संस्कृत 'कृसर' शब्द का तदभव) तद., सं., पुं.।

३. ग. सफल, सम्मानित। वस्तुतः मूल अर्थ सुर्ख (लाल) रू (चेहरा) **सुर्खरू** होता है इंसां ठोकरें खाने के बाद। फा., वि.।

४. घ. स्मरण-पत्र, स्मरण दिलाने के लिए भेजी जानेवाली चिट्ठी। (अंगरेजी शब्द 'रिमाइंडर' का शब्दानुवाद) तीन-तीन **अनुस्मारक** भेजने के बावजूद अभी तक उत्तर नहीं आया। तत्., सं., पुं.!

५. ख. घोड़े या शेर की गरदन के बाल। अरे, घोड़े का **अयाल** क्यों काट दिया, सारी खूबसूरती ही जाती रही! अर., सं., पुं.।

६. ग. तारकोल, कोलतार। यह सड़क एक बार **अलकतरे** की बन जाए तो कई वर्षों के लिए छुट्टी हो। अर., सं., पुं.।

७. घ. सुध-बुध, होश-हवास। हिंदी में इसका प्रयोग 'होश-हवास ठिकाने न रहना' या घबरा जाना' के अर्थ में होता है। (प्रायः '**औसान** खता होना' मुहावरे में प्रयुक्त।) शेर को देखते ही उसके **औसान** खता हो गये। फार., सं., पुं.।

८. ग. किसी विशेष अवधि का या विशेष अवधि में होनेवाला। ('पीरियॉडिकल' के प्रतिशब्द के रूप में प्रयुक्त।) अगले महीने मुझे **आवधिक** दौरे पर जाना है। तत्., वि.।

९. ख. महावर, स्त्रियों द्वारा पैरों में लगाया जानेवाला रंग। (संस्कृत शब्द 'आलक्तक' का तद्भव रूप) स्त्रियां शुभ अवसरों पर **आलता** लगाती हैं। तद्.,सं.,पुं.।

१०. ग. विशेष प्रकार का बैंगनी रंग। ('कासनी' एक पौधे का नाम है, जिसके फूल विशेष प्रकार की हलकी जामुनी नीलिमा लिए होते हैं) इस कमरे के लिए **कासनी** रंग के परदे अच्छे रहेंगे। फा.,वि.।

११. ग. सौतेला बाप। आखिर वह है तो **कठबाप**। वास्तविक बाप की माया-ममता उसके हृदय में कहां संभव है! तद्., सं., पुं.।

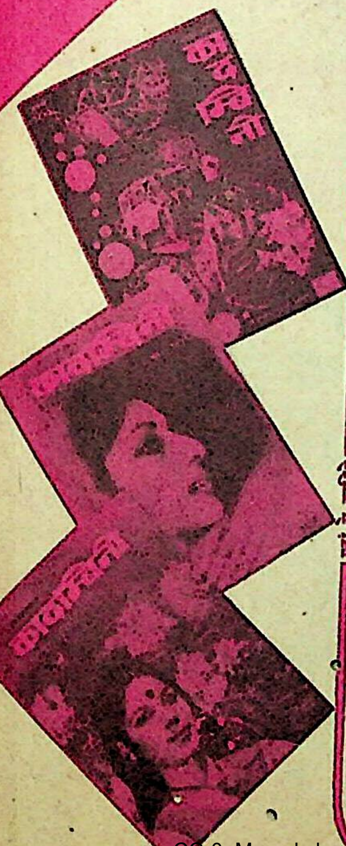
१२. घ. भाषा-विश्लेषण में काम आनेवाली भाषा (यह भाषा अपनी पारिभाषिकता तथा विशिष्ट प्रकार की बनावट के कारण सामान्य भाषा से भिन्न होती है।) 'मेटा-लैंग्वेज' के प्रति शब्द के रूप में हिंदी में इस शब्द का प्रयोग होता है। आधुनिक भाषाविज्ञान की **अधिभाषा** इतनी कठिन है कि सुशिक्षित लोगों के पल्ले भी मुश्किल से पड़ती है। तत्., सं., स्त्री.।

१३. ख. असमंजस। (फारसी में 'शश' का अर्थ है 'छह' तथा 'पंज' का अर्थ है 'पांच'। इस प्रकार शाब्दिक अर्थ 'छह और पांच' है। मैं बड़े **शशोपंज** में हूं कि यह मकान किराये पर लूं या नहीं! फा., सं., पुं.।

१४. ग. बांझ पशु, बच्चा न देनेवाली गाय-भैंस (मूल संस्कृत 'बोहत') यह गाय तो **बहिला** है, केवल देखने में सुदर है। तद्., सं., स्त्री.। ●

दशहरा दीपावली के शुभ अवसर पर
'कादम्बिनी' के
नये पाठकों के लिए आकर्षक बचत





मैं इस कार्ड के साथ .... वर्ष का चंदा चैक/मनीआर्डर/पोस्टल आर्डर द्वारा भेज रहा/रही हूं। कृपया मुझे/मेरे स्नेही को तुरन्त ग्राहक बना कर 'कादम्बिनी' भेजना शुरू कर दीजिए।

(श्री/श्रीमती/कुमारी)

नाम ....

पता ....

....

संलग्न : पोस्टल आर्डर नं.................................. चैक नं.

.... बैंक का नाम ....

.... मनीआर्डर रसीद नं......................

डाकघर ....

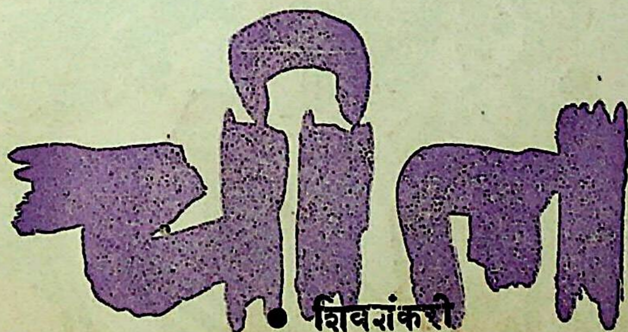
चैक, पोस्टल आर्डर अथवा मनीआर्डर—सरकुलेशन मैनेजर, हिन्दुस्तान टाइम्स लि., १८-२०, कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली-११०००१ के पते पर भेजें।

कादम्बिनी

सारे परिवार के स्वस्थ मनोरंजन के लिए

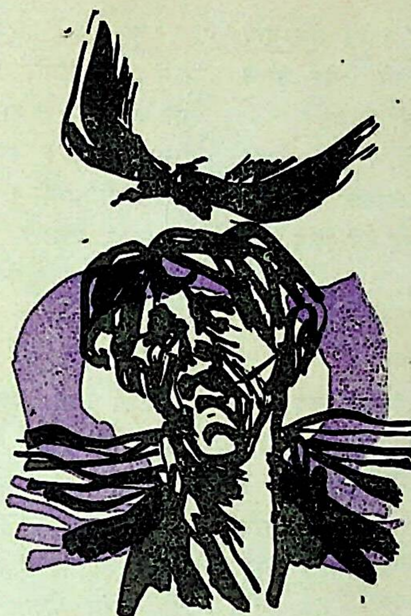

कादम्बिनी
कादम्बिनी

तमिल कहानी



चीलों की चीख कान छेद रही थी। ऐसी चीख, जिसे शब्दों में उतारना मुश्किल है। न दिन का, ध्यान, न रात का, जब देखो चीख !

चीखें पल-पल बढ़ने लगीं तो उठकर खिड़की से बाहर देखा। हमारे घर से खेत सटे थे। खेतों के पार चीड़ के झाड़ों का छोटा-सा झुरमुट। वहां घोंसला बनाकर रहनेवाले परिंदों में चीलें भी थीं।



चीड़ के पेड़ पर बैठी एक चील पंख फैलाकर ऐसी उड़ी मानो हवाईजहाज हो और एक चक्कर लगाकर घर की बाड़ पर आ बैठी तो न जाने कहां से दो चीलें और आ धमकीं और ऊपर मंडराते हुए आक्रोश में ऐसे चिल्लाने लगीं मानो उन पर आसमान टूटा पड़ रहा हो !

खिड़की में से दीख पड़ा कि बाड़ के सिरे पर बैठी चील अपने पांवों तले गेंद-जैसी कोई चीज दबाये बैठी है। जब उसने चोंच मारी तब बस, बात मेरी समझ में आ गयी।

खेतों में मरे किसी चूहे या घूस को वह पांवों में दबा लायी है और यहां बैठकर आराम से खा रही है।

मुझे उबकाई आने लगी।

चील मुर्दाखोर होती है।

'उश्'—आवाज देकर मैंने उसे वहां से भगाने की कोशिश की, पर उसने हिलने का नाम भी नहीं लिया।

ऊपर मंडरानेवाली चीलें अपनी चीखों से आसमान सिर पर उठाने लगीं तो मैंने खिड़की के किवाड़ बंद कर लिये और अंदर जाने को मुड़ी।

"आज खाना क्या बनाऊं?" रसोई बनानेवाली बुढ़िया ने पूछा।

थोड़ी देर पहले ही खूंख्वार दृश्य देखा था। बुढ़िया को तुरंत उत्तर नहीं दे पायी।

"मालिक तो शहर से बाहर हैं। 'वटूल कुलंवु' (वगैर दाल और तरकारी के वननेवाली 'सांवार' जैसी चीज) और दाल की चटनी बना दूं?"

"हां . . ."

बुढ़िया चली गयी। मेरी आंखें उस पर टिकी रहीं।

बुढ़िया की उम्र अब कितनी होगी? पैंसठ साल?

हां, हां! जब मेरे यहां रसोई के काम पर आयी, तभी कह रही थी कि साठ पार कर चुकी है। यहां आये पांच साल हो गये। उम्र पैंसठ से कम नहीं, अधिक ही होगी।

हाय, बेचारी! इस ढलती उम्र में भी पराये घर मेहनत करनी पड़ रही है।

पांच साल पहले मैं रसोई के लिए किसी को ढूंढ़ रही थी। तिरुनेलवेली से काकी ने लिखा कि एक बुढ़िया है। तुम्हारे यहां रसोई के काम को आने को तैयार है। स्वभाव नेक है। खाते-पीते घर की थी। अब तकलीफ में है। खाना बढ़िया बनाती है।

'तुरंत भेज दीजिए,' लिखकर रेलभाड़े के लिए रुपये भी मैंने भेज दिये। चौथे दिन बुढ़िया आ गयी।

मेरी कल्पना में तो बुढ़िया पचास साल के इधर-उधर थी, पर पकी उम्र की देखकर दिल बैठ गया।



"दादीजी " आप तो वहुत बूढ़ी हैं। घर का काम-काज आप संभाल लेंगी ? हमारे घर मेज पर खाना परोसना पड़ता है । आचार-विचार, नेम-निष्ठा हम अधिक नहीं मानते । वच्चे ऊधम मचायें तो सहना पड़ेगा । यह सव हो सकेगा आपसे ?" मैंने साफ-साफ पूछ लिया ।

बुढ़िया शांति से हंसकर वोली, "सव कुछ मानकर ही वहां से चली हूं ।"

सचमुच पकी उम्र की उस वुढ़िया के सभी काम वड़े सधे थे । खाना इतना वढ़िया वनाती कि हम उंगलियां चाटते । घर के सव लोग उसके काम से एकदम खुश थे ।

बुढ़िया के परिवार के वारे में पूछताछ मैंने नहीं की । काकी ने लिख ही दिया था कि वुढ़िया अच्छे खाते-पीते घराने की थी । अव कुरेदकर उसके दिल का घाव हरा करना मुनासिव नहीं था ।

महीना पूरा होने पर वेतन के रुपये देने लगी तो वोली, "मेरे हाथ न दो, विटिया ! पता देती हूं, 'मनीआर्डर' से वहीं भेज देना ।"

बुढ़िया ने अपने वेटे रामू के नाम रुपये भेजने को कहा और लिखवाया कि वह यहां भली-चंगी है ।

मनीआर्डर पहुंचने की रसीद आयी, पर पत्र कोई नहीं आया ।

"दादीजी, आपके वेटे की कोई चिट्ठी नहीं आयी ?"

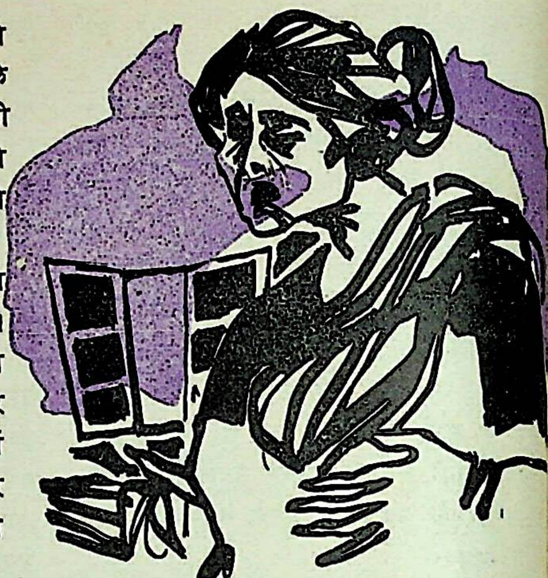
"उसे काम से फुरसत नहीं मिली होगी। कल्लि डै कुरिच्चि से स्कूल के लिए रोज दस मील गाड़ी में जाना पड़ता है !"

उस दिन मालूम हुआ कि वुढ़िया का वेटा कल्लि डै कुरिच्चि में रहता है और पास के किसी गांव में प्राथमिक पाठशाला में अध्यापक है। अगले महीने इकतीस तारीख को वुढ़िया के वेटे का पत्र आया। लिखा था हाथ में फोड़ा निकल आया है। इस महीने पांच रुपये अधिक भेजो। दूसरे महीने भी यही कहानी थोड़ी अदला-वदली के साथ चली। लिखा था, 'पंजों में कीलें उग आयी हैं। इलाज कराना है। दस रुपये अधिक भेजो !'

पहले महीने की पेशगी के पांच रुपये तो अभी कटे नहीं। अव और दस रुपये अधिक कहां से भेजें ?

"दादीजी ! आपका वेटा हर महीने





इस तरह मांग पेश करता है ! उसे वेतन मिलता है कि नहीं ? अकेले आदमी के लिए इससे अधिक की क्या जरूरत है ? इस तरह हर महीने अधिक भेजते रहें तो पेशगी के पैसे कैसे कटेंगे ?"

"इस महीने दे दो, बेटी ! लिखा है कि पैरों में कीलें उग आयी हैं। बेचारा क्या करेगा ? अगले महीने जरूर काट लेना। कुल एक सौ सत्तर रुपये तो उसे मिलते ही हैं। उसी में घर का किराया, चिट की किश्त और खान-पान का खर्च। मुसीवत का मारा वेचारा क्या-क्या करेगा ?"

मुझे तसल्ली नहीं हुई। अकेले आदमी के लिए एक सौ सत्तर रुपये क्या काफी नहीं होते ? कैसा बेटा है ? बूढ़ी मां से मेहनत-मशक्कत कराके पैसा वसूलता है ?

आगे के महीनों में भी यही सिलसिला बना रहा। 'परीक्षा की तैयारी करनी है। साइकिल की मरम्मत करनी है। बिच्छू ने डंक मार दिया है। बुखार चढ़ जाने से छुट्टी ली, इसलिए वेतन कट गया !' कितने ही बहाने और सब गढ़े हुए। रुपये भेजे जाने पर न पहुंच की सूचना मिलती और न मां की खैरियत पूछी जाती, पर महीने के अंत में यह मांग जरूर आती कि रुपये ज्यादा चाहिए !

"आपका बेटा भी अजीब है। यह तो नहीं कि आराम से बिठाकर देख-भाल करे, उलटे नोच-नोचकर खाता है !"

बुढ़िया चक्की पीस रही थी। उसने सिर तक नहीं उठाया। बोली, "मुझ कलमुंही ने दस बच्चों को जनम दिया और एक-एक करके गड्ढे में गाड़ दिया ! यही एक बचा है। वह चाहे जैसा हो, भला चंगा रहे। मुझे आग देने के लिए यही एक बचा है।"

तो बात यह है ! 'दस बच्चों में यही एक बचा है'— मां की ममता काम कर रही है !

दस बच्चे हुए तो बाकी सब क्या हुए ?

अपने मृत बच्चों के बारे में बताते-बताते, बुढ़िया की आंखों से आंसुओं की धारा फूट पड़ी। सब के सब चल बसे और बाकी बचा यह आवारा रामू !

तिरुनेलवेली से काकी किसी शादी में मद्रास जा रही थीं। रास्ते में मेरे घर ठहरीं। स्टेशन से आते हुए कार में ही पूछ लिया, "बुढ़िया खाना तो ठीक बनाती है?"

"हां!" मैंने सिर हिलाया और पूछा, "बुढ़िया तो बहुत अच्छी है, पर उसका बेटा ऐसा निर्मोही क्यों है?"

"उफ़!" काकी दर्द-भरी आह छोड़कर बोलीं, "बुढ़िया को उसके सुहाग के दिनों में देखतीं। एक हाथ में लाल-जड़ीं मोती की चूड़ियां, दूसरे में पन्ना-जड़ित सोने की चूड़ी, कानों में करनफूल, जरी की चौड़ी गोटवाली रेशमी साड़ी ...पति बड़े वकील थे। उनके सगे भाई-बहनों ने एकदम लूट-सी मचा दी, पर यह गऊ वनी चुप्पी साधे वैठी रही। दस वच्चों को जन्म देकर किसी को बुखार में तो किसी को जिगर की वीमारी में खोया। बेचारी के वच्चे चल बसे और पति चल बसे तो जायदाद भी गयी। किस्मत की मारी इस हालत में है!"

तो बुढ़िया ने जो कुछ कहा, वह सच है!—मेरी पलकें भीग गयीं।

काकी मेरे कानों में फुसफुसायी, "अच्छे तो सव चल बसे और रह गया, एक आवारा। उसके फूटे करम को क्या कहें? उस आवारा बेटे ने दूसरी जाति की एक औरत से नाता जोड़ रखा है। बुढ़िया से इस वात का जिक्र न करना। उसके दिल को ठेस पहुंचेगी!"

बुढ़िया को मेरे यहां आये दो वर्ष हो गये थे। मैंने पूछा, "दादीजी, आप बेटे को देखने जाना चाहती हों तो छुट्टी ले सकती हैं। वेतन नहीं कटेगा।"

"नहीं, विटिया! यात्रा करने की हिम्मत मुझमें अव कहां! उसकी खैरियत की खवर तो मिल ही जाती है।"

बुढ़िया के न जाने का कारण मालूम था ही। मैंने वात वहीं छोड़ दी।

बुढ़िया के बेटे की प्रकृति के वारे में जानने पर मैंने उसका वेतन दस रुपये वढ़ा दिया, पर पैसे उसके हाथ में न देकर अपने ही पास रख लिये। "आपके बेटे को पता चल गया तो भेज देने को कहेगा। इसलिए मेरे पास ही रहेंगे।" मेरे मुंह से यह निकलते ही बुढ़िया ने हमेशा की तरह कहा, "बेचारा! खर्च ज्यादा है। घर का किराया, चिट की किश्त, और न जाने क्या-क्या! सारे खर्च कैसे संभालेगा? और मुझे ही ये पैसे लेकर करना क्या है? मैं तो वस इतना चाहती हूं कि उसके भले-चंगे रहते आंखें मूंद लूं और वह मेरा क्रिया-कर्म कर दे।"

आज सुबह मेरी नींद जो उचटी, वह चीलों की चीख की वजह से ही उचटी। बड़बड़ाती हुई उठी और घड़ी देखी तो पांच बज रहे थे।

दांत साफ करके रसोईघर में गयी।

बुढ़िया रोज चार बजे उठ जाती थी और भगवान के आगे दिया जलाकर

काफी तैयार कर देती। फिर नहा-धोकर आ जाती। पर न जाने क्यों, आज रसोईघर में अंधेरा छाया था।

भगवान के सामने दिया नहीं जल रहा था और 'रसोईघर में सन्नाटा था।'

बिजली की बत्ती जलाकर मुड़ी तो बुढ़िया को लेटा देखकर सहम गयी। भागकर पति को जगा लायी।



बुढ़िया निद्रावस्था ही में मर गयी थी। काकी को 'ट्रंक' किया। कहा कि शीघ्र ही बुढ़िया के बेटे को भिजवा दें।

घंटे भर बाद वहां से फोन आया। काकी बोलीं, "बुढ़िया के बेटे के घर गयी थी। वह घर में नहीं था। उसकी वही औरत थी। समाचार सुनाया तो इतना कहा कि 'अरे, बुढ़िया दम तोड़ गयी!' और अंदर चली गयी। बुढ़िया के बेटे को पता चलेगा तो आ जाएगा!"

दोपहर बीत गयी। दिन ढलने लगा और रात चढ़ने लगी। तभी तार आया।

"मैं नहीं आ सकूंगा। क्रिया-कर्म आप ही कर लीजिए—रामू।"

किसका क्रिया-कर्म, कौन करे? 'मेरी चिता पर आग देने के लिए कम से कम वह एक तो बचा है!' कहकर भगवान का शुक्र करनेवाली, अथक मेहनत से अपना शरीर सुखाकर बेटे को पैसा भेजनेवाली बुढ़िया की ममतामयी माता की उसकी कोख से जन्मा बेटा अंत्येष्टि नहीं करे तो और कौन करे?

एक पल के लिए मेरे पति किंकर्तव्य-विमूढ़ खड़े रहे। फिर न जाने, क्या सोच-कर आसपास के लोगों को बुलाया। "इतने साल मैंने उसके हाथ का खाना खाया। इस तरह मैं भी उसका बेटा ही हूं! उसका अंतिम संस्कार मैं ही करूंगा।"

लेकिन रामू? उसका खयाल आते ही मेरा अंग-अंग दहल उठा।

वह बेटा है? मनुष्य है?

बुढ़िया को चोंच मार-मारकर जान से मार डालनेवाली खूंख्वार चील है वह! बुढ़िया के प्राण-पखेरू उड़ गये तो वह भी कोई परवाह किये बिना उड़ गया!

—अनु. रा. वीलिनाथन

बंदरों के व्यापारी

• वासुदेव जयकर

जल्दी से जल्दी अधिक धन कमाने की इच्छावाले व्यापारियों और तस्करों की दुनिया ऐसी है, जहां एक से एक अजूबे और सनसनीखेज कारनामे होते रहते हैं। तस्करों को मालूम पड़े कि किसी देश में कौवे की चोंचों की मांग है तो देखते-देखते कितने ही चोंच-प्रतिष्ठान गठित हो जाएंगे और कौवों की चोंच धड़ाधड़ कटनी शुरू हो जाएगी। इस वात की कतई परवाह नहीं होगी कि चोंच कटने से वेचारे कौवों पर क्या वीतेगी!

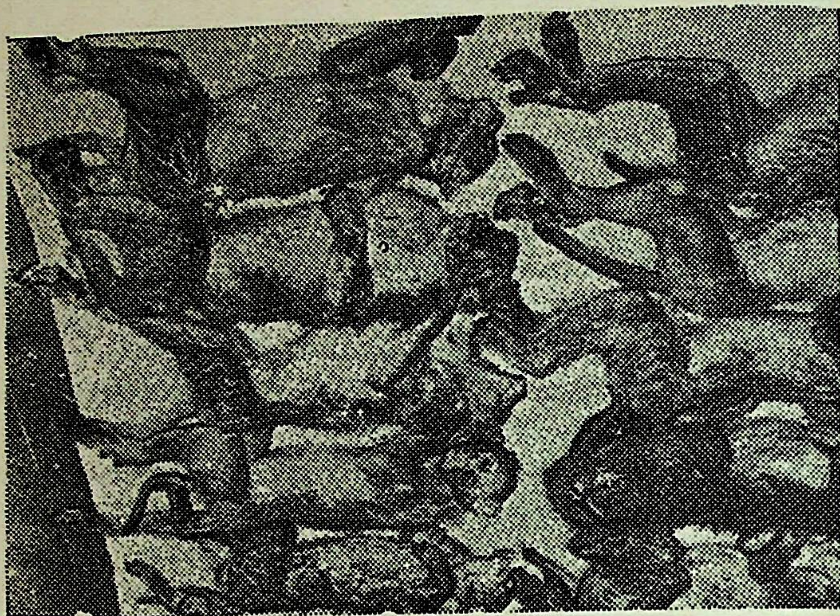
कुछ ऐसी ही हालत आजकल पशु-पक्षियों के तस्करों और व्यापारियों की है।

हीथरो की विभीषिका

तीन साल पहले कुछ सहृदय व्यक्तियों ने लंदन के हीथरो हवाईअड्डे पर मूक जानवरों के प्रति अत्याचार और निर्दयता के खिलाफ आवाज उठायी थी। जानवरों के आयात-निर्यात संवंधी कुछ कानून बने भी, पर क्या पशु-पक्षियों के आयात-निर्यात में वे सारी सावधानियां वरती जा रही हैं, जो जरूरी हैं।

१९७५ में हीथरो हवाईअड्डे पर कोई साढ़े सात लाख जानवर उतारे गये, जिनमें तीस हजार मरे हुए थे। इन तीस हजार जानवरों की मृत्यु का कारण डव्वों का गलत प्रवंध था। जिन डव्वों में पशु या पक्षी वंद करके भेजे गये थे, वे न केवल आकार-प्रकार में संकरे और तंग थे वल्कि दूसरे प्रवंध भी ठीक नहीं थे। उदाहरण के लिए २६ इंच का भालू केवल १८ इंच लंवे वक्से में वंद पाया गया और ७ फुट लंवा घड़ियाल मात्र ३ फुट लंवे वक्से में भींच-भांचकर भेजा गया था। और तो और जव एक वार तोतों से भरे ग्यारह वक्से खोले गये तो तोतों की जगह केवल उनके सिर और पंख ही पाये गये, शरीर का कोई अता-पता नहीं था।

चौवीस वर्षों तक इस तरह की विभीषिका देखने के वाद आर. एस. पी. सी. ए. हॉस्टल के प्रवंधक नेविल ह्विटेकर ने प्रण किया कि वे इस अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाएंगे। ब्रिटिश सरकार से अनुरोध कर पशु-पक्षियों के 'पैकिंग' के नियमों से संवंधित कुछ कानून भी पारित करवा लिये गये, लेकिन खुद नेविल ने स्वीकार किया है कि इन कानूनों के वावजूद ९८ प्रतिशत मामलों में पशु-पक्षी भेजनेवाले व्यापारी कानून का उल्लंघन



यात्रा प्रकृति की गोद से मृत्यु की गोद तक : लंदन के हीथरो विमानतल पर मृत पाये गये बंदर

ही करते हैं। फिर भी नेविल को संतोष है कि उसका प्रयत्न निष्फल नहीं रहा। कुछ न कुछ सुधार तो हो ही रहा है।

भारत–पाकिस्तान से निर्यात

नेविल के अनुसार पाकिस्तान और भारत से निर्यात होनेवाले पशु-पक्षियों की मृत्यु-दर और भी ज्यादा है। एक व्यापारी ने भारत से ढाई हजार पक्षियों का पैकेट लंदन भेजा। हीथरो हवाईअड्डे पर उसे खोला गया तो सभी पक्षी दम घुट जाने के कारण मृत पाये गये।

भारत और पाकिस्तान के पक्षियों की मांग अमरीका में काफी है। इन दोनों देशों के व्यापारी अधिक मुनाफे के लोभ में पक्षियों को गहरे और चमकीले रंग में रंग देते हैं और पैकिंग-व्यय कम करने के लिए छोटे-से डब्बे में अधिक पक्षी डालकर भेजते हैं।

भारत के बंदर

भारत से बंदरों का निर्यात ब्रिटेन, अमरीका, पूर्वी जरमनी, फ्रांस, इटली आदि देशों को किया जाता है। इन बंदरों को मुख्यतः उत्तरप्रदेश, जम्मू-कश्मीर और आंध्रप्रदेश से पकड़कर लाया जाता है और प्रमुख एजेंटों के हाथ बेच दिया जाता है। विभिन्न देशों को बंदर भेजना इन्हीं एजेंटों का काम है। दिल्ली स्थित बंदरों के व्यापारी के अनुसार वे बंदरों को

बाहर भेजने में काफी सावधानी बरतते हैं किंतु कभी-कभी निश्चित जगह पहुंचने से पहले ही यातायात में रुकावट के कारण कठिनाइयां पैदा हो जाती हैं।

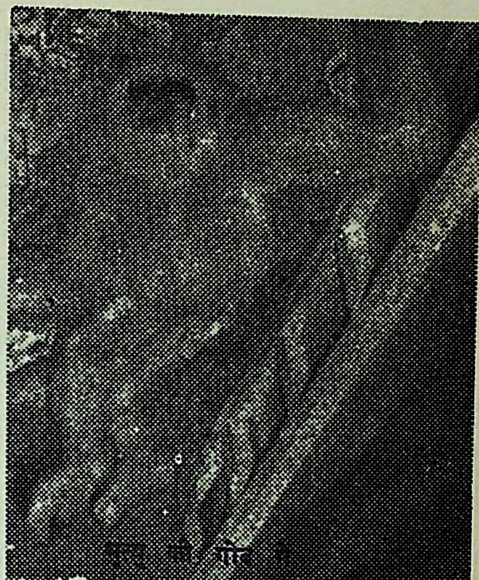
आस्ट्रेलिया सबसे आगे

पशु-पक्षियों की तस्करी में आज संभवतः आस्ट्रेलिया सबसे आगे है। कारण, आस्ट्रेलिया है ही अद्भुत पशु-पक्षियों का देश। ऐसे-ऐसे विलक्षण पशु-पक्षी वहां पाये जाते हैं कि बिना देखे विश्वास ही न हो। इसी वजह से वहां पशु-पक्षियों की तस्करी जोरों पर है। हो भी क्यों नहीं? सुनहली गरदन के एक जोड़ी तोते के दस हजार डालर मिलते हैं। चीते भर की छिपकली सैंतीस डालर की और मगरमच्छ का बच्चा पौने चार सौ डालर का। कछुए और सांप की कीमत भी असाधारण रूप से ऊंची आती है।

ये सब पशु-पक्षी प्रायः सिंगापुर, हांगकांग, लंदन, और ज्यूरिच के चिड़ियाघरों में तस्करी से पहुंच जाते हैं। बदले में वहां से कोकीन, ब्लू फिल्म आदि अवैध वस्तुएं आस्ट्रेलिया आती हैं।

अद्भुत तरीके

आस्ट्रेलिया के तस्कर व्यापारी तस्करी के लिए जंगलों या वीरानों में बनी हवाई-पट्टियों का उपयोग करते हैं। वे चुंगी अधिकारियों को चकमा देने के लिए ऐसे-ऐसे तरीके अपनाते हैं कि सुनकर लोग उंगली दांतों तले दबा लें। छोटे-छोटे पशु-पक्षी मादक द्रव्य से बेहोश करके टेप-



रेकार्डर, शराब के डब्बे इत्यादि में रखकर भेज दिये जाते हैं। कुछ लोग अपनी कमर में और पैंट के नीचे छोटे जानवर, जैसे छिपकली, सांप आदि छिपाकर हवाईअड्डे से निकल जाते हैं। कुछ महिलाएं गर्भवती होने का बहाना भी बनाती हैं, जबकि हकीकत होती यह है कि वे पेट पर पशु-पक्षी बांधकर छिपा लेती हैं।

आस्ट्रेलिया में अब ऐसे लोगों पर कड़ी निगरानी रखने का प्रबंध किया जा रहा है। देश की आठ सौ हवाई-पट्टियों पर भी निगरानी रखी जा रही है। व्यावसायिक हवाईअड्डे पर भी ऐसे विशेष यंत्रों का प्रबंध किया जा रहा है जिनसे बेल-बॉटम पहननेवाले पुरुषों और उन्नतोदर महिलाओं की जांच की जा सके। ●

माओ : एक लंबी यात्रा का अंत

● डॉ. गौरीशंकर राजहंस

कई साल पहले अपने परम मित्र अमरीकी पत्रकार एडगर स्नो को अपने बारे में बताते हुए माओ त्से-तुंग ने कहा था, "मेरी तुलना उस भिक्षु से की जा सकती है जो सारे संसार को पैदल पार करना चाहता है एक टूटे हुए छाते के सहारे।" वस्तुतः माओ का समूचा जीवन एक संघर्ष का जीवन रहा और इसमें कोई संदेह नहीं कि उन्होंने एक छिन्न-भिन्न राष्ट्र को अपनी मृत्यु के समय में एक मजबूत एवं सशक्त राष्ट्र बनाकर छोड़ा।

माओ अच्छे थे या बुरे, इसके बारे में उनके जीवन में बहुत विवाद चला। कहते हैं कि उन्होंने अपने प्रिय मित्रों, जिनमें लिओ शाऊ ची व लिन पियाओ प्रमुख थे, का बड़ी बेरहमी से सफाया करवा दिया। लिन पियाओ के बारे में यह खबर फैलायी गयी कि उन्होंने माओ को सत्ता से उलटने का असफल प्रयास किया और रूस की ओर भागते हुए विमान-दुर्घटना में मारे गये। सत्य क्या है यह कभी भी न चीन के अंदर, न बाहर लोगों को पता चल सकेगा।

अपने स्वभाव के बारे में एक विदेशी पत्रकार को बताते हुए स्वयं माओ ने एक बार कहा था कि वे स्वभाव से एक शेर की तरह हैं, जिसे बेचैनी होती है कि झपटकर कोई काम कर लिया जाए और उनके उद्देश्य की पूर्ति में जो भी सामने आता है, वे उसका बेरहमी से सफाया कर देते हैं।

माओ के इस स्वभाव की झलक उनके समूचे राजनीतिक जीवन में दिखायी पड़ती है।

माओ के पिता चीन के एक दूर देहात में गरीब किसान थे। उनकी मां अनपढ़, दयालु, उदार और धर्म-परायण थीं। माओ की अकसर अपने पिता से जोरों की बहस हो जाया करतीं थी, परंतु अपनी मां का वे बहुत सम्मान करते थे। माओ की पढ़ाई में बड़ी दिलचस्पी थी, लेकिन उनके पिता ने हमेशा इस बात पर जोर दिया कि पढ़ाई-लिखाई में केवल समय बर्बाद होता है और माओ पर दबाव डाला जाता कि वे खेती-बाड़ी में दिलचस्पी लें।

संघर्ष की शुरूआत

माओ की कहानी वस्तुतः चीन के संघर्ष की कहानी है। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से ही चीन की जनता में घोर बैचैनी बढ़ने लगी थी। जनसंख्या तेजी से बढ़ रही थी

और बार-बार देश के भीतरी भागों में अकाल पड़ रहा था तथा अन्न की कमी हो रही थी। कोई ठोस केंद्रीय सरकार चीन में काम नहीं कर रही थी। चीन छोटे-छोटे टुकड़ों में बंटा हुआ था, जिस पर पश्चिमी देशों का और जापान का कब्जा था। संक्षेप में चीनी जनता एक अत्यंत ही अपमान-जनक, असहाय और हास्यास्पद जीवन व्यतीत कर रही थी। बीसवीं शताब्दी के शुरू में कुर्मिगतांग या नेशनलिस्ट पार्टी ने लोगों में नवजागरण की चेतना फैलाने का प्रयास किया। १९११ में माओ कुर्मिगतांग की सेना में भरती हो गये, परंतु शीघ्र ही उन्होंने यह अनुभव किया कि कुर्मिगतांग में वह दम नहीं है जो उन्होंने सोचा था।

१९१९ में चीन में रूसी क्रांति का गहरा प्रभाव पड़ा। सन १९२१ में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की पहली कांग्रेस गुप्त रूप से शंघाई में हुई। इस कांग्रेस में माओ सहित १२ प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

संघर्षों के बीच पले माओ





माओ की मृत्यु पर विलाप करते पेकिंग के नागरिक

माओ की सलाह पर कम्युनिस्ट पार्टी ने कुमिंगतांग के साथ मिलकर साम्राज्यवादियों और जमींदारों का सफाया करने का निश्चय किया।

१९२७ में माओ इस नतीजे पर आ गये थे कि कुमिंगतांग के हाथों चीन का भला नहीं होनेवाला है और इसी कारण उन्होंने पार्टी से यह आग्रह किया कि साम्राज्यवादियों की तरह वह कुमिंगतांग का भी विरोध करे। पार्टी की जड़ें गांवों तक ले जायी गयीं और साम्राज्यवादियों से तथा कुमिंगतांग की सेना से लड़ने के लिए माओ ने गुरिल्ला सैनिकों को तैयार किया।

इन्हीं दिनों कुमिंगतांग के सिपाहियों ने माओ से बदला लेने के लिए उनकी पत्नी व उनकी बहन को गोली से उड़ा दिया।

माओ ने अपने गुरिल्ला सैनिकों को जो रणनीति बतायी वह बड़ी दिलचस्प थी। उन्होंने कहा—

जब दुश्मन आगे बढ़े, हम पीछे हट जाएं
जब दुश्मन खेमा गाड़ दे, हम उन्हें परेशान करें
जब दुश्मन थक जाए, तब उस पर चढ़ाई कर दें
जब दुश्मन पीछे हटे, हम धावा बोलकर उसे तहस-नहस कर दें

माओ के समर्थकों ने अन्य देशों में भी इस गुरिल्ला-रणनीति को अपनाया।

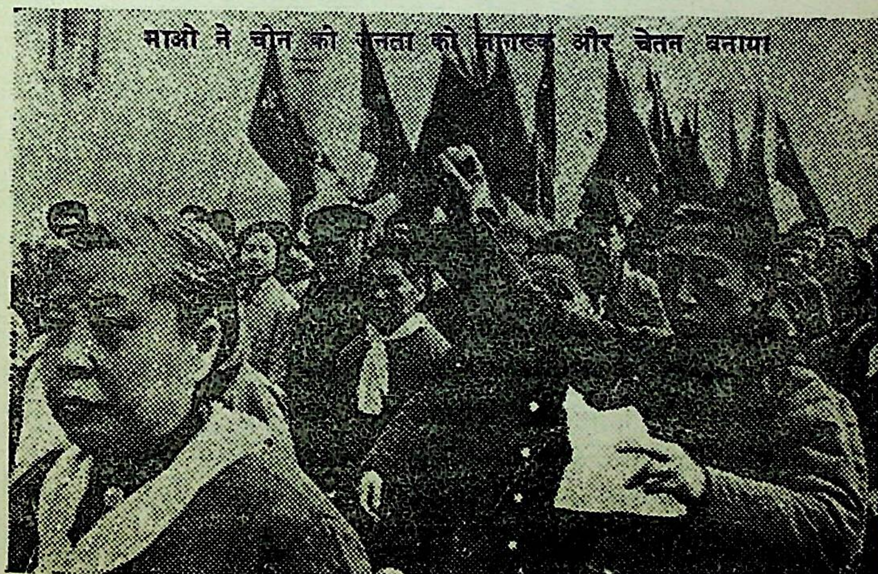
१९३४ में माओ की जग-विख्यात 'लंबी यात्रा' (लांग मार्च) शुरू हुई जिसमें प्रायः एक लाख साम्यवादी लाल सैनिकों ने ७ हजार मील की दूरी पहाड़ों, दुर्गम जंगलों व रेतीली जमीन पार करते हुए पैदल तय की। सन १९३५ में जब 'लांग मार्च' के सैनिक येनान पहुंचे तब मुश्किल से दस हजार सैनिक जिंदा रहे थे। कहते हैं कि इस लंबी यात्रा में माओ और उनके सहयोगियों को सांप, कीड़े-मकोड़े आदि खाकर जिंदा रहना पड़ा था। जो लोग

जिंदा बचे उनमें से अधिक लोगों ने चीन पर एक चौथाई शताब्दी तक राज्य किया जिनमें चाऊ एन लाई भी थे।

१९३७ से १९४१ तक माओ ने कुमिंगतांग से फिर दोस्ती की, परंतु यह गठबंधन अधिक दिनों तक नहीं चल सका। प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार उस समय की लड़ाई बड़ी दिलचस्प थी। जैसे ही जापानी लड़ाकू जहाज आकाश में दिखायी देते थे कम्युनिस्ट व कुमिंगतांग सैनिक कंधे से कंधा मिलाकर जापानियों से लड़ने लग जाते थे और जैसे ही जापानी विमान गायब हो जाते, साम्यवादी सेना और कुमिंगतांग सैनिक आपस में लड़ने लगते थे। जब द्वितीय विश्व-युद्ध समाप्त हुआ, चीन में साम्यवादियों व कुमिंगतांग के बीच गहरा गृहयुद्ध शुरू हो गया।

गृहयुद्ध में सफल नेतृत्व

साम्यवादियों का नेतृत्व माओ कर रहे थे। इस गृहयुद्ध में लाखों जानें गयीं और अंततः अक्तूबर, १९४९ में साम्यवादियों की विजय हुई और उसी वर्ष पहली अक्तूबर को पीकिंग में बोलते हुए माओ ने कहा कि चीन फिर कभी पहले की तरह अपमानित नहीं होगा क्योंकि चीनी जनता अब उठ खड़ी हुई है। सत्ता में आने के बाद माओ ने चीन को एक सुगठित राष्ट्र बनाने का फैसला किया और जिन लोगों ने इस समय के तमाशे को अपनी नजर से देखा था, उनका कहना है कि माओ और उनके समर्थकों ने निर्दयतापूर्वक अगले ६ वर्षों में कम से कम १० लाख जमींदारों और कुमिंगतांग के अफसरों का सफाया कर दिया। माओ ने अपने देश की सबसे बड़ी


माओ ने चीन की जनता को जागरूक और चेतन बनाया

शक्ति जनसंख्या का उपयोग करने का निश्चय किया और जी-जान से देश के आर्थिक विकास में लग गये।

१९४९ में चीन में सबसे अधिक ध्यान कृषि-उत्पादन पर दिया गया। १९४९ में १८० लाख टन अनाज पैदा होता था जो १९५६ में बढ़कर ८२० लाख टन हो गया। इस्पात का उत्पादन १९४९ में ३ लाख ६० हजार टन था जो बढ़कर १९५६ में ३२ लाख २० हजार टन हो गया। परंतु इसी बीच हंगरी में विद्रोह हुआ और माओ को यह भय हो गया कि संभवत: कड़े अनुशासन व निरंकुश शासन से कहीं चीन में भी विद्रोह न हो जाए और उन्होंने लोगों पर जो कड़ाई की थी उसमें ढील दे दी और उसी साल एक नया सिद्धांत निकाला कि 'चीन में सौ फूल खिलें, सौ विचारधाराएं पनपें, मुझे कोई एतराज नहीं है।' लोगों ने इस ढील का लाभ उठाकर माओ और साम्यवादियों की निंदा शुरू कर दी। जैसे ही इस निंदा ने जोर पकड़ा, १९५७ में माओ ने फिर इस पर रोक लगा दी। उन सारे लोगों के खिलाफ सख्त कदम उठाये जिन्होंने माओ की विचारधारा का विरोध किया था तथा एक-एक को चुनकर सजा दी गयी; यह कहकर कि वे दक्षिणपंथी हैं।

ख्रुश्चेव से अनबन

१९६० के आसपास माओ की सोवियत रूस से खटपट शुरू हो गयी। उन्होंने ख्रुश्चेव के अंदर पनपते हुए साम्यवाद को संदेह की दृष्टि से देखना शुरू किया और यही नहीं, रूस और चीन में जो सीमा का विवाद था वह भी उभरकर सतह पर आ गया। सन १९६९ में यह झगड़ा इतना अधिक बढ़ गया कि रूसी और चीनी सैनिक साइबेरिया और मंचूरिया में एक-दूसरे के साथ आमने-सामने हथियार लेकर खड़े हो गये। माओ ने यह अनुभव किया कि वे दुनिया में मित्रविहीन हो रहे हैं, अत: उन्होंने धीरे-धीरे अमरीका की तरफ दोस्ती का हाथ बढ़ाया और शीघ्र ही जो कट्टर दुश्मनी चीन और अमरीका में थी, वह एक दोस्ती में बदल गयी, एक ही शर्त पर कि दोनों का दुश्मन एक ही हो—'रूस'।

विचित्र स्वभाव

माओ में कुछ विचित्रताएं थीं, जो लोगों को आश्चर्यचकित कर देती थीं। माओ बातचीत में अकसर मजाक कर देते थे, परंतु कभी-कभी ये मजाक बहुत ही घटिया और गंदे दरजे तक पहुंच जाते थे। माओ अकसर कहा करते थे कि व्यक्ति की पूजा नहीं होनी चाहिए, परंतु उन्हें सबसे अधिक प्रसन्नता तब होती थी जब वे देखते थे कि लाखों की तादाद में लोग उन्हें झुकझुककर सलाम कर रहे हैं या लाखों लोग उनके विचारों को दोहरा रहे हैं।

माओ मजदूरों के नेता थे, लेकिन वे बहुत ही ठाठ-बाट से रहना पसंद करते थे और पुराने राजाओं के महलों में रह-कर अपना कामकाज करते थे। माओ

विद्वान थे, लेकिन इससे अधिक वे एक कृषक थे और अकसर कहा करते थे कि उस विद्वान की कोई कीमत नहीं जिसने अपने हाथ कीचड़ में गंदे नहीं किये हों, धान नहीं वोया हो और वंदूक नहीं चलायी हो। वे सरकारी अफसरों से घोर घृणा करते थे।

इतिहास किसी को याद नहीं रखता!

१९६५ में माओ ने एडगर स्नो से कहा था कि इतिहास किसी को याद नहीं रखता है चाहे उसने वड़े से वड़ा वलिदान किया हो, चाहे वह मार्क्स हो, लेनिन हो।

स्नो का कहना है कि माओ यह भूल गये कि एक हजार वर्ष वाद शायद उन्हें भी इतिहास याद न रखकर उनके दोषों को अधिक व गुणों को कम याद रखेगा।

माओ ने चीन की जनता में चेतना वढ़ाने का पूरा प्रयास किया और एक कमजोर राष्ट्र को एक सशक्त राष्ट्र वनाया, परंतु अपने को सर्वशक्तिमान वनाकर रखने के चक्कर में उन्होंने कोई उत्तराधिकारी नियुक्त नहीं किया। चीन के वारे में जो खवरें आ रही हैं उनसे ऐसा प्रतीत होता है कि एक वार फिर चीन में सत्ता-संघर्ष जोर पकड़ेगा।

माओ की लंबी यात्रा तो समाप्त हो गयी, परंतु चीनी नेताओं का सत्ता-संघर्ष अब शुरू होने ही वाला है।

—२४/१ राजेन्द्रनगर,
नयी दिल्ली-११००६०

समय थोड़ा है

इस छोटी-सी दुनिया में
चंद मक्खियां टकराती हैं
दीवार से
उनका शोर—
कभी होता है भयावह
और कभी सुबकन-जैसा
झाड़ी पर चढ़ती चींटियां
मारती हैं डींग
कि बहुत महान है
उनका देश
आसान है सिर्फ कहना
कि हिला देंगे जड़ें
गुबरैले, एक मजबूत वृक्ष की
करने को बहुत से जरूरी काम
हमेशा ही रहते हैं
दुनिया घूम रही है
समय फिर भी थोड़ा ही है
सहस्राब्दियां तो बहुत लंबी होती हैं
और इसीलिए महत्त्व है
एक-एक सुबह और शाम का
चारों सिंधुओं में आया है ज्वार
घनघोर वर्षा कर रहे हैं उमड़ते हुए बादल
पांचों महाद्वीप हिल उठे हैं
आंधियों और बिजली की कड़क से
कीड़ों को कर दो नष्ट
कि हम हो जाएं अपराजेय

—माओ त्से-तुंग

(हिंदी रूपांतर —नेमिशरण मित्तल)

भारतीय संविधान में मौलिक कर्तव्यों के उल्लेख की आवश्यकता

● परमानंद एवं शशिकांत

अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार समिति की ओर से सम्मति के लिए डॉ. जूलियन हक्सले द्वारा लिखे गये एक पत्र के उत्तर में महात्मा गांधी ने लिखा था, "अधिकार तथा कर्तव्यों के विषय में मुझे अधिक ज्ञान तो नहीं परंतु अपनी मां के द्वारा बचपन में दी गयी एक सीख अवश्य याद है। वह कहा करती थी कि दूसरों के प्रति कर्तव्यों का पालन करना ही अपने अधिकारों की प्राप्ति है।" वर्तमान राजनीतिक संदर्भ में, जबकि संविधान में मौलिक कर्तव्यों का समावेश चर्चा का विषय बना हुआ है, गांधीजी का कथन बरबस याद आ जाता है। अधिकार तथा कर्तव्यों का मणिकांचन-योग संविधान को पूर्णता प्रदान करता है, राष्ट्र की जनता को सुनहरे भविष्य की ओर बढ़ने के लिए प्रेरित करता है और कर्तव्यों की अग्नि में तपाकर कुंदन बनाता है। हमारा संविधान बोझिल नहीं रहा, परंतु पूर्णता की कमी जरूर रही। पिछड़ेपन का एक बड़ा कारण यह भी है कि हम अधिकारों के प्रति तो अत्यधिक सजग रहे लेकिन कर्तव्यों से उदासीन। आपातस्थिति की घोषणा के बाद प्रधानमंत्री ने कर्तव्यों की ओर हमारा ध्यान दिलाकर समयानुकूल काम किया है।

कांग्रेस समिति

अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के अधिवेशन में निर्णय लिया गया कि संविधान में मौलिक कर्तव्यों का भी उल्लेख होगा। संविधान में संशोधन पर सलाह के लिए कांग्रेस-अध्यक्ष द्वारा नियुक्त 'स्वर्णसिंह समिति' की सिफारिशें ऐतिहासिक हैं। अधिवेशन में ही स्पष्ट कर दिया गया था कि मौलिक कर्तव्यों संबंधी सिफारिशें सीधे सरकार को भेज दी जाएंगी।

संपन्नता का आधार

आज संपन्न और विकासरत देशों में बड़ा आर्थिक अंतर है। समृद्ध देशों के दो वर्ग हैं: पूंजीवादी पाश्चात्य देश और समाजवादी देश। सभी समाजवादी राष्ट्रों की अल्पकाल में अभूतपूर्व आर्थिक और सामाजिक उपलब्धियों के पीछे उनके संविधानों में शामिल मौलिक कर्तव्यों की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है। भारत के संविधान पर ब्रिटेन और अमरीका के संविधानों का बहुत प्रभाव है। उनके संविधानों

में नागरिक के मौलिक कर्तव्यों पर बल भले न दिया गया हो, लेकिन यह कहना असंगत है कि मौलिक कर्तव्यों के समावेश की आवश्यकता नहीं।

वस्तुतः विकासशील देशों में सामान्य लोग इतने संपन्न तथा जागरूक नहीं हैं कि अपने कर्तव्यों का ध्यान रखकर देश की उन्नति की बात कर सकें। कोई सरकार जन-आकांक्षाओं की तुष्टि जन-सहयोग विना नहीं कर सकती। अतः जरूरी है कि हम अपने कर्तव्यों पर ध्यान दें। भारत–जैसे देशों में लोग थोड़ी-सी शिक्षा प्राप्त होते ही संवैधानिक कानूनों की बात करने लगते हैं। अभी तक संविधान में मौलिक कर्तव्यों का उल्लेख नहीं है, इसलिए अधिकारों पर ही बल दिया जाता रहा।

सोवियत संविधान

सोवियत संघ में सन १९२४ में संविधान लागू होने के वाद अप्रत्याशित आर्थिक-सामाजिक प्रगति हुई। उपलब्धियां सुरक्षित रखने के लिए १९३६ में संविधान में अनुच्छेद १३० से १३३ तक मौलिक कर्तव्यों का उल्लेख किया गया। अनु. १३० के अनुसार प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह संविधान का पालन करे और श्रम-अनुशासन तथा अन्य समाजवादी कानूनों का अनुसरण करे। अनु. १३१ के अनुसार प्रत्येक सोवियत नागरिक का कर्तव्य है कि वह समाजवादी संपत्ति को पवित्र और अनुलंघनीय मानकर उसकी रक्षा करे। उसी प्रकार अनु. १३२ में सर्वसामान्य सैनिक सेवा को कानून माना गया है। प्रत्येक नागरिक का यह पवित्र कर्तव्य है कि अनिवार्य सैनिक सेवा में शामिल हो। अनु. १३३ के अनुसार देश की रक्षा करना प्रत्येक सोवियत नागरिक का पवित्र कर्तव्य है। इसकी अवहेलना करनेवाले को कड़ी सजा का प्रावधान है। इसमें संशय नहीं कि सोवियत नागरिक कर्तव्यों का पालन करके ही देश को समृद्ध बना पाये हैं।

चीनी संविधान

चीन ने १९५४ के अपने संविधान में मौलिक कर्तव्यों पर अत्यधिक बल

भारत का संविधान

हम भारत के लोग भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने

तथा

उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक न्याय विचार अभिव्यक्ति विश्वास धर्म और उपासना की स्वतंत्रता प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने

तथा

उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुरक्षित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिये

दृढ़ संकल्प होकर

अपनी इस संविधान सभा में एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

दिया और संविधान में उनका उल्लेख किया गया। संविधान के पालन, सामाजिक संपत्ति की सुरक्षा तथा करों के भुगतान पर यथेष्ठ वल दिया गया। चीन के १९७५ के नये संविधान में भी मौलिक अधिकारों के साथ-साथ मौलिक कर्तव्यों का उल्लेख है। इस संविधान के अनु. २६ के अनुसार प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि मातृभूमि की रक्षा करे और आक्रमण



लार्ड माउंटबेटन से प्रधानमंत्री पद की शपथ लेते हुए नेहरूजी

का सामना करे। इसी अनुच्छेद में सैनिक सेवा को पवित्र कर्तव्य कहा गया है।

कर्तव्य की पगडंडी पर

यूगोस्लाविया ने अपने ८४ वर्षीय नेता मार्शल टीटो के नेतृत्व में अप्रत्याशित प्रगति की है। यूगोस्लाविया के संविधान में भी कर्तव्यों पर यथेष्ठ वल दिया गया है। संविधान की २२वीं धारा में कहा गया है कि प्रत्येक नागरिक के लिए संविधान का पालन आवश्यक है। ३२वीं धारा में वल दिया गया है कि नागरिक अपनी सामर्थ्य के अनुसार काम करें। जो समुदाय के लिए काम न करे उसे समुदाय से कुछ पाने का अधिकार नहीं है।

चेकोस्लोवाक संविधान में भी मौलिक कर्तव्यों का समावेश है। अनु. ३४ के अनुसार प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह संविधान और तत्संबंधी विधियों का पालन करे। ३५वें अनुच्छेद के अनुसार प्रत्येक नागरिक सामाजिक संपत्ति की रक्षा तथा समाजवाद के आधार की रक्षा कर अपने कर्तव्यों का पालन करे। अनु. ३६ में कहा गया है कि प्रत्येक नागरिक कार्यकारी व्यक्तियों के द्वारा सौंपे गये कार्यों का पालन अपनी अंतरात्मा

और ईमानदारी से करे।

अन्य समाजवादी संविधानों की तरह हंगरी के संविधान में भी धारा ५९, ६० और ६१ में मौलिक कर्तव्यों का उल्लेख है। धारा ५९ में बताया गया है कि हंगरी समाजवादी गणराज्य के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि सामाजिक संपत्ति की रक्षा करे, सामाजिक संपत्ति की वृद्धि में योग दे, मजदूर-वर्ग के जीवन और सांस्कृतिक स्तर को ऊंचा उठाये और लोकतांत्रिक व्यवस्था सुदृढ़ बनाये। इस संविधान में भी सैनिक सेवा पर विशेष बल दिया गया है।



संविधान पर हस्ताक्षर करते हुए प्रधानमंत्री नेहरू

हमारे कर्तव्य

समाजवादी देशों के संविधानों पर विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय संविधान में कर्तव्यों का उल्लेख नितांत आवश्यक है। हमने भी अपने आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए लोकतंत्र और समाजवादी कार्यक्रमों की घोषणा की है। २०-सूत्री कार्यक्रम से जो प्रगति हुई उसे सुदृढ़ बनाने के लिए मौलिक कर्तव्यों का उल्लेख जरूरी है।

प्रत्येक संविधान अपने समय की सामाजिक और आर्थिक स्थितियों का प्रतिबिंब होता है। इसमें ऐसी व्यवस्थाएं चाहिए जिनमें समाज के उत्तरोत्तर विकास के बीज विद्यमान हों। आजादी के तीन दशक बाद भी अशिक्षा और गरीबी का विकराल रूप समाप्त नहीं हो पाया। विकास की गति बहुत मंद रही है। इन परिस्थितियों में महज अधिकारों की बात उच्छृंखलता को जन्म देती है। अधिकारों और कर्तव्यों का समुचित योग ही संतुलित नागरिक चेतना पैदा कर सकता है।

—जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय,
नयी दिल्ली

पाकिस्तानी कहानी

अंगनियां फिगार अपनी

• अख्तर जमाल

चौदह वर्ष बाद चौदह दिन का वीसा मिला था। चौदह दिन घंटों और क्षणों के रूप में उड़ रहे थे और मैं उड़ते हुए हर क्षण को पकड़ना चाहती थी, पर वक्त की सुइयां कौन पकड़ सकता है! मायका और ससुराल, रिश्तेदार, बचपन के दोस्त, कालेज के साथी, अम्मा और अब्बा के मिलनेवाले, पुराने पड़ोसी, अनगिनत रिश्ते, कदम-कदम पर मुहब्बतें। जिस घर में जाती, महल्ला इकट्ठा हो जाता। मिलनेवालों का आना-जाना इस तरह लगा रहा कि वीसा खत्म होने में कुछ दिन बाकी रह गये और मैं खाला बी से न मिल सकी। वे बीमार थीं, वरना आसिया के साथ स्वयं चली आतीं।

और इसीलिए मुझे वे तेजी से याद आयीं। जब मैंने खाला बी के घर जाने का इरादा जाहिर किया तब सबने कहा—



'हालात बहुत खराब हैं। फसाद का डर है। बाहर मत निकलना।' अहमदाबाद, गुजरात में आग के शोले भड़क रहे थे। फिर जब यह खबर आयी कि भेलसा (विदिशा) में फसाद हुआ है, तब भोपाल में बेचैनी और बढ़ गयी। अगला स्टेशन ही तो भेलसा का है।

लेकिन यह कैसे हो सकता है कि मैं खाला बी से मिले बिना चली जाऊं। इसलिए मैं चुपके से अपनी बेटी को साथ लेकर बिना किसी को बताये उनके घर चल दी।

खाला बी मेरी प्रिय सहेली आसिया की अम्मी हैं और मेरी मां की दोस्त हैं। मेरी नानी और खाला बी की अम्मी एक-दूसरे की दुपट्टा-बदल बहन बनी थीं।

वे नमाज पढ़कर सलाम फेर चुकी थीं। मेरी आवाज पर वे हड़बड़ाकर उठीं—"अरे, यह तो बिल्लो की आवाज है!" मैं जब सलाम के लिए झुकी, तब बोलीं, "अरी, जल्दी मेरे सीने से लग जा। कितने दिन से सुना था कि तू आयी है। मेरा देखने को जी तड़प रहा था। टांगों ने पहले ही मजबूर कर दिया। अब नजर भी कमजोर हो गयी है।"

मैं खाला बी के सीने से लगी चुपके-चुपके रोती रही। मुझसे ज्यादा वे रोयीं। आसिया और दोनों छोटी बहनें भी आ गयीं। साबिया को मैंने छोटा-सा देखा था। अब वह बाईस साल की बेहद खूबसूरत लड़की है। उससे बड़ी फौजिया है, जो स्कूल में पढ़ाती है। आसिया के बालों में सफेदी झांकने लगी है। वह एक स्कूल में हेड-मिस्ट्रेस है। चौदह साल पहले तक हमारा कोई काम एक-दूसरे की जानकारी के बिना न हो सकता था, पर अब चौदह सालों में हमें एक-दूसरे के बारे में कुछ न मालूम हो सका था।



खाला बी मुझसे मेरे पति और बच्चों के बारे में सब कुछ पूछ चुकीं तब उन्होंने अपने बेटे सगीर के बारे में पूछा, जिसके लिए तेईस वर्ष से वे तड़प रही थीं।

मैंने उनके बेटे-बहू और पोते-पोतियों के बारे में जानकारी दी। फिर उनके घर का जायजा लिया। किसी जमाने में उनका मकान महल्ले के अच्छे मकानों में गिना जाता था, पर अब हर तरफ

ऊंची-ऊंची दीवारों और मेहरावों पर काई जमी है। जगह-जगह दरारें हैं। मालूम हुआ है कि वे बाहर के छोटे हिस्से में स्वयं रहने लगी थीं और अंदर का बड़ा मकान एक सिंधी शरणार्थी को किराये पर दे दिया था। उसने कुछ ही अरसे में यह साबित करके कि सगीर पाकिस्तान चले गये हैं, मकान 'क्लेम' में हासिल कर लिया।

सगीर भाई खाला बी के सबसे बड़े और इकलौते बेटे थे। खयाल था कि वे पाकिस्तान जाकर नौकर हो जाएंगे और हालात बेहतर होंगे तो खानदान को भी बुला लेंगे। अब्बा की पेंशन हो चुकी थी। खानदान के लोग पाकिस्तान जा चुके थे। सगीर भाई के जाने के कुछ ही साल बाद उनके अब्बा की मौत हो गयी। सबको आशा रही कि मां-बहनों को तो वह बुला ही लेंगे, पर हुआ यह कि जब सगीर भाई ने अपने लिए कोई और जगह बनायी, तो मां-बहनों के लिए वहां पहुंचना ऐसा हो गया जैसे चांद पर पहुंचना।

सगीर भाई खुले आसमान पर एक बड़ी पतंग की तरह ऊंचे उड़ते गये और जब 'वह काटा' का शोर हुआ तो डोर भाभी के हाथ में थी। शुरू-शुरू में तो खतों और तसवीरों का आना-जाना होता रहा, पर कहां तक! आंख ओझल, पहाड़ ओझल!

आसिया की सगाई पंद्रह साल की उम्र में एक रिश्ते के भाई से हुई थी। सगीर भाई ने पाकिस्तान जाने के बाद उसे भी वहां बुला लिया था। खयाल था कि नौकर हो जाएंगे तो हालात बेहतर होते ही परिवार को बुला लेंगे, पर फिर आसिया ने यह खबर सुनी कि उसके मंगेतर की शादी भी वहीं सगीर भाई की छोटी साली से हो गयी। पंद्रह साल की उम्र में पहनायी हुई अंगूठी पच्चीस बरस की उम्र में यों काटी गयी जैसे सुहागिन के विधवा होने पर उसकी चूड़ियां उतारी जाती हैं। उंगली का निशान तो नजर आता है, मगर वह निशान नजर नहीं आता जो आसिया के दिल में है।

खाला बी ने कहा, "आसिया तुम्हारे आने से बहुत खुश थी और अब तुम चली जाओगी, तो उसे बहुत महसूस होगा। आज तुम न आतीं, तो किसी न किसी तरह आसिया के साथ पहुंच जाती।" फिर कुछ सोचकर कहा, "बेटी, क्या सगीर को बहनों का कभी खयाल नहीं आता? आखिर वह बाप की जगह है। बड़े भाई का फर्ज..."

आसिया बात काटकर बोली—"अम्मा, अल्लाह का शुक्र है। हमारी गुजर-बसर हो रही है। खुदा आपको हमारे सिरों पर सलामत रखे। हम आपको कोई तकलीफ नहीं होने देंगे। आप अपना दिल न दुखाया करो।"

तभी बड़े मकान से एक लड़की आयी और बोली, "आपके यहां पाकिस्तान से जो मेहमान आये हैं, उनसे दादा मिलना चाहते हैं। आप कहें तो दादा आ जाएं।"



आसिया ने कहा, "दादा को तकलीफ न दो। मैं इन्हें साथ लेकर अभी आती हूं। जरा चाय पी लें।"

खाला बी ने कहा, "अच्छा ही हुआ पड़ोस में ये लोग बस गये। बेचारे बड़े मियां वजादार आदमी हैं। कहा करते हैं कि अगर बेटा मकान आपके नाम कर देता तो हम क्लेम में न ले सकते थे। एक ही बेटा था। तुम्हारे खालू को भी उसका हक लेना अच्छा न लगा। हमारे लिए यह छोटा मकान ही बहुत है। सुना है, वहां सगीर को कोठी मिल गयी है।"

मैंने यह बताना उचित न समझा कि क्लेम की वह पुरानी कोठी बेचकर सगीर भाई ने उसके बदले में और पैसा लगाकर अब दो कोठियां बनायी हैं—एक कराची में, दूसरी एबटाबाद में, और खुद सरकारी बंगले में रहते हैं। क्या फायदा! ये सब बातें सुनाने का! ये यही सोचकर खुश रहें कि इसके बदले सगीर को सिर छिपाने की अच्छी जगह मिल गयी है।

आसिया मुझे बड़े मकान में ले गयी। सजावट की चीजें। सलीका और नफासत। खुशहाली हर ओर मुसकरा रही थी।

बड़े मियां अपने हैदराबाद के मकान को याद कर कहने लगे, "यह मकान तो बहुत आरामदेह है, मगर यहां की आबो-हवा मुझे मुआफिक नहीं है। सिंध का मौसम बहुत अच्छा था।" फिर बोले, "कभी सिंध गयी हो बेटी?"

मैंने कहा, "नहीं, हम पंजाब और हजारे में रहे हैं। एबटाबाद तो बहुत खूबसूरत जगह है। सिंध में तो सुना है बस रेत ही रेत है।"

बड़े मियां को मेरी बात बहुत बुरी लगी, वे बोले, "बेटी ! रेत में ही तो हुस्न होता है। यहां तुम्हारे भोपाल में ताल-तलैया और आबशार हैं। जंगल हैं। मगर रेत नहीं है। रेत में जब चांद उतरता है तो वह चांदी की तरह हो जाता है और जब सूरज डूबता है, तो सुनहरी और सुर्ख !"

फिर बोले, "बेटी ! सिंध जरूर जाना और बाबा शहबाज-कलंदर के मजार पर जरूर हाजिरी देना। तुम्हें जिंदगी की बहुत बड़ी नियामत मिल जाएगी।"

"अच्छा...जरूर..." मेरे होठों पर शब्द अटकने लगे। मैंने सोचा, मजहब के रिश्ते की तरह एक रिश्ता और भी होता है—मिट्टी का रिश्ता।

आसिया ने रास्ते में बताया कि बड़े मियां पुराने जमाने की यादगार हैं। वतन याद आता है तो भावुक हो जाते हैं। बड़े मियां हम लोगों से बड़े स्नेह का बर्ताव करते हैं। कभी-कभी तो लगता है, ये हमारे भी दादा हैं।"

मैंने कहा, "मुझे अब चलना चाहिए। रात हो गयी।

खाला बी ने कहा, "खाना खाये बगैर यों कैसे जा सकती हो?"

आसिया बोली, "अब तो तुम सुबह ही जाना। मैं तुम्हारे घर पर पर्चा भिजवा दूंगी ताकि वे लोग परेशान न हों।" फिर उसने बड़े मियां के पोते को आवाज दी। वही लड़का जो 'पाकिस्तान जाओ या कब्रिस्तान' का नारा लगाया करता था, अंदर आया। आसिया ने पर्चा देकर कहा, "श्याम! साइकिल पर यह पर्चा लेकर जाओ और बिल्लो आपा की ससुराल दे आओ।" लड़का पर्चा लेकर चला गया। आसिया बोली, "यह लड़का छोटे-मोटे काम कर देता है। अगर किसी दिन छुट्टी लेती हूं तो दरख्वास्त भी यही पहुंचाता है।"

नौकर कलवा अहमदाबाद, गुजरात की खबरें सुनकर आ रहा था। वह बयान कर रहा था। उसने ऐसी भयानक तसवीर खींचीं कि मेरी बेटी परेशान हो गयी।

खाला बी ने कहा—"बेटी ! अब हमारा यही तो मुकद्दर है। सात करोड़ हैं। आखिर कहां भागकर जाएं !"

आसिया बोलीं, "दूर क्यों जाएं ? हमारा मुल्क है। अम्मा, किसी दिन हालात ठीक हो जाएंगे। आप परेशान न हुआ करें। अल्लाह मालिक है।"

"हां, बेटी ! अल्लाह ही मालिक है।"

इसी समय बाहर बूटों की आवाज आयी। कौन है ? सब घबराये ! फिर फौजिया और साबिया के सहमे हुए चेहरों पर इतमीनान लौट आया—"यह तो राजू भइया के कदमों की आवाज है।" साबिया ने दौड़कर दरवाजा खोला।

राजू भइया सेहन में आ गये।

सबने इतमीनान की सांस लेकर राजू की ओर देखा। खाला बी आश्वस्त होते हुए मुझसे बोलीं, "बेटी ! जब भी शहर में गड़बड़ी का डर हो, राजू हमारे यहां आकर सोता है। सगीर का फर्ज राजू

अदा कर रहा है।" राजू भइया, सगीर के बचपन के साथी हैं। कालेज तक साथ रहा। तालीम, राजनीति, हर क्षेत्र में दोनों एक जान, दो शरीर थे। मैंने गौर से राजू भइया को देखा। खादी का कुरता—पाजामा। पांव में चप्पलें। हाथ में मजदूर-सभा के अखबारों का थैला, बालों में सफेदी आ गयी, पर वही चाल-ढाल, जो मैं देखती आ रही थी। जरा भी नहीं बदले। मुझसे मिलने भी आये। फिर मुझे सगीर भाई का खयाल आया। उन्हें मालूम भी न होगा कि उनके बचपन का दोस्त इन हालात में उनकी मां और बहनों के बीच बैठा है।



"राजू भइया! मेरा पासपोर्ट बनवा दो। मैं बिल्लो आपा के साथ सगीर भाई को देखने जाऊंगी।"

"यह कौन-सा मुश्किल काम है।

"नहीं . . . मत बनवाना . . . मैं नहीं जाऊंगी।"

"क्यों, इतनी जल्दी राय बदल गयी!"

"सगीर भाई ने तो आज तक झूठ को भी नहीं बुलाया। फिर भला कैसे जाएं!" सब चुप हो गये।

राजू भइया ने विषय बदल दिया। साविया से कहा, "साविया! तेरा फार्म लेकर आया हूं। भरकर दे देना। मेडीकल कालेज में जरूर दाखिला मिल जाएगा।"

"हाय सच!" साविया खुशी से उछल पड़ी।

"और आज मैं खाला की आंखों के आपरेशन की बात भी तय कर आया हूं। आप दो-चार दिन में नहीं चलेंगी तो जबरदस्ती ले जाऊंगा।"

खाला बी पानी की बूंदें दुपट्टे से पोंछकर बोली, "बेटे! अब करा ही लूंगी। अगर आंखें चली गयीं तो सगीर को कैसे देखूंगी?"

राजू किसी सोच में पड़ गया। फिर उसने धीरे से बेहद उदास स्वर में मुझसे पूछा, "सच बताओ, बिल्लो, क्या सगीर हम सबको याद करता है।"

अब मैं उन्हें कैसे बताऊं कि सगीर, जिनको राजू भइया याद कर रहे हैं, अब जिंदगी में इतना लंबा सफर कर चुके हैं कि वर्तमान और अतीत एक जिंदगी के दो हिस्से ही नहीं लगते। सगीर, जो राजू-

जैसे खाते-पीते, सीधे-सादे कपड़े पहने थैला लटकाये किसान-मजदूर सभा में समाचार बांटा करते थे—राजू को तो यही याद है। कैसे बताये कि सगीर बहुत कीमती सूट पहनते हैं। लगातार सिगरेट पीने से उनकी उंगलियों का रंग स्याह और शराब से दांतों का रंग पीला हो गया है। वे एक कई-मंजिला एयरकंडीशंड दफ्तर से अपनी शानदार एयरकंडीशंड कार में बैठकर सीधे अपनी कोठी पर आते हैं और एयर-कंडीशंड कमरे में बंद हो जाते हैं। क्या-क्या बताऊं! उन्हें फुरसत बिलकुल नहीं मिलती और शायद रिटायरमेंट के बाद भी न मिले। क्लबों, दावतों, सोसाइटी की समस्याएं।

हिंदुस्तान आने से कुछ दिन पहले ही तो उनसे मुलाकात हुई थी। मैं समझती थी कि भाभी अपनी सास-ननदों के लिए कोई चीज, कोई पैगाम भेजेंगी लेकिन भाभी ने कहा था, "मेरे लिए सिल्क की कुछ साड़ियां जरूर ले आना।"

सगीर भाई बोले थे, "तुम्हें देखकर आसिया याद आ जाती है, पर उसने तो खत लिखना ही छोड़ दिया। भई, मेरी व्यस्तताओं का हाल बता देना और कहना यहां से जवाब जाए, न जाए, तुम पत्र जरूर लिख दिया करो। बेचारी अम्मा अब तो बूढ़ी हो गयी होंगी।"

हिंदुस्तान आकर उनके पुश्तैनी घर, उनकी मां और बहनों के पास बैठकर सगीर भाई और भाभी से हुई वह मुलाकात याद आयी, तो मेरा दिल दुखों से भर गया। मैं राजू भैया से कुछ न कह पायी।

राजू भइया ने जाते-जाते साविया से फार्म भरवाया। खाला बी मन ही मन सैकड़ों दुआएं देती रहीं।

जब मैं चलने लगी तो खाला बी ने कहा, "काश सगीर की बहू और बच्चों के लिए कुछ भिजवा सकती!"

साविया गुस्से से बोली, "उन्होंने आज तक मां के लिए दुपट्टा तक न भेजा।"

खाला बी की आंखों में आंसू आ गये। बोलीं, "मुझे किसी से कुछ नहीं चाहिए। खुदा का आसरा है। वक्त गुजर गया। बाकी भी कट जाएगा। बस मेरी दुआ है कि वह जहां भी रहे, खुश रहे।"

खाला बी से विदा होते समय मैंने आसिया से कहा, "आसिया! सगीर भाई कह रहे थे कि तुमने खत लिखना बिलकुल छोड़ दिया। कभी-कभी उन्हें खत जरूर लिख दिया करो।"

कहने लगी, "बिल्लो! खत लिखने को बहुत जी चाहता है, मगर क्या लिखूं? तुम्हें भी यही सोचकर खत नहीं लिखा, और बिल्लो! सगीर भाई से तो मुझे बहुत कुछ कहना है, मगर अब तो यह महसूस होता है—

दर्दे-दिल लिखूं कब तक, जाऊं उनको दिखलाऊं
उंगलियां फिगार अपनी, खामा खूंचिकां अपना

और फिर मैं कुछ न बोल सकी।

पाकिस्तान आने के बाद सगीर भाई के घर गयी। मैंने सोचा, सगीर भाई भी सबकी कुशल जानने को परेशान होंगे।

वे चौंककर बोले—"हां भई! सब अच्छे तो हैं? अम्मा तो बहुत बूढ़ी होंगी।"

"जी हां! बहुत बूढ़ी और बीमार हैं। मुश्किल से चलती-फिरती हैं। बीनाई भी बहुत कमजोर हो गयी है।"

"ओह! वे सब क्या कर रही हैं—आसिया, साबिया और..." छोटी बहन का नाम उन्हें याद नहीं आया। वह जब पाकिस्तान आये थे तब वह बहुत छोटी थी।

मैंने कहा, "आसिया को तीन सौ रुपये माहवार मिलते हैं और फौजिया सौ रुपये माहवार पर एक छोटे-से स्कूल में पढ़ा रही है। गुजर तो जैसे-तैसे हो रही है, मगर साबिया डॉक्टरी पढ़ना चाहती है। महंगाई बहुत ज्यादा है। काश आप किसी तरह उन सबको बुला सकते!" पर भाभी ने विषय को आगे न बढ़ने दिया।

जब मैंने राजू का जिक्र किया तो सगीर भाई बोले, "राजू ... अरे राजू ... तुम मिली थीं राजू से? कैसा है?"

"बिलकुल वैसा ही जैसा आप छोड़कर आये थे। वही खद्दर के कपड़े, और मजदूरों के अखबार..."

सगीर ने मस्तिष्क पर जोर देकर दूर अतीत में झांकने की कोशिश की और इस बात पर भाभी को एक खबर याद आ गयी। करीब आकर चुपके से बोलीं, "बिल्लो। मेरी चची का खत आया था। लिखा है, सगीर की बहनों का हिंदुओं से बहुत मेलजोल है। और, राजू तो सुना है, अकसर वहीं सोता है। मैंने तुम्हारे भाई को नहीं बताया कि दुख होगा।"

मेरा जी चाहा कि भाभी के चमकते हुए गाल पर एक थप्पड़ जड़ दूं। बड़ी मुश्किल से मैंने खुद को संभालकर कहा, "जी हां, सगीर भाई को यह बात आप जरूर बता दीजिए कि अब वह यहां आ गये तो उनकी इज्जत की हिफाजत के लिए राजू वहां सोता है..."

"राजू ... राजू ... मेरा दोस्त! वह उन लोगों से मिलता है। उनका खयाल रखता है!" विस्मय से सगीर भाई ने मेरी शक्ल यों देखी जैसे मैं बहुत ही अजीबोगरीब खबर सुना रही हूं। फिर उन्होंने अपना सिर पकड़ लिया—"मैं कितना मजबूर हूं। मैं उनके लिए क्या करूं?" फिर वे अपने कमरे में चले गये?

सगीर भाई के जाने के बाद भाभी ने कहा, "वो अब शायद अपने कमरे में ड्रिंक कर रहे हैं। अगर ज्यादा ड्रिंक कर लिया तो बड़ी मुश्किल होगी।"

"अब मैं चलती हूं।"

और मैं 'खुदा हाफिज' कहकर निकल आयी। उसी क्षण मेरा जी चाहा कि दुनिया भर के सारे एयरकंडीशनर तोड़ दूं और हर घर के दरवाजे और खिड़कियां खोल दूं ताकि हर तरफ ताजा हवा और नरम और गरम धूप फैल जाए।

—अनु. सुरजीत

हंसिकाएं : दीपावली की

पति-वनस्पति

आजन्म कुंआरी
पाक व्यंजनों के लिए
दुविधा में पड़ी थी
पति मिला न—
वनस्पति के लिए भी
लाइन में खड़ी थी



विधुरा और दीवाली

विधुरा के प्रेम-संबंधों को
देखकर
उसे बच्चनजी की पंक्तियां
स्मरण हो आयीं
वह बुदबुदायी—
'है अंधेरी रात
पर दीपक जलाना
कब मना है ?
और सुन आली—
तूने तो
दीवाली मना ली

फुलझड़ियां

फुलझड़ी चलाते हुए
बोले मुसकाते हुए—
इतनी थोड़ी फुरू
फुलझड़ियां क्यों लायें ?
हंसकर बोले वह—
अब तक कितनी फुलझड़ियां छोड़ीं
इनका हिसाब कौन बताये !





पत्नी और पटाखे

पत्नी फुलझड़ी थी
बच्चे पटाखे
रोज आतिशबाजी होती
रोज ही वह
दीवाली मनाते

काला धन

वह बताती है
दीवाली की
यहां हर रात
रात की बात छोड़ो
पिछले दरवाजों से
लक्ष्मी घर आती है



हंसिकाएं

तस्कर और दिये

तस्कर के बारे में
उन्होंने कहा—
इन्होंने जब
घी के दिये जलाये
तब कहीं जाकर
इनके कारनामों पर
प्रकाश पड़ा



मैके-ससुराल

लक्ष्मी चंचल है—
मित्र ने कहा
सुनकर बोले वे—
सच है !
इनका तो उम्र भर—
मैके-ससुराल में
आना-जाना
लगा रहा !

प्रेम और दीप

चुप हो गये वह
अपने अनुभव यों बताकर
कि ढाई आखर प्रेम के
पढ़े थे हमने तो
दीप बुझाकर



प्रकाशक और लक्ष्मी

लेखक की पांडुलिपि
दो सौ रुपये में खरीदकर
प्रकाशक ने कहा
'लक्ष्मी का यों
सरस्वती को
टुकड़े डालना भी
अच्छा रहा'



तेल और मिलावट

तेल में पानी देखकर
कहने लगे वह—
'भभक-भभक मेरे दीपक जल
अरे मिलावट
करनेवालों के नामों को
आलोकित कर'

आतिशबाजी

दीवाली पर
उनके घर में बच्चों को न पाकर
वह कह गये
पटाखे कहां गये ?

—डॉ. सरोजनी प्रीतम

प्रेरक प्रसंग

● असली प्रमाण-पत्र ● गायक की अमूल्य सेवा ● सांप की जगह मुझे जलायें ● इनकी सेवा कौन करेगा ?

असली प्रमाण-पत्र

एक वार प्रसिद्ध रूसी लेखक तात्सताय से उनके एक मित्र ने पूछा, "टेली, मैंने तुम्हारे पास एक व्यक्ति को भेजा था। उसके पास काफी प्रमाण-पत्र थे, लेकिन तुमने उसे नहीं चुना। मैंने सुना है, तुमने उस पद के लिए एक ऐसा व्यक्ति चुना है जिसके पास कोई प्रमाण-पत्र नहीं। ऐसा कौन-सा गुण था उसमें कि तुमने मेरी वात की उपेक्षा कर, उसका चयन किया।"

ताल्सताय ने कहा, 'मित्र, जिसे मैंने चुना उसके पास अमूल्य प्रमाण-पत्र थे। उसने मेरे कमरे में आने से पहले इजाजत मांगी। फिर अपने पैरों को दरवाजे के सामने रखी चटाई पर साफ किया। उसके कपड़े साधारण, मगर साफ थे। उसने वैठने से पहले कुरसी साफ कर ली। उसमें आत्म-विश्वास था। मेरे प्रत्येक प्रश्न का ठीक और संतुलित जवाव दे रहा था। मेरे प्रश्न समाप्त होने पर वह इजाजत लेकर चुपचाप उठकर चला गया। उसने किसी तरह की चापलूसी या सिफारिश की कोशिश नहीं की। इन्हीं गुणों के कारण मैंने उसे चुना। ये ऐसे प्रमाण-पत्र थे जो कम व्यक्तियों के पास होते हैं। ऐसे गुण-संपन्न व्यक्तियों के पास लिखित प्रमाण-पत्र न भी हो तो कोई बात नहीं।"

—असीम चक्रवर्ती

गायक की अमूल्य सेवा

जन्मकाल से ही उसके नयनों की ज्योति बुझ चुकी थी, परंतु उसका कंठ सुरीला था। अपने संगीत से वह श्रोताओं को मुग्ध कर देता था। उसे पता चला कि भारत में लाखों व्यक्ति नेत्रविहीन हैं और उनमें से अधिकांश भीख मांगकर गुजर करते हैं। उसका हृदय करुणा से भर उठा।

उसने अंधों की मदद करने का संकल्प किया। इस उद्देश्य से उस अंधे संगीतज्ञ ने स्थान-स्थान पर संगीत-कार्यक्रम आयोजित किये तथा अंधों की सहायता के लिए अपनी झोली फैलायी। दस वर्ष के अनवरत परिश्रम से उसके पास दो लाख रुपये एकत्रित हो गये। उस राशि को लेकर वह भारत आया और उसे दक्षिण के तिरुपट्टूर गांव में अंधों के लिए स्थापित आश्रम को दान में दे दिया। इस अंधे गायक का नाम था—सिगफ्रिड जॉनसन, जो स्वीडन का रहनेवाला था।

—श्याममनोहर व्यास

सांप के बदले मुझे जलाएं

परचुरे शास्त्री कुष्ठ रोगी थे। गांधीजी उनकी सेवा करते थे—घाव धोते, दवा लगाते और मालिश करते। एक दिन जब गांधीजी उनका घाव धो रहे थे, पंडित सुंदरलाल ने उनसे पूछा, "बापू! मैं कोढ़ की एक अच्छी दवा जानता हूं। एक जीवित काले सांप को पकड़कर हांड़ी में बंद किया जाए और हांड़ी को आग पर रखकर खूब तपाया जाए। जब सांप जलकर भस्म हो जाए तब उसकी भस्म को शहद में मिलाकर शरीर पर लगाया जाए। ऐसा करने से कोढ़ ठीक हो जाता है।"

यह सुनकर गांधीजी कुछ मुसकराये, फिर उन्होंने शास्त्रीजी से पूछा, "क्यों शास्त्रीजी! प्रयोग के लिए आप तैयार हैं?"

"बापू! सांप के बदले मुझे जला दिया जाए तो क्या नुकसान होगा? उस बेचारे सांप का क्या अपराध, जो मैं उसे जीता जलाने को तैयार होऊं?" शास्त्रीजी ने उत्तर दिया।

इसकी सेवा कौन करेगा?

भाल नलकांठा क्षेत्र के एक गांव का कुम्हार रविशंकर महाराज को अपने घर भोजन कराने ले गया। कुम्हार भोजन परोस रहा था और उसकी स्त्री पास बैठी थी। एक बार वह कुछ चीज लेने अपनी जगह से खिसकी तो महाराज की दृष्टि उसके पांवों पर पड़ी। उन्होंने उससे पूछा, "क्यों बहन, क्या तुम अपंग हो?"

उनके प्रश्न का उत्तर देने के बदले उसने पास खड़े अपने पति की ओर इशारा करके कहा, "पूछ लीजिए इनसे, कभी इन्हें कोई तकलीफ दी हो मैंने। पीसती हूं, रसोई बनाती हूं, बरतन मांजती हूं, भैंस दुहती हूं, घर भी लीप देती हूं। इन्हें सिर्फ पानी भरना पड़ता है।"

स्त्री की बात पूरी हुई ही थी कि उसका पति कहने लगा, "और महाराज, इससे भी पूछ लीजिए, मैंने इसे कभी कोई कष्ट



होने दिया हो तो। मैंने इसे तीर्थों की यात्रा करायी है। पालीताणा गया था तब कंधों पर बिठाकर इसे पहाड़ी पर ले गया था।"

दोनों का प्रेम देखकर महाराज को अत्यधिक प्रसन्नता हुई। उन्होंने उस भाई से पूछा, "जब तुमने विवाह किया था तब भी क्या यह बहन अपंग थी?"

"जी हां।"

"तो तुमने इससे विवाह क्यों किया?"

"मैंने सोचा कि इस बेचारी की सेवा कौन करेगा?" उसने सहज भाव में उत्तर दिया।

—महाराज

ज्योति - किरन

सुधियों की गंध छंद-गीत में समा गयी
भीतर की रोशनी दीपों में आ गयी

मन का उजियारा ही
जग पर तन जाता है
अंधियारा कैसा हो
नभ से छन जाता है

बुझती इच्छा कोई ज्योति-किरन पा गयी
भीतर की रोशनी दीप में समा गयी

भाव के धरातल पर
शब्दों के राजमहल
जगर-मगर, नगर-डगर
श्रद्धा के ताजमहल

कल्पना उजालों के राग को जगा गयी
भीतर की रोशनी दीपों में आ गयी

मन से मन मिलने पर
हो जाता प्यार है
मन प्रसन्न होता जब
सजता त्योहार है

आखर को आंगन की ममता दुहरा गयी
भीतर की रोशनी दीपों में आ गयी

भावना न होती तो
मौसम सब मर जाते
कल्पना न होती तो
चहुं-दिश दुख भर जाते

सीता को व्यथा-कथा रावण को खा गयी
भीतर की रोशनी दीपों में आ गयी

● सन्तोष आनन्द

—६६, मातासुंदरी रोड, नयी दिल्ली



अपनी इच्छाओं और आकांक्षाओं के अनुरूप शोषणविहीन समाज की स्थापना के लिए हमें अधिक श्रम करना है। आगे आनेवाली पीढ़ी को एक खुशहाल और आदर्श गणतंत्र देने के लिए हमें संयम का एक नमूना पेश करना है।



केंद्रीय संचारमंत्री डॉ. शंकरदयाल शर्मा देश के एक वरिष्ठ राजनीतिक नेता ही नहीं, विधि-विशेषज्ञ भी हैं। डॉ. शर्मा हिंदी, अंगरेजी साहित्य तथा संस्कृत तीन विषयों में एम. ए. हैं। उन्होंने पी-एच. डी. (कैंटब), बार-एट-ला, डी. पी. ए. (लंदन), हारवर्ड लॉ स्कूल के ब्रंडीज फेलो आदि की पदवियां भी अर्जित की हैं। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में कानून के अध्यापन के लिए नियुक्त होनेवाले वे प्रथम भारतीय हैं। रियासतों के विलीनीकरण के बाद गठित भोपाल राज्य के मुख्यमंत्री एवं बाद में नव-निर्मित मध्यप्रदेश मंत्रि-मंडल में मंत्री रहने के बाद डॉ. शर्मा कांग्रेस के महामंत्री और अध्यक्ष भी रहे।

स्वभाव से सरल, सहज एवं मिलनसार डॉ. शर्मा का संघर्षशील व्यक्तित्व नयी पीढ़ी के लिए प्रेरणास्रोत है। —सं.

तलाश : एक स्थिर बिंदु की

—शंकर दयाल शर्मा

अपने जीवन की एक घटना मुझे भुलाये नहीं भूलती।

एक दिन मैंने अपने पिता से कहा कि 'मेरा पूजा-पाठ में मन नहीं लगता। जब भी ध्यान करने के लिए बैठता हूं, देश की, समाज की, तरह-तरह की चिंताएं और समस्याएं मुझे परेशान करने लगती हैं। समझ में नहीं आता, क्या करूं?'

पिताजी ने सहज मुसकराते हुए कहा, 'इसमें दुखी होने की क्या बात है? देश की, समाज की चिंताओं के बारे में सोचना



भी पूजा ही है।'

और उसी क्षण कानों में गूंज गयीं ये पंक्तियां, जिन्हें अपने बचपन में मैं पिताजी के मुंह से बार-बार सुना करता था :

घरों में हो घुप अंधेरा
मंदिर में रोशनी हो
ईश्वर के साथ छल है
इस छल का क्या ठिकाना ?

बचपन में सामाजिक छल-प्रपंच और असमानता के विरुद्ध संघर्ष के लिए मिले ये संस्कार ही शायद मेरे जीवन के एक बहुत बड़े विरोधाभास का कारण रहे हैं।

एक एकाडिमिशियन का पालिटिक्स में आना सचमुच एक बड़ा विरोधाभास है, पर इसके लिए बचपन के संस्कारों के साथ-साथ मेरी तरुणाई के दिनों की देश की वे स्थितियां जिम्मेदार थीं, जो हर सोचने-समझनेवाले नौजवान को राजनीति की ओर धकेल रही थीं।

नेहरूजी के संपर्क में

मुझे १९३५ का जमाना याद आता है। उस समय इलाहाबाद यूनिवर्सिटी 'सिविलियन' तैयार करनेवाली फैक्टरी के रूप में मशहूर थी। मैं भी इस विश्वविद्यालय में बी. ए. का छात्र रहा था। उन दिनों पंडित जवाहरलाल नेहरू आनंदभवन में 'काडर-बिल्डिंग' (कार्यकर्ता तैयार करने) के लिए क्लासेज लेकर कांग्रेस, समाजवाद-जैसे विषयों का भाष्य किया करते थे। मैं भी उनके संपर्क में आया। इसी संपर्क ने मुझे सिविल सर्वेंट के बजाय आजादी की लड़ाई का सिपाही बना दिया।

मेरे जीवन की एक विशेषता यह भी थी कि मैंने आजादी की लड़ाई में भाग लेते हुए भी पढ़ाई की और लखनऊ विश्वविद्यालय से शिक्षा पूरी करने के बाद वहीं प्राध्यापक बन गया।

आजादी के बाद देशी रियासतों के शेष भारत में विलीनीकरण का आंदोलन शुरू हुआ। इस आंदोलन में मुझे जेल की सजा हुई। समाचार-पत्रों के जरिए जब



राष्ट्रपति फखरुद्दीन अली अहमद के साथ

आचार्य नरेन्द्रदेव को इसकी खबर मिली तब उन्होंने मेरे पिताजी को लिखा— "आप सौभाग्यशाली हैं, आपको ऐसा पुत्र मिला है।"

आचार्य नरेन्द्रदेव में एक बहुत बड़ी

विशेषता थी। उनका राजनीतिक नेता का स्वरूप एक था और वाइस-चांसलर का दूसरा। आचार्य नरेन्द्रदेव सोशलिस्ट पार्टी के चेयरमैन थे। मैं कांग्रेस में था।

जेल से लौटने के वाद मैं सीधे विश्वविद्यालय में जाकर काम करने लगा था। इसी बीच भोपाल के कांग्रेसजनों में आपसी मतभेद वढ़ गये और मुझे भोपाल-कांग्रेस को संभालने के लिए कहा गया। आम-चुनाव (सन १९५२) भी सिर पर थे। कांग्रेस को संगठित करने और चुनाव-कार्य को चलाने के लिए मेरा भोपाल में होना जरूरी था, इसलिए मैं विश्वविद्यालय से अपने पद का त्याग-पत्र लेकर आचार्य नरेन्द्रदेव के पास गया।

मैंने उन्हें सारी स्थिति से अवगत कराया। जहां तक मेरा अपना सवाल था, मैं लोकसभा का चुनाव लड़ना चाहता था। मैंने आचार्यजी के समक्ष भी यही इच्छा व्यक्त की तो उन्होंने कहा, "इस्तीफा देने की क्या जरूरत है? तुम लोकसभा के सदस्य रहकर भी यहां विश्वविद्यालय में कार्य कर सकते हो!"

आचार्यजी ने विरोधी दल के होते हुए भी मेरा इस्तीफा स्वीकार नहीं किया, वल्कि मुझे कांग्रेस का चुनाव संगठित करने के लिए अपने विशेषाधिकार का प्रयोग कर चार मास की छुट्टी दे दी। यद्यपि आचार्य सोशलिस्ट पार्टी के चेयरमन थे, लेकिन राजनीति को शिक्षा-क्षेत्र में उन्होंने नहीं आने दिया।



कांग्रेस-अध्यक्ष के रूप में प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी से विचार-विमर्श

मरीजों का नहीं, साहित्य का डॉक्टर

जेल की एक घटना याद कर मुझे आज भी हंसी आ जाती है। हुआ यह कि जब मैं जेल गया तब कुछ लोगों ने मुझे मरीजों-वाला डॉक्टर समझ लिया। इसका कारण यही था कि मेरे पिता पं. खुशीलालजी भोपाल रियासत के जाने-माने वैद्य हैं और उन लोगों ने सोचा, चिकित्सक का पुत्र भी चिकित्सक ही होगा।

मैंने उन लोगों को वहुत समझाया, मैं चिकित्सा का नहीं, साहित्य का डॉक्टर हूं, पर उन्हें विश्वास नहीं हुआ।

मुझे खुशी है कि मेरा जेल जाना सार्थक रहा। भोपाल रियासत का भारत में विलयन हो ही गया। शेष देश के

साथ भोपाल रियासत के विलीनीकरण को मैं अपने जीवन की चुनी हुई उपलब्धियों में एक मानता हूं।

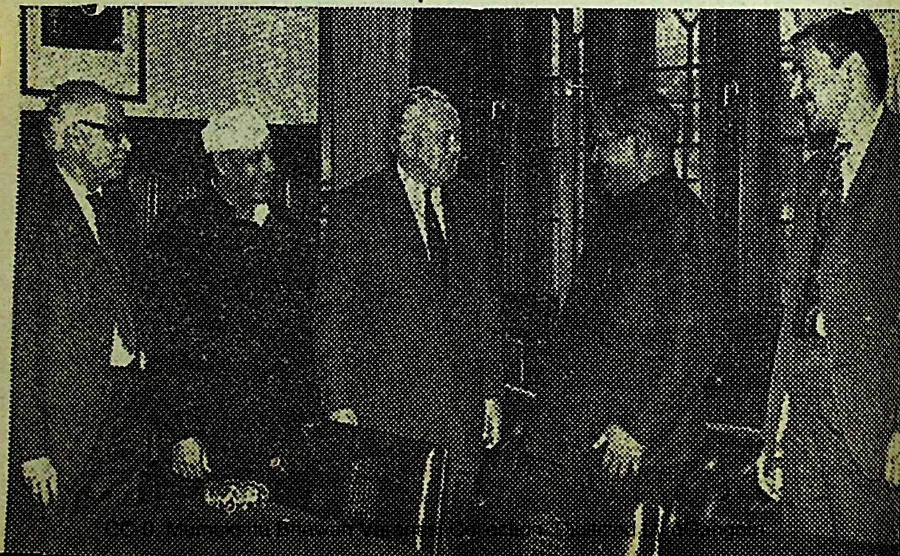
भोपाल के तत्कालीन नवाब हमीदुल्ला खां कूटनीतिज्ञ और जोड़-तोड़ में निपुण थे। उन्होंने भोपाल कांग्रेस के अनेक प्रभावशाली नेताओं तक को तोड़ लिया था।

नवाब के मुकाबले में हम कुछ नवयुवक नौसिखिया ही थे। वैसे भी मैं स्वयं प्रोफेशन में लौट जाना चाहता था, इसीलिए लोकसभा का सदस्य बनना अधिक उपयुक्त समझता था। इससे मैं अपनी रुचि का अध्यापन कार्य भी कर सकता था। कांग्रेस के तत्कालीन महामंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री की भी यही इच्छा थी। लेकिन नेहरूजी और मौलाना आजाद चाहते थे कि मैं राज्य विधानसभा में ही जाऊं। अंत में हुआ भी यही।

चुनाव के बाद राज्य-मंत्रिमंडल के गठन के साथ-साथ उसके नेता-पद का सवाल सामने आया। नेहरूजी और मौलाना आजाद दोनों ही चाहते थे कि मैं ही नये राज्य का मुख्यमंत्री पद संभालूं, पर नवाब यहां फिर आड़े आये। वे नेहरूजी से मिले। नवाब का आग्रह था कि नेता चुनने के मामले में डेमोक्रेटिक रास्ता अख्तयार किया जाना चाहिए। नेहरूजी ने उनके आग्रह पर नेतापद के लिए चुनाव की बात मान ली।

इसी सिलसिले में मुझे भी दिल्ली आना पड़ा। जब मैं रफी साहब से मिला और ये सब बातें कीं तो वे मुझ पर नाराज हुए, कहा—"क्यों आये तुम यहां? तुम्हें नहीं आना चाहिए था! तुम्हारा चुनाव तो निश्चित हो चुका था!" रफी साहब पंडित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के साथ नेहरूजी से भी मिलने गये। पंडितजी शायद प्रजातांत्रिक तरीके को नहीं छोड़ना

कांग्रेस-अध्यक्ष के रूप में ब्रिटिश मजदूर नेता श्री हैराल्ड विल्सन से भेंट करते हुए



चाहते थे। उन्हें अपने निश्चय पर अडिग देख नवीनजी ने हंसते हुए कहा, "यदि मैं इनकी जगह होता तो कहता :

"संभाल अपनी घोड़ी,
हमने लगाम छोड़ी!"

पर पंडितजी सच्चे डेमोक्रेट थे। उन्होंने कहा, "भई, चुनाव होना ही चाहिए।" उन्हें मेरी विजय पर विश्वास था। उनका विश्वास सच निकला, और मैं भोपाल राज्य का पहला मुख्यमंत्री बना।

अपने पर भरोसा, दुनिया पर नहीं

जीवन में कभी-कभी ऐसा भी होता है कि व्यक्ति को अपनी इच्छाओं और सिद्धांतों के विपरीत भी कार्य करना पड़ता है।

मेरे भी जीवन में एक ऐसी ही घटना घटी। उन दिनों मैं नये मध्यप्रदेश में शिक्षा-मंत्री था। उसी हैसियत से मैं श्रीनगर में आयोजित शिक्षा-मंत्रियों के एक सम्मेलन में भाग ले रहा था। अचानक मुझे सूचित किया गया कि मेरे विभाग में परिवर्तन कर दिया गया है। अब मुझे लोक-कर्म विभाग संभालना होगा। इस निर्णय से मेरा मन थोड़ा खिन्न हुआ।

इसका एक कारण था। कुछ विभागों को मैं 'खतरे' के विभाग समझता था—जैसे लोक-कर्म विभाग, वन विभाग और नागरिक-पूर्ति संबंधी विभाग। इसीलिए जब मैं भोपाल का मुख्यमंत्री बना था, तब मैंने दिल्ली में विभागों के वितरण के समय कांग्रेस के उच्च नेताओं से यह स्पष्ट कर दिया था कि मैं ये तीन विभाग कभी नहीं ग्रहण करूंगा।

इस पर मौलाना आजाद ने तब हंसते हुए पूछा था, "क्यों, क्या अपने पर भरोसा नहीं है?"

मैंने उत्तर दिया था, "नहीं, यह बात नहीं है! अपने पर तो पूरा भरोसा है, पर दुनिया पर नहीं है!"

जब मेरी इच्छाओं के विपरीत मुझे नया विभाग दिया गया तब मन का पीड़ित होना स्वाभाविक था। मैंने श्रीनगर

पोस्टमास्टर्स जनरल के सम्मेलन को संबोधित करते हुए



से भोपाल लौटते समय नयी दिल्ली में नेहरूजी से भेंट कर अपनी पीड़ा व्यक्त की। नेहरूजी ने मेरी बात सुन ली।

डॉ. जाकिर हुसैन का मुझ पर हमेशा स्नेह रहा। उस समय वे उपराष्ट्रपति थे। मैं दिल्ली जब भी आता, उनसे जरूर मिलता। उस समय भी उनसे मिलने गया। जब उन्हें मेरे विभाग-परिवर्तन की बात मालूम हुई तो उन्होंने पास बैठे एक सज्जन से कहा, "यहां भी खूब हालात हैं! जिसे शिक्षा आती है, उसे शिक्षा विभाग नहीं दिया जाता!"

भोपाल से नयी दिल्ली

भोपाल से नयी दिल्ली की यात्रा काफी लंबी रही और इस यात्रा में बहुत कुछ घटा है—कुछ अच्छा, कुछ बुरा।

सन १९६७ में मध्यप्रदेश कांग्रेस का अध्यक्षपद संभालने के बाद सन १९६८ में मैं अखिल भारतीय कांग्रेस का महामंत्री नियुक्त हुआ।

१९६९ में कांग्रेस का विभाजन हुआ और श्रीमती इंदिरा गांधी तथा श्री फखरुद्दीन अली अहमद के साथ-साथ मुझे भी कांग्रेस से 'निष्काषित' कर दिया गया। वे बड़े तूफानी दिन थे, प्रदर्शन, विरोध और राजनैतिक जोड़-तोड़ से भरे हुए। १ नवंबर से २२ नवंबर तक मैं रिक्वोजिशन कांग्रेस का कन्वीनर रहा। उस समय हमारे पास न आफिस था, न चपरासी, न कार! फिर भी हमारे निष्ठावान कार्यकर्त्ता चुनौती का डटकर सामना कर रहे थे।

नयी कांग्रेस के गठन के बाद श्री डी. संजीवैया उसके अध्यक्ष हुए और मैं महामंत्री। लेकिन जब श्री डी. संजीवैया का आकस्मिक निधन हो गया तब मुझे कांग्रेस-अध्यक्ष का कार्यभार संभालना पड़ा। कांग्रेस-अध्यक्ष के पद पर कार्य करते मैंने हमेशा चाहा कि लोग भावनाओं में बहकर अपना और देश का अहित न कर बैठें।

मुझे एक घटना याद आती है। यह असम में हुए भाषायी दंगों के दौरान घटी थी। स्थिति के अध्ययन के लिए जब मैं सिलचर पहुंचा तब मेरी कार पर पथराव किया गया। पथराव करनेवाले बंगाली युवक थे। उनका खयाल था कि मेरे साथ असम के मुख्यमंत्री भी हैं और यह पथराव उन्हीं की ओर लक्षित था, किंतु घायल मैं हुआ। मैंने कलक्टर से कहा कि समाचार को प्रकाशित या प्रसारित न होने दिया जाए, क्योंकि उसका असमी भाषियों पर गलत असर पड़ता और दंगे भड़कने की संभावना थी।

दूसरे दिन अखबारों में जब इस विषय में कुछ नहीं छपा तब आंदोलनकारियों को अपनी भूल मालूम पड़ी और उन्होंने आकर मुझसे क्षमा-याचना की। मैंने उन्हें बताया कि हिंसा से कोई बात नहीं बनती।

इसी तरह की एक और घटना याद आती है। कुछ वर्ष पूर्व आंध्र प्रदेश में पृथक राज्य बनाने का एक आंदोलन

छेड़ा गया था। जन-भावनाओं को उभाड़कर लोगों ने दंगे करवाये, कांग्रेस-विधायकों पर दबाव डाला कि वे संगठन से ही नहीं, विधायक-पद से भी त्याग-पत्र दे दें। जनमत को संतुष्ट करने के लिए आंध्र विधान सभा के अनेक कांग्रेस-विधायकों ने संगठन से त्याग-पत्र दे दिये और उनके त्याग-पत्र लेकर एक नेता मेरे पास आये। मैंने उन्हें सलाह दी कि वे भले कांग्रेस की सदस्यता से त्याग-पत्र दे दें, परंतु भावनाओं में वहकर अपने विधायक-पद से इस्तीफा न दें।

मेरी इस सलाह का अच्छा असर हुआ। उन्हें मेरी सदाशयता में विश्वास हुआ और भ्रम-निवारण होते ही वे सब पुनः कांग्रेस में आ गये।

कांग्रेस-विभाजन : एक लंबी साजिश

कांग्रेस का विभाजन एक साजिश का परिणाम था। यह बात अव स्पष्ट हो गयी है। 'सिंडीकेट' के नाम से 'ख्यात' एक गुट राजतंत्र पर हावी होना चाहता था। जब इंदिराजी उनके प्रभाव में नहीं आयीं तब एक 'आज्ञाकारी' प्रधानमंत्री की नियुक्ति के लिए इस गुट ने षड्यंत्र शुरू कर दिये।

श्रीमती गांधी के खिलाफ इस षड्यंत्र के पीछे वे कुछ विकसित देश हैं, जिनके लिए अंतर्राष्ट्रीय बाजार में भारत एक प्रभावशाली प्रतिस्पर्धी सिद्ध होता जा रहा है। इन देशों ने शुरू से ही कोशिश की कि भारत भारी उद्योग के क्षेत्र में न आ

विदेशों में डाक-सेवा !

● द्वितीय विश्वयुद्ध के पूर्व ब्रिटेन के शहरों में दिन में सात बार डाक बंटती थी, जब कि आज केवल दो बार। ब्रिटिश डाक-अधिकारी अब इसमें भी कटौती करने जा रहे हैं। कटौती के बाद दिन में केवल एक बार डाक बंटा करेगी।

● दिलचस्प बात यह है कि पिछले १० वर्षों में इंगलैंड में डाक-दरें ६२० प्रतिशत बढ़ गयी हैं।

● अमरीका की डाक-दरों में गत वर्ष २६ प्रतिशत की वृद्धि हुई। वहां डाक-अधिकारी जानबूझकर विलंब से डाक बंटवा रहे हैं। एक प्रस्ताव के अनुसार अब सप्ताह में केवल ५ दिन डाक बंटा करेगी।

● डच डाक-अधिकारियों को डाक बांटनेवाली निजी कंपनियों से कड़ी प्रतिस्पर्धा का सामना कर पड़ रहा है। पार्सलों और मुद्रित सामग्री का ६० प्रतिशत भाग इन निजी कंपनियों द्वारा लाया, ले जाया जाता है।

● इटली में डाक-कर्मचारियों ने साथियों की कमी के कारण भारी संख्या में एकत्र हो गयी डाक के निबटारे का एक आसान तरीका ढूंढ़ निकाला। उन्होंने बिना बंटी डाक के ढेरों को, जिनमें चेक, पोस्टल आर्डर से लेकर साधारण पत्र थे, छह पौंड प्रति-टन के हिसाब से एक लुगदी बनाने वाली फैक्टरी को बेच दिया।

जाए। इससे देश को भीषण मुद्रास्फीति का सामना करना पड़ेगा। नेहरूजी पर भी इस बात के लिए दबाव डाला गया था कि भारत उपभोक्ता-वस्तुओं का उत्पादन करे, इस्पात उद्योग में न जाए। हम-जैसे भारी उद्योगों के समर्थकों का कहना था कि नेहरूजी की मौजूदगी में देश मुद्रास्फीति का झटका संभाल ले जाएगा। उनके बाद शायद यह संभव न हो सके, इसलिए इस दुरूह कार्य को तत्काल हाथ में ले लेना चाहिए। इस मत के समर्थकों की जीत हुई। भारी उद्योगों की भांति पेट्रोल के मामले में भी कोशिश की गयी कि भारत आत्म-निर्भर न बने। अधिकतर विशेषज्ञों का कहना था कि गुजरात में तेल नहीं मिलेगा। पश्चिमी विशेषज्ञ भी इसी तरह का निर्णय दे गये थे, लेकिन श्री केशवदेव मालवीय अपनी जिद पर अड़े रहे। अंत में नेहरूजी ने १०–१२ लाख रुपये की राशि तेल की खोज के लिए स्वीकृत की। बाद में रूसी विशेषज्ञ आये और तेल मिला, पर कुछ विकसित देशों ने भारत के खिलाफ षड्यंत्र जारी रखा। दुःख की बात है कि कुछ भारतीय नेता भी उनके हाथों की कठपुतली बने।

रेल-हड़ताल—विकसित देशों की साजिश का एक और प्रमाण

रेल-हड़ताल भी कुछ विकसित देशों की साजिश का परिणाम थी। इस बात के प्रमाण मिल चुके हैं। कुछ इस्पात-निर्माता देशों ने कुछ मजदूर संघों के माध्यम से कुछ भारतीय मजदूर नेताओं को पैसा दिया। रेल-हड़तालियों के नेता बार-बार कहते थे कि देश की इस्पात मिलों के पास १३-१४ दिनों के लिए ही कोयला है। यदि रेल-हड़ताल सफल बनाकर इन मिलों को कोयला जाना रोक दिया जाएगा तो उनकी भट्ठियां ठंडी हो जाएंगी और एक बार भट्टियां ठंडी हुईं तो फिर उन्हें चालू करने में ८-९ महीने का समय लग जाएगा।

कल्पना कीजिए कि यदि रेल-हड़ताल सफल होती तो हमारी इस्पात मिलों में उत्पादन रुक जाता और हम विश्व-बाजार में अन्य इस्पात-निर्माता देशों के मुकाबले कोई टेंडर नहीं भेज सकते थे। रेल-हड़ताल असफल होने के कारण हम विश्व-बाजार में इस्पात-निर्यात के लिए टेंडर ही नहीं जीत सके, बल्कि उसे पूरा भी कर सके। आज विश्व-बाजार में भारत आर्थिक रूप से एक बलशाली देश के रूप में आगे आ रहा है। यदि हड़तालें होती तो उत्पादन गिरता और फिर हम विश्व-बाजार में नहीं खड़े हो पाते।

विकसित देशों की इन साजिशों को समझना बहुत जरूरी है। देश में आपात-स्थिति की घोषणा का एक उद्देश्य इस प्रकार के षड्यंत्र से निबटना था। आपात-स्थिति को मैं राष्ट्र के लिए एक वरदान मानता हूं। आपात-स्थिति के बाद मुद्रा-स्फीति पर रोक लगी है, कीमतें कम हुई हैं—और सभी क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ा है। अब हमारे सामने मुख्य कार्य आपात-

स्थिति के दौरान मिली उपलब्धियों को मजबूत और प्रगति की रफ्तार को बनाये रखना है।

इस दौरान डाक-तार विभाग ने भी उल्लेखनीय प्रगति की है।

भावी योजनाएं

अब मैं अपने विभाग की भावी योजनाओं के बारे में भी बता दूं — वे हैं:

● देहाती और पिछड़े इलाकों में बेहतर डाक सुविधाएं देना। पहाड़ी इलाकों में प्रतिवर्ष २,००० से ३,००० नये डाकघर खोलना।

● ज्यादा गांवों के लिए रोजाना डाक-सुविधा की व्यवस्था करना।

शहरी इलाकों को गंदी बस्तियों और मजदूरों की कालोनियों में मोटर गाड़ियों, रिक्शाओं में चलते-फिरते डाकघरों की व्यवस्था करना ताकि समाज के कमजोर वर्ग को डाक सुविधाओं का लाभ मिल सके।

● दूर-संचार सेवा के कार्य-जाल और सुविधाओं को आधुनिक बनाना। १९७७ के अंत तक दिल्ली को उपभोक्ता-ट्रंक-डायलिंग के जरिये सभी सुदूर राज्यों की राजधानियों से जोड़ना।

प्रत्येक राज्य में राज्य मुख्यालयों और राजस्व जिला मुख्यालयों के बीच प्रारंभ में मांग (डिमांड) ट्रंक सेवा के जरिये और बाद में उपभोक्ता-ट्रंक-डायलिंग के जरिये दूर संचार सुविधाएं देना।

● राजधानियों और अन्य महानगरों को उनके आसपास में बसे हुए महत्त्वपूर्ण नगरों के साथ पहले मांग ट्रंक सेवा के जरिये और बाद में उपभोक्ता ट्रंक डायलिंग के जरिये जोड़ना।

● यह भी प्रयत्न किया जा रहा है कि अंतर्राष्ट्रीय उपभोक्ता डायलिंग प्रणाली का, अन्य देशों तक विस्तार किया जाए। पिछले दिनों बंबई को लंदन के साथ जोड़ ही दिया गया है। फ्रांस के साथ भी ऐसी ही व्यवस्था की जा रही है।

दूरसंचार कार्य-जाल में इलेक्ट्रानिक स्विचिंग प्रणालियों को चालू करना। डाक-तार विभाग के दूरसंचार अनुसंधान केंद्र ने एक एक्सचेंज का विकास किया है। इनका निर्माण किया जाएगा। यह एक्सचेंज दिल्ली टेलीफोन प्रणाली में राजौरी गार्डन में लगाया जाएगा।

अंडमान निकोबार, लक्षद्वीप आदि द्वीपों तथा सुदूर पूर्व और पश्चिम क्षेत्रों के निवासियों के लिए विश्वसनीय दूरसंचार सेवा की व्यवस्था करना। इसके लिए संचार उपग्रह का उपयोग करने के प्रस्ताव की जांच की जा रही है।

आंतरिक संचार के लिए अपने निजी संचार उपग्रह लगाने के प्रश्न पर विचार किया जा रहा है।

निकट भविष्य में समुद्री केबुल के जरिये सिंगापुर के साथ भारत की संचार व्यवस्था को जोड़ना जिससे प्रशांत महासागर में सुदूर पूर्व के देशों और अमरीका के पश्चिमी तटों के लिए सीधे संचार मार्ग की व्यवस्था हो जाएगी।

उत्पादन की मौजूदा क्रियाशीलता में २० प्रतिशत वार्षिक दर से निरंतर विस्तार करना। हमारी कोशिश है कि बंबई और दिल्ली-जैसी महानगरियों को छोड़कर जहां कि कनेक्शनों की मांग बहुत ज्यादा है अन्य स्थानों पर टेलीफोन कनेक्शनों के लिए प्रतीक्षा सूची बनाने की जरूरत ही न पड़े।

पिन कोड और क्यू. एम. एस.

'क्यू. एम. एस.' अर्थात 'क्विक मेल सर्विस' का उद्देश्य शाम को छोड़ी गयी डाक को दूसरे दिन वितरित करना है। "क्यू. एम. एस. से डाक भेजने के लिए 'पिन कोड' लिखना जरूरी है। उससे डाक जल्दी-जल्दी छांटी जा सकती है।

क्यू एम. एस. सेवा का हमने विस्तार किया है। अब प्रमुख शहरों को इस सेवा से जोड़ दिया गया है। देश में कुल ३९२ क्यू. एम. एस. केंद्र हैं। ४५ राष्ट्रीय केंद्र हैं, जिनमें राज्यों की राजधानियों व महत्त्वपूर्ण नगरों का समावेश है। मेरे पास गंगटोक के उच्चाधिकारी का एक पत्र आया था। जिसमें उन्होंने मद्रास में छोड़ी गयी डाक, दूसरे ही दिन गंगटोक में मिल जाने पर सुखद आश्चर्य व्यक्त किया था। यह क्यू. एम. एस. द्वारा ही संभव हो सका।

लोगों की शिकायत है कि हमने डाक-दरें बढ़ा दी हैं, पर भारत की डाक-दरें संसार में सबसे कम हैं।

कुछ लोगों ने 'क्रास बार' प्रणाली की आलोचना की है। यह बात जरूर है कि सर्किट और निर्माण संबंधी दोषों के कारण इस प्रणाली में कमियां जरूर हैं, पर उसके दोषों को हमने दूर कर दिया है। हमने इसमें लगभग दो सौ सुधार किये हैं। राष्ट्रव्यापी स्तर पर ट्रंक डायलिंग की सुविधा के लिए यह 'क्रास बार' प्रणाली जरूरी थी।

मैं आस्तिक हूं

मैंने पूजा-पाठ की चर्चा से यह बात शुरू की थी। पूजा-पाठ के संस्कार मुझे अपने पिताजी से विरासत में मिले हैं। मैं पूरी तरह आस्तिक हूं। पूजा-पाठ से मुझे आत्मिक शांति तथा बल प्राप्त होता है।

जहां तक परिवार का मामला है, मैं बहुत सुखी हूं। पत्नी—विमला शर्मा, अर्थ-शास्त्र में एम. ए. हैं और मध्य-प्रदेश तथा केंद्र की अनेक कल्याणकारी संस्थाओं से संबद्ध हैं। वे राज्य समाज कल्याण बोर्ड की १५ वर्षों से अध्यक्ष हैं। चार बच्चे हैं—दो लड़के और दो लड़कियों में से एक पत्रकार है। मैं अचानक क्रोधित नहीं होता और न ही मुझे समस्याएं सताती हैं। जीवन में कठिन से कठिन अवसरों का मैंने सामना किया है। मेरी आस्तिकता इस पूरे प्रकरण में एक प्रबल कारण रही है। जीवन यदि स्थिर-बिंदु को तलाश ले, तो मन को जो शांति मिलती है, उसका केवल अनुभव ही किया जा सकता है। ●

—२, जंतर-मंतर रोड, नयी दिल्ली-१

कहानी

धन्यवाद

शशिप्रभा शास्त्री

"मैं कहता हूं, हो जाएगा, तुम कुछ करो तो सही।"

"जी सर!"

" 'जी-जी' से काम नहीं चलेगा। तुम्हारे मन में लगन है तो सब हो सकता है। वैर-विरोध तो चलते ही रहेंगे।"

" तो ?"

ऐसा करो, तुम दो-चार लड़कियां कल ही एक मीटिंग बुला लो। मैं भी आ जाऊंगा। संस्था के बारे में निश्चय कर लेंगे।"

" जी !" आसपास खड़ी लड़कियां मुसकरा उठीं।

"हां, तो कल की मीटिंग का समय ?"

"सर, तीन बजे ठीक रहेगा।"

"ठीक है, उन नामों की सूची तैयार कर लो जिन्हें मीटिंग के लिए बुलाना है।"

लड़कियां सूची बनाने लगीं।

●●

अगले दिन मीटिंग में खासी बहस हुई। लड़कियां कैलाशजी से प्रश्नोत्तर में उलझी थीं।

"आपने समिति का गठन तो करवा



दिया। इतना सुंदर नाम भी रख दिया। अब इसका उद्घाटन भी तुरंत करवा दिया जाए ।"

"ठीक है । बताओ, तुम लोग किस प्रकार का उद्घाटन चाहती हो ?"

"उद्घाटन तो एक ही प्रकार का होता है। किसी बड़ी हस्ती को बुलवा लिया जाए । उसके द्वारा उद्घाटन हो और हम काम शुरू कर दें ।"

"पर बुलाया किसे जाए ?"

"मैं सोचता हूं, किसी राजनीतिज्ञ या पूंजीपति को न बुलाकर किसी साहित्यिक व्यक्ति को आमंत्रित करो तो ज्यादा अच्छा ।"

"तो सर आप ही बताइए, किसे बुलायें ?"

"मैं समझता हूं, क्यों न हम निर्दोषजी को बुला लें । अच्छे साहित्यकार हैं, माने हुए लेखक ।"

"जी, यह अच्छा रहेगा, वे कविता भी लिखते हैं । हमने उनके नाटक भी पढ़े हैं ।"

"मैं चाहता था, किसी महिला साहित्यकार को आमंत्रित किया जाता तो अच्छा रहता ।"

लड़कियां विचारने लगीं, फिर मास्टर-जी की ओर टकटकी लगाकर देखने लगीं ।

"सुनो, कुछ सूझ नहीं पड़ रहा । जहन में नाम आ तो रहे हैं, पर मुश्किल है कि कोई महिला साहित्यकार निकट है नहीं । पत्र-व्यवहार में समय लगता है । तुम्हारी संस्था के पास अभी इतना पैसा भी नहीं कि किसी को आने-जाने का किराया और भेंट दे सको । दूसरे किसी कार्यक्रम में महिला को बुला लेना——इस समय निर्दोषजी को ही आमंत्रित कर लो ।"

निर्दोषजी को आमंत्रित किये जाने की बात से सभी आनंदित थीं, आंदोलित भी——"इतना बड़ा साहित्यकार आएगा हमारी संस्था में, बड़ी बात होगी न सर !"

"अच्छा तो कार्यक्रम क्या रहेगा उस दिन ?"

"जी, आरंभ में एक वृंदगान ।"

"एक छोटा-सा नृत्य भी हो सकता है, छोटी लड़कियों का ।"

"हां, यह अच्छा रहेगा——एक संक्षिप्त सांस्कृतिक कार्यक्रम होना ही चाहिए ।"

"उसके पश्चात सब पदाधिकारी विचार प्रकट करें । आमंत्रित अतिथियों से भी बोलने के लिए कहना होगा ।"

"जी हां, यह ठीक रहेगा ।"

"तो पहले सोच लें कि इस स्थान के किन-किन व्यक्तियों को आमंत्रित करना है ।"

"तुम यह क्यों नहीं सोचतीं कि आमंत्रित तो एक-एक व्यक्ति को करना है । मेरा तात्पर्य महिलाओं से है । महिला-संस्था होने के नाते तुम सभी महिलाओं को आमंत्रित करो । किसी को शिकायत न रह जाए और सब तुम्हारी संस्था को सहयोग दें ।"

लड़कियां सोच-सोचकर सूची बनाने

लगीं।

"सबसे पहले लिखो, सेठ गनपतलाल गुप्त, सेठ छदामीलाल, सतनाथ बाजपेयी, स्नेहप्रकाश दीक्षित, वसंतदेवी मीरासी, फैक्टरी मैनेजर दीपचंद तथा मालिक श्री विनोदनारायण झाउवाला।"

"श्री प्यारेलाल देवरिया को नहीं बुलाएंगे सर?"

"उन्हें तो जरूर आमंत्रित करना है, इलाके के सबसे बुजुर्गवार तो वही हैं—स्वतंत्रता सेनानी भी।"

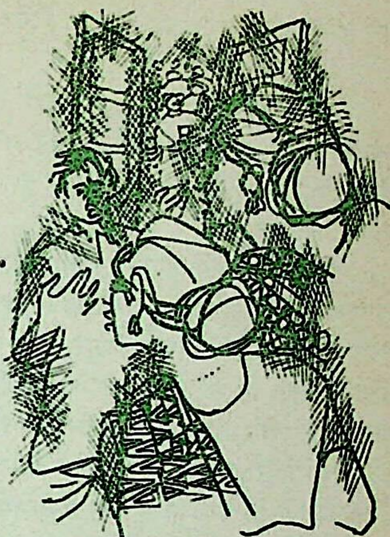
●●

निमंत्रण-पत्र लड़कियों ने बांटे, पर कैलाशजी व्यक्तिगत रूप से सबके पास गये। किंतु सबसे बड़ा काम निर्दोषजी को आमंत्रित करना था।

निर्दोषजी पचीस मील दूर बड़े नगर में रहते थे और वहीं एक दफ्तर में काम करते थे। साहित्यसृजन उनका शौक भी था और जरूरत भी। कैलाशजी को देखते ही उन्होंने तपाक से स्वागत किया, बोले—

"कहिए, कैसे आना हुआ, आप तो काफी दूर रहते हैं?"

"जी आपको तो मालूम ही है कि मैं भद्रनगर के कॉलेज में अध्यापक हूं। भद्रनगर में महिलाओं की कोई संस्था न थी। मैंने छात्राओं को तैयार किया। वे चाहती हैं, संस्था का उद्घाटन किसी साहित्यकार से करवायें, सो उन्होंने मुझे आपके पास भेजा है।"



"मेरा नाम! मजाक तो नहीं कर रहे आप?"

"मजाक! लड़कियों के साथ-साथ मैं स्वयं चाहता हूं कि पूंजीपति या राजनीतिज्ञ के बजाय हम किसी साहित्यकार का सम्मान करें। आपसे बढ़कर हमें कोई नहीं दीखता।"

"भई, मैं आपकी बात समझ रहा हूं, पर मैं व्यस्त हूं। मजदूर आदमी हूं। दिन भर दफ्तर में मगजपच्ची, फिर शाम को अपना यह गोरख-धंधा।"

"गाड़ी आपको घर से ले जाएगी और घर पर ही छोड़ जाएगी। आप सिर्फ दर्शन दे दीजिए—इतना काफी है।"

"वहां कुछ कहना करना नहीं पड़ेगा!"

"आशीर्वाद, शुभकामना, मार्ग-दर्शन जो भी आप कहें। मुख्य अतिथि आप

ही होंगे। हम आपके बड़े आभारी होंगे।"

निर्दोषजी सोचने लगे।

"सोचना-विचारना कुछ नहीं है आपको, बस हामी भर दीजिए। हम सब खुश हो जाएंगे। पूरा इलाका आपके दर्शन को लालायित है।"

निर्दोषजी कुछ सोचने लगे। किसी पत्रिका ने रचना की मांग की थी। बहुत दिन से सोच रहे थे रचना तैयार करने के लिए। माना कि सवारी घर से ले जाएगी, घर छोड़ भी जाएगी, पर तीन-चार घंटे तो खर्च हो ही जाएंगे। फिर उनका सामाजिक दायित्व भी है, जैसा कि कैलाशजी कह रहे हैं, छोटी-छोटी बच्चियों ने उन्हें बुलाया है।

"आपको ज्यादा समय नहीं देना होगा। बस यही एक-डेढ़ घंटा।" निर्दोषजी का द्वंद्व शायद कैलाशजी ने भांप लिया था।

"कार्यक्रम क्या रहेगा?" निर्दोषजी स्वयं को अपराधी समझने लगे थे।

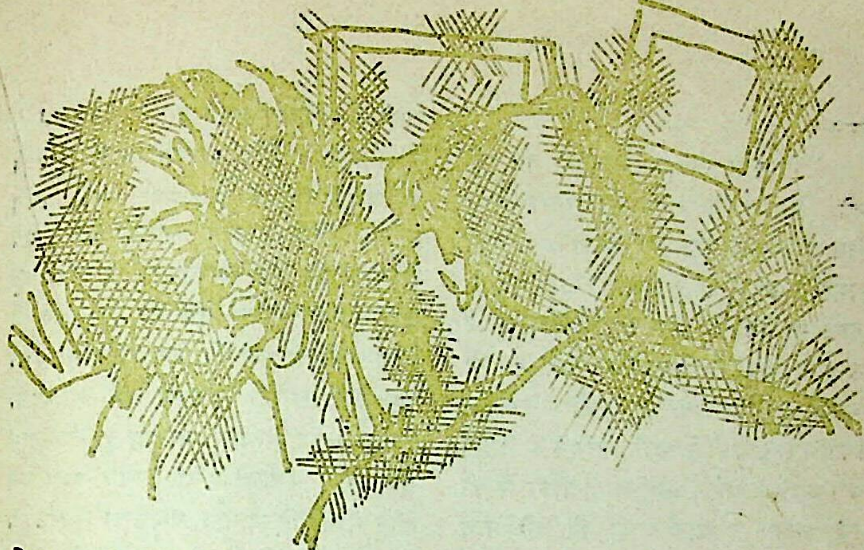
कैलाशजी ने दोहरा दिया, "आप सभापति रहेंगे। किसी पूंजीपति या राजनीतिज्ञ को हम मंच पर नहीं बैठा रहे।"

●●

टैक्सी में सवा घंटे चलने के बाद भद्रनगर आ गया था। मार्ग में हरियाली, दूर पर ऊंची-ऊंची पहाड़ियां और हरियाली के बीच छोटे-छोटे सफेद घर। शीतल मंद हवा के झोंकों ने निर्दोषजी को मुग्ध कर दिया।

समारोह के स्थान पर पहुंचते ही उन्हें ससम्मान बैठाया और मालाओं से लाद दिया गया। सभापति का आसन ग्रहण कर उन्होंने श्रोता-समूह पर दृष्टि डाली। आगे की पंक्ति में कुछ पुरुष थे, पीछे महिला-समुदाय। संचालन एक युवती कर रही थी। सबसे पहले वंदना, फिर समूह-नृत्य, एकाकी नृत्य, एक एकांकी। कार्यक्रम पौन घंटे चलता रहा। कार्यक्रम की तत्परता और रंगीनी में निर्दोषजी को अचानक बोध हुआ कि वे जिस मंच पर बैठे हैं उस पर लौटते सूरज की रश्मियां सीधी पड़ रहीं हैं। आंखें-सिर-गरदन सभी तप उठे। काली ऐनक चढ़ा लेने पर किरणें उनकी आंखों में और कठोर होकर जलने लगीं। लगा, मंच पर बैठना उनके लिए असंभव होता जा रहा है। छोटी बालिकाओं का नृत्य चल रहा था। आधा घंटा और वे धैर्य धारण किये बैठे रहे। सवा घंटे के सांस्कृतिक कार्यक्रम के बाद समीप बैठी अध्यक्षा से बात की। धूप के कारण वे स्वयं भी व्यथित थीं। दोनों मंच से नीचे उतरकर दर्शकों के साथ सुविधा से बैठ गये।

अब भाषण शुरू हुए—प्रथम, द्वितीय तृतीय—सातों पदाधिकारियों ने भावपूर्ण मुद्राओं में अपने विचार प्रकट किये। एक घंटा और व्यतीत हो गया। निर्दोषजी को लगा कि वे कुरसी पर बैठे-बैठे भी थक गये हैं। पैरों में सख्त दर्द पहले ही था। कुरसी पर पैर लटकाये बैठे रहने से अब



बेहद बढ़ गया था।

अब भद्रनगर के उपस्थित प्रतिष्ठित भद्र-समूह के आशीर्वाद देने की बारी थी। एक-एक कर उन्हें मंच पर आमंत्रित किया जा रहा था और वे बड़े आराम से आशीर्वाद दे रहे थे। ढेरों बातें, ढेरों प्रश्न, समस्याएं, सहयोग के आश्वासन। सूरज की प्रखर किरणें सुकुमार होती जा रही थीं और फिर धीरे-धीरे लुप्त। विभिन्न संभ्रांत व्यक्ति, जो स्थानीय संस्थाओं से संबंधित थे, बड़ी संख्या में बाकी थे। उनके भाषण इतमीनान से हो रहे थे, धीरे-धीरे बारीकी से। निर्दोषजी सोचने लगे थे, उन्हें क्या कहना है? कुछ व्याख्याता खासा समय ले लेने के बाद भी समय के अभाव के कारण पीड़ित थे। जो भी आता, जमकर खड़ा होता और डटकर बोलता। उनकी स्थली पर एक साहित्यकार आया है, तो वे अपने करतब दिखाने से क्यों चूकें! निर्दोषजी सहन करते रहे। दिन पूरी तरह ढल चुका था। अब केवल दो वक्ताओं को और बोलना था। उसके बाद सभापति यानी मुख्य अतिथि यानी निर्दोषजी की बारी थी। वे चेतन हुए। पैरों के दर्द और थकान को भुला दिया। अभी तक हर वक्ता का एक-एक शब्द ध्यान से सुना तो उन दो की ही उपेक्षा क्यों करें!

लोग-बाग वक्ताओं के साथ-साथ आंख बचाकर मुख्य अतिथि की भाव-मुद्राएं भी निहारते हैं। उसे इस तरह ढला देख उन्हें कैसा लगेगा? तरोताजा और प्रमुदित दीखने के प्रयास में निर्दोषजी तने बैठे रहे—गरदन एकदम सीधी, आंखें पूरी तरह खुली हुईं, ओठ आह्लाद और संतोष की मुसकान में खिले। उन्हें महसूस होने लगा कि इस प्रयत्न में वे थकते चले जा रहे हैं। तभी उनका नाम पुकार लिया

गया।

निर्दोषजी की आंखें अब भी तप रही थीं, दिमाग में हलका-सा तनाव था। लग रहा था जो कुछ उन्हें कहना था, उसकी समाप्ति हो चुकी है। अंगारे बुझ गये हैं, राख रह गयी है। फिर भी अपने नाम पर उन्होंने तत्परता दिखायी। भव्य ढंग से चलते हुए वे मंच पर आये। तालियां पिटीं। निर्दोषजी ने अपने सामने के चेहरों पर नजर डाली—थके-मांदे बासी से हो रहे चेहरे। सम्भ्रांत नागरिकों की पांत कुछ इस प्रतीक्षा में कि देखें मुख्य अतिथि आखिर क्या बात हमसे बढ़कर कहता है! मुख्य अतिथि सिर्फ औपचारिकता निभाने की मन:स्थिति में आ चुका था। उसने आरंभ किया, "बहनो, भाइयो और प्रिय बच्चो। हम सब काफी देर से उपयोगी और रोचक भाषण सुन रहे हैं। अब मैं समझ नहीं पा रहा कि मेरे कहने को बचा क्या है? इसलिए मैं अपने सभी सहयोगी वक्ताओं का आभार मानता हूं, जिन्होंने मुझे अपने भाषणों द्वारा अत्यंत प्रभावित और मुग्ध किया (भाषणकर्ता संतोष से मुसकरा रहे थे)। इसके उपरांत मैं संस्था

के सभी पदाधिकारियों के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन करना चाहूंगा—जिनके अनुरोध के कारण इस मंच पर आ सका। समय काफी अधिक हो चुका है, अतएव अपना वक्तव्य सिर्फ दस मिनट में समाप्त कर दूंगा।" और निर्दोषजी ने अपना भाषण दस नहीं, सिर्फ सात मिनट में समाप्त कर दिया—कहानी के सात साफ-सुथरे पृष्ठों की तरह।

आयोजन एक विद्यालय में था। जलपान का प्रबंध भी वहीं था। हाल ही निर्मित होने के कारण प्रकाश की व्यवस्था नहीं हो पायी थी। सलेटी अंधकार कमरे में अच्छी तरह फैल चुका था। निर्दोषजी चुपके से भीड़ में से निकलकर बाहर खुले मैदान में आ खड़े हुए।

निर्दोषजी को बाहर अच्छा लग रहा था। तभी संचालिकाएं बाहर आयीं—

"निर्दोषजी, हम आपको भीतर देख रही थीं।"

"मैं बाहर आ गया था, भीतर कुछ घुटन महसूस हो रही थी।"

"जी, हमें अफसोस है।"

"कोई बात नहीं, कैलाशजी किधर हैं, उनसे विदा ले लूं।"

"अभी बुलाते हैं।" लड़कियां दौड़कर चली गयीं और तुरंत लौटकर आ गयीं। कैलाशजी आकर खड़े हो गये।

"चलिए, हम लोग चलते हैं। टैक्सी तैयार है।" कैलाशजी ने भावुक होकर निर्दोषजी का हाथ थाम लिया।

"सच, हम लोग तो आज गद्‌गद हो गये। आपने देखा, हमारे जी. एम. महोदय और यहां की फैक्टरी के मालिक—हमारे कॉलेज के सर्वेसर्वा, देश की संपूर्ण राजनीति का अंश-अंश समझने में पारंगत, इतने बड़े आदमी, जिनकी कोठियां कई शहरों में हैं, यहां हम लोगों के बीच इतनी देर बैठे रहे। सच, आश्चर्य हो रहा है! इतना व्यस्त आदमी, जिसे इतने काम करने होते हैं, इतनी बड़ी जिम्मेदारियां संभालनी होती हैं, वह हमारे साथ इतनी देर रहा! यहां के फैक्टरी-मालिक इनसान नहीं देवता हैं।"—सचमुच गद्‌गद हो उठे थे कैलाशजी। फिर बोले, "आज तो आपने कुछ नहीं सुना। एक दिन हम आपको उनका भाषण सुनने के लिए पुनः आमंत्रित करेंगे।"

"वे चले गये?"

"हां, इस समय तो चले गये।" कैलाशजी का स्वर जैसे निर्दोषजी को उनसे न मिलवा पाने पर अफसोस प्रकट कर रहा था, "उन्हें विदा करके ही आ रहे हैं हम लोग।"

"संस्था की सभी सदस्याएं भी आपके साथ रही होंगी?"

"जी सभी थीं। दरअसल आज हमारे कार्यक्रम के कारण फैक्टरी-मालिक को क्लब जाने में काफी देर हो गयी।" कैलाशजी ने निर्दोषजी का हाथ भावुकता के आवेश में एक बार फिर दबा दिया था।

—३/६ भगवानगनर, देहरादून

पुरुष निडर होकर नसबन्दी करायें

* * *

नसबन्दी का किसी प्रकार का कोई बुरा असर नहीं

* * *

नसबन्दी सम्बन्धी कुछ आवश्यक जानकारी

१. पुरुष की नसबन्दी एक मामूली आपरेशन होता है।

२. इसमें कोई तकलीफ नहीं होती।

३. नसबन्दी कराने पर शारीरिक एवंमानसिक स्वास्थ्य पर कोई असर नहीं पड़ता।

४. आदमी के पुरुषत्व में कोई अन्तर नहीं होता। नसबन्दी के बाद वैवाहिक जीवन अधिक सुखी होता है।

५. नसबन्दी के लिए बेहोश करने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

६. अस्पताल में नहीं रहना पड़ता।

७. नसबन्दी आपरेशन के बाद तीन-चार घण्टे का आराम काफी है।

८. इसके बारह दिन के बाद मेहनत का भी काम पूर्ववत कर सकता है।

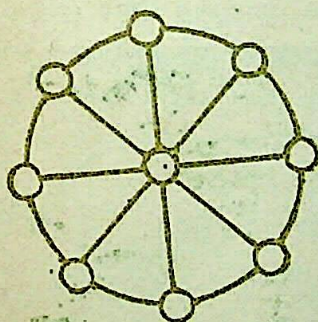
९. नसबन्दी आपरेशन के बाद किसी प्रकार की तकलीफ होने पर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र पर तत्काल उपचार किया जाता है।

सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित

बुद्धि विलास

१. किसी ने एक स्त्री से उसकी उम्र पूछी। उस स्त्री ने इसका सीधा उत्तर न देकर कुछ घुमाव-फिराव से जवाब दिया—'अगर मेरी उम्र के अंक बदल दिये जाएं तो वह मेरे पति की उम्र हो जाएगी और हम दोनों की उम्र का जोड़ दोनों की उम्र के अंतर का ग्यारह गुना है।' बताइए, उस स्त्री की उम्र क्या है।

२. यहां प्रस्तुत ९ वृत्तों में १ से ९ तक के सभी अंक इस प्रकार लिखिए कि प्रत्येक पंक्ति का जोड़ १५ हो।



३. क. महात्मा गांधी ने दांडी-मार्च कब और कहां से आरंभ किया था?

ख. उन्होंने दांडी तक कितनी दूरी की यात्रा की थी और कितने व्यक्तियों के साथ?

ग. दांडी में समुद्र-तट पर उन्होंने नमक-कानून कब तोड़ा था?

४. क. ब्रिटेन का वह कौन-सा एकमात्र राजा हुआ है, जिस पर उसकी प्रजा ने मुकदमा चलाया और उसे मार डाला गया?

ख. ब्रिटेन का कौन-सा राजा अपने शासनकाल में पागल हो गया था?

५. निम्नलिखित उद्धरण किसका है?—

'आप सभी लोगों को कुछ समय के लिए और कुछ लोगों को हमेशा के लिए मूर्ख बना सकते हैं, लेकिन सभी लोगों को हमेशा के लिए मूर्ख नहीं बना सकते।'

६. निम्नलिखित के आविष्कारक कौन हैं?

क. एयर-कंडीशनिंग, ख. सिनेमास्कोप, ग. स्टेथस्कोप।

७. क. इस वर्ष मांट्रियल ओलंपिक में मैराथन दौड़ में किस भारतीय ने भाग लिया था?

ख. भारत केवल एक बार एशियाई फुटबाल-चैंपियन हुआ है। क्या आप बता सकते हैं कि कब और कहां?

लक्ष्मी-महिमा

लक्ष्मी के भंडार की बड़ी अपूरब बात
ज्यों-ज्यों खर्चे बढ़ें
त्यों-त्यों यह घट जात
त्यों-त्यों यह घट जात,
दाम बाढ़ें अति भारी
सबै उलूक बनाय करे यह आप सवारी
या लक्ष्मी सों प्रीत न
'प्रीतम' करियो कोय
लक्ष्मी-लक्ष्मी तबै-जबै गृहलक्ष्मी होय

—स. प्री.

८. नीचे लिखे पुरस्कार किन व्यक्तियों को प्राप्त हुए हैं?
क. १९७५ का नेहरू पुरस्कार (अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना) ख. १९७६ का मैगसेसे पुरस्कार (नाटक, पत्रकारिता)

९. भारत में आधुनिक भाषा-शास्त्र के अध्ययन की नींव किसने रखी थी?

१०. पुराणों के अनुसार किन पांच स्त्रियों को विवाहित होने पर भी 'पंचकन्या' की संज्ञा दी गयी है?

११. दुनिया के दो देशों के राष्ट्रगान ऐसे हैं जिनके रचयिता एक ही हैं। इन देशों, उनके राष्ट्रगानों तथा उनके रचयिता का नाम बताइए।

१२. प्रसिद्ध 'कोहेनूर' हीरा आजकल कहां है?

ख. यह हीरा वहां कब, कैसे पहुंचा था?

१३. निम्नलिखित के नाम बताइए—

क. राष्ट्रसंघ में भारत के स्थायी प्रतिनिधि।

ख. अमरीका में भारत के राजदूत

ग. हरियाणा के राज्यपाल

घ. भारत में चीन के प्रतिनिधि

१४. निम्नलिखित के बारे में संक्षेप में बताइए—

क. 'गृहलक्ष्मी', ख. 'टेंपल-ट्री', ग. साउथहाल, घ. हाकन मैग्नस।



१५. ऊपर दिये गये चित्र को ध्यान से देखिए और बताइए यह क्या है?

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। यदि आप सारे प्रश्नों के उत्तर दे सकें तो अपने सामान्य ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आधे से अधिक में साधारण और आधे से कम में अल्प।

—संपादक

परिचर्चा

पाकेट बुक में स्टार सिस्टम

प्रस्तोता : विमलचंद्र

कहा जाता है कि पुस्तकों को बांट कर पढ़ना चाहिए। इसके पीछे भावना यही है कि ज्ञान अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचे। ज्ञान को किसी भी कसौटी पर कसना संभव नहीं है। जरूरी यह है कि वहुत लोगों के वीच अधिक पुस्तकें बांटना ही है तो ऐसी पुस्तकें बांटना चाहिए, जो केवल मनोरंजन ही नहीं करतीं वल्कि उससे आगे की भी वात कहती हैं। एच. जी. वेल्स-जैसे लेखकों की कल्पनाओं के सामने आज विज्ञान की दुनिया को भी नतमस्तक होना पड़ा है। इसके साथ पश्चिमी जगत में जासूसी उपन्यासों की भी भरमार है, जो जनता का मनोरंजन भले ही करें लेकिन उसके साथ-साथ उन्हें गलत काम करने और छल-प्रपंच के रास्ते पर भी ले जाते हैं। विकसित देश रोजी और रोटी के प्रश्न से वहुत ऊपर उठ गये हैं और वे विलासभरा और सनसनीखेज साहित्य प्रकाशित कर सकते हैं। लेकिन भारत के अतिरिक्त एशिया तथा अफरीका के वे अन्य देश, जो अभी रोजी-रोटी की समस्याओं से ऊपर नहीं उठ पाये हैं, ऐसे साहित्य को लोकप्रिय बनाकर अपनी 'मौत' आमंत्रित नहीं कर सकते। करना भी नहीं चाहिए। जब आदमी का पेट भरा होता है तब उसे पुस्तकों का ध्यान आता है। कुछ समय पहले श्रीमती इंदिरा गांधी ने लेखकों की एक सभा में कहा था— "हमारी पहली समस्या भूख से लड़ना है। मैं अपने व्यस्त जीवन में अपने आस-पास पुस्तकें देखकर ही संतोष कर लेती हूं।"

आज का भारतीय साहित्य शगल और चुटकुलेवाजी का साहित्य नहीं हो सकता और जो भी लेखक और प्रकाशक

बड़ी-बड़ी पत्रिकाओं में नकली लेखकों की पुस्तकों के पूरे पृष्ठ का विज्ञापन देकर हिंदी का प्रकाशक वास्तविक लेखन और सही लेखक का सबसे अधिक विरोध कर रहा है। इससे एक 'ट्रैश' साहित्य सामने आता है और समूचे हिंदी लेखन की दिशा में एक प्रश्न-चिहन जोड़ता है ?

इसमें योग देते हैं, उन्हें इस विकासमान देश का शत्रु समझना चाहिए।

.. हिंदी में पुस्तक प्रकाशन-व्यवसाय ने पिछले पंद्रह-बीस वर्षों में इतनी प्रगति की है कि सभी तरह का साहित्य लिखा जाता है और प्रकाशित होता है। समस्या पुस्तकों के मूल्य की है। मूल्यों का प्रश्न बाजार के साथ जुड़ा होता है और वर्तमान स्थितियों को देखते हुए सारे दोष प्रकाशकों के सिर मढ़ देना भी उचित नहीं है। मूल्य-नियंत्रण के लिए एक ही रास्ता वच जाता है और वह है, सस्ती किताबों का



विश्वनाथ

जिन्हें पाकेट बुक्स कहा जाता है। भारत-जैसे गरीव देश के लिए पाकेट बुक्स का प्रकाशन एक वहुत वड़ी आवश्यकता है। हिंदी जगत पर एक विहंगम दृष्टि डालने के बाद हम हिंद पाकेट बुक्स को श्रेय दिये विना नहीं रहेंगे। सन् १९५८ में उन्होंने पहली वार सुरुचिपूर्ण ढंग से पाकेट बुक्स के माध्यम से हिंदी के ज्ञानक्षेत्र को संपन्न करने का काम शुरू किया था।

इसके बाद अनेक प्रकाशक इस क्षेत्र में आये, जिनमें पांच-सात प्रकाशक ऐसे हैं, जिनकी अव वाजार में धाक जम गयी है। एक वड़े प्रवाह की तरह रेला आया है और अव स्थिति यह है कि पांकेट वुक्स के माध्यम से भी पश्चिमी ढंग का सस्ता और हलका साहित्य धड़ल्ले से वाजार में विकने लगा है। वनारस, इलाहाबाद, दिल्ली और मेरठ इसके महत्त्वपूर्ण केंद्र वन गये। अपनी शोध-यात्रा में हमने पाकेट बुक्स के सात प्रकाशकों से विभिन्न दृष्टियों से बातचीत की और उसके वाद जो तथ्य सामने आये हैं, उनमें कई उपयोगी और महत्त्वपूर्ण तो हैं ही, कुछ चौंका देनेवाले भी हैं।

हमने जिन लोगों से चर्चा की उनमें से कुछ प्रमुख व्यक्ति ये हैं— सर्वश्री दीनानाथ (हिन्द पाकेट बुक्स), विश्वनाथ (आनंद बुक्स) दयानन्द वर्मा (स्टार बुक्स) विजयकुमार (विजय पाकेट बुक्स), सुरेन्द्र मलिक (मयूर पेपर बैक्स), ओम प्रकाश (राधाकृष्ण प्रकाशन), श्रीमती शीला संधु (राजकमल प्रकाशन) और प्रख्यात लेखक श्री कर्त्तारसिंह दुग्गल।

प्रकाशन नीति: पैसे का सवाल

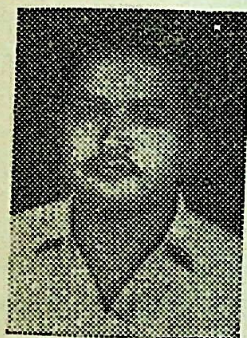
यह प्रश्न पूछने पर कि 'पाकेट बुक्स प्रकाशन के लिए क्या नीति अपनायी जाती है', अधिकांश प्रकाशकों ने भिन्न-भिन्न और कुछ अस्पष्ट-से उत्तर दिये।

श्री विश्वनाथ का कहना था : 'मैं पाकेट बुक्स प्रकाशन को वही सम्मान

और स्थान देता हूं जो अन्य साहित्यिक, स्तरीय अथवा गंभीर प्रकाशन को दिया जाता है।' लेकिन उन्होंने स्वीकार किया कि प्रकाशन के इस सशक्त माध्यम का दुरुपयोग भी खूब हुआ है। उनके अनुसार 'आज रेलवे स्टालों और फुटपाथों पर घटिया किस्म की पुस्तकें वहुतायत से विक रही हैं, जिसके कारण अच्छे स्तर की पाकेट वुक्स के प्रचार और प्रसार में रुकावट आ रही है।'

वुक्स में प्रकाशित होनेवाले लोकप्रिय लेखकों को घटिया मान लेते हैं। यह उनका पूर्वाग्रह है। साहित्यिक सामग्री के चयन में एक पेपर वैक्स प्रकाशक का दृष्टिकोण मुख्यतः पुस्तक की पठनीयता होती है।

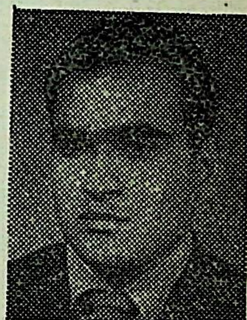
श्री दीनानाथ का कहना था, "हम केवल वही नहीं प्रकाशित करते जो जनता मांगती है वल्कि कुछ ऐसा साहित्य भी प्रकाशित करते हैं, जो लोगों तक पहुंचना चाहिए और जिससे अभिरुचि परिष्कृत



विजयकुमार



दयानंद वर्मा



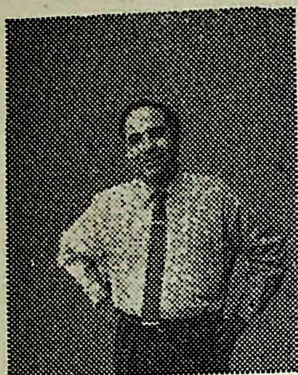
सुरेंद्र मलिक

उनका यह भी कहना था कि यह आवश्यक नहीं कि जो रचना लोकप्रिय हो, वह 'असाहित्यिक नाम से जानी जाए। सचाई तो यह है कि लोकप्रिय कृतियां भी काफी सीमा तक साहित्यिक होती हैं। जिन कृतियों को विशुद्ध साहित्यिक माना जाता है, वे भी 'पेपर बैक्स' में प्रकाशित होती हैं। उनकी लोकप्रियता भी खूब रही है। लेकिन कुछ साहित्यकार पाकेट

हो। हम सभी प्रकार के पाठकों के लिए उनकी आवश्यकता का साहित्य देना चाहते हैं, सिवा अश्लील साहित्य के।"

श्री दयानन्द वर्मा की नीति सामान्य जन तक पहुंचने की है। उनका उद्देश्य नये लोगों में पुस्तक पढ़ने की आदत डालना है।

यह सब तो साहित्य-सेवा (?) का एक पक्ष है। दूसरा पक्ष है शुद्ध व्यावसायिक लाभ का। इस संदर्भ में श्री विजयकुमार



श्री ओमप्रकाश

ने बिना किसी लाग-लपेट के कहा, "हम उसी प्रकार का 'मैटर' छापते हैं, जो धड़ल्ले से बिक जाए और हमारा पेट पले। हम किसी साहित्य-सेवा की बात नहीं करते।"

व्यावसायिक-लाभ की होड़ में प्रकाशकों को समझौते के लिए किस तरह विवश होना पड़ता है, यह सुरेन्द्र मलिक के इस कथन से स्पष्ट है, "प्रारंभ में हमारी प्रकाशन-नीति तो यह थी कि हम केवल श्रेष्ठ साहित्य ही सस्ते दामों में पाठकों को उपलब्ध करायें, किंतु जब बाजार में इस प्रकार की पुस्तकों का स्वागत नहीं हुआ तो हमें अपनी नीति बदलनी पड़ी।"

इस तथ्य की पुष्टि श्रीमती शीला संधु और श्री ओमप्रकाश ने भी की। उनका कहना था कि प्रारंभ में उन्होंने विशुद्ध साहित्यिक रचनाओं का ही पाकेट बुक्स में प्रकाशन किया। शुरू में तो एकाध पुस्तक काफी बिकी, पर बाद में विशुद्ध साहित्यिक रचनाएं होने के कारण हम व्यवसायिक स्तर पर पिट गये। अब हम केवल उतनी ही संख्या में पेपर बैक्स में उच्चस्तरीय साहित्य छापते हैं, जिसकी खपत 'बुक्स क्लब' या कुछ पुस्तकालयों में हो जाती है।

उन्होंने यह भी कहा कि पाकेट बुक्स के जो प्रकाशक साहित्य में योगदान की बात करते हैं, वह केवल गप्प है। अगर ऐसा ही होता तो पाकेट बुक्स के नाम से अश्लील, नग्न और भोंडा साहित्य बाजार में न आता।

श्रीमती शीला संधु ने अपनी बात को स्पष्ट करते हुए यह बताया कि अगर पाकेट बुक्स प्रकाशन से केवल धन कमाना ही उद्देश्य होता तो मैं भी अन्य प्रकाशकों की तरह नयी दिल्ली के कनाट प्लेस में वातानुकूलित ऑफिस लेकर काम करती। लेकिन हम—विशुद्ध साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित करनेवाले — उतना धन नहीं बटोर सकते जितना कि भोंडे और अश्लील साहित्य प्रकाशित करनेवाले प्रकाशक अनायास ही बटोर लेते हैं।

एक पाश्चात्य विचारक ने कहा था कि अगर किसी देश को बहुत दिनों तक गुलाम बनाये रखना है तो पहले वहां के साहित्य को भ्रष्ट करो।

इसी तथ्य के संदर्भ में प्रख्यात लेखक कर्तारसिंह दुग्गल ने कहा, "एक समझदार और जवाबदेह प्रकाशक को केवल वही नहीं छापना चाहिए जिसे पाठक पढ़ना

चाहता है, बल्कि वह भी छापना चाहिए जिसे पाठक को पढ़ना चाहिए।'

पाठकों की रुचि के अनुकूल साहित्य छापने की बात अनेक प्रकाशकों ने की, लेकिन यह पूछने पर कि पाठकों की रुचि जानने के लिए क्या उन्होंने कोई वैज्ञानिक तरीका अपनाया है तो लगभग सभी प्रकाशकों ने नकारात्मक उत्तर दिया और स्वीकार किया कि उन्होंने ऐसा कोई सर्वेक्षण नहीं कराया है। केवल श्री दीनानाथ ने एक 'घरेलू लाइब्रेरी योजना' की बात कही, जिसके द्वारा एक प्रकार का सर्वेक्षण हुआ है। दूसरे प्रकाशकों ने बताया कि हम 'मांग' को रुचियों का आधार मानते हैं, यानी जो कृति अधिक बिकती है, वही भविष्य में पुस्तकें प्रकाशित करने का आधार बन जाती है।

पाकेट बुक्स से संबंधित एक प्रश्न और है—यह है लेखकों का। जिन लेखकों की पुस्तकें हजारों और लाखों की संख्या में बिकती हैं, वे आखिर हैं कौन?

श्री दयानन्द वर्मा के अनुसार सबसे अधिक बिकनेवाले लेखक हैं सर्वश्री गुलशन नन्दा, राजवंश, समीर, लोकदर्शी, गुप्तदूत इत्यादि। लेकिन उन्होंने श्री नंदा को छोड़कर शेष लेखकों से मिलवाने में अपनी असमर्थता व्यक्त की, स्पष्ट है कि ये सब नकली नाम हैं।

श्री दीनानाथ के अनुसार लोकप्रिय लेखकों में शिवानी, गुरुदत्त, अमृता प्रीतम, कृष्ण चन्दर, गुलशन नंदा आदि आते हैं, और जासूसी लेखकों में कर्नल रंजीत। यों श्री दीनानाथ ने कहा कि उनके लोकप्रिय लेखकों के पते सर्वविदित हैं लेकिन 'कर्नल रंजीत' 'अदृश्य लेखक' जान पड़े। हमें पता चला है कि 'कर्नल रंजीत' के नाम से उर्दू के एक दैनिक पत्र में काम करनेवाले एक पत्रकार लिखते हैं। वे पहले 'गुप्तदूत' नाम से भी लिखते थे।

श्री विजयकुमार ने अपने एकमात्र लोकप्रिय लेखक राजहंस से बाकायदा साक्षात्कार कराया। उनसे बातें करने पर पता चला कि वे डेढ़ महीने में धड़ल्ले से बिकने लायक एक उपन्यास तो लिख ही डालते हैं। अपने प्रकाशक की तरह उन्होंने भी स्पष्ट शब्दों में कहा, "मैं अपने लेखन से किसी साहित्य-सेवा की बात नहीं करता। मैं तो मात्र व्यवसाय के लिए लिखता हूं।"

शीला संधु





कर्तारसिंह दुग्गल

राजहंस से ही मिलता-जुलता एक नाम और है—राजवंश। इस नाम को देखते ही डेढ़ वर्ष पूर्व पढ़ा एक इश्तहार याद आता है। इस इश्तहार में प्रकाशक ने विशिष्ट शैली में लिखे गये इस नाम पर अपना कापीराइट घोषित किया था। 'कापीराइट' किया हुआ दूसरा नाम था—लोकदर्शी। हिंदी प्रकाशन में अपने रंग का शायद यह पहला ही इश्तहार था।

ये दोनों नाम लेखकों के 'उपनाम' नहीं, 'सच्चे' नाम बताये गये। उपनामों से हिंदी जगत का पाठक अपरिचित नहीं था, लेकिन इस तरह के 'कापीराइट-नाम' उसके लिए बिलकुल नये थे। पाठक वस्तुओं के नाम को 'रजिस्टर्ड' और 'कापीराइट' हुआ देखने का अभ्यस्त था, पर लेखकों के 'रजिस्टर्ड नाम' का यह एक सर्वथा नया अनुभव था।

प्रकाशकों को इस तरह के 'कापीराइट नामों' की जरूरत क्यों पड़ी?

आम पाठक इस प्रश्न पर गहराई से नहीं सोचता। उसे न तो इसकी जरूरत है, और न ही अवकाश! आम पाठक की इसी उदासीनता के वृक्ष से लिपटकर 'नकली नामों' की अमरबेल फल-फूल रही है।

नकली लेखन और नकली नाम

नकली लेखन और नकली नामों के इस नये चक्र के पीछे ऐसे अनेक अदृश्य तंतु हैं, जो उसे सतत गतिमान रखते हैं।

कुछ लोकप्रिय लेखक रूमानी किस्म के उपन्यास लिखकर पैसा तो कमाना चाहते हैं, पर नाम नहीं गंवाना चाहते! फलतः वे प्रकाशकों को किशोर-वय बुद्धि के पाठकों को लुभानेवाली कृतियां लिखकर देते हैं। ये कृतियां हमारी हिंदी-फिल्मों का लिखित रूप ही होती हैं। वही प्रेम-त्रिकोण, हिंसा, बलात्कार, रोना-धोना और फूहड़ द्विअर्थी हास्य। ये सारी कृतियां किसी एक 'छद्मनाम' से प्रकाशित की जाती हैं, फलतः इस नाम को एक अस्तित्व मिल जाता है।

जब कुछ लोकप्रिय लेखक किन्हीं कारणों से इन प्रकाशकों के लिए लिखना बंद कर देते हैं तब प्रकाशक 'खेल' जारी रखने के लिए अन्य लेखकों से संपर्क साधते हैं। सेक्स, हिंसा-प्रधान आयातित विदेशी साहित्य का भारतीयकरण न तो कोई कठिनाई का कार्य है और न ही इस विद्या में सिद्धहस्त व्यक्तियों का राजधानी में 'अकाल' ही है।

हम एक ऐसे युवा लेखक को जानते हैं, जो एकसाथ दो पाकेट बुक्स के लिए

लिखते थे। एक को वे जासूसी साहित्य देते थे, तो दूसरे को रूमानी। अपने असली नाम से उन्होंने केवल प्रतिष्ठाजनक कृतियां ही प्रकाशित करवायीं।

एक घटना ने प्रकाशकों को नकली नामों की शरण में जाने पर मजबूर कर दिया।

आज पाकेट बुक्स में बेहद लोकप्रिय एक लेखक ने अपने प्रारंभिक दिनों में प्रकाशकों की देहरियों की वार-वार खाक छानी, पर किसी ने उसे प्रोत्साहित नहीं किया। लेकिन जव उसका एक उपन्यास 'क्लिक' हो गया, विलकुल किसी हिंदी फिल्म की तरह, तव वह लेखक रातों-रात प्रकाशकों की आंखों का तारा वन गया। अव वह पाकेट बुक्स जगत का एक वहुत वड़ा 'स्टार' था। स्वाभाविक था कि प्रकाशकों को उसके 'स्टार'-जैसे नखरे वहुत अखरे, वहुत चुभे! इस चुभन ने उन्हें भविष्य के लिए सचेत कर दिया और उन्होंने तय किया कि अव वे ऐसा कोई नया 'स्टार' नहीं वनने देंगे। यों वे फिल्मों की तरह ही किसी 'नाम' को विज्ञापित प्रचारित कर उसकी एक 'इमेज' बनाएंगे, पर यह 'इमेज' एक मिथ्या, अस्तित्वहीन लेखक की होगी, ऐसा लेखक जो कभी उस नाम पर क्लेम नहीं कर सकेगा।

श्री विश्वनाथ नकली नाम को उपनाम से जोड़कर इसमें कोई बुराई नहीं देखते और कहते हैं कि नकली नाम से छपने-वाले लेखक भी अपनी प्रत्येक रचना का मनमाना पारिश्रमिक लेते हैं।

श्री दयानन्द वर्मा ने स्वीकार किया कि छद्मनाम से केवल वे लेखक ही तैयार होते हैं, जो अपना व्यक्तित्व सामने लाने लायक नहीं समझते।

श्रीमती शीला संधु और श्री विजय-कुमार ने कहा कि नकली नाम की वजह से मर्यादाहीन और असाहित्यिक लेखन को काफी प्रोत्साहन मिला है।

लेकिन क्या किसी गुमनाम व्यक्ति के हस्ताक्षर को ट्रेड मार्क के रूप में चलाना संभव है? अगर लेखक ही नहीं है तो उसके नाम के विशेष 'स्टाइल' को ही कैसे 'ट्रेड मार्क' माना जा सकता है? एक और सवाल उठता है कि क्या लेखक कोई जिंस है, या उत्पादित माल है, जिसका कापीराइट हो!

स्तरीय साहित्य और नकली नाम

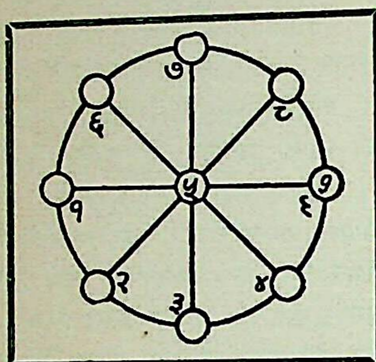
नकली नाम और नकली लेखकों का स्तरीय साहित्य और लेखकों पर भी दुष्प्रभाव पड़ा है। प्रकाशक नकली नाम का विज्ञापन तो वड़े सज-धज के साथ करते हैं, किंतु वास्तविक लेखकों का उनके विज्ञापन-कार्यक्रम में कोई स्थान नहीं होता।

इस संवंध में श्री विश्वनाथ की मान्यता है कि जो अच्छे लेखक होते हैं, वे स्वयं अपनी कृतियों के वल पर आगे आते हैं, अपना एक पाठक वर्ग स्वयं वनाते हैं और उनकी कृतियों की मांग वरावर वनी रहती है।

तव प्रश्न उठता है, यदि प्रकाशक इसे ठीक समझते हैं तो नकली लेखक को ही

बुद्धि-विलास के उत्तर

१:– ४५ वर्ष, २. नीचे चित्र देखें—



३. क. १२ मार्च, १९३० को साबरमती आश्रम (अहमदाबाद) से, ख. ३८६ कि. मी. ७९, व्यक्तियों के साथ, ग. ६ अप्रैल, १९३०, ४. क. चार्ल्स प्रथम, ख. जार्ज तृतीय, ५, अब्राहम लिंकन, ६. क. डब्लू. एच. केरियर, ख. हेनरी क्रेटिन, ग. रेने लेनेक, ७. क. शिवनाथसिंह, ख. १९६२, जकार्ता, ८. क. डॉसाक, ख. शंभु मित्र, ९. ग्रियर्सन, १०. अहल्या, द्रौपदी, कुंती, तारा, मंदोदरी, ११. भारत- 'जन-गण-मन' तथा बांगलादेश– 'सोनार बांगला' : रचयिता रवीन्द्रनाथ ठाकुर, १२. क. ब्रिटिश राजमुकुट में जड़ा है, ख. पंजाब पर कब्जा करने के बाद अंगरेजों ने दलीपसिंह से इसे प्राप्त किया और १८४९ में यह विक्टोरिया के राजमुकुट में लगाया गया, १३. क. रिखी जयपालसिंह, ख. केवलसिंह, ग. जयसुखलाल हाथी, घ. चेन चाओ युआन, १४. क. जीवन बीमा निगम की एक पालिसी जिसके अंतर्गत विधवाओं के लिए आजीवन पेंशन की व्यवस्था है, ख. श्रीलंका का प्रधानमंत्री-निवास, ग. लंदन का एक उपनगर, जहां भारतीय मूल के लोगों की बस्ती है— यहां पिछले दिनों कुछ भारतीयों की हत्या करदी गयी थी, घ. समुद्र में तेल की खुदाई करनेवाला भारत का एक जहाज (ड्रिलिंग-शिप) १५-न्यूजप्रिंट रोल।

बार-बार विज्ञापित करने की क्यों जरूरत होती है? नकली लेखक और नकली लेखन को भी अपने बल पर चलने देना चाहिए।

स्तरीय लेखक के असली नाम को विज्ञापित न करने के पीछे शुद्ध व्यापारिक उद्देश्य होता है। प्रकाशक इस बात से डरते हैं कि अगर रुपये लगाकर किसी असली नाम को विज्ञापित करेंगे तो वही लेखक जम जाने पर अपने मूल प्रकाशक को पहचानने से कतराने लगेगा।

पाकेट बुक्स में स्तरीय साहित्य का स्थान

इस नकली नाम और नकली लेखन के विज्ञापन से हो यह रहा है कि स्तरीय रचनाएं और स्तरीय लेखक उभरकर पाठकों के सामने नहीं आ पाते।

पाकेट बुक्स में स्तरीय साहित्य का

कितना स्थान होता है और नये लेखकों को कितना स्थान दिया जाता है।

श्री सुरेन्द्रनाथ ने स्पष्टतः कहा कि हमने पाकेट बुक्स में साहित्यिक पुस्तकों का प्रकाशन नहीं किया है। यों हमारा लक्ष्य हमेशा स्तरीय पुस्तकों के प्रकाशन का रहता है और हम अपने प्रत्येक सेट में कम से कम एक स्तरीय पुस्तक अवश्य देते हैं। नये लेखकों के लिए भी जगह की गुंजाइश नहीं, क्योंकि वे बिकते नहीं हैं।

श्री विजयकुमार ने न तो अभी तक स्तरीय साहित्य का प्रकाशन किया है, न ही निकट भविष्य में करने की योजना है। हां, भविष्य में ये तीन-चार नये युवकों की रचनाएं छापने जा रहे हैं।

श्री विश्वनाथ यह मानने को तैयार ही नहीं हैं कि पाकेट बुक्स या पेपर बैक्स में जो लेखक छपते हैं, वे स्तरीय नहीं होते। लेकिन श्री दुग्गल ने स्वीकार किया कि पेपर बैक्स या पाकेट बुक्स की वजह से नये स्तरीय लेखक उभरकर नहीं आ पाते।

'क्या लेखकों के नाम का कापीराइट हो सकता है?'
अगले अंक में पढ़िए सर्वोच्च न्यायालय के एक प्रमुख वकील के विचार

गंभीर संकेत

इन तथ्यों के परिप्रेक्ष्य में जब पाकेट बुक्स प्रकाशन की उपयोगिता का मूल्यांकन किया जाए तो यह स्पष्ट हो जाता है कि अगर प्रकाशक यही रवैया अपनाते रहे तो भविष्य में पुस्तकों की दूकानों पर स्तरीय साहित्य की बजाय विकृत सेक्स-युक्त साहित्य ही पाठकों को मिलेगा और लेखकों के नाम पर नकली लेखक ही विज्ञापित और प्रचारित होंगे। निश्चय ही यह सब बुरे भविष्य कीओर एक गंभीर संकेत है। ●

खोटे सिक्के

सूफी संत खैराबादी जीवनयापन के लिए सब्जी बेचते थे। प्रायः लोग उन्हें खोटे सिक्के दे जाते। कुछ चालाक लोग अपने खोटे सिक्के यह कहकर बदल ले जाते कि वे खैराबादी की दूकान से ही मिले हैं। संत खैराबादी वे सिक्के चुपचाप रख लेते। जब उनका अंत समय आया तब उन्होंने प्रार्थना की, "परवरदिगार! मैं जिंदगी भर खोटे सिक्के कबूल करता रहा। कभी कोई खोटा सिक्का नहीं लौटाया। मैं भी एक खोटा सिक्का हूं। आपके पास आ रहा हूं। मुझे लौटाना मत।"

अविस्मरणीय

ममता की तनहा पहाड़ी

आपने पता नहीं कभी गोंडवाना के पहाड़ देखे हैं या नहीं ! ये पहाड़ मिट्टी के नहीं, ठोस पत्थर के होते हैं । न बरसात से खिसकें, न तोड़ने से टूटें । समतल मैदानी खेतों के बीच अचानक 'एकला चलो रे' का उदाहरण बना एक पहाड़ तनकर खड़ा मिल जाएगा । इसी तरह गोंडवाना का हर पहाड़ अपनी-अपनी चुप्पी साधे तना हुआ सदियों से खड़ा है । इन्हीं पहाड़ों के बीच बसे किसी गांव की एक मां गोलकुंडा-एक्सप्रेस में अपने एक लाड़ले बेटे को छोड़ने आयी थी । काजीपेट जंक्शन पर गाड़ी खड़ी थी । बेटा नीली बुशशर्ट और सफेद पैंट से लैस, मां पीली धोती को महाराष्ट्रियन शैली में लपेटे शरीर की श्रमसिद्ध पुष्टता का गौरव बढ़ा रही थी । बेटा गाड़ी के दरवाजे पर ऊपर खड़ा था, मां प्लेटफार्म पर नीचे । गाड़ी ने चलने को सीटी दी तो धोती के खूंट में बंधे पैसे बेटे के हाथ में थमाते हुए उसकी आंखों का सैलाब फूट पड़ा । बेटे ने मां की यह हालत देखकर इधर-उधर नजर घुमायी और तमाम लोगों को आसपास देख शरमाकर फुसफुसी आवाज में मां को डांटने लगा, "क्या कर रही हो मां ? सब लोग देख रहे हैं !"

मां सबसे बेखबर, बेटे के चेहरे पर अपना हाथ फेर-फेरकर अपनी ममता उड़ेल रही थी । बेटा मारे शरम के गड़ा जा रहा था । प्लेटफार्म पर खड़े लोगों में अनेक की आंखें भीग रही थीं । गार्ड ने उसी के बिलकुल करीब से जो सीटी दी तो मां का रहा-सहा बांध भी टूट गया । गाड़ी चल पड़ी तो मां ने आखिरी बार बेटे का हाथ थामा और अपने माथे से लगाकर प्यार से चूमा और हलके से छोड़कर आंखों से फूट पड़ी । दूर तक झांक-झांककर पीछे देखने पर यही दिखा कि मां अपने अंदर के उमड़े हुए दरिया को अपनी पीली धोती के छोर में लपेटती रही । प्लेटफार्म खाली हो गया था, लेकिन पीली धोती में लिपटी ममता की वह तनहा मूर्ति गोंडवाना के पहाड़ों की तरह अकेली खड़ी रह गयी थी ।

मन हुआ कि चिल्लाकर कह दूं 'मां मैंने देखा है तूने अपने बेटे पर जिस सच्चे मन से आशीष बरसाये हैं । दुनिया तेरे बेटे का कुछ नहीं बिगाड़ सकती, बशर्ते कि तेरा बेटा इन आशीषों का मूल्य न भूल जाए ।'—आशीष का मूल्य होता बहुत है, देते नहीं लोग अंतःकरण से ! तूने तो

समूचे अंतःकरण से उस पर आशीष के फूल बरसाये हैं।

—कन्हैयालाल नंदन

शक्कर का जहर

गुरुकुल, पोरबंदर में दाखिल हुए सप्ताह भर हुआ था। घर की याद आते रहने से आंखों से अश्रुधारा बहती रहती थी। छुट्टी का दिन था। सभी छात्राएं निजी कार्य में व्यस्त थीं। मेरे कमरे की छात्रा पार्वती मुझसे आठ कक्षा आगे थीं। स्त्री-सहज कोमलता के बजाय पार्वती के भारी-भरकम शरीर से कठोरता झलकती थी, किंतु स्वभाव से वे सरल और मिष्टभाषी थीं। उस दिन दरवाजे पर दोनों हाथ टिकाये खड़ी पार्वती मुझसे कहने लगीं, "क्या दिनभर विसूरती रहती हो! तुम अपने नामानुसार हंसती-हंसाती रहा करो। देखो, मैं तुम्हारे लिए क्या लायी हूं!" और उन्होंने अपनी दोनों हाथों की मुट्ठियों की ओर इशारा किया।

मैं कुछ कहूं, इससे पहले ही पार्वती धड़ाम से जमीन पर गिर पड़ीं। उनकी मुट्ठियों में कैद चीनी के कण चारों तरफ छितरा गये। आसपास खड़ी छात्राएं यह देख दंग रह गयीं। पार्वती के विशाल वदन से पसीना छूट पड़ा और मुंह से झाग। वे बुरी तरह तड़प रही थीं। किसी भयंकर पीड़ा से वे मूर्च्छित हो गयी थीं। ऐसी हालत में भी एक छात्रा ने ताना कसा, "चोरी के भय से बेहोशी का बहाना बना रही हैं!"

शोरगुल सुनकर दो अध्यापिकाएं भी अपने कमरे से दौड़ी आयीं। चीनी की चोरी के लिए कौन-सी सजा उपयुक्त होगी, वे इसी ममले पर विचार-विमर्श करती रहीं। इतने में एक और अध्यापिका भागती हुई आयीं। उन्होंने अचेत पार्वती का सिर अपनी गोद में लेकर ज्योंही उनके हाथों को फैलाया, हम सभी की चीख निकल गयी: पार्वती की दायीं हथेली पर दो नन्हे बिच्छू चिपके थे। फौरन पार्वती को अस्पताल भेजने का इंतजाम किया गया। उस वक्त भी एक छात्रा खामोश न रह सकी। बोली, "चौरकर्म का उचित दंड स्वयमेव मिल गया।"

भाग्यवश पार्वती बच गयीं। अन्यथा जीवन-पर्यंत मेरे लिए शक्कर जहर बन जाती, क्योंकि गुरुकुल में अन्य कोई खाद्य-पदार्थ सुलभ न होने के कारण मेरे लिए ही पार्वती ने चीनी चुरायी थी।

—रंजना दवे

अविस्मरणीय

क्या हमारे पूर्वज तितली से अपरिचित थे?

● कमला रत्नम

मेक्सिको के प्राचीन निवासियों का विश्वास था कि फूल और गीत के माध्यम से परमात्मा मनुष्य से वात करता है। फूलों और तितलियों का आपस में घनिष्ठ संबंध है। दोनों के मिलन से गीत उपजते हैं, इसलिए पुरातन मेक्सिको-वासियों के गीतों में तितलियों के कितने ही उल्लेख हैं।

तितली का स्वभाव और जीवन-यात्रा ऐसे रसिक युवा-प्रेमी से मिलते हैं जो पृथ्वी पर सौंदर्य के उपभोग के लिए ही आता है; जो वार्धक्य और शैशव नहीं जानता। झिल्ली से वह बाहर निकलती है तो पूर्ण युवा, सुंदर आकर्षक और जीवन का सुख लूटने में सक्षम। ऐसे मोहक जीव से क्या हमारे पूर्वज अपरिचित थे?

हिंदी में 'तितली' शब्द कहां से आया, पता नहीं। संस्कृत में भी तितली के लिए कोई नाम नहीं है। अमरकोष में उड़नेवाले कीटों के लिए वर्वणा, मक्षिका, पतंगिका, गंधोली, वरटा, भृंगारी, झिल्लिका, पतंग, खद्योत, शलभ और भौंरे के लिए ग्यारह नाम हैं। इनमें से किसी से तितली का ोध नहीं होता। हिंदी शब्दकोषों ने तितली के लिए शब्द गढ़े हैं: चित्र-पतंग, तित्तलिका अथवा मराठी का पुष्प-पतंग, फलों पर उड़नेवाला कीड़ा। पर इनमें से कोई उस आशय की पूर्ति नहीं करता जिसकी अभिव्यक्ति तितली शब्द से होती है। मेक्सिको की प्राचीन भाषा में तितली को 'चुइचात्ल' कहते हैं। 'च' के 'त' में वदल जाने से 'तितली' इसका अपभ्रंश हो सकता है। संसार में तितलियों के अगणित प्रकार हैं। हमारे देश में ही हजारों किस्में हैं। कीट-विज्ञान के अनुसार भारत की सभी तितलियां यहीं जन्मी हैं।

यूरोप के कवियों ने 'वटरफ्लाइ' अथवा तितली को संबोधित करके भावपूर्ण कविताएं लिखी हैं। उसकी तुलना मानव जीवन के हलके-फुलके पक्ष से की है। पश्चिम में कवियों ने मधुमक्षिका को 'बी' कहा है। परंतु वे भ्रमर अथवा भौंरे को उस रूप में नहीं जानते जिस रूप में हम जानते हैं और उसे भी 'वी' कहते हैं।

प्राचीन भारत में भ्रमर अथवा षट्पद वर्ग में तितली का भी समावेश होता रहा होगा (तितली के भी छह पांव होते हैं)। वैसे इस शब्द से तितली के

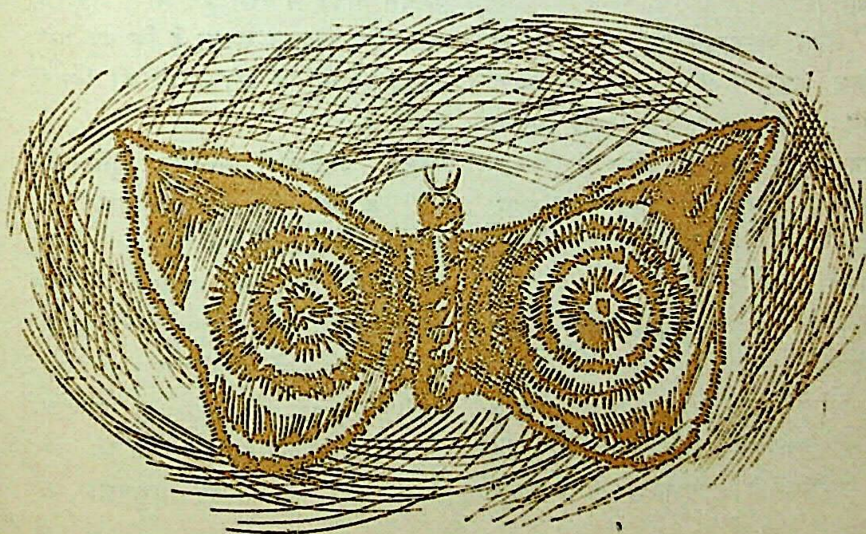
आकर्षक पंखों का कोई आभास नहीं होता। जिसे हम भौंरा या भंवरा कहते हैं, वह हमारे साहित्य का चिरपरिचित भृंग है, मोटा, गोल, पुष्ट अंगोंवाला, चमकते नील-लोहित वर्ण का गुंजायमान षट्पदी जीव। पर हलके नीले और पारदर्शी। यही भृंग अपने गहरे काले रंग, रसिकता और धृष्टता के कारण इतना लोकप्रिय हुआ कि तितली उपेक्षित रह गयी या इसी में समाहित हो गयी।

संस्कृत-साहित्य में भौंरा श्रृंगार रस का अभिन्न अंग है। वह वसंत ऋतु का प्रतीक है। कमल की सुवास से आकर्षित भौंरा उस पर मंडराता हुआ गुंजन करता है तो ऐसा लगता है जैसे किसी सुंदर युवती के गाल पर काला तिल।

भौंरे द्वारा प्रेम के लिए सर्वस्व यहां तक कि जीवन भी अर्पित कर देने का उदाहरण है:

"रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं
भास्वान् उदेष्यति हसिष्यति पंकजश्रीः
इत्थं विचिंतयति कोषगते द्विरेफे
हा हंत! हंत! नलिनीं गज उज्जहार"

("रात्रि चली जाएगी, फिर नया सवेरा होगा। सूरज उगेगा और कमलवन खिल कर हंसने लगेगा।" संध्या समय कमल-पुष्प में बंद हो गया भौंरा इस प्रकार सोच ही रहा था कि दुर्भाग्य से एक हाथी सरोवर में घुस आया और अपने दांतों से वह कमल-पुष्प उखाड़ डाला—जिसमें भौंरा बंद था।) उखड़ा कमल खुलेगा नहीं, और भौंरा अपने प्रेम की कारा में मिट जाएगा। श्रृंगार और करुणा का अद्भुत सम्मिश्रण है। वह भ्रमर जो काष्ठ भी छेदकर निकल जाता है, कमल-कोष में बंद हो जाने पर कमल की पंखु-





ड़ियां नहीं काटता। वह कमल का स्नेही है, उस पर आसक्त है। प्रेम का बंधन प्रेमी को असहाय बना देता है। वह उसे नहीं तोड़ता।

भौंरा संस्कृत-साहित्य में काम का अभिन्न उपादान है। काम का देवता अनंग अथवा कामदेव है। मधु अथवा वसंत उसका सखा है, वसंत में खिलनेवाले पांच मादक पुष्प उसके तीखे वाण, कोमल फूल धनुष और उस धनुष की प्रत्यंचा है भौंरा:

"इक्षुर्धन्वः शराः प्रसूनविततिर्भृंगावली सिञ्जिनी . . .

भौंरा सौंदर्य और रस का पिपासु है। कामदेव शिवजी की तपस्या भंग करने की तैयारी में है। पास ही पार्वती खड़ी हैं:

"सुगन्धिनिश्वासविवृद्धतृष्णं
बिम्बाधरासन्नचरं द्विरेफम्॥
प्रतिक्षणं संभ्रमलोलदृष्टिर्लीलारविंदेन
निवारयंती॥"

(कुमारसंभव, सर्ग ३)

भौंरा पार्वती के परिपक्व बिंबाधरों के निकट मंडरा रहा है। पार्वती की सांस की सुरभि के कारण भौंरे की तृष्णा और भी बढ़ गयी है। भौंरे की चंचलता पर टिकी पार्वती की दृष्टि प्रतिक्षण और चंचल होती जा रही है। वे हाथ में पकड़े नीलकमल से भौंरे को हटाने का प्रयास कर रही हैं।

'अभिज्ञानशाकुंतलम' में भौंरा और उद्दण्ड है। शकुंतला के सुंदर मुख के चारों ओर मंडराता हुआ उसके अधरों का रस पीना चाहता है। कालिदास ने 'शकुंतला की भ्रमरबाधा' नाम से एक पूरा दृश्य ही इस नाटक में रखा है। भौंरा शकुंतला को इतना परेशान करता है कि वह त्रस्त होकर सखियों से उसे हटाने की विनती करती है:

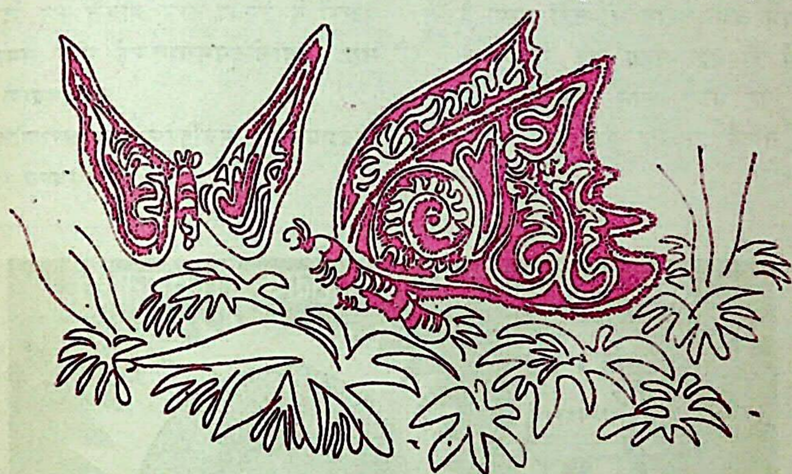
"हला, परित्रायेथां मामनेन दुर्विनीतेन
दुष्टमधुकरेन परिभूयमानाम्"

'सखियो, तुम दोनों मुझे इस दुष्ट मधुकर से बचाओ, यह मुझे लगातार परेशान कर रहा है। सखियां परिहास में कहती हैं, हम कौन होती हैं तुम्हारी रक्षा करनेवाली? दुष्यंत को बुलाओ। राजाओं का धर्म है कि वे तपोवनों की भी रक्षा करें।' भौंरे से पीड़ित शकुंतला को

असहाय देखकर राजा सामने आते हैं। शकुंतला से परिचय और वार्तालाप का बहाना निकालने के लिए वे भौंरे से कहते हैं:

चलापांगां दृष्टिं स्पृशसि बहुशो वेपथुमतीं
रहस्याख्यायीव स्वनसि मृदु कर्णांतिकचरः
करौ व्याधुन्वत्याः पिबसि रतिसर्वस्वमधरं
वयं तत्त्वान्वेषान्मधुकर हतास्त्वं खलु कृती।।

(उसकी चंचल और बार-बार कंपायमान दृष्टि तुम बार-बार छूते हो। उसके



कानों के निकट मंडराकर मधुर गुंजन करते हुए जैसे कोई बड़ी गोपनीय बात उससे कह रहे हो। विवशता में हाथ मल रही उस श्रृंगारसर्वस्व के अधरों का रस तुम पीते हो। हे भौंरे, गुणदोष के विवेचन में हम तो पीछे रह गये, परंतु तुम निश्चय ही भाग्यशाली निकले।)

संस्कृत-साहित्य में कहीं-कहीं भौंरे को अच्छे और सदाचारी पति के रूप में भी चित्रित किया गया है। एक बार वसंत के आने पर भौंरे ने फूलों का मधु एक पुष्पपात्र में भरा और अपनी प्रिया भौंरी को पहले पिलाया। फिर उसी पात्र में बचा मधु स्वयं पी लिया। यह श्लोक कालिदास के समय में स्त्रियों को प्राप्त सम्मान और आदर का सूचक है। भौंरा पहले भौंरी को पिलाकर बाद में उसके अधरों से निःसृत और इसलिए अधिक मीठा मधु पीता है:

मधु द्विरेफः कुसुमैकपात्रे पपौ प्रियां स्वामनुवर्त्तमानः (कुमारसंभव, सर्ग ३)

कर्नाटक में विकटनितंबा नाम की एक कवयित्री हुई है। उसने भौंरे को संबोधित करते हुए उन कुटिल और कामीजनों की खबर ली है जो अबोध बालिकाओं को कामलिप्सा का साधन

बनाते हैं:

अन्यासुतावदुपमर्दसहासु भृंग !
लोलं विनोदय मनः सुमनोलतासु
मुग्धाननामरजसं कलिकामकाले
बालां कदर्थयसि किं नवमालिकायाः ।

(अरे नीच भौंरे। फूलों की दूसरी प्रौढ़ और पुष्ट लताएं हैं जो तेरा उत्पीड़न सह सकती हैं। उनसे मनोविनोद क्यों नहीं करता है? नवमालिका की अबोध कलिका को जो अभी बालिका है और जिसमें अभी पराग भी नहीं आया है, तू व्यर्थ ही तहस-नहस कर रहा है।)

पर भौंरा अपने स्वभाव से विवश है। सौंदर्य पर मुंह मारे बिना उसे चैन कहां:

पलाशकुसुमभ्रांत्या शुकतुंडे पतत्यलिः ।
सोऽपि जंबूफलभ्रांत्या तमलिं
धर्त्तुमिच्छति ॥

(पलाश का फूल समझकर भौंरा तोते की चोंच पर गिर पड़ा। तोते ने भी उसे जामुन का फल समझा और उसे मुंह में भरने की कोशिश की।)

एक कवि-कल्पना है कि कामदेव के पुष्पशरों पर उसका प्रताप मुखर करने के लिए सखा वसंत ने भौंरे रूपी काले अक्षरों से उसका नाम अंकित कर दिया:

सद्यः प्रवालोद्गमचारुपत्रे नीते समाप्तिं
नवचूतबाणे ।
निवेशयामास मधुर्द्विरेफान्नामाक्षराणीव
मनोभवस्य ॥

(वसंत ने जब नये निकले प्रवाल के सदृश कोंपलोंवाले आम के नये बौर का बाण बना लिया, तब उसके ऊपर मन जीतनेवाले कामदेव का नाम भौंरे रूपी अक्षरों से लिख दिया।)

संस्कृत में भौंरे के नाम भ्रमर, मधुकर, मधुलिह, मधुप, भृंग, द्विरेफ, अलि, पुष्पलिह्, षट्पद, मधुव्रत, चंचरीक आदि हैं। प्रत्येक के साथ उसका अपना इतिहास जुड़ा है। भौंरे को संबोधित कर कही गयी अन्योक्तियां भी संस्कृत में कम नहीं हैं। अंधश्रृंगार के दोषों को भौंरे पर ढाल कर बड़ी कुशलता से कहा गया है:

"गंधाढ्यां नवमालिकां मधुकरस्त्यक्त्वा
गतो यूथिकां
तां त्यक्त्वापि गतः स चंदनतरुं
तस्मात्सरोजं गतः
बद्धस्तत्र निशाकरेण सुचिरं क्रंदत्यसौ
मंदधीः
संतोषेण बिना पराभवशतं प्राप्नोति लुब्धो
जनः।"

(सुगंध से भरे नये मल्लिका के फूल को छोड़कर, भौंरा युवावस्था में झूमती जुही के पास पहुंचा। फिर उसे छोड़ चंदनलता की रसीली डालों पर जा बैठा। उससे भी न संतोष हुआ तो तालाब में खिले लाल कमल पर बैठ गया और वहां निशाकर चंद्रमा के कारण कमलकोष में बंद हो गया। (सूर्यास्त हो जाने के बाद कमल की पंखुड़ियां बंद हो जाती हैं, फिर भौंरा बाहर नहीं निकल सकता!) अब भीतर बैठा वह मूर्ख रो रहा है। सत्य है जिस आदमी को संतोष नहीं होता, उस लोभी को सैकड़ों बार अपमान और पराजय का मुख देखना पड़ता है।)

भ्रमरवृत्ति का एक और उदाहरण:

प्रारम्भे कुसुमाकरस्य परितो
यस्योल्लसन्मंजरी
पुंजे मंजुलगुंजितानि रचयंस्तानातनोरुत्सवान्
तस्मिन्नद्य रसालशाखिनि दशां
दैवात्कृशामंचति
त्वं चेन्मुंचसि चंचरीक विनयं
नीचस्त्वदन्योऽस्ति कः।

(वसंत का मौसम चारों ओर छाया था। रसाल आम के बिरवों में मंजरियां उल्लसित थीं। हे चंचरीक भौंरे! तूने तब उन बौरों के भीतर घुस-घुसकर बावरे गीत गाये थे, कितने उत्सव मनाये थे। आज दैववशात् जब उस आम के पौधे के बुरे दिन आ गये हैं, तब तू उसे छोड़ चला। अरे अविनयी, तुझसे अधिक नीच और कौन होगा?)

संस्कृत-साहित्य में भौंरे को एक साधारण कीट अथवा पतंग नहीं माना गया, वरन् वह मनुष्य के हास-परिहास, आंसुओं, गुण-दोष से युक्त एक संवेदनशील प्राणी है। आश्चर्य नहीं कि भृंगराज की इस महिमा से तितली उसी प्रकार आवृत हो गयी हो जिस प्रकार चंद्रमा उदय होने पर जुगनू छिप जाते हैं।

—'ईशान', एफ. १/७, हौजखास,
नयी दिल्ली १६

उल्लू : हमारा दोस्त

● कृष्णकांत गांधी

धन और समृद्धि की अधिष्ठात्री लक्ष्मी की कृपा हर कोई पाना चाहता है। लेकिन उनके वाहन उल्लू का नाम भी सुन ले तो नाक-भौं सिकोड़ लेता है। लक्ष्मी-असमंजस में है। अपने उपासकों के पास पहुंचना चाहे तो वाहन विना पहुंचे कैसे ?

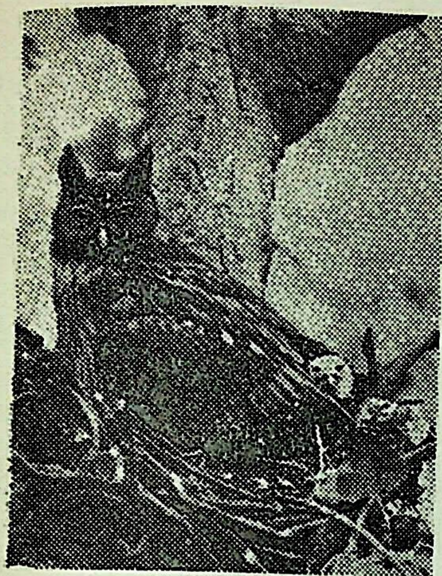
उल्लू का लक्ष्मी से यह संवंध हाल का ही है, ज्यादा पुराना नहीं। ऋग्वेद के श्रीसूक्त से लेकर मध्यकाल के अंत में रचे गये पुराणों तक कितने ही धर्मग्रंथों में लक्ष्मी के उल्लेख हैं। लक्ष्मी की प्राचीन मूर्तियों, चित्रों और उसकी आकृति-अंकित सिक्कों तथा मोहरों की भी कमी नहीं। पर उल्लू उसके साथ कहीं भी नहीं मिलता। लगता है कि लक्ष्मी जव विष्णु की पत्नी के रूप में प्रतिष्ठित हो तव गयी पहले तो उसका वाहन भी गरुड़ या गीध ही माना गया जो विष्णु का वाहन हैं। वाद में लक्ष्मी के अलग वाहन की जरूरत सामने आयी तो गीध ही जैसे मजबूत और शिकारी स्वभाव के आम पाये जानेवाले पक्षी उल्लू को यह स्थान दे दिया गया।

सिद्धि के लिए उल्लू की बलि

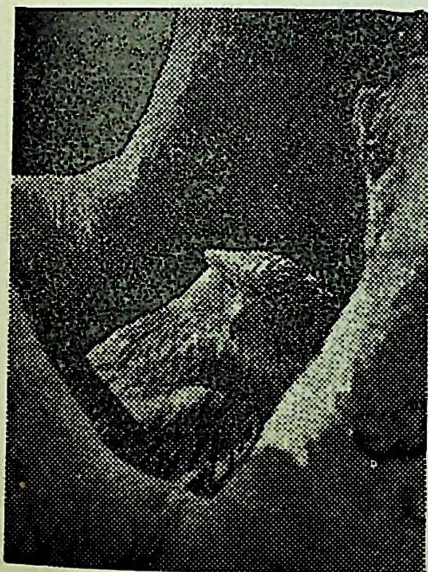
लक्ष्मी से उल्लू का संवंध भले ही काफी वाद जुड़ा हो, लेकिन उल्लू के एक पुरातन प्राणी होने में कोई शक नहीं है। संस्कृत-साहित्य में उसे उलूक कहा गया है और उसके उल्लेख यत्र-तत्र विखरे पड़े हैं। तंत्रशास्त्र में उसे विशेष स्थान प्राप्त है। उलूक-सिद्धि उन सिद्धियों में सर्वोच्च मानी गयी है जो तांत्रिक क्रियाओं से मनुष्य प्राप्त कर सकता है। दीर्घकाल तक चलनेवाली तांत्रिक पूजा के अंत में उल्लू का वलिदान किया जाता है। इससे साधक को वह सिद्धि प्राप्त होती है जिसके वल पर वह कितने ही अलौकिक कार्य कर सकता है। यहां तक कि अदृश्य भी हो सकता है। गड़ा धन देख सकने या अन्य मानवीय इच्छाओं की पूर्ति तो वहुत सामान्य वात है। उलूक-सिद्धि के लिए की जाने-वाली इस तांत्रिक-साधना में उल्लू के बलिदान का मुहूर्त कार्तिक की अमावस्या अर्थात दीवाली की रात को होता है। कहते हैं कि वलिदान के समय उल्लू मनुष्य की आवाज में वोलने लगता है और साधक से खासा वाद-विवाद करता है।

मौत के हरकारे

मनुष्य की आवाज में उल्लू के वोलने की वात पर वहुत लोग विश्वास करते हैं। लोगों का खयाल है कि जब कोई व्यक्ति



ऊपर : सिंगहा भूरा उल्लू
नीचे : बिल्ली जैसा मच्छ-उल्लू



बहुत बीमार होता है तब रात के समय उसके मकान की किसी खिड़की या छप्पर पर उल्लू आकर बैठ जाता है और मनुष्य की आवाज में उस व्यक्ति का नाम लेकर पुकारने लगता है। इसका अर्थ होता है कि मौत के हरकारे चल पड़े हैं। बीमार के परिवार में एक बार शक बैठा नहीं कि उल्लू ने उसे नाम लेकर पुकारा है, उसके अच्छे हो सकने की उम्मीद छोड़ दी जाती है। इसमें मनोवैज्ञानिक प्रभाव ज्यादा काम करता है। होता दरअसल यह है कि कभी-कभार उल्लू बीमार की खिड़की पर बैठ जरूर जाता है पर मनुष्य की आवाज में उसके बोलने का सवाल ही नहीं उठता। आम विश्वास है कि उल्लू पूर्ण अंधकार पसंद करता है, लेकिन बात ऐसी नहीं है। उसे नीम-अंधेरा या मद्धिम रोशनी अच्छी लगती है। चूंकि बीमार व्यक्ति के कमरे में रात देर तक रोशनी रहती है, इसलिए अंधेरे में उड़ रहे किसी उल्लू का उस रोशनी से आर्कषित होकर खिड़की पर बैठ जाना कोई असंगत नहीं है।

हिंदुओं में उल्लू को अपशकुन का प्रतीक समझा जाता है। किसी कार्य विशेष से कहीं जा रहे हों और रास्ते में उल्लू दिखे, उसकी आवाज सुन पड़े या कोई उसका नाम ही ले ले तो मान लेते हैं कि वह कार्य पूरा नहीं हो पाएगा। इस अंध-विश्वास का कारण जन-सामान्य को उल्लू और उसकी आदतों की जानकारी न होना है।

शिकार के लिए उपयोग

उल्लू एक शिकारी पक्षी है। दुनिया में उसकी डेढ़ सौ से भी अधिक किस्में पायी जाती हैं। इनमें से बहुत-सी भारत में मिलती हैं। सबसे आम है भूरे रंग का छोटा उल्लू जिसकी लंबाई करीब नौ इंच होती है। उसकी भूरी पीठ पर सफेद धब्बे होते हैं। पेट सफेद होता है जिस पर भूरी धारियां होती हैं। पंख भूरे रहते हैं, बीच-बीच में सफेद लकीरोंवाले और पैर सफेद। यह आम तौर पर जंगलों, खेतों, खंडहरों और बगीचों में रहता है। शाम का धुंधलका गहरा होते-होते भोजन की तलाश में निकल पड़ता है। चांदनी रात में अकसर सारी रात उड़ता रहता है। तेज रोशनी में इसकी आंखें चौंधियाती हैं और पूरी तरह अंधकार इसे पसंद नहीं। इसलिए किसी खिड़की से हलकी रोशनी निकलती देख वहां जा बैठता है।

बिल्ली-जैसा उल्लू

उल्लू की आंखें उसके चेहरे पर अन्य पक्षियों के समान बाजू में न होकर सामने की ओर होती हैं। इस वजह से उसका चेहरा बहुत कुछ बिल्ली-जैसा लगता है। उसे जब बाजू में देखना होता है तब सिर घुमाना पड़ता है। लेकिन इसमें कोई दिक्कत नहीं होती क्योंकि अपना गला पूरी तरह घुमाकर वह पीछे की ओर भी देख सकता है। इस लचीलेपन का उल्लू को बड़ा लाभ है। कोई अन्य पक्षी आक्रमण के इरादे से उसके चारों ओर चक्कर काटे तो उल्लू बिना अपना शरीर हिलाये केवल गरदन घुमाकर ही उस पर बराबर नजर रख सकता है।

आंखों की इस खूबी के बावजूद उल्लू अपनी सुरक्षा के लिए ज्यादातर अपनी बेहतरीन श्रवण-शक्ति पर निर्भर रहता है। उसके बारे में यह धारणा गलत है कि दिन में उसे दिखायी नहीं पड़ता। वैसे वह निशाचर प्राणी है और दिन में किसी झगड़े में उलझने से यथासंभव बचता है। नतीजा यह होता है कि दिन में उल्लू कहीं बैठा दीख पड़े तो कौए और अन्य पक्षी उसे खदेड़ देते हैं। उसकी आंखों की पुतलियां कुछ ऐसी होती हैं कि हलकी रोशनी में उसे आराम मिलत है।

बुद्धिमानी का प्रतीक

उल्लू बहुत चतुर पक्षी है। पश्चिम के लोग उसे बुद्धिमानी का प्रतीक मानते हैं। भारत में न जाने कैसे उल्लू का संबंध बेवकूफी से जुड़ गया है। यहां किसी को 'उल्लू' या 'उल्लू का पट्ठा' कहना उसे मूर्ख कहने का पर्याय है। उल्लू जुझारू भी हद दरजे का होता है। कभी अपने शिकार या दूसरे किसी पक्षी से लड़ाई का मौका आ पड़े तो उल्लू आखिरी दम तक मैदान नहीं छोड़ता। उसके पंख अत्यधिक नर्म होते हैं। जब वह उड़ता है, उनसे तनिक भी आवाज नहीं होती। उसके शिकार को कोई भान नहीं हो पाता और उल्लू पास पहुंचकर उसे दबोच लेता है। वह जिन पक्षियों का शिकार करता है उनमें

छोटी चिड़ियों से लेकर कौवे-जैसे वड़े पक्षी तक होते हैं। चूहे उसका सबसे प्रिय भोजन हैं। चमगादड़, छिपकली और सांप नजर आ जाए तो इनमें से किसी को वह नहीं छोड़ता। कीड़ों-मकोड़ों की तो कोई गिनती नहीं है। वह वाज-जैसी तेजी से अपने शिकार पर झपटता है और उसका वार अचूक होता है।

उल्लू अपना घोंसला वृक्षों, खोहों, पथरीली दरारों और खंडहरों में बनाता है। कभी-कभी कौवे, चील या दूसरे पक्षियों के खाली पड़े घोंसलों से भी काम चला लेता है। मादा-उल्लू आकार में नर से कहीं बड़ी होती है। वह एक बार में छह-सात तक अंडे देती है। छेड़छाड़ न हो तो वह साल-दर-साल उसी जगह अंडे देती रहती है। उल्लू का वच्चा दस-बारह सप्ताह का होने तक खुद शिकार नहीं कर पाता। वह घोंसले में रहकर इंतजार करता है कि उसके मां-वाप उसके लिए भोजन लेकर आयें।

उजाड़ और वीराना पसंद

उल्लू जब बोलता है तब उसकी आवाज भी उसके शिकारी व्यक्तित्व के अनुरूप तेज होती है। उसे उजाड़ और वीराना इतना पसंद होता है कि हिंदी में 'उल्लू-बोलना' एक मुहावरा ही बन गया है जो किसी स्थान के वीरान होने का सूचक है। उसकी विभिन्न किस्मों की आवाज अलग-अलग होती है।

सफेद धब्बोंवाला भूरे रंग का छोटा



साड़ी के बदले रूमाल ही खरीद सका हूं क्योंकि रेलयात्री टिकट लेने लगे हैं इसलिए ऊपर की आमदनी कम हो गयी है।

उल्लू भारत में सबसे ज्यादा पाया जाता है। अन्य किस्मों में कई वहुत आम हैं। कुछ किस्मों में उल्लू के कान उसके चेहरे पर सींग जैसे खड़े रहते हैं। ये उल्लू 'सिंगहे' कहलाते हैं। 'सिंगहे' में ही एक क़िस्म है पहाड़ी सिंगहा। इसका रंग उस इलाके की जमीन से मिलता-जुलता होता है जहां यह पाया जाता है। मानभूम जिले में रंग लाल होता है तो कश्मीर में सलेटी। और यमुना-चम्बल घाटी में मटमैला। इसकी आवाज 'बुं-वूं, दुर-गूं' या 'टु-हू-टु-हू' होती है।

बोले सारी रात

सिंगहे उल्लूओं में भूरा सिंगहा उल्लू

सबसे बड़ा होता है। यह देश भर में सड़कों के किनारे लगे बड़े वृक्षों, गांवों के आसपास के झुरमुटों और यहां तक कि बड़े नगरों के बागों तक में रहता है। एक-दो जोड़े आगरा के ताजमहल और लखनऊ के दिलकुश बाग में भी देखे गये। यह जोड़े से रहता है। किसी ऊंचे वृक्ष की फुनगी पर इस किस्म का उल्लू दिखे तो उसका जोड़ा भी वहीं कहीं मौजूद रहता है। यह शाम का धुंधलका होते ही बोलना चालू कर देता है और रुक-रुककर सारी रात बोलता है। जोड़े में से एक जिस स्वर में बोलता है, दूसरा उसी में उत्तर देता है। आवाज 'ग्रू-गुर-गूर-ग्रू-गू-गू' जैसे लगती है। ऐसा लगता है कि कहीं दूर पर इंजन मालगाड़ी खींच रहा हो।

मच्छ उल्लू का चेहरा मछली-जैसा होता है। उसे देखकर बिल्ली का भ्रम हो सकता है। रंग भूरा होता है

हिमालय में पाये जानेवाले जंगली उल्लू की पूंछ ज्यादा लंबी होती है। यह बरसों एक ही स्थान पर डेरा जमाये रहता है। इसकी 'बू-हू' आवाज पालतू कबूतर की उस समय की आवाज से मिलती-जुलती होती है जब वह अपने जोड़े को पुकारता है।

हिमालय में ही बड़े पखोंवाला उल्लू पाया जाता है। पंख शुरू में भूरे और अंत में सफेद होते हैं। यह उल्लू अपने बच्चों को इतना भोजन देता है कि जो उनकी भीषण भूख से ज्यादा होता है। यह अक्सर झुंड में रहता है।

उल्लू की एक किस्म में पंखों के ऊपरी हिस्से में आड़ी धारियां होती हैं। यह बहुत शोर मचानेवाला पक्षी है। इसकी आवाज ऐसी लगती है जैसे कोई हंस रहा हो। यह उल्लू दिन में भी घूमता-फिरता है। पश्चिमी हिमालय की तराई में यह बहुत मिलता है।

पट्टीदार गलेवाला छोटा उल्लू शायद भारत के उल्लुओं में सबसे छोटा है। छह इंच से भी छोटे इस पक्षी का चेहरा भूरा और सफेद होता है। यह तेजी से उड़ता है और अकसर धुंधलके के वक्त अपना शिकार करता है। उत्तर भारत के पहाड़ी स्थानों में अक्सर पाया जाता है।

भारत में ही मिलनेवाली उल्लू की कुछ प्रमुख किस्मों के बारे में जान लेने पर समझ नहीं आता कि लोगों ने उससे कौन-सी दुश्मनी निकालने के लिए उसे मूर्खता का प्रतीक मान लिया, जबकि है वह दरअसल हमारा-आपका दोस्त। फसल के सबसे बड़े दुश्मन चूहों का जितना सफाया उल्लू करता है,उतना शायद ही कोई और प्राणी कर पाता हो। ●

विमल: "मैं जब स्वर्ग जाऊंगा तब वहां शेक्सपियर से पूछूंगा कि क्या ये सब नाटक, जो उसके नाम से छपे हैं, उसी ने लिखे हैं?"

यज्ञदत्त: "और अगर शेक्सपियर स्वर्ग में नहीं मिला तो?"

विमल: "तो फिर तुम उससे पूछ लेना।"

क्षणिकाएं

प्रगति

नारी आगे बढ़ी है
और आगे बढ़ेगी
पर एक बार पुरुषों से
वह हर रोज लड़ेगी

—श्यामबिहारी आलोक

वफादारी

चोर भी वफादार हो गये,
हलवाई की दूकान पर,
मिठाई खा गये,
नमकीन छोड़ गये,
क्योंकि वे,
नमक-हराम नहीं थे

—गुलाम मुहम्मद कुरैशी 'खुर्शीद'

प्रतिशोध अधिकारी

'शोध अधिकारी' की नेम प्लेट देखकर
एक सज्जन धीरे से बोले,
"क्यों भाई इसके पहले 'प्रति' जोड़ दें
तो कैसा रहेगा ?"

—राजेन्द्र कुमार अग्रवाल

रिश्ता

महिला वर्ष के बाद
बीवी के बालों की लंबाई
लगातार घटती देख
पति ने कहा –
"सुनो,
बाल इतने छोटे न कर लेना
कि हम दोनों में कोई
अंतर ही न रहे"

—अनिल तेलकुटे

संपादक के नाम

संपादकजी !
'अनुशासन-पर्व' की पावन वेला में
काम जल्दी निपटाइए,
छह मास पूर्व जिस रचना का
स्वीकृति-पत्र भेजा था
उसे प्रकाशित कराइए ।

—बृजकिशोर सिंह 'किशोर'

प्रार्थना

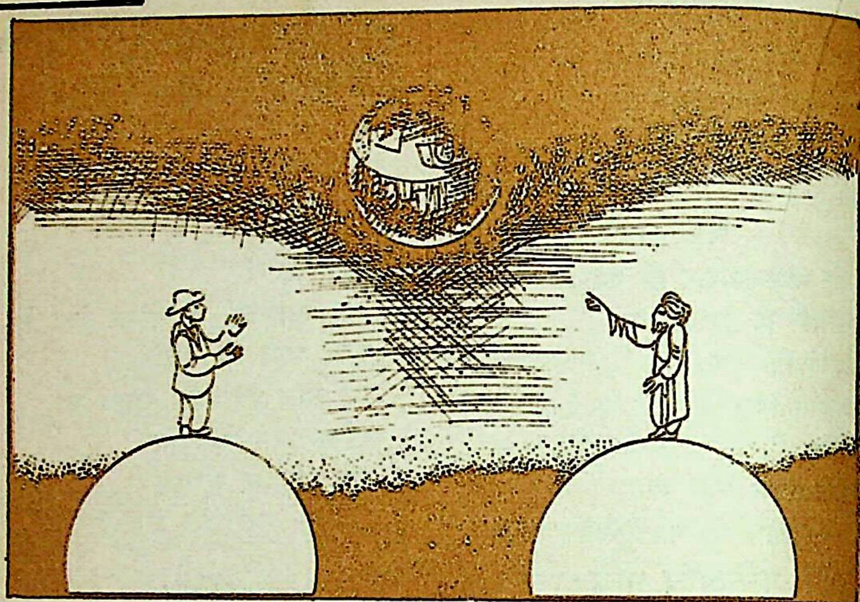
मुझे
मेरे भगवान्
मित्रों से बचाइये
बाकी
दुश्मनों को
स्वयं देख लूंगा ।

—अशोककुमार शर्मा

नागिन

उन्होंने नागिन पाली
कि दुश्मनों को कटाये
और विरोधियों को डराये
अब वह उनकी ही छाती पर बैठे
उन्हें ही डराती है

—ध्रुवनारायण कपूर



बृहस्पति का सौदा

• इसाक एसिमोव

पृथ्वी से मीलों दूर, कृत्रिम उपग्रह के साथ उसका तेजोमय यान स्थिर था। उस यान में बैठे शक्ति-पुंज मानव अपने नेता द्वारा चलायी जा रही समझौता-वार्ता की नवीनतम गतिविधि जानने के लिए उत्सुक थे।

सिमालुक्रोनी बाहर के ग्रहों का प्रतिनिधि होने के बावजूद कुछ ऐसा जादू लिये हुए था कि उस पर बाहरी मानव होने का संदेह नहीं हो सकता था। सुनहरी दाढ़ी, गहरी भूरी आंखें सिमालुक्रोनी के व्यक्तित्व को प्रभावशाली बना रही थीं।

गंभीर तथा विनम्रता के साथ वह पृथ्वी के प्रवक्ता से कह रहा था, "आपके संदेह और भय का असली कारण हम

जानते हैं। उसी को दूर करने के लिए मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि हमसे समझौता करके आप पृथ्वीवासियों को किसी तरह का नुकसान नहीं होगा।"

पृथ्वी-प्रवक्ता, जो संपूर्ण भूमंडल का विज्ञान-सचिव था और जिसे सर्वसम्मति से ब्रह्मांडीय मामलों का प्रतिनिधि निर्वाचित किया गया था, अपनी मूल-आपत्ति पर अड़ा रहा। उसका कहना था कि आपने अपने मूल प्रस्ताव में यह स्वीकारा है कि हमारा सौरमंडल आपके व्यापारिक मार्ग पर पड़ता है।

"जी हां, जबकि प्रोटोनिक द्रव्य की बड़े पैमाने पर तिजारत होने लगी है।"

"आपको यह भी जता दिया गया था कि पृथ्वी पर व्यापार के साथ-साथ राजनीति भी चलती है, जिसके कारण किसी भी व्यापारिक समझौते से पूर्व कुछ तथ्यों पर प्रकाश डाल दिया जाता है। इसी कारण मैं आपसे पूछता आया हूं कि आप बृहस्पति पर क्यों जाना चाहते हैं।"

सिमालुक्रोनी, प्रश्न के हर पहलू पर विचार कर चुकने के बाद कुछ अटक कर बोला, "हमारे वहां जाने से आपको कोई भी जोखिम नहीं होगा। और आप जानते हैं कि हमारा प्रस्ताव कोई मामूली प्रस्ताव नहीं है।"

पृथ्वी-प्रवक्ता, संतुष्ट न होकर बोला, "आप जानते हैं कि लाभ ऐसी सेवा के लिए लेना चाहिए जिसे करते हुए भय, शंका आदि न हों। इसी कारण मैं आपका वास्तविक उद्देश्य जानने के लिए प्रार्थना करता रहा हूं।"

"अपना असली मकसद मैं इसलिए छिपाना चाहता हूं कि कहीं लाम्वेर्जो को हमारी स्कीम का पता न चल जाए!" कहकर सिमालुक्रोनी दायें-बायें देखने लगा।

"मुझे संदेह होता है कि लाम्वेर्जो का नाम आप इस प्रकार लेते हैं मानो उनसे आपका युद्ध चल रहा हो।"

"मेरा निवेदन है कि युद्ध-जैसी कोई बात नहीं है।" यह कहकर सिमालुक्रोनी चुप हो गया।

"आपका उत्तर संतोषजनक नहीं है, इसी कारण मैं स्पष्ट कर देना उचित समझता हूं कि युद्ध में हम पृथ्वीवासी किसी की भी सहायता नहीं कर सकते।"

"मुझे खेद है कि आपने फिर युद्ध की बात चला दी है जबकि हमारे प्रस्ताव की कीमत आप नहीं आंक रहे। फिर, बृहस्पति ग्रह आप लोगों के लिए है भी बेकार। उसका कई गुना गुरुत्वाकर्षण पृथ्वीवासी सहन नहीं कर सकते।"

इस पर पृथ्वी-प्रवक्ता भन्ना गया, "आपको ज्ञात होना चाहिए कि बृहस्पति के उपग्रहों पर जीवन के अनुकूल वातावरण पाया गया है। हम निकट भविष्य में वहां अपने उपनिवेश स्थापित करने जा रहे हैं।"

सिम्मालुक्रोनी ने पृथ्वी-प्रवक्ता का

रोष भांपते हुए कहा, "मैंने आपसे पहले भी निवेदन किया था कि हम बृहस्पति के अतिरिक्त किसी भी अन्य ग्रह, उपग्रह की ओर आंख उठाकर भी नहीं देखेंगे। हम केवल बृहस्पति ही चाहते हैं, उसके अतिरिक्त सारा सौरमंडल सदा की तरह आपका ही रहेगा।"

"मूल प्रश्न तो फिर भी वना हुआ है कि आप बृहस्पति क्यों लेना चाहते हैं?"

"हम उस पर न तो कोई उपनिवेश वनाना चाहते हैं और न ही कोई फौजी अड्डा। हम 'ओ' श्रेणी के नक्षत्रों के रहनेवाले ठोस धरती को पसंद ही नहीं करते। हमारी ताकत का भी आपको अंदाजा हो चुका होगा, लेकिन हम ताकत का सहारा नहीं लेना चाहते। समझौता और मुआवजा कई झंझटों से छुटकारा दिलाता है, इसीलिए आपकी अनुमति लेकर . . "

"आपका कथन मेरे लिए तव तक निरर्थक है जव तक कि मेरी मूल शंका का निवारण नहीं हो जाता। आप चाहें तो इसे वार्त्ता का अंत समझ सकते हैं।" यह कहकर पृथ्वी-प्रवक्ता ने स्पष्ट कर दिया, "हमारी नीति तटस्थता की रही है। हम युद्ध में एक पक्ष की सहायता करके दूसरे पक्ष को शत्रु बनाना ठीक नहीं समझते।"

"आपकी नीति की मैं कद्र करता हूं। वृहस्पति पर हमारे जाने का एक ही लाभ होगा—पृथ्वी पर जरूरत की पूरी विजली की सप्लाई। हमारी विद्युत-पेटियां आपको हमेशा मिलती रहेंगी।"

विज्ञान-सचिव ने याद दिलाया, "भावी मांग की उत्तरोत्तर वृद्धि को ध्यान में रखते हुए।"

"जी हां, लेकिन मौजूदा खपत के पांच गुने से किसी भी हालत में ज्यादा नहीं," सिमालुक्रोनी ने कहा।

पृथ्वी-प्रवक्ता ने नाटकीय शैली में कहा, "जैसा कि मैंने पहले ही स्पष्ट कर दिया था, मुझे असाधारण अधिकार दिये गये हैं, लेकिन मेरे अधिकारों की भी सीमा है। वह सीमा है औचित्य की। अर्थात, मैं अपने प्रधान को समझा सकूं कि मैंने जो समझौता किया है वह लाभदायक होने के साथ ही निरापद भी है। अगर मैं यह न समझा सका तो मुझे पृथ्वी से निष्कासित कर दिया जाएगा और आपका समझौता स्वयंमेव अवैध हो जाएगा।"

सिमालुक्रोनी ऐसी कूटनीतिक व्याख्या पर खिन्न हो गया। यह देखकर विज्ञान-सचिव ने स्पष्ट किया, "आपका प्रस्ताव मुझे निरापद नजर आता है। मैं आपकी वातों को समझता हूं, लेकिन आप नहीं जानते कि अपनी कांग्रेस में मुझे किन-किन प्रश्नों का उत्तर देना है।"

फिर सिमालुक्रोनी ने खुले शब्दों में कहा, "मुझे लगता है कि मुझे वातों में उलझाकर लाम्वेर्जो से समझौता किया जा रहा है। सवसे पहले आप मुझे इतमीनान दिलाइए कि लाम्वेर्जो को टाइम का फायदा तो नहीं दिया जा रहा है।"

"मैं विश्वास दिलाना चाहता हूं कि वार्त्ता पूरी सद्भावना से हो रही है और बृहस्पति-संबंधी वार्त्ता के लिए मेरे सिवा और किसी को भी अधिकार नहीं दिये गये हैं।"

इस पर सिमालुक्रोनी बोला, "आपकी निजी सहूलियत के लिए मैं सारी योजना खोलकर समझाता हूं।"

उसने कागजों का बंडल खोलना शुरू किया।

●●

विज्ञान-सचिव ने अपने माथे का पसीना पोंछा और विशिष्ट समुदाय को संबोधित कर बोला : "महामान्य प्रेजीडेंट, कांग्रेसजन तथा विशिष्ट विभूतियों से मेरा निवेदन है कि यह समझौता लाभ-दायक होने के साथ-साथ निरापद भी है। सत्य तो यह है कि बृहस्पति को आवरण में घेरनेवाली छह सौ मील की गैस का घेरा हमारी हर योजना को बेकार कर देता है। एक प्रकार से वह ग्रह हमारी किसी भी योजना का अंग नहीं है।"

"मेरा संकेत उस लाभ से है जो हमें अनायास ही मिलेगा—संपूर्ण पृथ्वी की आवश्यकता के लिए विद्युत-पेटियों की सप्लाई। बृहस्पति का, इससे अधिक किराया और क्या हो सकता है?"

एक प्रश्न खड़ा करके विज्ञान-सचिव पार्लियामेंट की प्रतिक्रिया भांपने लगा।

सुरक्षा-सचिव फुफकार रहा था, "कांग्रेस को यह कदापि सहन नहीं हो

वचन वीथी

दैव भाग्य की पुस्तक सभी जीवों से छिपाकर रखता है। —शेक्सपियर

जो व्यक्ति अपने दोषों को नहीं दर्शाता वह या तो मूर्ख है या पाखंडी और उस पर हमें विश्वास नहीं करना चाहिए। —जूवट

वफादारी इनसाफ की बहन है। —होरेस

कोई व्यक्ति उस स्त्री की चापलूसी नहीं करता जिसे वह सच्चे दिल से प्यार करता है। —टकरमैन

मूर्ख व्यक्ति जो बात अंत में करता है, बुद्धिमान उसे आरंभ में करता है। —स्पेनिश कहावत

यदि ईश्वर का अस्तित्व न हो तो हमें उसका आविष्कार करना जरूरी है। —वाल्तेयर

पृथ्वी पर ऐसा कोई दुःख नहीं है जिसे परमात्मा दूर न कर सके। —टामस मूर

स्वर्ग की अच्छाई समझने के लिए कुछ समय के लिए नरक की अनुभूति करना उचित होगा। —विल कार्लटन

आलस्य जीवित व्यक्ति की कब्र है। —जरमी टेलर

सकता कि युद्धरत किसी देश की सुघड़ कथा पर विश्वास करके मैत्री कर ली जाए और दूसरा पक्ष स्वयमेव शत्रु बन जाए। मैं अनेक बार अपनी असंतुलित सैन्य शक्ति का जिक्र कर चुका हूं। ऐसी स्थिति में. आकाशीय शक्तियों के जाल में आना खतरे से खाली नहीं है।"

"लेकिन मैं विश्वास दिला सकता हूं कि कांग्रेस की यह शंका निर्मूल है। सिमालुक्रोनी-योजना के अनुसार नये बृहस्पति का उदय होगा।"

अविश्वास के स्वर में सुरक्षा-सचिव ने कहा, "नया बृहस्पति!"

"जी हां, मान्यवर! बृहस्पति ग्रह का उपयोग कुछ इस प्रकार किये जाने का प्रस्ताव है कि हमारा बृहस्पति एक नया रूप धारण करेगा।"

"ये दो मानचित्र बृहस्पति के हैं। एक में दिन का भाग दिखाया गया है और दूसरे में रात्रि-भाग है। दिन के भाग के आसपास जो आकृतियां आप देख रहे हैं, वे हमेशा दिन के भाग में रहेंगी अर्थात बृहस्पति के अपनी कक्षा में घूमने के साथ नहीं घूमेंगी। इसी प्रकार रात्रि-भाग की नारंगी रंग की फोस्फोरेसेंट आकृतियां रात्रि-भाग के बाहर रहेंगी।"

"ये आकृतियां तो ब्रह्मांडीय लिपि प्रतीत होती हैं?"

"निस्संदेह यह भाषा-लिपि है, जिसका अनुवाद इन शब्दों में किया जा सकता है: मिजारेट इरगॉनवरटिसेस सौंदर्य तथा स्वास्थ्य बनाती हैं।"

वाणिज्य-सचिव ने कहा, "तो हमारा बृहस्पति विज्ञापन-पट का काम करेगा?"

"श्रीमन, उपस्थित जन जानते होंगे कि हमारा सौर-मंडल एक मुख्य व्यापारिक मार्ग पर पड़ता है। कम-से-कम सात अंतरिक्ष-यान सौरमंडल के पास से गुजरते हैं। अंतरिक्ष-यात्रियों की दूरबीनें ठोस धरातल के ग्रहों को अचंभे से घूरती रहती हैं, लेकिन . . ."

"लेकिन क्या?" वाणिज्य-दूत ने पूछा।

"लेकिन मिजारेट विज्ञापन-कला खास विकसित प्रतीत नहीं होती, जबकि मिजारेट-लार्म्बेज परस्पर-प्रतिस्पर्धी व्यापार करते हैं। मिजारेट हमें ऐसे अनुबंध में बांध सकते थे कि हम अन्य ग्रहों को इस प्रकार किराये पर किसी अन्य को नहीं देंगे।"

"अर्थात?" सचिव की आवाज उभरी।

"उनका बृहस्पति का चुनाव मुख्यतया आकार के कारण ही प्रतीत होता है, अन्यथा शनि-ग्रह विज्ञापन के लिए अत्युत्तम स्थान है। उसके घेरे किसी भी सूझ-बूझ के व्यापारिक विज्ञापनकर्ता को आकर्षित कर सकते हैं।"

वाणिज्य-सचिव ने अब पुनः सूझ-बूझ दिखायी, "अर्थात सिमालुक्रोनी का यह विज्ञापन हमारे सौरमंडल का भी विज्ञापन सिद्ध होगा। और हम शनि के घेरों से और भी अधिक लाभ उठा सकेंगे।"

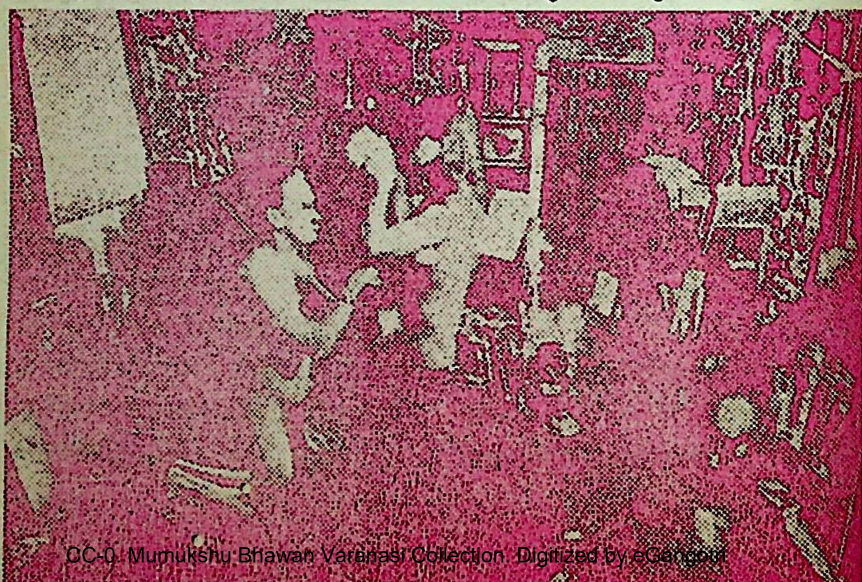
—अनु. रमेशचन्द्र

भूतों का शिकार

• पीटर जॉनसन

"मुझे महसूस हुआ कि मेरा रोम-रोम खड़ा हो गया है। मैं जानती थी कि कोई बहुत ही दुष्ट प्रेतात्मा मेरे शरीर के पोर-पोर में प्रवेश कर गयी है। मैंने भागने की कोशिश की, लेकिन मेरे हाथ-पैर तो जैसे जाम हो चुके थे। मैं चीख भी नहीं सकी। मुझे लगा कि मैं भय की किसी बहुत बड़ी तूफानी लहर में फंस गयी हूं। इसके बाद मैं बेहोश हो गयी।"

किसी प्रेतात्मा से संपर्क होने का सुइ का यह पहला अनुभव था। सुइ थार्नटन ब्रिटेन की एक २१-वर्षीया युवती है जो प्रेतात्माओं का शिकार करती है। यानी उनकी तलाश में रहती है। यह उसका शौक है। वैसे वह एक एस्टेट एजेंट के आफिस में सेक्रेटरी का कार्य करती है। उसे यह शौक अपने एक युवक मित्र से लगा। उसका युवक मित्र भूतों का शिकार करने में माहिर है। जब वह पहली बार भूतों के शिकार पर अपने मित्र के साथ गयी तब उसका स्मरण करते हुए उसने बताया कि वह मुझे अपने साथ केंट की एक पुरानी कोठी में ले गया। इस भुतहा कोठी में, जिसमें हर आवाज गूंज जाती थी, हम दोनों को बैठे बड़ा विचित्र लग रहा था। मैं तो भयभीत थी। जब हमें बैठे-बैठे घंटों बीत गये और कुछ भी नहीं हुआ तब मुझे थकान चढ़ने लगी



और झपकी-सी आने लगी। तभी एक प्रेतात्मा ने प्रवेश किया।

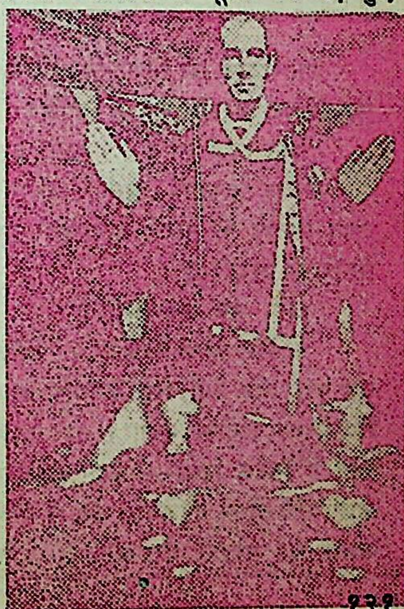
सुइ ने बताया कि इस घटना के बाद वह कई सप्ताह तक बीमार रही। उसे प्रेतात्माओं से छुटकारा दिलानेवाले एक ओझा से उपचार कराना पड़ा तब कहीं वह ठीक हुई। ओझा ने मुझे चेतावनी दी कि मैं इस तरह की प्रेत-विद्या के चक्कर में न पडूं। लेकिन इस समय तक मुझे प्रेत-विद्या से काफी लगाव हो चुका था। मुझे कुछ ऐसी प्रक्रियाएं सिखलायीं जिनके द्वारा मैं भूतों का शिकार करते समय अपने को उनके दुष्प्रभाव से बचा सकूं।

सुइ के इस विचित्र शौक के बारे में मेरी जिज्ञासा और भी बढ़ी। मैं सुइ के साथ भूतों का शिकार करने की उसकी प्रक्रिया को देखने के लिए ब्राइटन गया, जहां वह रहती है और नियमित रूप से प्रति सप्ताह भूतों का शिकार करने अवश्य जाती है।

सुइ ने बताया कि वह अखबारों में छपे भूत-प्रेतों के किस्से-कहानियों को काटकर अपने पास रख लेती है, फिर इन किस्से-कहानियों के अनुसार उनका पीछा करती है। वह ऐसे ही एक किस्से के अनुसार दक्षिण लंदन के एक पते पर भूत के शिकार के लिए जा रही थी। मैं भी उसके साथ था। उसने बताया कि वह एक अच्छे भूत की तलाश में देश के अंदर कहीं भी जा सकती है।

हम जिस भूत की तलाश में निकले थे उसके बारे में यह अफवाह थी कि वह पुराने गिरजाघर के हाल में रहता था। अब इस गिरजाघर को तोड़कर वहां पर फ्लैट्स बना दिये गये हैं। सुइ ने बताया कि इस भूत के बारे में उसे अधिक जानकारी नहीं है, लेकिन अनुमान है कि यह भूत किसी बुड्ढे का है, जो कभी-कभार वहां चक्कर लगा जाता है। जब यह भूत आता है तब प्रायः दरवाजे खोल देता है और सामान इधर से उधर कर देता है। पता चलता है कि यह भूत चिड़चिड़े स्वभाव का है लेकिन घातक या दुष्ट बिलकुल नहीं है।

भूतों का शिकार करते समय सुइ अपने बचाव में कोई कमी नहीं रहने देती। वह अपने साथ भूतों का शिकार करने में काम आनेवाले सामान में सूली पर चढ़े हुए



ईसामसीह का क्रास जरूर रखती है। उसके सामान में जादुई घेरा बनानेवाली पट्टी, कैमरा, टेपरिकार्डर, चाकू, मोमबत्ती स्टैंड, मोमबत्ती तथा चाय से भरा फ्लास्क, गरम पानी की बोतल आदि होती हैं।

जिस पर भूत का साया होता है, सुइ उससे बात करती है। भूत के शिकार का पूरा वृत्तांत भी लिखती है और पुराने फोटोग्राफों का अध्ययन भी करती है, क्योंकि, इन सबसे उसे भूत की पहचान करने में मदद मिलती है।

भूत का शिकार करने की प्रक्रिया में वह पहले एक जादुई घेरा बनाती है। यह घेरा वह सफेद साटन के कपड़े से बनी पट्टी से बनाती है। इन पट्टियों को वह पहले से ही अपने घर से पवित्र करके चलती है। इन पट्टियों से वह दो त्रिकोण यानी छह कोने-वाला एक घेरा बनाती है और उसके एक कोने में सफेद मोमबत्ती जलाती है, जो पवित्रता का प्रतीक होती है। इसके वाद वह पूर्व की ओर मुंह करके खड़ी होती है। इसका अर्थ वह यह बताती है कि वह भू-चुंबकीय धाराओं से जो कि पूर्व से पश्चिम की ओर प्रवाहित होती हैं, शक्ति ग्रहण करती है। इसके बाद वह 'ग्रीमोहर ऑव होनोरियस' के कुछ मंत्रों का पाठ करती है। छह कोनेवाले घेरे के एक कोने पर वह एक बड़ा-सा चाकू रख देती है। इसी चाकू से वह घेरे की पट्टियां बिछाने से पूर्व हवा में निशान बनाती है।

इस सबके बाद सुइ अपने सारे कपड़े उतार देती है। वह आगे और मंत्रों का पाठ करती है। इसके बाद वह घेरे से बाहर आ जाती है।

बस-स्टेशन की टिकट-खिड़की के पास पहुंचकर एक सज्जन बोले, "बाबूजी, एक टिकट बरेली का दे दीजिए।"

"किस दरजे का दूं.. पहले, दूसरे या तीसरे का?" टिकट-बाबू ने पूछा।

सज्जन चकराये। बसों में 'क्लास' का झंझट तो कभी का खतम हो चुका! शंका मिटाने की गरज से उन्होंने पूछा, "क्या पहले और दूसरे दरजे की सीटें तीसरे से अच्छी हैं?"

"नहीं, सब एक-जैसी हैं।"

"तो फिर तीसरे दरजे का ही दीजिए।" टिकट लेकर वे बस में बैठे। जैसे-तैसे बस कुछ मील रेंगी, फिर भयानक चीत्कार करती हुई रुक गयी। ड्राइवर ने कहा कि धक्का लगाना पड़ेगा। सारे यात्री झुंझलाते हुए उठ खड़े हुए। तभी कंडक्टर ने निर्देश दिया—"पहले दरजेवाले बस में बैठे रहें, दूसरे दरजेवाले उतर जाएं और तीसरे दरजेवाले बस में धक्का लगायें।" उन सज्जन की बुद्धि पर छाया अज्ञान का कोहरा धीरे-धीरे छंटने लगा था।



अब वह टेपरिकार्डर और कैमरा यथा-स्थान फिट कर देती है । उसका कैमरा रेडियो-चालित होता है, जो वहां के दूसरे हिस्सों से भी फोटो खींच सकता है । अंत में वह एक छोटा-सा बल्ब और बिजली की घंटी लगा देती है, जिससे भूत के आते समय जो कुछ असाधारण घटना घटे उसकी तत्काल सूचना मिल जाए और वह सतर्क हो जाए । फिर गरम पानी से भरी बोतल लेकर पीतल के बने पलंग पर बैठकर भूत की प्रतीक्षा करने बैठ जाती है ।

सुइ ने अनेक प्रेतात्माओं का सामना किया है । उसने बताया कि सत्रहवीं सदी के एक युवा सैनिक की प्रेतात्मा उसका सामना करने के बजाय कई-कई बार उस के पास से गुजरी है । इस प्रेतात्मा के चेहरे पर स्पष्टतः आश्चर्य का भाव उभरता है और वह जल्दी ही गायब हो जाती है ।

मैं जिस दिन सुइ के साथ था उस दिन कोई भूत नहीं आया, लेकिन सुइ इससे कतई हताश नहीं हुई । उसन बताया कि इस मकान में भूत है, जिसके बारे में मुझे कुछ आवाजों से पता चला है ।

जैसे ही सुबह की रोशनी से कमरे में प्रकाश हुआ सुइ ने अपने कपड़े पहन लिय और फ्लास्क में से उड़ेलकर काफी पी । इस के बाद वह अपने घर लौट आयी जहां वह कुछ देर सोकर अपने आफिस जाने को तैयार हो सके ।

सुइ न बताया कि भूत का शिकार करने के लिए बहुत ही धैर्य की आवश्यकता होती है । सौ रातें बर्बाद करने पर कहीं कोई भूत मिल पाता है ।

मैंने सुइ से पूछा कि क्या उसे भूतों के इस अनोखे शिकार में कभी डर नहीं लगता ?

उसने कहा कि मैंने जूडो और कराते (जापानी कुश्ती की कला) भी सीखा है, जिससे अपनी रक्षा कर सकती हूं । लेकिन कभी ऐसी कोई परेशानी हुई नहीं । ●

स्वप्न और पूर्व जन्म के संस्कार

• राजेन्द्रप्रसाद

सपनों का वैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण हाल ही शुरू हुआ है। लेकिन भारत में इनके बारे में विचार प्राचीनकाल से होता रहा है। अथर्ववेद, दैवज्ञकल्पद्रुम, सुश्रुत-संहिता, अग्निपुराण, और हठयोगप्रदीपिका-जैसे ग्रंथों में इस विषय पर प्रचुर सामग्री है।

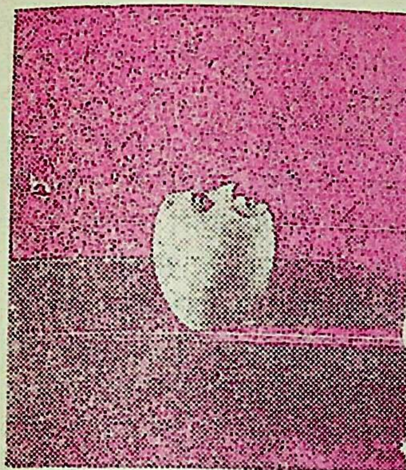
मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि स्वप्न का कारण मनुष्य की अपूर्ण इच्छाएं हैं जिनकी पूर्ति स्वप्न के माध्यम से होती है। तांत्रिक स्वप्न में देखी गयी वस्तुओं को सिद्धि और असफलता से जोड़ते हैं।

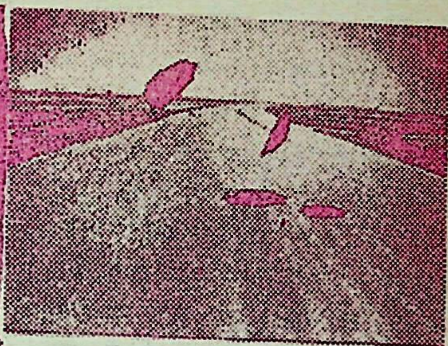
दैवज्ञकल्पद्रुम के अनुसार स्वप्न देखते समय जो लग्न होती है, उसी लग्न के स्वामी के रंग और स्वभाव के अनुरूप स्वप्न में रंग, वस्तुएं और व्यवहार दीख पड़ते हैं। इसे निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

सुश्रुत ने स्वप्न का कारण वात, पित्त और कफ का कुपित होना माना है। दैवज्ञकल्पद्रुम में कहा गया है कि स्वप्न जिस लग्न में देखा गया हो उसी के स्वामी के रंग और स्वभाव के अनुरूप स्वप्न में देखी गयी वस्तुएं, उनका रंग और व्यवहार होता है। मानव शरीर में व्याप्त पंच-तत्व पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश सपनों को क्रमशः पीला, श्वेत, लाल, हरा और काला रंग प्रदान करते हैं। पीला और श्वेत शुभ, काला और लाल अशुभ तथा हरा मध्यम का सूचक है।

वैशेषिक दर्शन के अनुसार सपने

लग्न	स्वामी	रंग	स्वप्न
मेष, वृश्चिक	मंगल	लाल	रक्त, मांस, मूंगा, स्वर्ण
तुला, वृष	शुक्र	श्वेत	तैरना, जल स्नान
कन्या, मिथुन	बुध	हरा	आकाश में उड़ान
कर्क	चंद्रमा	श्वेत	नारियां, सुगंधित वस्तुएं
सिंह	सूर्य	लाल	शासक, अग्नि, शस्त्र
मीन, धनु	बृहस्पति	पीला	धन प्राप्ति, बंधु-समागम
मकर, कुंभ	शनि	काला	ऊंचाई पर चढ़ाई





आने का कारण मनुष्य के पूर्वजन्मों के संस्कार होते हैं। अष्टांगयोग में बताया गया है कि स्वप्न तब दिखते हैं जब प्राण कंठ में स्थित हिंता नामक नाड़ी में होते हैं।

परमहंस परिव्राजकोपनिषद ने स्वप्नों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है :

१. स्वप्न विश्व : यह चिताग्रस्त स्वप्नों की अवस्था है। इस प्रकार के स्वप्न दार्शनिकों या प्रेमी-प्रेमिकाओं को आते हैं और अकसर निष्फल होते हैं।

२. स्वप्न तैजस : यह अवस्था उन स्वप्नों की है जिनमें भविष्य के संकेत छिपे होते हैं।

इस प्रकार के स्वप्न का एक प्रसिद्ध उदाहरण मिस्र के फैराओ का वह स्वप्न है जिसमें उसने देखा कि नील नदी से सात सफेद गायें निकलकर चरने लगती हैं। फिर सात काली कमजोर गायें आती हैं और उन सफेद गायों को खा जाती हैं। यह सात साल संपन्नता और उसके बाद सात साल अकाल का सूचक था।

लंदन में इंडिया हाउस लायब्रेरी में टीपू सुलतान की डायरी है। उसमें दो स्वप्नों का उल्लेख है जो इस वर्ग में आते हैं। एक बार उसने देखा कि उसके बाग की तीन ताजी खजूरें चांदी की एक तश्तरी में उसके आगे रखी गयीं। बाद में टीपू को निजाम अली सहित तीन सरदारों की संपत्ति मिली। इसी तरह उसने स्वप्न देखा कि चीन के बादशाह के दूत ने उसे एक सफेद हाथी भेंट किया और कहा कि ऐसी भेंट चीनियों ने उसके अलावा बस सिकंदर भर को दी है। टीपू ने अर्थ लगाया कि वह सिकंदर-जैसा महान विजेता है। उसने अंग्रेजों पर हमला किया और विजयी रहा।

इस अवस्था के स्वप्नों का फलादेश अग्निपुराण और सुश्रुत में विस्तार से दिया गया है।

३. स्वप्न प्राज्ञ : इस अवस्था के स्वप्न याद नहीं रहते। इसलिए ये महत्वहीन हैं।

जादुई शीशे में उन्होंने अपनी ही लाश देखी

सिसकियों की आवाज शुरू में कुछ धीमी थी और फिर तेज होने लगी। वैसी ही आवाज जैसी उस समय होती है जब किसी की मौत हो जाए और दुख के आवेग से सहमे स्वजन रुदन को दबाने की कोशिश में सिसकने लगें। उसे लगा कि पता लगायें कि ये कौन सिसक रहे हैं और आखिर ऐसा हो क्या गया है ? पता लगाने के लिए वह सारे 'व्हाइट हाउस' में घूमता हुआ 'ईस्ट रूम' पहुंचा। वहां तैनात संतरी ने बताया कि राष्ट्रपति को गोली मार दी गयी। वह कमरे में घुसा तो देखा कि उसकी ही लाश वहां पड़ी है।

मजे की बात तो यह है कि लिंकन ने अपनी हत्या का दृश्य जीतेजी अपनी आंखों से हूबहू वैसा ही देख लिया था जैसा ऊपर बताया गया है। उन्होंने यह देखा था एक जादुई-शीशे में जिसका नाम है स्वप्न या सपना।

विशेषज्ञ स्वप्न को अचेतन मस्तिष्क की प्रक्रिया मानते हैं। वे कहते हैं कि स्वप्नों में अकसर उन बातों का उद्घाटन होता है जिन्हें हम चेतनावस्था में नकार देते हैं। लेकिन यह अभी तक रहस्य ही है कि भविष्य की घटनाएं स्वप्न में पहले कैसे दिख जाती हैं।

—क्षमा शर्मा

४. **स्वप्न तुरीय :** इस अवस्था के स्वप्न में जैसा दीख पड़ता है, वैसा ही यथार्थ में होता भी है।

सीजर की हत्या के पहले उसकी पत्नी कैलपूर्निया को आया सपना या अब्राहम लिंकन, हेनरी तृतीय, कैनेडी और नेपोलियन के सेनापति जनरल बैकमैन आदि को अपनी हत्या पहले ही स्वप्न में दिख जाने के उदाहरण इसी वर्ग में आते हैं। चर्चिल ने मंजूर किया था कि दो बार वे स्वप्न में मिली चेतावनी के कारण बचे। स्ट्रैटन नामक व्यापारी ने स्वप्न में देखा कि एक स्थान पर सोना निकल रहा है। वहां खुदाई हुई, सोना मिला और आज अमरीका के कोलेरैडो राज्य में राकफील्ड स्थित ये खानें दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी सोने की खानें हैं।

इन सबसे विचित्र कहानी है लार्ड किल ब्रेकन और पत्रकार मार्शल वेलस्टीन की। घुड़दौड़ में जीतनेवाले घोड़े उन्हें पहले ही स्वप्न में दिख जाते थे। उन्हीं घोड़ों पर भारी रकम लगाकर वे हर बार जीतते।

लंदन के प्रसिद्ध पत्र 'डेली मिरर' ने लार्ड किल ब्रेकन की स्वप्न पर आधारित भविष्यवाणी की एक बार परीक्षा ली और सही निकलने पर उन्हें सौ पौंड का इनाम दिया था।

—राजकीय उ. मा. विद्यालय भैसलाना,
जि. जयपुर (राज.)

लाख की चूड़ियां

• तारादत्त निर्विरोध

लाख की चूड़ियां, नारी-शृंगार एवं वेश-भूषा का एक आवश्यक अंग। राजस्थानी महिलाओं के सुहाग की प्रतीक और समृद्धि की मापदंड—ये इकरंगी, दुरंगी, सितवर्णी तथा बहुरंगी चूड़ियां। पर्यटकों के लिए विशेष आकर्षण। लोकभाषा में 'चुड़लो', 'चूड़ो' एवं 'चूड़ा' नाम से प्रसिद्ध। एक पारिवारिक और पुश्तैनी उद्योग।

राजस्थान में जो स्त्री 'चूंदड़' और चुड़ला' पहनती है, उसे सुहागिन समझा जाता है। इसलिए वह नारी जो मां की संज्ञा में आती है या विवाहित होती है, अपनी और अपने परिवार की सुख-संपन्नता के लिए भाई से चूड़ा भिजवाने की और पति से चूड़ा लाने की मांग करती है। भाई द्वारा मांगलिक अवसरों पर बहन को चूड़ा पहनाने और चूदंड़ ओढ़ाने का रिवाज राजस्थान में लोक-प्रचलित है।

'चूंदड़' शब्द. से तात्पर्य सुहागिन महिला के लाल आकर्षक परिधान से और 'चुड़ला' से तात्पर्य लाख की चूड़ियों से ही है।

'सात सोपारी' लोकगीत में बहन अपने भाई को संबोधित कर कहती है—

देश में गुलाली चुड़लो आयो छै जी



ऊंची-सी मैंडी में अजब झरोखा
केल झबूके बारी
वो घर दीसै म्हारा बडोड़ै बीरा रो
वा ऊंची भोजाई
अब मोहे चुड़लो पैरावो म्हारा
जामण जाया, चुंदड़ी औढ़ावो राज

—हे मेरे भाई ! मेरी ससुराल में तेरी वड़ी प्रतिष्ठा है, क्योंकि तेरे पास रहने के लिए बड़ी अट्टालिका है और उसमें अनूठा झरोखा है तथा खिड़की के पास केली पंखा झलती है। भाभी भी उच्च है। ऐसी स्थिति में मेरे पंहनने के लिए चूड़ा और ओढ़ने के लिए चूंदड़ अवश्य भिजवाना।

एक अन्य गीत में मांगलिक वेला में बहन भाई को यों संदेश भिजवाती है—

चूड़ो तो ल्याजै बीरा लाख को
म्हारा बीराजी ए लो
पहरूंली बार तिवार

—भाई मेरे लिए चूड़ा अवश्य भिजवाना। मैं उसे तीज-त्योहार पर पहनूंगी।

राजस्थान में कहावत है—'बेस ब्याई को, चूड़लो भाई को', अर्थात भेंट आयी पोशाक समधी की और भेंट दिया गया चूड़ा भाई का। संतानोत्पत्ति पर 'न्हावन जलवा' के दिन भाई अपनी बहन के लिए 'आंटी-चूड़ा' भिजवाता हैं, जिसमें 'आंटी' (लाल-डोरा), 'चूड़ा' (चूड़ियां), 'कांचली' (प्राचीन ब्लाउज) 'कांगस्यो' (कंघा), 'कांच' (दर्पण), 'टीकी' (बिंदिया), गुलाबी मेहंदी, तेल की शीशी आदि श्रृंगार की वस्तुएं होती हैं।

प्रदेश की महिलाएं चूड़ा लाने के लिए पति से भी आग्रह करती हैं कि जो चूड़ा लाखाणी हो वह लाकर मुझे दीजिए—

चूड़ियों की रचना प्रक्रिया



भंवर ल्यादीजो लाखीणो चूड़ो लाख को

चुड़ला पहनाना यहां एक रिवाज है, किंतु हर कोई हर किसी को चूड़ा नहीं पहना सकता। केवल पति ही अपनी पत्नी को अपने नाम का चूड़ा पहनाता है।

पत्नी भी अपने पति के नाम का ही चूड़ा पहनना पसंद करती है। वह सोने में पीली, मृगनैनी, हाथों में गजरे लिये कहती है कि देश में गुलाली चुड़ला (सुहाग-प्रतीक) आया है। हे प्रियतम, मेरे हाथ पर बंगड़ी-जैसा स्वर्णाभूषण बहुत अच्छा लगता है। मेरे लिए चूड़ा भी खरीद दीजिए।

देश में गुलाली चुड़लो आयो छै जी
चुड़लो छैला रो
बंगड़ी सोने री सौवै मिरगानैणी
रे हाथ
चुड़लो छैला रो।
लगा दीजो, म्हारै चुड़ला रे चूंप
लगादीजो
बिलाला ढोला

लेकिन जब पति इस ओर ध्यान नहीं देता तब वह मन ही मन दुःखी होती है और बाद में मनिहार को सांकेतिक भाषा में कहती है—

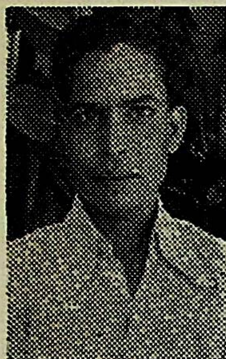
थारा नाम की दो चूड़ी पहरादे
मणिहारा हो।

—हे मणिहार! दो चूड़ियां अपने नाम की ही पहना दे। लाख की चूड़ियों के प्रति उसका मोह इतना है कि उसे दो चूड़ियां मनिहार के नाम की पहनना भी रुच जाता है।

वह पति को सूचित करती है कि जबसे समीप ही मनिहार ने चूड़ियों की दूकान लगायी है, मेरा मन चूड़ी पहनने

लाख की चूड़ियां पहनाते हुए मनिहार




लेखक

को होता है। मैं झरोखे में बैठी थी कि मनिहार को बुलाने का मेरा मन हुआ और जैसे ही उसने आंगन में आकर चूड़ियों की गांठ खोली कि आंगन विभोरित हो उठा। हे प्रिय, मुझ अब तो चूड़ा खरीद दे—

टाक टोडा बीचै म्हारै मणघट
मांडी छै हाट
राजीड़ा पिव चूडो पहराय
छाजै बैठी रो मन हुयो, म्हारै
मणघट रो बुलाय
आण उतारयो चामण चौक में
म्हारो चौक पवासा लेय
राजीड़ा पिव चूड़ो पहराय

पत्नी अपने पति से कहती है कि मेरे पुत्रोत्सव पर एक सेर मीठा और एक पान का ही दस्तूर है। फिर चूड़ा ही तो अधिक है। पति उत्तर देता है कि आज रविवार है, रानी तुम तो आज ही चूड़ा पहन लो।

सेर मिठाई, बिडलो पान को
म्हारै यो जलवा रो नेक
राजीड़ा पिव चूड़ो पहराय
वार सनिसर थारै हरै
राणी पहरो नै आज दितवार

राजस्थान में शनिवार को दूभर दिन और रविवार को मांगलिक कार्यों के लिए परम शुभ दिन माना गया है। इसलिए पति अपनी प्रिया को इसी दिन चूड़ा पहनने का सुझाव देता है—

मणिहार बुलावो पहरो चुडलो।

किंतु, युद्ध-संदर्भ में राजस्थान की नारी ने कायर पति को देखकर चूड़ा पहनना पसंद नहीं किया है। वह लोकलाज से गड़ गयी है। वह अपने पति को युद्धोन्मुख और युद्धरत देखने की जितनी आकांक्षी है, उतनी ही उसकी वीरगति पर उसको अंक में लेकर सती होने की।

सूर्यमल मिश्रण विरचित राजस्थानी काव्य 'वीर सतसई' के प्रत्येक दोहे में ऐसी ही गर्जना है। वीर पत्नी मनिहारिन को देखकर अपने कायर पति की भर्त्सना करती हुई कहती है—'हे मनिहारिन! किसी दूसरे घर जा, अब हवेली में मत आना। मेरा पति कायर होकर घर लौटा है। अब मैं विधवा भी कैसे कहलाऊंगी?' इस भाव को दोहे में यों व्यक्त किया गया है—

मणिहारी जा री परी अब न हवेली आव
पीव मुआ घर आविया विधवा कवण बणाव

चूड़े के संदर्भ में राजस्थानी काव्य में ऐसे अनेक प्रसंग हैं जिनमें राजस्थानी नारी का वीर-मन और पराक्रम बोलता है।

यह चूड़ा लाख का बना होता है जो हस्तशिल्प की उपलब्धि है। राजस्थान की इस कला का उद्गम १८ वीं शताब्दी

में हुआ। कांच की चूड़ियों के आविष्कार से पूर्व ही लाख की चूड़ियों का प्रचलन था और इन्हें सुहागचिह्न के रूप में महिलाओं ने स्वीकार लिया' था। हर गांव में लाख का काम करनेवाला एक परिवार हुआ करता था, जिसे 'लखेरा', 'मणघट' या 'मनिहार' कहा जाता था।

कभी मुगलकाल में हरम की बेगमें तथा रानियां भी लाख की चूड़ियों में सच्चे हीरे-पन्ने जड़ाया करती थीं। उनसे भी भी आब आ जाती थी। लाख का ऐसा ही कलात्मक कार्य महाराजा सवाई जयसिंह के समय जयपुर में आमेर के महलों में मिलता है। महलों की अल्मारियों की किवाड़ों पर यह कार्य किया हुआ है। बाद में भी कलात्मक कार्य के लिए लाख-उद्योग को माध्यम बनाया जाता रहा।

लाख के कार्यों में चूड़ियों के अतिरिक्त कलापूर्ण डिब्बियां छोटे वाक्स भी अपने ढंग की आकर्षक वस्तुओं में गिने जाते



चूड़ी जोड़ते हुए मनिहार, चूड़ियां बनाने में संलग्न युवा कलाकार हाजी दुर्वेज

इस लघु उद्योग को बड़ा प्रोत्साहन मिला।

बीकानेर के प्राचीन महलों में लाख की तैलीय आकृतियां बड़ी आकर्षक हैं। कभी यह कार्य सोने-चांदी के पतरों पर किया जाता था। तैलीय परत बहुत पहले होने के कारण रंगों में काफी चमक रहती भी तथा उस पर वार्निश पोत देने से और रहे। इन वस्तुओं का विभिन्न कलात्मक पद्धतियों से कई रंगों व डिजाइनों में विकास हुआ।

जयपुर के महाराजा सवाई रामसिंह के जमाने में १९ वीं शताब्दी के मध्य भी लाख-कला को प्रोत्साहन एवं संरक्षण मिला। लाख-चपड़ी के खिलौने, चौपड़,

शतरंज, पांसे भी बनने लगे और हार-कंगन-चूड़ियां भी लोकप्रिय हुई। लाख की वस्तुओं को दूसरे प्रदेशों एवं देशों में भी बहुत पसंद किया गया। फ्रांस, इटली, स्विट्जरलैंड, डेनमार्क, आस्ट्रेलिया, ब्रिटेन, जरमनी आदि अनेक देशों में राजस्थान के इन लघु उद्योग की वस्तुओं की मांग है और हजारों रुपयों मूल्य की चूड़ियां, कानों के बुंदे, अंगूठियां, हार, पेपरवेट, वालपेन, विभिन्न आकृतियां, कैंडिल-स्टैंड, ऐशट्रे, सुराही, फूलदान, चावी के गुच्छे आदि लाख की वस्तुएं निर्यात की जाती हैं।

लाख की चूड़ियां हिंदू एवं मुसलिम दोनों संस्कृतियों में पावनता की प्रतीक हैं। ये चूड़ियां मांगलिक सुहाग-चिह्न के रूप में मानी जाती हैं।

राजस्थान की इस विशिष्ट कला के प्रमुख केंद्र हैं—जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, उदयपुर आदि। इनमें जयपुर का स्थान सर्वोपरि है। यहां एक पूरा महल्ला 'मनिहारों का रास्ता' नाम से प्रसिद्ध है। मनिहार प्रायः मुसलमान होते हैं, परंतु ये लोग सभी घरों में इतने घुलमिल गये हैं कि छोटे-वड़े अवसरों पर स्वतः ही याद आने लगे हैं। रीति-रिवाजों में इनकी चूड़ियों की प्रधानता रहती है।

राजस्थान में विवाहोत्सव, जन्मोत्सव या तीज-त्योहार पर लाख की चूड़ियां अनिवार्य रूप से वधू को पहनायी जाती हैं। इन चूड़ियों के सम्मिलित रूप को 'चूड़ा' कहा जाता है, जिसमें सात चूड़ियां होती हैं। प्रदेश में हाथीदांत, कांच या रवड़ का चूड़ा भी पहना जाता है, किंतु लाख के चूड़े को अधिक मांगलिक समझा जाता है।

लाखीणो चूड़ो लाखको

राजस्थानी परिवारों में लाख के चूड़े को 'लाखीणा' कहा गया है। लाख के चूड़े में 'गुलाबी चूड़ा' श्रेष्ठ माना गया है, जिसमें सात चूड़ियां होती हैं। यों लाल, हरे, नारंगी, निंबुई, बोतली, गुलावी, मेहंदिया, कत्थई, बैंगनिया, नीले, फीरोजी, पीले, सफेद आदि कई रंगों के चूड़े बनाये जाते हैं, किंतु इनमें भी लाल रंग को पवित्र उत्तम माना गया है।

लाख के चूड़े की भी कई डिजाइनें चल रही हैं। इनमें 'कंगन', 'गोखरू', 'तरूंज,' 'कड़े', 'नोगरी सैट,' 'पाटला सैट' 'आरीतारी', 'दो हीरो का,' 'फोमका', 'गजरों का सैट', 'हीरों का पाटला सैट' आदि मुख्यतः आकार से कहलाती हैं। चूड़ियों में चार का सैट, तीन का सैट, सात-सात का सैट अधिक पसंद किया जाता है।

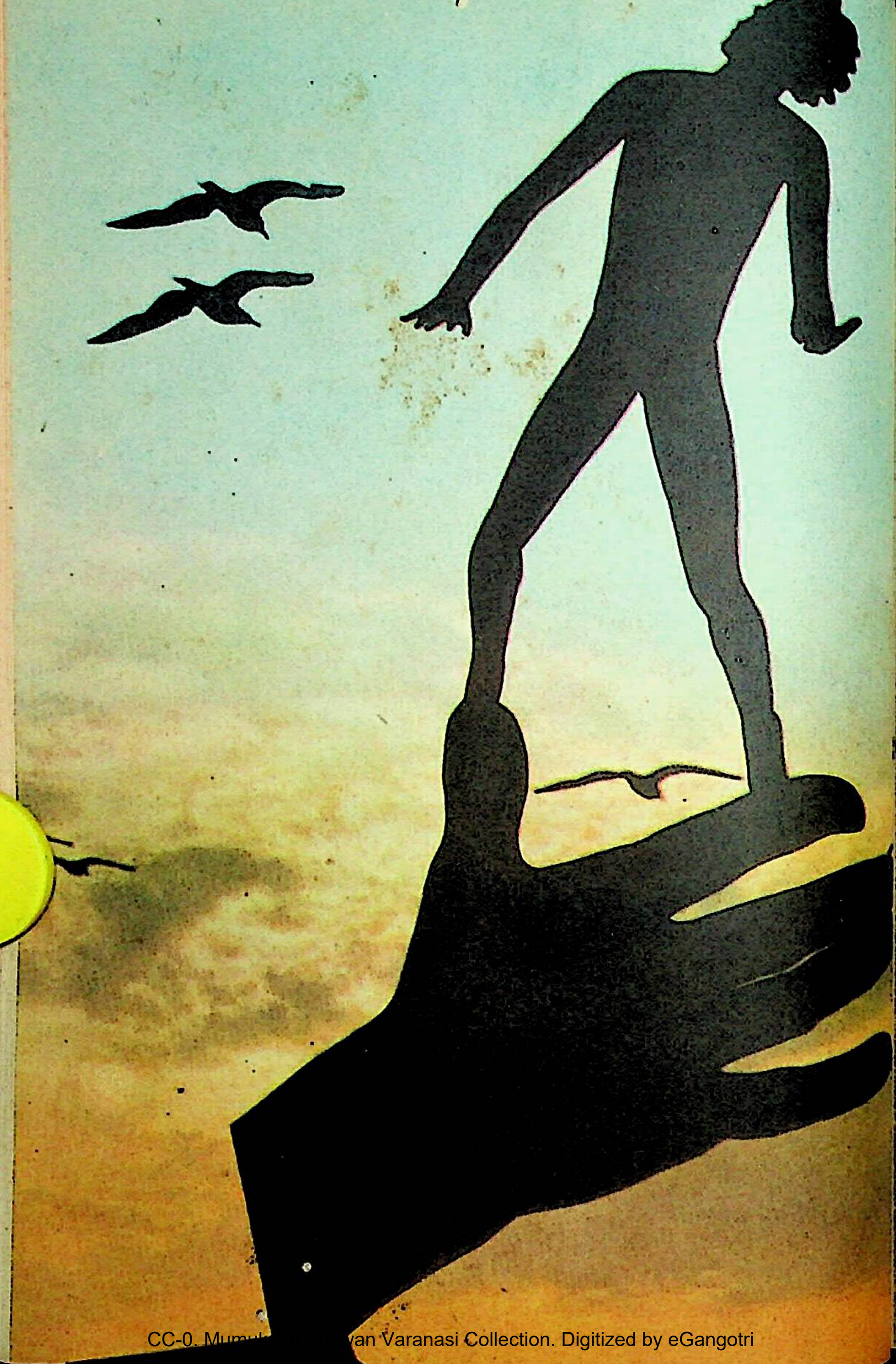
जयपुर में लाख के कारीगरों में भायाजी फिदाहुसैन, अय्याज मोहम्मद गुल्ली करोलीवाला और हाजी दुर्वेश के नाम कोई भी वता सकता है।

इनमें अय्याज मोहम्मद पूरे देश में लाख उद्योग के मात्र ऐसे कारीगर हैं जिन्हें राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है।

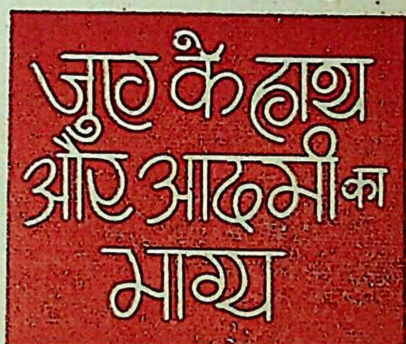
—जन-संपर्क अधिकारी,
जिलाधीश कार्यालय, झुंझनु (राज.)



स्वतंत्रता के बाद लाख-उद्योग का राजस्थान में काफी विकास-विस्तार किया गया है। लाख के कलाकारों की जिजीविषा और आर्थिक संबल ने भी उन्हें नित-नूतन आयामों के साथ अनेक वैशिष्ट्यपूर्ण वस्तुएं बनाने के लिए प्रेरित किया है।



• डॉ. हरिकृष्ण देवसरे



एक राजकुमारी थी। जुआ खेलने की शौकीन। उसके महल के द्वार पर एक नगाड़ा था। जो भी उसके साथ जुआ खेलने आता, वह नगाड़ा बजाता। राजकुमारी उसे अंदर बुलाती, खूब स्वागत करती। शर्त यह रहती कि जुआरी जीत गया तो वह उससे शादी कर लेगी और हार गया तो उसे गुलाम बना लेगी। सैकड़ों राजकुमार, शाहजादे, अमीरों के बेटे उसके गुलाम बन चुके थे। जुआ शुरू होने से पहले राजकुमारी वे गुलाम जुआरी को दिखाती और अपनी विजय पर मुसकराती। हर गुलाम की नाक में एक कौड़ी पहना दी जाती और पैरों में बेड़ियां डाल दी जातीं।

राजकुमारी की लगातार जीत का रहस्य तब खुला जब एक राजकुमार उसके शहर की एक बुढ़िया से मिला। बुढ़िया का बेटा परदेश में था। राजकुमार की शकल उससे मिलती थी। बुढ़िया ने बेटा-जैसा मानकर घर ठहरा लिया। बातों ही बातों में राजकुमारी की जीत का राज भी बता दिया। राजकुमारी चौपड़ खेलती थी। उसकी दाहिनी तरफ एक बिल्ली बैठती जिसके सिर पर दीपक रखा रहता। पास ही राजकुमारी का पालतू चूहा बैठता। राजकुमारी के पांसे उलटे पड़ते तो वह चुपके से बिल्ली को इशारा करती। बिल्ली सिर हिला देती। चौपड़ पर अंधेरा हो जाता। चूहा चौपड़ पर कूद जाता और पांसे पलट देता। सारा काम इतनी सहजता से होता कि साथ खेलनेवाले जुआरी को हवा तक न लगती। उस राजकुमार ने एक नेवला पाला और आस्तीन में रखकर इस तरह सिखाया कि चुटकी बजाते ही बाहर निकल आये। फिर वह महल में गया। रात को चौपड़ बिछी। राजकुमारी के पांसे हार के पड़ते ही राजकुमार ने चुटकी बजा दी। नेवला सामने देख न बिल्ली हिली, न चूहा कूदा। राजकुमारी को हार माननी पड़ी।

जुआ खेलने की प्रवृत्ति मानव-सभ्यता के साथ ही विकसित हुई है। मनुष्य में शकुन विचार तथा भविष्य जानने की उत्सुकता अत्यंत प्राची[illegible] से रही है। शकुन-विचार की पद्धतियों से मानव-मन में जिज्ञासा और सुखानु-

सामने के पृष्ठ पर छाया : विश्वमोहन तिवारी

भूति पैदा होती थी। वही बाद में जुआ या 'द्यूत क्रीड़ा' के रूप में सामने आयी। लोग परिणामों के बारे में अटकलें लगाकर दांव लगाने लगे। धीरे-धीरे यह मनोरंजन तथा अर्थोपार्जन का साधन बन गया।

विश्व के सभी देशों में जुआ प्रचलित होने के प्राचीन-प्रमाण मिलते हैं। रोम में बच्चे सिक्कों से चित-पट करके जुआ खेला करते थे। यह आज भी चलता है। किंतु सबसे प्राचीन पद्धति 'चौपड़' खेलने की है। यूनान के लोग भेड़-बकरियों की हड्डियों से चौपहले पांसे बनाते और उन पर संख्या लिखकर खेलते। बाद में ये पांसे छह पहलों के भी बने। वहां जुए के प्रचलन का एल्सीफ्रॉन द्वारा भेंट किये गये चित्र से भी पता चलता है जिसमें एक लुटे या हारे हुए जुआरी की दुर्दशा चित्रित है। मिस्र की खुदाई में हड्डियों के पांसे प्राप्त हुए जिनसे पता लगता है कि वहां जुआ बहुत प्रचलित था। जुआ खेलने का तख्ता भी मिला जिसका निर्माणकाल ईसा पूर्व १८०० से १६५० के बीच माना जाता है। यह सोने-चांदी का बना और कीमती रत्न और मणियों से जड़ा है। जरमनी लोगों के बारे में कहा जाता है कि उनके हाथों में पांसे आ जाते तो वे सारी सीमाएं तोड़ डालते। यहां तक कि अपनी आजादी तक दांव पर लगा देते। हारने पर गुलाम ही क्यों न बनना पड़े। उत्तरी अमरीका के 'इंडियंस', स्त्री-पुरुष जबरदस्त जुआरी रहे हैं। वे पवित्र समारोह तक में जुआ खेलते और इसे दैविक कार्य मानते थे।

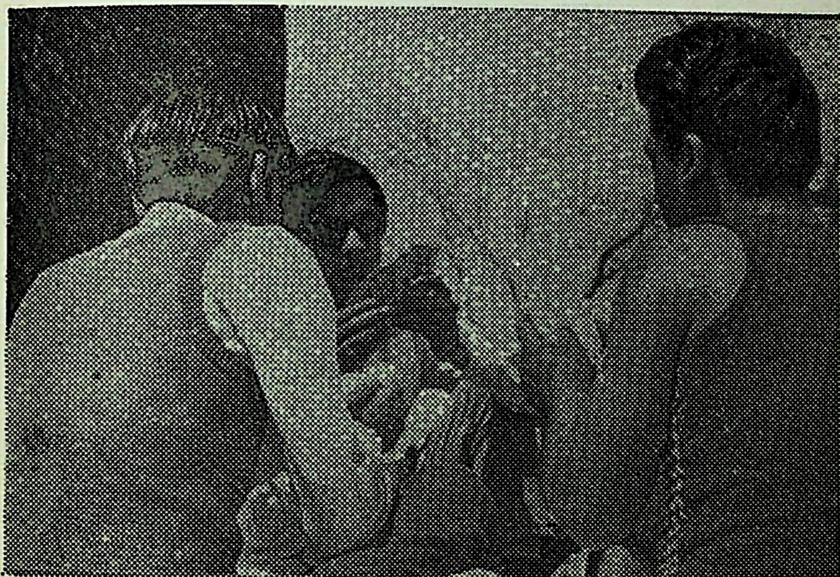
भारत में भी जुए के अनेक प्राचीन प्रमाण हैं। ऋग्वेद के दसवें मंडल के चौंतीसवें सूक्त में जुआरी की दुर्दशा का वर्णन है। जुआरी अपनी पत्नी तक दांव में हार जाता है। हारे हुए जुआरी का साथ कोई नहीं देता। सास और पत्नी उसे निकाल देती हैं। वह सबके सामने हाथ फैलाता है, पर कोई कुछ नहीं देता। उसकी हालत वैसी ही हो जाती है जैसे बूढ़ा घोड़ा बाजार में कौड़ी मोल भी नहीं बिकता। हारे हुए जुआरी की पत्नी दूसरों के हाथों का खिलौना बन जाती है। सभी लोग, यहां तक कि भाई-बहन, माता-पिता तक उसे अपनाने को तैयार नहीं होते। पांसों में अजीब आकर्षण है, विचित्र जादू है। जुआरी इच्छा न होते हुए भी खिंचा चला आता है। अमीर-गरीब सब इनके गुलाम हैं। इसलिए सबसे अच्छी बात है कि पांसे मत खेलो। खेती करो और मेहनत से कमायी धन-दौलत की रक्षा करो।

जुआ खेलने के दुष्परिणामों की दो कथाएं 'महाभारत' में हैं। राजा नल ने अपने भाई पुष्कर को जुआ खेलने आमंत्रित किया। रानी दमयंती, मंत्रियों और नागरिकजनों ने बहुत समझाया, किंतु नल को कोई न रोक सका। नल सब कुछ हार गया। पुष्कर ने उसे दमयंती सहित राज्य से निकाल दिया। नल-दमयंती को

क्या-क्या दुःख नहीं भोगने पड़े ?

दूसरी कथा युधिष्ठिर की है। दुर्योधन युधिष्ठिर का सारा यश-वैभव धूल में मिलाने की योजना बनाने लगा। उसने अपने मामा शकुनि से सलाह की और युधिष्ठिर को जुए में हराकर धन-संपत्ति हड़पने का विचार किया। योजना धृतराष्ट्र को भी पसंद आयी। विदुर को भेजकर युधिष्ठिर को जुआ खेलने बुलाया गया। शकुनि को युधिष्ठिर अच्छी तरह जानते थे। लेकिन चुनौती अस्वीकार न कर सके। युधिष्ठिर सारी संपत्ति हार गये, स्वयं को दांव पर लगाया और अंत में द्रौपदी को भी दांव पर लगा दिया। जुए में पराजय के कारण ही पांडवों को वनवास भोगना पड़ा।

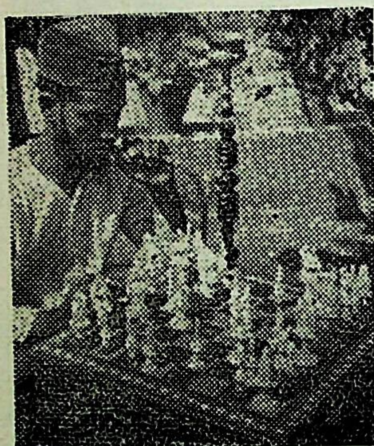
प्राचीन भारत के राजाओं और बादशाहों को जुआ खेलने का बड़ा शौक था। मूल रूप में भले ही जुआ खेलने के पीछे मनोरंजन की भावना रही हो, किंतु कई बार यह एक मुसीबत भी बन जाती। मोहम्मद गोरी को लगातार हरानेवाला पृथ्वीराज चौहान राजकाज भूलकर चौपड़ खेलता रहता। एक दिन वह अपनी रानी के साथ चौपड़ खेलने, बैठा। रानी ने भर्त्सना की और जुआ खेलने को मना किया। पृथ्वीराज क्रोधित हो उठा। उसने चौपड़ के पांसे मार-मारकर रानी



सबसे ज्यादा प्रचलित और लोकप्रिय : ताश का खेल

के हाथ जख्मी कर दिये। रानी के भाई ने देखा तो उसने पृथ्वीराज चौहान से बदला लेने की प्रतिज्ञा कर डाली। बाद में वही मोहम्मद गोरी का सहायक बना।

मुगल बादशाह शाहजहां के बारे में भी मशहूर है कि वह शतरंज का शौकीन था। वजीरों से शर्त लगाता—'तुम जीतो तो एक बेगम हमारी ले लो, मैं जीतूं तो तुम्हारी बेगम'। एक वजीर की शादी हुई। शाहजहां ने शतरंज की बाजी बिछा



शतरंज के मोहरों में फंसी भाग्य की चाल

दी। वजीर भला कैसे इंकार करता। लेकिन वजीर कम नहीं था। उसने ऐसे मोहरे फंसा दिये कि बादशाह की हार निश्चित हो गयी। शाहजहां तुरंत उठकर शाही हरम में पहुचा। बेगमों से कहने लगा—'तुम चली जाओ . . . तुम चली जाओ'। पर कोई राजी न हुई। आखिर वह दिलाराम, बेगम के पास गया। उसने कहा, 'जाने की बात बाद में। पहले मोहरे बताइए'। उसने शतरंज बिछा दी। शाहजहां ने मोहरे लगा दिये। देखकर दिलाराम ने शेर कहा:

शाहा दो रुख बिदह व दिलाराम रा मदह, पीलो प्यादा पेशकुन, अस्प किश्त मात।

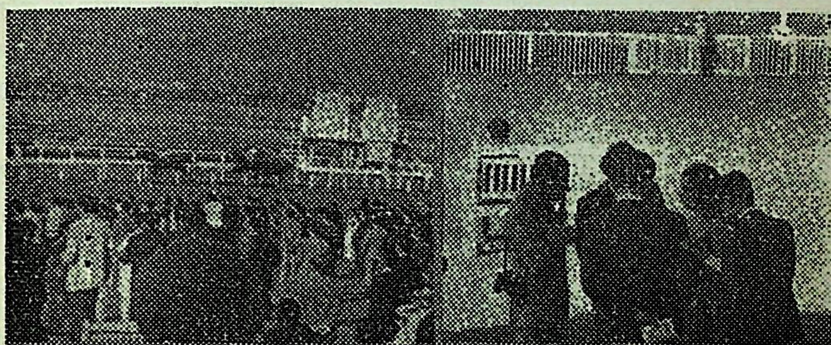
(शाही घोड़े कटवा दीजिए और दिलाराम पर रहम कीजिए। घोड़े कटने पर हाथी और पैदल (प्यादे) बढ़ाइए, बाजी आप जीत जाएंगे।) हारी बाजी जीतने की चाल समझकर शाहजहां बहुत ख़ुश हुआ। वापस आकर वैसा ही खेला और जीत गया।

चौपड़ और शतरंज के साथ-साथ जुआ खेलने के लिए कौड़ियों का भी खूब प्रयोग होता था। सोलह कौड़ियां मुठ्ठी में लेकर तीन, पांच, सात, नौ आदि के दांव फेके जाते। फेकनेवालों के हाथ इतने सधे होते कि जिस संख्या का दांव फेकते उतनी ही कौड़ियां चित गिरतीं। गांवों और कस्बों में अभी भी कौड़ियों से जुआ खेलते हैं। किंतु ताशों के चल जाने से उनका प्रयोग कम होता जा रहा है। पहले अच्छे ताश महंगे थे और सभी जगह मिलते नहीं थे। अब सब जगह मिल जाते हैं। आजकल सबसे ज्यादा जुआ ताश से ही खेला जाता है। ताशों से जुआ खेलने के कितने ही तरीके हैं। उनमें लोग फेर-बदल भी करते रहते हैं।

आधुनिक युग में सभी बड़े देशों में 'घुड़दौड़' बहुत लोकप्रिय है। लोग देखते-

देखते लखपति बन जाते हैं। कंगालों की संख्या भी कम नहीं होती है। मशहूर 'डरबी रेस' इंग्लैंड में होती है।

आपत्कालीन स्थिति के पहले हमारे यहां 'मटका' व्यापक रूप से खेला जाता था। इस खेल का जन्म हुआ न्यूयार्क में रुई के बाजार भाव के आंकड़ों से। पहले लोग भाव के आंकड़ों पर दांव लगाते जो खुलने और बंद होने के अलग-अलग होते थे। किंतु ये भाव सारे देश में पहुंच



घुड़दौड़ का मैदान जहां भाग्य का निपटारा पलक झपकते होता है

नहीं पाते थे। तब बंबई के कुछ लोगों ने ताश के पत्तों से खुला और बंद नंबर निकालकर देश भर के 'मटका-जुआरियों' के भाग्य का फैसला करना शुरू कर दिया। आपत्कालीन स्थिति ने लोगों को इस व्यसन से छुटकारा दिला दिया।

आजकल 'लाटरी' का भी जोर है। सभी राज्य सरकारों की लाटरियां बिकती हैं। आदिमयुग में लोग लाटरी निकालकर ही अपने भाग्य, भविष्य या दांव का फैसला करते थे। लाटरी को सरकारी बना देने से धोखाधड़ी या बेईमानी खत्म हो गयी है। खरीदार को इतनी तसल्ली तो रहती ही है कि उसका रुपया देश के निर्माण कार्य में काम आया।

जुआ खेलने के तरीकों की कोई कमी नहीं है। आसमान में बादल देखकर पानी बरसने या न बरसने पर शर्तें लग जातीं और लाखों का जुआ हो जाता है। चुनाव-परिणामों से लेकर रेडियो पर बजनेवाले फिल्मी गानों तक पर लोग जुए के दांव लगा लेते हैं।

जुआ खेलने की इस विश्वव्यापी प्रवृत्ति के मनोवैज्ञानिक और सामाजिक कारण सर्वत्र एक जैसे हैं। यह प्रवृत्ति उन लोगों में होती है जो किसी बहाने धन खर्च करना चाहते हैं या अपना भाग्य अचानक बदल डालने को लालायित रहते हैं। ज्यादातर जुआरी दूसरे वर्ग के होते हैं और वैभवशाली जीवन का भूत

उन पर इस तरह सवार रहता है कि वे सब कुछ खोकर भी सुनहले सपनों का मायावी धागा पकड़े रहते हैं। अंत में वे कंगाल हो जाते हैं।

मनुष्य का स्वभाव है कि वह हर चीज बिना परेशानी या परिश्रम के एक झटके में हासिल कर लेना चाहता है। दूसरा कारण है जुए के खेल में उत्तेजना या आवेश। जोखिम, कौतूहल, आशा, आश्चर्य आदि अनेक मनोभावों का आनंद एक साथ मिलता है। इतना ही नहीं, जुआरी अपनी क्षमता, चतुराई और आर्थिक-संपन्नता के प्रदर्शन का भी इसे अच्छा अवसर मानता है । वह प्रतिद्वंद्वी के सामने झुकने को कभी तैयार नहीं होता चाहे उसे पत्नी या स्वयं तक को दांव पर क्यों न लगाना पड़े। ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं जो इस प्रवृत्ति के कारण जुआरी के विनाश की कथा कहते हैं। इसीलिए संसार के हर देश में जुआ रोकने के कानून हैं। इंग्लैंड के 'स्ट्रीट बेटिंग ऐक्ट १९०६' और 'दि बेटिंग एण्ड गैम्बलिंग बिल १९१२' के अनुसार सड़कों या सार्वजनिक स्थानों पर जुआ खेलना कानूनी अपराध है। वहां जुए का प्रचार करनेवाले विज्ञापनों पर रोक है। चीन में दांव लगाकर खेले जानेवाले सभी खेलों पर रोक है। कोई व्यक्ति जुआघर चलाते पकड़ा जाए तो उसे भारी सजा दी जाती है। सरकार उसकी सारी संपत्ति जब्त

कर लेती है। जापान के पुराने कानून के अनुसार जुआरी को कठोर दंड मिलता है। इसलाम के अनुसार जुआ खेलना अपराध है। भारतीय दंडसंहिता में जुआ खेलना, खिलाना दोनों दंडनीय हैं।

जुआ खेलने के पक्ष में जुआरी दलील देते हैं कि यह मनोरंजन और आनंद प्राप्त करने का ऐसा साधन है जिससे आर्थिक लाभ भी होता है। किंतु आनंद तभी तक मिलता है जब तक दांव लगाने के लिए पर्याप्त धन पास है। अमीर हारकर भी दांव लगाता जाता है और गरीब हारकर लुट जाता है। जीतनेवाला जुआरी हारे जुआरी के लिए दलील देता है कि उसने भी खेल-आनंद तो लिया ही। किंतु यह दलील भी थोथी हैं। जुआ कभी भाईचारे की भावना से नहीं खेला जाता। जुआरी आपसी संबंध भुलाकर एक दूसरे के शत्रु बन बैठते हैं।

जुआ संपत्ति के हस्तांतरण का ऐसा तरीका है जिसमें बिना कोई कीमत चुकाये ही लोग दूसरों की संपत्ति हथिया लेते हैं। यह मानवता के समतावादी सिद्धांत के विरुद्ध है। असल में जुआ आपसी रजामंदी से की गयी डकैती है जिसमें लुटनेवाला व्यक्ति लूटनेवाले का विरोध नहीं कर पाता। जुए के हाथ आदमी का भाग्य आखिर दुर्भाग्य में बदल देते हैं। अंत होता है सर्वनाश।

—एफ/बी—३०, टैगोर गार्डन,
नयी दिल्ली ११००२७

आपन्नाशाय विबुधैः कर्तव्याः सुहृदोऽमलाः।
न तरत्यापदं कश्चिद्योऽत्र मित्रविवर्जितः।

—विशेष बुद्धिमानों को भी, विपत्तिनाश के लिए निर्मल—अत्यंत स्वच्छ हृदय के मित्रों का आश्रय लेना चाहिए। इस संसार में कोई भी मित्र रहित व्यक्ति आपत्ति से त्राण-छुटकारा नहीं पा सकता।

क्षमा धनुः करे यस्य दुर्जनः किं करिष्यति।
अतृणे पतितो वह्निः स्वयमेवोपशाम्यति।

—जो व्यक्ति क्षमाशील है—जिसके हाथ में क्षमारूपी धनुष है उसका दुष्ट क्या बिगाड़ सकता है। जहां तिनके न हों ऐसे स्थान पर पड़ी अग्नि अपने-आप शांत हो जाती है।

कलहान्तानि हर्म्याणि कुवाक्यान्तं च सौहृदम्।
कुराजान्तानि राष्ट्राणि कुकर्मान्तं यशो नृणाम्।

—नित्य कलह से महल उजड़ जाते अथवा घराने नष्ट हो जाते हैं। छेदनेवाले वाक्य से मित्रता, दुष्ट शासन से राष्ट्र और कुकर्म से मनुष्यों का यश नष्ट हो जाता है।

—प्रस्तोता : ब्रह्मदत्त शर्मा

मेरी कहानियों का एक अविस्मरणीय पा

(६)



करुण कोमल और संवेदनशील : सुबंधु

● डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल

पात्र माने बरतन, जिसमें कुछ रखा जाए। चरित्र माने सजीव, जीवित प्राणी, इनसान, जो अपनी जिंदगी अपने हिसाब, स्वभाव, प्रकृति से खुद जिये। कलाकार या लेखक उसका केवल दर्शक या साक्षी होकर उसे लिख दे। उसका चितेरा हो जाए। पात्र वह है, जिसके माध्यम से कथाकार, लेखक अपने विचार, अपने अनुभव पाठक को देता है, जैसे किसी पात्र या बरतन में कोई चीज रखकर दूसरे को दी जाए।

इसी अर्थ में सुबंधु पात्र नहीं चरित्र है—मेरे उपन्यास 'मनवृंदावन' का।

उससे मेरी भेंट एक विचित्र स्थिति में अचानक हुई थी, बिलकुल अनजान परिस्थितियों में, जैसे नियति की कोई पूर्व-योजना थी।

उसका नाम सुबंधु नहीं था। क्या था, वह निरर्थक है। जिस रूप में वह अपने आप मेरे भीतर उगा, जन्मा, चरितरत हुआ, वही था सुबंधु। अच्छा बंधु था। करुण, कोमल, सुहृद और तीव्र संवेदनाओंवाला, पर बुरी तरह टूटा और घायल।

उससे जिस क्षण मेरी अकस्मात भेंट हुई, वह बेहद अस्वस्थ था। यह घटना इलाहाबाद की है। सहज-सहानुभूति से मैं कुछ उसकी सहायता करने चला तो

पाया कि वह किसी से कोई मदद, सहानुभूति नहीं चाहता—वल्कि मैंने यह पाया कि उसने मानवीय करुणा और दया को एक समझ लिया है; और स्वभावतः दया से घृणा तो होनी है। सुबंधु को एक अहंकार, स्वभावतः यह तो था ही कि वह आधुनिक है। दूसरा यह कि आधुनिक होने का मतलव ही यह है कि हर चीज से घृणा की जाए—तभी तो यह सावित होगा कि 'मैं' कितना श्रेष्ठ, महान और विशिष्ट है।

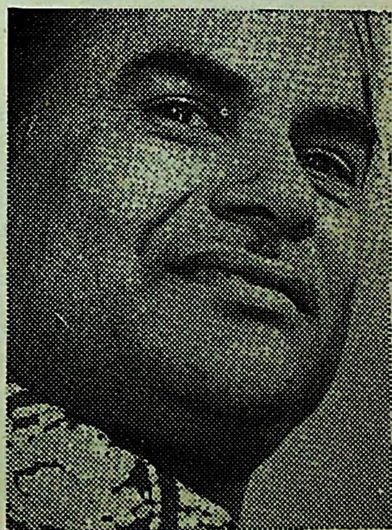
वह मुझसे अपनी जितनी प्रतिक्रियाएं करता, अपने घायल अहं से बंधा हुआ मेरे साथ जैसा व्यवहार करता, मैं उतना ही उससे आकृष्ट होता चला गया; क्योंकि फिर भी वह कहीं एक सच्चा सुवंधु था। कहीं वह बहुत करुण भी था, पर उसकी करुणा पर इतनी परतें पड़ी हुई थीं प्रतिक्रियाओं की, कि बस अवाक देखते रह जाने का विषय था।

पर मेरी मूल जिज्ञासा थी यह जानने-देखने की कि उसके जीवन में आखिर वह कौन-सी क्रिया थी, जिसकी इतनी चोट, इतनी प्रतिक्रिया वह ढो रहा है। वड़ी भक्ति और धैर्य के वाद मुझे उसका विश्वास प्राप्त हुआ। कई तरह से, कई धरातलों पर जैसे उसका आहत अहं उस अतीत के उसके कर्म से जुड़ा था।

वह क्या था ?

घटना क्या थी ? मैं अव क्रिया नहीं कहूंगा, क्योंकि तलाशते ढूंढ़ते मुझे जो मिला वह यही कि वह कर्म क्रिया थी ही नहीं। यूनीवर्सिटी के एम. ए. शिक्षाकाल में उसके एक धनी अभिजात मित्र से एक युवती का प्रेम हुआ। उसमें वही सुवंधु मध्यस्थ था, वल्कि माध्यम कहिए। पर हुआ यह कि प्रेमी प्रेमिका को छोड़कर भाग निकलता है। प्रेमिका के दुख-दर्द और आहत अभिमान का सुबंधु ही साक्षी और साथी होता है। धीरे-धीरे सुबंधु के मन में यह भाव वड़ी तीव्रता से उठता है कि वह प्रेमिका सुवंधु को ही क्यों नहीं अपना प्रेमी मान लेती ? वह क्या उसका प्रेमी नहीं हो सकता, पर सुबंधु ग्रामीण मध्यवर्गीय संस्कारों में पला था। आदर्शों का जीवन ओढ़े था। मन में कुछ, वाहर कुछ। सच्ची वात को सच्चे निष्कपट ढंग से न जी पाने और यहां तक कि न कह पाने की जो त्रासदी हम पूरे भारतीय समाज में पाते हैं, सुवंधु

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल



उसी का सच्चा प्रतिनिधि था।

दूसरी ओर प्रेमिका चोट खाकर अपने उन झूठे आदर्शों से मुक्त हो सुबंधु से साफ कह देती है कि प्रेम में कोई अन्य पूरक नहीं हो सकता। प्रेम में बेईमानी नहीं चल सकती। यह है वह प्रेमिका-हिरनमयी। इसे सुबंधु कतई नहीं समझ पाता और अपने आहत अभिमान से अपने अहंकार के दुर्ग में बंदी होता चला जाता है। यह प्रक्रिया दुहरी चलती है। अहं का दुर्ग बनाना और साथ ही उस दुर्ग में अपने 'मैं' को कैद करते चले जाना—यही है वह अविस्मरणीय सुबंधु।

हिरनमयी के प्रति सुबंधु का प्रेम दरअसल उसकी क्रिया नहीं थी, मूलतः वह प्रतिक्रिया ही थी, अपनी दमित इच्छाओं की—अपने ऊपर ओढ़े हुए मध्यवर्गीय संस्कारों और झूठे खोखले संस्कारों की।

जीवन में पहली बार मुझे सुबंधु के चरित्र से पता चला कि यह सब मन है। मन बनता ही है अतृप्त वासनाओं से। मन छल है। नहीं का ही नाम है मन। मन अयथार्थ है। जीवन यथार्थ है। अयथार्थ से यथार्थ का मुकाबला हो, साक्षात्कार हो तो क्या होगा?—क्षय केवल क्षय।

'मनवृंदावन' में हिरनमयी उस मन की यात्रा को देख रही है। पहली बार देख रही है। देखना ही तो वृंदावन है। न देख पाना ही नरक है। उस यात्रा में सुबंधु हिरनमयी से कहता है—'कैसी क्षमा? ... मैं अब दया, क्षमा, माया, ममता, प्रेम कुछ नहीं जानता। सिर्फ इतना ही जान पाया हूं कि स्वार्थ ही सत्य है। अंत में मन को बेधकर, रौंदकर यही आता है सामने।'

सुबंधु सोचनेवाला चरित्र हो गया है। आज मैं देखता हूं तो एक नयी बात पाता हूं। इस अविस्मरणीय से। सोचता कौन है, जो भयभीत है। जो अपने 'मैं' से ही बुरी तरह बंधा हुआ है। जो 'मैं' से इस तरह बंधा है, वह देखता कहां है? वह केवल सोचता है। सोचना न देख सकने का ही फल है। जो देखता है वह तो क्रिया हो जाता है। वह सोचना ज्ञान से प्रेरित नहीं है, न ही वह अनुभवजन्य है। वह केवल मन की, भय की, अतृप्त इच्छाओं की, प्रतिक्रिया की देन है। सोचना बीमारी है इस तरह—जिसमें हमारा बुद्धिवादी बुरी तरह फंसा तड़प रहा है।

जहां अनुभव है, वहां है विवेक। अपने आपको भी देखना और दूसरे को भी। विवेक सोचने से नहीं प्राप्त होता। अनुभव से मिलता है। अनुभव मिलता है कर्म से और कर्म कौन करता है? कर्त्ता कौन है? जो अपने अहं से अलग है। उसका साक्षी है, सहचर है—इतना दिया है मुझे मेरे इस सुबंधु ने।

शायद मेरा यह निजी अनुभव किसी के काम आ सके—उपन्यास, कथा-कहानी लिखना चित्र प्रस्तुत करना है। चित्र प्रस्तुत करना चरित्र का सृजन है। देखना ही सृजन है। सोचना व्याधि है।

८/१७, ईस्ट पटेलनगर, नयी दिल्ली-८

अलीबाबा और ब्रजविलास

• परिमल गोस्वामी

अलीवावा ने डाकुओं के रत्न-गृह को खोजने के वाद जो कुछ किया था वह सभी को मालूम है, इसलिए उसका पुनः उल्लेख करना अनावश्यक है। लेकिन, तत्कालीन वादशाह के आदेश से अलीवावा-आख्यान के एक वड़े अंश का प्रचार वंद रहने के कारण वह अंश आज तक किसी को मालूम नहीं।

केवल एक शख्स, जिसका नाम था अलकरीम, वगदाद से भाग कर तुर्की गया और वहीं गुप्तरूप से यह कहानी लिखने लगा। उसकी लिखी कहानी इस प्रकार थी।

अलीवावा सिर्फ तीन गधों की सहायता से डाकुओं की गुप्त गुफा से धन-रत्न लादकर ला रहा है। उसका घर अनमोल हीरे-जवाहरात से भरता जा रहा है। फातिमा उनको तौल-तौलकर मिट्टी में गाड़कर रख रही है। एक दिन गया, दो दिन, तीसरे दिन अड़चन आ गयी। वड़ा ही कल्पनातीत कांड। तीनों गधे अड़कर





खड़े हो गये, बोझ पीठ पर लादने के बाद वे हिले नहीं। अलीबाबा अपनी सारी ताकत लगाकर भी उनको टस-से-मस नहीं कर सका। उसका सुनहरा सपना क्या टूट जाएगा? वह आशाहत होकर मणि—गुफा के बीच में लौटकर बच्चे की तरह रोने लगा। अब वक्त भी नहीं रहा। थोड़ी देर बाद ही डाकू लौट आएंगे और अगर उन्होंने देख लिया कि उनके भंडार में सेंध लगाकर दूसरा एक डाकू प्रवेश कर चुका है तो फिर खैर नहीं। उन्मादी-सा खड़ा होकर वह फिर गधों को ठेलने लगा, लेकिन कोई नतीजा न निकला। अलीबाबा करुण नयनों से उनकी ओर देखता रहा। ऐसे समय अलीबाबा को भौचक्का कर एक गधा मनुष्य की भाषा में बोल पड़ा—'बोझ लादूंगा बशर्ते बोझ का आधा हमें दे दो।'

अलीबाबा को अपने कानों पर यकीन नहीं हो रहा था। उसे लग रहा था कि वह मानो 'अलिफ लैला' का एक नायक हो और ये गधे किसी परीकथा के गधे हों।

वह गधा फिर बोल पड़ा—'आधा हिस्सा न देने पर न केवल हम नहीं ढोएंगे बल्कि बाहर के किसी गधे को भी नहीं ढोने देंगे। यह मत भूलो कि हमारे बोझ ढोने पर ही तुम्हारा भाग्य निर्भर है।'

लेकिन अलीबाबा इस प्रस्ताव पर राजी कैसे हो जाता? आधा हिस्सा देना पड़ेगा? अलीबाबा उत्तेजित होकर बोल पड़ा—'नहीं, नहीं, नहीं' और वह आंधी की रफ्तार से गुफा से निकल गया। गधे भी बोझ फेंककर उसका पीछा करने लगे।

अलीबाबा के मन में संदेह पनपने लगा, यह भूत-प्रेत का करिश्मा है या डाकुओं के गिरोह का ही कोई छलछंद है।

उसे अचानक अलकेमी याद आ गया। अलकेमी एक वैज्ञानिक है, उसके पास शायद इसका रहस्य-भेद हो सके।

लेकिन अलीबाबा को निराश होना पड़ा। उसने जाकर देखा, अलकेमी सीसे को सोना बनाने की असाध्य चेष्टा में उन्मादी-सा लगा हुआ है। इसे अगर पता लग जाए कि अलीबाबा ने बिना मेहनत के सोना बनाने का हुनर खोज लिया है तो वह भी हिस्सेदार बनना चाहेगा।

वह अलकेमी के पास से हताश लौट रहा है, तभी उसने देखा उस-जैसा एक और अभागा उस तपते पथ पर अकेला

पैदल चला जा रहा है।

और भी आगे बढ़कर अलीबाबा ने देखा, उसके मुख में तमाखू पीनेवाला एक पाइप है। उसने पूछा "आप कौन हैं ?"

"मैं ? मैं एक बंगाली वैज्ञानिक हूं, नाम है ब्रजविलास ।"

"वैज्ञानिक ? आप क्या अलकेमी के शिष्य हैं ?"

"नहीं । मैं डाक्टर थार्नडाइक का शिष्य हूं, हालांकि पहले मेरे गुरु थे शर्लाक होम्स, लेकिन थार्नडाइक का विशुद्ध 'लेबोरेटरी मेथड' मुझे बेहद पसंद है ।"

"वे कौन हैं ?"

"वे डिटेकटिव हैं, मेरे गुरु ।"

"डिटेकटिव किसे कहते हैं ?"

"जो विशुद्ध वैज्ञानिक पद्धति से रहस्यभेद का कार्य करते हैं ।"

अलीबाबा को मानो यह सुनकर हाथों में स्वर्ग मिल गया। बोला, "मैं एक बड़े रहस्य में फंसकर लबेजान हूं। काश आप मुझ पर मेहरबानी करें ।"

"इस वक्त मुझे फुरसत नहीं । मैं एक रहस्यभेद में नियुक्त हूं । फिलहाल मैं उजबेकिस्तान की धूल बटोर रहा हूं ।"

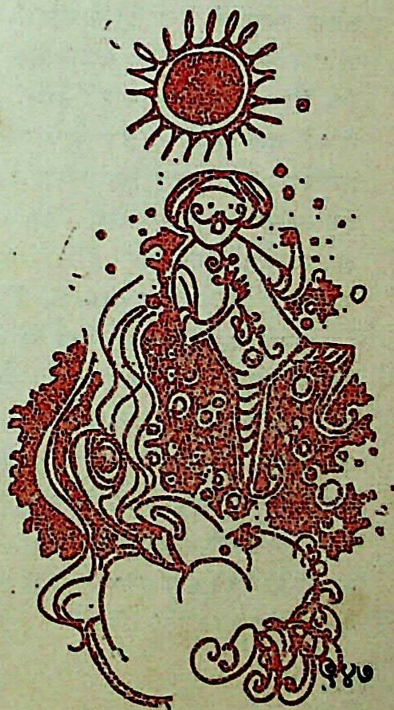
"धूल क्यों ?"

"ताकि उनको माइक्रोस्कोप में देख सकूं। कई मुजरिम तेहरान का जेल तोड़कर भागे हैं। वहां उनके छोड़े हुए लिबास को झाड़कर जो धूल मिली है उसमें एक प्रकार के रेशम का रेशा मिला है। यह रेशम उजबेकिस्तान में ही मिलता है। इसलिए मुकाबलाकर देखूंगा कि वे लोग उजबक हैं या नहीं ।

यह सब सुनकर अलीबाबा विस्मय-से विमूढ़ हो गया। ब्रजविलास के प्रति उसका आदरभाव जाग उठा । उसने बड़ी ही दीनता से कहा, "दुहाई आपकी, आप पहले मेरे इस रहस्य का भेद करें, मैं आप को प्रचुर हीरे-जवाहरात दूंगा ।"

हीरे-जवाहरात के उल्लेख पर ब्रजविलास चौंक पड़े, बोले, "क्या रहस्य है तुम्हारा ?"

"मेरे तीन गधे अचानक ही मेरा काम करने से इनकार करने लगे हैं, और सबसे मजेदार बात यह है कि वे मनुष्य की भाषा में बात कर रहे हैं, वे कह रहे हैं, मजदूरी



न बढ़ाने पर वे काम नहीं करेंगे ।"

यह अजीबोगरीब बात सुनकर ब्रजविलास उछल पड़े। बोले, "सच बोल रहे हो ? तो फिर मैं तैयार हूं तुम्हारा रहस्य-भेद करने के लिए ।"

●●

बगदाद के नजदीक ही ब्रजविलास ने अपना मोर्चा गाड़ा था। तय हुआ कि उस मोर्चे पर जाकर अपने सहकारी शंभू को कुछ जरूरी हिदायतें देकर वह अलीबाबा का पीछा करेगा।

उस समय शाम हो आयी थी। टायग्रिस नदी के किनारे-किनारे खजूर-वीथि के बीच से दोनों चल रहे थे कि एक अद्भुत घटना घटित हो गयी। किसी अज्ञात स्थान से एक पैने फलवाला तीर बिजली की रफ्तार से ब्रजविलास की पीठ में लगा और सीने को छेदता हुआ सामने एक खजूर के पेड़ में जा धंसा। अलीबाबा डर के मारे छलांग मार बैठा। ब्रजविलास ने हंसकर कहा, "डरो मत,, दुश्मन पीछा कर रहे हैं और इसका मतलब है कि वे मुझसे डर रहे हैं।"

अलीबाबा सोच नहीं सका कि ब्रजविलास इतने बड़े आघात से भी चंचल क्यों नहीं हो रहा है। अचानक तीन-चार दहशतनाक सूरत वाले लोग उनकी ओर लपके और तलवार के वार से ब्रजविलास का गला काटकर लमहे भर में आंखों से ओझल हो गये। ब्रजविलास का मुंड जमीन पर जा गिरा।

अलीबाबा मारे दहशत के चीख उठा। तभी ब्रजविलास का जमीन पर लुढ़कता हुआ मुंड हंस पड़ा और बोला, "डरो मत, तुम्हारा काम मैं कर ही दूंगा।"

अलीबाबा ने कांपती हुई आवाज में कहा, "लेकिन आप तो मर गये हैं।"

मुंड बोला, "कतई नहीं। सृष्टि के विधान में प्राणि-जगत में एकमात्र अमीबा और डिटेकटिव को यह सुविधा प्राप्त है।

अलीबाबा कुछ भी समझ नहीं सका। फटी-फटी आंखों से उसने देखा, ब्रजविलास के एक हाथ ने मुंड उठाकर मौके पर लगा दिया। इसके बाद हंसते-हंसते बोला, "डिटेकटिव तबका किसी भी आततायी के हाथों नहीं मरता।"

इस बात पर शायद अलीबाबा को यकीन हुआ, लेकिन पूरा-पूरा नहीं, क्योंकि ये सारी हैरतअंगेज घटनाएं उसकी कल्पना से भी परे थीं। उसने सकुचाते हुए पूछा, "मुंड जमीन पर गिर जाने पर आपने कहा था, इसमें आपकी सहूलियत हुई, इसका क्या मतलब है ?"

ब्रजविलास बोला, "मतलब यह है है कि जहां केवल दैहिक श्रम चाहिए, बुद्धि की जरूरत नहीं, वहां नाहक हम मुंड को ढोते फिरते हैं। फिर जहां केवल चिंतन-मनन की आवश्यकता है वहां अकारण ही सिर के साथ हाथ-पैर आदि को रोके रहते हैं। ऐसी विषमता से मुक्ति मिल गयी।

"चिंतन और कार्य यदि एकसाथ आवश्यक हों तो ?"

"सिर को साथ ले चलूंगा ।"

अलीवावा के रहस्य भेद का काम ब्रजविलास ने शुरू कर दिया है। अर्थात उसने यथारीति गधों का नाप लेकर उनके खुर से पंप की सहायता से थोड़ी-सी धूल संग्रह कर माइक्रोस्कोप के नीचे जांच के लिए रखी है।



ब्रजविलास सोचने में लगा है। इसी वीच शंभू ने स्लाइडों पर नंवर डाल माइक्रोस्कोप के नीचे उनको सजा रखा है—ब्रजविलास वहां आकर बैठ गया, लेकिन परीक्षण कर उसे जो मिला उससे रहस्य और गाढ़ा हो गया गधे के खुर की धूल का परीक्षण कर मिल रहा है—चावल का चूर्ण, रेशम का रेशा और गांजे की पत्ती का कतरा। ये तीनों चीजें वंगाल-में मिलती हैं और उजवेकिस्तान में भी। तो क्या ये वंगाल के गधे हैं ?

ब्रजविलास फिर परीक्षण में लग गये और परीक्षण के बाद परीक्षण करते-करते अंत में उनके चेहरे पर हंसी उभरी, क्योंकि अब जो रेशम का रेशा दिखायी पड़ रहा है वह निस्संदेह रूप से उजवेकिस्तान का है।

लेकिन यह हंसी विजय-प्राप्ति की हंसी नहीं, क्योंकि अभी वहुत दूर है . . . उजवेकिस्तान का भागा हुआ मुजरिम। उजवेकिस्तान का गधा। तो क्या इनमें कोई कार्य-कारण संबंध है ? क्या मुजरिम इन्हीं गधों पर सवार होकर तेहरान आये थे। शायद ऐसा ही हो। ब्रजविलास सोचने लगा। लेकिन थोड़ी देर वाद ही वह समझ सका कि यह घटना सच होने पर भी मुजरिमों का सुराग इसमें नहीं है। लेकिन फिर भी निश्चित होना जरूरी है। उसने अलीवाबा से पूछा, उसके गधे कितने दिन के हैं और उसको मालूम हुआ कि वे गधे उनके वचपन से उसके पाले हुए हैं।

"क्या तुम हलफ उठाकर यह वात कह सकते हो ?"

हलफ उठाने से पूर्व अलीवाबा तीनों गधों को अच्छी तरह से निरखने लगा। ब्रजविलास के प्रश्न से उसके मन में संदेह जाग उठा होगा लेकिन फर्क कहां है यह

उसकी पकड़ में नहीं आया।

कुछ देर बाद ब्रजविलास ने अली-बाबा से कहा, "केवल मेरे मुंड को एक बार गधे के पास ले चलो, मैं जरा-सा और देखूंगा।" देखने का खास कुछ था नहीं, क्योंकि यंत्र द्वारा देखने के सिवा उसके लिए अन्य प्रकार के देखने का कोई तात्पर्य नहीं। फिर भी वह गधों की आंखों की ओर टकटकी लगाये जाने क्या सोचता रहा। अचानक उसने गौर किया, तीन गधों की छह आंखे मानो हंस रही हैं। वह हंसी मामूली हंसी नहीं, व्यंग्य की हंसी थी। ब्रजविलास ने मन ही मन कहा—इस चुनौती का जवाब वह देकर रहेगा।

तीन दिन से ब्रजविलास सोचता ही रहा है। मुंह में पाइप है, लेकिन उसका धुआं मुंह के भीतर जाकर गले के रास्ते निकल रहा है, क्योंकि चिंता केवल उसका सिर कर रहा है। धड़ को उसने चंद दिन हुए तेहरान भेजा है, तथ्यसंग्रह के लिए। निरंतर वह चिंता कर रहा है, क्योंकि कोई अड़चन नहीं, खाने की कोई चिंता नहीं, उसका धड़ तेहरान में तरल खाद्य गले की नली से पेट में उतारता जा रहा है। उसी के द्वारा लायी हुई खबर से मालूम हो सका कि भगोड़े मुजरिम पहले गधे का व्यापार करते थे।

ऊर्ध्व-ब्रजविलास ने निम्न-ब्रजविलास से कहा, "तुम जंगल के कमरे में जाकर लेटे रहो, जरूरत पड़ने पर बुलाऊंगा, लेकिन चार-पांच दिन से पहले शायद तुम्हारी जरूरत न पड़े।"

ब्रजविलास का छिन्न सिर निरविच्छिन्न रूप से चिंता कर छिन्न चिंता-सूत्रों को एक जगह मिलाने की कोशिश करता जा रहा है—(१) उजबेकिस्तान का गधा, (२) उजबेकिस्तान के भगोड़े आसामियों का गधे का व्यापार, (३) अलीबाबा के गधे के मुंह से मानवीय भाषा, (४) मानवीय व्यंग्यभरी हंसी।

सात दिन निकल गये, लेकिन दरवाजा कहां? अंत में जब आठवां दिन भी लगभग पार होने लगा तब उसकी नजरों में एक जोड़ा मोजा आ पड़ा। बहुत दिनों पहले पैर से दोनों मोजे उसने उतारकर रख दिये थे, वे उसी हालत में पड़े थे। एक सत्य उसके मन में उदय हुआ—मोजे खोलते समय उलट गये थे और उसी ढंग से पड़े हैं। उसे लगा, वह भी शायद उलटी तरफ से सोच रहा है, सीधे-सीधे भीतर का हिस्सा बाहर ले आने पर ही शायद सारा मसला हल हो जाएगा।

लेकिन ताज्जुब! एकाएक सारा रहस्य पानी-जैसा साफ हो गया, मानो विद्युत के एक आघात से—हाइड्रोजन और आक्सीजन जिस प्रकार विद्युत के एक आघात से पानी बन जाते हैं। ब्रज-विलास के कटे मुंड से चिंता का भार उतर जाते ही अत्यंत हलके ढंग से मुंड मेज पर आनंद से उछलने लगा।

शंभू—शंभू

शंभू आंधी-सा भागता आया, धड़

ने भी लपककर मुंड को हाथों में उठा लिया। ब्रजविलास ने चंचल हो शंभु से कहा, "फौरन एक छुरा लेकर मेरे साथ अलीबाबा के घर चलो। मैं खुद ही गधा हूं, तभी इतने दिन उलटे रास्ते पर चलता रहा—"

अलीबाबा के घर पहुंचते ही ब्रजविलास ने चिल्लाकर कहा, "गधे कहां हैं?"

जाकर देखा, गधे मजबूती से बंधे हुए हैं। उसने वहां से सभी को हटाकर, छुरा निकाला और छुरे से पागल की तरह एक-एक कर तीनों गधों के पेट—गले से पिछले पैर तक फाड़ डाले। साथ ही साथ भीतर से तीन आदमी निकल आये—इनके हाथों में थे ढेर सारे इश्तहार।

ब्रजविलास की आश्चर्यजनक क्षमता देखकर विश्वभर के लोग दंग रह गये। बयान देना पड़ा, गधे मजदूरी बढ़ाने की मांग पर हड़ताल किये हुए थे, वहीं मेरे मन में संदेह जाग उठा।

ब्रजविलास की करामात की शोहरत हर कहीं फैल गयी, केवल अलीबाबा के किस विशेष कार्य को करने से गधों ने इनकार किया था वह ब्रजविलास को मालूम न था, दुनिया के लोगों को भी मालूम न हो सका। ●

(दुखद सूचना : रचना प्रकाशित होते-होते लेखक का ८० वर्ष की आयु में कलकत्ता में देहांत हो गया)

'कभी हम भी यहां के थे'

पिछले दिनों भारत में जोन एलिया साहब तशरीफ लाये। पाकिस्तान के मशहूर शायर और साहित्यकार हैं। बाराबंकी, लखनऊ, अमरोहा, दिल्ली, बंबई जहां-जहां भी वे गये मित्रगण ने उन्हें आंखों पर बिठा लिया। बाराबंकी के एक मुशायरे में उन्होंने अपनी गजल के यह अशआर पढ़े:

मिलकर तपाक से न हमें कीजिए उदास
खातिर न कीजिए कभी हम भी यहां के थे

अगला शेर! आंसू गालों पर आ गये—

क्या पूछते हो नामो-निशाने मुसाफिरां
हिन्दोस्तां में आये हैं हिन्दोस्तां के थे

और गजल! सुननेवाले झूम उठे—

हम तो जैसे यहां के थे ही नहीं
धूप थे साइबान के थे ही नहीं
उस गली ने यह सुनके सबर किया
जानेवाले यहां के थे ही नहीं

जैसे-जैसे पाकिस्तान जाने का दिन नजदीक आता जाता था, जोन साहब का दिल बुझता जा रहा था। चलने से कुछ दिन पहले अमरोहा में चलते-चलते बाजार ही में धरती पर लेट गये। उनके एक और साहित्यकार मित्र रईस नजमी ने उनके कपड़ों की मिट्टी झाड़ी तो जोन साहब ने एक अजीब दर्द के साथ कहा— "रईस! इसे न झाड़ो, यह मेरे वतन की खाक है।"

—कुलदीप तलवार

भारत के अतीत की सबल साक्षी मूर्तियां

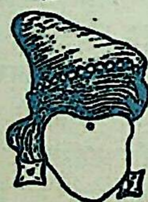
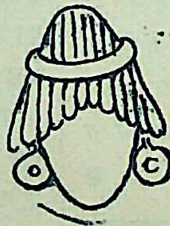
● अशर्फीलाल श्रीवास्तव

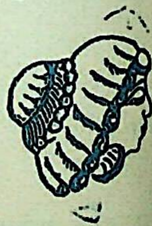
भारत का अतीत बड़ा गौरवमय रहा है। देशी तथा विदेशी साहित्य में बिखरे अनेक संदर्भों के साथ-साथ धरती के गर्भ से पाये गये अनेक पुरातात्त्विक साक्ष्यों ने भारत के अतीत को उजागर किया है। पुरातात्त्विक साक्ष्यों में स्मारक, दुर्ग, मंदिर, भवन, अभिलेख, सिक्के, मोहरें और मूर्तियां हैं।

सिंधु घाटी की सभ्यता

वर्तमान शती के प्रारंभ तक विदेशी लोग यह समझते थे कि संसार में अत्यंत प्राचीन मानव-सभ्यताएं जिन देशों में फली-फूलीं, उनमें भारत की गणना नहीं है। परंतु इसी शती के दूसरे दशक में हड़प्पा (पंजाब) और मोहनजोदड़ो (सिंध) नामक स्थानों पर खुदाइयां हुईं और उनमें लगभग ५,००० वर्ष पुरानी एक अति विकसित नागरिक सभ्यता के अवशेष पाये गये। तत्काल संसार सिंधु घाटी की प्राचीन सभ्यता से परिचित हो गया और

मणिभद्र यक्ष, ग्वालियर (नंद मौर्य युग); नारी केश-भूषा, सांची (शुंग-सातवाहन युग); पार्वती, अहिच्छत्र (गुप्त युग)

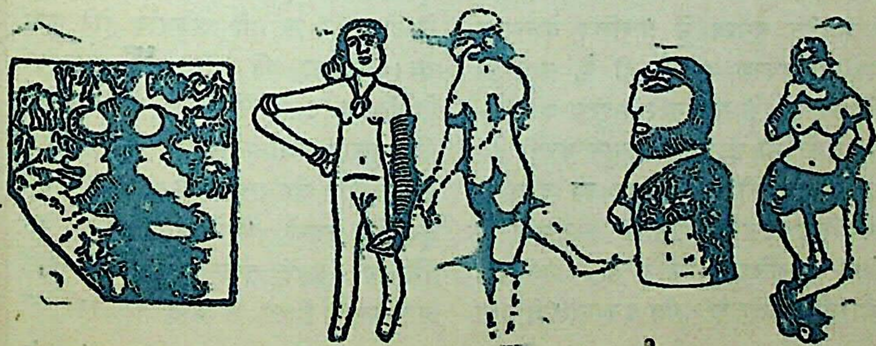


सभी ने भारतीय सभ्यता की प्राचीनता को स्वीकार किया।

सिंधु-घाटी सभ्यता के अवशेषों में मूर्तियों का विशेष महत्त्व है। पत्थर की मूर्तियों में एक पुरोहित की तथा कुछ योगियों की मूर्तियां उल्लेखनीय हैं। पालथी मारकर बैठे तथा अधखुले नेत्रोंवाली इन मूर्तियों से उस काल की योग-साधना की झलक मिलती है। ऐसी ही मुद्रा में बैठी पशुपति की मूर्ति एक मोहर पर उत्कीर्ण पायी गयी है। इस प्रकार, भारतीय जीवन में योग का जो महत्त्वपूर्ण स्थान है, उसकी परंपरा हमें सैंधव सभ्यता के काल से ही मिलती है। हजारों की संख्या में मिलने-वाले नुकीले पत्थरों तथा गोल चकरियों से प्रायः विद्वान उस काल में शैव-उपासना का प्रचलन स्वीकार करते हैं। मिट्टी की छोटी-छोटी अनगिनत नारी-मूर्तियों को विद्वानों ने मातृदेवी की मूर्तियां माना है। इन मूर्तियों के उभरे स्तन वस्तुतः उन्हें मातृदेवी का स्वरूप प्रदान करते हैं। मातृदेवी की पूजा भारत की एक अति प्राचीन परंपरा रही है, जो अदिति, श्री, लक्ष्मी, पार्वती, दुर्गा और सरस्वती की किसी न किसी रूप में पूजा में परिलक्षित होती है। इन मृण्मूर्तियों के अतिरिक्त सिंधु-सभ्यता की खुदाइयों से मुलायम पत्थर, पीतल, तांबे अथवा मिट्टी की बनी ढेरों मोहरें और उनके छापे भी पाये गये हैं, जिन पर विभिन्न दृश्यों में नर-नारियों, पशु-पक्षियों, पेड़-पौधों और कतिपय काल्पनिक जीव-जंतुओं के अंकन हैं। इनसे हमें उस काल में प्रचलित वृक्ष-पूजा, यक्ष-पूजा और नाग-पूजा आदि का भी ज्ञान होता है।

उपर्युक्त मूर्तियों से हमें उस काल के नर-नारियों की वेशभूषा का भी आभास मिलता है। उस काल में धोती के साथ-

बायें से : पशुपति शिव, नृत्यांगनाएं, पुरोहित (सिंधु घाटी-सभ्यता); स्तंभ-पुत्तलिका मथुरा (कुषाण युग)



साथ कंधों पर चादर का भी प्रयोग किया जाता था। पुरोहित की मूर्ति पर जो चादर पायी गयी है उस पर तिपतिया डिजाइन की छाप है, जो उस काल की विकसित वस्त्र-कला का उत्तम उदाहरण कही जा सकती है। नारी मृण्मूर्तियों की ऊंची-ऊंची शिरोभूषा, तिकोने-भारी कनफूल, गले में कंठा, वक्ष पर कई-कई लड़ियों के हार तथा कमर पर करधनी तत्कालीन नारी-सुलभ सौंदर्यप्रियता का परिचय देते हैं। कांसे की एक नर्तकी का बायां हाथ कलाई से लेकर ऊपर तक चूड़ियों और बाजूबंदों से भरा है तथा दायें हाथ में एक-एक कंगन और बाजूबंद है।

नंद-मौर्य युग

सिंधु-सभ्यता के उपरांत भारतीय मूर्ति-कला की अगली कड़ी नंद-मौर्य युग में मिलती है, जिसका समय चौथी-तीसरी शती ई. पू. है। इस काल में यक्ष-यक्षणियों की विशाल प्रतिमाएं बनायी गयीं। विदिशा, पवाया, मथुरा, दीदारगंज तथा पटना आदि से मिली इस काल की आदमकद विशाल यक्ष-यक्षणियों की प्रतिमाएं तत्कालीन समाज में प्रचलित यक्ष-पूजा पर तो प्रकाश डालती ही हैं, साथ ही वे उस युग के सम्भ्रांत स्त्री-पुरुष की वेश-भूषा का भी उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। इसी काल की बनी पत्थर की बहुत-सी चकरियां उत्तर भारत में तक्षशिला से लेकर पाटलिपुत्र तक में पायी गयी हैं। भारतीय कला के मर्मज्ञ इन यक्षियों तथा चकरियों की नारी-मूर्ति में मातृदेवी अथवा श्रीदेवी का रूपांकन पाते हैं।

सारनाथ, कौशांबी, सांची, रमपुरवा, संकिशा आदि स्थानों से प्राप्त अशोक की लाटों पर जो शीर्ष पाये गये हैं, वे उस काल की राजकला के उत्कृष्ट नमूने हैं। अशोक की सारनाथ की लाट के शीर्ष को तो भारत की राजमुद्रा बना लिया गया है, जिसमें चार सिंह पीठ से पीठ जोड़े हैं। संक्षेप में, मौर्यकाल में एक ओर बौद्ध धर्म था, जिसे राजकीय संरक्षण मिला हुआ था और जिसके प्रचार-प्रसार में स्वयं सम्राट सक्रिय सहयोग दे रहे थे, और दूसरी ओर पारंपरिक यक्ष-पूजा तथा मातृपूजा भी जनसाधारण के बीच अत्यंत लोकप्रिय थी।

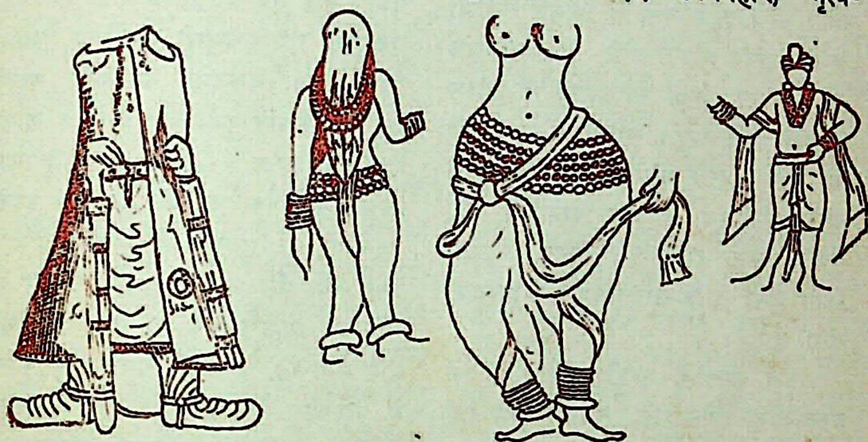
शुंग-सातवाहन युग

शुंग-सातवाहनकाल बौद्धकाल का विकास-काल था जिसमें भरहुत, सांची, सारनाथ, बोधगया और अमरावती के स्तूपों, बराबर, कार्ले तथा भाजा आदि पहाड़ियों में उकेरे गये चैत्यों और विहारों का सृजन संभव हुआ। लगभग इसी काल से जैनकला का भी प्रादुर्भाव होने लगा था। उड़ीसा की राजधानी भुवनेश्वर के निकट उदयगिरि और खंडगिरि की जैन गुफाएं तथा मथुरा के कंकाली टीले से उत्खनित जैन स्तूप इसी काल में निर्मित हुए थे। स्तूपों, चैत्यों तथा गुफाओं की भित्तियों, छतों, तोरणद्वारों तथा स्तंभों पर उत्कीर्ण शिल्प में बौद्ध कथानकों का

अंकन करके शिल्पियों ने तत्कालीन समाज की वहुरंगी झांकी प्रस्तुत कर दी है।

इस शिल्प से हमें यह भी पता चला है कि शुंगकाल तक महात्मा गौतम बुद्ध की प्रतिमाओं का अंकन नहीं किया गया था - उनके कई प्रतीकों की पूजा की जाती थी, जैसे स्तूप, वोधिवृक्ष, पदचिह्न, आसन, धर्मचक्र, त्रिरत्न आदि। साथ ही इस शिल्प से हमें तत्कालीन लोकधर्म का भी ज्ञान हो जाता है, जिसमें यक्ष, किन्नर, नाग तथा श्री-लक्ष्मी की पूजा का व्यापक प्रचार था - सांची के भव्य तोरणों पर बोधिगृहों के साथ-साथ धर्मचक्रगृहों, त्रिरत्नगृहों तथा अग्निगृहों के भी अंकन हैं, जो आगे चलकर गुप्तकाल में जन्मे हिंदू मंदिरों के प्रारूप कहे जा सकते हैं।

शुंग-सातवाहनकाल की कला का सृजन यद्यपि वौद्ध एवं जैन स्मारकों पर किया गया था और उसकी मूलकथा भी इन्हीं धर्मों से ली गयी थी, परंतु तत्कालीन शिल्पी लोक-जीवन का अंकन करने से अपने को न रोक सके। सांची के स्तूप के चारों तोरण इस प्रकार शिल्प की अनुपम निधि हैं। इन पर युद्धरत सेनाओं, मृगया, जल-क्रीड़ा, वन-विहार, नृत्य-संगीत तथा मद्यपान के मनोहर दृश्य उत्कीर्ण हैं। रथों, हाथियों, घोड़ों, बैलों और सिंहों की सवारी करते लोग, सिंह तथा मगरमच्छ से संग्राम करते योद्धा तथा रसोईघर के दृश्य हैं।



कनिष्क, मथुरा (कुषाण युग); शालभंजिका; सांची, स्तंभ-पुत्तलिका, भरहुत; द्वारपाल, सांची (शुंग-सातवाहन युग)

इस काल के नर-नारी अत्यंत सौंदर्य-प्रेमी थे। वे भांति-भांति के वस्त्रालंकार तथा बड़ी-बड़ी पगड़ियां पहनते थे, जिन्हें मोतीमाल से सजाते थे। उच्च वर्ग के

लोग उत्तरीय धारण करते थे। धोती सभी का अधोवस्त्र था, जिस पर संभ्रांत परिवार के लोग काछनी लपेटते थे। कच्छवाली साड़ी स्त्रियों का मुख्य परिधान था, जिनके ऊपर वे कई लड़ियोंवाली मेखलाएं कमर पर लपेटती थीं। उनकी चादर सिर से होकर पीठ पर लटका करती थी। उस काल में अत्यंत झीने वस्त्र पहने जाते थे, जिनसे नारियों के अंग-प्रत्यंग झलका करते थे। उस काल में सिले हुए वस्त्रों का प्रयोग भी प्रारंभ हो गया था। भरहुत, सांची एवं अमरावती के शिल्प में पूरी अथवा आधी बाहोंवाले कंचुक, जांघिये, चूड़ीदार पायजामे और नुकीली गोल टोपी पहने सैनिकों, शिकारियों तथा सेवक-सेविकाओं को दिखाया गया है।

इस काल के उत्कीर्ण शिल्प से हमें तत्कालीन दुर्ग-पद्धति, नगर-योजना एवं वास्तु-विन्यास का विस्तृत ज्ञान प्राप्त होता है। जनसाधारण की कुटियों से लेकर भव्य और विशाल राजमहलों तक के विविध रूप इस कला में उकेरे गये हैं। सांची, मथुरा तथा अमरावती की कला में उस काल के ऊंचे-ऊंचे परकोटे, गहरी परिखाएं, सुरक्षित नगरद्वार और बहुमंजिले राजभवन दर्शनीय हैं।

बुद्ध की मूर्ति का निर्माण

भारतीय मूर्तिकला का अगला सोपान कुषाणकाल था। गांधार एवं मथुरा इस काल की कला के प्रमुख केंद्र थे। गौतम बुद्ध की मूर्ति का निर्माण इसी काल में हुआ था। यही काल बौद्ध धर्म की महायान विचारधारा का प्रथम सोपान था। गांधार प्रदेश में यूनानी कलाकारों ने बौद्ध विषय पर जो कलाकृतियां सिरजीं उन्हें ही गांधार कला की संज्ञा मिली। इसी समय मथुरा में भी बौद्ध, जैन एवं ब्राह्मण तीनों धर्मों के देवी-देवताओं की मूर्तियां गढ़ी गयीं। बुद्ध एवं बोधिसत्त्व, जैन तीर्थंकर, एकमुखी एवं पंचमुखी शिवलिंग, ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य, बलराम, सरस्वती, लक्ष्मी एवं यक्षाधिपति कुबेर इस काल के लोकप्रिय देवी-देवता थे। इनका अंकन कुषाण-नरेशों के सिक्कों पर भी हुआ है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि कुषाण काल में बौद्ध तथा जैन धर्म के व्यापक प्रसार के साथ ही ब्राह्मण धर्म का पुनरुत्थान भी होने लगा था, जो आगे चलकर गुप्तकाल में पूर्णरूपेण विकसित हो सका। मथुरा के जैन स्तूप के जो आयागपट्ट, तोरण एवं स्तंभ मिले हैं उन पर उत्कीर्ण सामग्री विभिन्न सामाजिक तथ्यों पर प्रकाश डालती है। शालभंजिका, प्रसाधिका, शुकसारिका, सद्यःस्नाता आदि नायिकाओं के रूप में तत्कालीन रमणियों का दृश्यांकन उल्लेखनीय है।

गुप्त युग

अन्य क्षेत्रों की भांति कला के क्षेत्र में भी गुप्तकाल भारतीय कला का स्वर्णकाल था। अजंता, एलोरा, एलीफैंटा एवं बाघ की बौद्ध गुफाओं के चैत्यगृह

और उनकी छतों एवं स्तंभों पर उत्कीर्ण शिल्प उस काल की कला के सुंदर उदाहरण हैं। उस समय भिन्न-भिन्न शैलियों के आधार पर मूर्तिकला के कतिपय केंद्र प्रसिद्ध हो गये थे, जिनमें सांची, सारनाथ, मथुरा और पाटलिपुत्र प्रमुख थे। इन केंद्रों में जैन, बौद्ध, वैष्णव तथा शैव आदि सभी संप्रदायों के देवी-देवताओं की अत्यंत उत्कृष्ट मूर्तियां गढ़ी गयी थीं। इनके अतिरिक्त गुप्तकाल में बने मंदिरों की भित्तियों पर भी वैष्णव आख्यान दृश्यांकित किये गये थे।

गुप्तकाल ब्राह्मण धर्म का पुनरुत्थान काल था। शुंग-कुषाणकाल में जिस ब्राह्मण धर्म को लोक में विकास का अवसर मिला था, वही गुप्तकाल में राजकीय संरक्षण से अत्यंत फला-फूला। वैष्णव एवं शैव दोनों संप्रदायों को जन-साधारण ने अपनाया। गुप्त-सम्राट तो परम भागवत थे ही। इसीलिए इस काल में विष्णु, ब्रह्मा, गणेश, शेषनाग, वराह, शिव, स्कंद, दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती आदि विभिन्न देव-प्रतिमाओं की सृष्टि की गयी। विष्णु की प्रतिमाओं का विकसित चतुर्भुज स्वरूप तथा उनके विविध अवतार इसी काल की मूर्तिकला में साकार हुए। ब्राह्मण धर्म के प्रसार के कारण जैन-बौद्ध धर्म की गतिविधियों में कोई विशेष ढील नहीं आने पायी थी। इसी काल में बुद्ध, बोधिसत्त्व एवं जैन तीर्थंकरों की सुंदर मूर्तियों की सर्जना की गयी। सारनाथ में बनी 'धर्मचक्र-प्रवर्तन' मुद्रा वाली बुद्ध की मूर्ति संसार की सर्वश्रेष्ठ मूर्तियों में गिनी जाती है। अभिलेखीय साक्ष्यों से यह भी मालूम हो गया है कि इस काल में देव-प्रतिमाओं का निर्माण तथा उनकी स्थापना एक पुनीत कार्य समझा जाता था।

गुप्तकालीन पुरुषों के वस्त्र-विन्यास में शालीनता आ गयी थी। उनकी धोती घुटनों से नीचे तक लटकती थी। वे कंधों पर रेशमी उत्तरीय या पटका डालते थे। बड़े-बड़े घुंघराले काकपक्षी केश रखने का फैशन बढ़ गया था। पुरुषों ने आभूषणों का प्रयोग कम कर दिया था। सम्भ्रांत परिवार की स्त्रियों में भी पहले-जैसे झीने वस्त्र पहनने का प्रचलन कम हो चला था। वक्ष पर सिले हुए कंचुक, चोली या स्तनपट्ट, गले में एकावली और कानों में हलके कर्णफूल पहनने का फैशन शालीन माना जाने लगा था।

मूर्तिकला के आधार पर यह कहा जा सकता है कि गुप्तकाल में भारतीय जीवन का जो स्वरूप सुनिश्चित हुआ, लगभग वही अब तक चला आ रहा है। केवल मध्ययुगीन मुसलमानों और आधुनिक अंगरेजों ने हमारे जीवन को प्रभावित अवश्य किया है, परंतु यह प्रभाव हमारी वेशभूषा में ही अधिक परिलक्षित होता है। इस प्रकार मूर्तियां भारतीय अतीत की सबल साक्षी हैं।

—१३६, तुलाराम बाग, इलाहाबाद

दूसरा मोर्चा

हम माहिर हैं दोनों में

हम भारतवासी बड़े उदार और लासानी हैं आदर और सम्मान करने में, लेकिन बहुत कम लोगों को पता होगा कि हमारे बराबर अपमान करनेवाला भी शायद ही संसार में कोई दूसरा हो। अंतर केवल इतना है कि हम केवल अपनों का अपमान कर पाते हैं। विद्वज्जनों को याद होगा कि जब हमारी हाकी टीम विश्वविजय करके लौटी थी तब अभिनंदन-समारोह हुए थे, शहरों-शहरों उनके दर्शन-आयोजन हुए थे। वे हमारे लिए स्वर्णपदक लाये थे। हमने हर एक को नकद इनाम दिये, नौकरियां दीं, चढ़ने के लिए स्कूटर भेंट किये कि लो प्यारो, स्कूटर चढ़ो और हाकी खेलो। लेकिन मुए ओलंपिक खेल आ धमके और हमारी हाकी टीम, जैसा कि सबको विदित है, शान से हार गयी। वही टीम, जिसे हमने स्कूटर, नकदी, नौकरियों और फूल-मालाओं का अर्घ्य चढ़ाया था, जब स्वदेश लौटी तब कहते हैं खिलाड़ियों के घरवाले तक मारे शरम के एयरपोर्ट पर उन्हें लेने नहीं गये थे, अधिकारीगण के जाने की कौन कहे! हमने, यानी हम हाकी-प्रेमियों ने, उन्हें यह बता दिया कि हम स्कूटर दे सकते हैं, प्यार नहीं दे सकते। हौसला नहीं दे सकते। हमें तो स्वर्णपदक चाहिए, खेल की खिलाड़ी जानें। अपने-राम ने उन खिलाड़ियों का खेल भी देखा है। हां, हां, टेलीविजन के परदे पर देखा है। सेमी-फाइनल के लिए उन्होंने विपक्षियों को नाकों चने चबवा दिये। मुकद्दर साथ न दे तो कोई क्या करे! खिलाड़ियों की कोशिश में कोई कसर नहीं दिखायी दी। लेकिन इसे हमारे देश में कौन देखता है! यह किसी ने देखने की कोशिश क्यों नहीं की कि भारतीय हाकी-अधिकारियों का व्यवहार उन खिलाड़ियों के प्रति ऐसा रहा जिसने उनका उत्साह ठंडा करने में कोई कसर नहीं रखी? जो अधिकारी हौसला बढ़ाने के लिए टीम के साथ भेजे गये थे, उनके व्यवहार की जांच क्यों नहीं की जाती? शाबाश हम और हमारे खेल-प्रेमी! हमने अपने छोटेपन का पूरा-पूरा परिचय दिया और हाकी खिलाड़ियों का अपमान किया, जमकर किया!

लेबल बदलकर बेचेंगे

पिछले दिनों एक दैनिक अखबार में पढ़ा कि पंजाबी नाटकों के 'रगड़ा गोटी का किस्सा बोटी का' टाइप नामों में परिवर्तन का सिलसिला शुरू हो गया। भारत सरकार की अश्लीलता और हिंसा-विरोधी नीति को ध्यान में रखकर एक पंजाबी रंगकर्मी ने अपने नाटक का नाम बदलने का सेहरा लूटने का इरादा बनाया

और कुछ इस तरह नाम-परिवर्तन की घोषणा की जैसे कि स्वेच्छया किसी सामाजिक सुधार के काम में अपना शाकल्य चढ़ाने का पुण्य लूट रहे हों। नाटक का नाम बदलकर वही भ्रष्ट नाटक प्रस्तुत करना और करते चले जाना आंखों में धूल झोंकना नहीं है तो और क्या है? यह नया सिलसिला उतना ही कुत्सित है जितना कुत्सित द्विअर्थी संवादों का कुत्सापूर्ण अंग-संचालन से अश्लील अर्थ-प्रतिपादन को वल देना। इसी प्रवृत्ति को समाप्त करने के लिए सस्ते पंजाबी नाटकों के प्रति सुरुचिपूर्ण आलोचकों एवं पत्र-पत्रिकाओं ने कड़े लेख लिखे। 'कादम्बिनी' ने भी इस दिशा में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान किया। कम-से-कम इतना असर तो हुआ कि दाढ़ी में तिनकेवाले रंगकर्मी थोड़ा दहले। लेकिन यह अच्छी परिवर्तन की मुद्रा रही कि लेवल बदलकर विदेशी शराव के भाव देसी ठर्रा बेचेंगे।

वि. हिं. स. में 'पहल' का पहलू

अगस्त के अंत में मारीशस में संपन्न विश्व-हिंदी-सम्मेलन के द्वितीय अधिवेशन में आवभगत, खातिर-तवाजह के अतिरिक्त चर्चाएं काफी ठोस रहीं, जिनमें वातें जितनी खुलीं उतनी ही उलझीं। एक वक्ता ने कहा कि इस मंच को यह निर्णय करना चाहिए कि हिंदी में विश्व-स्तर के एक पत्र का प्रकाशन होना चाहिए। एक दूसरे वक्ता ने 'पत्र' का अर्थ खोला और कहा कि पत्र का अर्थ अब दैनिक पत्र से ही नहीं लिया जाना चाहिए, साप्ताहिक और मासिक पत्रिकाएं अब दैनिक पत्रों से ज्यादा स्थायी काम करती हैं।

लेकिन एक और वात इसी संदर्भ में भारतीय प्रतिनिधियों के बीच उछाल मारती रही मध्यप्रदेश की "अनियतकालीन, अव्यावसायिक, प्रतिक्रिया और प्रतिक्रांति का सामना करनेवाली पत्रिका 'पहल' को लेकर। भारतीय प्रतिनिधिमंडल के अनेक संसद-सदस्य 'पहल' को लेकर मारीशस गये हुए श्री कमलाप्रसाद की सरगरमी देख रहे थे और वार-वार यह सवाल कर रहे थे कि मध्यप्रदेश सरकार की सहायता प्राप्त करते हुए कैसे यह पत्रिका क्रांति-प्रतिक्रांति का डंका" पीटती रहती है? यह कहां की सदाचारिता है कि सरकार के पैसे पर सरकार को नकारो या गाली दो और छापो :

"मैं अपने कत्ल से डरता हूं
औ' खामोश रहता हूं
मगर कोई तो बोलेगा
भयानक मौत के जंगल का सन्नाटा
कभी कोई तो तोड़ेगा
जो अपने होंठ खोलेगा
आदमी के होंठ जब लंबे समय तक बंद रहते हैं
तो ऐसा वक्त आता है
जब अपने दांत से वह होंठ अपने
काट खाता है!"

'पहल' की इस नीयत का पर्दाफाश कब होगा? ●

जापानी भोजन नजर से खाने की चीज

● महेन्द्र साईजी माकिनो

किसी देश के बारे में जिज्ञासा होती है तो यह जानने की इच्छा होती है कि उस देश में लोग क्या-क्या और कैसे खाते हैं। ऐसी ही उत्सुकता का विषय जापानी भोजन है। यह जापानी वातावरण में विकसित हुआ और जापानी लोग ही इसे विशेष पसंद करते हैं।

जापान में विभिन्न प्रकार के खाद्य-पदार्थ उत्पन्न होते हैं। प्राचीन काल से जापान 'मिजुहोनो-कुनि' अर्थात 'चावल से परिपूर्ण देश' कहलाता है। यही कारण है कि जापान का मुख्य भोजन चावल है। जापान में समुद्री-उपज तथा पहाड़ी-उपज (छत्रक) खूब मिलती थी। जापान का मसाला इसी समुद्री घास, मछली, छत्रक या अन्य वनस्पति से बनता है। संसार में जापान का बहुप्रसिद्ध 'अजिनोमोतो' (स्वाद का मूलतत्त्व) इसी समुद्री घास से बनता है।

लगभग दो हजार वर्ष पूर्व एक रसोइये ने मछली तथा सीप का सलाद, जिसे जापानी भाषा में 'नामासु' कहते हैं, बनाकर जापान के सम्राट को दिया था। यही जापानी भोजन की उत्पत्ति मानी जाती है। 'हेइआं' युग में कुछ बौद्ध भिक्षु चीन गये थे। वे जापान में चीनी शैली की पाक-विधि लाये। एक हजार वर्ष पूर्व 'सिजोत्सुनगो' नामक व्यक्ति ने जापानी तथा चीनी विधि समन्वित करके 'जापानी पाकशास्त्र' की नयी प्रणाली चलायी।

शाकाहार का प्रचार

'कामाकुरा' युग में 'बुसि' अर्थात जापानी योद्धा भोजन भी सीधा-सादा करते थे। 'बुसि' वर्ग कभी शिकार करता तो वह भोजन में शामिल हो जाता। दूसरी ओर 'जेन' भिक्षु 'एसाई' और 'दोगें' ने चीन से वापस आकर शाकाहारी भोजन का प्रचार किया। इसमें तेल की मात्रा खूब होती थी। 'तोहु' (बीन कर्ड) भी ये ही लोग चीन से लाये।

'अजुचि-मोमोयामा' युग जापानी चाय-विधि का स्वर्ण-युग कहा जाता है। चाय-विधि के साथ 'काइसेकि' भोजन चलता है। 'काइसेकि' का अर्थ होता है गरम किया पत्थर छाती में लगाकर शरीर तपाना। 'जेन' साधक उपवास करते हुए ध्यानमग्न बैठ जाते थे और आग से तपा पत्थर कपड़े में लपेटकर साधना करते थे ताकि भूख भूल जाएं। कहा जाता है कि 'जेन' साधक दो बार भोजन करते थे, पर

जल्दी भूख लग जाने के कारण रात को चावल-मांड वनाकर खाते थे। यह हलका खाना 'काइसेकि' कहा जाता है। 'चानोयु' (चाय-विधि) हो चुकने पर लंबी प्रतीक्षा के वाद मेहमान को 'काइसेकि' परोसते हैं।

आलू-अरबी की मछलियां

'एदो' युग में 'वुसि' वर्ग के साथ-साथ व्यापारी-वर्ग का विकास हुआ। तव चाय-पानी की दूकानें या सार्वजनिक भोजनालय शुरू हुए। खाने-पीने के शौकीन इधर-उधर घूमने लगे। नागासाकि शहर में चीनी और हालैंडर लोगों के संपर्क में विशेष प्रकार का 'नागासाकि'–भोजन भी वनने लगा। इसी युग में चीन के 'जेन' भिक्षु 'इंगे' आये और 'क्योटो' स्थित 'उजि' में रहकर चीनी पाक-विधि के अनुसार शाकाहारी भोजन का प्रचार करते रहे। वे आलू या अरवी आदि से मछली का रूप वनाकर सजावट के लिए जरूर रख देते थे।

जापानी भोजन प्रत्येक मेहमान को अलग थाली में परोसा जाता है, पर 'हुचा' भोजन-विधि में एक वड़ी मेज पर सारा भोज रख दिया जाता है और सव मिलकर खाते हैं। यही कारण है कि 'हुचा' का मतलव 'सवको व्यापक रूप से चाय देना' होता है।



खाना-पीना जीवन साधना का ही एक अंग है

मूली का अचार

मूली जापान में वहुत होती है इतनी कि फसल काटते समय किसान खेत में

फेंक दिया करता था; परंतु सर्दी के दिनों में खाने को कुछ न मिलता। यह दशा देखकर भिक्षु-'ताकुआं' ने एक वड़े पात्र में मूली में नमक मिलाकर रख दिया। एक-दो महीने बाद स्वादिष्ट अचार तैयार होने लगा। आज भी जापानी लोग इसे 'ताकुआं' के नाम से वड़े चाव से खाते हैं, जो गरीव से गरीव जापानी के भोजन में भी एक अनिवार्य चीज है। जापान में आज पश्चिमी भोजन का प्रभाव है। फिर भी हर विदेशी जापान का विशेष स्वाद चख-कर जापानी भोजन की प्रशंसा करता है। 'तेंपुरा', 'सुकियाकि', 'सासिमि' आदि में यह स्वाद विशेष रूप से मिलता है।

जापानी परिवार साधारण तौर पर सुवह चावल पकाकर खाता है। प्राचीन काल में दिन में दो वार खाने का रिवाज था, किंतु आजकल जीवन जटिल और परिश्रम अधिक होने से दिन में तीन वार खाने की प्रथा चल गयी है। कई किसान तो चार-पांच वार भी खाते हैं। मध्याह्न-भोजन में मछली या मांस और कोई पक-वान होता है। शाम को जहां तक हो सके, परिवार के सभी सदस्य एकसाथ भोजन करते हैं।

शुभ अवसरों पर जैसे शिशु-जन्म, विवाह इत्यादि में लाल रंग का चावल और सेका हुआ 'ताई' (सी-ब्रीम) प्रस्तुत किया जाता है, जो देखने में सुंदर और खाने में स्वादिष्ट होता है। जापानी शब्द 'मेदे-ताइ' अर्थात 'शुभ-मंगल' इसी मछली के नाम पर चला है। अशुभ अवसर पर शाका-हारी भोजन प्रस्तुत करते हैं। ऋतु-परिवर्तन के साथ समय-समय पर विशेष प्रकार का भोजन तैयार करते हैं। नये साल में तीन दिन तक 'जोनि' (राइस केक सूप), मकर-संक्रांति में कद्दू, वसंत और हेमंत में मीठे चावल का लड्डू खाया जाता है।

पाक-कला का सौंदर्यशास्त्र

साधारणतः जापानी भोजन 'साके' (राइस वाइन) पीने और चावल खाने के अनुकूल है। पाकविधि इसी के मुताविक विकसित हुई। प्रत्येक उत्सव-त्योहार या शुभ-अशुभ संस्कार में 'साके' होना अनि-वार्य है।

जापान में ऋतु-परिवर्तन के कारण एक ही खाद्य-पदार्थ का स्वाद मौसम के अनु-सार वदलता है। इसलिए प्रत्येक ऋतु की विशेष चीज या ऋतु की भावना को भोजन में व्यक्त करने का ध्यान रखा जाता है। किसी देहाती सराय के सूप (रस) में यदि गाजर न मिले, तो एक द्विफल के पत्ते को पात्र की तह में रखकर हेमंत ऋतु की भावना प्रकट की जाती है। प्रत्येक भोजन का स्वाद वना रहे, इसलिए वहुत ध्यान देकर पकाया जाता है। गाजर, मूली, वैंगन, ककड़ी आदि में प्रत्येक का मूल रंग गायव न होने देने की सावधानी रखी जाती है। कलात्मक सुंदरता जरूरी है। कहते हैं कि जापानी भोजन नजर से खाने की चीज है। इस सुंदर भोजन में रसोइये का व्यक्तित्व भी प्रतिविंवित होना

चाहिए ।

पुराने जमाने में जापानी भी पत्ते पर रखकर भोजन किया करते थे। बाद में सीप या लकड़ी के पात्र चले। आज तो चीनी-मिट्टी, चांदी या कई रंग के एनेमल-पात्र प्रयुक्त होते हैं। पात्र की रंग-योजना जापानी भोजन-प्रणाली में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। प्रत्येक पात्र उचित स्थान पर रखते हैं, जो देखने में स्वाभाविक लगे।

जापानी भोजन करते समय चाय-विधि का नियम पालन करना होता है, जिसे 'जेन'—भिक्षु ने कायम किया था। जेन-साधक खाने-पीने को भी जीवन-साधना का अंग मानते थे और अत्यंत गंभीर वातावरण में भोजन करते थे। आज भी इस पुरानी परंपरा का कठोरतापूर्वक पालन करना पड़ता है। इसकी तुलना में पश्चिमी 'टेबल मैनर्स' कुछ भी नहीं हैं। ये नियम आज व्यावहारिक या उपयोगी नहीं लगते, फिर भी इस पुरानी परंपरा में शिष्टाचार का सुंदर उदाहरण देखने को मिलता है। तात्पर्य यह है कि हम कोमल भाव से नम्रतापूर्वक और आनंदपूर्वक भोजन ग्रहण करें, जो बाहर से देखने में कभी भद्दा न लगे।

जापानी लोग खाना खाने के लिए 'हासि' (चापस्टिक) का प्रयोग करते हैं जबकि भारतीय सीधे हाथ से और पश्चिमी लोग कांटे-चम्मच से खाते हैं। प्रत्येक जापानी

चापस्टिक या हासि : जापानी भोजन का अनिवार्य अंग है



बच्चे को बचपन से इसी का अभ्यास कराया जाता है।

देशी स्वाद की याद

मोटे तौर पर भौगोलिक दृष्टि से जापानी भोजन दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है, पश्चिमी और पूर्वी। पश्चिमी शैली की उत्पत्ति 'क्योटो' में हुई जो बौद्ध मंदिरों से भरा और चारों ओर पहाड़ों से घिरा है। यहां ताजी मछली न मिलने के कारण और बौद्ध-धर्म के प्रभाव से शाकाहारी भोजन का चलन चला। यहां तीन महीने की सर्दी के दिनों में सुबह-सुबह चावल की कंजी खाने का रिवाज है। पूर्व-शैली का केंद्र 'टोक्यो' है जो पुराने जमाने में 'बुसि' वर्ग का अड्डा रहा। इस क्षत्रिय धर्म का असर पाकविधि पर भी पड़ा। इसलिए पूर्व का स्वाद पश्चिम की अपेक्षा तेज है।

भारतवासियों को जापानी भोजन सुंदर जरूर नजर आएगा, पर खाने में बिलकुल नीरस लगेगा। इस नीरसता में स्वाद देनेवाला मसाला भी तो होना चाहिए। वह है जापानी 'सोया सॉस' व 'मिसो'। बहुत से जापानी विदेश घूमने जाते हैं और दुनिया के कई मजेदार भोजन करते हैं। फिर भी आखिर ऊबकर अपने देशी स्वाद की याद करतेहैं। इसी की भूख बुझानेवाला जापानी 'सॉस' होता है। 'सोया सॉस' और 'मिसो' सोयाबीन और गेहूं का खमीर उठाकर करीब एक साल रखे रहने से तैयार होता है। 'शोयू' एक प्रकार की चटनी है, जो हर नाश्ते में ऊपर से छिड़ककर खायी जाती है और प्रत्येक पकवान में डाली जाती है। 'मिसो' सोयाबीन की लुगदी है जिसे गरम पानी में छोड़ने से तुरंत दाल-जैसा रसा तैयार होता है। इन मसालों के बिना जापानी भोजन नहीं बनता।

कच्ची मछली, बांस का बच्चा

दुनिया के लोग आश्चर्य से पूछते हैं कि क्या जापानी लोग कच्ची मछली और बांस भी खाते हैं? जापानियों को छोड़कर सभी लोग इसे अजीब मानेंगे, पर जहां कहीं स्वच्छ पानी से ताजी मछली मिल जाए, कोई भी जापानी इस मछली के स्लाइस काटकर टिक्को मसाला जापानी सॉस में मिलाकर बड़े चाव से खाएगा। पूरा बड़ा बांस तो बेशक नहीं खा सकते, किंतु नरम अंकुर जिन्हें जापानी में 'ताकेनोको' अर्थात 'बांस का बच्चा' कहते हैं, जरूर खाये जाते हैं।

११, एंड्रयूज पल्लि, शांतिनिकेतन (प. बंगाल)

"क्यों भाई, कहां भागे जा रहे हो! कुशल तो है?"

"मेरे कुछ संबंधी दिल्ली से पांच बजेवाली गाड़ी से आने वाले हैं। उन्हीं को लेने स्टेशन जा रहा हूं।"

"लेकिन अभी तो कुल तीन ही बजे हैं?"

"जानता हूं, लेकिन रास्ते भर आप जैसे लोगों को जवाब भी तो देना है!" रामलालजी यह कहते हुए तेजी से आगे बढ़ गये।

कहानी

यत्न

• कौशल्या अश्क

"मांजी, इधर मेज पर पानी का जग है, गिलास भी रखे हैं।"

यशोदा ने गिलासों पर कवर लगा दिये। कमरे से बाहर आते-आते सहसा वह पल भर को रुकी, "और किसी चीज की जरूरत तो नहीं?"

"नहीं बेटा, अब किसी चीज की जरूरत नहीं, तुम आराम करो! सारा दिन दफ्तर में खटती रही हो, जब से आयी हो घर के काम-धंधे में लगी हो," मांजी ने बड़े स्नेहार्द्र स्वर में कहा!"

यशोदा चौंकी। यह स्नेह-ममत्व उसे बड़ा बेगाना-सा और अस्वाभाविक लगा। रूखा-सूखा संबोधन और उदासीन व्यवहार ही उसे स्वाभाविक लगता था। अपने विचारों में खोयी वह दरवाजे की ओर मुड़ी तो उसे बाबूजी की आवाज सुनायी दी, "यह बत्ती बुझाती जाओ बहूरानी!"

वही अपरिचित-परायी कोमलता! क्षणांश को वह भौचक्की-सी खड़ी रही, फिर बढ़कर उसने बत्ती बुझा दी, नाइट-लैंप का बटन दबाया और बाहर निकल आयी।

पहले भी कई बार मांजी-बाबूजी आये हैं, जब कभी वे दिल्ली आते, उससे मिल जाते। कभी दो-एक दिन रह भी जाते। वे लोग आते तो वह उनका बहुत स्वागत-सत्कार करती, उनकी हर सुख-सुविधा का ध्यान रखती। वे उसके बड़े हैं, इसलिए अतिरिक्त आदर-सम्मान देती



और मन के टूटे तारों को जोड़ती-गांठती वह सायास कर्तव्य का शिष्टाचार पूरा कर देती। भावना से इसका कोई संबंध न होता। जैसे वे लोकाचार बरतते, वैसे ही वह भी औपचारिकता निभा देती। न उसका मन उनके निकट होने को हुआ, न उन्होंने उसे समीप खींचने का प्रयास किया। वर्षों से यही क्रम चलता आ रहा है, फिर अचानक आज यह ममत्व क्यों?

यशोदा को याद नहीं कि ऐसे स्निग्ध-कोमल शब्द और इतना मीठा स्वर उसने पहले भी उनके मुंह से सुना हो। याद करती हुई वह वर्ष-पर-वर्ष पार कर पैंतीस साल



पीछे जा पहुंची जब वह नववधू बनी ससुराल की हवेली में गयी थी। 'चांद-सी बहू', 'लक्ष्मी बहू' की बौछार उसे भीतर तक भिगो गयी थी। सबके चेहरों पर गुलाब खिले थे, घर में गीतों के स्वर गूंज उठे थे, खुशी की लहर दौड़ गयी थी। अपने इकलौते बेटे के विवाह का उल्लास मांजी के अंग-अंग से टपक रहा था, बाबूजी का उत्साह उन्हें बार-बार आंगन में खींच लाता था। एक सबल सौम्य युवक ने उसके नन्हे-नाजुक हाथों को अपने सुदृढ़ हाथों में लेकर सदा-साथ निभाने का वचन दिया था और वह उसकी आंखों में उमड़ आये प्यार में आकंठ डूब गयी थी। धनधान्य, खेत-खलिहान, जमीन-मकान, नौकर-चाकर किसी चीज की कमी न थी। उमंगों के झूले झूलते वर्ष भी न बीता था कि घर बधावे के गीतों से गूंज उठा, फिर से वही विवाह-का-सा वातावरण, प्यार के बोल, उत्साह की लहरें... तेईस साल बाद हमारे घर यह बच्चा हुआ है। यह साड़ी बहूरानी के लिए दिल्ली से मंगा ली है। मिठाइयां उस कमरे में रखाओ... पंडितजी आ गये हैं। बहू यह गद्दी ले लो, जमीन चुभेगी। बहू बड़ी भाग्यवान है... सचमुच लक्ष्मी।

फिर अचानक एक प्रचंड तूफान उठा, जिसमें प्यार-दुलार, हर्षोल्लास, गीतों के बोल—सब कुछ उड़ गया, खिले-बिखरे गुलाब मिट्टी में लिथड़ गये और उसे सहारा देनेवाले हाथ सदा के

लिए उसे बेसहारा छोड़कर अलग हो गये।

दो साल पहले जो सगे-संबंधी बधावा गाकर गये थे, विलाप करते आ गये। घर में कुहराम मच गया . . . हाय मेरा शेर बच्चा. . मांजी छाती पीटतीं... मेरा बच्चा मुझे दगा दे गया, मेरी बांह तोड़ गया... बाबूजी फूट पड़ते... और वह जड़, स्तंभित निर्जीव-सी पड़ी रहती... दो महीने बाद आनेवाले बच्चे का सोच... उसका मन कांप-कांप उठता, आंखों से अविरल धारा बहती, पर मुंह से आवाज न निकलती-वह बोलना भूल गयी थी। उसका जी चाहता मांजी उसे अपने साथ भींच लें, वह उनसे लिपटकर जोर-जोर से रोये और दिल का गुबार आंखों से बहा दे, लेकिन वे दिन भर भीड़ से घिरी रोती-कलपतीं और रात को निढाल पड़ जातीं।

तूफान थम गया, सब चले गये। सूने वीरान घर में वह डरी-सहमी सांत्वना के दो बोल सुनने को छटपटाती फिरती। उसे विश्वास था अब मांजी उसे गले लगा लेंगी, उसके सिर पर हाथ फेरकर दिलासा देंगी और वह इस दुःख को, यातना को झेलने की शक्ति पा लेगी, पर उसके कानों में पड़े सास-ससुर के तिरस्कार-भरे बोल— हाय यह क्या हो गया... हमें किस पाप का दंड मिला है, हमने तो कभी किसी का बुरा नहीं किया... बहू के ग्रह ही भारी होंगे, जो हमारा जवान बेटा चला गया...वह अभागी है...बदकिस्मत !

दूसरा बच्चा हुआ, किसी ने न उसकी



चिंता की, न उस बच्चे की, बल्कि फिर से मातम मनाया गया—यह कुलच्छना है, अभागा है। तिरस्कार, अपमान और कोसनों का यह सिलसिला इस हद तक बढ़ा कि एक दिन उसने साहस करके कह दिया था—मैं भाई के पास जाकर पढ़ूंगी। दो साल के संजीव को उन्होंने नहीं आने दिया—यह हमारे बेटे की निशानी है, हमारा सहारा है ... और वह अपने एक अंश को उन्हें सौंप और दूसरे को छाती से लगाये चली आयी थी। ...

'उंह !' उसने सिर को झटका दिया, यह सब वह क्या सोचने लगी है! कब उसने हाथ-मुंह-पैर धोये, कपड़े बदले, जूड़ा खोलकर चोटी बनायी और कब अपने कमरे में आकर बिस्तर पर लेट गयी, उसे पता न चला। बत्ती बुझी थी, पर सिरहाने रखा टेबल-लैंप जल रहा था। हाथ बढ़ाकर उसने मेज से किताब उठा ली और खोल-कर पढ़ने लगी, लेकिन अक्षर गड्डमड्ड हो गये, उसकी आखों के आगे बेकिनार सागर का विस्तार फैल गया और उस पर

कांपती-डोलती किनारे से दूर जाती छोटी-सी नाव। तूफानी लहरों के थपेड़े खाती, डूबती-उतराती एक द्वीप के किनारे अटक गयी और कई हाथों ने बढ़कर उसे थाम लिया। यशोदा को लगा यही वह नाव है और थामनेवाले हाथ उसकी बहन और भाइयों के हैं।

बड़े भैया को छोड़कर सब लोग—बड़ी बहन, मझले और सझले भैया—दिल्ली में ही रहते थे। बड़े भैया भी छुट्टी पर आये हुए थे और कुछ दिन पहले ही उससे मिलने गये थे। बीच-बीच में वे लोग उससे मिल आते, कभी लिवा लाते। यशोदा ने कभी उन्हें अपनी यातना और अपमान-तिरस्कार की बात नहीं बतायी। यों बिना सूचना के उसके चले आने पर सब को हैरानी हुई थी।

ससुराल में निरादर और तिरस्कार से उसके स्वाभिमान को चोट लगी थी तो दिल्ली में अतिरिक्ति चिंता और स्नह से। वह दुखी है, उसे ठेस न पहुंचे, इसका खयाल सभी रखते। उसे मालूम होता, उसके लिए उनकी इस चिंता, स्नेह और सहानुभूति में दया का भाव छिपा है। यह दया-भाव उसे भीख-सा लगा था।

भीख वह नहीं लेगी, उसने निश्चय किया था और पढ़ने का उसका संकल्प और भी दृढ़ हो गया था। अपने मन की बात उसने बड़े भैया के सामने रखी तो उन्होंने कहा, "तुम मेरे साथ लखनऊ चलो, वहीं पढ़ना।" वे उसे लखनऊ ले गये थे और वह पढ़ने लगी थी।

मैट्रिक के बाद उसने इंटर भी कर लिया था, बी. ए. की तैयारी कर रही थी, तभी उसे नौकरी मिल गयी। भैया ने लाख कहा, 'बी. ए. कर लो, फिर नौकरी की सोचो,' पर उन पर बोझ बने रहना उसे स्वीकार न हुआ। वह अपना खर्च आप उठाने लगी... उसकी नौकरी पक्की हो गयी, बी. ए. भी उसने कर लिया। तरक्की हो गयी, वेतन बढ़ गया, उसका साहस भी बढ़ा, उसे विश्वास हो गया कि वह एम. ए. भी कर सकेगी। तभी उसे प्रमोशन पर दिल्ली तब्दील कर दिया गया। जिस विभाग में उसने क्लर्क के रूप में काम शुरू किया था उसी में धीरे-धीरे सीढ़ियां चढ़ती वह डायरेक्टर हो गयी।

दिल्ली आकर उसने अलग से मकान लिया था तो उसे बड़ा अच्छा लगा था, संतोष हुआ था कि उसका अपना घर भी है। बड़े जतन से उसने घर को सजाया-संवारा, केशी के पढ़ने को मेज-कुरसी खरीदी, उसे अच्छे स्कूल-कालेज में पढ़ाया, उसे कमीशन मिली, सेकंड लेफ्टिनेंट, लेफ्टिनेंट और फिर कैप्टन। घर में बहू भी आ गयी—प्यार करने और प्यार पानेवाली बहू।

जब तक वह पढ़ती रही, मांजी बाबूजी ने कभी उसकी खोज-खबर नहीं ली। वही पत्र द्वारा संजु के बारे में पूछ लेती थी, कभी उसे बुलवा लेती, वह पढ़ने

लगा था, दादा-दादी उस पर वहुत खर्च करते थे और वह आश्वस्त हो गयी थी। वड़े होने पर वह खुद ही आ जाता। अव वह इंजीनियर है। अच्छी नौकरी पर है। शादी भी हो गयी। यशोदा वस एक वार उसकी शादी पर ससुराल की हवेली में गयी थी। तव भी मांजी ने उसे वह सम्मान नहीं दिया जो उसे मिलना चाहिए था और वह वहू को जड़ाऊ सेट मुंह-दिखायी में दे और वहू-वेटे को दिल्ली आने को कहकर चली आयी थी।

यशोदा के सामने किताव खुली थी और वह विचारों में खोयी उसी तरह लेटी थी।

उसने अपना घर वना लिया था। उसी की वधाई देने मांजी और वावूजी आये थे। संजु का घर भी वस गया है, तुम भी अव जम गयी हो, अच्छी नौकरी है, आदर-मान है, घर भी वना लिया है, अव हमें तुम्हारी चिंता नहीं रही... उसे वावूजी के शब्द याद हो आये, उसे बड़ा गुस्सा आया, जैसे पहले कभी उन्होंने उसकी चिंता की थी। मांजी ने उलाहना दिया था, तुम्हारे दोनों वेटे अपनी-अपनी जगह ठीक से वस गये हैं, अव तो तुम अपने घर आया करो! अपना घर! कभी उसने उसे अपना घर ही समझा था, वहीं रहना चाहा था, इतना निरादर-तिरस्कार सहा था, लेकिन उन्होंने उसे इसका अवसर ही नहीं दिया, उन्होंने ही तो उसे वह घर छोड़ आने को विवश किया था। और अव उसने ऊवड़-खावड़, कंटीले रास्तों को अकेले पारकर यह छोटी-सी दुनिया बसा ली है, इसमें उसके सहयोगी, अड़ोसी-पड़ोसी, उसे सहारा देने-वाले वहन-भाई और उसके हर संघर्ष का साथी केशी है। वह संतुष्ट है। अव उसे कोई इच्छा-आकांक्षा नहीं। जिन रास्तों को वह पीछे छोड़ आयी है, उन पर वह नहीं लौटेगी...यातना-भरी यात्रा वार-वार नहीं करेगी, नहीं करेगी!



—५, खुसरो वाग, इलाहावाद

चिकित्सा

● आयुर्वेदाचार्य वेदव्रत शर्मा

अनियमित जीवन का जहर पेप्टिक अलसर

आज के युग में मनुष्य रात-दिन अधिक-से-अधिक धन कमाने के चक्कर में व्यस्त रहने के कारण अशांत और तनावों से भरा है। न भोजन का समय है, न सोने का, न व्यायाम का। जल्दी काम निबटाने के लिए वाहन का प्रयोग होने से चलने-फिरने का साधारण व्यायाम भी नहीं हो पाता। सबसे अधिक अनियमितता खाने-पीने के मामले में होती है। दिन-रात किसी भी समय, घर में या बाहर, खड़े-बैठे, चलते-फिरते, खाद्याखाद्य, पथ्यापथ्य—जो कुछ मिला, खा-पी लिया। कभी-कभी खट्टे, मीठे, नमकीन, चरपरे, स्वादिष्ट पदार्थ वह अधिक मात्रा में खा जाता है। चाय-काफी की तो कोई गिनती नहीं। थकावट दूर करने के चक्कर में मादक द्रव्यों का भी सेवन करने लगता है। इन सभी का शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इन्हीं से रोग का जन्म होता है।

व्यस्त, क्षुब्ध, अशांत और तनावपूर्ण जीवन व्यतीत करनेवालों को अकसर पेट का शूल हो जाता है, जिसे अंगरेजी में 'पेप्टिक अलसर' कहते हैं। यह दो प्रकार का होता है—अन्नद्रव और परिणाम। अन्नद्रव-शूल आमाशय में व्रण से होता है और परिणाम या पंक्ति-शूल पक्वाशय या ग्रहणाशय में व्रण से। वस्तुतः हैं दोनों एक ही। व्रण के स्थान अलग होने से नाम अलग-अलग हैं। व्रण या क्षत आमाशय में हो तो उससे होनेवाली पीड़ा अन्नद्रव-शूल है। व्रण पक्वाशय में हो तो परिणाम-शूल।

पाचन-यंत्र का रोग

ये व्रण पेप्सिन नामक पाचक-रस से बनते हैं, इसीलिए पेप्टिक अलसर कहे जाते हैं। पेप्टिक अलसर की उत्पत्ति समझने के लिए आमाशय की रचना और उसका कार्य समझना जरूरी है।

आमाशय मशक के आकार की एक थैली है जो पेट में बायीं ओर होती है। लंबाई लगभग एक फुट और चौड़ाई लगभग चार इंच। जो कुछ हम खाते हैं, वह अन्न-नली से इसी थैली में पहुंचता है। आमाशय के दो द्वार होते हैं—प्रवेश और निर्गम। प्रवेश ऊपर हृदय के पास होता है। उसे हृदय-द्वार भी कहते हैं। निर्गम पक्वाशय के पास होता है। उसे पक्वाशय-द्वार कहते हैं। भोजन हृदय-द्वार से आमाशय में पहुंचता है और आमाशय के रस से मिलकर

पचता हुआ पक्वाशय में चला जाता है।

आमाशय-रस (गैस्ट्रिक जूस) चौबीस घंटों में लगभग ढाई किलो वनता है। आमाशय में भोजन पहुंचने के लगभग आधे घंटे बाद यह बनने लगता है और भोजन में मिलकर पाचनक्रिया आरंभ करता है। यह रस आमाशय में एक श्लैष्मिक झिल्ली की ग्रंथियों द्वारा वनाया जाता है। आमाशय रस में चार पदार्थ होते हैं—पेप्सिन, रेनिन, लवणाम्ल (हाइड्रोक्लोरिक एसिड) और श्लेष्म (म्यूकस)। पहले तीन पाचक रस हैं जो भोजन पचाते हैं और चौथा खाये गये पदार्थों की तीक्ष्णता कम करता है; उन्हें मृदु और चिकना वनाता है।

भोजन पकाने का मुख्य कार्य पेप्सिन का है परंतु वह रेनिन और लवणाम्ल की उपस्थिति में ही कार्य करता है, अन्यथा नहीं। भोजन के बाद लवणाम्ल (एसिड) की मात्रा दो घंटे तक वढ़ती है। तीसरे घंटे में घटकर सामान्य हो जाती है। आमाशय में भोजन चार-पांच घंटे में पच जाता है और पक्वाशय में सरकने लगता है। विक्षोभक पदार्थों से श्लेष्म-द्रव अधिक वनता है। जव यह अधिक वनता है तव पाचक-रस कम वनते हैं। पाचक-अग्नि मंद हो जाती है।

अग्नि तेज हो या मंद

पाचन-शक्ति के विचार से प्राणी दो प्रकार के होते हैं—वे जिनकी पाचन-शक्ति या पाचक-अग्नि (पाचक-रस) कम या मंद होती है और वे जिनकी पाचक-अग्नि तीव्र होती है। जिन व्यक्तियों में लवणाम्ल कम और श्लेष्म-द्रव अधिक होता है, उनकी पाचक-अग्नि मंद और जिनमें लवणाम्ल अधिक और श्लेष्म-द्रव कम होता है, उनकी पाचक-अग्नि तीव्र। मंद पाचनवाले व्यक्ति मंदाग्नि और तीव्र पाचनवाले तीक्ष्णाग्नि कहलाते हैं।

एक बुजुर्ग महिला के आमाशय में व्रण



पेप्टिक अलसर (परिणाम-शूल) इन दोनों प्रकार के व्यक्तियों को होता है। भोज्य पदार्थों के अतिरिक्त मनोवेगों का भी पाचक-अग्नि पर प्रभाव पड़ता है। क्रोध, चिंता, व्याकुलता, उत्तेजना आदि से पाचक-अग्नि तीव्र हो जाती है और शोक, भय, दुःखादि कारणों से मंद। प्रसन्न और शांतचित्त व्यक्तियों की पाचक-अग्नि सम होती है, जिससे भोजन ठीक से पचता है तथा भोजन के तीन घंटे वाद आमाशय से पक्वाशय में चला जाता है।

आयुर्वेद में अग्नि चार प्रकार की मानी गयी है : (१) मंद अग्नि—कफ प्रकृतिवालों की जठराग्नि मंद होती है, क्योंकि उनके आमाशय में पाचक-रस कम वनता है; (२) तीक्ष्ण अग्नि—पित्त प्रकृतिवालों की जठराग्नि तीक्ष्ण होती है, क्योंकि उनमें पाचक-रस अधिक वनता है; (३) विषमाग्नि—वात प्रकृतिवालों की जठराग्नि कभी मंद और कभी तीव्र होती है। वायु में कफ और पित्त दोनों के गुण होते हैं। जव कफ प्रधान होता है तव पाचक-रस कम वनता है और अग्नि मंद हो जाती है। पित्त प्रधान होता है, तो पाचक-रस अधिक वनता है और अग्नि तीव्र हो जाती है; (४) समाग्नि—जिनमें वात, पित्त और कफ समुचित मात्रा में होते हैं, उनकी जठराग्नि सम होती है। मंदाग्नि से आमाजीर्णादि और तीक्ष्णाग्नि से अम्लपित्त, अन्नद्रव-शूल, परिणाम-शूल आदि रोग होते हैं।

खाली पेट रहने से भी अलसर

अन्नद्रव-शूल और परिणाम-शूल दोनों के कारण समान होते हैं। पेप्टिक अलसर प्रायः उनको होता है जिनकी अग्नि तीव्र होती है। जन्म से या पितृ-परंपरा से तीक्ष्णाग्नि प्रकृति के व्यक्ति के आमाशय में श्लेष्म-द्रव की मात्रा कम और लवणाम्ल तथा पेप्सिन की मात्रा अधिक उत्पन्न होती है। उसका भोजन जल्दी पच जाता है और आमाशय खाली हो जाता है। खाली आमाशय की श्लैष्मिक-कला पर लवणाम्ल और पेप्सिन का प्रभाव पड़ता है। पचाने के लिए कुछ न होने से ये श्लेष्म-कला को ही पचाने (खाने) लगते हैं। इससे उसमें व्रण हो जाता है। पेप्सिन के प्रभाव के कारण इस व्रण को पेप्टिक अलसर कहते हैं। पेप्टिक अलसर का दूसरा मुख्य कारण तीक्ष्ण और विक्षोभक पदार्थों का अधिक मात्रा में सेवन है। यदि तीक्ष्णाग्नि प्रकृतिवाला व्यक्ति अधिक भोजन विना चवाये जल्दी-जल्दी करे या तीक्ष्ण और गरम गुणवाले खट्टे, चरपरे, तीखे, दृढ़, कठोर पदार्थों तथा अचार, मुरब्बा, सिरका, चटनी, मसाले, चाय, काफी आदि का अधिक सेवन करे तो आमाशय-रस का स्राव अधिक होता है। इससे श्लेष्मकला में सूजन आ जाती है और पेप्सिन के प्रभाव से व्रण हो जाता है।

मद्य, बीड़ी, सिगरेट आदि मादक द्रव्यों के सेवन से चिरस्थायी आमाशय-शोथ होकर व्रण वन जाता है। दांत,

नासिका, कंठ आदि स्थानों से आये विक्षोभक प्रभाव से भी आमाशय में शोथ होकर व्रण बन सकता है।

मानसिक कारणों से अलसर

पेप्टिक अलसर का एक और कारण मानसिक उद्विग्नता है। चिंता, क्रोध, आत्मग्लानि, ईर्ष्या, द्वेष, व्याकुलता आदि के कारण मन क्षुब्ध हो जाता है और रक्त की मात्रा कम हो जाने से श्लेष्मकला दुर्बल हो जाती है। फिर उस पर पाचक रसों के प्रभाव से व्रण हो जाता है।



पक्वाशय का व्रण

आमाशय में भोजन पहुंचने के बाद रस बनना आरंभ होता है। परंतु किसी-किसी व्यक्ति में भोजन के बिना भी रस बनता रहता है। पेट खाली होता है तो यह रस (लवणाम्ल) श्लेष्मकला के संपर्क में आकर व्रण पैदा कर देता है।

यह रोग स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में चार गुना ज्यादा पाया जाता है। पुरुषों में मानसिक अशांति, स्नायविक तनाव और व्याकुलता जल्दी बढ़ती हैं। आमाशय में अम्ल की उत्पत्ति अधिक और श्लेष्मद्रव की कम होती है, जिससे व्रण हो जाता है। इसीलिए यह प्रौढ़ व्यक्तियों में अधिक तथा बच्चों और वृद्धों में कम होता है। ग्रामों में अशांति कम होती है, इसलिए नगरों में यह रोग ज्यादा होता है।

आमाशय छोटा होता है तो भोजन शीघ्र पचकर पक्वाशय में चला जाता है; इससे पक्वाशय में व्रण हो जाता है। परंतु आमाशय बड़ा हो तो भोजन देर तक आमाशय में पड़ा रहता है और व्रण आमाशय में ही बनता है।

आमाशय अधिक भरा होने पर व्रण आमाशय के ऊपरी भाग में होता है और कम भरा होने पर निचले भाग में। व्रण आमाशय में हो तो उदर-मध्य के वायीं ओर और पक्वाशय में हो तो दायीं ओर होता है। व्रण आमाशय में हो तो भोजन के एक-डेढ़ घंटे वाद और पक्वाशय में हो तो दो-तीन घंटे वाद पेट में दर्द होने लगता है। लगभग एक घंटे में शांत हो जाता है।

आमाशय-व्रण में वमन से शांति मिलती है, पक्वाशय-व्रण में कुछ खा लेने पर क्षार के प्रयोग से दोनों प्रकार के शूल बंद हो जाते हैं, क्षोभक और मादक द्रव्यों से वढ़ते हैं।

व्रण आमाशय के निम्नद्वार के समीप और पक्वाशय के ऊपरी भाग में अधिक होते हैं। पक्वाशय में आमाशय की तुलना में चार गुने व्रण पाये जाते हैं।

आमाशय और पक्वाशय का व्रण बहुधा एक-सा ही होता है। वह लगभग ५ से १० मि. मी. तक वड़ा और १० से २० मि. मी. तक गहरा होता है। यह श्लेष्म-कला के नीचे तक पहुंच जाता है। इसके किनारे फूले हुए और लाल रंग के होते हैं तथा तल कठोर।

अन्नद्रव शूल भोजन पच जाने पर, भोजन पचने के समय और अजीर्णावस्था में भी चलता है। पथ्यापथ्य भोजन करने पर या भोजन न करने पर भी शांत नहीं होता। भोजन करने पर कौड़ी-प्रदेश (स्त-नांतर-वक्ष) में पीड़ा होती है। दबाने से पीड़ा मालूम होती है। भोजन के वाद वढ़ जाती है। प्रायः भोजन के एक घंटे वाद आरंभ होती है, परंतु कभी-कभी इससे पहले भी शुरू हो जाती है। व्रण पक्काशय-द्वार के जितना पास होगा, उतनी ही देर से पीड़ा होगी और जितना दूर होगा, उतनी ही जल्दी। जहां व्रण होगा, वहीं पीड़ा होगी। कभी-कभी पीड़ा पीठ में, नाभि-प्रदेश में वाम-वक्ष में, यकृत में और पित्ताशय की जगह भी प्रतीत होती है। कौड़ी-प्रदेश पर सेक से पीड़ा कम हो जाती है। तरल भोजन से भी कम होती है, पर कड़े भोजन से बढ़ जाती है। आनाह, भारीपन, वमन, भ्रम, तृषा, ज्वर, अरुचि, कृशता, बलक्षय और अतिवेदना आदि शूल के दसों उपद्रव होते हैं। इसे त्रिदोषज और घातक माना गया है। जब तक वमन नहीं होता, शांति नहीं मिलती। भोजन के दो-तीन घंटे बाद वमन होता है। वमन के साथ कभी-कभी रक्त भी आ जाता है। आमाशय-व्रण अधिक गहरा होता है तो रक्तवाहिनी फट जाने से भी रक्त आने लगता है। खून की उलटी तीन-चौथाई मामलों में इसी रोग के कारण होती है। रक्त काला, जमा हुआ, भोजन-द्रव और अम्ल-मिश्रित होता है। इससे नाड़ी तीव्र तथा निर्बल हो जाती है। रक्तवमन घातक नहीं होता। यह एक ही बार होता है और लगातार कई दिनों तक नहीं होता। नाड़ी की चाल तेज हो, रक्त का दबाव गिर गया हो और चेहरे का रंग उड़ जाए

तो रक्तवमन चिंताजनक माना जाता है। अधिक रक्तस्राव, वमन या भोजन न करने से इस रोग में दुर्बलता आ जाती है।

परिणाम शूल

परिणाम-शूल भोजन पचने के समय शुरू होता है। कुपित वायु कफ और पित्त से मिलकर यह शूल पैदा करती है। यह पित्तोल्वण होता है। अम्ल-विपाकवाले आहार से बढ़ता और मधुर विपाकवाले आहार से शांत होता है। इसमें पित्त और कफ के मिलने से नाभि, मूत्राशय, कौड़ी-प्रदेश, पीठ, कंधों और पसलियों में भी शूल होता है।

यह शूल वातिक, पैत्तिक, कफज, द्विदोषज और त्रिदोषज होता है। वातिक परिणाम-शूल में अफारा, गुड़गुड़ाहट, मल-मूत्रावरोध, बेचैनी, कंप आदि लक्षण होते हैं और स्निग्ध एवं उष्ण पदार्थों के सेवन से लाभ होता है। पैत्तिक परिणाम-शूल में दाह, तृषा, बेचैनी, अधिक पसीना आदि लक्षण होते हैं और शीतल पदार्थों से राहत मिलती है। कफज परिणामशूल में वमन, मोह, मंद पीड़ा आदि लक्षण होते हैं और कड़वे, चरपरे, उष्ण पदार्थों से लाभ होता है। द्विदोषज और त्रिदोषज परिणाम-शूल में मिश्रित लक्षण होते हैं।

अन्नद्रव-शूल की भांति यह भी अचानक आरंभ होता है। रात को निद्रावस्था में होने लगता है। यह नाभिप्रदेश में दायीं ओर होता है। उस समय कुछ खा लिया जाए तो शांति मिलती है। क्षार या सोडा खाने से या वमन हो जाने से भी शूल कम होता है। आरंभ में अम्लपित्त के लक्षण भी इसमें होते हैं। ये कुछ समय के लिए कम हो जाते हैं और रोगी चैन महसूस करने लगता है, परंतु ये फिर प्रकट हो जाते हैं।

शूल के वेग वर्षा और वसंत में कम तथा ग्रीष्म और शिशिर में अधिक होते हैं। ऋतु-परिवर्तनकाल में इनका जोर होता है। इस रोग में कभी-कभी धमनी फट जाने से मुख या मलद्वार से खून भी जाने लगता है।

पथ्य और अपथ्य

अन्नद्रव-शूल में वमन, विरेचन, वस्ति, घी में तले उड़द के वड़े, घी और गुड़-मिला गेहूं का मांड़, ठंडा दूध और मिश्री-मिला गेहूं का मांड़, चावल का मांड़, घी, दूध और चीनी-मिला जौ के सत्तू का मांड़, गुनगुना दूध और अल्पाहार पथ्य हैं। परिणाम-शूल में मलाई-सहित दही के साथ थोड़ी मात्रा में मटर और जौ के सत्तू का सेवन हितकर है।

व्यायाम, मैथुन, मद्य, अति नमक, तेज मिर्च, द्विदल धान्य, मूंग को छोड़कर सब प्रकार की दालें, शुष्क शाक, कमलकंद, कटहल, पका केला, आलू, विदाही भोजन, विरुद्ध भोजन, रुक्ष, कड़वे, कसैले पदार्थ, शीतल और भारी भोजन, अतिशीतल जल, वेगावरोध, धूप में घूमना, रात में जागना तथा क्रोध, शोक, चिंता आदि तीव्र मनोवेग दोनों प्रकार के शूलों में अपथ्य हैं।

—अहिंसा भवन, शंकर रोड, नयी दिल्ली

'गदर' के प्रकाशन की ६३वीं वार्षिकी के अवसर पर

अंगरेजी राज का कच्चा चिट्ठा

• नवीन खन्ना

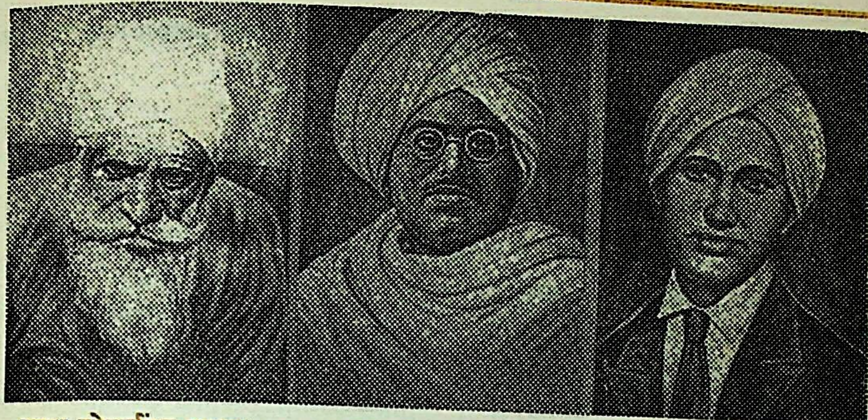
"शेरां वाला रूप धार के, गजिए मैदान विच कडिए बुखार मार बांदरा दी धाड़ नूं ढूंढिए ना लबूं कित्ते गौरंया दा खुराखोज कडांगे मिआन विचों जदों तलवार नूं"
(सिंहोंवाला रूप धार हम गरजें मैदान में निकालें गुब्बार मार बंदरों की बाढ़ को ढूंढ़ने पर पायें नहीं गोरों का कहीं निशान निकालेंगे म्यान से हम जब तलवार को)

एक समय सैनफ्रांसिस्को से प्रकाशित होनेवाले क्रांतिकारी अखबार 'गदर दी गूंज' के पहले अंक में छपी ये पंक्तियां पंजाब के घर-घर में गूंज उठीं थीं।

यह सन १९१४ का जमाना था। एक तरफ 'गदर दी गूंज' पूरे पंजाब पर छायी हुई थी तो दूसरी तरफ 'गदर' अखबार भारत से बाहर बसे प्रवासी भारतीयों में चेतना प्रस्फुटित कर रहा था। अखबार के लिए 'गदर' नाम का सुझाव लाला हरदयाल ने दिया था। उनका तर्क था—"अंगरेज सन १८५७ के स्वतंत्रता-संग्राम को 'गदर' कहते हैं, इसलिए देशी जबानों में प्रचार के लिए हम जो परचा निकालें उसका नाम भी 'गदर' होना चाहिए।"

बाद में इसी 'गदर' अखबार के कारण 'हिंदुस्तानी एसोसिएशन ऑव पैसिफिक कोस्ट' का नाम 'गदरी पार्टी' पड़ गया। इस एसोसिएशन की स्थापना अप्रैल सन १९१३ में अस्टोरिया (अमरीका) की एक आरा मिल में भारतीयों की एक सभा में की गयी थी, जिसमें अमरीका के अन्य स्थानों में बसे प्रवासी भारतीयों के प्रतिनिधि भी सम्मिलित थे।

सभा में लाला हरदयाल तथा श्री रामचंद ने ओजस्वी भाषण दिये और प्रस्ताव रखा कि सभा का ध्येय अंगरेजों को भारत से बलपूर्वक खदेड़ना होना चाहिए। वहीं फैसला किया गया कि यह अखबार भारत तथा अन्य देशों में मुफ्त बांटा जाए। अखबार के प्रेस का नाम वारीन्द्रकुमार घोष के दल के मुखपत्र के नाम पर 'युगांतर-आश्रम' स्वीकार किया गया। सभा-स्थल पर ही तीन हजार डालर इकट्ठा कर अखबार की प्रबंध-कमेटी के नाम जमा करवा दिये गये। अखबार निकालने का भार भी



बाबा सोहनसिंह भकना   लाला हरदयाल   करतारसिंह सराबा

लाला हरदयाल को सौंपा गया, लेकिन उनका स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण 'गदर' अपनी स्थापना के पांच मास बाद भी प्रकाशित न हो पाया। अंत में १८-वर्षीय करतारसिंह सराबा के रूप में लालाजी को एक कर्मठ सहयोगी मिला। करतारसिंह उच्च शिक्षा के लिए अमरीका आया था। 'गदर' अखबार के संबंध में सुनकर वह पूरे जोर-शोर से उसके प्रकाशन में जुट गया। उसने घर से भेजे गये दो सौ डालर भी इसी कार्य के लिए दे दिये।

उर्दू में प्रथम अंक

सन् १९१३ में नवंबर के प्रथम सप्ताह में 'गदर' का प्रथम अंक प्रकाशित हुआ। यह अंक उर्दू में साइक्लोस्टाइल करके छापा गया। इस अंक के संपादक लाला हरदयाल थे। करतारसिंह सराबा तथा रघुवरदयाल गुप्ता ने इस कार्य में उन्हें सहयोग दिया था। बाद में पं. जगतराम, पृथ्वीसिंह, महबूब अली और इनायत अली भी संपादक-मंडल में सम्मिलित कर लिये गये।

शुरू-शुरू में 'गदर' केवल उर्दू में निकाला जाता था। सन १९१४ से यह पंजाबी में भी छपने लगा। बढ़ती हुई मांग की पूर्ति के लिए सैनफ्रांसिस्को में एक किराये के मकान में प्रेस खोला गया और उर्दू तथा पंजाबी संस्करणों के साथ-साथ 'गदर' के हिंदी, गुजराती, बंगाली, पश्तो और नेपाली भाषाओं में भी विशेष संस्करण प्रकाशित होने लगे। कहा जाता है कि सन १९१६ तक अखबार की साप्ताहिक प्रसार-संख्या दस लाख हो गयी थी।

'गदर' की रूपरेखा

'गदर' आठ पृष्ठों का अखबार होता था। मुखपृष्ठ पर मोटे अक्षरों में अखबार की संपूर्ण चौड़ाई को घेरकर 'ग द र' लिखा होता। ऊपर के एक कोने में 'वंदे' तथा दूसरे कोने में 'मातरम्' लिखा

गदरी रिसाला के कुछ अंश

"अंगरेजी राज की बुराइयां एसी स्पष्ट हैं कि नाम लेते ही भले लोगों का रक्त उबलने लगता है। परन्तू हमारे हिन्दी भाइयों को इस ग्वर्नमन्ट सर्कार के सारे फरेब और कारस्तायां मालुमया नहीं है।"

१८८१ से १९०९ के बीच जमीन का लगान ड्योढ़ा हो गया है। इसी तरह अंगरेज सरकार प्रजा को रुपयों से नहरें बनाती है; और फिर इन्हीं नहरों के लिए किसानों से महसूल वसूल करती है। इस प्रकार प्रजा को एक बार लूटकर फिर दुबारा लूटने का अवसर मिल जाता है।

नमक-कानून की आलोचना

अंगरेज सरकार द्वारा लगाये गये नमक कानून की कड़ी आलोचना करते हुए रिसाले में कहा गया है, "लालच और लुच्चेपन का अन्त है इस सै वढ़ कर जूल्म नहीं हो सकता और न ही किसी ग्वर्नमन्ट ने आज तक किया है।"

". . . एसे टैक्स किसी निरदयि राज्य में नहीं सुने गये। निमक के टैक्स से गरीबों और जानवरों को जरूरत अनुसार निमक खाने को भी नहीं मिलता।" . . . "अंगरेजी राज में प्रजा मुद्दत सै यथा जरुरत निमक भी नहीं खा सकती।"

अर्थनीति की समीक्षा

रिसाले में सरकार की अर्थनीति की भी समीक्षा की गयी है और कहा गया कि 'अंगरेजी सर्कार एसी लालची और बद दियानत है कि अंगरेजों को मालामाल

रहता। इसके नीचे एक पंक्ति में यह दोहा होता—

'जे चित परेम खेलण दा चाउ।
सिर धर तली गली मेरी आउ।'

इस दोहे के कल्पना-चित्र में दर्शाया गया था कि वेदी के सम्मुख स्वतंत्रता के प्रतीक-स्वरूप ज्योति प्रज्ज्वलित है और एक व्यक्ति, जो इस ज्योति से प्रेम प्रकट करना चाह रहा है, थाली में अपना ही सिर काटकर ज्योति को अर्पित कर रहा है।

'अंगरेजी राज का कच्चा चिठ्ठा'

गदर के पहले पृष्ठ पर हमेशा 'अंगरेजी राज का कच्चा चिट्ठा' शीर्षक के नीचे हिंदुस्तान में अंगरेजों की लूट-खसोट, उनकी आर्थिक व राजनीतिक चालों का पर्दाफाश किया जाता था। एक पृष्ठ पर स्वर्गीय वीर सावरकर के 'सन १८५७ का स्वतंत्रता-संग्राम' इतिहास से सामग्री उद्धृत की जाती थी। पहले पृष्ठ पर नियमित रूप से कुछ घोषणाएं छापी जाती थीं। इनमें बारहवीं घोषणा थी कि 'पिछले सन १८५७ वाले गदर को ५६ वर्ष हो गये हैं'। अंतिम घोषणा होती थी कि 'अब दूसरे गदर की बहुत जल्द जरूरत है।'

करके भी हर वर्ष खजाने मैं वचत रहती है . . . ग्वर्नमिन्ट के खजाने मैं वचत होने का यह ही है कि प्रजा सै इतना धन लूट लिया कि वद हजमी हो गैई, सारा लूट का माल पचा भी ना सकी ।।"

". . . अव गवर्नमेन्ट और मजदूरों को लूटने में हद से आगे वढ़ गई है। जव सांप वहुत मोटा चूहा खा जाता है तो शीघ्र ही मृत्यु पाता है। अव उस गवर्नमेंट का भी अन्त आ गया।"

रोजाना आमदनी ५ पैसा

रिसाले में वतलाया गया है कि "हिन्दोस्तान्यों की असल आमदनी ५पैसे रोजाना है अर्थत ३० रुपये वर्ष के लगभग, यह अन्दाज अंगरेजी सर्कार के जंनाइ लार्ड कर्जन ने ही लगाया था और अंगरेजी लेखक विल्यम डिगवी नै यह सिद्ध कर दिया है कि हिन्दोस्तान्यो की सालाना आमदनी ३० रुपये की जगह केवल १५ रुपये ही है।' अमरीका मैं एक झाड़ू देनेवाले की ढाई या तीन सौ रुपये मासिक है 'हिन्दोस्तान में यह तनख्वाह डिपटी कलक्टरों को भी नहीं मिलती। दुन्यां मैं हिन्दोस्तान जैसा कोई दरिद्र देश नहीं है।"

क्रांति का आह्वान

देश की जनता से क्रांति के लिए तत्पर हो जाने का आह्वान करते हुए रिसाले में कहा गया है कि "शीघ्र उठ खड़े हो"। तलवार पकड़ो, जिंदा शहीदों का रूप धारण करो, पाजियों को दूर करो और हिन्दोस्तान को आजाद करावो ताकि सुख से रह सको।"

'गदर' के पहले अंक में ही 'गदर' के लक्ष्यों को स्पष्ट कर दिया गया था। उसमें लिखा गया था कि "सन १९१३ के नवंबर के पहले हफ्ते में हिंदुस्तान की तारीख में एक नये युग की शुरूआत होती है, क्योंकि आज विदेश से, अपनी भारत की भाषा में अंगरेजी राज के खिलाफ जंग शुरू होता है। हमारे परचे का नाम क्या है? —'गदर'। हमारा काम क्या है—'गदर'। यह गदर कहां होगा? —हिंदुस्तान में। कब होगा?—कुछ सालों में। क्यों होगा?—क्योंकि अब हिंदुस्तान की जनता अंगरेजी राज के जुल्मोसितम को बर्दाश्त करते-करते ऊब चुकी है और अव वह आगे इसे बरदाश्त नहीं कर सकती।"

'गदर' के एक अंक में छपा लाला हरदयाल का लेख 'जब मुल्क गुलाम होते हैं' बहुत लोकप्रिय हुआ और बार-बार छापा गया।

'गदर' के हिंदी संस्करण की सामग्री श्री रघुवरदयाल गुप्ता द्वारा तैयार की जाती थी। चार-पांच परचों का सार करके हिंदी में छाप दिया जाता। श्री रघुवरदयाल उर्दू में भी लिखते थे। गुरुमुखी में छपनेवाले संस्करण की सामग्री

तैयार करने में भाई करतारसिंह सरावा का अधिकतम सहयोग रहता। गुजराती संस्करण का काम श्री खेमचन्द दाम द्वारा किया जाता। यों मूल विषय लाला हर-दयाल द्वारा ही लिखा जाता। सामग्री का चयन भी वही करते थे।

'गदर' पर प्रतिबंध

भारत में 'गदर' के प्रवेश और वितरण को रोकने के लिए ब्रिटिश सरकार ने कई उपाय अपनाये। हांगकांग, सिंगापुर, कलकत्ता, मद्रास, बंबई, रंगून इत्यादि बंदरगाहों पर अमरीका से आनेवाली डाक पर समुद्री महसूल कानून लागू कर दिया गया, जिससे पुलिस को डाक खोलने, जांच-पड़ताल करने और संदिग्ध वस्तु को जब्त करने का अधिकार मिल गया। इस पर 'गदर' के प्रकाशकों ने भारत को 'गदर' तथा अन्य विप्लवी साहित्य भेजने का रास्ता बदल दिया। वे सारी सामग्री पहले कनाडा भेजते, जो वहां से अलग-अलग स्थानों को रवाना कर दी जाती। जब ब्रिटिश सरकार को इसकी भी खबर लग गयी तब मौलवी बरकतुल्ला नामक एक देशभक्त इसे अपने असबाब के तौर पर पेरिस में मैडम कामा के पास भेज देते और यह वहां से अन्य स्थानों को भेजा जाता।

अखबार के वितरण के इस प्रबंध में गदरी पार्टी के हजारों डालर खर्च होते थे, लेकिन वह अंत तक वितरण की इस लड़ाई को लड़ती रही। इस कार्य के लिए प्रवासी भारतीयों में इतना जोश था कि वे चंदा देते समय अपनी बैंक पासबुक ही चंदे में जमा करवा देते थे।

ब्रिटिश सरकार द्वारा अमरीकी सरकार पर बार-बार दबाव डालने के कारण लालाजी के खिलाफ एक मुकदमा दायर किया गया व अमरीकी सरकार की आलोचना का आरोप लगाया गया।

इस भय से कि कहीं अमरीकी सरकार लालाजी को पकड़कर अंगरेजों को न सौंप दे, वहां की सभा ने यह निर्णय किया कि लालाजी स्वयं चोरी-छिपे अमरीका से निकल जाएं।

मार्च, सन १९१४ में लाला हर-दयाल के अमरीका छोड़ने के बाद 'गदर' का दायित्व एक बोर्ड को सौंप दिया गया, जिसके सदस्य थे—सर्वश्री रामचन्द्र पेशावरी, मोहनलाल, पं. जगतराम, करतार सिंह सराबा और हरनामसिंह टुंडीलाट। लेखादि लिखने का दायित्व श्री रामचन्द्र पेशावरी ने संभाला और बाबा सोहनसिंह मकना पार्टी के सर्वेसर्वा हुए।

श्री बरकतुल्ला और श्री भगवान-सिंह के अमरीका पहुंचने पर 'गदर' का प्रबंध उन्हें सौंप दिया गया अगस्त १९४७ तक उन्हीं के हाथ में था।

प्रवासी भारतीयों में देशप्रेम जगाने और क्रांति की चिनगारी सुलगाने में 'गदर' ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी।

—ई/१२८, कालकाजी,
नयी दिल्ली-११००१९



हालीवुड में
ऐसा सितारा नहीं होगा

सब सो चुके थे। अकेली वही जाग रही थी, सात साल की मासूम बच्ची। उसे सामने जूठे बरतनों का ढेर लगा था। उसे हरारत-सी महसूस हो रही थी। थकान से शरीर चूर हो गया था और हाथ बेहद दुख रहे थे, लेकिन वह काम छोड़कर उठ नहीं सकती थी। अनाथालय की मेट्रन का कठोर चेहरा उसकी आखों के आगे लगातार तैर रहा था। वह सहमकर रह जाती। एक भी बरतन जूठा रह गया तो उस पर गालियों

पश्चिम की फिल्मों ने ग्रेटा गार्बो से सोफिया लारेन तक महान अभिनेत्रियां दी हैं तो दूसरी ओर कितने ही सेक्स-बम। लेकिन दोनों रूपों में सबसे पहला नाम मर्लिन मनरो का ही आता है।

मर्लिन का शरीर आदर्श नारी-देह का पर्याय बना और उसका लिबास दशकों तक चलनेवाला फैशन। दुनिया के समूचे फिल्मी इतिहास में उसके अलावा कोई ऐसा नहीं जिसे 'सुपर क्रेज-स्टार' कहा जा सके। इसी बेमिसाल सितारे की रोमांचकारी दास्तान प्रस्तुत कर रहे हैं —शारदा पाठक।

की बौछार होगी। थप्पड़ भी पड़ सकते हैं। हो सकता है कि उसे निकाल बाहर किया जाए। तब वह कहां जाएगी ? और वे पांच सेंट तो निश्चित रूप से नहीं मिलेंगे जो उसे महीने भर काम के बदले में मिलते हैं। इनमें से चार सेंट चर्च को दान दे देना पड़ते हैं। बाकी बचे एक सेंट का वह रिबन खरीदती है। मेहनत से धोयी साफ-सुथरी फ्राक पहनकर बालों में नया रिबन बांधती है और आईने के सामने खड़ी होती है तो कितनी सुंदर लगती है! नये रिबन की कल्पना से उसकी हिम्मत लौट आयी। उसके दुखते हाथ बरतन मलने में तेजी से जुट गये।

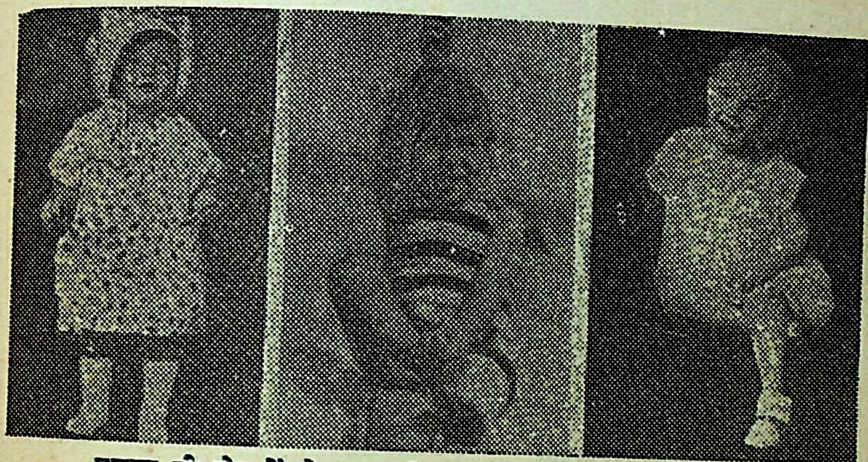
किसी परीकथा की अभागी राजकुमारी की कहानी-जैसी लगनेवाली यह दास्तान दरअसल एक हकीकत है। अंगरेजी के मूर्धन्य साहित्यकार चार्ल्स डिकेंस ने 'ऑलिवर ट्विस्ट' में दुःख और अभावों से घिरे बचपन की दर्दनाक तसवीर खींची है। लेकिन अनाथालय में पल रही उस बच्ची नोरमा जीन बेकर की तुलना में वह कहीं नहीं ठहरती।

अकेलापन और दर्द तो नोरमा शायद अपने भाग्य में ही लिखाकर लायी थी। सन १९२६ की १ जून को लास एंजेल्स के एक अस्पताल में उसका जन्म हुआ। उसके जन्म के तुरंत बाद मां ग्लेडीज बेकर गंभीर रूप से बीमार हो गयी। पिता एडवर्ड मोरटेंसेन को नोरमा ने कभी नहीं देखा। उनकी विवाहित पत्नी और घरबार अलग था। दुर्दिनों की मारी ग्लेडीज बेकर ने

पालने के लिए बच्ची एक परिचित को सौंप दी, पर वह भी उसे ज्यादा दिन न रख सका। तीन साल की होते न होते नोरमा अनाथालय में पहुंचा दी गयी। इसी बीच मां चल बसी। नोरमा का दुनिया में अपना कोई न रह गया।

अनाथालय में कुछ वर्ष रह चुकने पर वह जूठे बरतन साफ करना और फर्श पर पोंछा लगाना सीख गयी। अब वह आठ-नौ साल की हो रही थी। अनाथालयवालों परिवारों में रह चुकी थी।

इन परिवारों के साथ रहते हुए नोरमा को तरह-तरह के अनुभव हुए। वह दस साल की अबोध बालिका थी। जिस परिवार के साथ उस समय रह रही थी, उसके एक पुरुष ने एक दिन उसे अपनी शारीरिक वासना का शिकार बना डाला। अपने साथ हुए अनाचार की बात नोरमा ने जिसे भी बतायी, उसी ने विश्वास करने से इनकार कर दिया। बेचारी नोरमा कर



बचपन की गोद में दो, चार और पांच साल की गुड़िया : मर्लिन

को लगा कि वह इतनी बड़ी हो गयी है कि काम करके पेट पाल सके। उसे एक ऐसे परिवार में रख दिया गया जो बरतन धोने और झाड़ू-पोंछे के बदले रोटी कपड़ा दे सके। यह सिलसिला लगातार सात-आठ साल चलता रहा। इस दौर में परिवार बदलते रहे, पर काम नहीं बदला। पंद्रह की होने तक वह इस तरह के ग्यारह भी क्या सकती थी ? उसके अपने दिमाग में यह घटना आजीवन गहरी गड़ी रही। इसके दुष्प्रभाव से वह कभी मुक्त न हो पायी।

अपने सुंदर रूप का एहसास तो उसे बचपन से था ही, तनिक होश संभालते ही उसकी आंखों में नये सपने बसने लगे। वह कोई बारह साल की रही होगी, जब

उसने सोचा कि वह अभिनेत्री बनेगी, पर घर की मालकिन पुराने विचारों की थी। वह नोरमा को ताकीद करती कि नाचना-गाना और हंसना पाप है। वह यह जताने से भी नहीं चूकती कि उसकी निगरानी न होने पर वह नरक में जा गिरेगी। और नोरमा ईंधन के कमरे या मवेशियों के बाड़े में चली जाती। वहां सूनेपन में नाचती-गाती और अभिनेत्री बनने के सपने में खोयी रहती। मालकिन पकड़ लेती तो खासी मरम्मत हो जाती।

प्यार की तलाश

दुर्भाग्य के साये में चलते ये दिन, महीनों और वर्षों में ढलकर बीतते जा रहे थे। दर-ब-दर भटकती और कदम-कदम पर ठोकरें खाती नोरमा का बचपन पीछे छूट गया था। वह यौवन की दहलीज पर खड़ी थी। इस परिवार से उस परिवार में फेंके जाने की खानाबदोशी से वह तंग आ चुकी थी। उसका यौवन-सुलभ मन सहारे और सुरक्षा की तलाश करने लगा था। गुदगुदी-भरे सपने लेकर आया उसका सोलहवां साल चल ही रहा था कि उसने प्यार के कदमों की आहट सुनी।

उन दिनों वह जिस परिवार के साथ थी, उसी के पड़ोस में रहता था डूघर्टी परिवार। इस परिवार का युवक जेम्स डूघर्टी था तो एक मामूली व्यक्ति, पर नोरमा को पसंद आ गया। १९ जून, १९४२ को दोनों का विवाह हो गया। दूसरों के घर रहकर दिन काटनेवाली नोरमा का अपना घर बस गया। जेम्स ने वॉन नुइज में एक छोटा-सा मकान ले लिया और दोनों उसमें रहने लगे।

दोनों को साथ रहते साल भर हुआ था कि लामबंदी कानून के तहत डूघर्टी को सेना में जाना पड़ा। नोरमा फिर अकेली रह गयी। दांपत्य-जीवन के रूप में आ पड़ी राख की परत हटी तो नोरमा का अभिनेत्री बनने का अरमान फिर सुलगने लगा। उसे बार-बार याद आने लगा कि जेम्स से उसकी कहा-सुनी सुहागरात से ही शुरू हो गयी थी। उसकी लचकती चाल पर जेम्स ने आपत्ति की थी। कहा था कि विवाह के समय वह जिस तरह बल खाती चल रही थी, उससे सारे पुरुषों का ध्यान उसकी ओर खिंचा था और वे उसे निर्लज्ज नजरों से घूरने लगे थे। नोरमा को लगा कि जेम्स के साथ उसका गुजारा नहीं हो सकेगा। इसके पहले कि जेम्स को सेना से छुटकारा मिलता, वही जेम्स से छुटकारा पा लेने का निश्चय कर चुकी थी। २ अक्तूबर, १९४६ को उसे जेम्स से तलाक मिल गया। उधर जेम्स सेना से लौटकर पुलिस में भरती हो गया और दूसरा विवाह करके गृहस्थ-जीवन में रम गया।

जेम्स से अलग होने पर नोरमा के सामने एक बार फिर जीवनयापन की समस्या आयी। अब वह पूरी तरह बालिग हो चुकी थी। अपना रास्ता चुनने की समझ उसे आ गयी थी। तुरंत अभिनेत्री

बन सकने का कोई तरीका समझ नहीं आया तो उसने तय किया कि जिंदगी की गाड़ी खींचने के लिए नौकरी ही कर ले। उसे 'रेडियो प्लेन कंपनी' में नौकरी मिली। काम था हवाईजहाजों के लिए भेजे जानेवाले पैराशूटों की जांच करना। काम उसकी दिलचस्पी का नहीं था, पर कोई चारा भी तो न था।

पैराशूटों की जांच करते नोरमा को कुछ ही महीने हुए थे कि उसे पता चला कि उसकी कंपनी किसी मॉडल की तलाश में है। 'रेडियो प्लेन कंपनी' विदेशी मोरचों पर लड़ रहे जवानों के मनोरंजन के लिए कुछ चित्र भेजना चाहती थी। नोरमा ने कोशिश की और उन चित्रों के लिए उसे मॉडल वना लिया गया। नोरमा खूबसूरत थी ही, छायाकार ने भी अपने मंजे हुए हाथों का कमाल दिखाया। चित्र आशा से कहीं अच्छे आये। नोरमा के मन में नयी उम्मीद जाग उठी। अपने सलोने रूप के जादू का एहसास तो उसे पहले से था ही, अब प्रबल आत्मविश्वास भी पैदा हो गया। उसे लगा कि वह मॉडल का पेशा अपना ले तो सफलता के पायदानों पर चढ़ सकती है। उसने 'रेडियो प्लेन कंपनी' की नौकरी छोड़ दी और हालीवुड पहुंचकर मॉडलिंग का काम शुरू कर दिया।

किसी भी धंधे में प्रवेश करनेवाले को पहले कठिनाइयों का सामना करना ही पड़ता है। नोरमा के साथ भी यही हुआ। उसने ब्लू बुक मॉडल्स स्कूल में दाखिला



सफलता के पायदानों की ओर

लिया और उन लोगों के सुझाव पर अपने बाल तांबिया रंग में रंगाकर पत्रिकाओं में छपनेवाले चित्रों के लिए मॉडल का काम करने लगी। वह स्टूडियो क्लब में रहती थी। इस जगह कितनी ही ऐसी लड़कियां हालीवुड के अपने शुरू के दिनों में रही हैं जो आगे चलकर फिल्मी दुनिया का चमकता सितारा बनीं। इस दौर में भी नोरमा ने कम परेशानियां नहीं उठायीं। ऐसा भी समय आया जब कई

सप्ताह तक उसे कोई काम नहीं मिला और मकान का किराया उस पर चढ़ गया। मुफलिसी और मायूसी का पूरा महीना वीत जाने पर आखिर एक छायाकार आया, जो किसी कैलेंडर के लिए उसकी तसवीर चाहता था। नोरमा को इस तसवीर के लिए उस समय तो कुल पचास डालर मिले, पर वास्तव में उसकी किस्मत का दरवाजा इसी तसवीर से खुला। कैलेंडर छपकर लोगों के हाथों में पहुंचा नहीं कि पुरुषों की पत्रिकाओं के लिए उसकी तसवीरों की लगातार मांग होने लगी।

फिल्मी दुनिया में सितारों का उदय कभी-कभी बड़े अजीबोगरीब ढंग से होता है। ऐसा ही संयोग नोरमा के जीवन में भी आया। एक पत्रिका के मुखपृष्ठ पर उसकी तसवीर छपी। उस पर अरबपति हावर्ड ह्यूजेस और हालीवुड की एक बड़ी फिल्म-निर्माण-संस्था ट्वेंटियथ सेंचुरी फॉक्स के मालिक बेन लियान की नजरें पड़ीं। दोनों के टेलीफोन नोरमा को एक ही दिन मिले। बेन लियान का अपना स्टूडियो था, इसलिए नोरमा ने उन्हें तरजीह दी। लियान ने उसे पचहत्तर डालर प्रति-सप्ताह के अनुबंध पर रख लिया। लियान ने उसे एक नया नाम दिया—मर्लिन मनरो। उस समय लियान ने सोचा भी न होगा कि वे एक ऐसे सितारे को जन्म दे रहे हैं जिसकी मिसाल समूची दुनिया के फिल्मी इतिहास में और न मिल सकेगी। मर्लिन को पहली भूमिका मिली 'स्कडा हू, स्कडा हे' में। पूरी भूमिका ले-देकर बस कुल एक शब्द 'हलो' कहने भर की थी।

पत्रिका के मुखपृष्ठ की सीढ़ी चढ़कर रुपहले परदे तक पहुंची मर्लिन अच्छी तरह जानती थी कि प्रचार का कितना असर होता है। इसलिए उसने शुरू से ही इस ओर विशेष ध्यान दिया। उसने नगर के हर पत्रकार और छायाकार से परिचय बढ़ा लिया। वैसे वह स्वभाव से शर्मीली थी और इस कारण हालीवुड में उसकी जान-पहचान थोड़े-से लोगों से ही रही। लोगों को उसके बारे में जानकारी पत्र-पत्रिकाओं से ही मिलती। मर्लिन ने अपना नाम छपने का कोई भी मौका हाथ से न जाने दिया। पत्रकारों से उसकी दिलचस्प मुलाकातें और शोख वक्तव्य हर तरफ चर्चा का विषय बन गये। इस प्रचार ने उसे तभी सितारा बना दिया था जबकि उसकी एक भी फिल्म प्रदर्शित नहीं हुई थी।

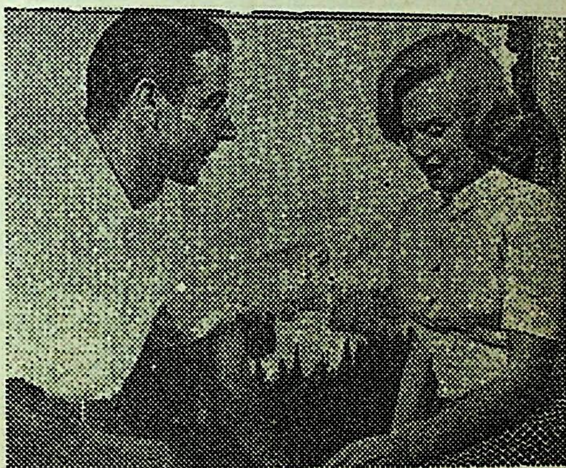
एक बार ट्वेंटियथ सेंचुरी फॉक्स ने फिल्म-प्रदर्शकों को एक भोज दिया। मर्लिन वहां पहुंची तो सब प्रदर्शकों की निगाहें उसी पर जमकर रह गयीं। वे भूल गये कि वहां और भी सितारे मौजूद हैं। सभी प्रदर्शक मनरो से इस तरह मिल रहे थे कि जैसे और सब सितारे छोटे-मोटे कलाकार भर हों। जब वे अपने नगरों में लौटे तो इस बात के लिए बहुत उत्सुक थे कि किस तरह वे फिल्में अपने सिनेमाघरों में जल्दी प्रदर्शित करें जिनमें मर्लिन मनरो की भूमिका हो।

प्रचार-तंत्र के सहारे आगे आते समय यह बुनियादी तथ्य मनरो की आंखों से कभी ओझल नहीं हुआ कि प्रचार के बल पर वह ऊंची चाहे जितनी उठ जाए, असली सफलता तो मेहनत से ही मिल सकती है।

कोलंबिया स्टूडियो में काम करते वक्त उसकी मुलाकात नताशा लिटेस से हुई। नताशा अपने जमाने की मानी हुई अभिनेत्री रह चुकी थी और अब अभिनय की शिक्षा देने का काम करती थी। हालीवुड के कितने ही चमकते सितारों ने ये कलाएं उससे सीखी थीं। मर्लिन के पास नताशा की फीस देने के लिए पैसे नहीं थे, फिर भी वह शिक्षा उसी से लेना चाहती थी। नताशा ने भी मर्लिन की प्रतिभा और उसमें छिपी संभावनाएं भांप ली थीं। दोनों के बीच पहले तो गुरु-शिष्या का संबंध कायम हुआ, फिर जल्दी ही दोस्ती हो गयी। स्टूडियो से छूटते ही मर्लिन भागकर नताशा के घर पहुंचती। वहां उससे अभिनय सीखती। भोजन के बाद वह बरतन धोती और नताशा की बच्ची बारबरा को संभालती।

साथ ही उसने खूब पढ़ना भी चालू कर दिया। व्यक्तित्व के विकास, मनोविज्ञान, नाटक और कविता के अतिरिक्त अपने प्रिय व्यक्तित्व अब्राहम लिंकन के संबंध में जो भी पुस्तक उसे हाथ लगती, उसे पूरा पढ़कर ही दम लेती।

मर्लिन को अब फिल्मों में छोटी-छोटी भूमिकाएं मिलने लगी थीं। 'लेडीज ऑव दि कोरस' और 'ए टिकेट टू टोमाहॉक' जैसी फिल्मों में नाममात्र के काम के बाद उसे एक बड़ी भूमिका मिली आर्थर हार्नब्लोअर की फिल्म 'दि एसफाल्ट जंगल' में। उस समय की हालीवुड की सबसे ज्यादा लोकप्रिय अभिनेत्री लाना टर्नर को भी उसने अभिनय में पीछे छोड़ दिया था। यह भूमिका मर्लिन के लिए आगे बड़ी सहायक सिद्ध हुई। प्रसिद्ध निर्माता जो मैंकीविज अपनी फिल्म 'आल अबाउट ईव' के लिए एक ऐसी अभिनेत्री



जो के साथ : खेल और अभिनय

की तलाश में थे जिसे मिस कैस्वेल की भूमिका दी जा सके। मिस कैस्वेल इस फिल्म में एक गूंगी लड़की थी। इस भूमिका के लिए मर्लिन का चयन इसलिए भी किया गया, क्योंकि वह स्वाभाविक तौर पर गूंगी दीख पड़ती थी। फिल्म बनी और उसने अकादमी-पुरस्कार भी जीता। इस फिल्म में कई बड़े सितारे थे, पर उनके बीच से उभरकर आगे आने में मर्लिन को देर नहीं लगी।

कुछ ही समय बाद मर्लिन को 'जेंटलमेन प्रिफर ब्लांड्स' में नायिका बनने का मौका मिला। नायिका के रूप में काम करने का उसका यह पहला अनुबंध था। उसकी खुशी का ठिकाना न था। उसने तुरंत जाकर नया पलंग और बिस्तर खरीदा। बढ़िया आरामदेह बिस्तर की वह शुरू से ही शौकीन थी। शादी से पहले जब वह परिवारों के साथ रहकर दिन काट रही थी, तभी उसने बड़ी कठिनाई से कुछ पैसे जोड़कर अपने लिए एक पलंग और बिस्तर खरीदा था। इस पलंग की ऊंचाई बहुत कम थी। उन दिनों उसे बुरे सपने आते थे और नींद में ही कसमसाते हुए वह अकसर नीचे गिर जाती थी। नया बिस्तर खरीदने लायक पैसे इस बीच कभी नहीं जुट पाये थे।

फिल्मों में काम मिलना शुरू हो जाने पर भी आर्थिक कठिनाइयों का अंत नहीं हुआ था। आर्थिक संकट से बचने के लिए एक बार तो उसे प्रसिद्ध छायाकार टामकेली को बुलाकर झीने और पारदर्शी वस्त्रों में अपने चित्र खिंचवाने पड़े थे। टाम ने उसे पचास डालर दिये और वे चित्र कैलेंडर छापनेवाली कंपनियों को नौ सौ डालर में बेचे। उन कंपनियों ने इन चित्रों से लाखों डालर कमाये। किंतु, मनरो को मॉडलिंग के काम से छुटकारा नहीं मिल सका। अपनी गुजर के लिए उसे तंग और पारदर्शी वस्त्रों में कितने ही चित्र देने पड़े, जो 'नाट सो डंब डोरा' शृंखला में प्रकाशित हुए।

शोहरत की चमक

इतने लंबे संघर्ष के बाद अब उसके पैर जमने लगे थे। उसे अपनी सफलता का यकीन हो गया था। बेचैनी अब उतनी नहीं रही थी, इसलिए नींद में नीचे गिर पड़ना बंद हो गया था। मर्लिन ने इस बार जो पलंग खरीदा, वह सामान्य ऊंचाई का था।

'जेंटलमेन प्रिफर ब्लांड्स' पूरी होकर प्रदर्शित हुई। फिल्म को अभूतपूर्व सफलता मिली। मर्लिन मनरो का तहलका मच गया। कितने ही बड़े निर्माता मर्लिन को अपनी फिल्म में लेने के लिए उसके चक्कर काटने लगे थे।

थोड़े दिनों में कुछ और भी फिल्में प्रदर्शित हुईं, जिनमें नायिका की भूमिका मनरो ने निबाही थी। इन सभी को आश्चर्यजनक सफलता मिली। सिनेमाघरों की आय के नये कीर्तिमान बनने लगे, और

इन फिल्मों की भारी कामयाबी का राज था उनमें मर्लिन की जबरदस्त भूमिका। पंद्रह साल पहले रिबन खरीदने को मात्र एक सेंट पाने के लिए महीने भर समूचे अनाथालय के जूठे बरतन धोनेवाली नोरमा अब मर्लिन मनरो के रूप में हालीवुड के सबसे ज्यादा चमकनेवाले सितारे की बुलंदी पर पहुंच चुकी थी। दुनिया भर के फिल्म-प्रेमी उसके दीवाने हो रहे थे। 'एसफाल्ट जंगल' में जिसका नाम देने की जरूरत नहीं समझी गयी थी, अब वही नाम किसी भी फिल्म की सफलता के लिए सबसे बड़ी गारंटी बनता जा रहा था। दुनिया के बड़े-से-बड़े धनकुबेर उसके एक इशारे पर लाखों डालर का चेक उसके नाम काटने के लिए आतुर थे। दुनिया के सबसे बड़े फिल्म-निर्माता इस कोशिश में लगे रहते कि मर्लिन मनरो उनकी फिल्म में काम करे। प्रत्यक्ष, परदे पर या पत्र-पत्रिकाओं में, उसकी एक झलक देखने और उसके बारे में अधिक-से-अधिक जानने के लिए हर आदमी उत्सुक था। ऐसा लगता था कि 'मनरो-युग' ही शुरू हो गया है।

आयी, देखा, अपना बनाया

और फिर एक ऐसा मौका आया जिसे मनरो किसी कीमत पर छोड़ना नहीं चाहती थी। यह सन १९५४ की बात है। कोरिया में लड़ाई चल रही थी। दक्षिण कोरिया की तरफ से लड़नेवाले हजारों अमरीकी सैनिकों के मनोरंजन के लिए



नाटककार मिलर की बाहों में

अमरीका से कलाकारों की टोलियां भेजी जाती थीं और इनमें फिल्मी सितारे भी होते थे। भारी आर्थिक नुकसान की परवाह न कर वह कोरिया पहुंच गयी। अमरीकी सैनिक उसे अपने बीच पाकर झूम उठे। उसका ऐसा स्वागत हुआ जैसा किसी कलाकार का नहीं हुआ था। शून्य से नीचे, हड्डियां तक जमा देनेवाले तापमान में वह तीन दिनों तक पैंतीस हजार सैनिकों का मनोरंजन करती रही। उस कड़ी ठंड में भी वह जामुनी रंग के पतले से वस्त्र पहनकर ही सैनिकों




उत्साह भरा जीवन
नेस्कैफ़े® के ताज़ा और स्फूर्तिदायक स्वाद से
NESCAFE
instant coffee
नेस्कैफ़े®
एकमात्र इन्स्टेन्ट कॉफ़ी
जो 100% शुद्ध
कॉफ़ी से बनी है
दुनिया भर में सबसे ज्यादा बिकने वाली
इन्स्टेन्ट कॉफ़ी
NSC 3376 HIN

के बीच आती थी। सैनिक उसे इस रूप में ही देखना चाहते थे, जिसमें उसका सौंदर्य सबसे ज्यादा खिलता था। जहां वह पहुंचती, गगनभेदी शोर से कान बहरे होने लगते। वरसों से ये सैनिक उस मनरो को देखने के लिए तरस रहे थे जिसका नाम नारी-सौंदर्य की परिपूर्णता का पर्याय बन चुका था। उन्हें लग रहा था कि वे जागी आंखों से सपना देख रहे हैं।

एक अरसा पहले नोरमा ने दांपत्य-जीवन से नाता तोड़कर अकेलेपन को इसलिए गले लगाया था क्योंकि वह शोहरत की दुनिया में कदम रखना चाहती थी। अब जब कि वह शोहरत के सातवें आसमान पर पहुंच गयी तब अकेलापन उसे फिर टीसने लगा। ऐसे ही समय उसकी जिंदगी में आया जो—बेसबाल का महान खिलाड़ी जो डिमैगियो।

सन १९५२ की गरमियों में मर्लिन के एक दोस्त डेविड मार्च ने उसे टेलीफोन करके भोजन पर बुलाया और बताया कि जो भी आ रहा है। मर्लिन ने इनकार कर दिया। मार्च ने बहुत जोर दिया कि जो अलग किस्म का आदमी है, तुम उसे पसंद करोगी। मर्लिन उससे और किसी दिन मिलने को तैयार हो गयी। अगले दिन जो ने उसे फोन करके भोजन के लिए आमंत्रित किया। मर्लिन ने व्यस्त होने का बहाना बनाया। दूसरे दिन फिर जो का फोन और फिर वही बहाना। दरअसल वह आशंका से भरी थी। बचपन से हर कदम पर छले जाने की आशंका। वह किसी पर विश्वास नहीं कर पाती थी, यहां तक कि किसी के प्यार को अपनाने में भी उसे डर लगता था। लेकिन दो दिन बाद ही उसने हिम्मत बटोरकर जो को अपने यहां बुलाया। उस शाम मर्लिन को कई साल बाद जिंदगी सुहावनी लगी। जो से उसकी मुलाकातों का सिलसिला बढ़ता गया। मर्लिन के लिए इस बात का कोई महत्त्व नहीं था कि जो बेसबाल के समूचे इतिहास के महानतम खिलाड़ियों में से है। उसके लिए तो जो एक व्यक्ति के रूप में ही सब कुछ था।

इसी बीच क्रिसमस आया। स्टूडियो में जोरदार पार्टी हुई। ऊपरी तौर पर मर्लिन चहकती हुई पार्टी में यहां से वहां घूमती रही, लेकिन उसका मन बेवरली हिल्स होटल के अपने कमरे में पड़ा था। जो अपने परिवार के पास सैनफ्रांसिस्को गया था और शाम को उसका टेलीफोन आना था। स्टूडियो से छूटते ही वह अपने कमरे में पहुंची। वहां मेज पर एक छोटा-सा क्रिसमस-वृक्ष रखा था और एक कोने में कुरसी पर बैठा जो उसका इंतजार कर रहा था। मनरो की जिंदगी में पहली बार क्रिसमस के अवसर पर कोई उपहार मिला था। वह खुशी से चीख पड़ी।

इसके बाद दो साल तक मर्लिन और जो साथ रहे। स्टूडियो से छूटते ही मर्लिन घर भागती। वहां भोजन बनाती। जो के साथ रहने पर वह तरह-तरह के व्यंजन

बनाना सीख गयी थी। भोजन के बाद जो टेलीविजन देखने बैठ जाता और मर्लिन अगले दिन के लिए संवाद याद करने में जुट जाती। कभी बात चलती तो जो कहता, "प्रचार की चिंता मत करो। जितना कमा सकती हो, पैसा कमाओ।" आखिर १४ जनवरी, १९५४ को रेडियो से समाचार प्रसारित हुआ कि उस दिन उन दोनों ने शादी कर ली है; पर यह खुशी बहुत थोड़े समय के लिए आयी थी। कुल नौ माह बीते थे कि एक दिन मर्लिन ने सुबकते हुए घोषणा की कि उसने और जो ने अलग हो जाने का फैसला कर लिया है। कारण बहुत सीधा था। सेक्स-बम के रूप में मर्लिन का प्रचार जो को पसंद नहीं था और वह टेलीविजन देखने में मगन रहता था। फलस्वरूप दोनों के बीच तादात्म्य स्थापित नहीं हो पाया था।

जो से अलग होकर मर्लिन एक बार फिर पूरी तरह से अपने काम में खो गयी। कई फिल्मों में नायिका के रूप में वह काम कर ही रही थी, उसने अपनी फिल्म कंपनी भी बना ली। इस काम में उसका दोस्त छायाकार मिलटन ग्रीन उसका भागीदार बना। मर्लिन ने 'दि प्रिंस ऐंड दि शो गर्ल' बनाने की घोषणा की। फिल्म की नायिका तो उसके सिवा और किसी के होने का सवाल ही नहीं था। इसी निर्माण के दौरान उसकी जिंदगी में एक और मोड़ आया।

आर्थर मिलर से विवाह

यह मोड़ था मर्लिन का नाटककार आर्थर मिलर से विवाह। 'डेथ ऑव ए सेल्समैन' लिखकर दुनिया भर में विख्यात हो चुका आर्थर मिलर मूर्धन्य साहित्यकारों की कोटि में गिना जाने लगा था। उसकी प्रतिष्ठा अमरीका के बुद्धिवादियों के सिरमौर के रूप में बनती जा रही थी। पहली बार मिलर से मनरो की मुलाकात उस समय हुई जब वह अपनी मित्र प्रसिद्ध कवयित्री इलिया कजान के साथ समुद्र-तट की सैर के लिए आया था। मर्लिन की उससे मुलाकात एक पार्टी में हुई। मिलर की उस समय अपनी पत्नी से पट नहीं रही थी तथापि तलाक की कार्रवाई शुरू नहीं हुई थी। मर्लिन इस पहली ही मुलाकात से मिलर को चाहने लगी थी, लेकिन समय का प्रभाव दोनों को दूर बहा ले गया। दोबारा मुलाकात हुई १९५५ में, जब मर्लिन अपने पति जो से दूर हो रही थी। मिलर से उसकी मुलाकातों का सिलसिला बढ़ने लगा। पहले तो मिलर का रुख एक दोस्त से अधिक अनौपचारिक नहीं रहा, पर एक बार पुष्पधन्वा के शरों ने उसके हृदय को बींधा नहीं कि वह एक बच्चे-जैसा मासूम होकर रह गया। अंत में मिलर ने घोषणा की कि वह अपनी पत्नी से तलाक ले रहा है। इसका अर्थ यही था कि वह मर्लिन से विवाह करेगा। ११ जून, १९५६ को उसे तलाक मिल गया। दो दिन बाद वह मर्लिन को लेकर कनेक्टीकट राज्य के रॉक्सबरी कस्बे में अपने घर के लिए

रवाना हो गया। यहां मिलर के माता-पिता इसीडोर मिलर्स और उसके दो बच्चे—बारह साल की पुत्री तथा आठ साल का पुत्र—रहते थे। मर्लिन को तीस साल की उम्र में ऐसा घर मिल गया था जिसमें वह पूरी तरह रच-पच जाना चाहती थी। इसके लिए मर्लिन ने मिलर का यहूदी धर्म स्वीकार किया और २० जून को दोनों विवाह-बंधन में बंध गये। मर्लिन ने उस दिन कहा कि इतनी प्रसन्न वह जीवन में कभी नहीं रही।

एक दशक पहले मर्लिन की सबसे बड़ी इच्छा हालीवुड के सितारों की सम्राज्ञी बनने की थी और अब उसके अंतस में मां बनने की कामना प्रबल होने लगी थी। मिलर से विवाह के बाद दो बार वह गर्भवती हुई भी, लेकिन दोनों ही बार गर्भ गिर गया। डाक्टरों की राय ने साफ बता दिया कि वह कभी मां नहीं बन सकेगी।

मर्लिन को गहरा आघात पहुंचा। उसने बेहिसाब पीना शुरू कर दिया। नींद की गोलियों की मात्रा बढ़ने लगी। और धीरे-धीरे उनका भी असर जाता रहा। मां बनने की अदम्य कामना उस पर इतनी हावी हो चुकी थी कि उसे कुछ अच्छा नहीं लगता था। इसके लिए उसने हर तरह की कोशिश कर डाली। आखिर, जून १९५९ में आपरेशन से अपना गर्भाशय ठीक कराने के लिए वह न्यूयार्क गयी।

अक्तूबर के अंत में वह बीमार हुई



ईव्ज मौंटेंड के प्रेम-पाश में

तो जनवरी के अंत तक बिस्तर से न उठ सकी। इस बीमारी की वजह से उसकी फिल्म 'लेट अस मेक लव' का निर्माण निर्धारित कार्यक्रम से बहुत पीछे रह गया था। आर्थर मिलर इस समय उसकी सहायता के लिए मौजूद न था। मर्लिन के लिए उसने विशेष रूप से एक फिल्मी पटकथा तैयार की थी—'दि मिसफिट्स'। उसके बारे में निर्देशक जॉन ह्रस्टन के साथ विचार-विमर्श के लिए वह आयरलैंड गया था। इधर हालीवुड में अफवाह फैलने लगी थी कि मर्लिन 'लेट अस मेक लव' के नायक ईव्ज मौंटेंड की मुहब्बत की गिरफ्त में आ चुकी है और आर्थर मिलर से उसका विवाह विच्छेद के कगार पर आ पहुंचा है। उस समय भले ही यह मात्र अफवाह रही हो, पर साल भर बाद जब

'दि मिसफिट्स' पूरी हो गयी तब मर्लिन जुआरेज पहुंची और वहां तलाक की दरख्वास्त पेश कर दी। आर्थर मिलर के साथ मनरो की जिंदगी के पांच बेहतरीन वर्ष बीते थे। आर्थर को खोकर वह न केवल पति वरन और भी बहुत कुछ खो चुकी थी।

आर्थर मिलर से विच्छेद के बाद मौंटेंड से उसके प्यार के किस्से हालीवुड में चर्चा का विषय बन गये। अफवाह तो बहुत पहले से ही थी। मर्लिन से पूछा गया तो उसने कहा कि मौंटेंड और उसकी पत्नी से मित्रता के अलावा और कुछ उनके बीच नहीं है; पर भांपनेवालों की नजरों से छिपा नहीं था कि मामला कुछ और ही है। 'लेट अस मेक लव' में मौंटेंड की भूमिका एक ऐसे धनपति की थी जो ला मनरो नाम की लड़की के पीछे भागता है। वास्तविक जीवन में लगता था कि मर्लिन मनरो उसके पीछे लगी है। मौंटेंड भी उसकी इन कोमल भावनाओं का प्रत्युत्तर गर्मजोशी से देता देखा गया। यह और बात है कि कुछ दिन बाद उसने इस सबको मर्लिन की नासमझी कहकर हमेशा के लिए मुंह मोड़ लिया।

सन १९६१ के पहले पांच महीनों में वह चार बार अस्पताल में भरती हुई। बीमारी क्या थी, इस बारे में तरह-तरह

की बातें फैलती रहीं। कोई कुछ कहता तो कोई कुछ और। एक बार वह जो का हाथ थामे मुसकराती हुई अस्पताल से निकली। लोगों ने पूछा कि क्या जो से फिर विवाह की कोई योजना है? मर्लिन ने उत्तर दिया कि ऐसी कोई बात नहीं है—विवाह का प्रयोग करके वे पहले ही देख चुके हैं। अब बस दोस्ती है। फिर फ्रैंक सिनात्रा से उसके रोमांस की खबर अखबारों में छपी, लेकिन सिनात्रा ने बताया कि वह तो मात्र एक पुराना दोस्त है। मर्लिन के पास इस बीच इसलिए ज्यादा उठा-बैठा, क्योंकि वह बीमार थी और बहुत अकेलापन महसूस कर रही थी।

सन १९६१ में क्रिसमस के मौके पर अवकाश मनाने के लिए मर्लिन मेक्सिको सिटी गयी। उसकी मुलाकात जोसे बोलानोज नाम के पटकथा-लेखक से हुई। अफवाह उड़ी कि दोनों शादी करनेवाले हैं। जुलाई, १९६२ में सिडनी स्कोल्स्की हालीवुड में बोलानोज से मिला। बोलानोज ने उससे पूछा—मर्लिन कैसी है? आश्चर्य से सिडनी ने जानना चाहा कि क्या उसकी मुलाकात मर्लिन से नहीं होती। बोलानोज ने उसे बताया कि टेलीफोन पर भी बात नहीं हो सकी है।

जानकार लोग मानते हैं कि ये सिर्फ अफवाहें नहीं थीं। प्यार की तलाश में भटकती मर्लिन के सनक से भरे ये रोमांस सचमुच चले थे। यह अलग बात है कि वे पल-दो-पल के साथ से ज्यादा नहीं चले १९६२ शुरू होने तक वह तन और मन दोनों से ही बुरी तरह टूट चली थी। 'लेट अस मेक लव' और 'दि मिसफिट्स' पिट गयी थीं।

मां न बन पाने की पीड़ा उसे लगातार कचोटती ही रहती थी। लंबी बीमारी ने उसके शरीर पर गहरा असर छोड़ा था। वह अपने आपको थका-थका महसूस करती। उसे भय सताने लगा था कि उसका सुडौल शरीर जल्दी ही सारी कमनीयता और लचक खो देगा। माथे पर झुर्रियां आने लगीं तो फिर उसके रूप की रानी होने के दिन भुला दिये जाएंगे। अपने आपको दिलासा देने की भी कोशिश की। एक टेलीविजन-फिल्म, ब्राडवे में एक नाटक की तैयारी और अपनी कला के बारे में ज्यादा-से-ज्यादा सीखने में व्यस्त रहकर निराशा के विचारों को दूर रखने में वह कुछ हद तक कामयाब हुई भी। उसने सोचा कि दो फिल्में असफल हो गयीं तो क्या, आखिर वह मर्लिन मनरो है।

वह मर्लिन मनरो थी, शायद इसलिए 'समथिंग हैज गाट टू गिव' में उसे नायिका के रूप में चुना गया। उसने शर्तें रखीं कि पटकथा में संशोधन किया जाए, नायक के रूप में डीन मार्टिन को लिया जाए, हेयर-ड्रेसर बाहर का रहे, उसका निजी नाट्य-शिक्षक साथ रहे और फिल्म कैमरे में कैद करने का काम दो विशेष छविकारों को सौंपा जाए। फिल्मी दुनिया का कायदा है

इनकी उज्ज्वल मुस्कान आप ही तो बनाए रखेंगे



सेन्ट्रल बैंक की
धन वृद्धि जमा योजना
(मनी मल्टिप्लायर
डिपॉजिट स्कीम) में
रुपये जमा कीजिए

5,000 रुपये 7 वर्षों में बढ़कर करीब 10,040 रुपये और 10 वर्षों में करीब 13,536 रुपये हो जाते हैं.

वापस मिलनेवाली रकम				
	अवधि			
रकम	12 माह	36 माह	61 माह	120 माह
रु.	रु.	रु.	रु.	रु.
500	541.50	654.32	829.51	1,353.52
1,000	1,083.00	1,308.64	1,659.02	2,707.04
2,000	2,166.00	2,617.28	3,318.04	5,414.08
3,000	3,249.00	3,925.92	4,977.06	8,121.12
4,000	4,332.00	5,234.56	6,636.08	10,828.16
5,000	5,415.00	6,543.20	8,295.10	13,535.20
10,000	10,830.00	13,086.40	16,590.20	27,070.40



सेन्ट्रल बैंक ऑफ़ इंडिया

(भारत सरकार का उपक्रम)

सही वह बैंक है जो हर जगह हर मनुष्य को सहायता देने में तत्पर है

CBI/234/76/Hin

कि सितारे की ऊंचाई उसकी सबसे ताजी फिल्म से नापी जाती है। मर्लिन की दो फिल्में लगातार पिटी थीं। लेकिन वह मर्लिन मनरो थी, इसलिए उसकी शर्तें मान ली गयीं। फिर एक दिन वह निर्वस्त्र होकर तैरने के तालाब में कूदी तो सारी दुनिया जैसे अकचकाकर उठ बैठी।

सच बात तो यह थी कि उसे अपने संवाद याद करने में भारी कठिनाई हो रही थी। प्रसाधन-कक्ष से बाहर आने में उसे चार-चार घंटे लग जाते। कभी-कभी तो वह काम पर हाजिर ही न हो पाती। एक दिन आयी तो आते ही घोषणा कर दी कि वह न्यूयार्क जा रही है। राष्ट्रपति के जन्मदिन पर मैडिसन स्क्वायर गॉर्डन में होनेवाले समारोह में गाने का वायदा कर चुकी है। स्टूडियो के लोगों ने उसे रोकना चाहा, पर वह चली गयी। उजाले की तलाश में जिंदगी भर भटकी मनरो के आगे अंधकार बढ़ने लगा था।

मर्लिन मनरो का फ्लैट न्यूयार्क में था। वह ज्यादातर वहीं रहती भी थी। अब उसने हालीवुड में बसने का निश्चय करके मकान खरीदा और उसे सजाने में पचीस हजार डालर खर्च किये। लेकिन साथ रहने के लिए बस वही अकेलापन था जो बचपन से उसका साथी था।

उसने निराशा से लड़ने की अपनी तरफ से हरचंद कोशिश की, पर निराशा का शिकंजा कसता ही गया। अब मर्लिन लोगों से दूर भागती। पूरी जिंदगी के दृश्य एक-एक कर सामने आते। लगता कि वह बस तूफान में पड़े तिनके के मानिंद उड़ती रही है।

जन्म से ही मां के प्यार से वंचित मर्लिन ने अपनी आखिरी मुलाकात में, जो अगस्त, १९६२ की 'लाइफ' में प्रकाशित हुई थी, कहा था कि वह तो सोचती थी कि फिल्म-उद्योग उसके साथ वैसा ही व्यवहार करेगा जैसा एक मां अपनी बच्ची से उस समय करती है जब वह कार के नीचे आते-आते बची हो। लेकिन अब गले लगाने के बजाय उसे सजा दी जाने लगी।

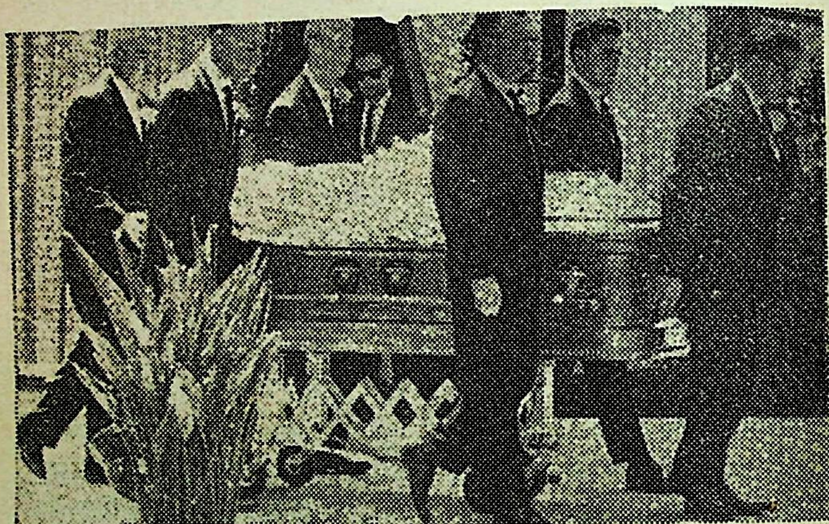
वह शुक्रवार ३ अगस्त, १९६२ की रात थी। मर्लिन ने भोजन किया और कमरे में चली गयी। रात तीन बजे उसके प्रेस-सचिव की नींद अचानक टूटी और उसे बेचैनी महसूस हुई। वह उठकर मर्लिन के कमरे की ओर गया। दरवाजा बंद था। दस्तकें देने पर भी न खुला तो घूमकर खिड़की से झांका। मर्लिन गले तक चादर से ढकी औंधी पड़ी थी। एक हाथ टेलीफोन की ओर बढ़ा था। कमरे में ग्रामोफोन बज रहा था। डॉक्टर बुलाया गया। मर्लिन दुनिया से चल बसी थी। पास की मेज पर खाली जार रखा था। शाम तक उसमें नींद की पचास गोलियां थीं।

शनिवार, ४ अगस्त। सोकर उठते ही दुनिया ने सुना कि मर्लिन मनरो, जो कल तक हकीकत थी, अब महज

एक दास्तान बनकर रह गयी है। मनरो उदास थी कि दुनिया में किसी को उसकी परवाह नहीं है। अब लोग उदास थे कि मनरो दुनिया में नहीं है—मनरो, जो सेल्यूलाइड की दुनिया की सबसे अधिक चर्चित तारिका रही, नारी-सौंदर्य की पराकाष्ठा का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण।

सेल्यूलाइड की दुनिया में तैयार हुआ सबसे बड़ा सेक्स-बम मनरो! बेथ टेलर तक की लंबी कतार में सबसे चमकीला और सबसे अलग नजर आता है। 'क्लैश बाई नाइट', 'हाउ टू मैरी ए मिलियानर', 'दि सेवन इयर इच', 'बस-स्टाप', 'सम लाइक हाट' जैसी सफल फिल्में मर्लिन मनरो के नाम से ही जानी जाती हैं।

कोमल भावनाओं से बनी मनरो, जिसकी जिंदगी एक आईने का सफर



एक चमकीले सितारे का शोकपूर्ण अंत

साक्षात रति का अवतार! लोग उसकी फिल्म 'न्यागरा' का संवाद याद करते हैं और अपनी प्रियतमाओं से कहते हैं, 'हनी, व्हाई डोंच यू ड्रेस लाइक हर?'

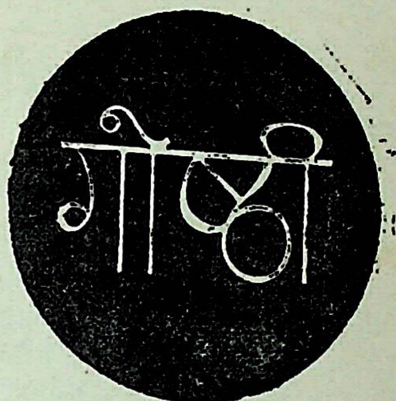
एक मंजी हुई बेहतरीन अभिनेत्री, जिसका रंग ग्रेटा गार्बो से लेकर एलिजाथी। और यह संगदिल दुनिया, जो हर आईने के लिए पत्थरों का नगर होती है।

पत्थरों के नगर में आईने के सफर का एक ही हश्र होता है—टकराकर चूर-चूर हो जाना।

मर्लिन मनरो के साथ भी यही हुआ ●

प्रकाशचंद्र गोयल, शिवपुरी (म. प्र.) : लेटकर पढ़ने से आंखें खराब हो जाती हैं, इसका कोई वैज्ञानिक कारण हो तो स्पष्ट करें।

लेटकर पढ़ने मात्र से आंखें खराब नहीं होतीं। आप लेटकर भी पढ़ सकते हैं, वशर्ते आपकी स्थिति, पुस्तक की स्थिति और उस पर पड़नेवाले प्रकाश की स्थिति आपकी आंखों के सही 'फोकस' के लिए उचित हो। उचित प्रकाश-व्यवस्था, लेटने के सही ढंग और पुस्तक को सही कोण पर रखने के अभाव में आंखों पर जोर पड़ता है और उनका 'फोकस' सही नहीं हो पाता, जिससे आंखें खराब होने लगती हैं। कई वार यह भी होता है कि आप लेटकर पढ़ना तभी पसंद करते हैं जव थके हुए रहते हैं। ऐसी अवस्था में दिमाग सुस्त होता है और आंखें नींद से वोझिल, अतः आप न तो ध्यान केंद्रित कर सकते हैं, न आंखों का 'फोकस' ठीक रख सकते हैं। वृद्धावस्था में यदि प्रकाश और पुस्तक की उचित स्थिति होने पर भी आपको आंखें कमजोर होती लगें तो उसका कारण लेटकर पढ़ना नहीं, बल्कि वृद्धावस्था के कारण आंखों का कमजोर हो जाना समझकर चश्मा लगाना चाहिए। लेटकर पढ़ने की सर्वोत्तम स्थिति आराम-कुर्सी में वनती है, जव आप प्रकाश-स्रोत को अपने पीछे जरा वायीं ओर हटाकर रखते हैं और पुस्तक को ऐसे कोण पर रखते हैं कि प्रकाश की किरणें पुस्तक से



लौटकर आंखों तक पहुंचने के लिए कम से कम दूरी तय करें।

इंद्रमोहन गुप्त, बांदा (उ. प्र.) : 'वाइनरी सिस्टम' गणना की कौन-सी प्रणाली है? यह दशमलव प्रणाली से किस प्रकार भिन्न है?

आधुनिक कंप्यूटरों में प्रयुक्त होनेवाली केवल दो अंकों की गणना-प्रणाली 'वाइ-नरी सिस्टम' कहलाती है। हिंदी में इसका अनुवाद प्रायः द्विवर्णी-प्रणाली किया जाता है, लेकिन 'इकाई' और 'दहाई' की तुक पर इसका नामकरण 'दुआई प्रणाली' किया जा सकता है। इसमें केवल दो अंकों ० और १ से सभी प्रकार की गणनाएं कर ली जाती हैं। दशमलव प्रणाली में ० से ९ तक के अंकों का स्थानिक मूल्य 'दहाई' के क्रम में याद रखना पड़ता है और स्थान बदलने पर अंक का मूल्य दस गुना अधिक या कम हो जाता है। उदाहरण के लिए १ के वाद ० रख देने से १० गिना जाता है और दशमलव

के.डी.आर.
फैशन निटिंग की प्रेरक



के०डी०आर० बुनाई की ऊन। आपको कड़ी सर्दी में भी गर्मी देती है। आइये आपनी दिलकश के०डी०आर० रेन्ज में से कैशमीलान, कश्मीरा और मोहेरलान के लाल, नीले, बैंगनी, मजेन्टा आदि मनमोहक पक्के रंगों में से मनपसन्द चुनाव कीजिए।

KDR







adEnvoys

बिंदु के बाद १ रखने पर १ का दशमांश, लेकिन 'दुआई प्रणाली' में अंकों का स्थानिक मूल्य १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९ और ० न होकर केवल १ और २ होता है। उदाहरण के लिए यदि 'दुआई प्रणाली' में आप ३ लिखना चाहते हैं तो आपको ११ लिखना होगा, जिसमें पहले १ का मूल्य २ होगा और दूसरे १ का १। इस प्रकार ११ का अर्थ होगा २+१=३। दोनों प्रणालियों की अंकगणना का अंतर इस प्रकार समझा जा सकता है :

दशमलव प्रणाली	'दुआई प्रणाली'
०	००००
१	०००१
२	००१०
३	००११
४	०१००
५	०१०१
६	०११०
७	०१११
८	१०००
९	१००१

रमेश कुमार राही, परासिया (म. प्र.) : कभी-कभी रेडियो पर ऐसा स्टेशन लग जाता है, जिसमें दो व्यक्ति टेलीफोन पर बातें करते सुनायी देते हैं। क्या रेडियो फोन की तरंगें कैच कर लेता है?

जिन्हें आप टेलीफोन पर की जानेवाली बातें समझ रहे हैं, वे वास्तव में 'बेतार' (वायरलेस) पर की जाती बातें हैं। टेलीफोन की ध्वनियां तारों पर ही दौड़ती हैं, जबकि बेतार-ध्वनियां वास्तव में रेडियो-तरंगें ही हैं। इसीलिए वे कभी-कभी रेडियो में सुनायी पड़ जाती हैं।

पांडेय अजयकुमार सिन्हा, ब्लाक जमुई (बिहार) : थियोसोफिकल सोसाइटी की स्थापना, कब, कहां और किसके द्वारा हुई? इसका उद्देश्य क्या है? क्या सोसाइटी अभी भी है?

'थियोसोफी' (Theosophy) को संस्कृत में 'ब्रह्म-विद्या' कहते हैं। इसमें विश्व को आध्यात्मिक प्रकृति का और मनुष्य को दैवी प्रकृति का माना जाता है। इसके अनुसार मनुष्य अपनी अंतश्चेतना के द्वारा ब्रह्म का साक्षात्कार कर सकता है। आत्मज्ञान के लिए इसमें योग का मार्ग बताया जाता है। इसका संबंध भारत के वैदिक, बौद्ध और ब्राह्मण-ग्रंथों में पाये जानेवाले ज्ञान से है। 'थियोसोफिकल सोसाइटी' की स्थापना इंगलैंड में सन १८७५ में मदाम एच. पी. ब्लावत्स्की ने की थी और श्रीमती एनी बेसेंट ने इसका प्रचार किया। यह सोसइटी अभी भी कार्य कर रही है।

चलते-चलते एक प्रश्न और...

आनंदप्रकाश भारद्वाज, पूरनपुर : कुंआरे और विवाहित दोनों ही आहें भरते हैं। आदमी पर यह दोतरफा मार क्यों?

इसलिए कि न तो उसे आक्रमण करना आता है, न बचाव करना।

—बिंदु भास्कर

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से सन्तोष नाथ द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

उत्तर रेलवे

समय सारणी

सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है कि इस रेलवे की अगली समय सारणी १ अक्तूबर, १९७६ से लागू होगी । महत्वपूर्ण परिवर्तन नीचे दिए जाते हैं :-

चालू की गई नई गाड़ियां

१) २९-९-७६ से निम्नलिखित संक्षिप्त समय अनुसार अमृतसर और लुधियाना के बीच एक अन्तर-नगरीय एक्सप्रेस गाड़ी चालू की जाएगी :--

११८ डाउन				११७ अप
७.४०	छू.	अमृतसर	प.	१२.१५
८.४५	प.	जालंधर शहर	छू.	११.११
८.४८	छू.		प.	११.०८
९.४५	प.	लुधियाना	छू.	१०.१०

२) नई दिल्ली और सिकन्दराबाद के बीच निम्नलिखित संक्षिप्त समय अनुसार सप्ताह में दो बार चलने वाली आन्ध्र प्रदेश एक्सप्रेस चालू की जाएगी :--

	१२४ अप			१२३ डाउन
मंगलवार और शुक्रवार	७.०० छू.	नई दिल्ली	प.	१३.०० सोमवार और बृहस्पतिवार
बुधवार और शनिवार	५.३० प.	सिकन्दराबाद	छू.	१३.१० रविवार और बुधवार

१२३ डाउन सिकन्दराबाद से ३-१०-७६ से प्रारम्भ होगी ।

१२४ अप नई दिल्ली से ५-१०-७६ से प्रारम्भ होगी ।

३) भटिन्डा और अबोहर के बीच निम्नलिखित संक्षिप्त समय अनुसार एक नई गाड़ी नं. १ बी ए/२ बी ए चालू की जाएगी :--

२ बी ए				१ बी ए
२०.४८	छू.	अबोहर	प.	२०.०८
२३.४०	प.	भटिण्डा	छू.	१७.३०

टिप्पणी : अक्तूबर १९७४ में अबोहर और भटिण्डा के बीच आंशिक रूप से रद्द की गई गाड़ी नं. ३३९ अप/३४० डाउन के फलस्वरूप हुई कमी को इस गाड़ी द्वारा पूरा किया जाएगा ।

४) उत्तर रेलवे की गाड़ी नं. १ जे जे एम/२ जे जे एम को पश्चिम रेलवे की गाड़ी नं. २२१ अप/२२० डाउन में मिला कर जोधपुर और उदयपुर के बीच निम्नलिखित संक्षिप्त समय अनुसार एक सीधी गाड़ी नं. १११ अप/२२२ डाउन चालू की जाएगी :--

१११ अप				२२२ डाउन
१०.२०	छू.	जोधपुर	प.	१८.५०
१३.३५	प.	मारवाड़	छू.	१५.५०
१४.४२	छू.		प.	१३.३०
२२.२१	प.	उदयपुर	छू.	५.४५

५) गाड़ी नं. १ सी एम/६ सी एम को १ एम एच/२ एम एच में मिला कर हरिद्वार और चन्दौसी के बीच निम्नलिखित संक्षिप्त समय अनुसार एक सीधी गाड़ी नं.१ सी एच/२ सी एच चालू की जाएगी :--

२ सी एच				१ सी एच
१५.५०	छू.	हरिद्वार	प.	११.५५
२१.२५	प.	मुरादाबाद	छू.	६.२०
२२.०५	छू.		प.	५.५०
२३.३०	प.	चन्दौसी	छू.	४.२५

१-१०-७४ से रद्द की गई गाड़ियों को फिर से चालू करना :

१) ५ जे एच/८ जे एच जालन्धर शहर और होशियारपुर के बीच

८ जे एच				५ जे एच
११.३५	छू.	जालंधर शहर	प.	११.२५
१२.५०	प.	होशियारपुर	छू.	१०.०५

२) ३ ए डी/४ ए डी अमृतसर और डेरा बाबा नानक के बीच :

३ ए डी				४ ए डी
११.३०	छू.	अमृतसर	प.	१६.१०
१३.५५	प.	डेरा बाबा नानक	छू.	१४.२०

३) १ एस आर (पुराना नं. ३ बी आर आर)/२ एस आर (पुराना नं. ४ बी आर आर) रिवाड़ी और सादुलपुर के बीच :

१ एस आर				२ एस आर
१७.४५	छू.	रिवाड़ी	प.	७.४०
२२.२५	प.	सादुलपुर	छू.	३.१५

जिन गाड़ियों का चालन क्षेत्र बढ़ाया गया :

लखनऊ और इलाहाबाद के बीच चलने वाली ६९ अप/७० डाउन त्रिवेणी एक्सप्रेस का चालन क्षेत्र निम्नलिखित संक्षिप्त समय अनुसार चुनार होकर चोपन तक और वहां से बढ़ाया जाएगा :--

७० डाउन				६९ अप
१६.४०	छू.	लखनऊ	प.	९.५०
२१.३०	प.	इलाहाबाद	छू.	५.००
२२.४०	छू.		प.	३.३५
४.४५	प.	चोपन	छू.	२२.२०

गाड़ियों की बारम्बारता में वृद्धि :

बम्बई वी टी और लखनऊ के बीच इन दिनों सप्ताह में तीन दिन चलने वाली ११५ डाउन/११६ अप अब निम्नलिखित परिवर्तित समय अनुसार प्रतिदिन चलेंगी । इन गाड़ियों में अब पहले और दूसरे दर्जे के यात्री यात्रा कर सकेंगे :--

११६ अप				११५ डाउन
७.५०	छू.	लखनऊ	प.	१९.५०
१४.३०	प.	झांसी	छू.	१३.२५
१४.५०	छू.		प.	१३.०५
१५.४०	प.	बम्बई	छू.	१५.२०

टिप्पणी : संशोधित व्यवस्था बम्बई से १-१०-७६ से तथा लखनऊ से ३-१०-७६ से लागू होगी ।

गाड़ियों को रद्द करना :

गाड़ी नं. जिस खण्ड के बीच रद्द की गई

१ एपी/२ एपी अमृतसर-पट्टी (कम यात्री यातायात उपलब्ध होने के कारण)

गाड़ियों का डीजलीकरण :

९३ अप/९४ डाउन जोधपुर मेल को डीजल इंजन से चलाया जाएगा तथा इनका संशोधित समय निम्न प्रकार से होगा :--

९३ अप				९४ डाउन
२०.३०	छू.	दिल्ली	प.	६.००
४.३४	प.	रतनगढ़	छू.	२१.२०
४.५९	छू.		प.	२०.५५
१२.१५	प.	जोधपुर	छू.	१३.४५

२) सहारनपुर और अमृतसर के बीच ३१ अप/३२ डाउन फ्रंटियर मेल

३/३१ अप				३२ डाउन/४ अप
१९.१५	प.	दिल्ली	छू.	८.१०
२१.१५	छू.		प.	६.५०
१.००	प.	सहारनपुर	छू.	३.००
१.१०	छू.		प.	२.५०
७.१०	प.	अमृतसर	छू.	२१.१०

३१ अप की रफ्तार बढ़ जाने से ३५ मिनट तथा ३२ डाउन से ३० मिनट की बचत होगी ।

३) १ अप/२ डाउन दिल्ली और कालका के बीच :

१ अप				२ डाउन
१९.४५	छू.	दिल्ली	छू.	८.००
२१.५०	छू.		प.	६.३५
४.३५	प.	कालका	छू.	०.२०

१ अप की रफ्तार बढ़ाए जाने से ७० मिनट तथा २ डाउन से ३५ मिनट की बचत होगी ।

गाड़ियों का विद्युतीकरण :

८३ अप/८४ डाउन दिल्ली-वाराणसी एक्सप्रेस गाड़ियों को गाजियाबाद और कानपुर के बीच बिजलीकर्षण पर चलाया जाएगा।

नए ठहराव जिनकी आजमायशी तौर पर अस्थाई रूप से व्यवस्था की गई है तथा जो समय सारणी में नहीं दिखाए गए :

गाड़ी नं.	स्टेशन
८७ अप/८८ डाउन	भुच्चो
१ जे एन एल/२ जे एन एल	गुन्ताली हाल्ट
२ आर बी	किशनगढ़ बलवास हाल्ट

वर्तमान ठहराव जिन्हें समाप्त किया गया है :

गाड़ी नं.	जिस स्टेशन से ठहराव समाप्त किया गया है
११३ अप	श्री कृष्ण नगर
११४ डाउन	छन्दरौली और श्री कृष्ण नगर
४ डी पी	गजलू गढ़ी
३३२ डाउन	रोहाना कलां, बावनहेरी, जरौदानरा, सखोती टांडा, दौराला, परतापुर, मुहीउद्दीनपुर, मुरादनगर और साहिबाबाद।
१ ए पी जे/२ ए पी जे	शगवाल
१ ए डी	कोटिआ, गुजरां, हरदोरवाल, दत्तड़ छत्तड़

जिन स्टेशनों पर गाड़ियों के नए मेल कराने की व्यवस्था की गई है :

प्रतापगढ़ पर ३५८ डाउन के साथ १५८ डाउन

कुरुक्षेत्र पर ४७ अप के साथ १ यू के एन

कुरुक्षेत्र पर ३३८ डाउन के साथ ३ जे एन के

अम्बाला पर ३४७ अप के साथ १ अप

अम्बाला पर ५४ डाउन के साथ १ अप

अम्बाला पर ५२ डाउन के साथ ८८ डाउन

अम्बाला पर ५१ अप के साथ ८७ अप

अम्बाला पर ३ यू के के साथ १ यू कं एन

अम्बाला पर ३ यू के के साथ १ डी एस यू

कालका पर ३५ अप के साथ ४ के एस रेल मोटर

कालका पर ५ के एस के साथ ८८ डाउन

दिल्ली पर १ एन जी एन, १ एन डी एच और २०३ अप के साथ ३४२ डाउन

नई दिल्ली पर ८ अप के साथ ८१ अप/१०३ अप

प्रतापगढ़ पर १५७ अप के साथ १ आर पी

गजरौला पर ६ एम डी के साथ ४ जी एन
हापुड़ पर १ के एम के साथ १५८ डाउन
पठानकोट पर १७ अप के साथ ३ ए बी पी
अमृतसर पर ३५ अप के साथ १६१ अप
पठानकोट पर ३६ डाउन के साथ ५ ज एम पी
टूण्डला पर ३५६ डाउन के साथ ८१ अप/१०३ अप

१-१०-७६ से उत्तर रेलवे पर ५६ डाक/एक्सप्रेस गाड़ियों की रफ्तार बढ़ा कर चालन समय में ५ से १२० मिनट तक कमी की गई।

१-१०-७६ से उत्तर रेलवे पर यात्री गाड़ियों की रफ्तार बढ़ा कर चालन समय में ५ मिनट से ९० मिनट तक कमी की गई।

गाड़ियों के नं. में परिवर्तन :

निम्नलिखित गाड़ियों के नं. में परिवर्तन किए गए हैं :—

गाड़ी का पुराना नं.	१-१०-७६ से गाड़ी का नया नं.	विशेष विवरण
२७ अप/२८ डाउन फ्लाइंग मेल	४७ अप/४८ डाउन फ्लाइंग मेल	४७ हजरत निजामुद्दीन से ४८ अमृतसर से
४७/४८ दादर एक्सप्रेस	२८/२७ दादर एक्सप्रेस	२८ वाराणसी से २७ दादर से -
१६३/१६४ साबरमती एक्सप्रेस	१६६/१६५ साबरमती एक्सप्रेस	१६६ वाराणसी - फैजाबाद से १६५ अहमदाबाद से
१६५ अप/१६६ डाउन संगम एक्सप्रेस	१६३ अप/१६४ डाउन संगम एक्सप्रेस	१६३ इलाहाबाद से १६४ मेरठ से
९५ अप/९६ डाउन मारवाड़ मेल	९६/९५ मारवाड़ मेल	९६ बीकानेर से ९५ मारवाड़ से

इस रेलवे के बीकानेर और जोधपुर मण्डलों पर गाड़ी के नम्बरों में भी निम्न प्रकार से परिवर्तन किए गए हैं :—

बीकानेर मण्डल : सभी सवारी गाड़ियों के नम्बर के साथ उपसर्ग 'बी' को समाप्त कर दिया गया है।

जोधपुर मण्डल : सभी सवारी गाड़ियों के नम्बर के साथ उपसर्ग 'जे' को समाप्त कर दिया गया है।

गाड़ियों के दिनों में परिवर्तन :

१३२ अप और १६० अप जयन्ती जनता एक्सप्रेस के दिनों में निम्न प्रकार से परिवर्तन किया गया है :—

१३२ - हजरत निजामुद्दीन से सोमवार, मंगलवार, बृहस्पतिवार, शुक्रवार और शनिवार को

१६० - हजरत निजामुद्दीन से बुधवार और रविवार को

टिप्पणी : १५९/१६० गाड़ी आगामी सूचना तक सिकन्दराबाद के बजाय विजयवाड़ा तक/से होकर चलाई जाएगी।

१३१ डाउन तथा १५९ डाउन के दिनों में कोई परिवर्तन नहीं है.

गाड़ियों के समय में महत्वपूर्ण परिवर्तन :

११६ अप लखनऊ से १०.१५ के बजाय ७.५० पर चलेंगी

११५ डाउन लखनऊ १७.०५ के बजाय १९.५० पर पहुंचेंगी

४४ अप लखनऊ से ७.५० के बजाय १०.१५ पर चलेंगी

४३ डाउन लखनऊ २०.०५ के बजाय १७.०५ पर पहुंचेंगी

१ अप दिल्ली से २२.४० के बजाय २१.५० पर चलेंगी तथा कालका ६.३५ के बजाय ४.३५ पर पहुंचेंगी

२ डाउन कालका से २३.४५ के बजाय ०.२० पर चलेंगी

८१/१०३ अप नई दिल्ली १०.२० के बजाय ९.३५ पर पहुंचेंगी

८१ अप/१०३ अप/२५ अप अमृतसर १९.४५ के बजाय १९.३० पर पहुंचेंगी

१५३ अप दिल्ली १२.१० के बजाय ११.३५ पर पहुंचेंगी

१५७ ऊप वाराणसी से १४.१० के बजाय १५.१० पर चलेंगी

१५८ डाउन नई दिल्ली से १४.३० के बजाय १४.०० पर चलेंगी तथा वाराणसी ६.३५ के बजाय ५.२० पर पहुंचेंगी

१६० अप निजामुद्दीन से ७ के बजाय ९.२५ पर चलेंगी

७८ अप निजामुद्दीन से १० के बजाय १२.१५ पर चलेंगी

१३१ डाउन/१५९ डाउन निजामुद्दीन १४.४० के बजाय १४.२५ पर पहुंचेंगी

७७ डाउन निजामुद्दीन १६.१० के बजाय १५.३५ पर पहुंचेंगी

१५५ अप नई दिल्ली ५ के बजाय ४.४० पर पहुंचेंगी

१५६ डाउन नई दिल्ली से १२.२५ के बजाय १४.३० पर चलेंगी तथा मुगलसराय १.४५ के बजाय ४.४० पर पहुंचेंगी

३८ डाउन फिरोजपुर से २१.३५ के बजाय २२.०५ पर चलेंगी तथा दिल्ली ५.४५ के बजाय ६.१० पर पहुंचेंगी

३३२ डाउन नई दिल्ली १.३० के बजाय २४.०० पर पहुंचेंगी

१६४ डाउन इलाहाबाद १०.४० के बजाय १०.१५ पर पहुंचेंगी

८ डाउन मुगलसराय २.३३ के बजाय २.०३ पर पहुंचेंगी

१३ अप दिल्ली १०.५५ के बजाय १०.३२ पर पहुंचेंगी

९ अप देहरादून ८.१५ के बजाय ७.५५ पर पहुंचेंगी

५७ अप अमृतसर १९.०५ के बजाय १८.४५ पर पहुंचेंगी

५२ डाउन जम्मू तवी से १९.१५ के बजाय १९.४० पर चलेंगी

१०४ डाउन मुगलसराय ५.१५ के बजाय ४.४० पर पहुंचेंगी

३६ डाउन कालका ५.४० के बजाय ५.१५ पर पहुंचेंगी

३८ डाउन कालका ७.४५ के बजाय ७.१५ पर पहुंचेगी
१६१ अप नई दिल्ली २०.३५ के बजाय २०.१५ पर पहुंचेगी
८५ मुगलसराय से ३.०३ के बजाय ३.२८ पर चलेगी
८१ अप मुगलसराय २०.४५ के बजाय १९.५० पर पहुंचेगी
८२ डाउन मुगलसराय ६.२३ के बजाय ६.३१ पर पहुंचेगी
३५७ अप लखनऊ ६.५० के बजाय ६.२० पर पहुंचेगी
३७७ अप इलाहाबाद से २.४० के बजाय ३.०० पर चलेंगी तथा बरेली १९.०५ के बजाय १८.५० पर पहुंचेगी
३४९ अप अमृतसर ९.५५ के बजाय ९.१५ पर पहुंचेगी
३४२ डाउन फिरोजपुर से १९.२५ के बजाय १९.४५ पर चलेंगी तथा दिल्ली ९.३० के बजाय ८.४० पर पहुंचेगी
८६ डाउन मुगलसराय २३.१० के बजाय २२.५८ पर पहुंचेगी
३२ डाउन अमृतसर से २०.४५ के बजाय २१.१० पर चलेंगी तथा दिल्ली ६.५५ के बजाय ६.५० पर पहुंचेगी
३१ अप अमृतसर ७.४५ के बजाय ७.१० पर पहुंचेगी
५३ अप नंगल डैम ८.३५ के बजाय ८.१० पर पहुंचेगी
३ जे आर जे जैंजों दोआबा से १५.३० के बजाय १५.३५ पर चलेगी
२ जे जे जैंजों दोआबा १०.५० के बजाय १०.०५ पर पहुंचेगी
२ एल एल लोहियां खास से ५.२० के बजाय ४.४० पर चलेंगी तथा लुधियाना ९.२५ के बजाय ८.०० पर पहुंचेगी
५ जे एम पी पठानकोट १९.१५ के बजाय १८.३५ पर पहुंचेगी
३ यू के अम्बाला छावनी से १८.०० के बजाय १८.४५ पर चलेंगी तथा कालका २०.५५ के बजाय २१.०६ पर पहुंचेगी
५ जे एफ जालंधर शहर से १२.५५ के बजाय १२.४० पर चलेंगी तथा फिरोजपुर १६.५५ के बजाय १६.०५ पर पहुंचेगी
११ जे एच (पुराना/१३ जे एच (नया) जालंधर शहर २३.३० के बजाय २३.०० पर पहुंचेगी
४ जे एम पी पठानकोट से ७.३० के बजाय ७.२५ पर चलेंगी तथा जालंधर शहर १२.०५ के बजाय ११.३० पर पहुंचेगी
१ बी एस बी/१ एस बी एल (नया) भटिण्डा से २१.०५ के बजाय २०.५० पर चलेंगी तथा सूरतगढ़ ६.४५ के बजाय ६.०० पर पहुंचेगी

गाड़ियों में अतिरिक्त डिब्बे जोड़ना :

विभिन्न गाड़ियों को डीजल इंजनों से चलाने के फलस्वरूप निम्नलिखित अतिरिक्त सवारी डिब्बे जोड़े जाएंगे :--

गाड़ी नं.	खण्ड	डिब्बे का टाइप	डिब्बों की सं.
१ अप/२ डाउन मेल	दिल्ली-कालका	पहला दर्जा	एक
	दिल्ली-चंडीगढ़	दूसरा दर्जा	दो
३१ अप/३२ डाउन मेल	दिल्ली-अमृतसर	पहला दर्जा	एक
		दूसरा दर्जा	दो
९३ अप/९४ डाउन मेल	दिल्ली-जोधपुर	पहला दर्जा	एक
		दूसरा दर्जा	दो
	दिल्ली-रतनगढ़	दूसरा दर्जा	एक

उपरोक्त गाड़ियों के अलावा निम्नलिखित डाक/एक्सप्रेस गाड़ियों में दूसरे दर्जे के अतिरिक्त डिब्बे जोड़े जाएंगे :

गाड़ी नं.	खंड	डिब्बे का टाइप	डि. की सं.
४३ अप/४४ डाउन मेल	झांसी-लखनऊ	दूसरा दर्जा	पांच
४५ अप/४६ डाउन एक्स.	दिल्ली-अमृतसर	,,	एक
९१ अप/९२ डाउन मेल	दिल्ली-बीकानेर	,,	डेढ़

सीधे/खण्डीय सवारी डिब्बों के चालन में महत्वपूर्ण परिवर्तन :

१) दो सीधे जाने वाले डिब्बे अर्थात पहले और दूसरे दर्जे का एक मिश्रित तथा दो-टायर वाला एक शयन-यान ३५५/१ सी एच-२ सी एम/३५६ गाड़ियों द्वारा आगरा छावनी-मुरादाबाद के बजाय आगरा छावनी और हरिद्वार के बीच चलाए जाएंगे।

२) ५२ डाउन/३५० अप-३४९ अप/५१ अप गाड़ियों के साथ जम्मू तवी और हरिद्वार के बीच २-टायर वाला एक शयन-यान (सप्ताह में दो बार) चलाया जाएगा जो जम्मू तवी से मंगलवार और शुक्रवार और हरिद्वार से बुधवार और शनिवार को चलेगा।

३) लखनऊ से १०६ डाउन/२२ अप/५२ अप तथा वापसी पर ५१ डाउन/२१ डाउन/१०५ डाउन के साथ मद्रास के लिए सप्ताह में पांच दिन तथा हैदराबाद के लिए सप्ताह में दो दिन २ सीधे सवारी डिब्बे, अर्थात १ पहले और दूसरे दर्जे का मिश्रित तथा १ ३-टायर वाला शयन-यान, चलाए जाएंगे। लखनऊ-हैदराबाद गाड़ियों के दिन लखनऊ से मंगलवार और शनिवार होंगे तथा हैदराबाद से बुधवार और शनिवार होंगे। लखनऊ-मद्रास सेवाएं बाकी के पांच दिनों में चलाई जाएंगी। ये डिब्बे लखनऊ-मद्रास/हैदराबाद के बीच चलने वाली वर्तमान सेवाओं के बदले में चलाए जाएंगे।

४) बीकानेर और अहमदाबाद के बीच ९६/१-२/९५ गाड़ियों के साथ ३-टायर वाला एक शयन-यान चलाया जाएगा।

गाड़ियों में शयन-यानों की व्यवस्था

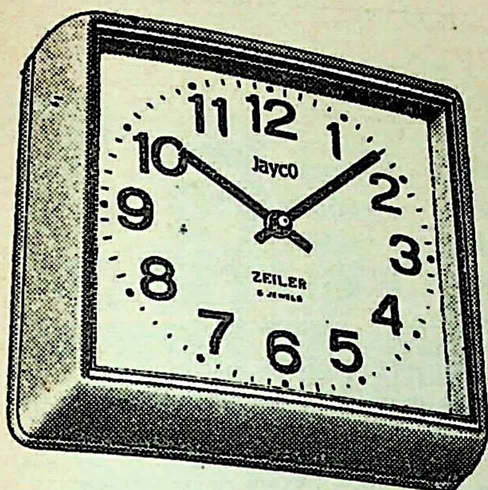
लखनऊ और चोपन के बीच ६९ अप/७० डाउन एक्सप्रेस, इलाहाबाद और सहारनपुर के बीच ३५१ अप/३५२ डाउन एक्सप्रेस/सवारी गाड़ी तथा अमृतसर और जम्मू तवी के बीच १ ए पी जे/२ ए पी जे सवारी गाड़ी में शयन-यानों की व्यवस्था की जाएगी।

गाड़ियों से दूरी प्रतिबन्ध को हटाना :

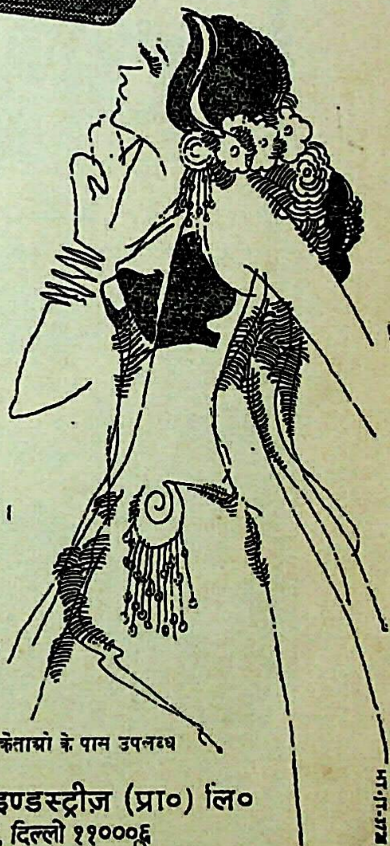
८ डाउन/७ अप तूफान एक्सप्रेस से दूसरे दर्जे के यात्रियों के लिए आगरा छावनी और कानपुर सेन्ट्रल के बीच १६० कि.मी. दूरी प्रतिबन्ध हटा लिया जाएगा ।

गाड़ी के आने-जाने के समय, सीधे/खण्डीय सवारी डिब्बों आदि को चालू करने/रद्द करने के संबंध में विस्तृत जानकारी के लिए अक्तूबर, १९७६ की समय सारणी को देखें जो रेलवे बुकिंग/आरक्षण / पूछताछ कार्यालयों तथा महत्वपूर्ण स्टेशनों के बुक स्टालों पर बिक्री के लिए उपलब्ध हैं ।

७६४२ **--मुख्य परिचालन अधीक्षक**



जयको का अद्भुत नया मॉडल ज़ीलर ३ स्टार दीवार घड़ी



उचित मूल्य पर। हर सजावट के अनुकूल। आकर्षक रंगों में।

* जर्मन तकनीक द्वारा निर्मित
* ६ ज्वैल की लीवर मशीन
* किसी भी प्रकार से लगाने पर सही समय

जयको

दीवार घड़ियां व टाइमपीस

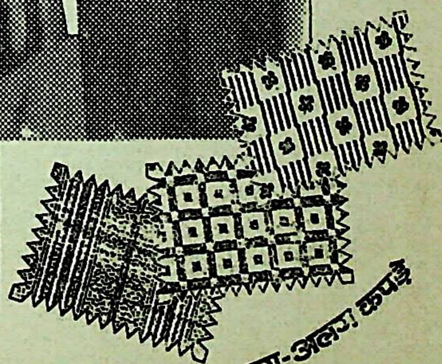
सभी प्रमुख घड़ी विक्रेताओं के पास उपलब्ध

जैना टाइम इण्डस्ट्रीज़ (प्रा०) लि०
७/३२, दरियागंज, दिल्ली ११०००६

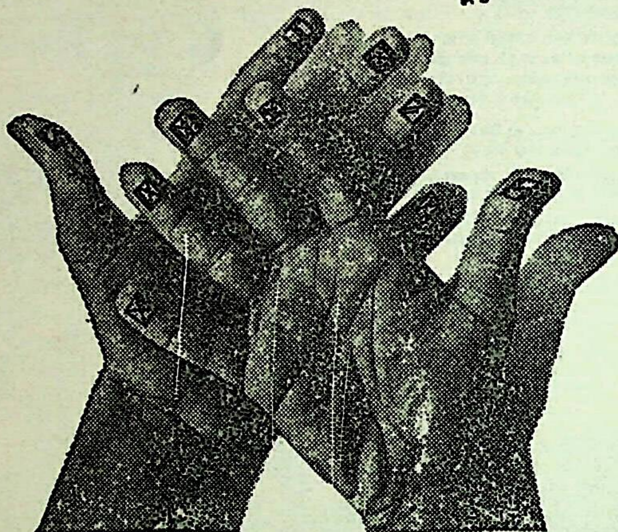

ज़्यादा शक्ति
भरपूर झाग
ताज़ी खुशबू
नया फ़ॉरमूला सफ़ेद डेट
डेट











भारत की संसार को सबसे उपयोगी देन

बहुत पहले मनुष्य पत्थरों को आधार बना कर अपनी चीजें गिना करता था. धीरे-धीरे उसने हाथ की अंगुलियों का सहारा लेकर गिनना शुरू किया. लेकिन इस तरह वह दस से आगे नहीं गिन सकता था.

भारत ने ही सबसे पहले दस चिह्नों द्वारा मनुष्य को गिनना सिखाया और इस प्रकार उसे अंगुलियों द्वारा गिनने के बन्धन से मुक्त कर दिया. मानवता को भारत द्वारा दिये गए उपहारों में सबसे सूक्ष्म लेकिन बहुत ही अनमोल उपहार है—शून्य का चिह्न. शून्य के प्रयोग ने गिनती के क्षेत्र में एक क्रान्ति पैदा कर दी.



ये दस अंकों के चिह्न पूजा के काम में लाए जाने वाले यज्ञ-कुण्ड के चौकोर आकार से लिए गए हैं. हर चिह्न का मूल्य अंक में उसके स्थान पर निर्भर करता है. इन चिह्नों द्वारा सब कुछ गिना जा सकता था.

ये अंक सम्राट अशोक के युग (२७३-२३२ ई० पू०) में खूब प्रचलित थे. इसके एक हज़ार साल बाद मोहम्मद इब्न-ए-मूसा अलख्वारज़मी ने बगदाद में इनका प्रचार किया. अरबों के यहां प्रयोग में रहने के बाद ये अंक यूरोप पहुंचे. गिनती को सादा और आसान बनाकर इन चिह्नों ने अनगिनत को भी गिन डाला.

इसके साथ ही मनुष्य अपनी विभिन्न ज़रूरतों के अनुसार अंकों और गणित की दूसरी समस्याएं सुलझाने के लिए नए नए साधनों की खोज भी करता रहा.

आधुनिक युग के प्रगतिशील साधनों में कंप्यूटर ने हमको इस योग्य बना दिया है कि हम गिनती और आंकड़ों के कठिन से कठिन प्रश्नों को क्षण भर में हल कर सकते हैं. इस तरह जीवन की उन समस्याओं को हल करना संभव हो गया जिनका पहले कोई हल नहीं था.

भारत में बने आई बी एम कंप्यूटर देश की विकास-शक्ति को लाखों करोड़ों गुना बढ़ाने में सहायक हो रहे हैं.

मानव-शक्ति को और अधिक बढ़ाने के लिए आज जीवन के हर क्षेत्र में — प्रगति के हर काम में मनुष्य कंप्यूटर का उपयोग कर रहा है.

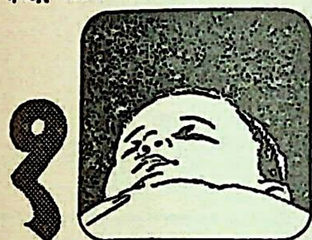
IBM World Trade Corporation (Incorporated in the U.S.A.)

IBM

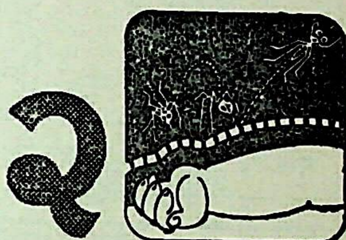
केवल ओडोमॉस ही दो तरह से आपकी निश्चिंत सुरक्षा करता है, मच्छरों को दूर भगाकर...

रातभर चैन की नींद सुलाता है!

ओडोमॉस जैसी सुरक्षा आपको अन्य किसी मच्छर-प्रतिरोधक से नहीं मिल सकती:



इसकी गंध मच्छरों को पास नहीं फटकने देती।



इसमें मिला अद्भुत तत्व रात भर आपकी त्वचा को एक आवरण देकर मच्छरों को दूर रखता है।

इसीलिए ओडोमॉस आज भारत में सर्वाधिक बिकने वाला मच्छर-प्रतिरोधक है।

मच्छरों के हमले से बचिये

ओडोमॉस

की सुरक्षा पाइये!



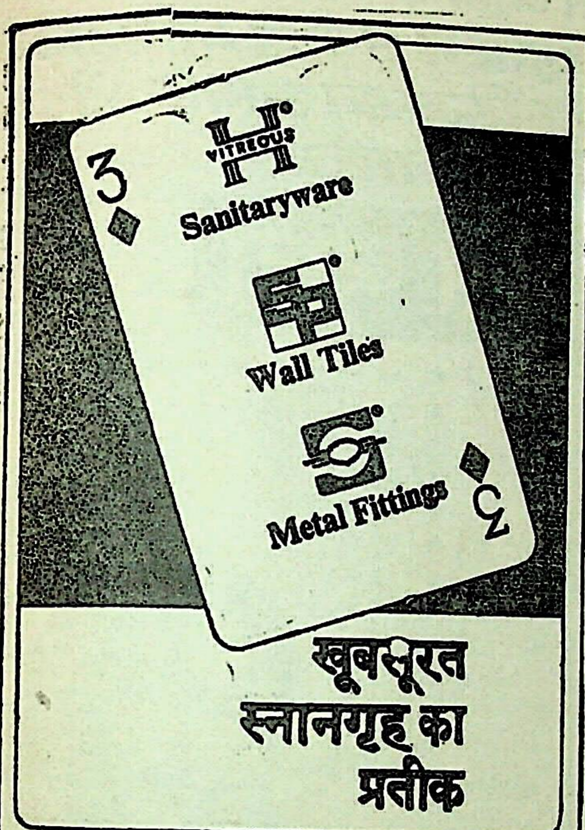
CHAITRA-BLS-86 HIN

बापू ने कहा था

- "आत्म संयम, अनुशासन और बलिदान के बिना राहत या मुक्ति की आशा नहीं की जा सकती। अनुशासन-हीन बलिदान से भी काम नहीं चलता।
- स्वराज्य में स्वेच्छाचार के लिए बिल्कुल स्थान नहीं।
- किसी आदमी का अपने हाथ में कानून लेना बिल्कुल बेजा और लोकतंत्र के खिलाफ है।
- अनुशासन, सहिष्णुता और एक दूसरे के प्रति सम्मान के भाव के बिना लोकतांत्रिक जीवन-पद्धति असम्भव है।"

-महात्मा गांधी

सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश, द्वारा प्रसारित


VITREOUS
Sanitaryware
Wall Tiles
Metal Fittings
खूबसूरत
स्नानगृह का
प्रतीक

पैरिस ब्यूटी के 12 आकर्षक डिज़ाइनों में से कोई भी पहनिये... प्रत्येक डिज़ाइन आपके सौंदर्य में निखार लाएगा!

पैरिस ब्यूटी

- उपहार सेट ब्रा.- रु. २१.००. पैंटी- रु. ११.२५
- कुसुम रु: 28 75
- रोज़ी रु: 26 60
- सुमन रु: 25 20
- आम्रपाली रु: 21.00
- ड्रीम गर्ल रु: 19.90
- पद्मिनी रु: 14.60
- स्वीटी रु: 13.25
- चन्द्र किरण रु: 9.10
- सुनीता रु: 7 75
- अर्चना रु: 7.50
- शीला रु: 6.10

(कर अतिरिक्त)



निर्माता :
पैरिस ब्यूटी ब्रेसियर्ज कं०,
दिल्ली-110007

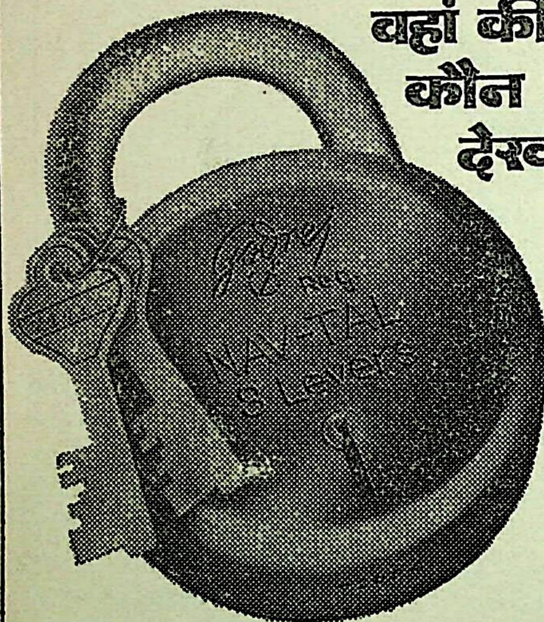
विक्रेता :
पैरिस ब्यूटी
सेल्स कार्पोरेशन
करोल बाग़,
नई दिल्ली- 110005
फोन : 666594

TRENDS

गोदरेज नव-ताल

१८ साल से सबसे लोकप्रिय ताला है।

क्योंकि जहां सवाल सुरक्षा का हो, वहां कीमत कौन देखता है?



जी हां, गोदरेज नव-ताल, साधारण तालों से ज्यादा कीमती है, मगर एक ऐसे ताले के लिए जिस पर पूरी तरह निर्भर रहा जा सके, थोड़ा ज्यादा खर्च करना भला किसे अखरता है। यही कारण है कि गोदरेज नव-ताल सबसे लोकप्रिय ताला है, क्योंकि इस पर आप पूरा भरोसा कर सकते हैं। मशीन द्वारा दबाकर बनाये गये इसके पीतल के बिना जोड़ वाले ढांचे में कोई कमजोर 'रिवेट' नहीं होती। जस्तेदार, जंग-प्रतिरोधक फौलादी कड़ी तोड़ी नहीं जा सकती। इसमें डाइ द्वारा कटे ८ लिवर हैं। इसलिए नव-ताल सिर्फ अपनी चाबी से खुलता है। ऐसी कई खूबियों के कारण ही नव-ताल अपनी कीमत से कहीं ज्यादा अदा करता है।

आकार:
४० मि.मी.-५ लिवर; ५० मि.मी.-६ लिवर;
६५ मि.मी.-७ लिवर; ८५ मि.मी.-८ लिवर।

Godrej

मशहूर चीजों के निर्माता— गोदरेज

आपको ब्याज पर भी ब्याज मिलता है?

स्टेट बैंक रिइन्वेस्टमेंट प्लान

में पूंजी (मूलधन) पर तो ब्याज मिलता है ही, उसके ब्याज पर भी ब्याज मिलता है

पैसा कमाने के लिये आप जी तोड़ मेहनत करते हैं। अगर आप चाहते हैं कि अब पैसा आपके लिये कमा कर दिखाए, तो स्टेट बैंक चले आइये। रु. १०००/- (या इसकी गुणक रक़म) स्टेट बैंक के रिइन्वेस्टमेंट प्लान में लगाइये फिर देखिए आपको ब्याज पर भी ब्याज मिलने लगेगा।

आपको अपनी जमा की गयी रक़म पर तो ब्याज मिलता है ही, इस मासिक ब्याज पर भी नया ब्याज मिलता है।

आपकी अपनी कई जिम्मेदारियां हैं जैसे बेटी की शादी, लड़के की उच्च शिक्षा और आपकी अपनी जिन्दगी की शान। इन जिम्मेदारियों को निभाने के लिये सही वक़्त पर उचित रक़म चाहिये। इसके लिये आप इतने अरसे के लिये जमा कीजिये कि आपकी बचत की रक़म बढ़कर उतनी हो जाय। पैसे की अचानक जरूरत पड़ भी जाय और वक़्त बहुत कम हो तो आप अपनी जमा रक़म में से 'लोन' ले सकते हैं।

टैक्स-लाभ

ब्याज पर इन्कम टैक्स (आय कर) आप साल दर साल दे सकते हैं— ऐसा नहीं है कि जमा खाते की अवधि पूरी होने पर सारा ब्याज इकट्ठा देना पड़े। बैंक में जमा की गयी रक़म पर या अन्य अमुक प्रकार की लागत पर हर साल रु. ३,००० तक की ब्याज की कुल रक़म पर कोई आयकर नहीं लगता।

> आपकी रोकी गयी वेतन/मँहगाई भत्ते की रक़म वापिस मिलने पर उससे दीर्घकालीन लाभ उठाने का सुअवसर।
>
> अपनी रक़म को हमारी स्टेट बैंक की पुनर्विनियोग (रिइन्वेस्टमेंट) योजना में लगाइये।
>
> रु. १०० या उससे अधिक की राशि (रु. १० के गुणक में) स्वीकार की जाती है।

महीने	स्टेट बैंक रिइन्वेस्टमेंट प्लान में रु. १००० की रक़म से ब्याज पर ब्याज समेत मिलनेवाली कुल रक़म
११	रु. १०९०.२२
२४	रु. ११८०.७१
३०	रु. १११८.७५
४९	रु. १३४२.१४
६१	रु. १६१९.०२
६२	रु. १६७२.८४
७२	रु. १८१७.५९
८४	रु. २००७.९२
९६	रु. २११८.२७
१०८	रु. २४५०.४५
१२०	रु. २७०७.०४

अधिक जानकारी के लिये देशभर में स्थित स्टेट बैंक के ४९०० कार्यालयों में से किसी भी शाखा में पधारिये।



रक्तदान कीजिये किसीकी जीवन-रक्षा कीजिये



स्टेट बैंक

SBI-22-203 R Hin

दूसरी एयरलाइनों के मुक़ाबले एयर-इंडिया अब आपके ज़्यादा क़रीब है!



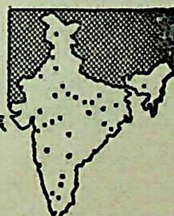
भारत भर में स्थित ४० दफ़्तर. आपकी बेहतर और तत्पर सेवा के लिए.

आगरा
फ़ोन : ७३४३४
अहमदाबाद
फ़ोन : २३१००, २२२३२
अमृतसर
फ़ोन : ४६१२२
बैंगलोर
फ़ोन : ७५१४३, ७५१४४
बड़ोदा
फ़ोन : ६५६७९
भोपाल
फ़ोन : ६११५५
भुवनेश्वर
फ़ोन : ५०५३३, ५०५४४
बंबई
फ़ोन : २९९६९६
कलकत्ता
फ़ोन : २४-२३५६
चंडीगढ़
फ़ोन : २८२१२

कोचिन
फ़ोन : ३१२९५
कोयम्बतूर
फ़ोन : २३९३३
दार्जिलिंग
फ़ोन : ३५५
दिल्ली
फ़ोन : ४४२११
दुर्गापुर
फ़ोन : २४८०
गोआ
फ़ोन : ३०८१
हैदराबाद
फ़ोन : ३६७४७, ३३७८७
इंदौर
फ़ोन : ५३५५
जयपुर
फ़ोन : ६५५५९
जमशेदपुर
फ़ोन : ३८०९

जोरहाट
फ़ोन : ११२८
जालंधर
फ़ोन २६६९
कानपुर
फ़ोन : ६४४३२
लखनऊ
फ़ोन : २६१७१
लुधियाना
फ़ोन : २०२१
मद्रास
फ़ोन : ८६१९३
मदुरई
फ़ोन : २४९४७
मंगलोर
फ़ोन : ४६६९
मोगा
फ़ोन : २८५३
मुरादाबाद
फ़ोन : १२९४

नागपुर
फ़ोन : ३३२४१, ११९६१
नवांशहर
फ़ोन : १०२
पटना
फ़ोन : २२७१९
पूना
फ़ोन : २६३३६
रांची
फ़ोन : २१८४१
श्रीनगर
फ़ोन : ६१४१
सूरत
फ़ोन : २८७५९
त्रिवेन्द्रम
फ़ोन : ६१७७६
वाराणसी
फ़ोन : ६४१४६, ६६११६
विशाखापट्टनम
फ़ोन : ४६६५



इनमें से किसी भी दफ़्तर या अपने ट्रैवल एजेंट से संपर्क कीजिए.

एयर-इंडिया

दाँतों के डाक्टरों की राय में

नियमित रूप से दाँत ब्रश करने और मसूढ़ों की मालिश करने से मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न दूर ही रहती है

देखिए, फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट नियमित इस्तेमाल करनेवालों ने अपने आप क्या लिखा है :

"...मेरी पत्नी को दाँतों में बड़ी पीड़ा थी...लेकिन जबसे उसने फ़ोरहॅन्स इस्तेमाल करना शुरू किया, इतना अच्छा रहा कि अब किसी को भी दाँत या मसूढ़ों में तकलीफ़ होते ही वे फ़ोरहॅन्स उपयोग करने की सलाह देती हैं। यही क्यों, इंग्लैंड में मेरे भाई हैं, उन्होंने भी भारत से फ़ोरहॅन्स के ६ ट्यूब भेजने के लिए बार बार लिखा है। (सही) टी. जी. एम्. डी'सूज़ा
बम्बई

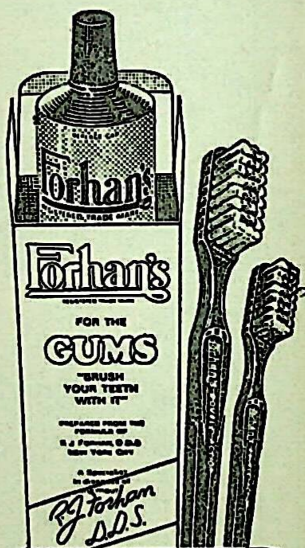
'...राजमहेन्द्री के एक दाँतों के डाक्टर हैं...उन्होंने मुझे दाँतों व मसूढ़ों की भलाई के लिए फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट इस्तेमाल करने की सलाह दी। मैंने फ़ौरन ऐसा ही किया। थोड़े ही दिनों में साँस की दुर्गन्ध जाती रही, मसूढ़े फिर अच्छे हो गये। तब से, सच मानिए, मैं ही नहीं, मेरे पूरे परिवार के ६ लोग फ़ोरहॅन्स ही इस्तेमाल करते हैं और मुझे पूरा विश्वास है कि हमारी यह आदत और हमारी यह आस्था पीढ़ियों तक चलती रहेगी।' (सही) पी. जे. लाजार
चिराला, आन्ध्र प्रदेश

(इन पत्रों की फ़ोटोस्टॅट कॉपी आप ज्यॅफ्री मैनर्स एण्ड कं. लि. के किसी भी कार्यालय में देख सकते हैं।)

दाँतों की सही देखभाल के लिये हर रोज रात और सवेरे अपने दाँतों को ब्रश करने और मसूढ़ों की मालिश करने के लिये फ़ोरहॅन्स इस्तेमाल कीजिए।

मुफ़्त! 'आपके दाँतों और मसूढ़ों की रक्षा' नामक रंगीत सूचना-पुस्तिका। अपनी प्रति प्राप्त करने के लिए (डाक-खर्च के लिए) २५ पैसे के टिकट साथ भेजकर इस पते पर लिखिए : मैनर्स डेण्टल एडवाइज़री ब्यूरो, डिपार्टमेंट T 123 पोस्ट बैग नं. ११४६३, बम्बई-४०० ०२० अपनी पसन्द की भाषा अवश्य लिखिए।

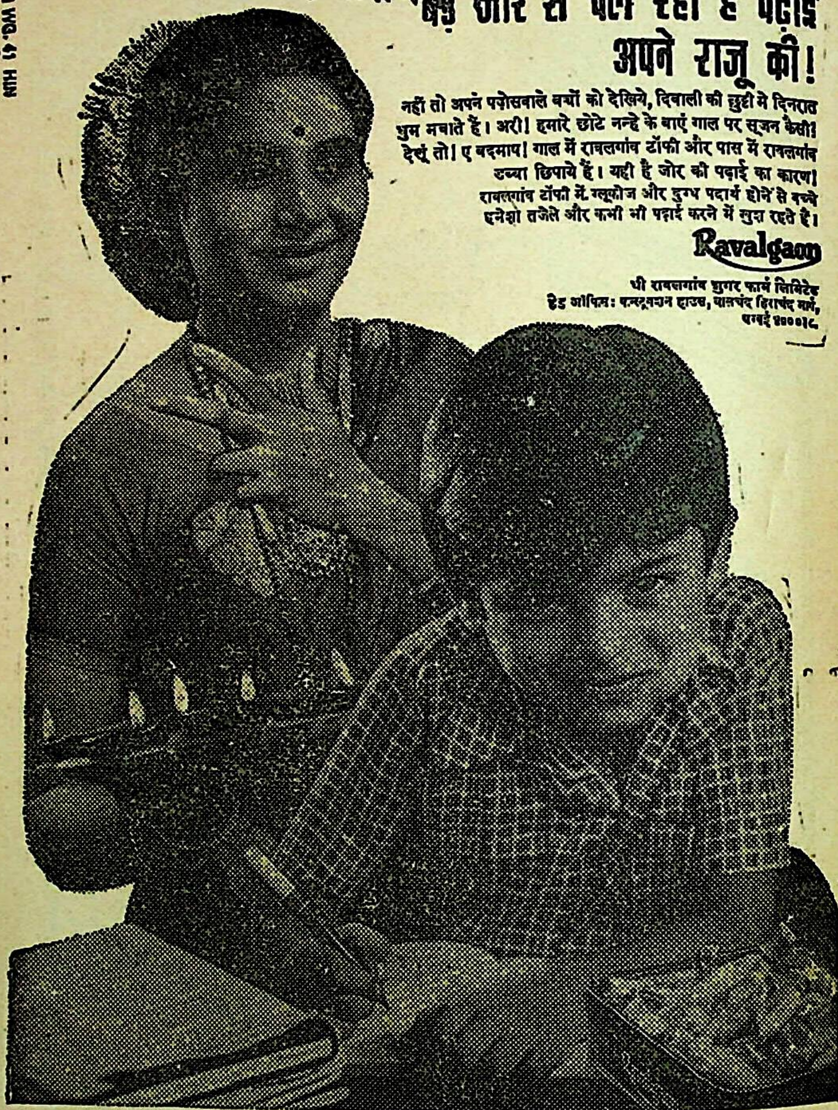




फ़ोरहॅन्स

दाँतों के डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट

160F-152 HN.


बड़े जोर से चल रही है पढ़ाई
अपने राजू की!
नहीं तो अपने पड़ोसवाले बच्चों को देखिये, दिवाली की छुट्टी मे दिनरात धुम मचाते हैं। अरी! हमारे छोटे नन्हे के बाएं गाल पर सूजन कैसी! देखूं तो! ए बदमाश! गाल में रावलगांव टॉफी और पास में रावलगांव डब्बा छिपाये हैं। यही है जोर की पढ़ाई का कारण! रावलगांव टॉफी में ग्लूकोज और दुग्ध पदार्थ होने से बच्चे हमेशा तजेले और कभी भी पढ़ाई करने में जुटे रहते है।
Ravalgaon
दी रावलगांव शुगर फार्म लिमिटेड
हेड ऑफिस: कन्स्ट्रक्शन हाउस, वालचंद हिराचंद मार्ग, बम्बई ४०००१८

चलते चलते

● सुशील कालरा













रजि. नं. डी.-(सी)-१७२

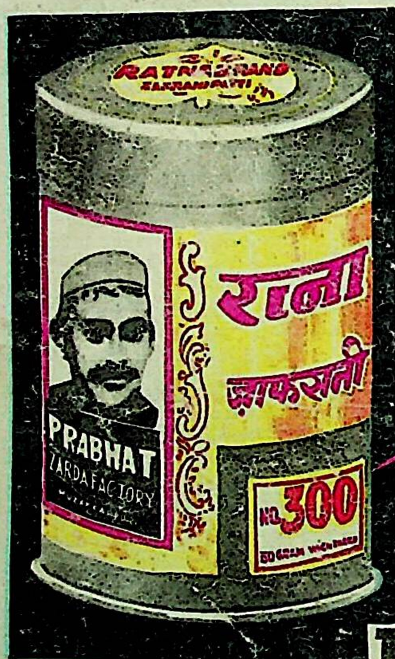


नया पैकिंग, नई शान.



रजिस्टर्ड

रत्नाछाप



ज़ाफ़रानी पत्ती

नं. 300

प्रभात ज़र्दा फैक्ट्री

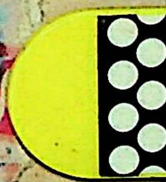
मुजफ्फरपुर,(बिहार).

कादम्बिनी
भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका
नवम्बर १९७३

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय
अस्सी, वाराणसी।







...ते बचपन का ...थी–इन्क्रिमिन*!

नया पैं...

रजिस्टर्ड



Incremin*
syrup

बढ़ता बचपन!

ड्रॉप्स–२ महीने से २ साल तक के बच्चों के लिये।
सिरप–१४ वर्ष तक के बच्चों के लिये।

...उत्साह, ये चुस्ती, ये फुर्ती...ये हंसते ...रुस्त बच्चे...इन दिनों जब इनका शरीर ...रात चौगुनी गति से बढता और ... होता है, इन्हें इन्क्रिमिन जरूर दीजिये। ...यक विटामिन, लोहतत्व और आवश्यक ...नो एसिडस युक्त इन्क्रिमिन बढ़ते बच्चों के ...बहुत आवश्यक है।

इन्क्रिमिन*

इन्क्रिमिन टॉनिक – बढ़ते बच्चों के लिये वरदान!

डॉक्टरों का विश्वासपात्र नाम (Lederle) सायनामिड इन्डिया लिमिटेड का एक विभाग।

* अमेरिकन सायनामिड कम्पनी का रजिस्टर्ड ट्रेड मार्क





मनोरंजन के लिए उत्कृष्ट साहित्य ! प्रत्येक वर्ग के पाठक की सुविधा के लिए कम मूल्य !

स्टार पाकेट बुक्स

हर तीसरे मास दस नई एवं रोचक पुस्तकें

अब सितम्बर में प्रस्तुत करते हैं

आप के प्रिय लेखकों की

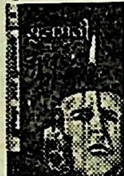
ये नई स्टार बुक्स

स्वप्न सुन्दरी



मधुकर

सुलगती रात



लोकदर्शी

अग्नि परीक्षा



गुरुदत्त

समाजवाद से सावधान



भगवान रजनीश

दामन और आग



राजवंश

खून के शोले



गुप्तदूत

मिलन



समीर

अचला



सेठ गोविन्द दास

बन्द दरवाज़ा



अमृता प्रीतम

दगाबाज़ खिलाड़ी



इंस्पेक्टर गिरीश

प्रत्येक का मूल्य २/- (अग्नि परीक्षा ३/- की है)

अमेरिका और योरुप की पद्धति पर नई एवं मनोरंजक साज-सज्जा में हिन्दी की सर्वाधिक लोकप्रिय सीरीज (विक्रेता बंधु नियमावली हेतु लिखें)

स्टार पाकेट बुक्स

देश भर के बुकस्टालों पर उपलब्ध है



स्टार पब्लिकेशंज (प्रा०) लि०
आसफ अली रोड, नई दिल्ली

Jupiter

"चली रे चली रे बारात चली रे"



छोटे बच्चे न जाने किन-किन ख्वाबों में खो जाते हैं। इस मुन्नी को ही देखिए न ! उसने अपने गुड्डों को सजाकर बारात सजा ली है। मानो उसने एक नया सपना अपनी आँखों के सामने खड़ा किया हैं। और कुछ ही सालों में यह मुन्नी दुल्हन बनेगी। उसकी बारात भी यों ही सजधज कर निकलेगी, खूब बाजे बजेगे। मेहमानों की दुआओं से पंडाल गूंज उठेगा। यह सपना अवश्य साकार होगा क्योंकि उसके पिता ने बीमा पालिसी लेकर पहले से प्रबंध कर रखा हैं। आज ही निश्चित अवधि (विवाह) पालिसी लेकर आप भी अपनी मुन्नी के लिए प्रबंध कीजिए।



जीवन बीमा –
सपनों को साकार बनानेवाला साधन!

PNB/LIC-3.72-C

मानव के अभियान



भारत की संसार को सबसे उपयोगी देन

बहुत पहले मनुष्य पत्थरों को आधार बना कर अपनी चीजें गिना करता था. धीरे-धीरे उसने हाथ की अंगुलियों का सहारा लेकर गिनना शुरू किया, लेकिन इस तरह वह दस से आगे नहीं गिन सकता था.

भारत ने ही सबसे पहले दस चिह्नों द्वारा मनुष्य को गिनना सिखाया और इस प्रकार उसे अंगुलियों द्वारा गिनने के बन्धन से मुक्त कर दिया. मानवता को भारत द्वारा दिये गए उपहारों में सबसे सूक्ष्म लेकिन बहुत ही अनमोल उपहार है—शून्य का चिह्न. शून्य के प्रयोग ने गिनती के क्षेत्र में एक क्रान्ति पैदा कर दी.

1 2 3 4 5

6 7 8 9 0

ये दस अंकों के चिह्न पूजा के काम में लाए जाने वाले यज्ञ-कुण्ड के चौकोर आकार से लिए गए हैं. हर चिह्न का मूल्य अंक में उसके स्थान पर निर्भर करता है. इन चिह्नों द्वारा सब कुछ गिना जा सकता था.

ये अंक सम्राट अशोक के युग (२७३-२३२ ई० पू०) में खूब प्रचलित थे. इसके एक हजार साल बाद मोहम्मद इब्न-ए-मूसा अलख्वारज्मी ने बगदाद में इनका प्रचार किया. अरबों के यहां प्रयोग में रहने के बाद ये अंक योरोप पहुंचे. गिनती को सादा और आसान बनाकर इन चिह्नों ने अनगिनत को भी गिन डाला.

इसके साथ ही मनुष्य अपनी विभिन्न जरूरतों के अनुसार अंकों और गणित की दूसरी समस्याएं सुलझाने के लिए नए नए साधनों की खोज भी करता रहा.

आधुनिक युग के प्रगतिशील साधनों में कंप्यूटर ने हमको इस योग्य बना दिया है कि हम गिनती और आंकड़ों के कठिन से कठिन प्रश्नों को क्षण भर में हल कर सकते हैं. इस तरह जीवन की उन समस्याओं को हल करना संभव हो गया जिनका पहले कोई हल नहीं था.

भारत में बने आई बी एम कंप्यूटर देश की विकास-शक्ति को लाखों करोड़ों गुना बढ़ाने में सहायक हो रहे हैं.

मानव-शक्ति को और अधिक बढ़ाने के लिए आज जीवन के हर क्षेत्र में—प्रगति के हर काम में मनुष्य कंप्यूटर का उपयोग कर रहा है.

IBM

mcm/136/72 IBM World Trade Corporation (Incorporated in the U.S.A.)

समय के हस्ताक्षर

सम्पादक की ओर से
विद्वान लेखकों
और जिज्ञासु पाठकों को
दीपावली की
अनंत शुभकामनाएं

कादम्बिनी

वर्ष १४ : अंक १
नवम्बर, १९७३

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

कथा-साहित्य

कविताएं

सार-संक्षेप

स्तम्भ

मुखपृष्ठ : छायाकार—डॉ. एम. एस. अग्रवाल
मॉडल : नीलम विरमानी

क्यों और क्यों नहीं ?

पंद्रहवें लेखक

इलाचन्द्र जोशी

इस लेखमाला के अंतर्गत अमृतलाल नागर, सुमित्रानंदन पंत, अज्ञेय, बच्चन, यशपाल, भारती, जैनेन्द्रकुमार, दिनकर, 'रेणु', महादेवी वर्मा, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी एवं उपेन्द्रनाथ 'अश्क' के संबंध में पाठकों के प्रश्न एवं मोहन राकेश के संबंध में पाठकों के पत्र आमंत्रित किये जा चुके हैं, अब पंद्रहवें लेखक हैं : इलाचंद्र जोशी।

इस लेखमाला का उद्देश्य लेखक तथा पाठक को आमने-सामने लाने का प्रयास है। प्रत्येक अंक में हम एक लेखक के नाम की घोषणा करेंगे, पाठक उस लेखक के साहित्य, जीवन, जीवन-दर्शन, पात्र और पात्रों की कमियों अथवा अच्छाइयों, कृतियों में उपलब्ध विरोधाभासों या जीवन से संबंधित किसी भी विषय पर प्रश्न पूछ सकते हैं।

एक प्रश्नकर्ता दो से अधिक प्रश्न नहीं पूछ सकेगा। लिफाफे के ऊपर एक कोने पर यह अवश्य लिखिए—'क्यों और क्यों नहीं' स्तंभ के लिए। प्रश्न संपादक के पास पहुंचने की अंतिम तिथि है १५ नवंबर, १९७३। इस अंक के लिए

इलाचन्द्र जोशी

प्रमुख कृतियां : संन्यासी, प्रेत और छाया, मुक्तिपथ, ऋतुचक्र, भूत का भविष्य

शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइए

• विशालाक्ष

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइए और पृष्ठ ३० पर दिये गये उत्तरों से मिलाइए

१. निगड़ित—क. बंधा हुआ, ख. जुड़ा हुआ, ग. सटा हुआ, घ. पकड़ा हुआ।

२. बानगी—क. उदाहरण, ख. बयाना, ग. नतीजा, घ. नमूना।

३. सुष्ठु—क. सुडौल, ख. भली भांति, ग. उत्कृष्ट, घ. सुंदर।

४. आतुर—क. चिंतित, ख. दुर्बल, ग. रुग्ण, घ. आर्त।

५. ललाम—क. माथे का अलंकार, ख. लाल, ग. दर्शनीय, घ. मंजुल।

आपके शब्द-ज्ञान की परीक्षा

१२ या अधिक सही . . . . . जीनियस
११–९ सही . . . . उत्तम
८–६ सही . . . . साधारण

६. वर्चस्व—क. बड़प्पन, ख. माहात्म्य, ग. वरिष्ठता, घ. श्रेष्ठता।

७. ननुनच—क. शंका-अशंका, ख. किंतु-परंतु, ग. संकोच-विकोच, घ. निश्चय।

८. पण—क. प्रण, ख. जुआ, ग. दूकान, घ. टेक।

९. प्रवण—क. संकुल, ख. निरत, ग. प्रबल, घ. आविष्ट।

१०. विद्वत्कल्प—क. विद्वान ख. बहुम्मन्य, ग. अल्पविद्वान, घ. ज्ञानी।

११. परिधान—क पहनावा, ख. अलंकार, ग. ठाटबाट, घ. पहनने के वस्त्र।

१२. योगक्षेम—क. संरक्षण, ख. जीवन-निर्वाह, ग. सुख, घ. समृद्धि।

१३. यद्वातद्वा—क. परिश्रमपूर्वक, ख. अनमने ढंग से, ग. सोचकर, घ. जैसे-तैसे।

१४. आर्त—क. कातर, ख. दुःख-पीड़ित, ग. त्रस्त, घ. व्यग्र।

१५. अभिनिवेश—क. तन्मयता, ख. पैठ, ग. आत्मचिंतन, घ. अवगाहन।

१६. कौमारभृत्य—क. बच्चों की चिकित्सा, ख. परिचर्या, ग. मर्दन आदि, घ. धातृविद्या।

जो आदमी बहुत कम बोलता है और समय पर बोले गये एक ही संयत शब्द से किसी वाचाल की बोलती बंद कर देता है वह वास्तव में प्रतिभाशाली व्यक्ति या नायक है। —लैवेतर

शब्द-सामर्थ्य के उत्तर

१. **निगड़ित**—क. बंधा हुआ, जिसके बेड़ियां पड़ी हों, संयुक्त। यह प्रश्न उससे निगड़ित है। भारी लाट से निगड़ित होने पर भी कैदी भाग गया। निगड़।

२. **बानगी**—घ. नमूना, जो वस्तु बचने के पूर्व दिखाया जाता है। यही है भावी कार्य की बानगी!

३. **सुष्ठु**—ख. भली भांति, उत्तम रीति से। सुष्ठु सज्जित वालकों की पंक्ति। सौष्ठव।

४. **आतुर**—ग. रुग्ण, पीड़ित, व्याकुल, घबराया हुआ। दर्शनों के लिए आतुर। भयातुर, आतुरालय, आतुरशाला।

५. **ललाम**—क. माथे का अलंकार, सुंदर, ललित। ललाम ललना, ललाम दृश्य।

६. **वर्चस्व**—घ. श्रेष्ठता, तेजस्विता। उनमें किसका वर्चस्व कौन स्वीकार करता? वर्चस्वी, वर्चस्विनी, वर्चस।

७. **ननुनच**—क. शंका-अशंका, सही-गलत संबंधी हिचकिचाहट। सभासदों ने नेता का वक्तव्य ननुनच के विना स्वीकार कर लिया। ननु, नच। न+नु, न+च।

८. **पण**—घ. टेक, बाजी। उसकी समस्त प्रतिष्ठा पण पर है।

९. **प्रवण**—ख. निरत, प्रवत्त। भाव-प्रवण, जनता को जाग्रत करके उसे कार्य-प्रवण बनाना होगा।

१०. **विद्वत्कल्प** — ग. अल्पविद्वान, थोड़ा-सा पढ़ा-लिखा, विद्वत्व का चोला पहने हुए। ये विद्वत्कल्प वहां जाकर क्या करेंगे, कोई अच्छा विद्वान जाए। विद्वद्देशीय, विद्वद्देश्य।

११. **परिधान**—घ. पहनने के वस्त्र। वल्कल ही उनका परिधान था। परिधेय, परिहित।

१२. **योगक्षेम**— अ. जीवन-निर्वाह, कुशल-मंगल। भक्तों के योगक्षेम का भार भगवान पर है।

१३. **यद्वातद्वा**—घ. जैसे-तैसे, भले-बुरे, अनिश्चित, अनियमित रूप में—तार देखते ही यद्वातद्वा प्रबंध करके निकल पड़ा। यत्, तत्, वा।

१४. **आर्त**—ख. दुःख-पीड़ित, दुःखी, पीड़ित। वह आर्त होकर आया है। आर्ति।

१५. **अभिनिवेश** — क. तन्मयता, लीनता, मनोयोग, पक्की लगन, गहरी भक्ति। तुम्हारा भावाभिनिवेश कहां गया? असत्य वस्तु में अभिनिवेश क्यों? अभिनिविष्ट, अभिनिवेशी।

१६. **कौमारभृत्य**— घ. धातृविद्या, बच्चों के लालन-पालन और चिकित्सा का शास्त्र। कौमारभृत्य आयुर्वेद का बहुत बड़ा अंग है। कौमारिकेय, भृत्य। ●

—'शक्ति का मूल स्रोत एक व्यक्ति है या एक संगठन ?'

—'संगठन में शक्ति है— एक धागे को तोड़ना आसान है, किंतु धागों का समुच्चय नहीं तोड़ा जा सकता।'

—'मैं इसे अस्वीकार करता हूं, एक कमजोर व्यक्ति . . . ! वह तो धागा भी नहीं तोड़ सकता और एक बलशाली . . . ! वह उतनी ही आसानी से भारी रस्सा तोड़ देता है।'

—प्रकाश हमेशा एक लघु किरण के रूप में आता है। शक्ति समूह में नहीं, एक निर्भय व्यक्ति के भीतर होती है।

—सूर्य एक सार्वजनिक सत्य है। वह ज्ञानियों को वह प्रकाश नहीं दे सकता जो उनके मन को चाहिए। और फिर अपने जाने के बाद तो वह सभी को अपंग बनाकर अंधेरा दे जाता है।

—उस समय हम एक दीपक की खोज करते हैं।

काव्य-चिंतन

—इसलिए शक्ति का स्रोत एक व्यक्ति का बल है। एक बलशाली व्यक्ति सारे समाज पर सत्ता जमा लेता है।

—एक दीपक की नन्हीं ज्योति अगाध अंधकार को मिटा देती है।

—इसलिए मीरा ने कहा था—'सतगुरु दीधो मारो दीवड़ो बले रे दीवड़ो।' हे सद्गुरु ! तुम्हारा दिया हुआ दीपक जल रहा है। लाखों चंद्रमा चमकते हैं, करोड़ों सूर्य उदित हैं, परंतु मेरे दीपक के सामने वे सब फीके हैं।

—तब मात्स्य-न्याय यह नहीं रहता, 'जिसकी लाठी उसकी भैंस', वह बन जाता है, 'जिसके पास दीपक उसी के पास रोशनी।'

—जीने के लिए रोशनी आवश्यक है। कहते हैं प्राण दीपक की लघुतम ज्योति से भी छोटा है, लेकिन वह समूचे शरीर को रोशनी देता है।

—रोशनी का आलोक अज्ञान का क्षय करता है, क्योंकि :

रोशनी—जीवनी-शक्ति है

रोशनी—पसीने की हंसी है
रोशनी—आदमी का बल है
रोशनी—शहीदों की उमर है
एक रोशनी—मौसम बदल देती है



—रोशनी पाने के लिए दीप की स्वीकृति आवश्यक है।

—जब वह जलता है तब आंधियों और बिजलियों के बीच भी अंधेरा ढल जाता है।

—दीप हर कैद के बाहर निकलकर रहता है।

—एक छोटा-सा दीप महासागर का प्रकाश-स्तंभ है।

—ऐसा ही दीप जुगनू के भीतर जलता है और वह बियाबान अंधेरे को पीता जाता है।

—इस तथ्य को आदिपुरुष ने भी समझा था। उसने प्रार्थना की थी, 'हे सूर्य! तुम सहस्त्र किरणों से मेरे मार्गदर्शक बनो, परंतु जब जाने लगो तो धरती पर एक लघु किरण अवश्य छोड़ते जाओ, वरना तुम्हारे फिर लौटकर आने तक मेरी जीवन-गति समाप्त हो जाएगी।'

—सूर्य ने जाते-जाते अपनी एक किरण एक पत्थर में छोड़ दी।

—आदिपुरुष ने उसे उठाकर नाम दिया —चकमक।

—उसी से सभ्यता का विकास हुआ।

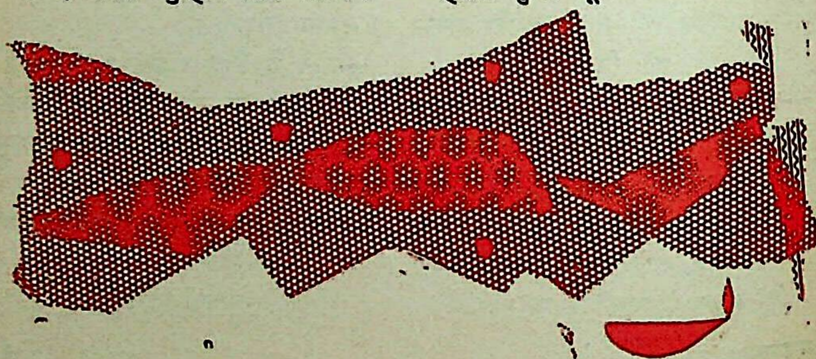
—उसी से अग्नि प्रज्वलित हुई और विज्ञान का रास्ता खुला।

—एक छोटा-सा चकमक पत्थर धरती के जागरण का गीत बन गया।

—इसी गीत में विज्ञान ने स्वर मिलाकर एक पिन दिया।

—हां, एक पिन . . . ! जो सारे कागजों को समेटकर रखता है, जो ढेर-से बिखरे हुए बालों को बांधता है।

—आदि-प्रेयसी ने अपने प्रेमी से सबसे पहली याचना की—'मेरे बालों को एक पिन से बांध दो'। जब उसने बांध दिया तो उसने मुसकराकर उसकी ओर देखा। उसने अपनी प्रेयसी के पिन में गुलाब का एक हंसता हुआ फूल खोंस दिया था।



—हमारी जिंदगी विडंबनाओं से भरी है। हम अकसर बड़ी-बड़ी बातों को देखते हैं और छोटी बातों के प्रति उदासीन हो जाते हैं, उनका मूल्य नहीं समझते।

—मूलभूत वस्तु है केंद्र को पकड़ना। माली जड़ सींचना छोड़कर पत्तों को सींचेगा तो क्या होगा?

—इसलिए हम लघुता में ही महत्ता को पहचानने की कोशिश करें, धीरे-धीरे हम महत्तम की ओर पहुंच जाएंगे।

—अंकगणित की सृष्टि भी इसी आधार पर हुई है: एक शून्य के साथ नौ अंक हैं और अनंत अंकों के आधार हैं।

● ●

—आओ हम एक-एक दीपक जलाएं। हमारे लघु दीप भीतर-बाहर का अंधेरा पी जाएंगे।

—तुम सुन रहे हो पटाखों की आवाजें! हम अंधकार पर विजय का पर्व ही तो मना रहे हैं, ये आवाजें हमारे पराक्रम और प्रभुता की प्रतीक हैं।

—लेकिन इसी अभिमान के बीच मैं राजसत्ता से अभी तक अनुत्तरित एक प्रश्न फिर पूछता हूं, 'महलों से झोपड़ियों तक इतने दीपक जल रहे हैं, फिर भी अंधियारे का शोर क्यों है? ... अंधियारे का शोर क्यों है? सभ्यता के शिखर पर बैठकर भी आज तुम निरुत्तर क्यों हो?'

राजेन्द्र अवस्थी

श्रद्धांजलि

दुर्गाप्रसाद खत्री, शिवचंद्र शर्मा एवं सज्जाद जहीर अब हमारे बीच नहीं रहे।

दुर्गाप्रसाद खत्री हिंदी के सुप्रसिद्ध उपन्यास 'चंद्रकांता' के लेखक बाबू देवकीनंदन खत्री के पुत्र थे तथा अपने पिता की भांति उन्होंने भी रहस्य, रोमांच एवं देशभक्ति से पूर्ण अनेक प्रसिद्ध उपन्यास लिखे थे। 'चंद्रकांता-संतति' के शेष भाग लिखने के अतिरिक्त उन्होंने 'भूतनाथ', 'रोहतासमठ', 'सफेद शैतान', 'मृत्युकिरण', 'रक्तमंडल' आदि उपन्यास रचे थे।

शिवचंद्र शर्मा एक समर्थ कवि, लेखक ही नहीं, एक सफल संपादक भी रहे थे। निरंतर संघर्षरत रहकर उन्होंने अनेक पत्रिकाओं का सफल संपादन किया एवं मौलिक साहित्य भी रचा। मृत्यु से कुछ समय पूर्व वे अपने ढंग की अकेली पत्रिका 'उत्खनक' का संपादन-प्रकाशन कर रहे थे।

मित्रों और परिचितों में 'बन्ने भाई' नाम से ख्यात सज्जाद जहीर उर्दू के प्रसिद्ध लेखक थे। गत मास रूस में उनका अचानक देहांत हो गया। उनके निधन से उर्दू साहित्य की गंभीर क्षति हुई है।

इन तीनों दिवंगत साहित्यकारों को 'कादम्बिनी' परिवार की श्रद्धांजलि।

—संपादक

दीपः

● डॉ. सुरेशव्रत राय

सृष्टि रचना का प्रथम दिवस । पलक मारते वह भी समाप्त होने लगा । अंधकार की कालिमा में दिन भर के सुहावने दृश्य धूमिल होने लगे । प्राणी विकल हो उठे । तब अस्ताचलगामी सूर्य ने सबको संबोधित करते हुए कहा, "मैं तो निश्चित विधान के अनुसार जा रहा हूं । थोड़ी देर में घटाटोप अंधकार छा जाएगा, मेरा कार्य कौन करेगा ? ब्रह्मा-जी तो बिना मेरे विकल्प की व्यवस्था किये सृष्टि बनाकर चले गये ।"

बड़ी सभा जुटी, अब क्या हो ? सबकी आंखें जीवन देने वाले 'मरुत' की ओर घूमीं ।

वायु ने कहा—"मैं सांस और समीर के रूप में जीवन अवश्य देता हूं परंतु प्रकाश मेरे पास नहीं है । हां, आंधी तूफान आने पर प्रकाशपुंज सूर्य भी छिप जाता है . . ." लोगों की दृष्टि अग्नि की ओर घूमी ही थी कि अग्नि ने निराश होकर कहा, "मेरा स्वभाव गरमी पहुंचाना अवश्य है । मैं भस्मीभूत कर सकता हूं परंतु हर क्षण द्युतिमान होकर राह दिखाने की क्षमता मेरे सामर्थ्य में कहां है ?" जल बेचारा



क्या बोलता ? उसने अपनी विवशता जतायी, "घनी बदली अथवा मूसलाधार वृष्टि के रूप में सूर्य को घुमड़ते काले मेघों के आवरण में ढककर दोपहरी को भी रात्रि में बदल देने की क्षमता मुझमें अवश्य है, परंतु प्रकाश से मेरा क्या नाता ?"

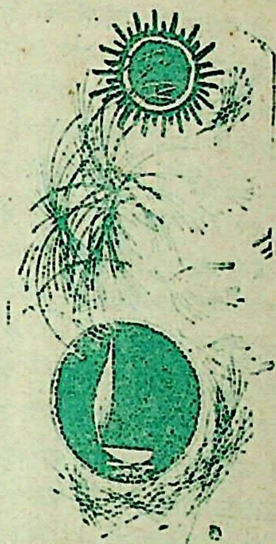
प्रत्येक ओर से निराश प्राणियों ने चंद्रमा की ओर याचना एवं आशाभरी दृष्टि से देखा । उसने कहा, "मुझमें थोड़ा-बहुत प्रकाश अवश्य है परंतु अत्यंत क्षीण, जो आकाश का आकाश में रह जाता है । पूर्णिमा के दो-एक दिन आगे-पीछे थोड़ा प्रकाश अवश्य होता है परंतु हर पंद्रह

दिनों पर मुझे अमावास्या आवरण में ले लेती है। अतः मेरे क्षीण प्रकाश से, वह भी महीने में दो, चार दिन-भला क्या काम चलेगा !"

चंद्रमा के इस उत्तर के बाद जैसे डूबते से तिनके का सहारा भी छिन गया। महारथियों के दो टूक उत्तर सुनकर सभा निराश हो गयी।

आत्मत्याग का साकार रूप

अनायास पीछे से एक क्षीण परंतु आत्मविश्वासपूर्ण स्वर ने सबका ध्यान उधर आकर्षित किया, "मैं अत्यंत तुच्छ हूं। सूर्य, अग्नि, वायु वरुण आदि के सम्मुख मेरी क्या गणना ! तथापि सूर्य भगवान के



एक ज्योतिः एक आत्मा

चले जाने के उपरांत उनके लौटने तक समस्त प्राणियों को प्रकाश देने, उन्हें राह दिखलाने का प्रयास मैं करूंगा।" यह स्वर था एक नन्हे-से दीपक का। और फिर उस दीपक के झिलमिलाते प्रकाश में समस्त प्राणियों के उल्लासमय मुखमंडल आलोकित हो उठे।

उस दिन से आज तक माटी का नन्हा-सा दीया, तनिक तेल और छोटी-सी वत्ती के सहारे सूर्य भगवान के अस्ताचलगामी होते ही यथाशक्ति संसार का मार्गदर्शन करता चला आ रहा है। अडिग विश्वास एवं कर्तव्यनिष्ठा का प्रतीक दीप, स्वयं तिल-तिलकर जलते हुए आखिरी दम तक दूसरों को प्रकाश देने के अद्वितीय आत्म-त्याग का साकार रूप, परहित स्वभाव का परिचायक है। कर्तव्य के प्रति असीम निष्ठावान और जागरूक है दीप की आत्मा।

आध्यात्मिक आलोक का पर्याय

अपनी इस निष्ठा के कारण केवल भारतीय संस्कृति और जीवन में नहीं, वल्कि विश्व के समस्त देशों में दीप अन-वरत साधना, ज्ञान, उल्लास और आध्या-त्मिक आलोक का प्रतीक बन गया है। दीप अग्नि पुंज का अंश है और ईश्वरीय ज्योति का पर्याय। ऋग्वेद में अग्नि की

अर्चना के संदर्भ में प्रकाश का उल्लेख मिलता है। मनुष्य के मन और आत्मा की ज्योति अग्नि का पर्याय है, जिससे जीवन और मार्गदर्शन दोनों प्राप्त होता है। यह सृष्टि सूर्य, चंद्र आदि ईश्वरीय ज्योति के प्रतिबिंब हैं। मुंडकोपनिषद् के अनुसार ब्रह्म प्रकाशयुक्त एवं देदीप्यमान है। साधना का एकमात्र लक्ष्य है—'तमसो मा ज्योतिर्गमय'।

शंकराचार्य और रामानुज ने भी ब्रह्म के स्वरूप की आत्मप्रकाशस्वरूप दीप के रूप में व्याख्या की है। ब्रह्म या आत्मबोध ज्ञानरूपी सूर्य का प्रकाश और चेतना का मूल स्रोत है। आत्मज्ञान का सूर्य निकलने पर अज्ञानरूपी अंधकार का नाश हो जाता है, इस परम प्रकाश में परिलक्षित होता है कि सूर्य, चंद्र, तारे, विद्युत, अग्नि आदि ब्रह्म के परम प्रकाश से ही प्रकाशमान हैं।

दीप पर ब्रह्म अखंड ज्योति का प्रतीक है जिससे एकाकार हो जाना ही आध्यात्मिक साधना की चरम परिणति मानी गयी है। मीरा बाई की एक धुन थी 'ज्योति से ज्योति मिला जा'। कबीर की रहस्यवादी साधना का मूलाधार दीपक ही है। रामनाम रूपी तेल में आत्मा की बत्ती को भिगोकर परब्रह्म के चकमक से मन का दीप जलाओ 'अपने घट दिया ना बारु रे' और फिर अज्ञान का अंधकार नष्ट होता जाता है। साधक को अनुभूति होती है,' सब अंधियारा मिट गया, जब दीपक देख्या माहि ...' और इस चकाचौंध करने वाले दिव्यप्रकाश में साधक का केवल एक काम रह जाता है, 'जगमग जोत निहार मंदिर में।' इसी मंदिर में परब्रह्म के रूप का साक्षात्कार होता है। तुलसी ने 'दीपक' को भीतर बाहर, दोनों ओर, आलोकित करने वाले दीपक का सांगरूपक वर्णन किया है—

राम नाम मणि दीप धरु, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहरहुं, जो चाहसि उजियार॥

गुरु नानक ने उपदेश दिया, 'जब आत्मा की ज्योति परम ज्योति से मिलती है तब हिंसा, शंका, दुःख-जैसी छोटी-छोटी बातें लुप्त हो जाती हैं। गुरु अमरदास भौतिक दृष्टि को ईश्वरीय ज्योति की देन मानते हैं। यह दिव्य ज्योति की एक किरण मात्र है।

लौकिक-अलौकिक प्रकाश का प्रतीक ईसाई धर्म और जीवन में दीपक का अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। चाहे दीपक हो और चाहे मोमबत्ती, प्रकाश उल्लास का प्रतीक है। पर्व, विवाह, जन्म-दिवस, अन्य उत्सवों के अवसर पर मोमबत्ती जलाकर समारोह मनाने की परंपरा इस बिजली और नियोन लाइट के युग में आज भी प्रचलित है। मोमबत्ती की लौ लौकिक एवं अलौकिक दोनों प्रकाश का प्रतीक है। जन्मदिवस की संख्या के अनुरूप झिलमिलाती मोमबत्तियों के बिना 'जन्मदिवस केक' अधूरा रहता है।

पारसी तो मूलतः अग्नि के उपासक हैं। यहूदियों के लिए भी मोमबत्तियों की जलती लौ, प्रकाश की अंधकार पर, अन्याय

पर न्याय की और असत्य पर सत्य की विजय की ओर इंगित करती है। 'सवाथ' पर्व का स्वागत मोमवत्तियां जलाकर किया जाता है। भक्तिपर्व 'हनुकाह' आठ दिन मनाया जाता था। प्रथम दिन एक, दूसरे दिन दो, तीसरे दिन तीन, इसी क्रमानुसार प्रत्येक दिन मोमवत्तियों की संख्या बढ़ायी जाती है। अंतिम दिन घर मोमवत्तियों के प्रकाश से जगमगा उठता है।

पारसी धर्मग्रंथों में यह उल्लेख मिलता है प्रार्थना के रूप में—अपने ईश्वरीय नियम के अनुसार तू सभी भक्तों को प्रकाश में लाता है, उस दिव्य ज्योति को पाकर सुख प्राप्त करते हैं। परम आत्मा 'वहुमज्द' अमर ज्योति में अंतर्निहित रहती है। फरावर्सिस सर्वव्यापी ईश्वर, परम ज्योति का पर्याय है।

समस्त प्रेरणाओं का स्रोत—प्रकाश

मुहम्मद साहब ने प्रातःकालीन प्रकाश को विश्व की प्रेरणा का स्रोत माना, जो सर्वं-कालीन अंधकार और निराशा के नष्ट हो जाने का प्रमाण है। कारण जो भी हो कब्रों, मजारों पर दीप जलाने की परंपरा प्रचलित है। शबेरात पर्व पर दीपावली की भांति घरों में प्रकाश किया जाता है।

दीप में समाहित विश्व के समस्त दर्शन क्रम, आकांक्षाओं को संजोये आती है दीपावली। असंख्य झिलमिलाते दीपों के साथ, समृद्धि, ज्ञान तथा पुरुषार्थ के प्रतीक, स्वामी रामतीर्थ, दीक्षंतार स्वामी और महर्षि दयानंद की निर्वाण-तिथि है इस दिन। उनके संदेशों को संजोये दीपमालिकाओं के झिलमिलाते असंख्य नन्हे दीप अमावास्या की निशा को भी अपने सम्मिलित प्रयास से पूर्णिमा में बदल देते हैं।

—३६७ अतरसुइया, इलाहाबाद-३

एक भुलक्कड़ एक बड़े होटल में ठहरे। होटल से बाहर निकलते समय उन्होंने कमरे का नंबर रटना शुरू कर दिया। दो, एक घंटे बाद लौटे तो बहुत खुश हुए कि कमरे का नंबर ठीक-ठीक याद है। पर ज्योंही १० नंबर के कमरे पर पहुंचकर उन्होंने दरवाजा अंदर ठेला, तो एक नवदंपती को अंदर विराजमान देखा। गरजकर बोले, "मेरी आज्ञा के बिना घुसकर बैठने का क्या मतलब है? मैं आप लोगों को अभी पुलिस में देता हूं।"

"होश में बातें करो, यह हमारा कमरा है।" नवदंपती ने भी क्रुद्ध होकर कहा।

"मैं अभी मैनेजर से रिपोर्ट कर आपको निकलवाता हूं।" और भुलक्कड़ मैनेजर के दफ्तर की ओर चले। पर वहां पहुंचकर क्या देखते हैं कि दफ्तर ही नदारद है। वे अपने होटल का नाम भूलकर दूसरे होटल में घुस गये थे!

नेहरूजी का धर्म

● गुरुदास

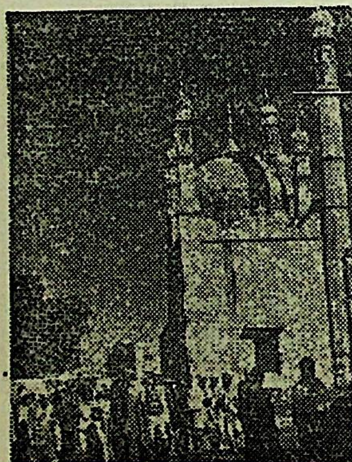
'ऋतुराज' जवाहरलाल ! महाकवि रवींद्र ने जवाहरलाल नेहरू को यह संज्ञा जब प्रदान की थी तब जवाहरलाल युवा थे। पर सफल कवि की दृष्टि भविष्य-दृष्टा होती है। महाकवि शायद जानते थे कि जवाहरलाल के संबंध में 'ऋतुराज' वाली उनकी उक्ति कभी संदर्भहीन नहीं होगी। और ऐसा था भी। स्वतंत्रता-संग्राम के कठिन वर्षों का मानो जवाहरलाल की शारीरिक क्षमता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। आश्चर्य की वात तो यह है कि उत्तरोत्तर उनका व्यक्तित्व अधिक तेजस्वी और आकर्षक ही होता चला गया, जैसे कसौटी पर कुंदन निखरता जाता है।

क्या वे नास्तिक थे ?

नेहरूजी के जीवन में अनेक इस प्रकार की घटनाएं हुईं, जब उन्होंने ज्योतिष या पैर छूने-जैसी धार्मिक आदतों के विरुद्ध अपना क्रोध व्यक्त किया। पर इन सब बातों से क्या सचमुच यह निष्कर्ष निकलता है कि उन्हें धर्म के मुख्य आधार, अर्थात आध्यात्मिक जीवन में विश्वास नहीं था ? वे सचमुच एक पहेली थे। वे स्वयं इसे स्वीकार करते थे और कहते थे कि 'मैं तो पूर्व एवं पश्चिम का एक अनोखा सम्मिश्रण हूं।' अपने समय के सबसे अधिक सम्वेदनशील एवं प्रतिभाशाली इस महापुरुष के व्यक्तित्व को अधिक स्पष्ट रूप से जानने के लिए उनके जीवन-इतिहास के पृष्ठों को पलटना होगा।

उन्होंने एक पत्रकार को इंटरव्यू में बताया था—"मैं बदल गया हूं। आध्यात्मिक एवं नैतिक पद्धतियों पर दिया जाने वाला बल चेतनाशून्य नहीं होता . . . मनुष्य का मस्तिष्क आध्यात्मिकता एवं नैतिकता-संबंधी उच्चतर विकास के लिए भूखा रहता है। इसके बिना भौतिक उन्नति का

नेहरूजी की धर्म-निरपेक्षता :
बायें—गुरुद्वारे में, दायें—एक मौलवी के साथ





कोई महत्त्व नहीं है . . . हिंदू विचारधारा, जिसके अनुसार संसार में एक दैवी सार विद्यमान है और प्रत्येक व्यक्ति में उसका कुछ अंश निहित है जिसका वह विकास कर सकता है; मुझे प्रभावित करती है।"

वेदांती नेहरू !

यह विचारधारा और कुछ नहीं विशुद्ध वेदांत है। हाल में ही उनकी सुपुत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने भी इस विचारधारा में रुचि प्रगट की है। अपनी मृत्यु के दो दिन पूर्व नेहरूजी ने एक पुस्तक की भूमिका में लिखा था—"हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जीवन का सर्वोपरि उद्देश्य व्यक्ति की गुणवत्ता और उसमें निहित धर्म-धारणा है।"

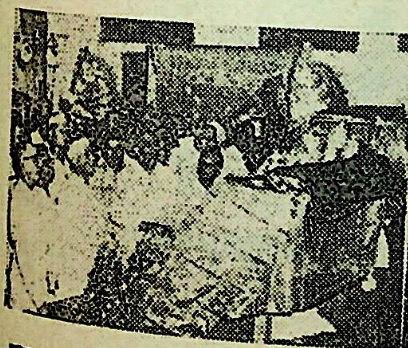
विवेकानंद और नेहरू में साम्य

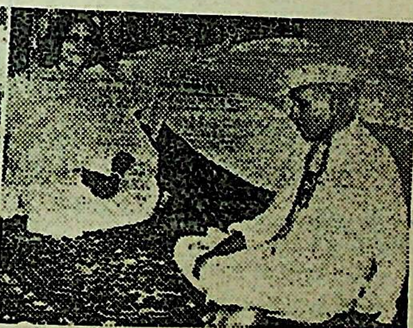
स्वामी विवेकानंद एवं जवाहरलाल नेहरू के विचारों एवं उद्देश्यों में काफी समानता है। दोनों ने ही अपने विख्यात गुरुओं की अस्पष्ट एवं निराकार विचारधारा को स्पष्ट रूप दिये। रामकृष्ण परमहंस के बारे में वे कहते थे, "श्री रामकृष्ण संत थे, और मैं एक सांसारिक मनुष्य हूं जिसकी सांसारिक गतिविधियों में ही सारी शक्ति लगी है। एक सांसारिक व्यक्ति भी दैवी व्यक्ति की प्रशंसा कर सकता है, और उससे प्रभावित हो सकता है। मैं भी इन दैवी व्यक्तियों की सराहना करता रहा हूं। यद्यपि कभी-कभी मैं उन्हें बिलकुल समझ नहीं पाता, पर इन दैवी व्यक्तियों ने महान पुरुषों को बड़े सशक्त ढंग से प्रभावित किया है और उनकी जीवनधारा को ही बदल दिया है . . ."

श्रीअरविंद और नेहरू

नेहरूजी अपने समकालीन एक अन्य महान पुरुष श्रीअरविंद का भी आदर करते थे। उनके एक शिष्य (जिनका उल्लेख पहले किया जा चुका है) ने बातचीत में नेहरूजी को बताया कि श्रीअरविंद ने उन्हें एक बार लिखा था—'नेहरू के चेहरे पर एक सात्विक भाव है, और वे भारतीय एवं यूरोपीय संस्कृतियों का उत्तम

बायें–मीनाक्षी मंदिर (मदुराई) में। दायें–मां आनन्दमयी के साथ





अब ३० देशों से अधिक के लोग मोदी धागे पसन्द कर रहे हैं

हांगकांग, सिंगापुर, इण्डोनेशिया, ईरान, साइप्रस, नैरोबी, बेरुत और योरोप के बढ़िया चीज़ें पसन्द करने वाले ग्राहक मोदी धागे पसन्द कर रहे हैं। मोदी धागों की राष्ट्रीय ख्याति ने अन्तर्राष्ट्रीय रूप ग्रहण कर लिया है।

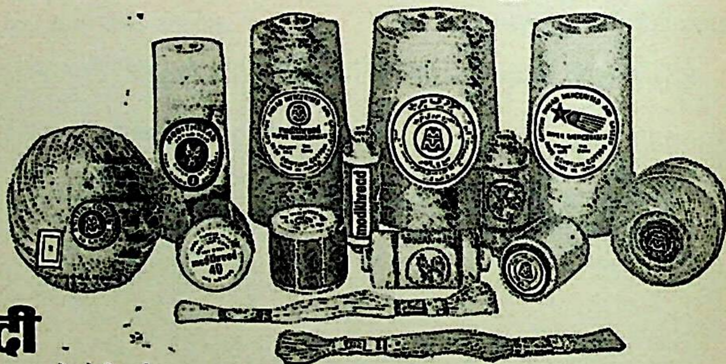
धागों का निर्यात उतने ही आश्चर्यजनक रूप से बढ़ता जा रहा है जितने आश्चर्यजनक रूप से देशों की संख्या।

हमारे सूती सिलाई, कढ़ाई, चमड़े के सामान, जूते बनाने वाले और छाता बनाने वाले धागों को विदेश में भारी लोकप्रियता प्राप्त हुई है। यह निःसंदेह मोदी धागों की उत्कृष्टता का प्रमाण है।

मोदी धागे अत्यन्त सावधानी से चुने गये कच्चे सामान से आधुनिकतम निर्माण टेक्नोलोजी द्वारा बनाए जाते हैं और उनका जांच-परीक्षण सख्ती से किया जाता है। वे आपकी आशा के अनुसार प्रमाणित होते हैं।

मोदी धागे – अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त करने वाले राष्ट्रीय धागे

वही
मोदी धागे
जो आप भारत में खरीदते हैं
अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर रहे हैं।



मोदी

उत्कृष्ट धागों के निर्माता
मोदी थ्रेड मिल्स
मोदीनगर — बम्बई — कलकत्ता — दिल्ली — मद्रास

INTERADS

सामंजस्य हैं।' नेहरूजी को उत्सुकता हुई कि यह जिक्र आया कैसे। अतः शिष्य ने बताया कि मैंने श्रीअरविंद को लिखा था कि आप नेहरूजी की शांति की अदम्य लालसा को पूर्ण करने के लिए कुछ कीजिए। श्रीअरविंद का उत्तर था—'शांति को प्राप्त करना बड़ा कठिन है। यह संदेह का ही विषय है कि यदि बुद्ध कांग्रेस-आंदोलन का नेतृत्व करने का दायित्व ले लेते तो अपनी शांति को स्थिर भी रख पाते!'

एक वह समय था

असहयोग आंदोलन के समय महात्मा गांधी एवं मोहम्मदअली से उनका मतभेद हो जाया करता था क्योंकि वे सार्वजनिक भाषणों में भी धर्म की बात छेड़ते थे।

एक बार नेहरूजी ने मोहम्मद अली से इस विषय पर चर्चा की तो मोहम्मद अली ने यह कहकर टाल दिया कि 'विवाद चाहे जितना कर लो, पर सचाई यह है कि मूलतः तुम धार्मिक ही हो।'

वे कर्मयोगी थे

उनका विचारशील मस्तिष्क हिंदू-धर्म के मूल-सिद्धांतों 'कर्म' एवं 'पुनर्जन्म' से भी प्रभावित था। सन १९४९ में विदेशी नीति के बारे में वक्तव्य देते हुए उन्होंने कहा था, "दुनिया का कोई भी देश क्यों न हो, अपने कर्म के फल से नहीं भाग सकता। पिछले महायुद्ध के बाद से यूरोप बड़ी खतरनाक समस्याओं और विवादों में जकड़ा हुआ है। यह उसके पिछले 'कर्म' का ही फल है। हम अपने पिछले कर्मों के परिणाम से आसानी से मुक्त नहीं हो सकते।"

पुनर्जन्म के विषय में उनका कहना था, "मैं आत्मा, कर्म और पुनर्जन्म के विचारों को मानता हूं। मनुष्य के पार्थिव शरीर के नष्ट हो जाने पर भी आत्मा नामक वस्तु बच सकती है। और जीवन में किये कामों का नियमन करने वाला कार्य एवं कारण का सिद्धांत तर्क-संगत है... यदि आत्मा को मान लिया जाए तो पुनर्जन्म का सिद्धांत भी युक्ति-युक्त प्रतीत होता है।"

यदि वेदांत हिंदू धर्म की सबसे अमूल्य निधि है, तो जवाहरलाल नेहरू अवश्य ही परमोत्कृष्ट वेदांती थे।

एक साहित्यिक गोष्ठी में दो लेखकों में होने वाली गरमागरम बहस हमेशा की तरह गाली-गलौज तक पहुंच गयी। अधिक उग्र लेखक ने कहा, "आप इस शहर के सबसे बड़े बेवकूफ हैं!"

"बेजा है, लेकिन मेरी कुरसी पर तो आप कब्जा किये बैठे हैं। आप उसे छोड़ेंगे नहीं, और मुझे मेरा हक मिलेगा नहीं," कम उग्र लेखक ने दहला मारा।

● श्रीकांत वर्मा

एक लंबी कविता का अंत पाब्लो नेरूदा

बहुत पहले इस्पहानी कवि और योद्धा फ्रेडरिको गार्सिया लोर्का ने लिखा था : 'पाब्लो नेरूदा की कविताएं दर्शन से अधिक मृत्यु की, तर्क से अधिक दु:ख की, स्याही से अधिक लहू की उपज हैं।'

२३ सितंबर को सांटियागो के एक अस्पताल में कैंसर से पाब्लो नेरूदा की मृत्यु ने उनकी कविताओं को फिर एक नये संदर्भ में रख दिया। यह संदर्भ है, चिली! अभी कुछ ही दिन पहले सांटियागो के राजप्रासाद में चिली के वर्बर सैनिक तानाशाहों ने राष्ट्रपति सॉल्वदोर अयेंदे की निर्मम हत्या कर दी थी। राष्ट्रपति अयेंदे की हत्या के साथ ही पाब्लो नेरूदा का भविष्य भी संदिग्ध हो गया।

यह अकारण नहीं था। पाब्लो नेरूदा कवि के अलावा साम्यवादी कार्यकर्ता भी थे। श्री अयेंदे के वे आत्मीय थे। दरअसल राष्ट्रपति अयेंदे सैद्धांतिक प्रश्नों पर सबसे अधिक पाब्लो नेरूदा और फ्रांसीसी मार्क्सवादी रेजिस देब्रे से सलाह लिया करते थे। अयेंदे के साथ नेरूदा की दोस्ती पुरानी थी। लेकिन चिली की जनता में पाब्लो नेरूदा ने लोकप्रियता स्वतंत्र रूप से अर्जित की थी।

राष्ट्रपति-पद के लिए नाम

१९७० में उनका नाम चिली के राष्ट्रपति-पद के लिए प्रस्तावित किया गया था। मगर नेरूदा ने अपना नाम श्री अयेंदे के पक्ष में वापस ले लिया। चुनाव में अयेंदे विजयी हुए। उन्होंने शासन संभालते ही नेरूदा को चिली का राजदूत बनाकर पेरिस भेजा।

यूरोप, पाब्लो नेरूदा के लिए अपरिचित महाद्वीप नहीं था। १९३४ में चिली की सरकार ने पाब्लो नेरूदा की साहित्यिक उपलब्धियों को मान्यता देते हुए उन्हें राजनयिक सेवा में स्पेन भेजा था। स्पेन में नेरूदा ने लोर्का तथा अन्य इस्पहानी कवियों के सहयोग से एक कविता-पत्रिका का संपादन किया जो बाद में इस्पहानी प्रतिभा की प्रमुख अभिव्यक्ति में परिणत हो गयी।

फासिस्टों के विरुद्ध मोर्चा

अगर पाब्लो नेरूदा केवल एक राजनयिक होते तो संभवत: उनके जीवन में उतार-चढ़ाव, आंधी और तूफान न होते। मगर नेरूदा कवि पहले थे, कुछ और बाद में। क्रांति, युद्ध, संघर्ष और इतिहास से तटस्थ रह सकना उनके लिए कठिन था। १९३६ में, स्पेन में, गृहयुद्ध छिड़ गया। एक ओर गरीब, निहत्थी जनता थी, दूसरी ओर फासिस्ट, फौजी तानाशाह। यूरोप के बुद्धिजीवियों और

लेखकों ने एलान किया कि वे इस्पहानी जनता की ओर से लड़ेंगे। फासिस्टों के प्रति अपनी घृणा व्यक्त करते हुए पिकासो ने घोषणा की, 'जब तक स्पेन में जनता का शासन कायम नहीं होता, तब तक मैं स्पेन नहीं लौटूंगा।' स्पेन पिकासो की मातृभूमि थी। जनता की ओर से लड़ते हुए लोर्का गृहयुद्ध में मारे गये।

नेरूदा इस सारी स्थिति से बहुत अधिक विक्षुब्ध और उद्वेलित थे। उन्होंने अपनी सरकार के आदेश के बिना घोषणा कर दी कि चिली की सहानुभूति फासिस्टों के विरुद्ध लड़ रही जनता के साथ है। सरकारी आदेश की अवहेलना के अपराध में चिली की सरकार ने नेरूदा को वापस बुला लिया। मगर बाद में इस्पहानी शरणार्थियों की सहायता के लिए उन्हें पेरिस भेजा गया। इस्पहानी गृहयुद्ध पर नेरूदा ने कविता लिखी, 'एस्पाना एन एल कोराजोन।'

स्पेन के गृहयुद्ध ने पाब्लो नेरूदा के जीवन को एक नयी दिशा दे दी। नेरूदा कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य हो गये और लातीनी अमरीका के साम्यवादी आंदोलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करने लगे।

स्तालिन-पुरस्कार से सम्मान

१९४७ में नेरूदा चिली की संसद के सदस्य चुने गये। उन्होंने चिली के तत्कालीन राष्ट्रपति गैब्रियल विडेला पर आरोप लगाया कि उन्होंने देश अमरीका को बेच दिया है। नेरूदा पर देशद्रोह का आरोप लगाया गया। फलतः उन्हें देश छोड़ना पड़ा। कुछ समय मेक्सिको में रहने के बाद उन्होंने यूरोप, एशिया और चीन की लंबी-लंबी यात्राएं कीं। १९५० में सोवियत संघ ने नेरूदा को



पाब्लो नेरूदा : मनुष्य केवल मनुष्य

स्तालिन-पुरस्कार से सम्मानित किया। देश से बाहर रहते हुए नेरूदा ने अपनी प्रख्यात कविता 'कैंटो जनरल' की रचना की। 'कैंटो जनरल' मनुष्य के सनातन संघर्ष का गायन है।

१९५३ में नेरूदा चिली लौट आये और अंत तक—केवल राजनयिक सेवा के वर्षों को छोड़—अपने प्यारे देश चिली में ही रहे।

कविताओं का नायक—मनुष्य केवल मनुष्य

पाब्लो नेरूदा का अंत एक लंबी कविता का अंत है। पाब्लो नेरुदा की कविताओं में केवल एक थीम है, 'मनुष्य'। फावड़ा चलाता हुआ मनुष्य, ख़दान में उतरता हुआ मनुष्य, युद्ध में मारा जाता हुआ मनुष्य, प्रकृति पर जय पताका फहराता हुआ मनुष्य, गुजरता हुआ मनुष्य और लौटता हुआ मनुष्य।

पाब्लो नेरूदा की कविताएं पश्चिमी कविता की मुख्य धारा से, जिसका सरोकार इनसान का सामाजिक रूप नहीं, बल्कि मनुष्य का नैतिक और आध्यात्मिक फन है, कटी हुई हैं। यही कारण है कि यूरोप, अमरीका और लातीनी अमरीका के अधिकतर कवियों और आलोचकों ने उन्हें २० वीं शताब्दी के कवि के रूप में नहीं स्वीकार किया। इस्पहानी भाषा के प्रमुख कवि जुआन रमोन जिमेनेज ने लिखा, 'नेरूदा बड़ा कवि है, मगर खराब बड़ा कवि!'

नेरूदा को लेकर पश्चिम, विशेषकर लातीनी अमरीका में, बहुत-सा विवाद हुआ है। नेरूदा राजनेता है या शायर? नेरुदा कम्युनिस्ट है या कलाकार? नेरूदा कवि है या प्रचारक?

नेरूदा ने इन बहसों में हिस्सा नहीं लिया। नेरूदा के लिए ये बहसें एक तरह से फिजूल थीं। उनकी रचना के पीछे कुछ निश्चित विश्वास थे। वे अपने विश्वासों को छोड़ नहीं सकते थे। अगर उनके विश्वास कविता के आड़े आते थे तो यह न उनका दोष था न उनके विश्वासों का। अपने विश्वासों को छोड़ने का अर्थ था अपनी कविता को छोड़ना।

वास्तविकता यह है कि नेरूदा के संस्कार ही समकालीन कवियों से भिन्न थे। उनका जन्म एक मजदूर परिवार में हुआ था। जो जवान उन्हें विरासत में मिली थी, वह सर्वहारा की थी।

यह सही है कि पाब्लो नेरूदा की कविता में वह सूक्ष्मदर्शिता और कारीगरी नहीं जो इस्पहानी भाषा के अन्य प्रमुख कवियों, मसलन, होर्जे लुई बोर्खे और आक्टेवियो चॉज की कविता में है। यह भी सही है कि उनकी कविता में भावनात्मक उद्रेक है मगर अनुभव की गहराई नहीं, जो सीजर वैयाखो में थी। मगर यह सही नहीं कि नेरूदा एक उतावले कवि थे या यह कि कविता से अधिक उन्हें कविता के विषय से सरोकार था। उनकी सौंदर्य दृष्टि किसी से कम नहीं थी। और जब भी उन्होंने अप्रचलित विषयों को छुआ, उसकी बारीकियों, खूबियों को देखा और परखा। उनकी मशहूर कविता है, 'टूटती हुई चीजें':

चीजें टूट रही हैं
घर में
जैसे वे अदृश्य, बर्बर हाथों में
पड़ गयी हों
मेरे हाथ नहीं
तुम्हारे भी नहीं

गोरे पैरों और चपड़ियाये
नाखूनों वाली लड़कियों के नहीं
जो उन्हें तोड़ रही हैं
वह हवा नहीं है वह गुलाबी दोपहर
या पृथ्वी की छाया नहीं है
न वह नाक है, न कुहनी है
न उभरा नितंब है
न कलाई है, न हवा है
तश्तरी टूटती है, लैंप
हाथ से फिसलता है
गुलदस्ते एक के बाद एक
उलटे हो गये हैं
सुर्ख फूलों से सजा गुलदस्ता
और उसकी बगल में
एक बैंगनी फूलों का गुलदस्ता
सर्दी में घूम रहे हैं
लगातार घूम रहे हैं
आखिर में केवल रह जाती हैं राख
चूर-चूर स्मृतियां, धूल
और वह घड़ी, जिसकी धड़कन
जैसे जीवन की धड़कन थी
सप्ताहांतों को
एक के बाद एक घंटों को
कितने ही जन्मों को
कितने ही कार्यों को
पिरोती हुई सुई थी
वह घड़ी भी गिर पड़ी है
टूटे हुए शीशों के बीच
उसके पुर्जे हिल रहे हैं
उसका हृदय
बाहर निकल आया है

जिंदगी गुजरती है, कांच को बुरादे
में बदलती
कपड़ों को तार-तार करती
आकारों को रौंदती, पीसती
समय के प्रवाह में बच रहती है
खतरों से, अशांत समुद्र से
घिरी एक नाव, एक द्वीप
आओ, हम इन तमाम चीजों को
घड़ी को, तश्तरी को, बर्फ में
तराशी गयी सुरा की प्याली को
बोरे में भर लें और अपना
खजाना समुद्र तक ले चलें
और गरजती हुई लहरें और ज्वार
एक क्रुद्ध नदी की तरह
हमारी संपदा को निगल लेंगी
और तब समुद्र
ज्वारों में भरकर हम तक लाएगा
वे फिजूल चीजें
जिन्हें कोई नहीं तोड़ता
मगर जो टूटी हुई हैं

पाब्लो नेरूदा केवल एक क्रांतिद्रष्टा नहीं थे, बल्कि एक सौंदर्यान्वेषी भी थे। चिली की भूख और चिली का सौंदर्य दोनों ही उनकी कविता की आधार-सामग्री थे। नोबल पुरस्कार समिति ने १९७१ में उन्हें नोबल पुरस्कार प्रदान करते हुए टिप्पणी की थी: "नेरूदा की कविताओं में दक्षिण अमरीका की नियति ने अभिव्यक्ति पायी है।"

—द्वारा 'दिनमान', टाइम्स ऑव इंडिया,
बहादुरशाहजफर मार्ग, नयी दिल्ली-१

बुखार का फोटो

रोगी का बुखार नापने के लिए उसके मुंह में थर्मामीटर लगाकर पारे के चढ़ने की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी। अब इन्फ्रारेड थर्मामीटर द्वारा डॉक्टर अपने रोगी के तापमान का आधे सेकंड में ही फोटो ले सकेगा। दक्षिणी कैरोलिना में जार्जटाउन विश्वविद्यालय के चिकित्सा-केंद्र में यह विधि प्रयोगाधीन है।

एक नया आटा

खाद्य-संकट के इस युग में यह जरूरी होता जा रहा है कि गेहूं के आटे का कोई

सितंबर अंक से यह स्तंभ शुरू किया गया है। इसके अंतर्गत विज्ञान के क्षेत्र में नयी उपलब्धियों की चर्चा रहेगी। स्तंभ एक-एक महीने के अंतराल से प्रकाशित होगा—सं.

और विकल्प ढूंढ़ा जाए, जिसमें पौष्टिक पदार्थ भी समुचित हों। विनौले में मांस-मछली से अधिक प्रोटीन होता है, किंतु इसमें गैसिपोल तत्त्व भी पाया गया है, जो मनुष्य के लिए जहरीला है।

हुबली के एक कारखाने में गैसिपोल अलग करके विनौले का आटा तैयार किया गया है। इस आटे में ६० से ७० प्रतिशत तक प्रोटीन होता है। गैसिपोल अलग करने की विधि सरल है। विनौले को पीसकर एक विशेष प्रकार के द्रव में मिला लेते हैं। मिश्रण को एक संयंत्र की सहायता से इस प्रकार हिलाया जाता है कि बीच में भंवर पड़ जाए। इससे गैसिपोल अलग हो जाता है।

विज्ञान
नयी उपलब्धियां

कृत्रिम जिगर

पहला कृत्रिम जिगर बन गया है। बनानेवाले हैं तोकियो के २८ वर्षीय चिकित्सा-शोध-छात्र डॉ. केन्नेथ मात्सुम्यूरा। यह जिगर किताब के आकार की एक मशीन है और इसपर लागत आती है सिर्फ १५० डालर। इस मशीनी जिगर से छह या दस घंटे के अंदर रक्त शुद्ध किया जा सकता है। एक बार काम लेने के बाद इस जिगर को फेंककर, दूसरी बार दूसरा जिगर काम में लाया जा सकता है। हालांकि अभी तक इस जिगर का पशुओं के संबंध में ही प्रयोग किया गया है, पर डॉ. मात्सुम्यूरा के अनुसार मरीजों पर इसके प्रयोग के लिए कई अस्पतालों से बातचीत चल रही है। किसी मरीज का

जिगर यदि कुछ समय के लिए खराब हो जाए तो तीन, चार सप्ताह के लिए हर दूसरे दिन वह छह घंटों तक इससे काम चला सकता है। इस दौरान मरीज का अपना जिगर खुद-ब-खुद ठीक हो जाएगा, और फिर उसे इस मशीनी जिगर की जरूरत नहीं पड़ेगी।

कूड़े का तेल

ऊटा विश्वविद्यालय (अमरीका) के डॉ. लैरी एल. ऐंडर्सन कूड़े-करकट और अपशिष्ट पदार्थों को अत्यधिक ताप और दवाब के अंतर्गत कार्बन मोनो-आक्साइड और पानी से संसाधित करके तेल और गैस उत्पन्न करने का प्रयोग कर रहे हैं। ८८ करोड़ टन कूड़े से ११० करोड़ बैरल तेल निकाला जा सकता है।

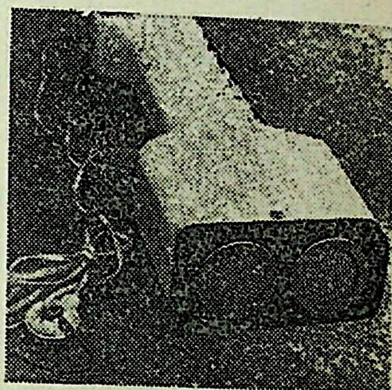
है न कूड़ा-करकट काम की चीज !

छत पर ताल और - - -

एक अवकाश-प्राप्त अमरीकी रसायनशास्त्री हैरोल्ड हे ने मकानों को वातानुकूलित करने की एक सस्ती और आश्चर्यजनक विधि खोज निकाली है। एक मकान की छत पर बहुत बड़े आकार का ताल बनाया गया है। १० इंच गहरे इस जलाशय के किनारों पर काली प्लास्टिक का गोटा मढ़ा हुआ है। जलाशय में साफ पानी से भरी प्लास्टिक की थैलियां भरी गयी हैं। ये थैलियां एक स्थान से दूसरे स्थान पर बराबर फिसल कर जाती रहती हैं। गरमी में थैलियां रात की ठंडी हवा में खुली रहती हैं और दिन में ढकी रहती हैं। सर्दियों में विपरीत विधि काम में लायी जाती है।

नेत्रहीनों के लिए ऐनक

नेत्रवालों के लिए तो ऐनक काम की चीज है, पर नेत्रहीनों के लिए ? जी हां, उनके लिए भी ! पर इसे इलेक्ट्रानिक



नेत्रहीनों के लिए चश्मा

ऐनक या इलेक्ट्रानिक नेत्र कहा जा सकता है। ये नेत्र प्रकाश-तरंगों को सीधे मस्तिष्क तक पहुंचाकर आसपास की स्थितियों से पूरी तरह अवगत करा देते हैं। 'मास्को न्यूज' के एक समाचार के अनुसार वाई एगेयुव नामक एक नेत्रहीन सज्जन इस ऐनक की बदौलत ही २५ वर्ष बाद देख सकने में समर्थ हो सके हैं। ऐनक का विकास रूसी चिकित्सा-उपकरण शोध-संस्थान में किया गया है और इसे बनाया है कैथोड किरण ट्यूब कंपनी ने। एगेयुव अब किताब पढ़ लेते हैं और गली में आते-जाते लोगों को अच्छी तरह देख लेते हैं। ●

● श्रीरंजन सूरिदेव



सामाजिक संदर्भ में मद्यपान की चर्चा करनेवाले शास्त्रकारों या धार्मिक प्रवचनकर्ताओं का दृष्टिकोण निरंतर निषेधात्मक रहा है। संप्रति, मद्यनिषेध-कानून के बावजूद, समाज के छोटे या बड़े हर तबके में मद्यपान प्रकट या अप्रकट रूप में वर्तमान है। मद्यप्रेमियों की ओर से यह दलील दी जाती है कि मद्य प्राक्कालीन वैदिक सोमरस का ही रूपांतर या आधुनिक विकसित रूप है। लेकिन, वे यह नहीं सोचते कि सोमरस पीनेवाले ऋषि-मुनि यज्ञ करते थे और विश्व-कल्याण की संदेशवाहिका ऋचाएं रचते थे। किंतु, आज के मद्यव्यसनी किसी सामाजिक उत्कर्षपूर्ण कार्य करने की अपेक्षा अपने को प्रायः असामाजिक तत्त्व ही प्रमाणित करते हैं। इसलिए, निश्चय ही मद्य सोमरस का न तो रूपांतर है, न ही विकसित रूप। यह बात वैदिक साहित्य के अनुशीलन से बिलकुल निर्भ्रम हो जाती है।

कहना न होगा कि सोमरस अति-प्राचीन काल में आर्यजाति का प्रिय पेय था। सोमरस एक विशिष्ट प्रकार की लता से तैयार किया जाता था, जिसे 'सोमलता' या 'सोमवल्ली' कहते थे। निस्संदेह, यह आयुर्वेदोक्त सोमवल्ली - पर्यायवाची 'बाकुची', 'गुडूची' (गिलोय) या 'ब्राह्मी' से सर्वथा भिन्न वस्तु थी। ऋक्संहिता (१०।३४।१) के अनुसार, सोमलता हिमालय के उत्तर मौजवत पर्वत पर उगती थी : **'सोमस्येव मौजंवतस्य भक्षः।'** जन-विश्वास है कि सोमलता आजकल दुष्प्राप्य हो गयी है। आज के यज्ञों में सोमलता के प्रयोग के बदले 'पूतिका' यानी पोय साग की लता का व्यवहार होता है।

यज्ञ आदि अनुष्ठानों में सोमरस का प्रचलन पारसीक आर्यों में भी था। आज भी बंबई-निवासी अग्निपूजक पारसी-समाज उस प्राचीन सोम की जगह फारस से लायी हुई एक प्रकार की ताजी लता का प्रयोग करते हैं। वर्तमान यूरोपीय वैज्ञानिक और पुरातत्त्ववेत्ता 'एक्लेपियास एसिडा' या 'सारकॉस्टिमा ब्रेविस्यामा', इन्हीं दो प्रकार की लताओं को 'सोम' का तत्स्थानीय मानते हैं।

सोम—अतुल शक्तिदायी

'ऋग्वेद' में सोम की आविर्भाव-कथा में कहा गया है कि श्येन पक्षी ने इंद्र के लिए देवलोक से सोम ला दिया था (४।२६।६)। उस श्येन पक्षी का वैदिक नाम 'सुपर्ण' है (८।८६।८)। श्येन ने भी पर्वत से ही सोम

का आहरण किया था (१।६३।६) और वरुण देवता पर्वत पर सोम को रख आये थे (५।८५।२)। एक दूसरे रोचक कथा-प्रसंग में, ऋग्वेद में ही बताया गया कि जहां पर्जन्य (मेघ) द्वारा सोम संवर्धित हो रहा था, वहां से सूर्य की कन्या सोम चुरा लायी थी, जिसे गंधर्वों ने प्राप्त किया था और उसीसे रस निकाला था। पर्जन्य को ही सोम का पिता कहा गया है। 'अथर्ववेद' में कहा गया है कि विराट पुरुष से ही सोम उत्पन्न हुआ है। गंधर्व सोमलता की रक्षा बड़े यत्न से करते थे, क्योंकि सोमरस अतुल शक्ति प्रदान करता था।

'ऐतरेयब्राह्मण' (१।५।१) से एक मनोरंजक सूचना मिलती है कि सोम गंधर्वों के राजा की तरह था। वह बराबर गंधर्वों के संरक्षण में रहता था। देवता और ऋषि सोम को प्राप्त करना चाहते थे, परंतु उनके सारे प्रयास विफल हो जाते थे। अंत में, वाग्देवी को उन पर दया आ गयी। उसने तरस खाकर उनसे कहा, "गंधर्व स्त्रीकामी होते हैं। आप लोग मुझे मूल्य-स्वरूप उनके पास भेजकर सोम खरीद लें।" लेकिन, देवता और ऋषि ऐसा करने को तैयार नहीं थे, क्योंकि बिना वाग्देवी के वे रह नहीं सकते थे। अंत में, वाग्देवी ने उन्हें आश्वासन दिया, "जरूरत पड़ने पर मैं आप लोगों के पास आ जाया करूंगी।" इसी बात पर वाग्देवी को नग्न-रूप में गंधर्वों को देकर देवता और ऋषि सोम खरीद लाये।

'सोम' के संबंध में 'शतपथब्राह्मण' (३।२।४।१-२) में भी एक मनोरम कथा पायी जाती है। पहले, 'सोम' आकाश में ही रहता था और देवता उस समय आकाश में नहीं रहते थे। किंतु, देवताओं को अपने यज्ञकार्य में 'सोम' प्राप्त करने की चाह बराबर बनी रहती थी। अंत में देवताओं ने सर्वसम्मति से गायत्री को सोम लाने के निमित्त भेजा। गायत्री सोम प्राप्त करने में सफल तो हो गयी, किंतु जब वह लौट रही थी, तब रास्ते में ही विश्वावसु गंधर्व ने उससे 'सोम' छीन लिया। देवता जानते थे, गंधर्व स्त्रीकामी होते हैं, इसलिए उन्होंने वाग्देवी को भेजा और वह विश्वा-वसु से 'सोम' प्राप्त कर ले आयी। 'शतपथ-ब्राह्मण' (६।७।२।८) में यह भी बताया गया है कि गायत्री पक्षी-रूप में आकाश से 'सोम' लाने गयी थी।

अमरत्व-प्राप्ति का साधन

'ऋग्वेद' में सोमरस और उसके अधि-ष्ठाता देवता के अनेक गुण कहे गये हैं। सोमलता के रस को 'अमृतमद' भी कहा गया है। यह देवताओं का अत्यंत प्रिय पेय था। रोगियों के लिए यह औषध-स्वरूप था। सोमरस पीने से देवता और मनुष्य दोनों अमर हो जाते थे। इसीलिए सोमरस को स्वर्गसुख का विधाता माना गया है।

श्रुति के 'अपाम सोमं अमृता अभूम' (सोमपान कर अमर होंगे) वाक्य से स्पष्ट संकेत मिलता है कि ऋषि सोमरस पीकर अमरता प्राप्त करते थे। ऋग्वेद

के प्रथम मंडल में अनेक ऐसे मंत्र हैं जिनसे स्पष्ट है कि ऋषि सोमरस तैयार करने के वाद उसे पहले देवताओं को अर्पित करते थे, तव स्वयं ग्रहण करते थे। दो प्रार्थना-मंत्र द्रष्टव्य हैं :

वायवायाहि दर्शतेमे सोमा अरंकृताः।
तेषां पाहि श्रुधी हवम् ॥ (१।२।१)
इन्द्रायाहि चित्रभानो सुता इमे त्वायवः।
अण्वीभिस्तनो पूतासः (१।३।४)

'सायणभाष्य' के अनुसार, इन मंत्रों का क्रमशः अर्थ है, "हे शुभदर्शन वायुदेव, आप हमारे इस यज्ञकर्म में पधारें। आपके लिए यह सोमरस आसवन आदि संस्कार के साथ तैयार किया गया है। सोमपान के निमित्त किये जानेवाले हमारे आह्वान को आप सुनें और अपना भाग ग्रहण करें।"

"हे इंद्र, हमारे चित्रदीप्त यज्ञकर्म में आप आयें। आसवन-पद्धति से तैयार किया गया यह सोमरस आपकी इच्छा करता है। यह सोमरस ऋत्विजों की अंगुलियों से शुद्ध किया गया है, अतएव परम पवित्र है।"

उपर्युक्त मंत्रों में प्रयुक्त 'सुत' शब्द तथा उसके लिए सायण-भाष्योक्त 'अभिषुत', 'अभिषव' आदि शब्दों से स्पष्ट है कि प्राचीन ऋषि आयुर्वेदोक्त आसवन-विधि द्वारा सोमलता को पीसकर, उसका अर्क चुलाते थे, हालांकि कहीं-कहीं सोमलता को पीसकर पीने का भी उल्लेख हुआ है। तभी तो ऋषियों के आश्रमों में पत्थर के सिलवट्टे पर सोमलता के पीसे जाने की आवाज गूंजती रहती थी। कहा गया है कि पार्थिव प्राणियों के लिए सोमरस का स्वाद दुर्लभ था। वैदिक युग के अंत में पुष्टिदाता 'सोम' शब्द चंद्र का पर्याय वन गया। चंद्र भी पुष्टिकर्ता देवता माने गये हैं। इसी आधार पर अंगरेजी में इसे 'मून प्लांट' कहा जाता है।

सोम-सेवन की वैज्ञानिक विधि

आयुर्वेद के आदि-आचार्यों में अन्यतम सुश्रुत का मत है कि सृष्टिकर्ता ब्रह्मा ने पुरायुग में जरा और मृत्यु के विनाश के लिए 'सोम नामक अमृत की सृष्टि की थी। सुश्रुत ने 'सोम' के अंशुमान, मुंजवान, चंद्रमा, रजतप्रभ आदि चौवीस भेद गिनाये हैं। महर्षि सुश्रुत ने सोम-सेवन की जो विधि प्रस्तुत की है, उससे ऐसा प्रतीत होता है कि सोम-सेवन कायाकल्प के लिए विहित था। सोम-सेवन की विधि का अनुपालन आसान नहीं था। सोम-सेवन की विधि में वताया गया है कि घृत, तेल आदि उपकरणों को जुटानेवाले परिचारकों को एकत्र करने के अलावा एक 'त्रिवृत' घर बनवाना चाहिए। 'त्रिवृत' घर, यानी घर के चारों ओर वरामदे, फिर वरामदेवाले घर के चारों ओर वरामदे और उस वरामदेवाले घर के चारों ओर वरामदे। ऐसे घर में ही रहकर सोम-सेवन करना चाहिए। सोम-सेवन के पहले वमन, विरेचन आदि पंचकर्मों की भी अनिवार्यता मानी गयी है तथा सोम-सेवनार्थियों को सेवन के पूर्व पेय, लेह्य आदि पथ्यों के पालन करने की

भी हिदायत की गयी है। सोम-सेवन के योग्य शरीर वन जाने पर प्रशस्त मुहूर्त में, मंगलाचरण के वाद, सोने की सुई से सोमकंद में छेद करके सोने के वरतन में सोम के रस को इकट्ठा करने का विधान वताया गया है। इससे स्पष्ट है कि आचार्य

में यह वताया है कि मात्रानुसार सोमरस पीने के वाद अवशिष्ट रस को इधर-उधर फेंकने के वजाय जल में डाल देना चाहिए। सेवनावधि में मित्रों से घिरा रहना चाहिए। सोमपान करके सोना निषिद्ध वताया गया है। सोने की अपेक्षा निर्वातस्थान में



सुश्रुत सोम की लता के बजाय उसके कंद, यानी मूल से, छेवने की विधि द्वारा, सोम-रस चुलाने की ओर संकेत कर रहे हैं। यों 'भावप्रकाश निघंटु' के अनुसार, सोम-लता का पंचांग (फल, फूल, पत्ता, छाल और जड़) व्यवहार में आता था।

सुश्रुत ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'सुश्रुत-संहिता' में सोम-सेवन की विराट विधि

घूमना या वैठना चाहिए। इसके लिए कृष्णमृग के चर्म या कुश के बिछावन का प्रयोग करना अपेक्षित है। सोमसेवी को प्यास लगने पर शीतल जल लेना चाहिए। सोम-सेवन से वमन, अतिसार आदि होने लगते हैं, फलतः शरीर के सारे कृमि बाहर निकल जाते हैं—यहां तक कि सोमसेवी व्यक्ति अस्थिकंकाल-मात्र रह जाता है।

उसके नख, केश आदि सभी झड़ जाते हैं। फिर, वह क्रम-क्रम से यथासमय अभिनव कांतिमान काया प्राप्त कर लेता है। जब तक नवीन शरीर की प्राप्ति न हो, तब तक सोमसेवी को उक्त 'तृिवृत' घर से नहीं निकलना चाहिए, अपितु उसी तिन-खंडे में यथानिर्धारित अवधि तक, तीनों खंडों में यथानिर्दिष्ट तरीके से रहना चाहिए। सोम-सेवन से नव-शरीर-प्राप्त मनुष्य की आयु दस हजार वर्षों की हो जाती है और उसे दस हजार हाथियों का बल प्राप्त होता है। सोमरस से कायाकल्प हो जाने पर मनुष्य को न आग जला सकती है, न धूप सुखा सकती है और न उसपर जल, विष, शस्त्राघात, प्रस्तराघात, भूख-प्यास, रोग-व्याधि आदि का ही असर होता है।

सोमलता के प्राप्ति-स्थल

सुश्रुत ने बताया है कि सोमलता में केवल पंद्रह पत्ते होते हैं, जो शुक्लपक्ष के पंद्रह दिनों में क्रम-क्रम से उगते हैं और कृष्णपक्ष में क्रम-क्रम से झड़ जाते हैं। हिमालय, अर्बुद, सह्य, महेंद्र, मलय, श्रीपर्वत, देवगिरि, देवसहगिरि परिपात्र, विन्ध्यपर्वत और देवसुंदह्रद ये सभी सोम-लता के उत्पत्ति-स्थान हैं। वितस्ता (झेलम) नदी के उत्तर पांच बड़े-बड़े पर्वतों के नीचे मध्यदेशस्थित सिंधु नदी में चंद्रमा नाम की सोमवल्ली शैवाल की तरह तैरती रहती है। कश्मीर के 'क्षुद्रमानस' नामक दिव्य सरोवर में भी सोमलता के उगने की बात मानी गयी है। सोमलता जितेंद्रिय मनुष्य को बहुत खोजने पर मिलती है। अधार्मिक या अजितेंद्रिय व्यक्ति तो सोमलता को देखने में भी असमर्थ रहता है।

सुश्रुत के पूर्ववर्ती आयुर्वेदाचार्य महर्षि चरक ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'चरक-संहिता' के 'चिकित्सित स्थान' में सोमलता का विवरण प्रस्तुत करते हुए उसे 'सोम-रसायन' कहा है तथा चंद्रमा को उसका अधिदेवता माना है।

'तैत्तिरीयसंहिता' (२।३।५।१) में 'सोम' को राजा में रूपांतरित कर दिया गया है। संहिताकार ने राजा सोम और उसकी तैंतीस पत्नियों की कथा को बड़े रुचिकर ढंग से उपन्यस्त किया है।

इस प्रकार, वैदिक और आयुर्वेदिक संहिताओं के विवेचन के परिप्रेक्ष्य में सोम-लता और उससे उत्पन्न सोमरस की व्यापक एवं प्रभावक महत्ता स्पष्टतया उभरकर सामने आती है। वैदिक ऋषियों और ऋचाकारों ने यदि सोमरस को एक प्रकार का मेधावर्द्धक दिव्य पेय एवं यज्ञ के लिए अनिवार्य उपकरण के रूप में आयत्त किया था, तो आयुर्वेदज्ञ महर्षियों ने इसे रोगाणु-दूषित मनुष्य के कायाकल्प का एक महार्घ साधन माना था।

—बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना-४

अपने सुख का जिक्र ऐसे व्यक्ति से मत कीजिए जो आपकी अपेक्षा कम भाग्यशाली हो।

—प्लूटार्क

तब तक लौ जलेगी

हर आग उजाला नहीं करती
एक आग वह है
जो स्वयं को जलाती है
दूसरी आग वह है
जो दूसरों को जलाती है
और तीसरी आग वह है
जो स्वयं तो जलती है
लेकिन रोशनी दूसरों को देती है
ऐसी आग की जड़ को
स्नेह सींचता है
वह नफरत के सूखे ईंधन से नहीं सुलगती
मिट्टी की देह में जब तक स्नेह है
तब तक लौ जलेगी
और रोशनी का घेरा फैलता जाएगा
लेकिन—
यह रोशनी फैलती है ऊपर को
दिये के तले तो अब भी अंधेरा है
क्या कोई ऐसा चिराग़ है
जिसके नीचे अंधेरा न छिप सके ?

—गोपाल कृष्ण कौल
(मंडी बाजार, गाजियाबाद)

• डॉ. कर्णसिंह

मानव-एकता का सिद्धांत उतना ही पुराना है जितनी पुरानी कि स्वयं सभ्यता। उदाहरणार्थ, 'वसुधैव कुटुम्ब-कम्' (अर्थात संपूर्ण विश्व एक परिवार है) प्राचीन भारतीय आदर्श रहा है। विज्ञान और तकनीक के विकास के फल-स्वरूप, जो विचार अभी तक केवल कुछ संतों और विचारकों के मस्तिष्क तक

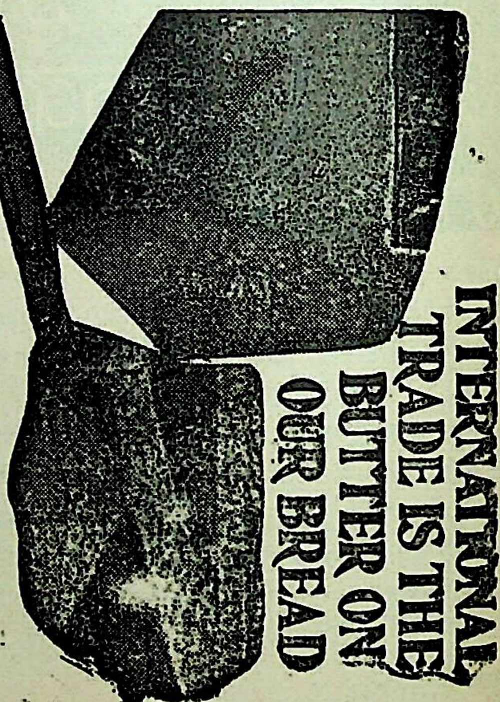


सीमित था उसे जीवन का एक सत्य वना देना अव संभव हो पाया है। उड्डयन-तकनीक, राकेट तथा अंतरिक्ष-विज्ञान ने विश्व को एक इकाई मानने और एक प्रणाली के अंतर्गत कार्य करने के विचार को विकसित करने में योगदान किया है। काफी लोग यह स्वीकार करने लगे हैं कि जब तक मानव-एकता जीवन का एक सत्य नहीं वन जाती तव तक संसार के भविष्य को अंधकारमय ही समझना चाहिए।

इस वर्ष के आरंभ में 'मानवीय वातावरण' विषय पर स्टाकहोम में हुए सम्मेलन में व्यक्त विचारों के अनुसार अधिकाधिक राष्ट्र इस वात को स्वीकार करते जा रहे हैं कि मानव-एकता अब आवश्यक हो गयी है। लेकिन दुर्भाग्य से इस वात का ज्ञान अभी आंशिक है और वस्तुतः आधुनिक व्यक्ति को दुविधा यह है कि एक ओर तो मानव-एकता के लिए आवश्यक तकनीकी ज्ञान उपलब्ध है, दूसरी ओर विचार-धारा, वर्ण, जाति और धर्म के आधार पर विभाजित करनेवाले संकीर्ण और पुरातन सिद्धांत अभी तक प्रचलित हैं। इसलिए आज हम ऐसी स्थिति में हैं जिसमें मानव-जाति के सम्मुख भीषण खतरा है। विनाश-कारी हथियारों का विकास हो रहा है और वर्तमान जनसंख्या से कई गुनी अधिक जन-संख्या को नष्ट कर देने के लिए यथेष्ट हथि-यार विद्यमान हैं। वहुत-से देशों में उन्माद वड़े पैमाने पर पाया जाता है। इसलिए आज यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि मानव-जाति रहेगी या नहीं। अब हम यह जानते हैं कि और भी अनेक ग्रहों पर जीवन विद्यमान है और यह नितांत संभव है कि यदि हमारे ग्रह पर जीवन समाप्त

हो जाता है तो भी उससे ब्रह्मांड में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आएगा। लेकिन मानव होने के नाते हमें मानव-जाति को जीवित बनाये रखने और मनुष्य की खराब हालत में सुधार करने का ही ध्यान नहीं करना है, बल्कि मानव-व्यक्तित्व के असीम रहस्य का उद्घाटन करते रहना और मनुष्य को निरंतर दिव्य की ओर प्रेरित करते रहना है।

शायद विश्व के सम्मुख इसी महान चुनौती के कारण सर्वत्र संक्षोभ दृष्टि-गोचर हो रहा है। पुरानी विचारधाराएं एवं सिद्धांत त्यागे जा रहे हैं और नयी विचारधाराओं की विशाल पैमाने पर खोज की जा रही है। प्राचीन समाप्त हो रहा है तथा नवीन जन्म लेने के लिए संघर्ष कर रहा है। हमारी पीढ़ियां स्वयं को भूत और भविष्य के मध्य की कठिन स्थिति में पा रही हैं। विज्ञान में काफी खोज की जा रही है। नक्षत्र संबंधी भौतिक विज्ञान की सहायता से हम इस महान और रहस्यपूर्ण ब्रह्मांड के सुदूर क्षेत्रों को भी देख पा रहे हैं। सूक्ष्म जीव-विज्ञान की सहायता से हम कोशाणु, पित्रैक, केंद्रघटक के ढांचे को पदार्थ तथा शक्ति के अत्यंत सूक्ष्म रूपों में स्पष्ट रूप



से देख सके हैं। इस प्रकार संपूर्ण विश्व में नयी विचारधाराओं और सत्य की विशाल पैमाने पर खोज की जा रही है। लेकिन आवश्यकता है विश्व की एक ऐसी परिकल्पना की जिसमें विज्ञान और तकनीक की अंतर्दृष्टि तथा दर्शन और धर्म का समन्वय हो। यह समन्वय एक नवीन प्रकार का होना चाहिए, जिसमें मानव की बिखरी हुई मनोवृत्तियों को एक आध्यात्मिक सिद्धांत के सहारे संकलित कर दिया गया हो, ताकि इस ग्रह पर परमाणु-विप्लव से मानव का कष्टपूर्ण ढंग से अंत न हो जाए बल्कि वह अपने लक्ष्य की प्राप्ति तक उन्नति करते रहने में समर्थ हो सके।

अनेक महान चिंतकों ने इस समस्या पर धार्मिक, वैज्ञानिक एवं दार्शनिक दृष्टि से विचार किया है, पर मेरा विचार है कि इस संबंध में श्रीअरविंद की दृष्टि सर्वाधिक सशक्त रही है।

उन्होंने विकास के सिद्धांत को एक नया अर्थ दिया। उनके अनुसार इस ग्रह पर जीवन का विकास खनिज से वनस्पति, वनस्पति से पशु तथा अंत में चरम-विकसित जीव तक हुआ है। मनुष्य विश्व में दिव्य आत्मा के महान उद्घाटन का एक भाग है। वह अपने विकास के साथ अभी सृजन के अंतिम पक्ष पर नहीं पहुंचा है, अपितु वह एक मध्यवर्ती जीव है—ऐसा जीव जिसके पैर अभी प्रकृति में हैं एवं जिसका मन दिव्य की उड़ान भरता है।

वह विकासात्मक सिद्धांत के साथ



जब तक सहयोग नहीं करता, ताकि विकास की प्रक्रिया में अगली छलांग तेजी से लगायी जा सके, तब तक मानव-जाति की समस्या का समाधान संभव नहीं होगा।

श्रीअरविंद ने वैयक्तिक मुक्ति के स्थान पर सार्वजनिक मुक्ति पर विचार किया है। यह स्थिति पार्थिव चेतना के रूपांतरण-जैसी है और इसे ही वे एक नये स्वर्ग एवं नयी धरती का निर्माण बताते हैं। इस तरह अरविंद के विचारों में एक अत्यंत शक्तिशाली वैचारिक आंदोलन की दिशा है, जिसका वर्तमान व्यक्ति से घनिष्टतम संबंध है। अंततः हमें इस आंदोलन में अपना योगदान देना होगा, जो आज विश्व में अत्यावश्यक हो गया है। यह एकता का आंदोलन है, जो अब स्वप्न नहीं रहा है।

—३, न्याय मार्ग, नयी दिल्ली-२१

बुद्धि-विलास

१. छह अंकों की एक संख्या यहां दी जा रही है जिसमें गुणन करने पर अंक तो नहीं बदलते केवल उनका क्रम बदल जाता है, अर्थात एक-एक करके पीछे वाले अंक शुरू में आते जाते हैं—

१,४२,८५७ × ५ = ७,१४,२८५
१,४२,८५७ × ४ = ५,७१,४२८
१,४२,८५७ × ६ = ८,५७,१४२
१,४२,८५७ × २ = २,८५,७१४
१,४२,८५७ × ३ = ४,२८,५७१
१,४२,८५७ × १ = १,४२,८५७

छह अंकों की इसी प्रकार की दूसरी संख्या क्या हो सकती है?

२. नगर के प्रसिद्ध जौहरी की हत्या के संदेह में उसके सचिव को पकड़ा गया। पुलिस के सामने स्वयं को निर्दोष बताते हुए सचिव ने बयान दिया—"कल रात (हत्यावाली रात) दस बजे तक उन्होंने मुझे कई चिट्ठियां डिक्टेट कीं और कहा कि सुबह छह बजे इन्हें मेरे पास हस्ताक्षरों के लिए ले आना। सुबह छह बजे जब मैं उनके कमरे में गया तो देखा कि उनकी पीठ में छुरा घुसा हुआ है। उनके सामने एक किताब खुली पड़ी थी और उसके २३-२४ नंबर के पृष्ठों पर उनकी ऐनक रखी हुई थी। क्या यह बयान आपको विश्वसनीय लगता है? यदि नहीं, तो क्यों?

३. छह फुटबाल टीमों—'त', 'थ', 'द', 'ध', 'न', 'प'—ने आपस में मिलकर एक लीग की स्थापना कर ली। हरेक ने दूसरे के विरुद्ध एक मैच खेली। इस प्रकार कुल पांच दौर हुए। 'त' ने 'प' को पहले दौर में हराया और तीसरे दौर में 'द' से वह बराबरी पर छूटी। 'ध' केवल चौथे दौर में जीत सकी 'प' के विरुद्ध; दूसरे दौर में 'ध' को 'थ' ने हरा दिया था। चौथे दौर में 'द' ने 'ध' को बड़ी मुश्किल से हराया।

बताइए, ये छहों टीमें पांचवें और अंतिम दौर में किस स्थिति में पहुंची होंगी?

४. पांच ऐसे स्तनपायी जीवों के नाम बताइए जो सामान्यतया समुद्र में रहने के आदी हों।

५. पांच प्रसिद्ध गणितज्ञों के नाम बताइए।

६. एक गणितज्ञ एक स्टोर में गया

और गलीचा खरीदने की इच्छा प्रकट की। सेल्समैन ने पूछा, "कितना बड़ा गलीचा चाहिए ?"

"१२० वर्गफुट क्षेत्र का," गणितज्ञ ने बताया। सेल्समैन ने कुछ देर सोचा, फिर कहा कि आपकी वात मेरी समझ में नहीं आयी।

गणितज्ञ ने स्पष्ट किया, "गलीचे का कर्ण (डायग्नल) ठीक १७ फुट होना चाहिए। रहा इसका नाप, सो आप खुद पता कर लीजिए।" सेल्समैन ऐसा नहीं कर पाया। क्या आप उसकी मदद कर सकते हैं ?

७. प्रेम, प्रवेश और परिमल भाई-भाई हैं। प्रेम, प्रवेश से पांच वर्ष वड़ा है। प्रवेश की उम्र जब उसकी वर्तमान उम्र से दोगुनी होगी तव परिमल की उम्र ४५ वर्ष होगी।

• जब परिमल की उम्र प्रेम की वर्तमान उम्र के बराबर होगी, प्रवेश की उम्र परिमल की वर्तमान उम्र की दोगुनी हो जाएगी।

प्रेम की उम्र वताइए।

८. चार लड़कों ने २५ सेव आपस में वांटे। रमेश ने कहा कि मैंने सबसे ज्यादा लिये और सतीश के पास सबसे कम हैं। "मैं भी कुछ कहना चाहता हूं। सही वात यह है कि रमेश के पास मुझसे दोगुने सेव हैं," सतीश ने कहा।

क्या आप वता सकते हैं कि २५ सेबों



का चारों लड़कों में किस तरह विभाजन हुआ ?

९. ऊपर दी हुई आकृति को ध्यान से देखिए और वताइए यह क्या है— किसी दैत्य की आंखें, किसी पशु या पक्षी का सिर या कोई प्रसिद्ध कलाकृति ? ●

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। यदि आप सभी प्रश्नों के सही उत्तर दे सकें तो अपने साधारण ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आधे से अधिक में सामान्य और आधे से कम में अल्प। —सम्पादक

आर्य संस्कृति के देवता यम

● चन्द्रशेखर शुक्ल

यम, सृष्टि-रचना की आदि अवस्था के युवक, यमराज (धर्मराज) के नाम से मर्त्यलोक में विश्रुत हैं। सांसारिक जीवों के कर्तव्यों के फलाफल का विचार करने-वाले ये एकमात्र नियामक हैं। सर्वप्रथम, मृत्यु का वरण कर, ये मृत्यु के देवता बने हुए हैं। अथर्ववेद में यम की उपासना के साथ मृत्यु का संयोग किया गया है : **य: प्रमथ: प्रवतभाससाद: यमाय नमो अस्तु मृत्यवे।**

वैदिक निघंटु में यम एवं मृत्यु दो पृथक देव माने गये हैं। कर्तव्य-फल का भोग देने के लिए एक लोक से दूसरे लोक में जीवों को ले जाने का काम यम ही करते हैं। यम का अर्थ ही है, जो निग्रह जितेंद्रिय हो तथा समभाव रखे।

वेदानुसार सुपाणि त्वष्टा की कन्या का नाम सरण्यु था। परम सुंदरी एवं विदुषी थी वह। विवस्वत (सूर्य-आदित्य) से सरण्यु का विवाह हुआ। इनसे जुड़वी संतान पैदा हुई-यमज ! पुत्र पहले उद्भूत होकर, 'यम' कहलाया और तदनंतर पुत्री 'यमी'। ये जगत की प्रथम संतानें थीं। यमी को यमुना भी कहते हैं। कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी को यमी ने यम को निमं-त्रित करके सुस्वादु व्यंजन खिलाया था। तभी से बहन द्वारा भाई को निमंत्रण देने की यह प्रथा आरंभ हुई।

पौराणिक गाथाओं के अनुसार यम की माता का नाम संज्ञा था। संज्ञा का विवाह सूर्य से संपन्न हुआ। यौवनावस्था तक, सूर्य के तेजस् रूप को संज्ञा झेलती रही। उससे यम और यमी उत्पन्न हुए। किंतु, वय: शैथिल्य के कारण, संज्ञा सूर्य से सहवास करने में असहाय-सी होने लगी। उसने अपनी ही छाया के सदृश, एक नारी प्रतिमा बनायी और सूर्य के सान्निध्य में उसे छोड़कर वह अन्यत्र चली गयी। उस छाया प्रतिमा से एक दूसरी संतान की उत्पत्ति हुई, जो 'मनु' नाम से विश्रुत है।

स्मृति में, चौदह यमों के नाम का उल्लेख है। इन चौदहों को तिल-मिश्रित जल तर्पण करने से वर्ष भर के पापाचार नष्ट हो जाते हैं। यह तर्पण कार्तिक माह की कृष्ण चतुर्दशी को किया जाता है तथा 'यम-तर्पण' कहलाता है।

'पद्मपुराण' में शंकर ने कहा है कि कार्त्तिक त्रयोदशी को घर के बाहर यम-दीप रखना चाहिए। इससे अपमृत्यु का नाश होता है। चतुर्दशी को चंद्रोदय होने पर स्नान करना चाहिए। दीप-दान करना चाहिए। चतुर्दशी एवं अमावास्या के संधिकाल में उल्का लेकर पितरों का मार्ग-दर्शन करना चाहिए। इससे पितृ-

लोक में पड़े, पितृगण मार्ग देखते हैं।

पितृलोक कुल सात हैं—अग्निष्वात, बर्हिषद्, सुभास्वर, आज्यप, अपहूत, क्रव्याद, सुकालिन। इसी तरह पिता भी सात हैं—जन्मदाता, उपनेता (जनेऊ कराने वाला), विद्यादाता, अन्नदाता, भयदाता, श्वसुर एवं ज्येष्ठ भ्राता। यमराज इन सबके अधिष्ठान्न देव हैं।

यम के दो रूप वर्णित हैं—यमराज एवं धर्मराज। ये क्रमशः पापात्माओं एवं पुण्यात्माओं के निर्णयार्थ हैं।

यम को वीणावादन, घृत तथा दूध प्रिय है। इनका प्रशस्त पथ मृत्यु है। दो दूत उलूक और कपोत हैं। इनके दो अंगरक्षक हैं—चितकबरे एवं श्याम कुत्ते। ये चार-चार आंखों वाले भयंकरता के प्रतीक हैं। यम के घोड़ों की आंखें स्वर्णिम एवं उनकी खुरें लौह-निर्मित हैं। उल्लू, मृत्यु का नामांतर है और ये कुत्ते निरंतर गतिमान, जगत का पर्यवेक्षण करते हुए, चंद्र, सूर्य के प्रतीक हैं।

तिलक ने लिखा है कि 'विष्णु पुराण' पढ़ने से ज्ञात होता है कि देवयान और पितृयान सूर्य के भ्रमण-पथ के अंश विशेष हैं। यम, सूर्य के पुत्र हैं। इनका पथ देवयान से विपरीत दक्षिणायन पथ है।

यमलोक में वैतरणी नदी (नरक की नदी) की कल्पना की गयी है। यह वैतरणी और कुछ नहीं, मात्र निरंतर दर्शनीय 'आकाशगंगा' है। इस के मध्य में नौका-सदृश अगस्त्य नक्षत्र है। यम के दो कुत्ते दोनों किनारों पर मितारे हैं।

विषुवन से लेकर समस्त दक्षिणायन पथ का नाम ही यमलोक है। 'मृगशिरा'



राजस्थान के मंदिर में मिली यम-मूर्ति

नक्षत्र में 'विषुवन' नहीं रहने के कारण, यमलोक जाने में वैतरणी नहीं पड़ती।

—मंडल लेखा कार्यालय, पूर्वोत्तर रेलवे,
वाराणसी-२

लक्ष्मी-स्तवन

ओं हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्ण रजतस्रजाम्
चन्द्रां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह (श्रीसूक्त १)

—हे अग्निदेव ! तुम सुवर्ण के समान वर्णवाली, किंचित हरितवर्णवाली, हरिणी रूपधारिणी, सोने और चांदी की माला को धारण करनेवाली, चंद्रमा के समान प्रकाशमान और उसके तुल्य सबको प्रसन्न करनेवाली सुवर्णमयी लक्ष्मी को मेरे लिए ले आओ।

तां म आवह, जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥ (श्रीसूक्त २)

—हे जातवेद ! (वेदों को प्रकट करने वाले) तुम मेरे लिए अन्यत्र न जानेवाली उस लक्ष्मी को बुला लाओ जिसके आगमन से मैं अतुल संपत्ति, गोधन, घोड़े और मनुष्यों अर्थात पुत्र-पौत्रादि को प्राप्त करूं।

आर्द्रां यशस्करीं, यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥ (श्रीसूक्त १४)

—स्नेहमयी (दुष्टों को दंड देनेवाली होने पर भी कोमल स्वभाव की), यश को बढ़ानेवाली, सबको अवलंबन देनेवाली, सुंदर वर्णवाली, स्वर्णमाला पहननेवाली, ऐश्वर्यशालिनी, हिरण्यमयी लक्ष्मी को, हे अग्निदेव, मेरे लिए बुला लाओ। वे लक्ष्मीजी अविचलित होकर स्थिर रूप से रहें, यही यत्न तुम करो।

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताःस्म परिपालय देवि विश्वम् ॥ (दु. स. ४/५)

—भगवति ! पुण्यशीलों के यहां संपत्ति, पापात्माओं के यहां दरिद्रा, बुद्धिमानों के हृदयों में विमल बुद्धि, सज्जनों के यहां श्रद्धा और कुलशील संपन्नों के यहां लज्जा या विनम्रता-रूप में आप निवास करती हैं। अतः संपूर्ण या विविध रूपों से सर्वत्र विचरणशीला आपको हम नमस्कार करते हैं। आप चराचर का पालन करें।

—प्रस्तोता : ब्रह्मदत्त शर्मा

क्यों और क्यों नहीं

इस लेखमाला के अंतर्गत अब तक अमृतलाल नागर, पंत, अज्ञेय, बच्चन, यशपाल, धर्मवीर भारती, जैनेन्द्र, रेणु एवं महादेवी पाठकों के प्रश्नों के उत्तर दे चुके हैं, इस अंक में प्रस्तुत हैं—भगवतीचरण वर्मा

आप सब लोगों को नमस्कार

भगवतीचरण वर्मा

सुधांशु आर्य, देहरादून : (१) आपने लिखना कब से आरंभ किया ? आपका प्रथम उपन्यास कौन-सा है ? (२) आपको शिकार खेलने का शौक कब से है ?

(१) जहां तक मुझे याद है, मैंने प्रथम बार एक कविता लिखी थी जुलाई या अगस्त सन १९१७ में, लेकिन मेरी कविता प्रकाशित हुई थी सन १९१८ में। मेरा पहला उपन्यास 'पतन' है, जो सन १९२९ में प्रकाशित हुआ था।

(२) मुझे शिकार खेलने का शौक न कभी रहा है और न है।

अचितमोहन शर्मा, आगरा : आपकी सर्वप्रथम रचना कौन-सी थी और वह कहां प्रकाशित हुई।

मेरी सर्वप्रथम रचना एक देशभक्ति की कविता है, जो कानपुर से प्रकाशित 'प्रताप' साप्ताहिक में सन १९१८ में छपी थी।

शिवनारायण शिवहरे, सोहागपुर : (१) विगत कुछ वर्षों से हिंदी साहित्य के सृजन एवं परिवेश में कई परिवर्तन हुए हैं। इनपर आपके विचार जानना चाहूंगा। (२) फिल्मी दुनिया के आपके क्या अनुभव हैं ?

(१) युग और परिस्थितियों के साथ साहित्य के रूप में परिवर्तन होते रहते हैं। मैं स्वयं परिवर्तित युग एवं परिवेश की उपज हूं। ये परिवर्तन तो मानव-विकास के चरण-चिह्न हैं। वैसे प्रत्येक युग में जिस साहित्य का सृजन होता है उसमें अधिकांश तत्काल ही लुप्त हो जाता है, बहुत थोड़ा ही ऐसा होता है जो युग को लांघकर जीवित रहे। वर्तमान काल में भी अनेक प्रतिभाशाली साहित्यकार मौजूद हैं, जिनमें कुछेक की कृतियां काल और समय की सीमा लांघ सकेंगी।

(२) फिल्मी दुनिया में रहकर मुझे यह अनुभव हुआ कि एक स्वाभिमानी साहित्यकार के लिए वहां का वातावरण अनुकूल नहीं है। हरेक कला के साथ उसकी विसंगतियां होती हैं—प्रदर्शन और अभिनय-कला की अपनी निजी

विसंगतियां हैं। वहां प्रमुखता फिल्म-निर्माताओं और अभिनेताओं की होती है। साहित्यकार अपने सृजन को सीधे जनता के सामने प्रस्तुत करने के स्थान पर निर्देशकों एवं अभिनेताओं के माध्यम से प्रस्तुत कर पाता है। उसे इन लोगों की पसंद-नापसंद या इनके द्वारा काट-छांट अथवा मनमाने परिवर्तन को स्वीकार करना पड़ता है। मेरा अनुभव तो यह है कि फिल्म-जगत का हरेक व्यक्ति—निर्माता से लेकर चपरासी तक—यह समझता है कि वह कहानी लिख सकता है या फिर किसी दूसरे की लिखी कहानी को सुधारकर उसे फिल्मी कहानी बना सकता है। संगीत, दृश्य और अभिनय की प्रधानता होने के कारण फिल्मी दुनिया में मूल कहानी के महत्त्व को स्वीकार ही नहीं किया जाता। यही मुख्य कारण है कि अधिकांश फिल्में असफल होती हैं। फिल्मी दुनिया में जाकर एक चेतन और प्रबुद्ध साहित्यकार के आत्मविश्वास को धक्का-सा लगता है, और वह वहां से भाग खड़ा होता है।

मनोज शर्मा, कुर्ग : 'सबहिं नचावत राम गोसाईं' आपकी बहुत सशक्त कृति बन गयी थी, पर फ्लैप पर यह सफाई छपवाकर कि यह पुस्तक रामजी के इंगित पर ही लिखी गयी है, आपने अनावश्यक स्पष्टीकरण दे डाला है। यह स्पष्टीकरण किसे दिया है आपने ? पाठक तो आपसे पूछता नहीं, क्योंकि उसमें आपने राजनीतिज्ञों की कलई खोली है... या यह स्पष्टीकरण राजनीतिज्ञों के क्रोध से बचने के लिए दिया था आपने ?

'सबहिं नचावत राम गोसाईं' एक सामाजिक व्यंग्य है—राजनीति को मैं सामाजिकता के अंतर्गत ही समझता हूं। इस व्यंग्य का उद्देश्य न तो किसी को उपदेश देना है, न किसी की आलोचना करना है। इस उपन्यास के किसी भी चरित्र पर पाठक को न क्रोध आये, न उससे घृणा हो, मेरा उद्देश्य तो यह रहा है। एक शिष्ट हास्य की धारा इसमें लगातार चलती रहती है। उपन्यास का शीर्षक ही यह स्पष्ट कर देता है कि उसमें मानव-विकृतियों का प्रदर्शन पाठक के एक सात्विक मनोरंजन के लिए ही किया गया है, किसी के प्रति विद्वेष की भावना से प्रेरित होकर नहीं।

जहां तक राजनीतिज्ञों का प्रश्न है, न मैंने कभी किसी राजनीतिज्ञ की कृपा चाही है, न मैंने किसी के क्रोध की परवाह की है। जहां तक फ्लैप पर छपे वाक्य का प्रश्न है वह तो प्रकाशक ने मेरे परिहास के रंग में रंगकर मेरे उपन्यास के अंतिम वाक्यों को उद्धत कर दिया है—मैंने उसे अपनी सफाई देने का कोई आदेश नहीं दिया था।

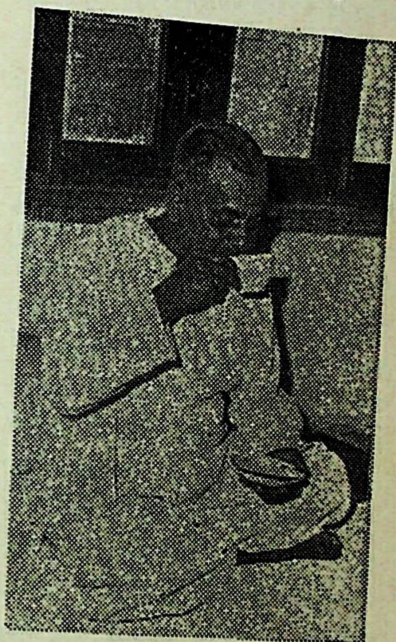
मदनलाल आसोपा कलकत्ता : स्व. रांगेय राघव ने अपने उपन्यास 'सीधा-सादा रास्ता' में आपकी तथा आपके उपन्यास 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते' की कटु आलोचना की है। आपने जहां उपन्यास समाप्त किया

है, वहीं से तथा उन्हीं पात्रों से 'सीधा-सादा रास्ता' रांगेयजी ने लिखा है। इस बारे में आपकी क्या राय है?

जहां तक मुझे याद है, जब 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते' प्रकाशित हुआ था तब उसे लेकर साहित्य-जगत में एक हलचल-सी मच गयी थी। वह युग प्रगतिशील साहित्य के उफान का था, समाजवादी विचार-धारा एक दल-विशेष में केंद्रित होकर अपने को देश पर आरोपित कर रही थी। उस विचारधारावालों को 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते' में गांधीवादी विचारधारा का प्रतिपादन दीखता था, यद्यपि सही अर्थों में उसमें किसी भी विचारधारा का प्रतिपादन नहीं था, वह तो उस काल में प्रचलित सभी विचारधाराओं के परिवेश में मानवीय संवेदना एवं मानवतावाद का आरोपण भर था। लेकिन प्रगतिशीलता के आवेश के उस युग में 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते' की तीव्र आलोचनाएं लिखी गयीं, जिनमें सर्व-प्रमुख आलोचना डॉक्टर रामविलास शर्मा की थी। शायद उसी आलोचना से प्रभावित होकर डॉक्टर रांगेय राघव ने 'सीधा-सादा रास्ता' लिख डाला था, जिसकी भूमिका के रूप में उन्होंने 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते' की डॉक्टर रामविलास शर्मा की लंबी आलोचना छपायी थी।

रूपा जैन, दिल्ली: (१) आपके हर उपन्यास में भाग्यवाद प्रमुख रहा है। क्या उससे मनुष्य के आत्मविश्वास को ठेस नहीं पहुंचती? (२) आपने उपन्यासों ('रेखा' और 'पतन') में नारी को बुरे व्यसनों का आदी दिखाया है। क्या नारी के लिए अपनी मर्यादा छोड़ना इतना आसान हो गया है?

मुझे यह कहते तनिक भी संकोच नहीं कि मैं नियतिवादी हूं, इस नियतिवाद को कुछ लोग भाग्यवाद कह देते हैं। मैं मनुष्य को



आप की पुस्तकों में जो आकर्षण है वह..:

कर्म करने में स्वतंत्र नहीं मानता हूं, हरेक मनुष्य अपने कर्म में एक ओर तो अपनी आंतरिक प्रवृत्तियों से विवश है, जो उसे जन्म से प्राप्त होती हैं, दूसरी ओर वह बहिर-परिस्थितियों से विवश है, जिन्हें चाहे-अनचाहे उसे स्वीकार करना पड़ता

है। जहां तक प्रवृत्तियों का प्रश्न है, कभी-कभी मनुष्य में एक-दूसरे की विरोधी प्रवृत्तियां डूबती-उतराती नजर आती हैं और उन प्रवृत्तियों को मोड़ देती रहती हैं परिस्थितियां। यह है मेरा नियतिवाद! लेकिन इस नियतिवाद से मनुष्य के आत्म-विश्वास को किसी हालत में ठेस नहीं पहुंच सकती, क्योंकि यह आत्मविश्वास भी तो मानव की एक प्रवृत्ति ही है।

(२) मुझे 'पतन' उपन्यास का कथानक तो ठीक तरह से याद नहीं, हां 'रेखा' का कथानक अवश्य याद है। प्रश्न यह है कि क्या रेखा बुरे व्यसनों की आदी है? एक वार कलकत्ता के एक सेमिनार में वहां की कुछ छात्राओं ने मुझसे प्रश्न किया था कि मैंने रेखा के साथ अन्याय क्यों किया है। उत्तर में मैंने भी प्रश्न किया था, "तो क्या आपकी सहानुभूति रेखा के साथ है?" उन्होंने स्वीकार किया कि निश्चय ही, तभी तो उन्होंने यह प्रश्न पूछा है। मैंने मुसकराते हुए उत्तर दिया था, "निर्धारित सामाजिक मान्यताओं के अनुसार पथभ्रष्ट दीखने वाली रेखा आपकी सहानुभूति ले बैठी—पता नहीं आप इसमें रेखा के साथ मेरा अन्याय किस तरह समझती हैं?" मेरे इस प्रश्न से संतुष्ट होकर वे चली गयीं।

पुरुष को प्रायः यौन-संवंधी विकृतियों का पुतला अंकित किया जाता है—इस पर कभी किसी पुरुष ने कोई आपत्ति नहीं की। रेखा, जो स्वयं यौन-विकृतियों से मुक्त एक नेक और सहृदय लड़की है, अपनी एक भूल के कारण लगातार गिरती रहती है और अंत में वह पागल हो जाती है। उसकी भूल यह है कि उसने विवाह को मात्र मानसिक संवंध समझा, प्रभाशंकर के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर। उसने विवाह को शारीरिक संवंध न समझने की वहुत वड़ी भूल कर डाली। इसमें मैंने नारी को 'मर्यादा तोड़ने वाली' प्रतिपादित करने का तो कोई प्रयत्न नहीं किया है!

करनजीत सिंह, जुन्नारदेव (छिंदवाड़ा) : (१) 'चित्रलेखा' की प्रेरणा आपको कैसे मिली? इस उपन्यास को आपने कब और कितने दिनों में लिखा? लिखने के पश्चात इसके प्रकाशन में कितना समय लगा? (२) आज की अनेक प्रतिष्ठित पत्रिकाओं के संपादक नयें लेखकों की स्तरीय रचनाओं को भी प्रकाशित करने से कतराते क्यों हैं?

(१) मेरे परम मित्र स्वर्गीय वालकृष्ण शर्मा ने एक वार मुझसे अनातोले फ्रांस की 'थाया' की वड़ी प्रशंसा की थी—यह वात शायद १९२९ की थी। मैंने वह उपन्यास नहीं पढ़ा था, मैं प्रमुखतः कवि ही था। 'पतन' नाम का एक उपन्यास मैंने अवश्य लिख डाला था, लेकिन वह उपन्यास-लेखन का प्रयोग-भर था। यहां यह वतला देना असंगत न होगा कि वह मेरे जीवन में भयानक संघर्षों का काल था। पत्नी को क्षय रोग हो गया था, घर के गहने विक चुके थे और निराशा की हालत में मैं वकालत जमाने के लिए हमीरपुर चला गया था, जो मेरी ननिहाल

थी। मेरे नाना-मामा संपन्न जमींदार थे। लेकिन मेरी वकालत न जमनी थी और न जमी। उन्हीं दिनों मन बहलाने के लिए 'थाया' उपन्यास पढ़ने का मौका मिल गया। यह बात सन १९३० की है। मुझे लगा कि वैसा या उससे भी सशक्त उपन्यास उसी विषय-वस्तु पर मैं लिख सकता हूं। एक दिन सुबह के समय बेकार बैठकर मुअक्किलों की बाट जोहने के क्रम से आजिज आकर मैं दो आने की एक छोटी-सी कापी ले आया और मैंने उसमें पहला वाक्य यह लिखा—श्वेतांक ने पूछा, "और पाप", समस्याएं वही थीं जो थाया की थीं, लेकिन कहानी मेरी थी, कहानी का प्रस्तुतीकरण मेरा था, निदान मेरा था। कहानी बाद में स्वयं विकसित होती चली गयी।

'चित्रलेखा' लिखने में मुझे प्राय: तीन वर्ष लगे—सन १९३३ में वह उपन्यास पूरा हुआ, सन १९३४ में वह प्रकाशित हुआ।

(२) जितनी भी प्रतिष्ठित पत्रिकाएं हैं वे सबकी सब ऊंचे स्तर वाली कृतियों को छापने के कारण प्रतिष्ठित हुई हैं। जो पुराने लेखक हैं, समय की कसौटी पर उनका स्तर तो निर्धारित हो चुका है, नये लेखकों के स्तर का पता लगना बड़ा कठिन है, क्योंकि हिंदी के प्रचार और प्रसार के साथ लेखकों की संख्या में एक बाढ़-सी आ गयी है। हरेक प्रतिष्ठित पत्रिका के पास हजारों कहानियां, कविताएं एवं लेख प्रकाशन के लिए पहुंचते हैं और उन सबों को पढ़ने के लिए उसके पास समय नहीं है, केवल सरसरी नजरों से उन्हें देखा जा सकता है। ऐसी हालत में व्यक्तिगत संपर्क अथवा प्रभाव के कारण जो उच्च स्तर के नये लेखक संपादक तक पहुंच जाते हैं उनकी कृतियां तो छप जाती हैं, बाकी को निराश होना पड़ता है। जो वास्तव में प्रतिभावान लेखक हैं वे तो देर-सवेर अपना मार्ग बना ही लेते हैं।

विपिनबिहारी सिंह, श्रीनगर (कश्मीर): 'चित्रलेखा' में उपदेश-भरे सारे संवाद आपका अपना चिंतन है या पुराने इतिहास को आपने नये शब्द दिये हैं?

सत्ताईस साल का एक युवक, जो ताजा-ताजा विश्वविद्यालय से निकलकर, वकालत जमाकर आजीविका प्राप्त करने के भयानक संघर्षों में उलझ जाता है, उसमें उसका अपना निजी चिंतन भला कैसे और कहां हो सकता है? मैं आपको बधाई देता हूं कि आपने मेरी दुखती रग पकड़ ली और यह प्रश्न पूछ लिया। 'चित्रलेखा' में मैंने पुराने इतिहास को नये शब्द दिये हैं, स्पष्ट रूप से मेरे पास उस समय कोई दर्शन था भी नहीं। इतना मैं स्वीकार करता हूं।

लेकिन प्रश्न यह है कि एकदम नया और मौलिक है कहां और कितना? कलाकार का विचारक होना अनिवार्य नहीं है, वस्तुत: कला में दार्शनिक चिंतन का बोझ कला की कमजोरी है। कला-

कार तो भावना के क्षेत्र का प्राणी है। उसके अंदर जाने-अनजाने भले ही एक सचेत मानव बैठा हो, वह तो मुख्य रूप से भावनात्मक अभिव्यक्ति को ही अपना क्षेत्र मानता है।

हां, मैं इतना स्वीकार करता हूं कि हरेक मनुष्य में एक जन्मजात स्वाभाविक प्रवृत्ति के रूप में उसका एक निजी दर्शन होता है। वह दर्शन चेतन, अचेतन अथवा अवचेतन किसी भी रूप में हो। 'चित्रलेखा' में अचेतन या अवचेतन रूप में नियतिवाद का दर्शन मेरा निजी है।

पुरुषोत्तम मिश्र, मगध (बिहार) : ऐतिहासिक उपन्यासकार की दृष्टि उपन्यास की रचना-प्रक्रिया में इतिहासतत्त्व पर रहनी चाहिए अथवा इतिहास रस पर ?

मैं अपने को ऐतिहासिक उपन्यासकार नहीं—सही शब्द होना चाहिए 'ऐतिहासिक उपन्यास का लेखक'—नहीं समझता। यद्यपि मेरे प्रमुख चार उपन्यास—'भूले-बिसरे चित्र', 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते', 'सीधी-सच्ची बात' और 'प्रश्न और मरीचिका' ऐतिहासिक परिवेश को लेकर लिखे गये हैं। उन उपन्यासों में भारत का सन १८८५ से १९६३ तक का इतिहास सन्निहित है, इस युग के एक सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, समस्यामूलक एवं राजनीतिक विश्लेषण के रूप में, जहां प्राथमिकता कथा-सूत्र की कलात्मकता को दी गयी है, न कि कोरे इतिहास को। इनमें इतिहास बनाने वाले व्यक्ति पात्रों के रूप में नहीं हैं, जहां-तहां उनका उल्लेख भर है। इनमें केवल युग की धाराएं हैं।

लेकिन जो अपने को ऐतिहासिक उपन्यासकार कहते हैं या जो आलोचकों द्वारा घोषित किये जाते हैं उनके लिए यह अनिवार्य है कि वे ऐतिहासिक चरित्रों एवं विशेष घटनाओं को आधार बनाकर ही अपनी रचना करें। ऐसी हालत में उनकी दृष्टि इतिहास पर ही रहेगी—इतिहास-तत्त्व पर। जहां मात्र इतिहास-रस पर उसकी दृष्टि गयी, उसका उपन्यास समस्यामूलक बन जाएगा, ऐतिहासिक नहीं रहेगा।

दिनेश शर्मा, बेरटी-सोलन (हि. प्र.) : पाप की व्याख्या करते-करते कुमारगिरि, जो ज्ञान के आलोकमय जीवन में स्त्री का कोई स्थान नहीं मानते, स्वयं चित्रलेखा से कह उठते हैं—'नर्तकी मैं तुमसे प्रेम करता हूं' तथा 'तुम मुझे डुबाने आयी हो, मैं भी डूबने को तैयार हूं . . .' कुमारगिरि का यह पतन कहां तक उचित है? और इसके लिए कौन उत्तरदायी है?

प्रश्नों का उत्तर देते-देते मैं बेतरह थक गया हूं। शायद ठीक इसी तरह की थकावट कुमारगिरि की साधना के जीवन में आ गयी होगी। ऐसी हालत में उत्तरदायित्व कुमारगिरि का न मानकर परिस्थितियों का ही माना जाना चाहिए! आप सब लोगों को नमस्कार!

—चित्रलेखा, महानगर, लखनऊ

बंगला कहानी

हिजड़े

• अब्दुल जब्बार



ठीक गिद्ध-दृष्टि की तरह, जिससे कोई भी मृत पशु-पक्षी वच नहीं सकता, कलकत्ता के अति व्यस्त इलाके—टालीगंज, खिदरपुर, धर्मतल्ला, तांगरा और तालटोला में—रहने के बावजूद हिजड़े इस बात की पूरी चौकसी रखते कि कलकत्ता या उसके साथ बसे गांवों में कौन भला आदमी उनका आसामी बनने वाला है।

इस दिन बारिश की हलकी-हलकी फुहारें पड़ रही थीं। दूर क्षितिज तक आकाश काले-सफेद बादलों से ढका हुआ था। खेतों के बीच संकरे रास्ते पार करते हुए तीन हिजड़े चले जा रहे थे। उनके नाम थे रूपा, वंसरी और मैना। पचपन वरस का रूपा मर्द-हिजड़ा था। और साथ ही इस गुट का मुखिया भी।

वे तीनों जब गांव के किनारे पहुंचे तो उनका सामना सबसे पहले मंदिर के पुजारी से हुआ। उन तीनों को सामने देखकर वे रास्ते से एक ओर हट गये, और बुदबुदाये, "राम! राम!" रूपा हंसा, "पंडितजी, हमने तुम्हारा दिन खराब कर दिया... चच्... चच्! पर जरा यह तो बताइए कि घोषाल बाबू का घर किधर है?"

पुजारी ने कोई जवाब नहीं दिया, बल्कि मुड़कर एक तरफ चल दिये। मैना उसके पीछे दौड़ी और बड़े ही अश्लील ढंग से अपनी साड़ी जांघों तक खींचकर चिल्लायी, "ओ भले आदमी! इधर तो



लेखक

देखो . . ." मैना नहीं जानती थी कि वह किससे मखौल कर रही है।

कम-से-कम रूपा को तो पुजारी को पहचान लेना चाहिए था, लेकिन उसने भी उसे नहीं पहचाना। रामपुर से संबंध तोड़े हुए कई वर्ष बीत चुके थे और यह मैना ही रामपुर छोड़ने का कारण-विशेष थी। मैना की पैदाइश इसी गांव में हुई थी।

जब वे हरि घोषाल के घर पहुंचे तो छोटे-छोटे बालकों के एक झुंड ने उन्हें घेर लिया। घोषाल की अधेड़ पत्नी अपनी बेटी रमला के साथ घर के बाहर आयीं। रमला ने तीन माह पहले एक पुत्र को जन्म दिया था। इस समय वह उसे ही गोद में लिये हुए थी। रूपा ने बच्चे को मां की गोद से ले लिया। गोल तथा मोटा-सा बच्चा बड़ा सुंदर लग रहा था। रूपा उसे बांहों में झुलाने लगा।

इसके बाद उन तीनों ने मिलकर गीत गाया। गीत की समाप्ति तक हरि घोषाल के आंगन में औरतों के अलावा मर्दों की भीड़ भी घुस आयी थी। सभी की नजरें मैना पर जमी थीं। हरि घोषाल की छोटी लड़की रमला से उसका चेहरा मिलता-जुलता था। लोगों में इस बात को लेकर कानाफूसी भी हो रही थी। हिजड़े अब कव्वाली गाने लगे थे।

हरि घोषाल की पत्नी दरवाजे के साथ खड़ी शून्य की ओर निहार रही थीं। उनकी नजर में एक निरीह-सा भाव तैर रहा था। रूपा उनके सामने पहुंचकर बच्चे को आशीर्वाद देने लगा। उन्होंने पूछा, "क्या तुम रूपा हो? हो ना?"

रूपा ने कुछ देर के लिए सोचा, फिर कहा, "हां, ठीक ही पहचान रही हैं।"

यह सुनते ही श्रीमती घोषाल के कंठ में आवेग तरल पदार्थ की तरह पिघलने लगा। नजरों में हलकी नमी तैर गयी। लेकिन किसी तरह आंसुओं को रोककर वे अंदर गयीं। जब वे लौटीं तो उनके हाथ में चावलों-भरा थाल, पांच रुपये, सुपारी और मिठाई थी। उन चीजों को फर्श पर रखते-रखते वे रो पड़ीं।

रमला पास ही खड़ी थी। स्तंभित-सी। पूछा, "क्या हुआ मां?"

"रमला! तुमने उस सुंदर हिजड़े पर गौर किया? क्या तुम्हारी शक्ल नहीं मिलती उससे? मैंने, तुम्हारी तरह उसे भी जन्म दिया है, मेरी बेटी। इस रूपा की वजह से वह हमारे पास नहीं है।"

"कमला! मेरी दीदी?" उसकी नजरों में एक सुखद आश्चर्य-मिश्रित भाव था। लेकिन शीघ्र ही यह सुख उसकी आंखों में नमी फैला गया। उसने तर्जनी के इशारे से रूपा को भीतर बुला लिया। रूपा भीतर न आकर सीढ़ियों पर बैठ गया और अपनी साड़ी के पल्लू को रमला

के आगे पसार दिया, उपहार पाने के लिए। श्रीमती घोषाल ने अपने आंसू पोंछे। उसे चीजें देते हुए उन्होंने उससे पूछा, "सच बताना ! क्या मैंना मेरी लड़की कमला नहीं है, जिसे तुम मुझसे छीनकर ले गये थे ?"

"नहीं, कमला तो मर चुकी।"

"सच बोलो रूपा ! तुम एक मां को धोखा नहीं दे सकते। मैं उसे पहचान चुकी हूं।"

रूपा ने एक मां के दिल के दर्द को महसूस किया। उसने सोचा कि उसे रामपुर नहीं आना चाहिए था। उसने स्वीकारा, "हां मां, यह तुम्हारी लड़की कमला ही है।" यह सुनकर श्रीमती घोषाल एक बार फिर आंसुओं में डूब गयीं। एकाएक वे दौड़कर बाहर गयीं और मैंना से लिपट गयीं। वे उसे बेतहाशा चूमने लगीं। पागलों की भांति वे बड़बड़ा रही थीं, "कमला ! मेरी बेटी कमला, आह !"

रूपा भी बाहर आकर बैठ गया। मूक दर्शक की तरह वह सब कुछ देखता रहा। उसका दिमाग जला जा रहा था। मैंना के मुख पर आश्चर्य-मिश्रित भाव थे। पर शीघ्र ही वह सारा माजरा समझ गयी और अगले पल वह भी फूट-फूट कर रो पड़ी।



लंबे अंतराल के बाद मैंना ने अपनी

मां को देखा था। बिछोह के बाद मिलन। एक अजनबी-सा सुख वह अपने अंतर में महसूस करने लगी। एक अजीब-सा नशा उसके बदन को थिराने लगा। आंगन के पक्के फर्श पर वह बेहोश हो फैल गयी। रमला दौड़कर पानी का लोटा उठा लायी।

श्रीमती घोषाल ने अब अपने को संभाल लिया था। उन्होंने रूपा से कहा, "तुम सब आज दोपहर का खाना यहीं खाकर जाओगी। जब तक खाना बने तब तक मैना को हमारे साथ छोड़ दो।"

रूपा ने हामी भर ली। वह बाहर आया और तमाम बातें बंसरी को बतायीं।

रमला मैना को सोनेवाले कमरे में ले गयी। मैना ने अपने भांजे को रमला से लिया और चूमने लगी। उसने नजर भरकर बच्चे की ओर देखा, फिर उसकी मां को। फिर उसे अपनी बदकिस्मती पर रुलाई-सी आ गयी।

ठीक दोपहरी में हरि घोषाल रोजाना की तरह घर वापस आये। घने विस्मय के साथ उन्होंने देखा, सुबह जिन हिजड़ों ने उनका मजाक उड़ाया था, वे उनके घर में डेरा डाले पड़े थे। रमला ने उन्हें बताया कि उनकी अपनी बेटी भी इन हिजड़ों में शामिल है। उसने मैना को पिता के सामने खड़ा कर दिया। मैना के मुख पर सफेदी-सी छा गयी। जिस आदमी का सुबह वह मजाक उड़ा रही थी, वह और और कोई नहीं उसका ही बाप था। उसका सिर शर्म से झुक गया।

हरि घोषाल की आवाज भर्रा गयी। उन्होंने खखारकर गला साफ किया। बोले, "सुबह के अपने व्यवहार की वजह से शर्मिंदा न हो, मेरी बच्ची! यह सब अपने कर्मों का फल है। हे भगवान!" उनकी आंखों में आंसू थे, जिन्हें बंद पलकों पर हथेलियां रखकर रोकने की उन्होंने असफल चेष्टा की।

श्रीमती घोषाल ने फिर सबको बड़े प्यार के साथ भोजन कराया। उन हिजड़ों ने अपनी जिंदगी में इससे पहले कभी भी इतना बढ़िया भोजन नहीं किया था।

इसके बाद वह पल आया जब उन्हें जुदा होना था। एक बार फिर मैना के मां-बाप रोने लगे।

अंत में रूपा ने मैना की बांह पकड़कर घर से बाहर खींच लिया। मैना ने कोई प्रतिवाद नहीं किया, लेकिन वहां से हटने की उसकी इच्छा नहीं थी। 'मां-मां!' करते वह रो पड़ी। उसने गुस्से में रूपा की बांह पर दांत गड़ा दिये।

"बेवकूफ मत बनो, मैना! क्या कर सकेंगे तुम्हारे मां-बाप तुम्हारे लिए? कौन करेगा तुमसे शादी? क्या कीमत है हमारी-तुम्हारी? फूटी कौड़ी भी तो नहीं! हम इंसानियत के नाम पर कलंक हैं।" रूपा ने उसे समझाया।

मैना अब अपेक्षाकृत शांत थी। रूपा उसे समझा रहा था, "मैं भी एक अच्छे घर में पैदा हुआ था, मुर्शिदाबाद के एक


NEW!
SUPER
Surf
FOR
SUPER
WHITENESS

मुस्लिम परिवार में। वहां मेरे मां-बाप की पक्की हवेली थी। मेरा बड़ा भाई थानेदार है। क्या मैं वहां वापस जा सका? नहीं। अगर कभी मैं उधर चला जाऊं तो मेरे भाई की सारी इज्जत मिट्टी में मिल जाएगी। तुम्हारे मां-बाप भी चंद घंटों के लिए प्यार कर सकते हैं। मैं तुमसे पूछता हूं, क्या वे कुछ दिनों या महीनों के लिए तुम्हें अपने घर में रख सकते हैं? नहीं, कदापि नहीं। संसार का कोई भी आदमी हिजड़ों के गम को गहराई से महसूस भी नहीं करता।

"हमें लोग हिजड़ा कहते हैं। भाषा हमें कोई अच्छा शब्द देने में अनिच्छुक है। हमारे बारे में धर्म के कोई विचार नहीं हैं। शास्त्र भी चुप हैं, वे नहीं बता सकते कि हम मरने के बाद कहां जाते हैं—स्वर्ग या नरक में! कोई कत्ल अगर आंखों के सामने हो तो दुनिया की कोई भी अदालत हमारी गवाही को नहीं स्वीकारती, हालांकि कानून के पास ऐसी कोई दलील नहीं जिससे कि हमें इनसान न माना जाए। क्षण भर रुककर रूपा ने कहा, "एक मुस्लिम परिवार का लड़का होने के नाते मैंने हमेशा रोजे रखे। अल्लाह के दरबार में आंसुओं से भरी गुजारिशें कीं। पांचों वक्त की नमाजें पढ़ीं। लेकिन सब बंद कर दिया। क्या किया अल्लाह ने मेरे लिए?" फिर उसने मैना को समझाते हुए कहा, "मेरी मानो, भूल जाओ इस बात को कि तुम्हारा भी कोई घर था। जितना इस बात को याद करोगी, तुम्हारा दुख बढ़ता ही जाएगा। हां, मुझे खुशी है कि तुम अपने मां-बाप से मिल सकीं। एक अरसा पहले मैंने तुमसे जो वायदा किया था, वह अनजाने ही पूरा हो गया।"



कलकत्ता जाने वाली बसों के स्टैंड से कुछ पहले ही लोगों की भीड़ मिली जो नारे लगा रही थी। कुछ युवा लोगों के हाथों में नारे-लिखी पट्टियां थीं। सभी नारों से अमरीका के प्रति नाराजगी प्रकट होती थी।

अचानक रूपा चिल्ला उठा—"इन्कलाब जिंदाबाद!"

लेकिन भीड़ ने उसकी आवाज को अनसुना कर दिया। रूपा नर्वस हो गया। उसने महसूस किया, उसके नारे की कोई कीमत नहीं है।

बस-स्टैंड पहुंच कर उन्हें कलकत्ता जाने वाली बस आसानी से मिल गयी।

बस चलीं तो मैना फिर रो पड़ी। उसका घर-गांव पीछे छूट रहा था।

कलकत्ते में अपने निवास पर पहुंचकर रूपा नानबाई की दूकान से थोड़ा कबाब और नान ले आया? लेकिन मैना ने हाथ भी नहीं लगाया। रमला की दी हुई साड़ियों में से एक को ओढ़कर चुपचाप लेट गयी। साड़ी से निकलने वाली सुगंध से वह रमला के वदन की सोंधी महक और अपने प्रति उसके प्यार का अंदाजा लगाने लगी। और इन्हीं खयालों में कब उसकी आंख लग गयी, उसे पता ही न चला। जब जागी तो उसे रूपा और बंसरी की सांसों की आवाज सुनायी दी। बाहर गली की हलचल कोठरी की हलचल की तरह शांत थी। लेकिन उसका मन शांत नहीं था। अचानक वह उठी। बड़ी सावधानी से दरवाजा खोलकर वह बाहर निकल आयी। पेटीकोट के नेफे में मां के दिये रुपये हाथ से टटोले। ठीक थे।

धीरे-धीरे चलते हुए उसने गली पार की। किसी तरह वह एस्प्लेनेड पहुंची। रामपुर होकर जाने वाली बस खड़ी थी। उसने टिकट लिया और बैठ गयी। जिस वक्त वह गांव पहुंची, आधी रात बीत चुकी थी।

गांव की सड़क अंधेरे में डूबी सुनसान पड़ी थी। उसे डर भी लगा, लेकिन वह शांत मन से सड़क पार करती रही। रास्ते में एकाध कुत्ता भी उस पर भौंका, लेकिन उसे अब कोई चिंता नहीं थी। वह अपने घर आ रही थी।

सारा गांव निद्रामग्न था। घर का दरवाजा थपथपाने के लिए उसने हाथ बढ़ाया तो लगा जैसे कोई अदृश्य शक्ति उसका गला दबाने लगी है। उसकी आवाज रुंधने लगी। वह थकी-थकी-सी दरवाजे के साथ लगी सीढ़ियों पर बैठ गयी। कुछ देर बाद नींद से बोझिल उसकी पलकें मुंद गयीं।

अचानक ही वह जागी। कोई खांस रहा था। शायद उसके पिता थे जिनके खांसने से रमला का बच्चा रोने लगा था। वह किसी मूर्ति की नाईं जड़ हो गयी।

सुबह का सूरज क्षितिज के आंगन में पांव रख रहा था। मैना को चिड़ियों का कलरव सुनायी दिया। वह खड़ी हो

(जब लाखों आपको देखते हों तब आपको विश्वास होना चाहिए कि आपके दाँत मज़बूत और सफ़ेद हैं।



राजेश खन्ना कहते हैं: "मुझे मैकलीन्स फ्रेशमिन्ट का स्वाद ही बहुत पसन्द है। मुझे ऐसा लगता है कि यह मेरे दाँतों को सफ़ेद और मज़बूत बना रहा है। मैं हर दिन इसे इस्तेमाल करता हूँ।"



OBM/1496B

नियमित ब्रश करने से यह आपके दाँतों को मज़बूत और साफ़-सफ़ेद बनाए रखता है। मैकलीन्स के ताज़ा और तेज़ स्वाद को आप तुरन्त महसूस कर सकते हैं। इसका स्वाद ही यह बता देता है कि तेज़ असर मैकलीन्स का अनोखा नुस्ख़ा आपके दाँतों को ज़्यादा मज़बूत, साफ़ और सफ़ेद बनाता जा रहा है।

मैकलीन्स का इस्तेमाल, हर दिन कीजिए। फिर आप भी राजेश खन्ना के समान जान जाएँगे कि मज़बूत, सफ़ेद दांतों के लिए किसका शुक्रिया अदा करना चाहिए।

मैकलीन्स फ्रेशमिन्ट

मज़बूत और सफ़ेद दाँतों के लिए प्रभावशाली टूथपेस्ट

गयी। लेकिन उसके मन का तूफान अब थम गया था। उसने अपने आपसे प्रश्न किया—'आखिर क्यों उसे मां-बाप ने रूपा के हाथों सौंप दिया? हो सकता है, मेरे मां-बाप दो या चार दिन के लिए मुझे स्वीकार लें, लेकिन क्या वे मुझे अपने साथ हमेशा के लिए रखेगें? क्या समाज में मेरे बाप का सम्मान खत्म नहीं हो जाएगा। आज तक लोग उन्हें पुजारी मानते हैं, कल धिक्कारेंगे। मुझे वापस चला जाना चाहिए— वापस, जहां से आयी हूं।"

उसने आंसू पोंछे। वापस मुड़ी और चलने लगी। गलियों में जाग हो गयी थी। सुबह टहलने जानेवालों ने उसे अचरज से देखा। लेकिन मैना को इसकी परवाह कहां थी! वह चलते-चलते गांव के आखिरी छोर पर बहती नदी के किनारे पहुंच गयी। नदी पूरे जोर पर थी। उसने अपनी जिंदगी को खत्म करने का निश्चय कर लिया। न कोई उसे देखेगा, न ही उसके बारे में सोचेगा।

लेकिन उसने महसूस किया कि मरने के लिए उसके अंदर की तमाम हिम्मत जवाब दे चुकी है। वह रोने लगी, उस नरक-जैसी जिंदगी में फिर से लौटने की विवशता जानकर। वह फिर लौट पड़ी। सहसा वह दौड़ने लगी और तब तक दौड़ती रही जब तक कि गांव की गली, सड़कें छोड़कर वह बस-स्टैंड नहीं पहुंच गयी। रूपा के आसरे के सिवा अब दूसरा चारा भी क्या था!

रूपा उसे ढूंढ़कर थका हुआ दरवाजे पर खड़ा था। मैना को उसने सिर से पांव तक निहारा। उसे वह एक ऐसे पेड़ की तरह लगी जो तूफान गुजर जाने के बाद आभाहीन हो जाता है। रूपा ने उसका माथा छुआ तो पाया कि उसे काफी तेज बुखार है। वह कांप रही थी। रूपा ने उसे अपनी बांहों में भर लिया और बड़े प्यार से बोली, "मैना, मेरी बच्ची! इतना अधिक मत सोचो। अगर तुम ऐसा करोगी तो एक दिन पागल हो जाओगी। हमें यह जिंदगी हंसकर गुजारनी होगी। हम भगवान की एक ऐसी ईजाद हैं जो न आदमी कही जा सकती है, न औरत, न हमें पशु का नाम दिया जा सकता है, न पेड़ का। केवल भगवान ही हमारा अंतिम सहारा है। वह जरूर हमारे दिल के दर्द को महसूस करता होगा। देखो! मेरी बात मानो इन सब बातों को सोचना छोड़ो। तुम्हें मां-बाप, भाई-बहन का प्यार चाहिए तो मैं दूंगा। तुम थोड़ा आराम करो। मैं तुम्हारे लिए दवा का बंदोबस्त करता हूं।"

लेकिन मैना ने उसे हिलने नहीं दिया। रूपा के गले में बांहें डाले वह जार-जार रोती रही।

रूपा हतप्रभ था। उसकी पलकों पर दो आंसू चमके, पांखरी पर सुबह की ओस की बूंद की मानिंद!

—अनु. नागेन्द्रनाथ

• शरद जोशी

हास्य-व्यंग्य

सबक और दुर्घटनाएं

दुर्घटना से सबक लेना शासन का मिजाज वन गया है। जैसे ही दुर्घटना होती है, शासन तुरंत लगे हाथ सवक ले लेती है। अब यह हमारी भारतीय दुर्घटनाओं का दोष है कि उनकी पूर्व-सूचना नहीं मिलती अन्यथा शासन परि-पत्र निकालकर संवंधित अधिकारियों को पहले से होशियार कर दे कि सौभाग्य से दुर्घटना होने वाली है, अतः सवक लेने के लिए तैयार रहें। फिर भी पहला अवसर मिलते ही सवक ले लिया जाता है। शासन और उसके लोग जानते हैं कि यदि दुर्घटनाओं को नहीं टाला जा सकता तो सवक को तो विलकुल नहीं टाला सकता। नतीजा यह है कि जितनी दुर्घटनाएं हुई हैं उतने ही सवक अव तक जमा हो गये हैं, यानी आप चाहें तो सवकों की गिनती लगाकर यह वखूवी वता सकते हैं कि अभी तक हमारे देश में कुल इतनी दुर्घटनाएं हुई हैं। कुछ लोगों का कहना है कतिपय दुर्घटनाओं के सवक परस्पर मिलते-जुलते हैं और शासन यदि चाहे तो उसी सवक की सही प्रतिलिपियां तैयार कर काम चला सकती है, मगर शासन की इस विपय में स्पष्ट नीति है कि हम किसी दुर्घटना को नजर अंदाज नहीं कर सकते और उसका महत्त्व किसी हालत में कम नहीं होने देंगे। इस नीति से लाभ यह हुआ कि देश में सवकों का इतना भंडार हो गया है कि हम उन देशों को सवकों का निर्यात कर सकते हैं जहां दुर्घटनाएं होती हैं। मगर जल्दवाजी में सवक लिये नहीं जाते। हम उन्हें वता सकते हैं कि दुर्घटनाएं कव, कैसे और क्यों होती हैं और उन्हें टालने के उपाय क्या हैं। भारत जगतगुरु है पुराना, और मार्ग-दर्शन कर थोड़ी विदेशी मुद्रा अर्जित करने का अवसर मिले तो हमें छोड़ना नहीं चाहिए। अगर इतना भी न हो सका तो दुर्घटनाओं से देश को क्या लाभ ?

अव वैसी वात नहीं रही कि दुर्घटना हो जाने पर शासन को समझ नहीं आता कि क्या करें, कैसे मुंह छिपायें। अव शासन इस मामले में अनुभवी और होशियार हो गया है। मुंह छिपाने का सवाल नहीं' शासन तुरंत मुंह लटका लेता है। मंत्री और दुर्घटना से संवंधित विभाग के प्रमुख अफसरों को आघात लगता है। ऐसा-वैसा नहीं, गहरा आघात ! यदि दस वजे दुर्घटना हो तो कोई ग्यारह वजे तक आघात लग जाता है और उसी अखवार में जो दुर्घटना की पहली खवर छापता

है, आघात लगने के समाचार आ जाते हैं। उसी के साथ दुर्घटना-स्थल पर पहले पहुंचने वाले मंत्री और अफसरों की प्रतियोगिता के समाचार रहते हैं, अर्थात आघात लगने के समाचार अखबारों में भेज वे लोग सीधे दुर्घटना-स्थल पर भागते हैं। इसका मोटा नियम यह है कि जिसके विभाग की दुर्घटना होगी, वह भागेगा। ऐसा नहीं होता कि रेल-दुर्घटना हो और शिक्षा-मंत्री भागने लगें। नहीं, वह दिन रेल-मंत्री के भागने का है।

जहां दुर्घटना होती है वहां का दृश्य देख सभी की आंखों में आंसू आ जाते हैं। कटे हुए अंग, बहता हुआ खून, घायलों की चीखें, उनके संबंधियों की बदहवासी और रोना। जो लोग वहां उपस्थित हैं। वे किस प्रकार वहां स्वयं को बांधे रखते होंगे, कल्पना करना कठिन है! सबको यह सोचकर पीड़ा होती है कि हाय ये लोग इस रेल या बस या वायुयान में बैठे ही क्यों? दुर्घटना तो नहीं टल सकती थी, मगर ये सब चाहते तो यात्रा अवश्य टाल सकते थे। कल आ जाते, आज आना कौन-सा जरूरी था? यही दिन क्यों चुना इन लोगों ने? और तभी यह स्पष्ट होता है कि सब भाग्य का खेल है! शासन तो वाहन खरीदकर उसे दुर्घटनाग्रस्त होने तक जैसे-तैसे नियमित चलाते रहने के अतिरिक्त और क्या कर सकता है? यह यात्रियों पर निर्भर करता है कि वे अपनी यात्रा का या अंतिम यात्रा का कौन-सा दिन चुनें। यद्यपि उस दिन भी वैसी ही भीड़ रहती है और बड़ी कोशिशों से जगह मिलती है। यात्री समझता है कि भाग्यशाली है वह जिसे सीट मिल गयी। कितना दुर्भाग्यशाली था वह, इसका पता तो देश को दूसरे दिन लगता है जब अखबारों में मृतकों की सूची छपती है।



दुर्घटना से संबंधित मंत्री दुर्घटना की जगह पर चिंतित भाव से खड़ा गंभीर व्यक्तियों से गंभीर चर्चा करता रहता है। लगता है, आज ही अजूबा घट गया, रोज तो ऐसा नहीं होता। धीरे-धीरे मृतक श्मशान, घायल अस्पताल पहुंचा दिये जाते हैं और मंत्री और अफसर अपने बंगले लौट आते हैं। सारा दिन भागदौड़ में बीता, सब कार्यक्रम, जरूरी बैठकें, मुलाकातें, दौरे, पार्टियां सब गड़बड़ हो

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. इस प्रकार है—०,७६,९२३×४=३,०७,६९२; ०,७६,९२३×३=२,३०,७६९; ०,७६,९२३×१२=९,२३,०७६; ०,७६,९२३×९=६,९२,३०७; ०,७६,९२३×१०=७,६९,२३०; ०,७६,९२३×१=०,७६९२३। २. अविश्वसनीय, क्योंकि किसी भी पुस्तक का २३–२४ पृष्ठ एकसाथ खुला नहीं हो सकता। ३. 'त' 'न' से खेली, 'थ' 'ध' से तथा 'द' 'प' से। अंतिम दौर की स्थिति यों होगी—

१	२	३	४	५
'त' 'प'	'थ' 'न'	'त' 'ध'	'द' 'ध'	'त' 'न' (३)
'ध' 'न' (५)	'त' 'द' (२)	'द' 'न' (६)	'न' 'प'	'थ' 'ध' (९)
'थ' 'न' (७)	'ध' 'प' (४)	'थ' 'प' (८)	'त' 'थ' (१)	'द' 'प' (१०)

४. ग्रीनलैंड व्हेल, डालफिन, स्पर्म व्हेल, पारप्वाइज, सूसू। ५. यूक्लिड, पाइथागोरस, रामानुजन, आइंस्टीन, आर्किमिडीज। ६. नाप होगा—१५ फुट×८ फुट। पाइथागोरस के सूत्र के अनुसार यदि गलीचे के किनारे 'प' फुट और 'फ' फुट है, तो 'प' वर्ग+'फ' वर्ग=२८९। 'प''फ'=१२०। ('प'+'फ')वर्ग=२८९+२४०=५२९, इसलिए 'प'+'फ'=२३। ७. ३१ वर्ष। मान लीजिए प्रवेश की उम्र 'अ' वर्ष है। तब प्रेम की उम्र होगी ('अ'+५) वर्ष और प्रवेश की उम्र होगी (४५—'अ') वर्ष। अतः 'अ'+('अ'+५)—(४५—'अ')=२ (४५—'अ')। ५'अ'=१३०। 'अ'=२६। अतः प्रवेश की उम्र २६, प्रेम की उम्र ३१ और परिमल की उम्र होगी १९ वर्ष। ८. विभाजन— ८, ७, ६, ४,। रमेश के पास कम-से-कम ८ सेब होने चाहिएं, पर अगर वह १० सेब ले तो केवल १५ बचेंगे और सतीश के हिस्से में ५ आएंगे, जो सबसे कम संख्या नहीं होगी। ९. एक टंग्सटन स्फटिक का १,३७५ गुना बड़ा चित्र, जो एक सूक्ष्मदर्शक यंत्र के माध्यम से लिया गया है। टंग्सटन धातु बिजली के बल्ब में रोशनी करने के लिए प्रयुक्त की जाती है।



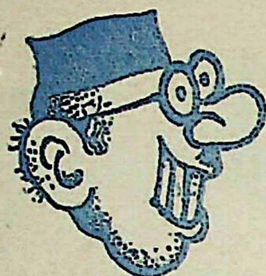
गये। सुबह से साहब ने लंच भी नहीं खाया। पिछली बार भी जब एक्सीडेंट हुआ था तब साहब दो दिन तक बराबर खा-पी नहीं सके थे।

दफ्तर घोषणा कर देता है कि घटना की विस्तृत जांच होगी और मुआवजा दिया जाएगा। जांच के जो परिणाम सामने आएंगे उनपर शासन विचार करेगा और ऐसे सभी कदम उठाये जाएंगे जिनसे भविष्य में दुर्घटना न हो। अर्थात, सबक लेने का काम चालू हो जाता है। दुर्घटना, फिर सबक, फिर दुर्घटना, फिर सबक— यह क्रम चलता रहता है। बल्कि अब ये समानांतर गतिविधियां हैं, अर्थात अपनी-अपनी जगह दोनों चालू रहते हैं और इनका कोई परस्पर संबंध नहीं होता। बहुत-सी दुर्घटनाएं होती हैं, जिन्हें लोग भूल गये हैं। बहुत-से सबक हैं जो फाइलों में सुरक्षित हैं। इन्हें रखने के लिए शासन को निरंतर नयी अलमारियां खरीदनी पड़ती हैं।

इस समय देश में बड़े परिमाण में सबक पड़े हैं और उनका क्या किया जाए, इस प्रश्न पर शासन चिंतित है। जैसे-जैसे देश का विकास होगा, दुर्घटनाएं बढ़ेंगी और उसी परिमाण में सबक भी काफी मिलेंगे। हर बार अपने बजट-भाषण में रेल, वायुयान आदि दुर्घटनाओं से संबंधित मंत्री यह घोषणा करते हैं कि वाहन बढ़ेंगे, अधिक यात्री बिठाये जाएंगे। उसीके साथ भविष्य में कितनी दुर्घटनाएं होंगी और सबक मिलेंगे, इसका अनुमान लगाया जा सकता है।

अब हम यह गर्व से कहने की स्थिति में हैं कि आजादी के बाद के वर्षों में जितने सबक हमने बटोरे होंगे उतने शायद ही किसी और देश ने। आइए, नित नयी दुर्घटनाओं की प्रतीक्षा करें ताकि निरंतर नये सबकों से लैस हमारा शासन इसी तरह प्रगति करता रहे।

—३०/१ साउथ टी. टी. नगर, भोपाल



"मैं देखने में बावला लगता हूं, और तुम खूबसूरत, पढ़ी-लिखी हो, फिर मुझ-जैसे आदमी से शादी करने की सलाह तुम्हें आखिर किसने दी ?"

"पिताजी ने," पत्नी बोली ।

"तुम्हारे पिताजी ने ?" पति ने

हंसने का मौसम

आश्चर्यचकित हो पूछा ।

"हां, आपका जिस बैंक में खाता है, उसी में मेरे पिताजी मैनेजर हैं," पत्नी ने स्पष्टीकरण किया ।

*

"आपको हमारी फिल्म कैसी लगी ?" फिल्म-निर्माता ने सेंसर-बोर्ड के सदस्य से पूछा ।

"बिलकुल बकवास, इसमें ऐसा कोई दृश्य है ही नहीं जिसे काटा जा सके," जवाब मिला ।

*

"लगता है, ज्यादा काम करने की वजह से आप थकावट महसूस करते हैं । आप क्या काम करते हैं ?" डॉक्टर ने मरीज से पूछा ।

"तिजोरियां तोड़ने का," मरीज बोला ।

"तो फिर कुछ दिनों के लिए जेब काटने-जैसा हलका-फुलका काम क्यों नहीं करते ?" डॉक्टर ने सलाह दी ।

महिला-ग्राहकों से तंग आकर दूकानदार ने दूकान में एक बोर्ड पर लिखवाया—

"जो महिला दूकान में प्रवेश करने के पंद्रह मिनट के अंदर चप्पल पसंद करेगी और बिल देकर बाहर निकलेगी उसे हर जोड़े पर पच्चीस प्रतिशत कमीशन दिया जाएगा ।"

*

जांच करने के बाद डॉक्टर ने मरीज से पूछा, "आप सुबह क्या पीते हैं ? चाय, कॉफी, दूध . . ."

"रहने भी दीजिए डॉक्टर साहब, बेकार तकलीफ क्यों करते हैं . . " मरीज ने टोकते हुए कहा ।

*

"डॉक्टर, क्या आप हलुआ खाना पसंद करते हैं ?" बदहजमी के शिकार एक मरीज ने डॉक्टर से पूछा ।

"मुझे हलुआ पसंद नहीं, फिर भी, मैं हलुए के लिए हमेशा आभारी रहूंगा," डॉक्टर ने जवाब दिया ।

एक युवती को बैंक में एक फार्म भरना था। 'उम्र' का खाना आते ही पल-भर के लिए उसका हाथ रुक गया।

तभी बैंक का मैनेजर बोल पड़ा, "आपकी जो भी उम्र हो जल्दी लिख डालिए, नहीं तो उम्र बढ़ती जाएगी।"

*

श्रीजी मित्र के सामने लंबी हांक रहे थे, "पिछले साल मुझे निमोनिया हो गया, लेकिन कोई दवा नहीं करायी। अपने आप ही ठीक हो गया। आखिर, 'इच्छा-शक्ति' भी तो कोई चीज है!"

कुछ ही दिन बाद श्रीजी फिर मित्र के पास आये और बोले, "कई दिन से सर्दी का असर हो गया है। ठीक ही नहीं होती। क्या किया जाए?"

"सुबह उठकर ठंडे पानी से नहा लो," मित्र ने सुझाव दिया।

"निमोनिया नहीं हो जाएगा," श्रीजी ने बुरा मानते हुए कहा।

"तो क्या हुआ? तुम्हें सर्दी ही तो परेशान करती है! जैसे ही निमोनिया होगा, तुम्हारी 'इच्छा-शक्ति' उसपर काबू पा लेगी," मित्र ने दहला जड़ा।

*

संगीत-सम्मेलन में गायक एक प्रसिद्ध फिल्मी-गीत सुना रहा था, 'या दिल की सुनो दुनियावालो या मुझको अभी चुप रहने दो...'

"चुप ही हो जा भैया!" श्रोताओं में से एक स्वर उभरा।

हंसिकाएं

हाय!

अजंता, एलोरा की
गुफाएं
देखकर सामने
सोचने लगे वह—इन शिलाओं को
'हाय!
पदरज क्यों न दी राम ने!'

मिन्नत

वह बोला
पंडित की मिन्नत मनाकर—
'पत्री मिले न
तो देख लेना
तनिक हमारे पत्र मिलाकर'

शंका

एक अध्यापिका
देर तक
सामने बैठे व्यक्ति को घरकर
लगी यों कहने—
'मैंने सोचा, आ ऽ ऽ ऽ प
शायद हैं मेरे किसी बच्चे के बा ऽ ऽ ऽ!'

प्रहार

पांच बरस लै नेता जीए
नीति पर यों करें प्रहार
बड़े-बड़े पद पर जा पहुंचे
उनके नाती रिश्तेदार

• सरोजनी प्रीतम

जापान
राजनीति का बदलता रंगमंच

● योगेशचन्द्र शर्मा

कुछ समय पूर्व तक जापान को अमरीका पर बेहद विश्वास था। उसे यकीन था कि अमरीका उसका सच्चा मित्र है। अमरीका और जापान के बीच १९६० में एक सुरक्षा-संधि भी हुई, जिसे १९६९ के संयुक्त वक्तव्य में पुनः पुष्ट किया गया। मगर १९७१ में घटी कुछ घटनाओं ने जापान के इस विश्वास को भयंकर ठेस पहुंचायी। जापान के पूर्व-परामर्श बिना राष्ट्रपति निक्सन की चीन-यात्रा तथा डालर का अवमूल्यन कुछ ऐसी ही घटनाएं थीं।

डालर के अवमूल्यन से जापान को सीधी चोट पहुंची थी, क्योंकि वह अपने निर्यात का ३० प्रतिशत अमरीका को ही भेजता था।

अमरीका के इस बदलते रुख को देखकर जापान ने तत्काल कार्यवाही की। जापान के तत्कालीन प्रधानमंत्री सातो ने घोषणा की कि अगर चीन से उन्हें निमंत्रण मिला तो वे भी चीन जाएंगे और चीन से अलगाव की नीति को खत्म करेंगे। इस नयी नीति के कई लाभ थे। चीन के रूप में जापान को एक बहुत बड़ा बाजार भी मिल सकता था। इसीलिए उसने ताइवान से शत्रुता मोल लेने का भी खतरा उठाया।

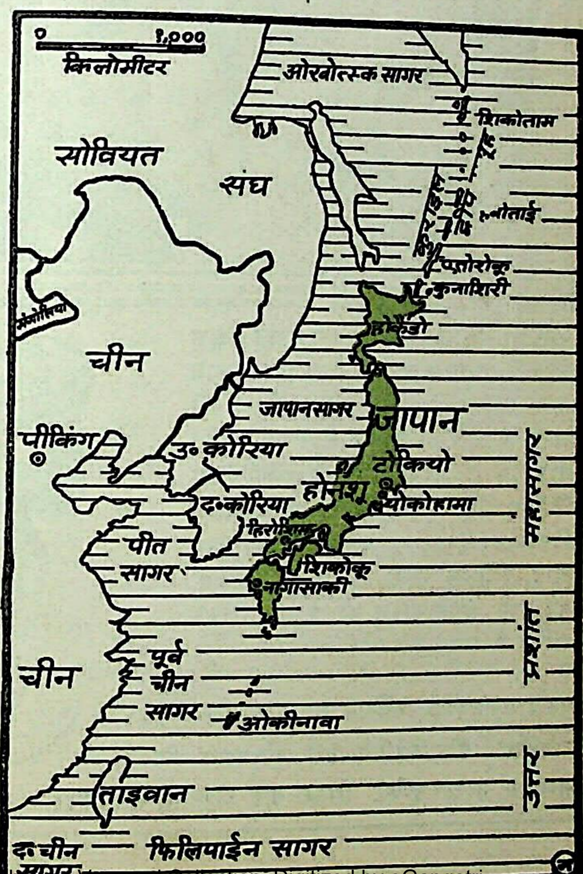
१८९४ में जापान ने चीन से कोरिया को छीन लिया था और तभी से जापान और चीन के बीच में तनातनी चली आ रही थी। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय १९४० में तो जापान ने चीन को बुरी तरह रौंद डाला था और लगभग एक करोड़ चीनियों को हताहत किया था। अपनी उस तबाही के लिए चीन जापान से पांच अरब डालर के हरजाने की मांग कर रहा था। इसमें से एक करोड़ डालर देने के लिए जापान सहमत भी हो गया था, मगर कई कारणों से समझौता न हो सका। जापान अभी तक ताइवान को ही असली चीन के रूप में स्वीकार करता था।

चीन के साथ नये संबंध

विश्व-राजनीति में विभिन्न देशों के संबंध सदैव एक-जैसे नहीं रहते। जापान और चीन के संबंधों में भी यही हुआ। अमरीका से निराश होकर जापान ने चीन के साथ शत्रुता समाप्त करने की नीति अपनायी। उधर चीन सोवियत संघ के विरुद्ध अपनी शक्ति मजबूत करने के लिए नये मित्रों की खोज में था। अमरीका से उसकी मैत्री के पीछे भी यही रहस्य है। चीन ने जापान की भावनाओं के अनुकूल नीति

अपनायी । इसीलिए सितंबर, १९७२ में जब जापान के प्रधानमंत्री काकुई तनाका पेकिंग पहुंचे तो उन्हें विशिष्ट सम्मान दिया गया और मित्रता के प्रतीकस्वरूप पांच अरब डालर के हरजाने की मांग को भी वापस ले लिया । दूसरी ओर जापान के प्रधानमंत्री ने भी द्वितीय विश्वयुद्ध में जापान द्वारा किये गये आक्रमण और हत्याकांड के लिए खेद प्रकट किया । उसने ताइवान को चीन का अभिन्न अंग माना और साम्यवादी सरकार को वैध सरकार के रूप में मान्यता प्रदान की । फलतः ताइवान के साथ जापान के संबंध टूट गये ।

चीन के साथ अपने इन बदले हुए संबंधों के फलस्वरूप जापान अब चीन की ओर से अपनी सुरक्षा के प्रति अधिक आश्वस्त हो गया है । इस निकटता का प्रभाव जापान के व्यापार पर भी पड़ रहा है । जापान को आशा है कि १९७३



जापान : अमरीका, सोवियत संघ तथा चीन के मध्य शक्ति-संतुलन बनाये रखने वाला एशियाई देश । जापान के उत्तर में स्थित कुराइल द्वीप-समूह पर सोवियत संघ का अधिकार है और दक्षिण में स्थित ओकीनावा द्वीप-समूह पर जापानी स्वामित्व के बावजूद अमरीकी सैनिक अड्डे हैं

के अंत तक चीन के साथ उसका व्यापार लगभग २० करोड़ डालर, १९७६ में ४२ करोड़ डालर तथा १९८० में उससे भी दुगुना हो जाएगा। जापान के प्रधान-मंत्री की चीन-यात्रा के समय चीन के अधिकारी उनके कानों में सोवियत संघ के खतरे का मंत्र फूंकना नहीं भूले, क्योंकि जापान के साथ मित्रता में यही तो उनका मूल गंतव्य था।

एक नया त्रिकोणात्मक गुट

चीन से बढ़ते हुए संबंधों का तात्पर्य जापान का अमरीका से टूटना नहीं है। अवश्य ही जापान अब अमरीका पर उतना अधिक निर्भर नहीं रहना चाहता। मगर फिर भी अपनी प्रगति के लिए उसे अमरीका की आवश्यकता का पूरा एहसास है। दूसरी ओर अमरीका को भी अपने सैनिक अड्डों के लिए जापान की मित्रता अपरिहार्य है। वैसे ओकीनावा द्वीप को लेकर जापान में अमरीका के विरुद्ध काफी जन-असंतोष है। ओकीनावा को जापान को सौंपने के बावजूद अमरीका ने उस पर अपना शस्त्रागार रखा है। इसीलिए अमरीका के विरुद्ध जापान में जब-तब विशाल प्रदर्शन और हिंसात्मक कार्यवाहियां होती रहती हैं। ऐसी स्थिति में यह निश्चित है कि देर-सबेर अमरीका को जापान से अपना सैनिक अड्डा हटाना होगा। अमरीका के साथ यह विवशता केवल जापान में ही नहीं संपूर्ण एशिया में शनैः-शनैः उत्पन्न होती जा रही है। अमरीका के इस क्षेत्र से हट जाने के बाद जापान निश्चित ही एक शक्तिशाली देश के रूप में उभरेगा। जब तक अमरीका इस क्षेत्र में है तब तक उसका, जापान का और चीन का त्रिकोणात्मक गुट एशिया में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता रहेगा।

रूसी दांव-पेंच

जापान के साथ रूस के संबंधों का उल्लेख भी आवश्यक है। जिस समय अमरीका के राष्ट्रपति निक्सन ने पेकिंग-यात्रा की, उसी समय जनवरी १९७२ में सोवियत विदेशमंत्री ग्रोमिको ने जापान का दौरा किया। यद्यपि जापानी अधिकारियों से उनकी यह वार्त्ता मूलत: आर्थिक और व्यावसायिक ही रही, मगर उसके राजनीतिक महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता। दोनों देशों के बीच हुए एक समझौते के अनुसार जापान सोवियत संघ को पूर्वी और उत्तरपूर्वी सीमांत में तेल की खोज के लिए आर्थिक और प्राविधिक सहायता देगा। उसके बदले में रूस जापान को इन नये स्रोतों से भारी मात्रा में तेल व प्राकृतिक गैस देगा। जापान तक तेल पहुंचाने के लिए साइबेरिया से ६,००० किलोमीटर की एक लंबी पाइपलाइन बनायी जाएगी। जापान अपनी आवश्यकता का लगभग ९९ प्रतिशत तेल आयात करता है। इसका लगभग ८५ प्रतिशत तेल वह पश्चिम एशिया से मंगवाता है। इस पाइपलाइन के बन जाने के बाद जापान की

प. एशिया पर निर्भरता कम हो जाएगी। दूसरी ओर, सोवियत संघ में भी उपलब्ध तेल-भंडार तेजी से कम होते चले जा रहे हैं और नये भंडारों की खोज के लिए उसे जापान की तकनीकी तथा आर्थिक सहायता की आवश्यकता है। ग्रोमिको की यात्रा से ऐसा लगा था कि सोवियत संघ और जापान एक-दूसरे के निकट आ रहे हैं, मगर तनाका को चीन-यात्रा के समय उन्हें जो सोवियत-विरोधी मंत्र मिला, वह भी कम प्रभावशाली न था। चीन और जापान के समझौते के बाद अक्तूबर, १९७२ में जापान के विदेशमंत्री ओहिरो मास्को पहुंचे और क्यूराइल द्वीप-समूह की वापसी के बारे में बात की।

क्यूराइल द्वीप-समूह (जिसमें कुनाशिरी, एतोरोकू, हकेताई और शिकोताम शामिल हैं) पर सोवियत संघ ने द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद मित्रराष्ट्रों की अनुमति से कब्जा कर लिया था। मूलतः इनपर जापान का स्वामित्व था। जापान के प्रधानमंत्री की चीन-यात्रा के समय चीन ने भी इन द्वीपों पर जापान के नियंत्रण को स्वीकार कर लिया था। स्पष्ट ही चीन की यह स्वीकृति, जापान द्वारा ताइवान पर चीन के अधिकार की स्वीकृति का प्रतिफल थी। सोवियत संघ इस द्वीप-समूह को अपनी सुरक्षा और रणनीति की दृष्टि से आवश्यक समझता है। इसलिए वह ओहिरा की मांग को स्वीकार नहीं कर सका। परिणाम यह हुआ कि यह द्वीप-समूह रूस और जापान के मैत्री-संबंधों के बीच दीवार बनकर खड़ा हो गया। फिर भी तेल की राजनीति इन दो देशों को व्यापारिक सूत्रों से बांधे हुए है।

दूसरे विश्वयुद्ध में जापान को भयंकर विभीषिकाओं का सामना करना पड़ा था। अपने इसी कटु अनुभव के कारण जापान द्वारा यह घोषणा की गयी थी कि वह भविष्य में किसी युद्ध में शामिल नहीं होगा। प्रारंभ में वहां नियमित सेना भी समाप्त कर दी गयी थी, मगर अब स्थिति बदल रही है। पहले वह अपनी सुरक्षा पर अपने राजस्व का केवल एक प्रतिशत व्यय करता था। अब वह कई गुना बढ़ गया है। आर्थिक क्षेत्र में वह विश्व में तीसरे क्रम का देश है और सैन्य शक्ति में उसका क्रम पांचवां या छठा है।

अपनी नयी प्रतिरक्षा-योजना में तो जापान ने अपने सुरक्षा-बजट में काफी अधिक वृद्धि कर ली है। पहली प्रतिरक्षा योजना (१९५७-६०) में सुरक्षा पर ४३५ अरब येन खर्च किये गये थे। तीसरी योजना में यह खर्च लगभग २,४०० अरब येन तक जा पहुंचा और चौथी योजना में यह खर्च इससे भी लगभग दुगुना होगा।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि द्वितीय विश्वयुद्ध में ध्वस्त जापान पुनः उठ खड़ा हुआ है। भविष्य की विश्व-राजनीति में उसका स्थान काफी महत्त्वपूर्ण होगा।

—प्राध्यापक राजनीति-शास्त्र,
राजकीय कॉलेज, दौसा (राज.)

दिल्ली : मेरी दिल्ली

• महेश्वर दयाल

मजनूं का टीला

यह लैला-मजनूं की दास्तान नहीं, एक फकीर की कहानी है; जिसने परमात्मा से ऐसी लौ लगायी कि हरदम उसीकी याद में मस्त रहने लगा। ईश्वर के इस सच्चे प्रेमी को लोग दीवाना समझकर 'मजनूं' कहने लगे। दिल्ली में चंद्रावल गांव के पास एक टीले पर मजनूं का निवास था। कहा जाता है कि एक बार इस दरवेश ने गुरु नानकदेव को सपने में देखा कि वे उससे मिलने के लिए उसकी कुटिया में आये हैं। थोड़े दिनों के बाद ही मजनूं का सपना सच्चा हो गया। सिकंदर लोदी के राज्य में सच्चे संत और महान भक्त गुरु नानक दिल्ली पधारे। उन्होंने सब्जीमंडी के पास एक बाग में डेरा लगाया। हजारों लोग उनके दर्शन के लिए बाग में पहुंचे। उनके व्याख्यान सुनकर सबके मन को शांति मिली। उन दिनों देश में राजनीतिक और धार्मिक संघर्ष था। लोग अंध-विश्वास, पाखंड और आडंबरों के जाल में जकड़े हुए थे। लोगों ने गुरुजी के विचार सुनकर उन्हें एक क्रांतिकारी, समाज-सुधारक और धर्म-उपदेशक के रूप में पाया। वे मानव-जाति के सभी लोगों को एक नजर से देखते। उनके लिए हिंदू और मुसलमान में कोई भेद न था। गुरु नानक की वाणी में अनोखा प्रभाव था। उनका उपदेश था कि हिंदू-मुसलमान सभी एक माटी के भांडे हैं। एक ओंकार ने सब को जन्म दिया है—चाहे उसे राम कहो या रहीम, कृष्ण कहो या करीम। जप-तप, मूर्ति-पूजा से कल्याण नहीं होगा। कल्याण तो अपने कर्मों से होगा। वे अपने विचारों को कबीर रैदास, और अन्य संतों की तरह गीत-बद्ध कर सुनाते।

गुरु नानक के उपदेशों को सुनकर लोग मंत्रमुग्ध हो उठे और उनके भक्त बन गये। गुरु नानक के दिल्ली में आने से यहां की धरती पवित्र हो गयी। जिस बाग में गुरु नानक ठहरे थे, बाद में सिख-संगत (गुरुद्वारा) बन गया। दूर-दूर से यात्री यहां आते। कुएं का ठंडा पानी पीकर अपनी प्यास बुझाते और लंगर में खाना खाते। भक्तों को यहां सुख-चैन मिला। मन की प्यास बुझी और पहले यह जगह 'पाव साहब' और फिर 'नानक प्याऊ' कहलाने लगी। हर वर्ष यहां मेला लगने लगा। कहा जाता है कि एक दिन दिल्ली में गुरु नानक ने देखा कि कुछ लोग अपने मरे हुए हाथी के पास बैठे हुए रो रहे हैं।

गुरु ने कहा, "हाथी मरा नहीं, जीवित है।" उनका यह कहना था कि मरा हुआ हाथी जिंदा हो गया।

यह बात सुलतान सिकंदर लोदी के कानों में पहुंची तो बादशाह ने गुरु नानक से अपने मुरदा हाथी को जिलाने का हुक्म दिया। गुरु नानक ने सुलतान की बात ठुकरा दी तो उसने उन्हें बंदीखाने में डाल दिया। बंदीखाने में पड़े कैदियों पर अत्याचार होते देखकर गुरु नानक को अपने साथी कैदियों पर बड़ा तरस आया। सच्चे संत ने उनसे हमदर्दी जतायी। उनके विचार सुनकर बंदीखाने के शाही नौकरों पर बड़ा असर हुआ। उन्होंने बादशाह से जाकर कहा, "हुजूर, गुरु नानकदेव पहुंचे हुए फकीर हैं। उन्हें हिंदू और मुसलमान सब मानने लगे हैं।"

सुलतान बंदीखाने के नौकरों की बात सुनकर सोच में पड़ गया, लेकिन गुरु नानक अभी कैद में ही थे कि दिल्ली में बड़ा भारी भूचाल आया। उन दिनों के एक इतिहासकार ने लिखा है कि पहाड़ गिर पड़े, ऊंचे-ऊंचे महल बरबाद हो गये। लोगों ने समझा, कयामत आ गयी।

"जो कुछ हुआ फकीर नानक को बंदीखाने में डालने से हुआ है। यह सच्चे पातशाह की बद्दुआ का असर है।" कहा जाता है कि चिश्ती परिवार के सूफियों ने और अन्य संतों ने सुलतान सिकंदर लोदी से इस आशय की बात कही और उसे समझाया तो उसने गुरु नानक को छोड़ दिया और उनके कहने से ऐसे बहुत-से अन्य कैदियों को भी, जिनका कोई दोष न था और जो बंदीखाने में सताये जा रहे थे, रिहा कर दिया।

दिल्ली के बाग से गुरु नानक मजनूं से मिलने उसकी झोपड़ी में पहुंचे। गुरुजी का आशीर्वाद पाते ही मजनूं का मानो कल्याण हो गया। वह गुरु नानक का सच्चा भक्त बन गया। जितने दिन गुरु नानक मजनूं की कुटिया में ठहरे, बड़े-बड़े संत, सूफी, योगी, वैरागी उनसे मिलने वहां आते रहे। कहा जाता है कि उन सूफी संतों में हजरत निजामुद्दीन औलिया के सजदानशीन भी थे, जिनपर गुरु नानक के विचारों का बहुत असर पड़ा। यमुना किनारे, मजनूं की कुटिया जिस टीले पर थी, वह गुरु नानक के वहां दर्शन देने के बाद 'मजनूं का टीला' कहलाने लगा और एक ऐतिहासिक स्थान बन गया।

सिखों के छठे गुरु हरगोविंद अभी तेरह वर्ष के थे कि उन्होंने अकाल-तख्त बनाया। बहुत-सी फौज इकट्ठी की और आजाद बादशाह की तरह रहने लगे। मुगल सम्राट जहांगीर ने गुरु हरगोविंद को दिल्ली बुलाया तो वे मजनूं के टीले पर आकर ठहरे। बादशाह ने उनका आदर करना चाहा, लेकिन गुरु के कुछ दुश्मनों ने जहांगीर को भड़का दिया और उसने हरगोविंदजी को मजनूं के टीले से गिरफ्तार कर ग्वालियर के किले में बंद करवा दिया। गुरुजी छह महीने कैद में रहे।

लाहौर में फकीर मियां मीर को खबर मिली कि गुरु हरगोविंद को मुगल सम्राट ने कैद में डलवा दिया है तो उन्होंने सच्चे पादशाह को आजाद करने की सिफारिश की। गुरुजी आजाद कर दिये गये, लेकिन उन्होंने ग्वालियर के किले में बंद ऐसे बहुत-से लोगों को, जिन पर अत्याचार किये जा रहे थे, छुड़वा दिया। ग्वालियर से पंजाब जाते समय गुरु हरगोविंद एक बार फिर मजनूं के टीले पर आकर ठहरे।

नाम के एक और फकीर ने सिख धर्म का प्रचार किया। नवाब दरगाह कुली बहादुर सलारजंग ने नादिरशाह के दिल्ली से ईरान लौट जाने के कुछ दिन बाद फारसी की एक किताब 'मुरका-ए-देहली' लिखी। इस किताब में सलारजंग ने मजनूं नानकशाही के बारे में यों लिखा है :

"मजनूं की तरह दुबले-पतले और नाजुक हैं और मजनूं की ही तरह सच्ची लैला (ईश्वर) के प्रेमी भी। दरिया के



मजनूं के टीले के पास स्थित गुरुद्वारा

फकीर मजनूं का निवास-स्थान, जो बाद में मजनूं के टीले के नाम से प्रसिद्ध हुआ

औरंगजेब के राज्यकाल में सिखों के सातवें गुरु हरराय ने जब अपने बेटे रामराय को बादशाह के दरबार में भेजा ताकि वे मुगल सम्राट को सिख धर्म के उसूल बतायें तो वे भी मजनूं के टीले पर आकर ठहरे।

मुहम्मद शाह रंगीले के राज्यकाल में मजनूं के टीले पर मजनूं नानकशाही

किनारे एक तकिया में रहते हैं। अच्छा लिबास पहनते हैं। एक खास समय एकांत से बाहर तशरीफ लाते और दर्शन देते हैं। हिंदू और मुसलमान सब संत के दर्शन करने जाते हैं। बहुत आदर करते हैं और बहुत-से उपहार भी ले जाते हैं। वे इन सब उपहारों को लेकर गरीबों और बेसहारों में बांट देते हैं। बहुत कम बोलते

हैं। हिंदुओं का विश्वास है कि मजनूं अपने समय के नानक हैं और नानक की ही आत्मा ने इनकी शक्ल में जन्म लिया है। इसीलिए इनका नाम भी मजनूं नानकशाही है। हिंदू और मुसलमान भक्त फकीर के पीछे खड़े होकर मोर के वड़े-वड़े पंखे झलते हैं। मजनूं नानकशाही की मजलिस में कव्वाल भी गाते हैं और फकीर खामोशी से उन्हें सुनते रहते हैं। कहा जाता है कि इनकी दुआ में असर है। किसीके लिए इन्होंने जो दुआ फरमा दी, वह कवूल हो जाती है। संत की संगत में ईश्वर की याद आती है।"

थोड़े दिन वाद मजनूं के टीले पर एक छोटा-सा गुरुद्वारा बन गया और यहां वैसाखी का त्योहार और तैराकी का मेला भी वड़ी धूम-धाम से मनाया जाने लगा। मजनूं का टीला धार्मिक स्थान के लोगों के मनोरंजन के लिए भी प्रसिद्ध हो गया।

वादशाह और शहजादे यमुना की तरफ सुमन (मुस्समन) वुर्ज और दीवाने-खास में आ वैठते। वेगमों और शहजादियों के लिए मोतीमहल, खासमहल और असद वुर्ज की जालियों के सामने मसनद विछ जातीं। मजनूं के टीले से तैराक पानी में कूदते और खड़ी लगाते मीलों निकल जाते। ऐसी खड़ी मारते कि घुटने तक पानी से वाहर निकल आते। तैराकों के उस्ताद अपने-अपने शागिर्दों को ले यमुना में उतरते और तैराकी के कमाल दिखाते चले जाते। कोई आलथी-पालथी मारे चला जा रहा है तो कोई चित तैरता, ऐसे कि मानो लकड़ी का तख्ता वहा चला आ रहा है। कोई है कि गठरी वना वहाव पर चला जाता है। कोई शेर के हाथ मारता चढ़ाव पर सीधा चढ़ रहा है। कोई मेढक वना तैर रहा है, तो कोई मछली की तरह। मुगलों के आखिरी वादशाह वहादुरशाह के राज्यकाल में मीर माही (मछली) दिल्ली के नामी तैराक थे।

तैराकों की एक टोली नटों की मंडली की तरह तैरती चली आती। एक तैराक के कंधे पर दूसरा तैराक खड़ा है और दूसरे के कंधे पर तीसरा और तीसरे के कंधे पर चौथा। आदमियों की वनी यह सूली कभी टूट जाती है और कभी फिर वन जाती है। कुछ तैराक परिंदों के पिंजरे सिर पर रखकर चले आते और पक्षी उनके कंधों पर वैठे रहते। तैराकी के कुछ माहिर लकड़ी का एक वड़ा-सा तख्ता पानी में बहाकर लाते। तख्ते पर नवावसाहव को विठाते। उनके सामने हुक्का धरा होता और वेश्या आकर नाच दिखाती। तवले और सारंगीवाले संगत देते। नवावसाहव के हुक्के को ताजा करने के लिए एक तैराक अंगीठी में जलते कोयले और दूसरा तैराक चिमटा लिये तैरते। नवाव साहव हुक्के की लंवी-सी सटक मुंह में दवाये हुक्का गुड़गुड़ाते वैठे रहते।

—९६, बाबर रोड, नयी दिल्ली

धुआ

दामोदर सदन

"ड्राइवर, गाड़ी रोको"—राज्य के सार्वजनिकनिर्माण-विभाग के मंत्री के स्वर में रोव था ।

गाड़ी रुक गयी थी । जैसे ही मंत्रीजी बाहर आये, कार के भीतर वैठा अमला—प्राइवेट सेक्रेटरी, निजी सहायक, वॉडी-गार्ड, चपरासी बाहर निकल आया ।

पी. एस. ने कहा, "सर !"

"यहां आसपास कहीं चाय मिलेगी ?" उन्होंने सड़क के किनारे वनी कुछ गुमटियों की ओर इशारा करते हुए कहा ।

सव लोगों ने देखा, पास ही एक टपरे में स्टोव जल रहा है और चाय की कपवशियां भी खनक रही हैं । लेकिन



आत्म-कथ्य


लेखक

भारतीय इतिहास का ही बहुत नाजुक वक्त है। बड़ी परस्पर - विरोधी परिस्थितियों और हताशा में हम लोग जी रहे हैं। देश में आज ज्यादातर ऐसी शक्तियां सक्रिय हैं, जो इसे लूट-खसोटकर तबाह कर देना चाहती हैं। कहानीकार उन चेहरों को सामने लाकर कठघरे में खड़ा कर सकता है। आज वे ही कहानियां अच्छी हो सकती हैं जो समाज में व्याप्त पाखंड, भ्रष्टाचार, विरोधाभास और शोषण के आच्छन्न पंजे को परदे के बाहर ला सके। जो कहानियां आज ऐसा नहीं कर सकतीं, वे कहानी की प्रारंभिक शर्त भी पूरी नहीं कर सकतीं, क्योंकि किसी भी दौर के दो चेहरे नहीं होते। रूमानी, आदर्शवादी और अति यथार्थवादी कहानियों का दौर भी खत्म हो चुका है। आदमी के उजले और काले दोनों पक्षों को उजागर करना है, ताकि सच्चाई को पकड़ा जा सके।

चेखव, दास्तावस्की, चार्ल्स डिकेंस और बालजाक मेरे सबसे प्रिय लेखक रहे हैं।

रहा परिचय, तो जन्म छत्तीसगढ़ की एक रियासत डोंगरगढ़ में। नागपुर विश्वविद्यालय से एम. ए.। संप्रति म. प्र. शासन का धार-स्थित जनसंपर्क अधिकारी।

'वी. आई. पी.' को वहां चाय कैसे पिलायी जाए? सवाल प्रोटोकोल का था।

पी. ए. राधारमण ने कहा, "सर, दस मील दूर पर ही आमगांव का रेस्ट-हाउस है। वहां चाय ले लेंगे। यहां का एटमॉसफियर सूट नहीं होगा!"

लोकनायक मिनिस्टर मनमोहनदास यहां के चप्पे-चप्पे से परिचित थे। आमगांव का रेस्ट-हाउस यानी उनका घर और आंगन। वे कहना चाहते थे, 'मैं जानता हूं, काफी अच्छी तरह से जानता हूं।' लेकिन प्रकट में उन्होंने कुछ नहीं कहा। उन्हें कुछ अजीव-अजीव-सा लग रहा था। वे सोच रहे थे, क्या फर्क है रेस्ट-हाउस और इस सड़क की चाय में! और फिर मिनिस्टर बनने के पहले उन्होंने ऐसी ही अनेक झोपड़पट्टी होटलों में बेंचों पर बैठकर सैकड़ों बार चाय पी है।

हंसते हुए बोले, "राधारमण, चाय ले आओ।"

चाय पीने के वाद उन्हें लगा, जैसे एकाएक ताजगी आ गयी हो। उनका तमाम वदन जैसे उठकर खड़ा हो गया। उन्होंने अपनी जिंदगी में बहुत तकलीफें उठायी थीं। आजादी की लड़ाई में अनेक वार जेल गये थे। पिता की मौत के वक्त पेरोल पर रिहा हुए थे। जेल में भी बड़ी मुश्किल से अच्छी चाय नसीब होती थी।

लेकिन यह कमबख्त मिनिस्टरशिप उससे भी ज्यादा बड़ी कैद है। आदमी अपनी ही छवि का कैदी हो जाता है। 'यह

न करो, वह न करो। वह करो, यह न करो।' जैसे आपकी हर अदा, चालढाल, काम का अंदाज, नैतिकता के फ्रेम में ढला हो। दिन भर नाटक, रात भर नाटक, इसकी जय, उसकी जय, अपनी जय। 'बोर, बोर, बोर ! डैम ईडियट !' —मनमोहनदास बुदबुदा उठे।

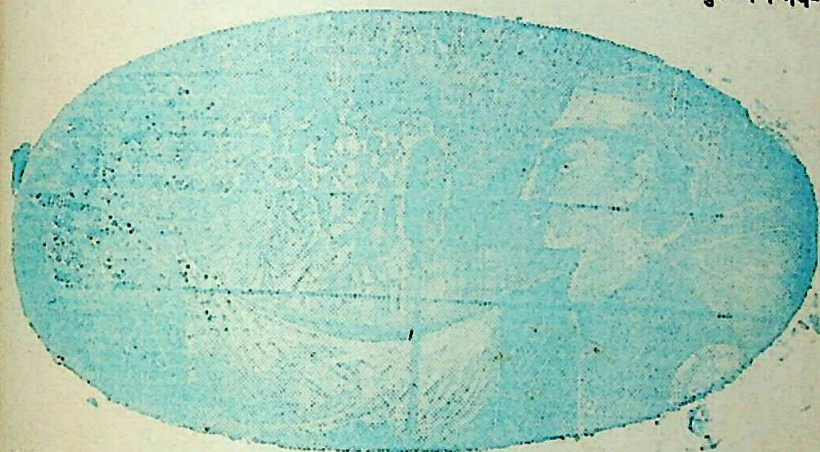
"सर," राधारमण चौंककर बोला।

"कुछ नहीं, कुछ नहीं राधारमण। यूं ही कुछ !"—चौंककर उन्होंने कहा।

"जानता हूं सर, यह रात-रात भर का सफर आपको थका देता है।" पी. एस. बड़ी फुरती से बोला, "आमगांव का रेस्ट-हाउस दस मिनट में आता ही है, वहां आप आराम कर लें।"

"आराम मेरी जिंदगी में कहां राधा-रमण ! लोग इस गद्दी को देखते हैं, लेकिन इसके पीछे क्या है, नहीं देखते ! मुझे कभी-कभी लगता है, जैसे मैं साफा पहने हुए हूं और उसी साफ में नाग बैठा हुआ है, जो बार-बार मेरे सिर पर फन पटक रहा है," मनमोहनदास ने कहा। और फिर एक पल के लिए ही उन्हें लगा कि ऐसी बातें पी. एस. से नहीं करनी चाहिएं।

आमगांव का रेस्ट-हाउस आ चुका था। सामने बरामदे में लाइट जल रही थी। रात के ग्यारह बज चुके थे। नवं-



बर की कड़ाके की सर्दी थी। करीब ४०० मील का फासला तय करके वे लोग कनकपुर से आये थे।

बरामदे के सामने कार खड़ी हुई तो ड्राइवर ने हार्न बजाया। अंदर से सार्वजनिक निर्माण-विभाग के उप-संभागीय अफसर, ओवरसियर और दूसरा अमला भी निकल आया। खानसामा चाय लेकर आ गया।

उन्होंने चाय पी और एकत्र लोगों को विदा किया।

अमले के जाने के बाद वे सीधे अपने कमरे में गये और कपड़े बदलकर लेट गये। इतने लंबे सफर के बाद वे काफी थक चुके थे। चाहते थे, खूब जोरों से नींद आ जाए तो सुवह बड़े आराम से राजधानी तक का सफर काट लेंगे। लेकिन पता नहीं क्यों, आज नींद उनसे कोसों दूर थी। बचपन में इसी रेस्ट-हाउस में वे निबोलियां बटोरने और एक आतंक लिये गोरे अफसरों को देखने के लिए आया करते थे। यहां की हरेक चीज उनकी जानी-पहचानी है। यह पास वाली अमराई, कपास के खेत, प्रेसिंग मशीनें, दूर-दूर तक फैली हुई हरियाली—सब कुछ वही है। तब गांव में हाईस्कूल नहीं था। बिजली, सड़कें और धान की चक्कियां नहीं थीं।

कितना बड़ा मकान था उनका! वे उस मकान को साफ-साफ देख रहे थे। बड़ा आंगन, सामने बंधे रहने वाले जानवर, दालान, ओसारा और बड़े-बड़े कमरे। कभी उनके यहां धान के ढोले भरे रहते थे। उनके पिता जमींदार के मुंशी थे। लेकिन धीरे-धीरे सब कुछ बदल गया था। प्लेग में पिता परलोक सिधार गये तो मां ने उन्हें खेती पर और घर पर ही लगायी गयी पान-बीड़ी की दूकान के सहारे पाला था। तभी पार्टी का काम भी गांव-गांव में चरखे के सहारे चल निकला था।

वे आज की जिंदगी के बारे में सोच रहे हैं। आज दो एकड़ के प्लाट में उनका बंगला फैला हुआ है, बगीचा है चौकीदार है, माली है, बाबू और ड्राइवर हैं। सेक्रेटेरिएट में सजा-सजाया कमरा है।

लेकिन इस ऐशो-आराम, हार-फूल और भारतमाता की जय के साथ अपनी जय के नारे के पीछे कितना दर्द छिपा है, यह शायद कोई नहीं जानता। बहुत भारी कीमत चुकानी पड़ी है उन्हें। उनकी अपनी व्यक्तिगत जिंदगी कुछ भी नहीं है। लोगों की दस्तक दरवाजे पर पड़ती ही रहती हैं। दस्तकें और दस्तकें! हर आदमी राजनीतिज्ञ हो गया है। जिसका भी काम नहीं हुआ, उसी की आंखों में एक धमकी और हिकारत छिपी रहती है।

उन्होंने करवट बदली। नींद अब भी कोसों दूर थी। अमित्र आंखें अब भी उनका पीछा कर रही थीं। कब, कौन, किस वक्त और कहां दगा दे जाएगा कुछ कहा नहीं जा सकता। जल्दी ही पार्टी के चुनाव होने वाले हैं, गोटियों का जाल बिछाया जा रहा है। पार्टी-मशीन पर कब्जा करने पर ही मिनिस्टरशिप कायम रहेगी, वरना . . .! षड्यंत्र और प्रति-षड्यंत्रों का जाल किसी बड़े आक्टोपस के खूंख्वार पंजों की तरह उनके गले को बड़ी मजबूती से जकड़ता ही जा रहा है।

वे जाने क्या-क्या सोचते रहते, यदि दरवाजे पर चपरासी की दस्तक नहीं पड़ती।

सुबह हो चुकी थी। गरम पानी का इंतजाम कर दिया गया था। आसमान

साफ था। मुंह-हाथ धोकर उन्हें अभी ही राजधानी के लिए निकलना था। रात को ही उन्हें कलेक्टर का संदेशा मिल गया था। बाघ नदी के पुल के नक्शे और एस्टीमेट्स वगैरा भोपाल भेजे जा चुके थे।

वे करीव वारह वजे दोपहर को अपने बंगले पर पहुंचे थे। उन्होंने जल्दी-जल्दी अपना काम निवटाया। छोटे वच्चे कान्वेंट गये हुए थे, बड़ा हायर सेंकडरी में था। पत्नी से जल्दी-जल्दी वात की और करीव तीन वजे वे सेक्रेटेरिएट पहुंच गये।

राधारमण को उन्होंने टेलीफोन पर अपने विभाग के सचिव को वुलवाने के लिए कहा। थोड़ी देर में ही दुवले-पतले, उम्दा कपड़े और सुनहरी कमानी का चश्मा लगाये मनीश साहव कमरे में आकर वैठ चुके थे।

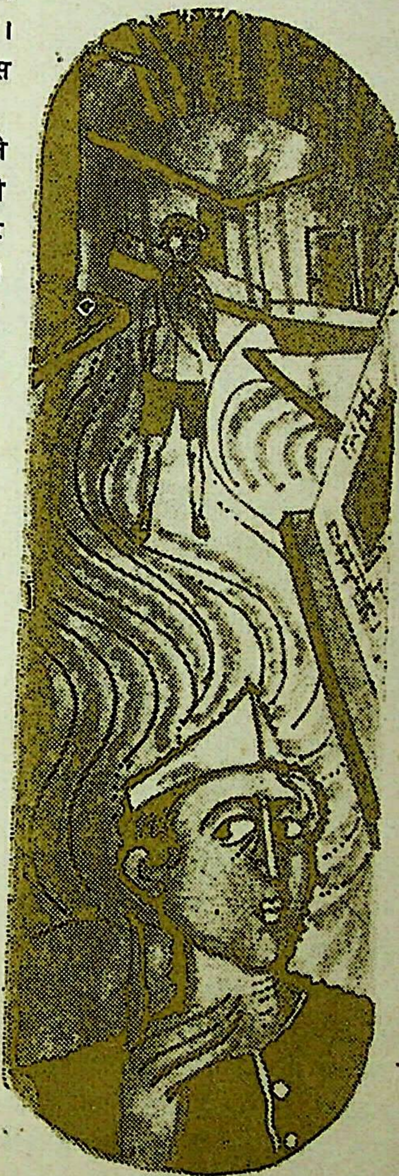
"वाघ पुल के एस्टीमेट्स आ चुके मनीश साहव?"

"यस सर" सेक्रेटरी ने छोटा-सा जवाव दिया।

"सीनियर अफसर होने के नाते आपको मालूम ही है कि वहां के लोग वहुत तकलीफ में हैं। पुल न होने से उनका सारा कारोवार ठप हो जाता है। और फिर नदी में वाढ़ के डर से भी लोगों में वारहों महीने एक आतंक-सा छाया रहता है।"

"यस सर।"

जव उन्होंने देखा कि इस मितभाषी सचिव के निर्विकार चेहरे पर उनकी



इस बात का कोई भी असर नहीं हो रहा है और वह सिवा 'यस सर' के कुछ भी नहीं कह रहा है, तो मन ही मन वे उसे गालियां देने लगे। इन ब्यूरोक्रेट्स से तो आजिज आ चुके! इन्हें क्या अहसास हो सकता है कि बाघ नदी के आसपास रहने वाले लोगों पर क्या बीत रही है?

लेकिन मनमोहनदास धुन के पक्के और औपचारिकताओं में भरोसा न करने वाले मंत्री थे। इसी लगन के कारण वे अपने निर्वाचन-क्षेत्र की जनता को सैकड़ों सुविधाएं दिलवाने में कामयाब हो चुके थे। आज आमगांव जैसा भी है, सब उनके दम पर है। वे सच्चे अर्थों में जननेता हैं, देशसेवा के लिए ही उन्होंने गार्हस्थ्य-सुख को भी करीब-करीब तिलांजलि दे दी है।

बंगले पर पहुंचते-पहुंचते पांच बज चुके थे; लेकिन अब तक उन्हें कुछ करार मिल चुका था, क्योंकि पुल की रिपोर्ट उन्हें मिल चुकी थी और उन्होंने कागजी कार्यवाही भी शुरू करवा दी थी। केवल सी. एम. से मिलना भर बाकी था। पार्टी की कार्यकारिणी की बैठक में ही वे समय निकालकर इस विषय में बात करने का विचार कर रहे थे।

कार्यकारिणी की बैठक बहुत तूफानी थी। कमेटी में गुटों के भीतर गुट बन गये थे। वफादारियां किसी फटी हुई छोलदारी की तरह टूट-फूट रही थी। कुछ झूठे-सच्चे आरोपों के बादल खड़े किये जा रहे थे। हर शख्स 'भ्रष्टाचार' शब्द का इस्तेमाल कर रहा था।

यह बैठक करीब चार घंटे चली। इसमें किसी सिद्धांत का पता लगाना चावल में सफेद कंकड़ ढूंढ़ने-जैसा था। इस बैठक के बाद ही मंत्रिमंडल ने अपनी समर-नीति तैयार कर ली। भीतरी बगावत, विरोधी पार्टियों की खुली मुखालफत से ज्यादा खतरनाक होती है। फैसला हुआ, रुख बचाव का नहीं बल्कि हमले का होना चाहिए। इस सरगर्मी में मनमोहनदास सी. एम. से अपनी बात न कह पाये।

दूसरे दिन मनमोहनदास ने फाइल देखी। फाइल में पुल के कारण होने वाले लाभों और अनुमानित व्यय संबंधी टिप्पणी के साथ-साथ तकनीकी ब्योरा दिया गया था। संभावना-रिपोर्ट भी लगी हुई थी। अब उन्होंने वित्तमंत्री और मुख्यमंत्री से हाथों-हाथ मंजूरी लेना ठीक समझा। अपनी मीठी जुबान के कारण उन्हें इसमें कोई दिक्कत भी पेश नहीं आयी।

पुल बनाने का काम एक्जीक्यूटिव इंजीनियर वाकनकर और विभाग के सबसे प्रतिभाशाली सहायक इंजीनियर विनोद गुप्ता को सौंपा गया। विनोद ने अपनी आदत के अनुसार जल्द-से-जल्द अपना नया काम संभाल लिया। बाघ नदी के आसपास तंबू तन गये। ओवरसियर, टाइमकीपर, ट्रेसर, दूरबीनों और नक्शों का जाल बिछ गया। पुल के एस्टीमेट्स पहले ही बना लिये गये थे।

करीब छह महीने में ही इंजीनियरों

के दिमाग और मजदूरों की कड़ी मेहनत से बाघ पर एक स्ट्रक्चर उभरने लगा था। लोग बहुत खुश थे। चाय की छोटी-छोटी गुमटियों, गांववालों की शाम की कीर्तन-बैठकों, जुए की फड़ों और राम-लीला की मंडलियों में पहले मिनिस्टर मनमोहनदास का और बाद में जवान इंजीनियर विनोद गुप्ता की ही चर्चा थी।

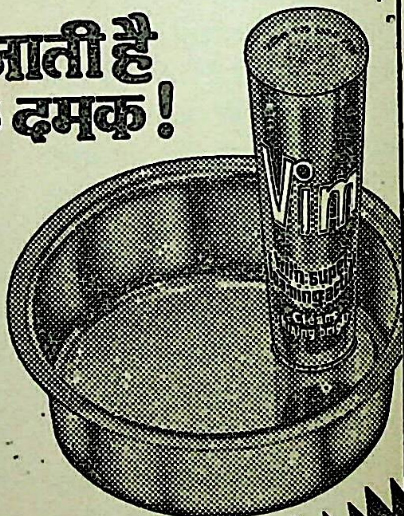
पुल एक चौथाई पूरा हो गयी थी। जाने एकाएक क्या हुआ, पैसा मिलने में देर होनी शुरू हो गयी थी। मंजूरी नहीं आ रही थी। मजदूर बगावत पर उतर आये।

मौसम ठंड का था, लेकिन प्रदेश की फिजा में गरमाहट आ चली थी। दलबदलुओं और अपनी कीमत वसूलने-वालों की बन आयी थी। गुट बन रहे थे और बिगड़ रहे थे। बिछी हुई शतरंज की बिसात पर ऊंट, घोड़ा, वजीर—सब गड्डमड्ड हुए जा रहे थे। मनमोहनदास आरामकुरसी पर बैठे हुए आंखें मींचे सोच रहे थे। वे अपनी आंखों के आगे अपनी गद्दी, मोटरगाड़ी, बंगला, शोफर, माली, शिलान्यास के पत्थर, हवा में गूंजते हुए जयजयकार — इन सबको किसी तरल पदार्थ की तरह पिघलते हुए देख रहे थे। वे सोच रहे थे, कैसी अजीब जिंदगी के शिकार हो चुके हैं वे! उन्हें ऐसा महसूस हो रहा था जैसे कुछ गुंडों ने उनके हाथ-पैर जकड़कर किसी तहखाने की सीलन-भरी बदबूदार कोठरी में ढकेल दिया है। वे एक अजीब-सी घुटन के शिकार हो चले थे। उनका बरताव अपनी पत्नी और बच्चों के साथ भी कुछ अजीब किस्म का हो चला था। किसी ज्योतिषी के कहने पर उन्होंने रुद्राक्ष की माला भी धारण कर ली थी। उनकी पत्नी ने सोलह सोम-वार के व्रत रखना शुरू कर दिये, लेकिन उससे भी उनके भीतरी और बाहरी दुश्मनों का सफाया नहीं हो पा रहा था।

वे सोच रहे थे—बाघ की गोद में फैले हुए स्कूल, अस्पताल, अनाथालय, जच्चाखाने, गोदाम, पुल, सड़कें सब कुछ उनकी बदौलत ही तो हैं! लेकिन इससे क्या ? पूरे प्रदेश में कितने लोग हैं जिनके बच्चे भूख से बिलबिलाते हुए रात को सो जाते हैं, कितनी जगहें हैं जहां फसलें बिना पानी के सूख रही हैं। नहरें, अस्पताल, पीने का पानी और पाठशालाएं नहीं हैं। लोगों की ऐसी हालत देखकर ये गुलगुली रजाइयां, ये फोम के गद्दे कितने बेमानी लगते हैं!

शुरू-शुरू में उनके कानों में, उनके रोम-रोम में, उनकी जयजयकार और 'हर्ष-हर्ष' के नारे समा गये थे। फूलमालाएं किसी शहनाई की मादक गूंज की तरह उनका मन मोह लेती थीं। सोचते थे, जनता ने उन्हें कितना प्यार दिया है, कितना प्यार वे जनता से करते हैं! लेकिन आज समझ में आया— यह सब कितना कुछ धुंधला और खोखला है! कैसा प्यार, कितना प्यार, कैसा 'हर्ष-


क्या आप के
सफ़ाई के पाउडर से
चिकनाहट के गंदे निशान
रह जाते हैं?


Vim

हुए ? यदि कल को वे मंत्री नहीं रहे तो जनता का यह प्यार किसी सूखाग्रस्त इलाके की नदी की तरह सूख जाएगा।

एकाएक उन्हें लगा, जैसे वे एक अजीव किस्म की, सड़े खून की वदवू से घिर गये हैं और उससे उनका दिल-दिमाग भन्ना गया है। वे सोच रहे थे, जैसे अब देश को और किसी को भी उनकी जरूरत नहीं रह गयी है।

सहसा उन्हें लगा, जैसे वाघ ताव पर आ गयी है और उसका पानी किसी खौलते हुए लावे की तरह उछलकूद कर रहा है। दोनों किनारों पर पानी का रंग गहरा भूरा स्लेटी हो चुका है और लोहे के गर्डर्स के ऊपर हिलोरें मार रहा है। लगा, वाघ से आसपास के गांवों को ही नहीं बल्कि राजधानी को भी खतरा पैदा हो गया है। वे अपने वंगले में, अपने पैरों के आसपास पानी का शोर महसूस कर रहे थे। कुछ दिनों से उन्हें अपनी आस-पास की चीजों के लिए भी शक-शुबह होने लगा था। अपने आसपास के नकली वातावरण से उन्हें घृणा-सी होने लगी थी। शक, नफरत और अंधेरे की इन घाटियों से निकलना बड़ा मुश्किल था। यह वाढ़ का पानी शायद उन्हें इस नाजुक परिस्थिति से उवार दे।

पिछली रात नींद उनसे कोसों दूर थी, लेकिन फिर भी सुबह उनका चेहरा शांत और निर्विकार था। उन्होंने एक वारगी ही अपने जीवन को नया मोड़ देने का फैसला कर लिया। भयंकर मान-सिक तनाव की हालत से उवरने का उनके सामने और कोई दूसरा चारा नहीं था। सुख-सुविधा, ऐशो-आराम क्या नहीं है इस जिंदगी में ? लेकिन एक चीज है जो खो गयी है। कहीं इस भीड़ में उनका 'स्व' गुम हो चुका है। इस फिजूल की नकली व्यस्तता में वे स्वजनों, अपनी बीवी और अपने वच्चों से भी वहुत दूर जा चुके हैं। वे महसूस कर रहे हैं कि यहां उनकी हालत एक विदूषक से भी ज्यादा वदतर हो गयी है। कल दोपहर में वालकनी पर जब उन्होंने चिड़िया को अपने वच्चे के मुंह में दाना डालते हुए देखा तभी उन्हें समझ में आ गया था कि उन्हें इन सुनहरी वेड़ियों को झनझनाकर तोड़ देना है। वे एक साधारण आदमी की जिंदगी जीने के लिए मचल रहे हैं। और तभी उनकी आंखों के सामने वाघ पुल के रेलिंग्ज, सीमेंट के खंभे, शहतीर और गर्डर्स तैरने लगे। उन्होंने उस पुल की छायाओं को अपने में से काटकर जुदा कर दिया और दोपहर तीन वजे मुख्यमंत्रीजी को अपना इस्तीफा भेज दिया। इसके वाद उन्हें वहुत हलका महसूस हुआ, जैसे किसी जिन ने जादू का डंडा फेरकर एकबारगी ही उन्हें विखराव, जिंदाबाद और वाघ के सैलाव से बचा लिया हो।

जनसंपर्क अधिकारी, धार (म.प्र.)

छूटा हुआ नगर

जलसा खत्म होने के बाद सोये हुए रंगनट
तुम्हारी आंखों में अब नदी के उस पार के
खंडहरों का विस्मय नहीं देख पाता मैं !
गंगा के मणिकंचन जल में नीली मछलियां या
नावों की लंबी कतार में मल्लाहों के
एकांततम गीतों की
प्रतिश्रुति में मैं अब कैसे देखूं अपने
परित्यक्त अतीत के बंधुओं के तुषारवर्णी मुख ?

रंगनट, मेरा जलसा एक भी दोस्त, साक्षी, साथी या
निर्मल छायातप के बिना भूमिकाहीन हो
समाप्त हो गया
अब मैं रेत के कछारों में घूमकर कैसे स्मरण करूं
अपनी अतीत यात्रा, छूटे हुए दोस्तों के मुख या
अपनी ही एकांततम कविता, जिसकी
ध्वनिलिपि अब मेरे पास नहीं है
रंगनट
मेरे छूटे हुए नगर में तुम आज भी देख सकते हो
मेरी प्राचीन उपस्थिति के चिह्न, सूर्य-
प्रणाम के क्षण
यहां से निर्वासित होने से पहले संभव है
तुम्हें मिल जाए
वह पता, जहां से रात्रि के अमोघ सन्नाटे में मैं
आखिरी बार चलता रहा एक भी किरण-पुंज के लिए

--प्रणवकुमार वंद्योपाध्याय--
(ए २/४ माडलटाउन, दिल्ली-११०००९)

बात उन दिनों की है जब गांधीजी का नमक-सत्याग्रह जोरों पर था और जगह-जगह लोग जेलों में ठूंसे जा रहे थे। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर से मिलने वेदांतियों का मित्रमंडल आया। एक महाशय ने तर्क किया, "गुरुदेव, इस अंध-श्रद्धा से तो अब आप ही उबारें देश को। देशभक्ति कितना तुच्छ विचार है ! यहां कौन अपना, कौन पराया; सब माया है, नश्वर है। यह भूमि जड़ है, जड़ से इतना मोह क्यों ?"

गुरुदेव की स्वाभाविक मुसकान विलीन हो गयी, लेकिन रोष पर किसी तरह नियंत्रण कर अत्यंत गंभीर स्वर में वे तर्क करने वाले सज्जन से बोले, "आपकी मां जीवित हैं न ?"

तत्काल उत्तर मिला, "हां।"

रविबाबू ने फिर पूछा, "क्या आप उनका सिर काटकर ला सकते हैं ?"

उन सज्जन का चेहरा क्रोध से लाल हो गया, "क्या आप मुझे इतना नीच समझते हैं कि मैं अपनी जन्मदात्री का ही सिर काट लाऊंगा ?"

रविबाबू ने कहा, "आप स्वयं नहीं, तो किसी दूसरे को काटने की इजाजत दे सकते हैं ?"

"इजाजत?" वह सज्जन क्रोध से तड़पे, "मैं उस दुष्ट का सिर नहीं उतार लूंगा !"

रविबाबू ने कहा, "बस, तो गांधीजी और उनके साथी भी अपनी मां पर ऐसी ही श्रद्धा और भक्ति रखते हैं—अंतर यही है कि आपकी मां केवल एक बेटे की मां है और उनकी मां भारत के कोटि-कोटि बेटों की मां है।"

—कमला

बगदाद की बात है। एक दिन फकीर जुनैद कहीं जा रहे थे। रास्ते में उन्हें एक नाई मिला। जुनैद ने नाई से कहा, "खुदा की खातिर मेरी भी हजामत बना दो।" नाई ने और ग्राहकों की हजामत बनाना बंद करके, सबसे पहले फकीर जुनैद की हजामत बनायी।



कुछ दिन बाद फकीर जुनैद नाई को उसका मेहनताना देने पहुंचे। नाई ने पैसे लौटाते हुए कहा, "आपको शर्म आनी चाहिए ! आपने तो खुदा की खातिर हजामत बनाने के लिए कहा था, रुपये की खातिर

नहीं।" फकीर जुनैद नाई से बहुत प्रभावित हुए। जीवन भर जुनैद कहा करते थे कि निष्काम भक्ति मैंने एक नाई से सीखी है।

संत सुंदरैया एक रात्रि प्रवचन कर रहे थे। सामने ही एक श्रोता बैठा झपकी ले रहा था। संत ने तीन बार उस श्रोता का ध्यान भंग करने का प्रयत्न किया और पूछा, "भक्त सोते हो ?"

तीनों बार उत्तर मिला, "नहीं महाराज !" इसके बाद उसे फिर से आ नींद गयी। संत ने सोचा, यह आदमी सोया रहता है और फिर भी कहता है—'नहीं महाराज, कहां सोता हूं !' अब की संत ने पूछा, "भक्त जीते हो ?" नींद में डूबे भक्त ने सोचा, पुराना ही प्रश्न है। अतः ऊंघते हुए ही उत्तर दिया "नहीं महाराज !"

संत ने भक्त के ज्ञानचक्षु खोलते हुए कहा, "वत्स, निद्रा में तुमसे सही उत्तर ही निकल गया। जो निद्रा में है वह मृतक तुल्य है। जब तक हम विवेक और प्रज्ञा में नहीं जागते हैं तब तक हम मृतक के ही समान हैं।"

लार्ड एटली जब पहली बार इंग्लैंड के प्रधानमंत्री बने तो उन्होंने राजनीतिक क्षेत्र में अपने एक निकटतम मित्र को उसकी योग्यता के अनुसार

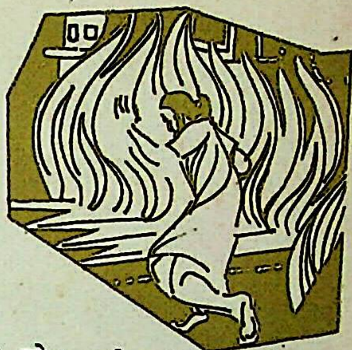
कैबिनेट से निचले स्तर का मंत्रिपद प्रदान किया।

दूसरी बार एटली की पार्टी को फिर बहुमत प्राप्त हुआ और वे पुनः इंगलैंड के प्रधानमंत्री चुन लिये गये। एटली की इस सफलता से उनका उपर्युक्त मित्र काफी प्रसन्न हुआ। एक दिन बातों ही बातों में उसने लार्ड एटली से अपने मन की बात कह दी। वह बोला, "मित्र, अब तो तुम मुझे कैबिनेट स्तर का मंत्री ही बना लो।"

मित्र की पद-लोलुपता लार्ड एटली को शूल की तरह चुभ गयी। एटली ने दो टूक उत्तर दिया, "राजनीतिक पद सार्वजनिक सेवा के लिए है, तुम्हारा कैरियर बनाने के लिए नहीं। यह योग्यतानुसार दिया जाता है, मांगा नहीं जाता। सार्वजनिक हित का रक्षक होने के नाते मैं आशा करता हूं कि कल तक तुम वर्तमान मंत्रिपद से भी इस्तीफा दे दोगे।"

अंततः उस मित्र को पदत्याग करना ही पड़ा। —जहीर कुरेशी

एक बार बगदाद में बड़े जोर की आग लग गयी। जाने कितने आदमी जल गये, जाने कितने घर स्वाहा हो गये। आग की लपटों ने एक अमीर, बिन कासिम की हवेली को भी घेर लिया। उसमें से और तो सब निकल आये, दो गुलाम



रह गये। अमीर बेहद परेशान था। उसने घोषणा की कि जो कोई उन गुलामों को निकालकर लाएगा, उसे वह एक हजार दीनार इनाम में देगा।

संयोग से उसी समय एक फकीर उधर से गुजरा। उसे जब मालूम हुआ कि दो गुलाम अंदर घिरे हैं तब वह अपनी जान की परवाह न करके हवेली के भीतर चला गया और गुलामों को निकालकर बाहर ले आया।

अमीर बड़ा खुश हुआ, पर उसे अचरज था कि आग ने फकीर के शरीर को छुआ तक नहीं! उसने फकीर को पास बुलाया और कहा, "आपने दो इनसानों की जान बचा दी। यह लीजिए इनाम के एक हजार दीनार।"

फकीर ने अमीर की ओर देखा और मुसकराकर बोला, "फकीर इनाम के लिए काम नहीं करते। इनसान की मदद करना इनसान का फर्ज है।"

—यशपाल जैन

फूल का सौंदर्य पराग है, जीवन का सौंदर्य है सच्चाई!

—कालिदास

तानसेन और दीपकराग

● गोपीकुमार कौशल



वृंदावनवासी गुरु हरिदास गोस्वामी के शिष्य तानसेन ('संगीत-सम्राट' की उपाधि से उन्हें विभूषित किया गया था) ने संगीत-जगत को प्रकाशित किया था। वह अमर आलोक अनादिकाल तक कलाविदों का मार्ग प्रशस्त करता रहेगा।

डागरवाणी के आविष्कारक महाराजा डोंगरेन्द्रसिंह तोमर थे। उनके संगीत-गुरु गोस्वामी विष्णुदास ने १४३५ ई. में संस्कृत पदों के स्थान पर देशी बोली में 'ध्रुपद' का जो बीज बोया उसे १४८६ ई. में महाराजा मानसिंह तोमर ने सिंचित कर ख्याति के पवन में लहलहाने का श्रेय प्राप्त किया। उनके दरबारी पंडित बैजनाथ नायक ने 'ध्रुपद-प्रबंध' को जन-मानस में लोकप्रिय बनाया। इस प्रकार पंद्रहवीं शती में वृंदावन के गौडीय भाषा के भक्तिगीतों का स्थान व्रजभाषा के 'ध्रुपद' ने ले लिया। यही ग्वालियर का संगीत विष्णुपद गोस्वामी एवं हरिदास गोस्वामी ने अपने शिष्यों को सिखाया। तानसेन डागरवाणी के 'ध्रुपद-प्रबंध' से अकबर-दरबार के २६० गायकों के सिरमौर बन गये।

'अनूप संगीत-रत्नाकर' के ग्रंथकार पंडित भावभट्ट के शब्दों में 'ध्रुपद' का परिचय इस प्रकार है—

गीर्वाण मध्यदेशीय भाषा साहित्य राजितम्।
द्विचतुर्वाक्य संपन्नं नरनारी कथाश्रयम्॥
श्रृंगार रस भावाढ्यं रागालापपदात्मकम्।
पदान्तानुप्रासयुक्तं पादानयुगकं च वा॥
प्रतिपादं यत्र बद्धमेवं पादचतुष्टयम्।
उद्ग्राह ध्रुवका भोगात्तमं ध्रुवपदं स्मृतम्॥

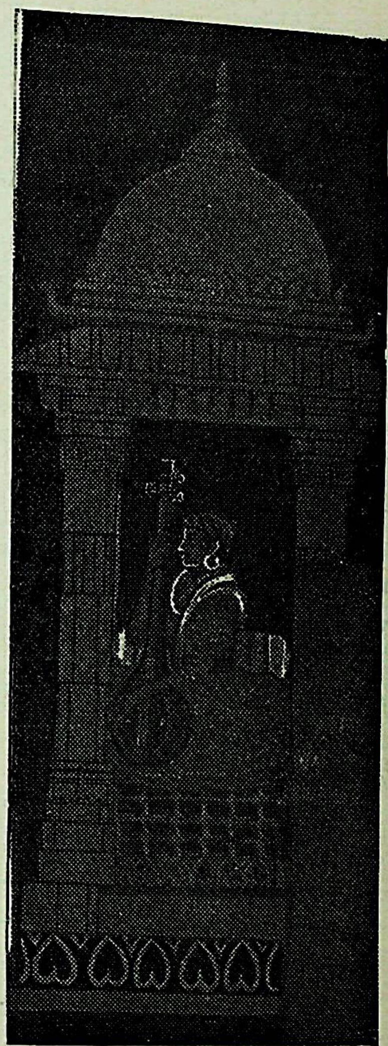
'ध्रुपद' की चार वाणियां हैं। वाणी का अर्थ 'घराने' से है। उस समय वाणियों का प्रचलन था।

वाणी चारों के व्यौहार, सुन लीजे हो,
गुनिजन तब पावें ये विद्या सार।
राजा गोवरहार, फौजदार, खंडार,
दीवान डागुर बक्सी नवरहार॥

तानसेन ने 'ध्रुपद' के प्रबंध से ही बांधवगढ़ (रीवां) नरेश के राजा रामचंद्रराव बघेले के दरबार में राजगवैया का पद प्राप्त किया। वहीं उन्होंने अपने प्रथम ग्रंथ 'संगीतसार' की रचना करके संगीत-शास्त्र को एक अनमोल निधि प्रदान की। मूल ग्रंथ की पांडुलिपि रीवां दरबार के पुस्तकालय सरस्वती-भवन में आज भी सुरक्षित है। रीवां से पूर्व तानसेन कुछ दिनों तक शेरशाह सूरी के वंशज दौलतखां के दरबार में भी राजगायक के रूप में रहे। रीवां दरबार से उनकी ख्याति जैन खां द्वारा अकबर के कानों में पहुंची।

अकबर संगीत-कला-प्रेमी था। उसने जलालुद्दीन खुर्ची को राजा रामचंद्रराव के पास तानसेन को लाने रीवां भेजा। इस प्रकार तानसेन मुगल-दरबार में पहुंचकर ग्वालियर घराने की गायकी से 'संगीत-सम्राट मियां तानसेन' हो गये।

मुगल-दरबार में पहुंचने के बाद उन्होंने संगीत पर नूतन प्रयोग कर अनेक राग-रागिनियां निर्मित कीं। तानसेनकृत 'दरबारी कान्हड़ा', 'मियां की मल्हार', 'मियां की सारंग' आदि अनेक राग आज भी गायक, वादकों द्वारा गाये, बजाये जाते हैं। उन्होंने प्रचलित परिपाटी को एक क्रांतिकारी मोड़ दिया। इससे उस समय के संगीतशास्त्री अप्रसन्न हो गये। महाराजा मानसिंह तोमर द्वारा रचित 'मान कुतूहल' के फारसी अनुवादक फकीरुल्ला ने इसीलिए तानसेन को शास्त्रोक्त गायक न बताते हुए 'अताई गवैया' कहा है। 'मान कुतूहल' उस समय संगीत का



तानसेन : राजस्थानी शैली के आधार पर एक चित्र

प्रामाणिक ग्रंथ माना जाता था। उपर्युक्त समालोचना के बावजूद तानसेन ने संगीत में व्याप्त रूढ़ियों का बहिष्कार कर संगीत में आवश्यक सुधार किये।

आज की भांति तबले और तानपूरे का प्रयोग तब नहीं होता था। तानसेन का प्रिय वाद्य रबाब था। मृदंग पर ताल की संगत की जाती थी। वीणा, झांझ, मंजीरे, करताल, बांसुरी, ढोल, ढप, मृदंग आदि प्राचीन भारतीय वाद्य हैं।

तानसेन की सफलता से प्रतिद्वंद्वी क्रुद्ध होकर तानसेन के विरुद्ध षड्यंत्र करने लगे। अकबर द्वारा 'दीपक राग' गाने के लिए तानसेन को बाध्य करना भी इसी षड्यंत्र की एक कड़ी है। अकबर के आदेश पर तानसेन ने 'दीपक राग' गाकर महल के बुझे हुए दिये जलाने का अद्भुत करिश्मा दिखाया था। कहते हैं, गोपाल नायक की मृत्यु भी दीपक राग गाने के कारण हुई थी। 'दीपक राग' गाने के कारण तानसेन राग के प्रभाव से झुलसकर मरणासन्न हो गये। हारकर रोग-विशेषज्ञों ने हाथ पटक दिये। अर्धमृत तानसेन को 'मेघ मल्हार' राग के गायन से स्वस्थ करने का सुयश गुरु गोपाल नायक की वंशधर एक स्त्री ने प्राप्त किया।

इतिहासकार अबुल फजल ने कहा था—'तानसेन–जैसा गायक पिछले हजार वर्षों में नहीं हुआ।' सूरदास का यह दोहा भी तानसेन की गायकी की प्रशंसा करता है—

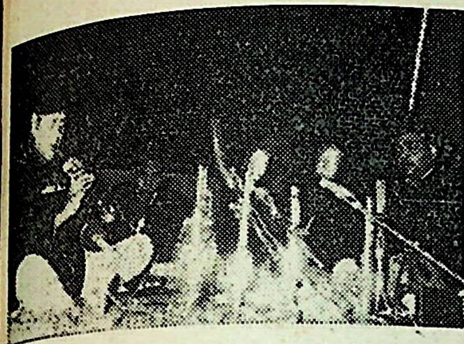
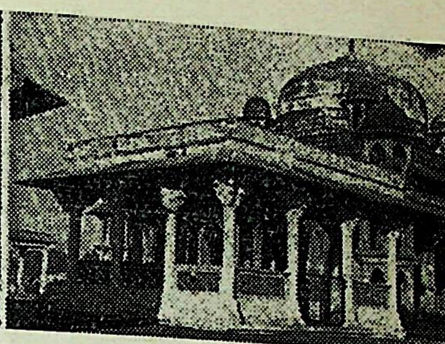
विधनाअस जिय जानिकें, शेषहि दियेः कान।
धरा मेरू सब डोलते, तानसेन की तान।।

तानसेन के 'दीपक राग' में कौन-सा स्वर-समूह था? इसके स्वर, अकबर-दरबार के साथ लुप्त हो गये। 'दीपक-राग' के स्वरों के संबंध में आधुनिक संगीत-जगत विवादग्रस्त है।

यह अति-प्राचीन रागों में से है। प्राचीन धर्म-कथाओं में उल्लेख है कि विक्रमादित्य ने 'दीपक राग' का गायन करके दीपमालिका जलायी थी। संगीताचार्य भरत के अनुसार 'दीपक राग' प्रमुख छह रागों में से एक है।

पंद्रहवीं शती के बाद 'दीपक राग' के स्वरों के संबंध में संगीतकारों में विवाद उत्पन्न हो गया। पंडित लोचन-कृत 'राग तरंगिणी' में 'दीपक राग' का उल्लेख है। वह १२ ठाठ के संगीत सिद्धांत के जन्मदाता थे। सोलहवीं शती के उत्तरार्ध में पंडित रामामात्य ने 'स्वर-मेल कलानिधि' में 'दीपक राग' को शुद्ध रागक्रिया (प्रचलित पूर्वी) ठाठ का राग बताया है। रामामात्य की दृष्टि में 'दीपक राग' अधम रागों में से है।

सन १६५० में पंडित अहोबल-कृत 'संगीत परिजात' में 'दीपक राग' मालव गौड़ (भैरव) ठाठ का राग बतलाया है। पंडित अहोबल के 'दीपक राग' में आरोह में मध्यम एवं निषाद स्वर वर्जित हैं तथा इसकी जाति औडव संपूर्ण मानी है।

तानसेन: समाधि-स्थल (दायें) पर शहनाई वादन करते हुए बिसमिल्ला खां

पंडित अहोबल ने शुद्ध ठाठ आचार्य लोचन की तरह (आधुनिक काफी) ठाठ के समान माना है।

इसी तथ्य का समर्थन सन १७०९ में पंडित भावभट्ट ने 'अनूप विलास' में किया है। सोलहवीं शती में 'दीपक राग' का जो स्वरूप था, उसे सत्रहवीं शती के विद्वानों ने स्वीकार नहीं किया। अतः सत्रहवीं शती में 'दीपक राग' का स्वर-समूह परिवर्तित हो गया।

सन १७६३ में तुलाजीराव भोसले-कृत 'संगीत सारामृत' में 'दीपक राग' का स्वरूप पंडित रामामात्य की भांति माना गया है। कोई 'दीपक राग' को 'काफी ठाठ' का राग बतलाता है, कोई 'पूर्वी ठाठ' का, कोई 'भैरवी ठाठ' का और कोई 'कल्याण ठाठ' का।

भातखंडे के शब्दों में 'दीपक राग' का स्वरूप इस प्रकार वर्णित है—

चढ़त रिषभ नहिं स्वर जहां, उतरत नहीं निषाद।
भयो पूरबी ठाट में दीपक रूप से वाह ॥

आज का संगीत-समाज पंडित भातखंडे द्वारा निर्मित स्वरूप को 'दीपक राग' का स्वर-समूह मानता है, पर वास्तविकता यह है कि भातखंडे द्वारा सन १९१६ में वर्णित 'दीपक राग' की व्याख्या तानसेन की कसौटी पर खरी नहीं है। तानसेन ने जिस 'दीपक राग' को गाया था, उसे बाद के संगीत-विद्वानों ने खो दिया। तानसेन के बाद 'दीपक राग' के गाने का कहीं भी उल्लेख नहीं है।

जिस प्रकार तानसेन का अस्तित्व ध्रुव सत्य है, उसी प्रकार 'दीपक राग' का अस्तित्व भी ध्रुव सत्य है। मृत्यु के भय से संगीतकारों ने 'दीपक राग' को दूर से ही नमन करके इस पर साधना करना उचित नहीं समझा।

'दीपक राग' ही क्यों, लोग 'ध्रुपद' को भी भूले जा रहे हैं। आजादी के पच्चीस वर्षों में 'ध्रुपद' का कोई नया गायक प्रकट नहीं हुआ है। इने-गिने 'ध्रुपद'-गायक धीरे-धीरे पटाक्षेप में विलीन होते जा रहे हैं।

—कोटावाला महल्ला, ग्वालियर-३

● नागेश्वर द्विवेदी

एक कौपीनधारी व्यक्ति कुटिया में सपत्नीक रहा करता था। कुशासन पर बैठे-बैठे, अनवरत रूप से वह ताड़पत्र पर सरकंडे की कलम से अपने सूक्ष्म विचारों को लिपिवद्ध करता रहता था। दिन-रात की उसे चिंता नहीं थी। जंगल जिस राज्य-सीमा के अंतर्गत पड़ता था, उसके शासक ने वहुत सुंदर व्यवस्था कर



रखी थी। राज्य धन-धान्य से पूर्ण था। बेकारी का नामोनिशान नहीं था। राज्य के अनुचर, व्यक्तिगत एवं सामाजिक सेवक अपने आश्रयदाताओं से न केवल आवश्यकता की वस्तुएं, वल्कि वहुत सम्मान भी पाते थे। राजा को अपने कुशल प्रवंध से पूर्ण संतोष था। किसी ओर से, किसी प्रकार की शिकायत या असंतोष भी नहीं सुनायी पड़ता था।

तव भी राजा ने गुप्तचरों को आदेश दिया कि पता लगाओ, राज्य में कोई गरीब तो नहीं है। गुप्तचरों की सूचनाओं के अनुसार राज्य निर्धनहीन माना गया। सभी व्यक्ति सुखी और संपन्न पाये गये। केवल एक गुप्तचर ने अरण्य में रहनेवाले उपर्युक्त दंपति के वारे में सूचना दी—उनकी कुटिया में अन्न या अन्य जीवन-यापन की आवश्यक सामग्री नहीं है। ताड़पत्र, छोटा दीपक, शरीर के कुछ वस्त्र और मृगछाला के अतिरिक्त सभी वस्तुओं का अभाव-सा है। वर्षा, शीत और घाम सहन करते-करते उनके शरीर की चमड़ी कड़ी पड़ गयी है। युगल मूर्ति दिन-रात कठिन श्रम करते हैं। उन लोगों ने कभी किसी से किसी प्रकार का असंतोष व्यक्त नहीं किया। लगता है कि वे अपने जीवन से पूर्ण संतुष्ट हैं, पर राज्य भर में उनके सिवा कोई गरीब नहीं दिखायी दिया।

राजा के आदेशानुसार उसके अनुचर वहुत सारी सामग्री लेकर उस कुटिया के पास पहुंच गये। लिखने में मग्न उस वनवासी का ध्यान पदचापों से भंग हुआ। सामने बहुतेरे लोगों को खड़ा देख उसने उनके आने का कारण संकेत से ही पूछा। आगंतुकों ने राजा द्वारा भेजी सामग्री की ओर संकेत करते हुए उसे ग्रहण करने की प्रार्थना की। "इसे किसी गरीब को दे दो"—कहकर वनवासी पुनः अपने लेखन में तल्लीन हो गया। पत्नी अपने कार्य में व्यस्त थी। उसने इन सब बातों में कोई रुचि नहीं दिखायी।

अनुचरों ने लौटकर राजा से निवेदन किया। राजा ने मंत्री से परामर्श किया। मंत्री ने दाता द्वारा स्वयं उपस्थित होकर दान न देने में ग्रहण करने वाले द्वारा अपमान अनुभव करने की बात कही। राजा समझ गया।

दूसरे दिन राजा अपने मंत्री, अनुचरों और अंगरक्षकों के साथ वहुत वड़ी माता में जीवन-यापन का सामान ही नहीं, सुख-सुविधा की भी वहुत-सी सामग्री लेकर उस अरण्यवासी के पास पहुंच गया। कोलाहल ने वनवासी का ध्यान भंग कर दिया। पहले की ही तरह संकेत द्वारा जब उसने आगमन का कारण जानना चाहा तो राजा ने आगे वढ़कर निवेदन किया कि आपकी कुटिया सहित यह अरण्य जिस राज्य की सीमा में आता है, मैं उसी का शासक हूं। ये सारी सामग्री आपको भेंट करने के लिए लाया हूं। इसे सहर्ष ग्रहण कर मुझे कर्तव्य-पालन के लिए उत्साहित करें।

किंतु वनवासी ने पूर्ववत उपेक्षाभरी दृष्टि से देखते हुए कहा, "मैंने तो कल ही कह दिया था कि इसे किसी गरीब को दे दो!"

राजा को ये शब्द कटु ही नहीं लगे, अभिमानजनित भी लगे। आवेश में कह गया, "क्षमा कीजिए, हमारे राज्य में आपकी तरह कोई गरीब नहीं है। यही समझकर यह सामग्री लेकर आया हूं, यदि आप हीनावस्था में रहना चाहते हैं, तो जैसी इच्छा। इसमें मेरा दोष नहीं।" यह कहकर राजा सारी सामग्री लेकर वापस चला गया।

राजा चला तो आया, किंतु उसे चिंता ने आ घेरा। वह भूख-प्यास भूल गया। रानी के वहुत हठ करने पर राजा ने सारी कथा सुना दी। सुनते ही रानी ने करुण स्वर में कहा, "आपने अनर्थ कर दिया! वे कोई साधारण व्यक्ति नहीं, महर्षि कणाद हैं। उन्हें आप देने गये थे! उनसे तो आपको याचना करनी थी। उन्होंने आपको शाप नहीं दिया, यह उनकी महानता है। आप तुरंत जाकर क्षमा मांगें, अन्यथा कल्याण नहीं होगा।"

राजा अर्धरात्रि में अकेले ही उस निर्जन कुटिया में महर्षि कणाद को प्रणाम करके नतमस्तक हो खड़ा हो गया। महर्षि की दृष्टि ऊपर हुई। राजा ने क्षमा मांगी, "मुझसे वड़ी भूल हुई। मुझे आपके बारे में जानकारी नहीं थी।"

महर्षि ने कहा, "राजन, आपके राज्य में रहते हुए भी मैं आज तक आपके यहां नहीं गया। आप ही आधी रात को यहां आकर करबद्ध हो खड़े हैं। आप ही बताएं, गरीब कौन है?"

यह प्रश्न आज भी बना हुआ है। आज का वैज्ञानिक युग, आज का प्रगतिशील समाज इसका समुचित उत्तर देने का प्रयत्न करेगा?

—७२ नार्थ एवेन्यू, नयी दिल्ली-१

कश्मीरी मुसलमानों की वफादारी

● जहीर न्याजी

लगभग दो हजार वर्ष पहले कश्मीर बौद्ध धर्म का केंद्र था। करीव एक हजार वर्ष पहले यह अरवों और ईरानियों के प्रभाव में आया। इसके वाद फारसी ने कश्मीर की औपचारिक भाषा का स्थान ग्रहण कर लिया। १४वीं शताब्दी के वाद यहां इस्लाम धर्म का प्रवेश हुआ।

सूफी संत हजरत वुलवुलशाह ने कश्मीर के हिंदू राजा को इस्लाम धर्म का अनुयायी वनाया था। वुलवुलशाह पहले तुर्क थे जिन्होंने कश्मीर घाटी का बड़े पैमाने पर दौरा किया था।

अफगानों का अमल-दखल यहां थोड़े काल तक रहा—१७५३ से १८१९ तक। अफगानों के वाद सिखों की तूती वोली और सिखों के वाद डोगरों का सारी कश्मीर घाटी पर दवदवा हो गया।

आज से केवल पांच सौ वर्ष पहले कश्मीर के प्रसिद्ध वादशाह जैनुल आवदीन ने कश्मीर में पहली वार तोपें वनवायीं। तिब्वत और पंजाव कश्मीरी असर से वाहर निकल गये थे, इसने फिर से इन्हें फतह किया। जैनुल आवदीन ने शांति, भाईचारगी और हिंदू-मुस्लिम एकता का वातावरण पैदा किया।

कश्मीरी लोगों में सोतों और झरनों को वहुत पवित्र माना जाता है। झरने को कश्मीरी भाषा में नाग कहते हैं। यहां कई नाग हैं, जैसे—अनंतनाग, कौसरनाग आदि। यहां यह रीति पुराने जमाने से ही चली आ रही है कि जव कोई गाय वच्चा देती है तो उसका दूध दो-एक दिन तक झरनों

कश्मीर शालों की कढ़ाई और कालीनों की सुंदरता के लिए प्रसिद्ध है
यहां अपने काम में तल्लीन कुछ कारीगर



या नदियों की भेंट चढ़ा देते हैं।

कश्मीर में एक रस्म कहलाती है 'कंदूरी'। एक बकरे को जिबह किया जाता है और उसकी गरम-गरम खाल से उस बच्चे को गुजारा जाता है जिसकी उम्र दस-ग्यारह वर्ष की हो चुकी होती है। ऐसा इसलिए किया जाता है कि बच्चा जादू-टोने के प्रभाव से बचा रहे। बकरे का मांस मौलवियों और पंडितों को खिलाया जाता है। लड़के की शादी हो या लड़की की, शादी से एक दिन पहले 'कंदूरी' की रस्म अदा करके यह समझ लिया जाता है कि जोड़े की जिंदगी की रक्षा हो गयी। ऐसा कुछ ही इलाकों में होता है। दूध पीने वाला बच्चा जब भी बीमार पड़ता है तो उसकी मां 'कंदूरी' की रस्म अदा करती है। जवान या बड़ा आदमी भी बीमार पड़ जाए तो जानवरों की बलि का सहारा लिया जाता है, खास तौर से देहातों में।

मेहमानदारी कश्मीरियों की एक खास आदत है। गरीब से गरीब कश्मीरी के यहां भी चले जाइए, एक कप चाय आपके लिए जरूर तैयार रहेगी, वह भी विशेष प्रकार की चाय! जरा देर ठहर जाइए तो मशहूर कश्मीरी मीठा चावल और 'हाक' (विशेष प्रकार का साग) आपको पेश किया जाएगा। हर घर में समावार हर समय तैयार रहता है। नमकीन चाय और दूध में उबले मांस,

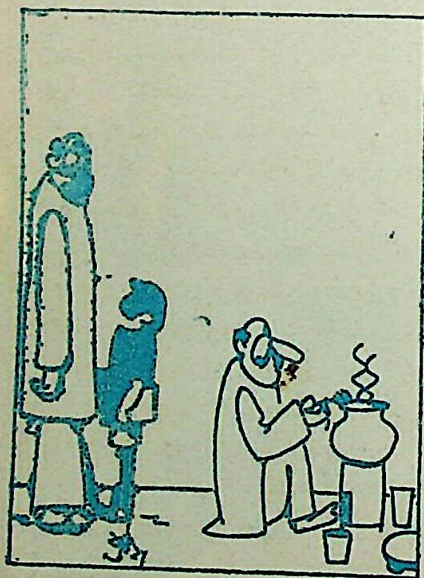


कश्मीरी बुनकर कालीन बनाते हुए

तरह-तरह के खुशबूदार और स्वादिष्ट भोजन, यहां तक कि किसी-किसी के घर ऐसा हुक्का भी नजर आ जाएगा जिसमें पानी की जगह दूध का इस्तेमाल किया जाता है ... पर इसके विपरीत कश्मीरी बुनकरों, मजदूरों, दस्तकारों और आम लोगों की जिंदगी गरीबी की चादर से ढकी, खस्ता हाल नजर आती है।

कश्मीरी भाग्यवादी होते हैं, वे अपने नेताओं के कट्टर समर्थक और अपने आका (मालिक) के वफादार होते हैं। धर्म के प्रति भी ये काफी आस्थावान हैं, पर धर्मयुद्ध (जिहाद) में विश्वास नहीं करते।

"मास्टरजी, मेरा होमवर्क तो खत्म हो गया, पापाजी अभी कर रहे हैं।"



कश्मीरी सेक्स के मामले में सामान्य, पीर-परस्ती में आस्था रखने वाले और जमीन से अधिक आकाश की ओर देखने के कायल होते हैं। अपने तईं भलाई करनेवाले किसी व्यक्ति की खातिर कुछ भी करने को तैयार हो जाते हैं। मीर मुकीम ने अफगानों को कश्मीर आने का निमंत्रण दिया और बीरवल दर ने सिखों को कश्मीर दिलाया।

कश्मीरी पति अकसर पत्नीभक्त सिद्ध हुए हैं और पत्नियां पतिभक्त से अधिक शिशुभक्त। शराब, जुआ आदि की लानतों से कश्मीरी पाक होते हैं। मांसाहारी कम, शाकाहारी अधिक। खाने के शौकीन, पर पेटू नहीं। किस्सा-कहानी सुनाने में भी कश्मीरी माहिर होते हैं। प्रसिद्ध 'पंचतंत्र' कश्मीर ही की देन कहा जा सकता है। कश्मीरी लोग अफवाहों के जल्द शिकार हो जाते हैं, पर उनकी रग-रग में राष्ट्रवादिता समायी होती है।

मजहबी रस्मों में मुसलमान कुरआन का सहारा लेते हैं तो हिंदू वेद का, पर अजीब बात है कि जिस आवाज या अंदाज में मुसलमान कुरआनखानी करता है बिलकुल उसी आवाज में हिंदू वेदपाठ!

कश्मीर में जब किसी के घर बच्चा पैदा होता है तो बड़े पैमाने पर खुशियां मनायी जाती हैं। अखरोट, अंडे या बाखरखानी का तोफा जिस किसी के घर से पहुंचा तो समझ लिया जाता है कि लड़का पैदा हुआ है। बधाई देनेवालों का तांता लग

जाता है। दमीदा (बड़े-बड़े बताशे), सोंठ, हल्दी-जैसी चीजें लिये रिश्तेदार पहुंचते हैं। कई-कई घंटे तक पानी में जड़ी-बूटियां उबाली जाती हैं और उस पानी में 'छठी-नहान' की रस्म अदा की जाती है। मौलवी या पंडित की बन आती है, कम-से-कम नाम रखने के मामले में।

निकाह (शादी) के अवसर पर पहले लड़के वाले जेवर और कीमती कपड़े लड़की वाले के यहां भेजते हैं। औरतें रात में बैठकर गाती हैं। 'तंवकनारी' (कश्मीरी ढोलकी) और घड़ों की तान पर गाना गाया जाता है। शादी के दो-तीन दिन पहले दूल्हा, दुलहन के हाथों-पैरों में मेंहदी लगायी जाती है। दावतें उड़ायी जाती हैं।

बरातियों को गोश्त की प्लेटें ज्यादा पेश की जाती हैं, सब्जी की कम। बराती और सराती इस मौके पर कड़े अनुशासन बरतते हैं। जरा भी शोरशराबा नहीं, हर बात इशारे से। शादी हुई, दुलहन दूल्हे के घर रुखसत। दूल्हे के घर दो, तीन दिन तक ठहरी, फिर दूल्हे के साथ मैके आयी। कुछ दामाद ससुराल में सप्ताह भर तक ठहरते हैं, कुछ कम दिनों तक।

फसल काटने से पूर्व एक विशेष प्रकार का जर्दा तैयार किया जाता है और जिसके खेत की कटाई होने वाली हो उसकी ओर से सवेरे वह जर्दा बांटा जाता है। फसलों की कटाई के समय देहाती मर्द और औरतें लोकगीत गाती हैं।

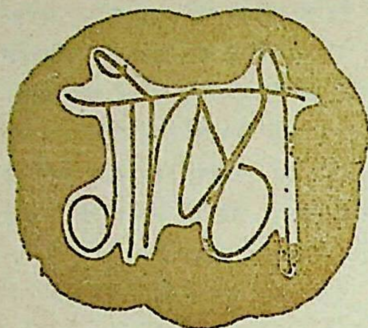
ईद के अवसर पर युवतियां जो लोक-गीत पेश करती हैं वह बड़ा ही आकर्षक होता है। वे एक-दूसरे के गले में बांहें डाल-कर दो कतारों में खड़ी होती हैं। पांव की चाप से सुर एवं ताल का काम लेती हैं और मस्तीभरी लय में गाती हैं। एक अजीब समां बंध जाता है।

यदि किसी घर में कोई मर जाए तो उस घर के लोग खाना नहीं पकाते बल्कि उनके रिश्तेदार उन्हें पकाकर खिलाते हैं। गरीबों को खाना खिलाया जाता है और कपड़े दान किये जाते हैं।

कश्मीरी मुसलमानों ने १९४७ के बाद बड़ी तरक्की की है। स्कूल-कालेजों में मुस्लिम लड़कियों का प्रवेश आम होता जा रहा है। गरीबी की मनहूस चादर भी धीरे-धीरे सरकती नजर आती है, पर राजनीतिक मोर्चे पर कश्मीरी मुसलमानों को मुसलमानों के ही एक नेतृत्व द्वारा धर्मांधता के आधार पर भड़काया जा रहा है, और इस धर्मांधता की पोषक जमायते इस्लामी को जो खुल खेलने का मौका मिला; उससे कश्मीरी मुसलमानों को जबरदस्त नुकसान पहुंचा है।

कश्मीरियों का भूतकाल शानदार रहा। वर्तमान में भी शान-बान में कमी नहीं और भविष्य भी बड़ा शानदार रहेगा, यदि तथाकथित 'आजाद कश्मीर' (पाकिस्तान-अधिकृत) को भी उसके असली अंग से मिला दिया जाए।

—पो. भुरकुंडा, हजारीबाग, बिहार



ब्रह्मदत्त शर्मा, मऊरानीपुर : 'त्रिपिटक' ग्रंथ क्या हैं ?

'त्रिपिटक' का शाब्दिक अर्थ है 'तीन पिटारियां ।' बौद्ध धर्म के समूचे उपदेश तथा विचार-प्रणाली को बुद्ध के बाद उन्हीं के विद्वान शिष्यों ने जिन ग्रंथों में संग्रहीत किया है, उन्हें बौद्ध साहित्य में 'पिटक' (पिटारी) कहते हैं। ये तीन हैं—सुत्त-पिटक (इसमें संग्रहीत उपदेश स्वयं गौतम बुद्ध के द्वारा कहे हुए माने जाते हैं), विनयपिटक (इसमें भिक्षुओं तथा भिक्षुणियों के आचरण से संबंधित सूक्ष्म नियमों और विधानों का संग्रह किया गया है) और अभिधम्मपिटक (इसमें अलग-अलग विषयों पर शास्त्रार्थों का संकलन किया गया है और भिन्न-भिन्न लोगों में जीवन की विभिन्न अवस्थाओं, शारीरिक गुणों, तत्त्वों एवं अस्तित्व के कारणों पर विचार किया गया है) । संख्या में तीन होने के कारण इन्हें 'त्रिपिटक' कहा जाता है।

मुहम्मद बख्श 'जिगर', बरेली : 'बैचलर' का अर्थ कुंआरा होता है, फिर बी. ए. पास व्यक्ति को 'बैचलर ऑव आर्ट्स' क्यों कहते हैं ?

आपका कहना सही है कि 'बैचलर' कुंआरे आदमी को कहते हैं, लेकिन इस शब्द का मूल अर्थ है नवयुवक या पद-प्रतिष्ठा आदि में छोटा व्यक्ति । लैटिन में इसके लिए Baccalarius (आगे चल-कर Baccalaris) इटालियन में Bacealar और पुरानी फ्रेंच में Bacheler शब्दों का प्रयोग होता था। इन शब्दों के अनेक अर्थ प्रचलित रहे हैं, जैसे चर्च के युवा मठ-वासी; नीचे ओहदे के सैनिक सरदार और शिक्षा की सर्वोच्च उपाधि प्राप्त करने से पहले उस सर्वोच्च शिक्षा के लिए आवश्यक योग्यता-प्राप्त व्यक्ति । यह अंतिम अर्थ ही बी. ए. पास व्यक्ति पर लागू होता है।

रंजना चक्रवर्ती, पटना : ऐंद्र व्याकरण क्या है ? इसके रचयिता कौन थे ?

ऐंद्र व्याकरण देवताओं के राजा इंद्र द्वारा बनाया गया माना जाता है। तैत्तिरीय-संहिता में उल्लेख है कि देवताओं ने इंद्र से प्रार्थना की कि वे 'वाक्' का व्याकरण करें । इंद्र ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर भाषा (वाक्) का व्याकरण किया, अतः वाक् (संस्कृत भाषा) का नाम 'व्याकृता वाक्' (व्याकरण-शिक्षित वाणी) पड़ा । पतंजलि के महाभाष्य में लिखा है कि बृहस्पति ने एक हजार वर्ष तक अपने शिष्य इंद्र के लिए एक-एक शब्द का शुद्ध रूप बनाकर 'शब्दपारायण' का व्याख्यान किया। सामवेद के ऋक्तंत्र

नामक प्रतिशाख्य ग्रंथ के अनुसार ब्रह्मा ने बृहस्पति को, बृहस्पति ने इंद्र को और इंद्र ने भरद्वाज को व्याकरण की शिक्षा दी और भरद्वाज से वह व्याकरण अन्य ऋषियों को प्राप्त हुआ। ईसा की दूसरी शताब्दी तक इस व्याकरण का प्रचलन तमिल-प्रदेश में पाया जाता था और वहां के प्रकांड पंडित तोलकाप्पियर ऐंद्र व्याकरण के ज्ञाता माने जाते थे। ह्वेनसांग के अनुसार पाणिनि-व्याकरण के प्रचलन के बाद ऐंद्र व्याकरण लुप्त हो गया।

सोमेश्वर कपाडिया, अहमदाबाद : अंगरेजी में प्रायः 'बूमरेंग' शब्द का प्रयोग होता है, जिसके बारे में कहा जाता है कि यह एक ऐसा हथियार है, जो यदि फेंककर मारा जाए और निशाने पर न लगे तो फेंकनेवाले की तरफ लौट आता है। क्या वास्तव में ऐसा कोई हथियार होता है? उसके पीछे कौन-सा वैज्ञानिक नियम है?

'बूमरेंग' वास्तव में आदिमानव का अस्त्र था, जिससे वह शिकार किया करता था। पौराणिक शक्तियां बूमरेंग-जैसी ही कोई चीज होती होंगी। आस्ट्रेलिया के आदिवासियों में आज भी कहीं-कहीं इस अस्त्र का प्रयोग होता है। यह अस्त्र भौतिकी के सिद्धांतों के आधार पर काम करता है, यद्यपि जब इसका आविष्कार हुआ होगा, भौतिकी के बारे में कोई जानता भी नहीं होगा। आदिमानव ने अपने अनुभवजन्य ज्ञान के आधार पर यह अस्त्र बना लिया था। उसे ऐसे अस्त्र की आवश्यकता इसलिए थी कि शिकार करते समय एक ही अस्त्र को बार-बार प्रयुक्त करना चाहता था। उसने अपने अनुभव से जाना था कि यदि किसी मुड़े हुए हथियार को एक खास ढंग से तिरछा करके हवा में फेंका जाए और यदि हथियार बीच में किसी चीज से न टकराये



तो फेंकने के स्थान पर लौट आता है। इस प्रक्रिया में तीन बातें काम करती हैं: आरंभिक प्रक्षेप (इनीशियल थ्रो), बूमरेंग का अपना घूर्णन (रोटेशन) और वायुमंडलीय प्रतिरोध (एटमॉस्फेरिक रेजिस्टेंस)। इन तीनों बातों के कारण बूमरेंग यदि बीच में कहीं टकराये नहीं तो घूमने वाले के पास लौट आता है। आदिमानव उससे बचने के लिए बूमरेंग को फेंककर अपने स्थान से थोड़ा हट जाया करता था ताकि वह उसी को न लग जाए।

चलते-चलते एक प्रश्न और...

कु. क. ख. ग.: वर्तमान छात्र-असंतोष का कारण?

छात्राओं का संतोष।

—बिंदु भास्कर

कांटे और गुलाब

शिष्य ने रुंधे कंठ से कहा, "गुरुदेव, मुझे बचाइए, यह दुनिया बड़ी खराब है। जो भी मिलता है वह मेरे जीवन में कांटे बिखेर देता है।"

आचार्य मौन रहे, सिर्फ एक क्यारी की ओर इशारा कर दिया। शिष्य ने देखा क्यारी में एक गुलाब का पौधा है। पौधे की हर टहनी पर अनगिन कांटे हैं, लेकिन कांटे नीचे हैं और गुलाब उन सबसे ऊपर मुसकरा रहा है।

शिष्य ने गुरु का संकेत समझ लिया और प्रसन्न मुद्रा में अपने निवास की ओर प्रस्थान किया।

उत्तीर्ण कौन ?

कुलपति ने परीक्षा के दिन शिष्यों को आदेश दिया—"सब लोग यहां से एक मील दूर स्थित बाग में जाएं, जहां हर पेड़ पर आम लदे हैं। जब वहां से लौट आयें तो प्रत्येक कुछ-न-कुछ जानकारी अवश्य दे।"

शिष्य बगीचे में पहुंचे। अनेक शिष्य डाली पर लदे पके हुए आमों को तोड़-तोड़कर खाने लगे। कुछ ने आमों के वृक्षों की गिनती की। एक जिज्ञासु शिष्य प्रत्येक वृक्ष पर अपनी तीक्ष्ण दृष्टि डालता रहा।

शाम को जिस निर्धारित समय पर सबको आश्रम पहुंचना था, उस समय देखा गया कि जिन शिष्यों ने खूब आम खाये थे उनमें से आधे तो बगीचे में ही सोते रह गये, जो आधे आये थे उनकी पीठ पर माली की लाठी के निशान थे। जिन्होंने पेड़ों की गिनती की थी उनमें से कुछ तो आश्रम तक आते-आते गिनती भूल गये थे और कुछ को अपनी गणना पर संदेह था।

जिज्ञासु शिष्य ने कुलपति को एक कागज का टुकड़ा दिया, जिस पर लिखा था—"श्रद्धेय, जो शाखाएं जितनी ज्यादा झुकी थीं उतनी ही आमों से लदी थीं, और जो तन कर खड़ी थीं उनपर एक भी आम नहीं था।"

कुलपति ने अन्य शिष्यों को उस वर्ष उसी कक्षा में रखा, केवल जिज्ञासु शिष्य को उत्तीर्ण घोषित किया। —कुंवर



नदी और जोहड़

नदी कल-कल करती उल्लास के साथ वही चली जा रही थी। उसके किनारे अनेक सुंदर नगर तथा उपनगर बसे हुए थे। इन सभी नगरों के निवासी भिन्न-भिन्न प्रकार से अपने दैनिक जीवन में नदी के जल का उपयोग करते थे।

नदी के एक प्रपात पर एक बहुत बड़ा विद्युत-केंद्र निर्मित किया गया था। इस विद्युत से अनेक प्रकार के कारखानों और उद्योगों का संचालन होता था। नदी से कुछ नहरें भी निकाली गयी थीं, जिनसे कृषि को लाभ होता था। नदी में नाव चलाकर कुछ लोग अपनी जीविका कमा रहे थे।

एक जोहड़ ने, जिसका पानी प्रवाह-हीन होने के कारण दुर्गंधमय हो गया था, नदी से कहा— "बहन, अपने दिन-रात के प्रवाहपूर्ण एवं व्यस्त जीवन में आखिर तुम्हें क्या मिला है कि तुम किलोलें करती रहती हो ? मुझे देखो, मैं एक ही जगह स्थिर रहकर शांति से पड़ा आराम के साथ अपने दिन गुजार रहा हूं।"

नदी ने उत्तर दिया—"निरंतर बहते रहने के कारण ही मेरा जल-अभ्यंतर स्वच्छ और निर्मल बना हुआ है और इसीलिए मेरी हर बूंद का सदुपयोग है। प्रगति और प्रवाह के अभाव में तुम गंदगी का आगार बने हुए हो। वास्तव में औरों के उपयोग में आने वाले का जीवन ही सार्थक है।" —ऋषिकुमार श्रीवास्तव

वचन-वीथी

प्रतिभा के विस्तार के लिए एकांत आवश्यक है, किंतु चरित्र का निर्माण विश्व के प्रांगण में उतरकर संघर्षों के बीच ही होता है। —गेटे

यदि तुम्हारे अंदर दूसरों के प्रति सहानुभूति नहीं तो तुम चाहे संसार के सबसे बड़े बुद्धिवादी क्यों न हो, तुम कुछ भी नहीं बन सकोगे। —विवेकानंद

कामनाओं का संघर्ष केवल यह दर्शाता है कि जीवन व्यवस्थित होना चाहता है, उसकी मांग को समझो। —खलील जिब्रान

वीर पुरुष, विद्वान व्यक्ति, रूपवती स्त्रियां, जहां भी जाएं सर्वत्र उनका आदर होता है। —अज्ञात

अंधकार, तूफान, भूख, दुर्घटना, निंदा और विरोध का उसी प्रकार डटकर सामना करना चाहिए जिस प्रकार पशु और पक्षी करते हैं। —वाल्ट व्हिटमैन

हमारे चारों ओर सभी कुछ उपलब्ध है। उनमें से सही चीज का चुनाव कोई हंस ही कर सकता है। —इमर्सन

जवानी के साथ-साथ दर्द और तकलीफ़ की परेशानी भी आती है

तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन आपके आड़े समय काम आती है

आप अपने कॉलेज का कोई भी उत्सव छोड़ना नहीं चाहतीं। परन्तु आज जबकि कॉलेज में एक शानदार फ़िल्म-शो होने वाला है, आप कमर के दर्द, बेचैनी और बेआरामी के कारण मुरझाई हुई-सी हैं। तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन ऐसे ही नाज़ुक अवसरों पर काम आती है।

एनासिन बहुत गुणकारी है, क्योंकि यह केवल दर्द से आराम नहीं दिलाती बल्कि दर्द के साथ होने वाली उदासीनता को भी दूर करती है। एनासिन आपको जल्दी आराम और चैन दिलाती है और आपके चेहरे पर फिर वही मुस्कान आ जाती है।





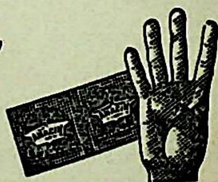
अपने नाज़ुक दिनों में दर्द की बेचैनी और बेआरामी से पड़े रहना पुराने ज़माने की बात है। आज ज़माना बहुत आगे जा चुका है। तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन आपको जल्दी आराम दिलाती है। और आप अपना रोज़ का काम-काज आराम से कर सकती हैं।

लड़की होना भी कभी-कभी एक मुसीबत मालूम होती है। परन्तु आप ऐसे आड़े समय एनासिन से काम लेकर अपनी उलझन दूर कर सकती हैं, और जीवन का पूरा आनन्द ले सकती हैं। ज़रूरत के समय के लिए अपने पर्स में हमेशा एनासिन रखिए— यह बहुत बड़ी सुविधा है।

तेज़ असर और विश्वसनीय

एनासिन

भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक दवा



[illegible] & Co. Ltd.

मेरी गुड़िया मेरी जीवन दृष्टि

● डॉ. आभा अवस्थी

मैं ने गुड़िया बनाना कब, क्यों और कैसे प्रारंभ किया, यह सोचते ही जाने कितनी बातें स्मृति-पटल पर उभरने लगती हैं। यों तो ऐसी शायद ही कोई लड़की हो जिसका बचपन गुड़ियों में न बीता हो और जिसने घर-बाहर बीती घटनाओं की पुनरावृत्ति अपनी गुड़ियों में न करवायी हो।

बचपन में गुड़ियों से खेलने का पर्याप्त अवसर मुझे गरमी की छुट्टियों में ही मिल पाता था, जब कि हम नानी के यहां जाया करते थे। परंतु वहां एक विचित्र रिवाज था, जिसके अनुसार वैशाख और ज्येष्ठ मास में गुड़िया देखना भी वर्जित था। अतः जब दोपहर में सब लोग कमरों में जाकर सो जाते तो हम लोग तेज लू-धूप से बेखबर, छिपते-छिपाते छत पर पहुंच जाते। वहां किसी छायादार कोने में चारपाई खड़ी करके, उसके पीछे लकड़ी के पटरों, दियासलाई की डब्बियों आदि की सहायता से 'घर' बनाते, गुड़ियों को सजाते, फिर पिछले चौबीस घंटों के क्रियाकलापों का सक्रिय अभ्यास गुड़ियों द्वारा एक-डेढ़ घंटे में करवाकर सबके सोकर उठने से पूर्व ही गुड़ियों की पिटारी चुपके से यथास्थान पहुंचा देते।

गुड्डे-गुड़ियों का विवाह

वैशाख-ज्येष्ठ शादी-बरातों के दिन होते हैं। अतः हम भी गुड्डे-गुड़ियों का विवाह रचाते। हमारे इस आयोजन की 'झूठमूठ के मेहमानों' के अतिरिक्त किसी को कानों-कान खबर न होती। कभी-कभार हमारा कोई छोटा भाई हमें ढूंढ़ता हुआ, जासूस–जैसा आ धमकता और हमारी पोल खोलने की धमकी देने लगता, तब हमारे सामने गंभीर संकट उपस्थित हो जाता। दयनीय-से हम अपना सामान बटोरकर एक अदृश्य आशंका में डूब जाते!

शाम को जब हमारा मुकदमा पेश होता तो डांट-फटकार के बाद हमें गरमियों में दोबारा गुड़िया न खेलने की सख्त ताकीद की जाती, किंतु ये सारी नसीहतें दो दिन बाद हमें पूर्णरूप से विस्मृत हो जातीं। हम पर निगरानी में थोड़ी ढील होती कि किसी दूसरे कोने में गुड़ियों की पिटारी पुनः खुल जाती।

लेखिका



कई वर्षों तक ऐसे ही चलता रहा। फिर हमें यह अनुभव होने लगा कि अब हम गुड़ियां खेलने के लिए काफी बड़े

हो गये हैं! धीरे-धीरे नानी के यहां जाने के कार्यक्रमों में कमी होती गयी। मेरी अभिरुचियां भी तैराकी, नृत्य, संगीत, सुईकारी आदि में भटक गयीं। गुड़ियों की कहानी मस्तिष्क के किसी कोने में समा गयी।

कत्थक नर्तकी गुड़िया

लखनऊ खिलौनों का नगर है। बाजारों में प्रायः रंगबिरंगी गुड़िया भी दिखायी दे जाती हैं। उन दिनों मैं कत्थक नृत्य सीख रही थी। कहीं 'कत्थक नर्तकी' का लेवल लगी हुई गुड़िया देखी, जिसकी न तो दृष्टि और हाथ की गति में ही साम्य था और न ही मुद्रा में संतुलन। कृति बड़ी अस्वाभाविक एवं त्रुटिपूर्ण लगी। गुरु-जी को वताया तो बोले, "भई, गुड़िया बनानेवाला कत्थक नृत्य का ज्ञाता थोड़े ही होगा!" वात आयी-गयी हो गयी, पर मस्तिष्क से निकली नहीं। अब तो हर गुड़िया को मैं सांगोपांग बड़े गौर से देखती, फलतः प्रत्येक में कुछ-न-कुछ त्रुटि अवश्य मिल जाती। गुड़ियों के प्रति मेरा आकर्षण बढ़ गया, लेकिन मैं आलोचक ही वनी रही, सृजक वनने का सुयोग नहीं वन पाया।

सन '६९ की वात है। मैं पी. एच-डी. थीसिस जमा कर चुकी थी और काफी खालीपन अनुभव कर रही थी। उन्हीं दिनों 'यू. पी. यूनीवर्सिटी कालेज टीचर्स' की हड़-ताल में मेरा कालेज अनिश्चित काल के लिए बंद हो गया। अब मुझे अपनी चिर-अभिलाषित गुड़िया-कला सीखने का

सुअवसर मिल गया । मैंने बड़ी तन्मयता से गुड़ियां बनाना शुरू किया। पेंटिंग तथा सुईकारी में कुछ गति होने के कारण मेरा हाथ सुचारुता से चलने लगा। लगभग एक मास में ही प्रदर्शनी-योग्य गुड़ियां बनाने लगी।



[illegible]

मूर्तिकला से प्रारंभ

साधारण-सी गुड़िया से मेरा अभिप्राय कपड़े की ही गुड़िया से होता है। बहुत हुआ, तो ढला हुआ शीर्ष-भाग बाजार से लेकर लगा दिया जाता है। शुरू में मैंने भी ऐसा ही किया। केवल भावाभिव्यक्ति देने के लिए आंख, भौंह, होंठ आदि की पेंटिंग मैं आवश्यकतानुसार कर लेती थी, लेकिन उससे संतोष नहीं हुआ। गले का कोण, चेहरे की रेखाएं, शारीरिक क्षमता एवं पूर्ण भावमुद्रा लाने के लिए चेहरा स्वयं ढालना आवश्यक था, जिसके लिए सांचे बनाने का ज्ञान अनिवार्य जान पड़ा। इस प्रकार मूर्तिकला की बुनियादी 'टेक्नीक' का ज्ञान ही गुड़िया-कला का मूलमंत्र सिद्ध हुआ। कलात्मक गुड़ियों के निर्माण के लिए यह पूरी प्रक्रिया सीखनी चाहिए।

कला-क्षेत्र से वर्जित

गुड़िया का इतिहास भी मानव-सभ्यता जितना ही पुराना है। सभी समाजों में बच्चों और गुड़ियों का अभिन्न संबंध रहा है। गुड़ियों को लेकर विभिन्न आयोजन किये जाते हैं। जापान में गुड़ियापर्व—जैसा एक उत्सव प्रतिवर्ष मनाया जाता है। भारत में भी नागपंचमी पर गुड़िया-त्योहार मनाया जाता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार की पुतलियों का प्रयोग टोने-टोटके के रूप में भी किया जाता रहा है। गुड़िया अभिव्यक्ति का भी माध्यम हो सकती है, इस तथ्य की ओर लोगों का ध्यान नहीं गया था। इसीलिए कला के क्षेत्र में गुड़िया का प्रवेश नहीं हो सका। जापानी गुड़ियां संसार में सर्वश्रेष्ठ मानी जाती हैं, किंतु कला-प्रांगण में इनकी गति भी न हो सकी।

गुड़िया का प्रवेश कलाक्षेत्र में क्यों वर्जित रहा, इसे समझने के लिए कला का सूक्ष्म विवेचन असंगत न होगा। कला

भावनाओं का तादात्म्य एवं परिवेश की प्रतीति है। अनुभूतियों में अवगाहन एवं सम्वेगों के मंथन के बाद एक मूर्त अभिव्यक्ति है, जो जनमानस को आंदोलित करके रख देती है। सुप्रसिद्ध चित्रकार ब्राक का कहना है: "कला में व्याकुल करने की शक्ति है तथा विज्ञान में निर्णय की सामर्थ्य।" कला तर्क से परे है, सहज-गम्य है। संक्षेप में, कलाकार की सूक्ष्मातिसूक्ष्म सम्वेदन-शीलता, अभिव्यक्ति की तीव्रता एवं सुलभ साधन-संचालन की शक्यता ही सफल, सशक्त सृजन का मूल है। उप-करण का चयन परिस्थिति, देश और काल के अनुसार किया जाता है। इन्हीं के आधार पर किया गया मौलिक सृजन कला की संज्ञा पाता है, क्योंकि कला अनुकृति नहीं है। गुड़िया को भी इसी मापदंड पर रखने के वाद यह कहा जा सकता है कि गुड़िया-कला किसी अन्य विधा की भांति मानव-भावनाओं, सामा-जिक यथार्थ, जीवन के मूल्यों या सांस्कृ-तिक प्रतिमानों का वहन करती है।

गुड़िया सजीव एवं सदय

यह सत्य है कि एक अवस्था तक दादी, नानी की बनायी हुई या मेले-वाजारों से खरीदी गयी गुड़िया हमें खिलौने की तरह बहलाये रहती है, पर जव हम उनका सहृदयता से निर्माण करते हैं तो हमें उन्हें बहलाना पड़ता है। निश्चय ही मेरी गुड़िया खिलौना नहीं है, वह सजीव है, सदय है, सभाव है। उसने मेरी भावनाओं को झेला है, मेरी मन:स्थितियों में खेली है! तो फिर उसे कलाक्षेत्र से वहिष्कृत क्यों रखा जाए? गुड़िया मूर्तिकला का ही अंग है--केवल परि-धान, साजसज्जा, केशविन्यास इसमें विशेष है। आज वैज्ञानिक उपकरणों से त्रस्त कला-कार कला को प्रतिकृति की छाया से भी छुड़ाने को छटपटा रहा है। ऐसी स्थिति में गुड़िया मूर्तिकला की अतीत एवं वर्त-मान प्रविधियों का सुंदर समन्वय प्रस्तुत करती है। मूर्तिकार नये-नये रूपों, प्रारूपों की खोज अवश्य कर रहा है, पर मानव-आकृति से उसका कोई विरोध नहीं है। यदि किसी कृति में आकृति और वर्ण के संयोजन से कलाकार के सौंदर्य-बोध, दर्शन, अध्यात्म, वैचारिकी या सांस्कृतिक मूल्यों को मूर्तरूप दिया जाता है तो वह कृति न तो वस्तुनिष्ठ होगी और न ही मानव-आकृति की मात्र अनुकृति। निश्चय ही वह सृष्टा के सृजनशील व्यक्तित्व का दर्पण होगी जिसके द्वारा वह कला के मौलिक सृजन के आनंदसागर में अवगाहन कर सकेगा।

—बादशाहबाग, लखनऊ

डॉक्टर, "कल रात आपके पति को कैसी नींद आयी ?"
"आपने नींद वाला पाउडर उतना देने को कहा था जितना एक चवन्नी पर आये। मेरे पास चवन्नी नहीं थी इसलिए मैंने एक अठन्नी पर रखकर पाउडर खिला दिया!... बस, तब से वे सो ही रहे हैं।"

● शीला झुनझुनवाला

विश्वनाथ मंदिर का मूल मंदिर कब और कैसे बना, इसकी खोज करें तो पता चलता है कि सबसे पहले इसका उल्लेख १२ वीं शताब्दी के एक गाहडवाल लेख में आता है। उस समय काशी में गाहडवाल वंश के राजा राज्य करते थे और यद्यपि उस काल में विश्वनाथ मंदिर की स्थापना हो गयी थी फिर भी मंदिर में प्रमुख देव अविमुक्तेश्वर ही थे। मत्स्य-पुराण की एक कथा के अनुसार एक बार हरिकेश यक्ष ने औघड़दानी शिव को अपनी पूजा-अर्चना से प्रसन्न कर लिया तथा उनसे यह वरदान लिया कि वे काशी में स्थायी रूप से निवास करेंगे। ब्रह्मपुराण में भी शिव, पार्वती से कहते हैं, "हे सुर-वल्लभे! वरण और असि, इन दोनों नदियों के बीच में ही वाराणसी क्षेत्र है। इस क्षेत्र के बाहर किसी को नहीं बसना चाहिए।"

शिव ने काशी न छोड़ने का निर्णय लिया, इसलिए काशी को 'अविमुक्त क्षेत्र' कहा जाने लगा (अग्निपुराण, ३५/१६)।

कालांतर में अविमुक्तेश्वर विश्वनाथ मंदिर के एक कोने में ही रह गये और उनकी जगह विश्वेश्वर का नाम प्रचलित हुआ। यह बात है १२ वीं शताब्दी की।

जब गुलाम वंश के सुलतानों का शासन भारत में हुआ तब मंदिरों को खतरा पैदा हो गया था। उन्होंने बनारस में कई मसजिदें, हिंदू मंदिरों के ध्वंसावशेषों से बनवायीं। इनमें अढ़ाई कंगूरे की मसजिद प्रसिद्ध थी—मंदिरों को गिराने का यह क्रम जारी रहा। गोरी और कुतुबद्दीन की फौजों ने बनारस में काफी तबाही मचायी। हिंदुओं के सभी मंदिर प्रायः तोड़ दिये गये या अपवित्र कर दिये गये। ११९४ में बनारस के पतन के साथ ही अविमुक्तेश्वर का मंदिर भी गिरा दिया गया, पर हिंदू हार मानने वाले नहीं थे। इल्तुतमिश के शासनकाल में फिर विश्वेश्वर का मंदिर बना। इस समय तक विश्वेश्वर की कीर्ति-पताका चारों ओर लहरा रही थी और ऐसा प्रमाण मिलता है कि सुदूर गुजरात के प्रसिद्ध दानी सेठ वास्तुपाल ने विश्वनाथ की पूजा के लिए एक लाख रुपये भिजवाये (प्रबंधकोष, परिशिष्ट-१)। कंचन झारी दमकती रही और सर्पफण का रत्नजटित सुवर्ण दमकता रहा—डमक-डमक डमरू की आवाज आती रही। विश्वेश्वर के मंदिर की यह शोभा अलाउद्दीन खिलजी (१२९६-१३१६) के शासनकाल तक रही।

विश्वनाथ के मंदिर को दूसरा बड़ा धक्का सिकंदर लोदी के समय लगा। लोदी अपनी धार्मिक कट्टरता के लिए प्रसिद्ध था। उसने सबसे पहले विश्वनाथ मंदिर पर अपनी घातक दृष्टि जमायी। विश्वनाथ मंदिर तोड़ दिया गया। प्रसिद्ध दक्षिणी विद्वान नारायण भट्ट ने बाद में राजा टोडरमल की मदद से विश्वनाथ मंदिर का जीर्णोद्धार करवाया। नारायण

भट्ट दक्षिण के थे, पर वे उत्तर में काशी में आकर बस गये थे। ऐसा जान पड़ता है कि उनके जीवन के अधिक भाग में बनारस में कोई विश्वनाथ मंदिर नहीं था, परंतु बाद में १५८० में टोडरमल की मुंगेर-विजय के बाद नारायण भट्ट ने उन्हें मंदिर बनाने की सलाह दी। मंदिर बनाने वालों ने १५ वीं सदी के विश्नाथ मंदिर का नक्शा अपने सामने रखा। प्राचीन मंदिर में पांच मंडप थे। एक रंगमंडप था और वहां धार्मिक उपदेश होते थे। टोडरमल ने केवल मंडप की मरम्मत करा दी। मंदिर की कुरसी ७ फुट और ऊंची उठाकर सड़क के बराबर कर दी। इस समय मुसलमानों के डर के कारण मंदिर में मूर्तियां नहीं खोदी गयीं।

१६वीं सदी का विश्वनाथ मंदिर चौखूंटा था और प्रत्येक भुजा १२४ फुट थी। मुख्य मंदिर बीच में ३२ फुट के मुरब्बे में था।

राजपूत का रक्तदान

शाहजहां के शासनकाल में भी विश्वनाथ मंदिर पर मुगलों की कुदृष्टि पड़ी। शाहजहां के सामने यह बात लायी गयी कि बहुत से नये मंदिर, जो जहांगीर के राज्य-काल में बनने प्रारंभ हुए थे, पूरे नहीं हो सके हैं और अब उन्हें हिंदू पूरा कर रहे हैं। बादशाह ने हुक्म जारी किया कि बनारस और दूसरी जगहों में बने सारे अधबने मंदिर गिरा दिये जाएं। इस हुक्म की लपेट में पूरे बने हुए मंदिर भी आ गये। इलाहाबाद के सूबेदार हैदरबेग ने अपने भाई को मंदिर तोड़ने के लिए बनारस रवाना किया—इस तानाशाही कृत्य ने हिंदुओं की आत्मा तड़पा दी। एक अनाम राजपूत से सहन नहीं हुआ कि पवित्र देवालय विधर्मियों से खंडित हो। वह अकेले ही झाड़ी के पीछे छिप गया और हैदरबेग के भाई और अन्य साथियों को मार डाला। यह वीर राजपूत अंतिम सांस तक धर्म-स्थान की पवित्रता के लिए लड़ता रहा। बाद में मुगल सैनिकों ने उसे पेड़ से लटका दिया। प्रसिद्ध अंगरेज यात्री पीटर मंडी ने मुगलसराय जाते हुए रास्ते में इस अमानवीय कृत्य को देखा। उसके हृदय में जिज्ञासा हुई कि कौन-सी वह अलौकिक शक्ति है जिसने एक साधारण राजपूत नागरिक की बाहुओं में इतनी शक्ति भर दी। कठिनाइयों को पार करते हुए मंडी विश्वनाथ मंदिर पहुंचा।

उसने लिखा है, "बीच में एक ऊंची जगह पर एक लंबोतरा सादा (बिना नक्काशी का) पत्थर है। उस पर लोग नदी का पानी, फूल, अक्षत और पिघला घी चढ़ाते हैं। पूजा के समय ब्राह्मण कुछ पढ़ते रहते हैं, पर उसे गंवार समझते नहीं। लिंग के ऊपर एक रेशमी चंदवा है, जिसके सहारे कई बत्तियां जलती रहती हैं। उस सादी, थोथी मूरत का मतलब, एक सादे गंवार के ठेठ शब्दों में, महादेव का लिंग था। अगर ऐसी बात है तो जान पड़ता है, इसीसे स्त्रियां अपने

छोटे बच्चों को निरोग करवाने लाती हैं। शायद इस लिंग में प्रजनन और रक्षण दोनों भाव निहित हैं।"

विश्वनाथ के मंदिर का यह प्रथम आंखों देखा वर्णन है।

औरंगजेब की क्रूरदृष्टि

वनारस के लोग अभी तक औरंगजेव को भूल नहीं सके हैं। इतिहास साक्षी है कि छत्रपति शिवाजी को औरंगजेव ने दिल्ली बुलाया था और वहां उन्हें अपमानित किया था। इसके वाद वे छल-वल से उसके चंगुल से निकल भागे और वनारस जा पहुंचे। कहा जाता है कि इस घटना से औरंगजेव वनारस पर क्रोधित हो उठा। औरंगजेव ने फरमान जारी किया कि वनारस में काफिरों के तमाम मंदिर और पाठशालाएं गिरा दी जाएं। २ सितंवर, १६६९ के आस-पास विश्वनाथ का मंदिर न केवल गिराया गया वल्कि उस पर ज्ञानवापी की मसजिद भी उठा दी गयी (जो अव भी है)। विश्वनाथ मंदिर के आस-पास के छोटे-छोटे मंदिरों को जमींदोज कर दिया गया। चारों ओर के द्वारों के चमकते शिखरों को तोड़कर उनकी जगह गुंवद वनाये गये। मंदिर का गर्भगृह, जहां पहले वेदों के स्वर गूंजते थे, अव मसजिद के दालान में परिवर्तित हो गया। यद्यपि अंतरगृह वचा लिये गये तथापि उन्हें मंडपों से मिलाकर दालान निकाले गये। मंदिर के पूर्वी मंडप में १२५×३५ फुट का जो पत्थर था उसको लंवे चौक में परिणत किया गया। इस प्रकार ११९४ और १६६९ के वीच कई वार मंदिर गिराया और वनाया गया।

मंदिर में नौवतखाना

वाद में १७८५ में गवर्नर-जनरल वारेन हेस्टिंग्स की आज्ञा से अली इब्राहीम खां ने विश्वनाथ के मंदिर में नौवतखाना वनवाया। मराठा शासकों ने वार-वार प्रयत्न किया कि ज्ञानवापी मसजिद की जगह मंदिर का पुनरुद्धार हो, परंतु अंगरेजों के सामने उनकी एक न चली। नाना फड़नवीस तो टीपू सुलतान के विरुद्ध अंगरेजों का साथ देने को भी तैयार हो गया था यदि अंगरेज विश्वनाथ मंदिर को पुनः वनवाने में मदद देने का वायदा करें। अंगरेज तैयार नहीं हुए और फड़नवीस टीपू सुलतान का साथी वन गया।

१२५ वर्ष तक विश्वनाथ मंदिर के देवता सोये रहे। उनकी योगनिद्रा भंग नहीं हुई और देवता का पीठस्थल शून्य रहा—केवल खाली स्थान की पूजा होती रही। तव कहीं जाकर १७८५ के लगभग अहल्यावाई ने प्राचीन मंदिर से काफी दूर विश्वनाथ का आधुनिक नया मंदिर वनवाया। अहल्यावाई के वाद महाराजा रणजीतसिंह ने मंदिर के कलश पर सोना चढ़ाया और विश्वेश्वर विश्वनाथ के स्वर्णमंडित कंगूरे फिर दीपशिखा की लौ में जगमगाने लगे।

—८५, रवीन्द्रनगर
नयी दिल्ली

गुजराती कहानी

आदिवासी

● पीताम्बर पटेल

बैंक से पत्र आया था—

'चोरी के केस में बैंक का चपरासी धीरज पकड़ा गया है। उसने चोरी करने की बात स्वीकार कर ली है और उसे जेल भेज दिया गया है। आपने उसके अच्छे चाल-चलन के लिए एक हजार की जमानत की थी, इसलिए जमानत का एक हजार रुपया एक सप्ताह में भर जाएं।'

धीरज ने चोरी की? वह पकड़ा गया और जेल गया? मन में अनेक प्रश्न उठ रहे थे। कड़वी दवा पीने से जैसे मुंह का स्वाद बदल जाता है, उसी तरह मेरे मन का स्वाद भी इस बात से बदल गया। एक बार तो स्वयं मुझे अपने आप पर खीझ चढ़ी। किसलिए इस अनजाने लड़के के लिए मैंने जमानत दी?

वह दिन ज्यों-का-त्यों मेरी स्मृति में उतर आया। आश्रमशाला के संचालक भालचंद्रभाई एक लड़के को लेकर मेरे यहां आये थे।

"इसे जानते हैं?"

"कौन? वही लड़का है न जिसने आदिवासी नृत्य किया था?"

"हां, यह वही धीरज है। यों तो इसका वास्तविक नाम धमला है। हम आश्रमशाला में इसे धीरज कहते हैं।"

मैंने दोनों को बैठाया। भालचंद्रभाई—एक सेवाभावी और भावनाशील कार्यकर्ता। काफी समय से आदिवासी प्रदेश में लोकसेवा का कार्य करते हैं। पिछले दस वर्षों से वे यह आश्रमशाला चलाते हैं। इस विद्यार्थी के बारे में बताते हुए उन्होंने कहा था, "इस धीरज का धरती पर कोई नहीं है। इसके माता-पिता बचपन में ही मर गये थे। आश्रमशाला में हीं पलकर यह बड़ा हुआ है। पढ़ने में साधारण है। बाकी दूसरे कामों में चतुर है। मैट्रिक पास कर चुका है, लेकिन आगे कालेज में नहीं चल सकता। कहीं नौकरी पर लग जाए तो इसका जीवन बन जाए। इसी खयाल से इसे लेकर आपके पास आया हूं।" क्षण भर रुककर बोले, "आश्रमशाला में आपके व्याख्यान ने इसे नया जीवन दिया है। नयी उमंग और नयी आशा प्रकट की है। ऐसे तो यह सामान्य विद्यार्थी था। पढ़ा हुआ भूल जाए ऐसा जड़ था, किंतु आपने उसके नृत्य की प्रशंसा की, पांच रुपये का पुरस्कार दिया और पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया, तब कहीं वह इतना पढ़ सका। इसने एकलव्य की तरह आपकी उपासना की है। छोटी-बड़ी कोई भी नौकरी मिलेगी तो इसका जीवन बन

जाएगा। मुझे अभी तीन-चार दिन 'हरिजन आश्रम' और 'गांधी-नगर' में काम है। लौटने पर मिलता जाऊंगा। तब-तक कहीं कुछ हो गया तो धीरज की रोटी का प्रबंध हो जाएगा।"

भालचंद्रभाई धीरज के लिए मुझसे आग्रह कर गये। धीरज ने भी जाते समय आशाभरी आंखों से मेरी तरफ देखकर नमस्ते कहा था। उस समय उसकी आंखें ही नहीं, जैसे उसका संपूर्ण शरीर बोल रहा था, 'साहब! आप ही मेरे सहायक हैं। आप, एकमात्र आप मेरा उद्धार कर सकते हैं।'

धीरज को सबसे पहले पांच वर्ष पहले देखा होगा। उसके चेहरे की स्फूर्ति, आंखों की चमक, भरा-भरा-सा स्वस्थ शरीर . . . और इतना नम्र कि सबसे भिन्न दिखायी देता था। निरक्षरता-निवारण का काम आदिवासी प्रदेशों में किस तरह किया जा सकता है, इसके उपाय के लिए सरकार ने एक समिति नियुक्त की थी। उस समिति के एक सदस्य के रूप में मैं आश्रमशाला में भाषण देने गया था। तभी भालचंद्रभाई से प्रथम परिचय हुआ था। आदिवासियों और गरीबों का भला हो, इस प्रवृत्ति को अपना जीवन-कार्य बनाकर वे इस पिछड़े आदिवासी प्रदेश में आ बसे थे। उन्होंने मुझे काफी प्रभावित किया। वे भी अहमदाबाद आते तो मुझसे जरूर मिलते। उनकी सच्चाई और प्रामाणिकता इतनी पारदर्शक थी कि चाहे जिसे हिला जाए। वे यह काम लेकर आये थे, उन्हें 'ना' कैसे कहता!

और धीरज की प्रार्थना को भी कैसे इनकार कर सकता था! वह किशोर बालक मेरे मन में बस गया था। आश्रमशाला देखने के बाद हमने वहां के विद्यार्थियों के साथ भोजन किया। रात की प्रार्थना के बाद भालचंद्रभाई ने आदिवासियों के लोकनृत्यों का आयोजन किया था। बच्चों ने होली-प्रसंग का लोकनृत्य प्रस्तुत किया। उसमें मुख्य नर्तक धीरज था। पांव में घुंघरू बांधे



वह सबसे भिन्न रह मनमोहक नृत्य कर रहा था। उसके पांव की तालबद्धता, उसकी चपलता, गतिशीलता आदि दृष्टि बांध लेती थी। आदिवासियों के जीवन को हरा-भरा रखनेवाला वह लोकनृत्य मैं कभी भी भूल नहीं पाऊंगा। उस किशोर को मैंने निकट बुलाया। पूछा, "तुम्हारा नाम क्या है ?"

"धीरज।"

"क्या पढ़ते हो ?"

"नवीं में हूं।"

"आदिवासी हो, क्या ?"

उसने स्वीकृति में गरदन हिलायी। उसकी मुख-मुद्रा, उसके चमकते दांतों की तरह उमंग से चमक रही थी।

"खूब पढ़ो . . . पढ़ने के बाद मुझसे मिलना . . . चाहे जहां तुम्हारा ठिकाना लगा दूंगा . . ."

उस नृत्य को देखे काफी समय हो गया था, फिर भी वह नृत्य कभी-कभी नयनरम्य आकार धारण कर चित्त में घुंघरू बजाता सजीव हो उठता था। तभी तो भालचंद्रभाई के मिलने पर मैं धीरज का समाचार पूछ लेता था। लेकिन आज तो वह स्वयं धीरज को लेकर आये हैं। लेकिन नौकरी दिलवाऊं भी कहां से ?

धीरज अनाथ है। बिना नौकरी के वह करे भी क्या ? जंगलों में लंगोटीधारी आदिवासियों के बीच वह रहे भी कैसे ? उसे नौकरी भी कहां से मिले ? बिना अंगरेजी के किसी तरह मैट्रिक पास हुआ है। उसे कौन नौकरी पर रखेगा ? फिर आदिवासी ! उसका हाथ भी कौन थामेगा? भालचंद्रभाई ने तो मुझे भारी मुश्किल में डाल दिया !

मैंने अपने एक परिचित बैंक-मैनेजर को फोन किया। धीरज को चपरासी की जगह रख लेने का आग्रह किया। उसके चरित्र और कार्य-कुशलता के विषय में विश्वास दिलाया। उसे इंटरव्यू में बुलाया गया और पिछड़ी जाति का होने से चपरासी की जगह पर चुन लिया गया। बैंक ने हजार रुपये की जमानत मांगी, तब धीरज वह फार्म लेकर मेरे पास आया था। मैंने उस फार्म पर हस्ताक्षर कर जमानत कर दी थी।

उस बात को तीन-चार वर्ष हो गये थे। मेरे मित्र मैनेजर की बदली बंबई के लिए हो गयी थी। शुरू में धीरज अपना एहसान व्यक्त करने छुट्टियों में घर आता, लेकिन मैं तो बाहर दौरे पर रहा करता था, इसलिए हम अकसर मिल नहीं पाते थे। सच तो यह था कि धीरज को मैं अब भूलता जा रहा था। कभी भालचंद्रभाई का पत्र आता या कहीं भेंट हो जाती तब धीरज याद आ जाता, लेकिन बैंक के इस पत्र ने तो उसकी याद एकदम तीव्र करा दी। धीरज ने पैसा चुराया होगा ? चोरी की होगी ? किसलिए बैंक-जैसी मातबर नौकरी पर आंच आने दी होगी ?

भालचंद्रभाई को लिखूं ? उससे

क्या होगा ? उन्हें भी पता तो चल ही गया होगा । जानकर वे भी बहुत दुखी होंगे । एक आदिवासी को उन्होंने शहरवासी बनाया, और उसने अपने हाथों अपने पांव पर कुल्हाड़ी मारी ! मुझे इससे भारी आघात लगा । एक बार उससे जेल जाकर मिलने की इच्छा हो आयी ।

शुरू में उसने रोते-रोते कहा, "आप मिलने आये, यह अच्छा हुआ । मुझे इस दुनिया में मात्र दो व्यक्तियों की शर्म है। एक आपकी और दूसरे भालचंद्रभाई की । आपने मेरा हाथ पकड़ा और अच्छे वेतनवाली नौकरी दिलवायी । फिर तो इस बात से आपको कैसा आघात लगा होगा यह मैं समझ सकता हूं । लेकिन साहब ! आपका विश्वास भंग हो ऐसा मैंने कुछ नहीं किया है । यह तो कुछ ऐसी बात है, जो न तो कही जाती है और न सही जाती है ।"

मैंने उससे सब कुछ सच-सच बता देने का आग्रह किया । शुरू में तो उसे संकोच हुआ, किंतु मेरे आग्रह के कारण धीरज ने गंभीरता से कहा, "मुझे वचन दें तो मैं कहूं !"

"किसी से नहीं कहूंगा ।"

उसने चोरी नहीं की थी, लेकिन जिसका नमक खाया था, उसे बचाने के लिए उसने आरोप अपने ऊपर लिया था ।

धीरज बैंक के प्रमुख जमादार संतराम के यहां रहता था । शुरू में तो संतराम अकेला था, इसलिए धीरज की आसानी से गुजर हो गयी । संतराम अब वृद्ध होने आया था । नौकरी का समय भी अब दो-एक वर्ष रह गया था । धीरज सेवाभावी था । इसलिए दोनों का मेल बैठ गया था । बीच में संतराम की पत्नी और उसकी जवान पुत्री भी वहां आ गयीं, तब संतराम ने बैंक के कैशियर के यहां धीरज को भेज दिया था । कैशियर के यहां वह उसके घर का काम भी कर देता था । धीरज अपने परिश्रम और ईमानदारी से घर का विश्वासपात्र नौकर बन गया था ।

बैंक से रुपये किसने गबन किये यह तो ईश्वर जाने, लेकिन कैशियर पर यह आरोप लगा । घर में रुलाई शुरू हो गयी । उसके जेल जाने की नौबत आ गयी ।



छोटे-छोटे लड़के थे। दूसरा कोई कमाने वाला नहीं था। वह धीरज के आगे गिड़गिड़ाया, 'अब तो एक तुम्हीं मुझे बचा सकते हो। कैश मेरे हाथ में होने के कारण मुझ पर आरोप लगा है। मेरे पास बचाव का कोई साधन नहीं है। मैंने गबन नहीं किया है, यह तो ईश्वर जानता है। लेकिन निर्दोष होते हुए भी मुझे जेल जाना होगा और मेरे लड़कों को भूखों मरना होगा..'

'मैं किस तरह बचा सकता हूं ?'

'तुम आरोप स्वीकार कर लो तो..?'

धीरज ने यह बात मेरी तरफ देखकर भारी आवाज में कही।

"तब सबसे पहले मुझे आप और भालचंद्रभाई याद आये। आपको कितना आघात लगेगा इस विचारमात्र से मैं कांप उठा, किंतु मेरे सामने कैशियर वासुदेवभाई का मौत के मुख में पड़ा सात प्राणियों का परिवार था। वासुदेवभाई के जेल जाने पर उन लोगों का क्या हाल होगा ? उनकी पत्नी सुधा बहन तो शायद जहर पीकर सो जाएं। मैं उस परिवार के भविष्य के विचार से कांप उठा।

"साहब ! ऐसे भी मुझ पर वासुदेवभाई का उपकार था। यदि उन्होंने मुझे शरण न दी होती तो मैं नौकरी होते हुए भी कहां रहता ? संतराम ने भी ब्राह्मण कैशियर को बचा लेने का दबाव डाला...

"मैं जानता था कि मुझ पर चोरी और जेल का कलंक लगेगा तो मेरे लिए इस दुनिया में पांव रखने की भी जगह नहीं रहेगी। आप-जैसों के आघात का पार नहीं होगा, किंतु मुझसे वासुदेवभाई का और सुधा बहन का दुःख नहीं देखा जाता था। अतः मैंने एजेंट के पास जाकर जुर्म स्वीकार कर लिया और मुझे सजा हो गयी। साहब ! जेल का तो मुझे कोई दुःख नहीं, लेकिन भालचंद्रभाई-जैसे साधु-पुरुष के आघात के विचार से मेरी नींद उड़ जाती है।"

धीरज की कहानी सुनकर मैं विचार में पड़ गया। उसके कृत्य को कैसा माना जाए ? जैसे मुझे झकझोरता हो इस तरह इस तरह उसने कहा था—

"साहब ! आप संत पुरुष भालचंद्रभाई को लिख देंगे तो मेरे अंतर का भार हलका होगा।"

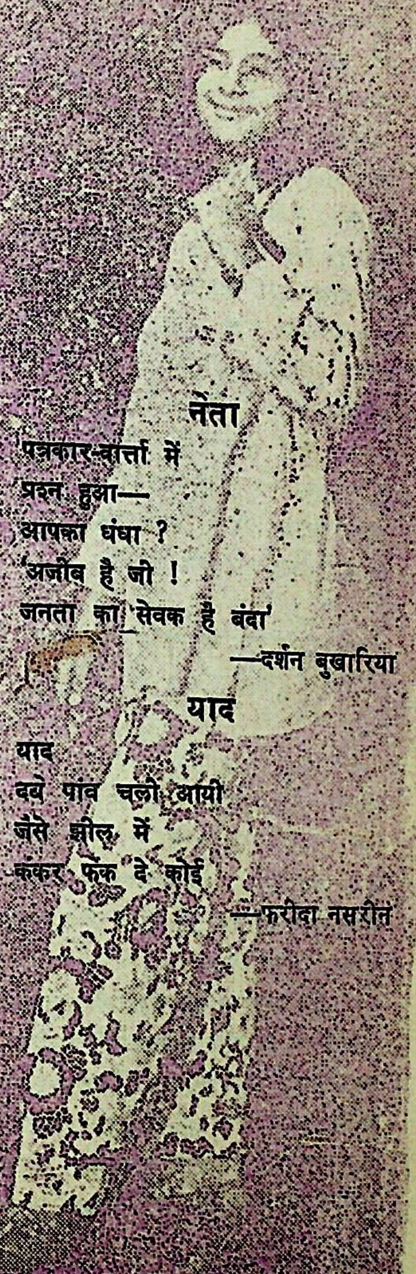
मैं धीरज की तरफ देख रहा था। उसकी निर्दोष आंखें पहले की तरह ही चमक रही थीं। उसका चेहरा ही कह रहा था कि यह चोरी नहीं कर सकता। मुलाकात का समय पूरा हो गया था और मैं उठ खड़ा हुआ। उसने मेरे दोनों पांव पकड़कर आंसू बहाते हुए कहा,

"साहब, आपको तकलीफ दी इसके लिए क्षमा करेंगे न ?"

और मेरे मुंह से शब्द फूट पड़े, "धीरज ! इसमें तुम्हारा कुछ दोष नहीं है। छूटकर सीधे मेरे घर आना।"

—१२१, सरदार पटेल कालोनी,
अहमदाबाद-१४

क्षणिकाएँ



आक्षेप

हमने वित्त-मंत्री से
झुंझलाकर पूछा—
बजट में और चीजों के साथ
स्टेनलेस स्टील पर
क्यों बढ़ाया है कर ?
उन्होंने कहा—
हमने नहीं चमचों ने
बढ़वाया है बंधुवर !

—अखिलेश अंजुम

पहेली

नेता क्यों न गरजा ?
नाटक क्यों न हुआ ?
(मंच न था)
मंत्री खुश क्यों न हुआ ?
मेहमान क्यों न रुका ?
(स्वागत न हुआ)

—बलवीर त्यागी

राजनीति

राजनीति
रेल का थर्ड-क्लास डब्बा
जिसमें घुसने का अधिकार उसको
जो तगड़ा हो
बाहर धकेलने का हक
किंतु बराबर सबको

—डॉ. सुमेश

नेता

पत्रकार-वार्त्ता में
प्रश्न हुआ—
आपका धंधा ?
'अजीब है जी !
जनता का सेवक है बंदा'

—दर्शन बुखारिया

याद

याद
दबे पांव चली आयी
जैसे झील में
कंकर फेंक दे कोई

—फरीदा नसरीन

हैदराबाद-बंगलौर रेलवे-लाइन पर एक छोटे-से स्टेशन देवरकदरा में रात के एक बजे मेरा 'पुनर्जन्म' हुआ ।

तीस वर्ष पूर्व ही पिताजी का स्वर्ग-वास हो चुका था । माताजी जीवित हैं या नहीं, पता नहीं । भाई-बंधु अगर हों तो कहीं हों, पर कोई साथ नहीं । अंधे कुएं में पड़े मुझ 'नवजात' को उस अंधेरी रात में कौन गोद में लेता और कौन लोरी सुनाकर सुलाता ! स्टेशन के सुनसान बरामदे में पड़ा रहा । घोर निराशा गाढ़ निद्रा में परिणत हुई । सूर्यनारायण की स्वर्ण-किरणों ने थप-थपाकर जगा दिया । फिक्र सताने लगी कि कहां जाएं और क्या करें !

मेरा पुनर्जन्म

• वेंकटराव रायसम

देवरकदरा है तो मेरा ही गांव, अर्थात हमारे पुरखे वहीं के निवासी थे । कुछ भू-संपत्ति भी पुरखों से चली आयी है जो अब मेरे नाम पर चल रही है, क्योंकि अगर कोई परिवार हो तो मैं ही उसका पुरखा ठहरता था ।

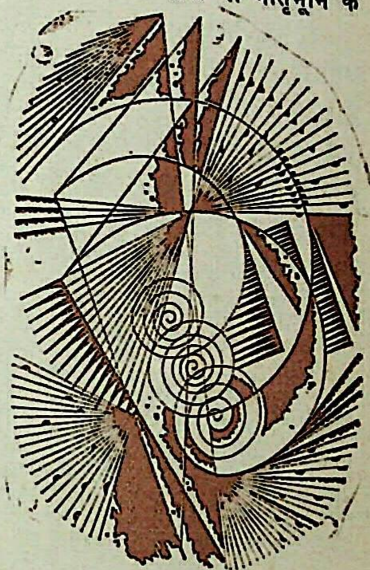
कोई पैंतालीस साल पहले की बात है । उत्तरप्रदेश में क्रांतिकारियों पर 'काकोरी-षड्यंत्र केस' चल रहा था । निजाम-राज्य में मैं अध्यापक था, और बहुत अच्छा अध्यापक था । संसार में अच्छा काम करना बड़ा खतरनाक है, विशेषकर सच्चे और साधनविहीन बेसहारे के लिए । कुछ की नजरों में मैं खतरनाक था । मेरे विरुद्ध ये अध्यापक षड्यंत्र रचते रहे । व्यक्तिगत परीक्षार्थी की हैसियत से इंटर की तैयारी कर रहा था । प्रोफेसर शेरवानी के 'अर्थशास्त्र' ग्रंथ में अंगरेजों की अर्थ-नीति के बारे में पढ़कर अनजान में ही देशभक्त बना । उधर हमारे तेलंगाना के नेताओं ने सावधान किया कि लाइ-ब्रेरी जाकर बाहर के अखबार या बंकिम-चंद्र के उपन्यास पढ़ना भी राजद्रोह समझा जाएगा । मिडिल स्कूल में पढ़ते समय जब मैं निजाम की प्रशंसा में नज्में इकट्ठी कर लेता था तो मेरे साथी कहते थे कि तुझमें हुब्बुलवतनी (देशभक्ति) का माद्दा कूट-कूटकर भरा है । सच तो यह है कि हुब्बुलवतनी क्या बला है, मैं समझता भी न था । उधर नौकरी में तीन महीनों में चार बदलियां हुईं, इधर ससुराल में दुर्व्यवहार के कारण नफरत-सी मन में हो गयी । तभी साइमन कमीशन बना और मद्रास में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। मैं हैदराबाद को खैरबाद कह चलता बना। हैदराबाद में निजाम की नवाबी थी । मैं हैदराबाद का निवासी था । रजाकारों

के अत्याचारों से निरीह प्रजा पीड़ित थी, पर सार्वजनिक नेता पलायन कर चुके थे। मेरे भावुक हृदय के लिए यह एक चुनौती थी। जन्म-स्थान के आवाहन पर हैदराबाद में मेरा 'पुनर्जन्म' हुआ—पुनर्जन्म इसलिए क्योंकि हमारे लोग समझ बैठे थे कि मैं कभी का मर चुका !

हां, तो मैं स्टेशन पर जाग पड़ा। पुरखों के गांव के लिए मैं भूत-प्रेत ही था। अपने पुराने जीवन-काल में भी कुल मिलाकर उतने दिन रहने का भी सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ जितने वर्षों की मेरी उमृ है। अन्य कुछ गुणों के साथ इसमें भी मैंने अपने पिताजी का अनुकरण किया है। पिताजी का जन्म मूल-नक्षत्र में अमावास्या के दिन हुआ था। शीघ्र ही माता-पिता का साया उठ गया। किसी हितैषी रिश्तेदार के घर रहे, जहां पढ़ने-लिखने की अपेक्षा स्वस्थ, चुस्त, सुंदर किष्टा (कृष्णाराव) को घर भर हर छोटे, बड़े काम पर दौड़ाया करता। साधारण पढ़ने, लिखने के साथ कहीं नौकरी की, कहीं शादी की, कहीं रहे। अंत में पंद्रह रुपये की पेनशन पाकर घर लौटे तो वहां दीवारें भी नहीं थीं। किसी और के घर रहे।

पर साल भर भी न रह पाये। तंगी थी, पेनशन में पांच रुपये बढ़वाने हैदराबाद गये और दूसरे ही दिन स्वर्ग से हमें सूचना भिजवा दी। उन दिनों मैं तेरह रुपल्ली का टीचर पिताजी के फूल लेने हैदराबाद जाने से घबड़ाकर रह गया था। पितृगृह पिताजी को रास नहीं आया और मैं घर से भागकर सत्तर वर्ष तक देश भर घूमकर जीता, जागता हूं।

तब फिर इस भगोड़े ने घर जाने का खतरा क्यों उठाया? खतरा खतरनाक होता है उससे भागनेवाले को। खतरा मोल लेने वाला मन में सुख अनुभव करता है। हैदराबाद से भागा था मातृभूमि के



छुटकारे के लिए और लौटा जन्मभूमि के छुटकारे के लिए। दिल्ली में भी सरोजिनी नायडू, जवाहरलाल नेहरू, मौलाना आजाद और विनोबा भावे ने मना किया था। रफी अहमद किदवई ने खोलकर कह दिया था कि हैदराबाद में रजाकार कहेंगे यह हजरत अब तक कहां थे, अब इन्हें खत्म ही कर दो।

एक रात की घटना तो मानो मेरे लिए ईश्वरीय आदेश था। रेल पर सवार हुआ और सरहद पर खतरों से बचते, बचाते हैदराबाद उतरा। मुझ खतरनाक आवारे को अपने यहां ठहरने कौन देता? बरसों से बिछुड़े माता, भ्राता में से यदि कोई हों, ममता मिले, इस विचार से स्वग्राम देवरकदरा में पदार्पण किया।

समाज दिन-पर-दिन नवीन बनता जाता है और व्यक्ति पुराना पड़ता जाता है। व्यक्ति-व्यक्ति के बीच व्यवहार की डोर ही टूट जाए, तो अपनों को भी वह अजनबी लगता है। न वह पहले की रूप-रेखा और न वेश-भूषा, उस पर १९४२ की रूपोशी की दाढ़ी ज्यों-की-त्यों बनी रही। यह अजनबी अपने घर की ओर बढ़ा। घर के पास पहुंचा तो पुरखों का घर धरती बराबर था। पुराना घर, जिसे पिताजी ने बसेरा बनाया था, उसकी दीवारें खड़ी थीं। बीच सड़क पर आया, वही सड़क जिस पर जब कभी मैं चलता तो अगल-बगल के लोग मुझे ताकते ही रह जाते और कहते, "कैसी चुस्त चाल! क्या मजाल जो दायें, बायें नजर दौड़ाये!" देख रहा हूं, वही लोग हैं, पर पूछते भी नहीं कि तुम कौन हो? खेत, खलिहान, बावली, और बरसाती नाले बोलते तो नहीं थे पर बांहें फैलाकर स्वागत जरूर करते थे। तब और अब भी उनके प्रेम में कोई अंतर नहीं आया, पर वही पुराने जाने-पहचाने लोग आज मुझे पराया समझ रहे हैं। मैंने कहा, "हम भी नहीं पहचानते तुम्हें," और रेल पर सवार हो गया।

घरवालों का पता न चला, तो चलो बाहरवालों की ही खोज करें। भाई होगा, तो कहीं नौकरी-चाकरी पर होगा। बहनोई गांव भर के मख्तेदार हैं। बहन तो घर ही रहेगी। पंद्रह मील पर है उनका गांव कोयलकोंडा। बस न थी, पैदल चलना तीस मील—सो हो नहीं सकेगा। साइकिल चाहिए, मुझे किराये पर कौन देगा! महबूबनगर में एक पुराने वकील के घर गया और अपना उलटा-सीधा परिचय देकर उनसे एक साइकिल ली और बहन के गांव जा पहुंचा। तब का पांच वर्ष का भांजा अब तीस वर्ष की अवस्था में दिखायी पड़ा। पहचानने में मुझे देर न लगी, मगर पंद्रह, बीस मिनट की बातचीत में भी वह मुझे पहचान न सका। बाप की बात पूछने पर ज्ञात हुआ कि हमारे जीजाजी का देहांत हो चुका है। विधवा बहन से भेंट करे बिना मन नहीं माना। बहनोई का पुराना दोस्त बनकर और बहन से अनजान बनकर भांजे के मामा, मामी की बात पूछी। बड़े मामा, अर्थात मुझे लापता बताकर छोटे मामा, यानी मेरे छोटे भाई का पूरा पता बता दिया और कहा कि मामी स्वयं उसकी बहन है। दक्षिण में भांजी से विवाह करने की प्रथा है। अपना मतलब निकाल लिया था। मैं चलने लगा। वह कुछ दूर तक पहुंचाने चला। साफ रास्ते पर पहुंचते ही उसके हाथ में बच्चों के लिए

आम थमा मैं साइकिल पर एक दो तीन हो गया। वह और गांव का एक चमार देखते रह गये। सदा खुफिया पुलिस से पाला पड़े हुए, मुझे राजनीति से दूर हैदराबाद के गांववालों को चकमा दे जाना कौन बड़ी बात थी !

हैदराबाद भी वह पुराना शहर नहीं रहा था। नये-नये महल्ले बसते जा रहे थे। चिक्कड़पल्ली (कीचड़ बस्ती) नये-नये बंगलों से आधुनिक शहर का अंग बना जा रहा था। पूछते-पूछते रामराव के घर पर पहुंचा। पच्चीस साल पुराने भाई को पहचानने में मुझे क्षण भर भी नहीं लगा, पर अपना नाम बताने पर भी छोटे भाई को बड़े भाई पर विश्वास न हो रहा था। शिष्टाचार के नाते एक कुरसी पर बिठा लिया। भीतर खबर गयी। माताजी और हम दोनों भाइयों की जीजी ने झांककर देखा। अनुभव किया कि या तो उन्हें स्वयं अपनी आंखों पर विश्वास नहीं आ रहा है या मुझ पर अविश्वास कर रहे हैं। जब अपनों को आप पराया लगें तब किसी की क्या दशा होगी ! किसी की होगी, पर मैं एकदम बेअसर था।

मैं खूब जानता था कि वे मुझे पहचान नहीं पाएंगे, क्योंकि १९४२ के 'भारत-छोड़ो' आंदोलन में जब मैंने अपना भेस बदल रखा था तब एक, दो महीनों की रूपोशी के बाद अच्छे-खासे परिचितों, बल्कि साथी कार्यकर्ताओं के घर जा बैठता तब भी जब तक मुंह से न बोलूं वे मुझसे सशंकित रहते थे। इसी कारण अपने गांव या बहन के घर अपना परिचय नहीं दिया था। धोखे में ही सही, थाने में रिपोर्ट हो जाती और रजाकार हैदराबाद में मेरी व्यूहरचना धरी रह जाती। वहां तो बचा गया, पर यहां सबूत देना पड़ रहा है कि मैं उसी माता का बेटा हूं और उसी भाई, बहन का बिछुड़ा हुआ भाई। उनका भी दोष नहीं, क्योंकि शुरू-शुरू में एक, दो को किसी जेल से या किसी शहर या जंगल से लाकर अपना भाई, बेटा समझकर घर रखा था, पर कुछ दिन बाद छोड़ ही देना पड़ा था उसे। अब तो मैंने अपने-आप को पेश किया है, अतः सबूत भी मुझे ही पेश करना होगा।

इतने में मेरी भांजी भाभी झांक पड़ी और मैं बोल पड़ा, "क्या एंटि के मामा ठीक हैं ?"

सब खिलखिला उठे और मैं घर का बन गया। वाह यह भी कोई सबूत है ? हां, बहुत बड़ा सबूत, अकाट्य सबूत है। जब मैंने घर छोड़ा था तब मेरी भांजी रागम्मा चार, पांच वर्ष की थी। वेंकट मामा वह कह नहीं सकती थी, अतः 'एंटि के मामा' कह जाती थी। यह बात परिवार के लोग ही जान सकते थे और न जाने मुझे तब कैसे याद आ गया।

इस प्रकार मेरा अपने परिवार में पुनर्जन्म हुआ। वास्तव में यह पुनर्जन्म पुनर्मिलन था।

—९, जनपथ, नयी दिल्ली-११०००१

अगर डॉक्टर न होते!

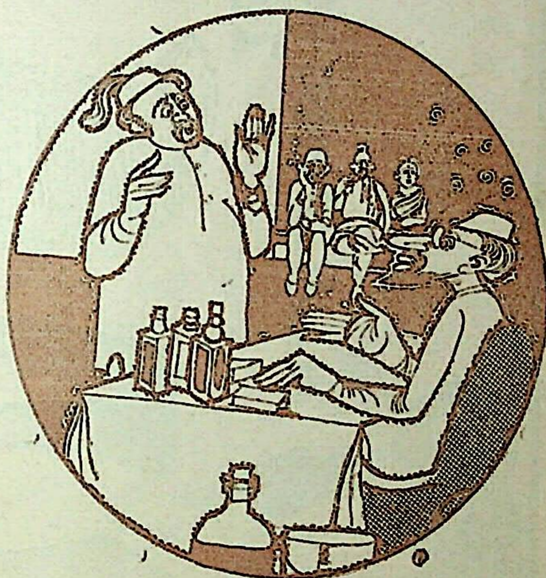
● रशीद अहमद सिद्दीकी

एक हकीम थे, बेरोजगार, अपने से मायूस, दूसरों से बेजार—यह देखकर कि वतन में लोग बीमार भी पड़ते हैं, अच्छे भी होते हैं और मर भी जाते हैं, लेकिन इन सभी बातों के बावजूद किसी एक में भी उनका दखल न होता। उन्होंने वतन छोड़ दिया और परदेस में पहुंचकर भाग्य परखने को तैयार हुए। दुर्भाग्यवश पहला ही रोगी उनके हाथों चल बसा। रोगी के वारिस उनको खबर देने आये। उन्होंने भी रस्मी तौर पर सहानुभूति प्रकट की। थोड़ी देर बाद रोगी के वारिसों की फरमाइश हुई—"हुजूरेवाला! हमारे यहां का रिवाज है कि रोगी जिस हकीम के हाथों मरे उसी के हाथों रोगी की मिट्टी भी दी जाती है।" चिकित्सा के विधान में यह नियम इससे पहले हकीम साहब की नजर से नहीं गुजरा था। विवश होकर या नैतिकता के तकाजे से वे उठ खड़े हुए। शव को नहलाया, कफन पहनाया और उसे ताबूत में रखा। रस्मी तौर पर ताबूत उठाने में आगे बढ़कर एक ओर कंधा भी दिया। लेकिन पता यह चला कि हर ओर लोग कंधा तो बदलते रहते हैं, उनकी ओर कोई ध्यान भी नहीं देता। कब्रिस्तान बस्ती से बहुत दूर था। अंत में कब्रिस्तान पहुंचे। शव को कब्र में उतारा। उन्होंने मिट्टी दी और रात गये घर पहुंचे।

दूसरे दिन से जब कोई रोगी उनकी दुकान में आता तो उसका हाल पूछते-पूछते बात काटकर पूछ बैठते, "और क्यों जनाब, आपका कब्रिस्तान कितनी दूर है?" जाहिर है कि यह सवाल ऐसा न था कि रोगी या उसके रिश्तेदार उनसे और बातचीत करते। यहां से भी परेशान होकर निकले। उसी समय उनकी मुलाकात एक ऐसे बुजुर्ग से हुई जो भलेमानस लगते थे। हकीम साहब ने नाम और पता पूछा। उन्होंने मुसकराकर जवाब दिया, "इनसान मुझे फरिश्ता कहते हैं और फरिश्ते मुझे शैतान। मैं देखता हूं कि तुम बड़ी मुसीबत में हो। मैं तुम्हारी मदद करने को हाजिर हुआ हूं। देखो, जब कभी तुम्हारा वास्ता किसी रोगी से हो और फलां निशान देखो तो समझना कि यह रोगी अच्छा न होगा। उसे हाथ भी न लगाना। यदि ऐसा न दीखे तो जो कुछ दोगे, लाभ होगा।" हकीम साहब बहुत खुश हुए। बोले, "आपने बड़ा अहसान किया। मेरे लायक खिदमत हो, फरमाइए।" "तुम मेरी खिदमत

क्या करोगे! अभी तक एहसान का मतलब तक तो तुम समझ नहीं पाये!" जवाब मिला। हकीम साहब शैतान के तेवर से घबराये! तुरंत अभिवादन करके विदा हो गये।

एक दूसरे शहर में पहुंचकर दवाखाना खोला। एक रोगी आया तो उसमें वही निशान मिला जो शैतान ने बताया था। उन्होंने तुरंत रोगी से कह दिया कि इलाज कराने से कुछ लाभ नहीं होगा। तुम शीघ्र ही मर जाओगे। दूसरे रोगी में भी वही निशान मिला। गर्ज यह कि कई दिन तक बराबर ऐसे रोगी आये जिनकी जिंदगी का प्याला भर चुका था। अतः थोड़े ही दिनों में उनकी कुख्याति ऐसी फैली कि रोगी तो एक ओर, स्वस्थ भी उनकी छाया से भागने लगे और ये बेचारे जहां-के-तहां रह गये।



यह घटना चाहे सही हो या न हो, उसके दिलचस्प होने में यों संदेह नहीं हो सकता कि उसमें शैतान का पर्याप्त दखल है, और शैतान और डॉक्टर जब एकाकार हों तो आप जानते हैं, स्वस्थ व्यक्ति और रोगी का परिणाम एक-सा होता है।

आपने यह भी महसूस किया होगा कि कई डॉक्टरों का चेहरा ही कुछ ऐसा होता है कि उनके माथे पर रोगी की मौत लिखी होती है। आपने प्रायः ऐसे डॉक्टरों को देखा होगा जिन्हें दवाखाना खोलने के बजाय स्टॉक-एक्सचेंज पर सट्टेबाजी की किस्म के मनोविनोद में व्यस्त होना चाहिए था या पूर्वी लंदन में कहवे की दूकान खोलनी चाहिए थी। फिर आप ही विचार कीजिए कि ऐसे बुजुर्गों से मय्यत-बिरादरी वगैरा का काम लिया जाता हो तो किसी का क्या कुसूर!

विज्ञान की उन्नति ने अन्य कलाओं की तरह डॉक्टरी की कला को जितना लाभ पहुंचाया है, उससे अधिक नुकसान डॉक्टर को पहुंचाया है। अब डॉक्टर यंत्रों पर भरोसा करने लगा है या उन पेटेंट दवाओं पर जिनको व्यवसाय ने विज्ञापित कर दिया है। वह असल के रहस्य से बिलकुल अनभिज्ञ हो गया है।

एक असली हकीम और अताई (नीम हकीम) में फर्क सिर्फ यह है कि दोनों रोगी की जान लेते हैं, लेकिन हकीम कायदे के साथ और अताई बेकायदगी से। हमारी सभ्यता का सारा ढांचा इसी बाकायदा और बेकायदा कार्य-ढंग से वाबस्ता है। काम करने के इसी कायदा और बेकायदा ढंग ने हमें अपनी नैतिकता से बेगाना कर रखा है।

हां, तो बात डॉक्टरों की थी—यानी ये न हों तो क्या हो ? सबसे पहली बात यह हो कि बाकायदा और बेकायदा मरने का झगड़ा खत्म हो जाए। लोग मरने से पहले न मरें। डॉक्टरों में एक कौम 'विशिष्ट विशेषज्ञों' की निकल आयी है। शरीर का कोई अंग ऐसा नहीं जिसके विशिष्ट चिकित्सक न हों।

अच्छा, थोड़ी देर के लिए मान लीजिए कि आपके दिमाग में फितूर है। आप किसी मनोचिकित्सक के पास चले जाइए। वह बहुत सारी तरकीबें करके आपपर स्पष्ट कर देगा कि आपके दिमाग में सचमुच फितूर है। उसके पास ऐसे यंत्र होंगे, उसकी ख्याति ऐसी होगी, और आप स्वयं उससे कुछ ऐसे प्रभावित होंगे कि आपको स्वयं यकीन हो जाएगा कि आपका दिमाग खराब है।

मेरे एक मित्र का कथन है कि आजकल के डॉक्टरों और इलाज के तरीकों से वास्ता पड़ जाए तो जान और माल का बस भगवान ही रक्षक है। प्रथम तो ये लोग रोग-निदान करने में इतने रुपये खर्च करा देते हैं कि रोगी कंगाल हो जाता है। फिर रोगी में तनिक शक्ति भी होनी चाहिए, वरना निदान के संबंध में प्रायः उसे दर-ब-दर फिरते-फिराते ही मार डालते हैं।

एक डॉक्टर हैं जिनसे मुझे बड़ी दिलचस्पी है। आपके एक फुंसी भी निकल आये और आप उनको दिखायें तो पहले वे फुंसी को इस निगाह से देखेंगे, जैसे कोई पागल अपनी बीवी को देखता है। फिर बहुत भेदभरी और रहस्यपूर्ण हमदर्दी के साथ पूछेंगे, "आपको कभी कोढ़ या इस तरह के अन्य कुत्सित रोग तो नहीं हुए ? आप नहीं तो आपके बुजुर्ग कभी इससे दो-चार हुए हैं ? जुकाम का आरंभ वह निमोनिया से करेंगे और निमोनिया को तपेदिक की भूमिका बनायेंगे। उनके विचार में चालीस साल में हर एक व्यक्ति का निधन हो जाता है और अगर वह जिंदा है तो उसका कुसूर है।

एक दिन खाना खाकर मैं फौरन पढ़ने बैठ गया। वे चौंक पड़े। फरमाया

"गजब खुदा का, ऐसी गलती न कीजिए! खाना खाने के बाद रक्तचाप तेज हो जाता है, और आपको मालूम है कि चालीस साल की उम्र में स्नायु सख्त हो जाते हैं। बहुत संभव है, रक्तचाप की तेजी से स्नायु फट जाएं। यह भी हो सकता है कि फालिज गिरे और मौत हो जाए!"

मैंने अर्ज किया, "डॉक्टर साहब, क्या वे निशान मुझमें नजर आ रहे हैं?"

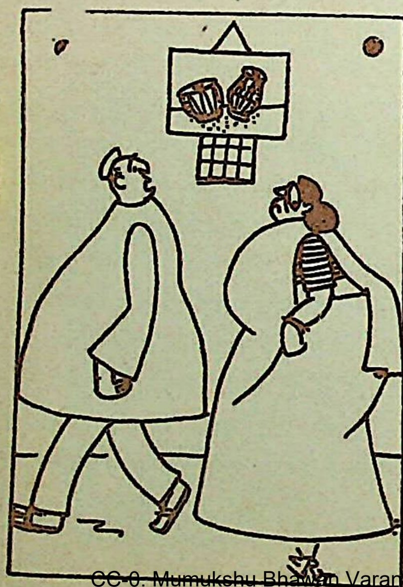
फरमाने लगे, "तुम लोग तो हो मूर्ख! रोग के तब कायल होते हो जब उसमें फंस जाते हो। डॉक्टर संभावनाओं का कायल होता है।" डॉक्टर साहब तो यह कहकर चले गये, लेकिन उनकी बातचीत का यह नतीजा हुआ है कि अब मुझे सिर फटने का इतना डर नहीं रहा है जितना स्नायुओं के फटने का।

हमारा डॉक्टर लकीर का फकीर हो गया है। वह सिर्फ यह देखता है कि जो कुछ किताबों में लिखा है, उसका अक्षरशः पालन कर दिया गया है या नहीं। वह रोग का विशेषज्ञ हो तो हो, लेकिन रोगी का हमदर्द हरगिज नहीं होता।

डॉक्टरों में दवाओं से इलाज करने के अलावा सर्जन भी होते हैं। उनका महत्त्व निर्विवाद है। लेकिन विशिष्ट विशेषज्ञता के जुनून ने इस क्षेत्र में भी खतरे की संभावनाएं पैदा कर दी हैं। जरा-जरा-सी पीड़ा में भी ऑपरेशन अनिवार्य समझा जाने लगा है। इस तरीके से चिकित्सा-शास्त्र को और नुकसान पहुंचा है। सेना या उद्योग या कलाओं की तरह इलाज का ढंग भी मशीनी होने लगा है, लेकिन हर चीज को मशीनी कर देने से मानवता के कई गुण शनैः-शनैः नष्ट होते जाएंगे, और यह बात मानवता के लिए बड़ी हानिकारक है।

लेकिन नक्कारखाने में तूती की आवाज कौन सुनता है! अब हमारी सारी जिंदगी मशीन के घेरे में आ गयी है और मानव-जीवन से मानवता का अंश बड़ी तेजी के साथ लुप्त हो रहा है। लेकिन याद रहे कि मशीन मन-मस्तिष्क तो बदल सकती है, भावनाओं को कोमल नहीं कर सकती। सारांश यह कि डॉक्टर हो तो बुरा, और न हो तो और बुरा!

"संगीत समारोह में तुम्हें साथ ले जाने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है पर लोग कहेंगे कि तबलों की जोड़ी आ गयी!"





एम. ए. संस्कृत में हमें एक बंगाली अध्यापिका पढ़ाती थीं। वे समय की बड़ी पाबंद थीं। कोई छात्रा देर से आती तो वे कहतीं कि डिस्टर्ब मत किया करो, बाहर बैठकर ही पढ़ लिया करो। कालेज शहर से बहुत दूर था अतः रोज किसी-न-किसी लड़की को क्लास से बाहर रहना पड़ता। एक दिन प्राध्यापिका स्वयं काफी देर से आयीं। जिस मेज पर वे अपना सामान रखती थीं, उस पर हमने लिख दिया—'कृपया समय पर आया करिए।' काफी देर में वे आयीं। उन्होंने जब मेज पर चॉक से लिखी हुई इबारत पढ़ी तो बहुत शर्मिंदा हुईं। आगे से उन्होंने देर से आने पर किसी छात्रा को कुछ नहीं कहा।

—कुमुदरानी गुप्ता, सहारनपुर

होम साइंस कालेज जबलपुर में बी. एस-सी. (अंतिम) की छात्रा थी। रसायनशास्त्र के विभागाध्यक्ष बड़े जिंदादिल थे। छात्राओं की देर से आने की आदत से वे परेशान थे। एक बार उन्होंने कक्षा में कहा, "जो यह समझते हैं कि महिलाओं का श्रृंगार पुरुषों को आकृष्ट करने के लिए होता है वे गलत हैं। पुरुष तो मूर्ख होते हैं, किसी भी वस्तु से प्रभावित हो सकते हैं। श्रृंगार की बारीकियां वे क्या समझें! वास्तव में महिलाएं महिलाओं को आकृष्ट करने के लिए ही श्रृंगार करती हैं, क्योंकि तभी तो उन्हें घेरकर बाकी महिलाएं पूछती हैं कि यह साड़ी कहां से ली? चूड़ियां और बुंदे कहां बनवाये? कक्षा में ठीक समय आया जाए तो सारी लड़कियों का ध्यान आकृष्ट नहीं किया जा सकता, किंतु जैसे ही कोई लड़की पूछेगी, 'मे आई कम इन सर?' अन्य का ध्यान आकृष्ट हो जाएगा। पीरियड के बाद सब घेरकर साज-श्रृंगार के विषय में पूछेंगी।"

शायद इसका असर न होता किंतु वे लेट आनेवाली लड़कियों को इसके बाद तब तक गौर से देखते जब तक वे अपनी जगह पर न पहुंच जाएं। अंत में कहते, "आखिर तुमने अपने को दिखा ही दिया।" कक्षा ठहाकों से गूंज उठती। कक्षा के बाद वे कहना न भूलते, "कहो, मैंने तुम्हें कैसा मचा चखाया?" जल्द ही हम सबकी

यह स्तम्भ युवा-वर्ग के लिए है। कालेज के छात्र-छात्राएं इसके लिए रोचक एनकडोट्स भेज सकते हैं। रचना के साथ अपना चित्र और कालेज का पता लिखा, टिकट लगा लिफाफा भेजना आवश्यक है, अन्यथा रचना पर विचार नहीं किया जाएगा।

—सम्पादक

आदत सुधर गयी।

—मीरा त्रिवेदी, अमहिया बी.-७, रीवां

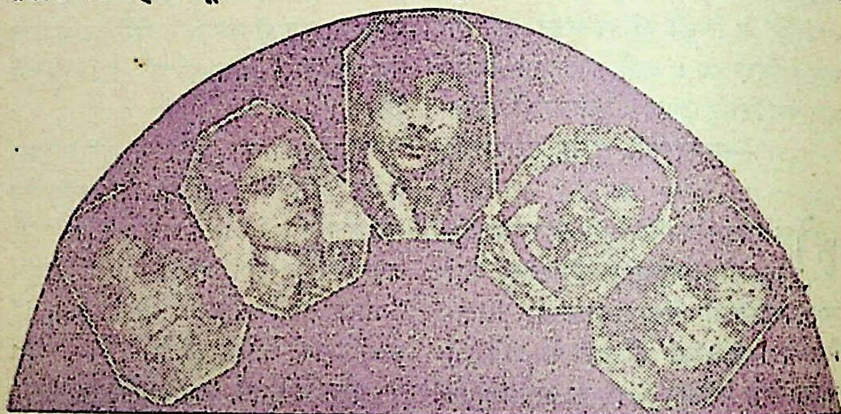
वृंदावन से मैं रोज बी. एस-सी. पढ़ने मथुरा आता था।

यूनियन के चुनाव में हम सब वृंदावन के छात्रों ने अध्यक्ष पद के लिए एक उम्मीदवार का समर्थन किया और सौभाग्यवश वह जीत भी गया। खुशी में हमने मिलकर अपनी पूरी यूनियन की चाय-पार्टी वृंदावन में रखी, पर इस बारे में स्टाफ के किसी सदस्य को नहीं मालूम था।

पुलिस थाना पड़ता था।

डीग में किसी दर्शक ने प्रिंसिपल को फोन कर दिया कि आपके यहां के छात्र डीग थाने में आग लगाने जा रहे हैं। प्रिंसिपल साहब ने तुरंत ही प्रॉक्टरों तथा अध्यापकों से सलाह कर पुलिस को खबर कर दी। मुख्य-मुख्य प्रोफेसर हमारे पीछे दौड़ाये गये।

तब तक हम थाने से आगे निकल चुके थे। वहां प्रोफेसरों को मालूम हुआ कि आग तो नहीं लगायी पर छात्रों ने 'पुलिस मुर्दाबाद' के नारे अवश्य लगाये थे।



बायें से : मीरा त्रिवेदी, प्रकाश शर्मा, करीम घोंघी, श्यामसुन्दर आचार्य, कुमुदरानी गुप्ता

नियत तिथि पर सब छात्र, लगभग सौ, अपने-अपने पीरियड गोल कर साइकिलों पर वृंदावन चल दिये। रास्ते में कुछ सिपाही आदि मिले। हमने उन्हें देखकर मुर्दाबाद के नारे लगाये। कारण यह था कि कुछ दिन पूर्व पुलिस और छात्रों में काफी संघर्ष हुआ था। आगे डीग गेट का

अब उनको संदेह हुआ कि हम वृंदावन के थाने में आग लगाने जा रहे हैं। कुछ प्रोफेसर बस में वृंदावन की ओर चले तो कुछ रिक्शों तथा टेंपुओं में। वृंदावन से मथुरा तक छह मील का रास्ता वे लोग आंखें फाड़-फाड़कर देखते आये, पर आग का कहीं नामनिशान नहीं था। वृंदावन

में उन्हें कुछ लड़के घूमते हुए मिल गये। सारी बातें मालूम होने पर प्रोफेसरों का हंसते-हंसते बुरा हाल हो गया। उन्होंने फोन द्वारा प्रिंसिपल को सारी घटना बतायी और चाय-पार्टी में शामिल हो गये।

—प्रकाश शर्मा, बी. एस. ए. कालेज, मथुरा

बी. ए. (प्रारंभिक) की क्लास में छह नयी छात्राओं ने प्रवेश लिया। ये हमेशा प्रोफेसरों को तंग किया करती थीं "सर, आज इस लड़के ने मुझे देखकर सीटी मारी", "सर, आज हमारे डेक्स पर किसी ने कुछ लिख दिया है।" प्रोफेसर साहब लड़कों को समझाते, लेकिन वे लड़कियों को और परेशान करते।

एक बार हिंदी का घंटा चल रहा था। लड़कियां हमेशा सामने बैठती थीं। लड़कों ने सामने की छह कुरसियों में से दो पीछे रख दीं। लड़कियां आयीं और चुपचाप एक-दूसरे से सटकर बैठ गयीं। फिर अचानक सब एकसाथ खड़ी होकर बोलीं, "सर, कुरसियां कम हैं।" प्रोफेसर साहब पहले तो मुसकराये, फिर गंभीर होकर बोले, "भारत की सत्ता आज नारी के हाथ में है, लेकिन मुझे दुःख है कि इस महाविद्यालय की छह नारियां ऐसी हैं जो पीछे से दो कुरसियां तक नहीं ला सकतीं।" इस पर दो लड़कियां उठीं और कुरसियां ले आयीं।

—करीम घोंघी, शारदा बिल्डिंग,
महासमुंद, म. प्र.

कालेज के एक समारोह के अवसर पर बंगला के प्रख्यात उपन्यासकार श्री शंकर को आमंत्रित किया गया। उनके सम्मानार्थ कुछ बोलने के लिए जब प्राचार्य महोदय से निवेदन किया गया तो वे मंच पर खड़े होकर कहने लगे, "श्री शंकर के 'चौरंगी' उपन्यास को पढ़ने के बाद मुझे उन्हें देखने की इच्छा हुई। कल जब मुझे पता चला कि वे हमारे कालेज में पधार रहे हैं तो मुझे उत्सुकतावश सारी रात नींद नहीं आयी। मैं उनकी लेखनी के आधार पर उनके व्यक्तित्व की कल्पना करता रहा—एक बूढ़े बुजुर्ग के रूप में। शायद टैगोर की तरह लंबी सफेद दाढ़ी भी हो उनकी! पर मेरा अनुमान गलत निकला। सुबह मैं उनका स्वागत करने स्टेशन पहुंचा।

"मेरी दृष्टि तो एक ऐसे व्यक्ति को खोज रही थी जिसका मेरी कल्पना से सामंजस्य हो। आखिर एक छात्र से पूछा। उसने मुझे अंगरेजी पोशाक में फूलों की मालाओं से सुशोभित एक क्लीन-शेव्ड युवक से जिसकी उम्र ज्यादा-से-ज्यादा पैंतीस वर्ष की होगी, मिलवाकर कहा, 'आप हैं शंकरजी . . .'

"भई, यह तो वही बात हुई जैसे ..." और तुरंत श्रोताओं के बीच से एक आवाज आयी, "खोदा पहाड़ निकली चुहिया!"

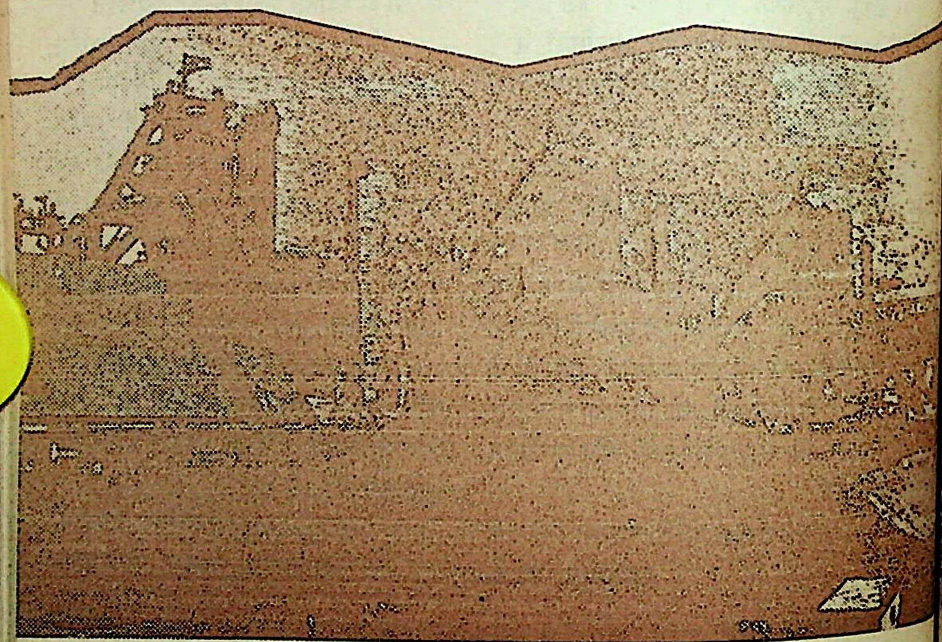
—श्यामसुन्दर आचार्य,
साहिबगंज कालेज, साहिबगंज

खनिजों की सभ्यता

● रोहिणीकांत सिन्हा

मनुष्य-जीवन में आदिमकाल से आज तक खनिज का उससे अटूट संबंध रहा है। कह सकते हैं कि सभ्यता की प्रगति एवं संस्कृति का विकास खनिजों की उपयोगिता पर ही निर्भर रहा है।

बिजली का बटन दबाते ही बल्व के भीतर एक पतला तार चमकने लगता है और प्रकाश जगमगा उठता है। यह पतला तार टंग्स्टन तथा मालिबडिनम धातुओं का बना होता है। दूसरा उदाहरण लीजिए हीरे का। अगर हीरा नहीं होता तो यह आधुनिक जीवन असाध्य होता। हीरा एक बहुमूल्य खनिज है। हमें अभी तक जितने पदार्थों का ज्ञान है, उनमें हीरा सबसे कड़ी वस्तु है। हीरा कड़े-से-कड़े पदार्थों, जैसे इस्पात, को इतनी सरलता से काटता है जैसे मक्खन को छुरी। सूक्ष्म उपकरणों को बनाने में हीरा अपना महत्त्व-पूर्ण स्थान रखता है। सभ्यता के विकास के विभिन्न चरणों में किसी धातु-

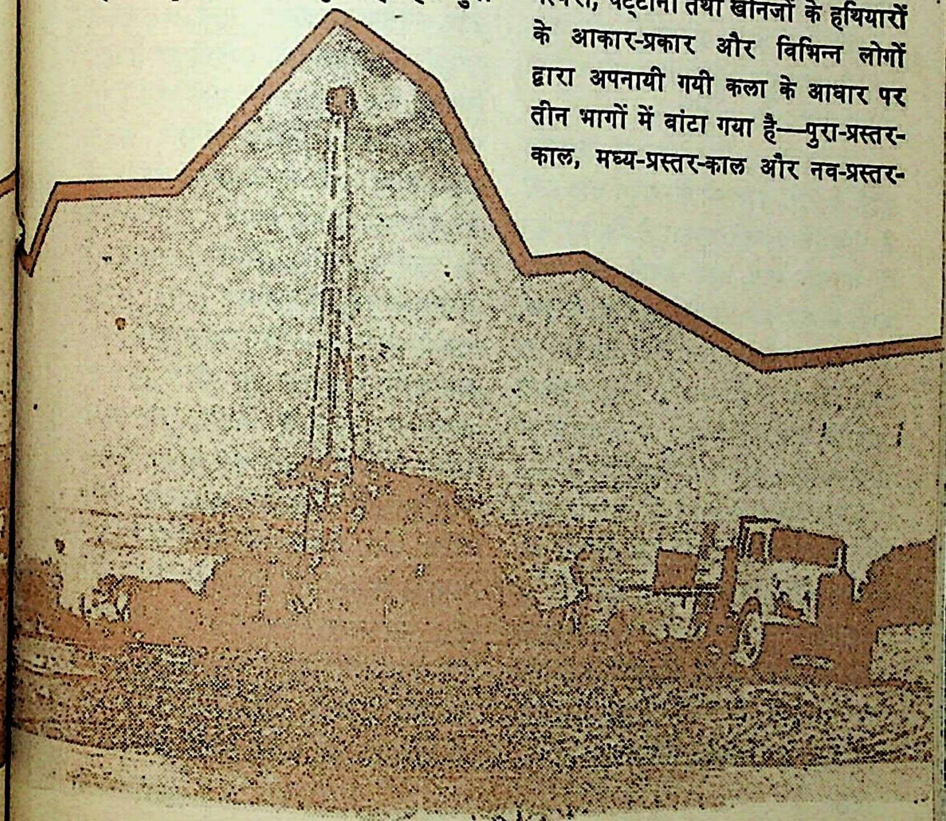


विशेष के महत्त्व से ही उस युग के नाम को संबोधित किया जाता है—जैसे प्रस्तर-युग, ताम्रयुग, कांस्ययुग इत्यादि।

मनुष्य के जन्मकाल में खनिज

भूविज्ञान के अनुसार मनुष्य का जन्म लगभग १० लाख वर्ष पहले हुआ। पुराणों के अनुसार इसे चतुर्थ कल्प मानते हैं। भूवैज्ञानिक इसे अत्यंत नूतन युग से संबोधित करते हैं। मनुष्य की असली रूपरेखा का निर्माण, जो आजकल के युग से मिलती है, ५ या ६ लाख वर्ष पूर्व ही माना जाता है। इस युग को अभिनवयुग कहते हैं। युगों की आयु यूरेनियम-लेड आइसोटोप द्वारा निर्धारित की गयी है।

आदिकाल में मनुष्यों द्वारा उपयोग में लाये गये खनिजों के ब्योरों का कोई लेखाजोखा तो है नहीं। इसके अभाव में मनुष्य के विकास और खनिज की उपयोगिता का अवलोकन पुरावशेषों की खुदाई से ही प्राप्त होता है। हमारे पुरतत्वज्ञों ने करीब ६,००,००० ई. पू. से लेकर ४,००० ई. पू. तक को प्रस्तर-काल की संज्ञा दी है। इस काल को विभिन्न पत्थरों, चट्टानों तथा खनिजों के हथियारों के आकार-प्रकार और विभिन्न लोगों द्वारा अपनायी गयी कला के आधार पर तीन भागों में बांटा गया है—पुरा-प्रस्तर-काल, मध्य-प्रस्तर-काल और नव-प्रस्तर-



काल । पुरावशेषों की खुदाई से ऐसा प्रतीत होता है कि उस काल के मनुष्य ने सामान्य कठोर चट्टानों तथा खनिजों का उपयोग किया ।

प्राचीन भारत में खनिज का उपयोग

प्रस्तरयुग समाप्त होते ही भारत में हड़प्पा पूर्वकाल (४००० ई. पू.—२००० ई. पू.) का निर्माण होता है । इस काल को ताम्रयुग की संज्ञा दी गयी है, क्योंकि भारत के उत्तरी-पश्चिमी सीमांत (अब पाकिस्तान में) के पुरावशेषों में पक्की मिट्टी के अतिरिक्त तांबे की कुल्हाड़ी तथा तांबे का दर्पण भी प्राप्त हुआ है । ताम्रयुग से मिलती-जुलती सभ्यता हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो (२५०० ई. पू. —१२०० ई. पू.) की खुदाई से प्राप्त होती है । इस काल को कांस्ययुग कहा गया है । खुदाई से पता चलता है कि इस युग के मनुष्य मकान, सड़क बनाने और खेती-बाड़ी में कुशल थे । वे नियमित रूप से तांबे और कांसे (तांबा, जस्ता और टीन-मिश्रित धातु) के वर्तन, छुरे, चाकू, चूड़ियां इत्यादि उपयोग में लाते थे । खुदाई में सोने-चांदी के बर्तन तथा आभूषण भी पाये गये हैं । मिट्टी के भी बहुत से वर्तन मिले हैं, जिनसे प्रतीत होता है कि मिट्टी की कला काफी उन्नति पर थी । खुदाई में जो आभूषण प्राप्त हुए हैं, उनमें कई प्रकार के रत्न, जैसे इंद्रगोप, बिल्लौर, सुलेमानी, लाजवर्द और फिरोजा जड़े हुए हैं । लोहे का कोई पदार्थ नहीं मिला ।

मध्यकालीन भारत और खनिज

कांस्ययुग के उपरांत खनिजों के उपयोग तथा खनन और धातुकर्म की विधियों में महानतम विकास बौद्ध तथा आयुर्वेद-काल में पाया जाता है । खनिज से संबंधित उल्लेख हमें कौटिल्य (चाणक्य) के अर्थशास्त्र में प्रचुर मात्रा में मिलता है, जो ३२१ ई. पू. —२९६ ई. पू. के बीच लिखित माना जाता है । अर्थशास्त्र में खनिजों तथा धातुओं के भौतिक तथा रासायनिक गुण, उनके उत्पादन की विधियां, तांबे से पीतल और कांसा बनाने और स्वर्णकारों द्वारा सोने में दूसरी धातुओं को मिलाने के तरीकों का विस्तृत विवरण है । अर्थशास्त्र में रत्नों, जैसे हीरा, लाल, नीलम, पन्ना, दूधिया पत्थर, मूंगा, मोती आदि का सही परीक्षण करने की विधियां लिखी हुई हैं । उसमें कोयले के उपयोग, लोहा गलाने, टकसाल में सिक्का बनाने, चूना-पत्थर से चूना बनाने, खनन करने के तौर-तरीके एवं खान-अधीक्षकों के कर्तव्य भी वर्णित हैं । इस तरह उस काल के निवासी सभ्यता में काफी प्रगतिशील हो चुके थे । तक्षशिला के पुरावशेषों में आभूषण, शृंगार के सामान, घरेलू वर्तन तथा शल्यचिकित्सा के लिए धातुओं के बने हुए विभिन्न औजार मिले हैं । तमिलनाडु में खुदाई से बहुत-से स्थानों पर ढेर-सारी लोहे की तलवारें, भाले, चाकू इत्यादि मिले हैं । इससे स्पष्ट है कि ४०० ई. पू. तक लोगों को लोहा तथा विशेष

इस्पात बनाने और विभिन्न खनिजों का उपयोग करने का ज्ञान हो गया था।

अनुमान है कि करीब २००० साल से पूर्व भी पश्चिमी देश लोहे के लिए भारत पर ही निर्भर रहते थे। १८ वीं सदी के अंत तक संसार का संपूर्ण हीरा मध्यप्रदेश के पन्ना तथा आंध्रप्रदेश के वज्रकरुर क्षेत्रों से आता था। दक्षिण-भारत में सोने की कई खानें हैं जो २०००-२५०० वर्ष से भी पुरानी हैं। मैसूर राज्य की कोलार स्वर्ण-खान पिछले २५०० वर्षों से सोना निकालने का केंद्र रही है।

खनिजों के आधार पर हम वर्तमान युग का निर्माण १९ वीं शताब्दी ही मानते हैं। इसके पहले का इतिहास यवनों के बार-बार आक्रमण तथा उनके द्वारा ग्रंथों का विध्वंस कर देने के उपरांत यह पता लगाना कठिन हो जाता है कि १९ वीं शताब्दी के पहले भारत में खनन की क्या स्थिति थी। वर्तमान युग में खनिज-उत्पादन का वर्णन केवल १८१४ ई. से मिलता है। इस काल से कोयले का उत्पादन रानीगंज (बंगाल) क्षेत्र में नियमित रूप से आरंभ हो गया। ९०० ई. तक करीब नौ खनिजों का विभिन्न भागों में उत्पादन होने लगा था।

आजकल विश्व में करीब ५२ प्रमुख खनिजों का, जिसमें करीब २५ धातु-खनिज शामिल हैं, उत्पादन होता है। इन्हीं खनिजों तथा धातुओं की विभिन्न उपयोगिताओं पर आधुनिक युग की सभ्यता की बुनियाद पड़ी है। १९४६ में हिरोशिमा और नागासाकी पर परमाणु-बम गिरने के पहले कौन जानता था कि यूरेनियम के सूक्ष्म कण में इतनी अधिक शक्ति छिपी हुई है कि इसके विस्फोट से अपार ताप प्राप्त होगा! एक किलोग्राम यूरेनियम करीब ३७०० टन कोयले का ताप दे सकता है। अब यूरेनियम को अनेक शांतिमय तथा उपयोगी साधनों में काम में लाया जा रहा है। जिरमेनियम धातु से द्वितीय युद्ध के बाद ट्रांजिस्टर का निर्माण हुआ। रंगीन टेलीविजन के निर्माण का श्रेय यूरेनियम धातु को है। कोबाल्ट धातु का लोहे में मिश्रण करने से चुंबक बन जाता है। बिना चुंबक के बिजली की मोटर, पंखा, रेडियो इत्यादि बनाना असंभव लगता है। अल्यूमीनियम धातु, जिसका उत्पादन १९३४ ई. में शुरू हुआ था, अब हमारी प्रगति का एक साधन बन गयी है। यह धातु उच्च तनाव विद्युत-केबल से लेकर हवाईजहाज और घर के बर्तन बनाने तक के काम आती है। दूसरी तरफ अभ्रक को ले लीजिए। यह अति उत्तम विद्युत-विसंवाही पदार्थ है। बिजली के प्रत्येक उपकरण में इसका प्रयोग किया जाता है। नये-नये अनुसंधान से नयी-नयी मिश्रित धातु बनायी जा रही हैं, जो बहुत ज्यादा ताप-सहन कर सकती हैं। इन आविष्कारों का ही फल है कि अब हम अंतरिक्ष-यान भेज सकते हैं।

—४३-बी. सिविल लाइंस, नागपुर

• क्षितीशचन्द्र 'कौलिक'

जुलाई मास, सन १९२० का दूसरा सप्ताह! मैं कलकत्ता की एक मेस में रहता था। उन दिनों बमबाज क्रांतिकारी इस मेस को भली भांति पहचानते थे। यह कलकत्ता-पुलिस के लिए भी सुपरिचित हो गयी थी। इस जान-पहचान के मूल में मेस का जो कृतित्व था, वह एक घटना से ही समझा जा सकता है।

कालेज खुल गया है। मेस के कालेजी पंछी लौट आये हैं। घर की गंध अभी शरीर से दूर नहीं हुई है।

ऐसा ही एक दिन। सवेरे से ही



वर्षा हो रही थी। आफिस और कालेज से लौटकर बादलभरी संध्या में खूब अड्डा जमा हुआ था। बड़ा मेस था—विभिन्न कमरों में विभिन्न रुचि के अड्डे जमे थे।

महफिल में बत्ती का स्विच नहीं दबाया गया था। खिड़की के शीशे से रास्ते का जितना प्रकाश उपलब्ध हो रहा था, वही यथेष्ट था।

उस महफिल में उस दिन भूत के समान एक अपरिचित व्यक्ति आकर खड़े हो गये, हमारे दरवाजे के अंधेरे-उजाले में।

नवागंतुक का सारा शरीर भीगा हुआ और कीचड़ से लथपथ था। धोती और आस्तीनों तक मुड़ी कमीज पहने थे, पैर में जूते नहीं थे। वयस बाईस और बत्तीस के बीच सोची जा सकती है।

आगंतुक ने सतर्क दृष्टि से हमारी ओर देखा और कमरे की बत्ती का स्विच दबा दिया। फिर अपनी कमीज के नीचे से चमड़े का भारी केस खोलकर ताक के ऊपर रखा और हमारा एक कपड़ा लेकर भीगे हुए कपड़े उतारते-उतारते बोले, "सदर दरवाजा अच्छी तरह बंद करना जरूरी है, कुत्ता आ सकता है। चौबीस घंटे से पेट में कुछ नहीं गया। गांठ में पैसा नहीं है। जितनी जल्दी हो सके, थोड़ा बहुत खाकर यहां से खिसक जाना होगा। पिछली रात ढाका-मेल की जंजीर खींचकर दमदम के मैदान में उतरा था। सारा दिन एक खेत में पड़ा रहा। सारी वर्षा माथे पर ही बीत गयी।"

दो मजबूत काठ और सांकल के सहारे दरवाजा बंद कर दिया गया। गजानंद महाराज ने दो चूल्हों पर आलू-भात और मसूर की दाल चढ़ा दी, किंतु भात उतारा न जा सका। पुलिस आ धमकी।

पहले सदर दरवाजे का कड़ा हिलाया गया, बाद में धकमपेल आरंभ हुई। दरवाजा खूब मजबूत था, शीघ्र तोड़ने के लिए बुलडोजर की आवश्यकता होती। उस समय कलकत्ता-पुलिस के पास बुलडोजर नहीं था।

महाराज ने बताया कि दस मिनट में भात उतारकर पांच मिनट में खिलाया

ओ रे बाप रे! हम इस प्रकार निगलते तो गले रुंध जाने के कारण हम मर ही जाते, किंतु ये तो वंगमाता के श्यामल वक्ष के दुर्दम्य पुत्र हैं, वह शताब्दियों के सैकड़ों अपमानों के दाहक।

कुछ मिनट बाद बोले, "भाई, अब मैं पानी की कुंडी के ऊपर से दीवार पारकर अंधेरी गली में उतर जाऊंगा। एक फटी,



जा सकता है। इतना तो समय अब नहीं है! एक-एक मिनट मूल्यवान है!

किंतु जिनकी चिंता में हम थे, वे निर्विकार-चित्त हममें से एक के डब्बे से सूखा हुआ चिउड़ा निकालकर मुट्ठी पर मुट्ठी भरकर निगलते जा रहे थे।

पुरानी सूखी कमीज, कुछ अखबार और रेलबाबू की वह टोपी चाहिए। अखबार शरीर पर लपेट कर और माथे पर टोपी पहनकर मोड़ पर खड़े कांस्टेबल को फिर आसानी से चकमा दे दूंगा।"

टिकट-कलेक्टर रमेनबाबू हमारे

कमरे में ही रहते थे। इन भलेमानस ने दो वर्ष से नौकरी करते रहने के बावजूद छाता नहीं खरीदा था। हमारे द्वारा असहयोग की धमकी देने पर दस रुपये की बरसाती खरीदी थी उन्होंने। सो, अपने हाथ से उस बरसाती को फरार भूत के शरीर पर लपेटकर रमेन बाबू ने टोपी माथे पर रख दी। छात्र नरेन पूजा की छुट्टी तक खर्च चलाने के लिए रुपये लाया था। उसमें से पचास रुपये उसने रख दिये। फरार ने केवल दस रुपये लिये।

उड़िया गजानंद महाराज पुरी की रथयात्रा से कुछ प्रसाद लाया था। दोपहर को जब मेस में काम नहीं रहता तब महल्ले-महल्ले में स्त्रियों के बीच प्रसाद-वितरण कर दक्षिणा एकत्र करने का उसका इरादा था। वह अपने इस मूलधन की पोटली को देते हुए रुआंसा होकर बोला, "बाबू, मैं तुम्हें भात न खिला सका, इसका बहुत दुःख है। इस प्रसाद को रोज भक्तिपूर्वक थोड़ा खा लिया करना। प्रभु जगन्नाथ तुम्हारा मंगल करेंगे।"

फरारी ने प्रणाम कर, दोनों हाथ फैलाकर प्रसाद माथे से लगाया। इसके बाद फरारी को उसी अंधेरी गली में उतार दिया गया। सौभाग्य से जोर की हवा चल रही थी। पानी भी बरस रहा था।

निश्चिंत हो सदर दरवाजा खोला गया। भीतर घुसते ही कांस्टेबल और अफसर गरमी दिखाने लगे। ब्रिटिश-

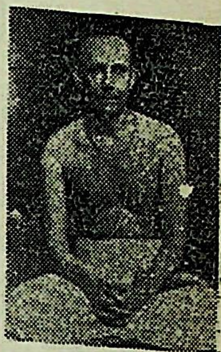
साम्राज्य के स्टील फ्रेम के आठ-आठ नट-बोल्ट हमारे मेस के बंद दरवाजे के बाहर अंततः १५ मिनट चीख-पुकार और धकमपेल करते हुए पानी से बुरी तरह भीगते रहे थे। यह क्या साधारण बात थी !

हममें से एक ने उत्तर दिया, "जिस तरह पानी बरस रहा है और हवा चल रही है, उसमें तो कमरे में बैठे होने पर बाहर भौंकते हुए बुलडॉग की आवाज भी सुनायी नहीं पड़ेगी। आपकी पुकार हम कैसे सुन सकेंगे ?"

आरंभ हो गया पूछताछ का दौर। हमारा एक ही उत्तर था—हमने नहीं देखा, हम नहीं जानते। इसके पश्चात खानातलाशी का दौर चला। भीगे हुए कपड़े पड़े थे। एक ने उन्हें उठाकर पूछा, "ये उसके कपड़े हैं ?" तुरंत ही उत्तर दिया गया, "मैं खेल देखने मैदान में गया था।" पूछनेवाले अफसर ने इस बार उत्तरदाता के अन्य कपड़े मांगकर धोबी के चिह्न मिलाये और कहा, "दोनों के चिह्नों में कोई मेल नहीं है।" उत्तर मिला कि छुट्टी में घर गया था। देश के दाग और कलकत्ता के दाग अलग-अलग तो होंगे ही।

इस उत्तर के मिलने के बाद खूब अच्छी तरह तलाशी ली गयी। एकाएक एक सिपाही चीखकर बोला, "यह रहा ! इस रास्ते से भागा है . . . यहां की काई हटी हुई है !"

चौदह-पंद्रह वर्ष का चाकर निताई बोला, "सत्यबाबू के कपड़े तार पर टंगे थे। सारे दिन वर्षा के कारण उतार नहीं पाया। इधर रात हो गयी। इसलिए अभी बड़ी कठिनाई से दीवार पर चढ़कर कपड़े उतार पाया हूं। काई मेरे पैर से हट गयी है।"



लेखक

पुलिस के चले जाने पर हम सबने निताई को बख्शीश दी थी। रात को खाते समय कृपण रमेनबाबू की बरसाती की बात उठी तो वे बोले, "मेरा काम तो भाई तुम लोगों के छाते से ही खासा चल जाता था। जबरदस्ती तुम्हीं लोगों ने बरसाती खरीदवायी थी। अब तो समझ गये कि तुम लोगों के छातों पर मेरा ईश्वर-प्रदत्त अधिकार है !"

टोपी के लिए भी रमेनबाबू को दो रुपये दंड देकर ऊपरवालों की धमकी सहनी पड़ी थी।

इसके कुछ दिन बाद मेस के दो लोग सरकारी 'अतिथिशाला' चले गये। उन्हें लौटते देखना मेरे भाग्य में नहीं हुआ। दो मास के पश्चात लाल बाजार की राजबाड़ी से मेरा भी बुलावा आ गया था।

—रूपांतरकार : डॉ. रमानाथ त्रिपाठी

विपरीत

बूंदें कहीं भी छोटी नहीं होतीं और
चींटी में हाथी से भी बड़ी जान होती है
तुम और मैं
आज तक इस तथ्य को भूले हुए थे
बूंद को छोड़ समुद्र पर शोध कर रहे थे
इकाई को भूल समुद्र की गहराई नाप रहे थे
विज्ञान के अनुसार भी इकाई प्रथम है
महत्त्वपूर्ण है
गिनती एक से शुरू होनी चाहिए
खासकर जबकि काम किया जा रहा है
उलटी गिनती सिर्फ अपोलो के लिए होती है
क्योंकि वहां सब कुछ तय हो चुका होता है
एक बात यह कि
अपने यहां चल रही उलटी गिनती शुरू करने के लिए
कमप्यूटर का बटन तो टोपी ही दबाती है, पर
टोपी कमप्यूटर नहीं बना सकती
पूजा टोपी की नहीं
कमप्यूटर बनानेवाले हाथों की होनी चाहिए

—बंसीधर गुप्त
(८-ब, रेडियो कालोनी, इंदौर)



प्रवेश

"अधिकतर यथार्थपरक लिखा है। जो कुछ लिखा है सब का सब भोगा नहीं, लेकिन देखा जरूर है। ३१ जुलाई, '५२ को एक रूढ़िग्रस्त हिंदू परिवार में पैदा हुआ। बहुत जल्दी ही दुनिया देखने का मौका मिला। प्रेरणा-स्रोत गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर हैं। सम्प्रति इंदौर मेडिकल कालेज में चतुर्थ वर्ष का छात्र हूं।"

संतरा जो चीन से भारत आया

● मोहम्मद हुसैन

फल प्रकृति के अनोखे उपहार हैं। जब मानव ने चिकित्सा-विज्ञान नहीं सीखा था तब रोगियों को फलाहार के द्वारा ही स्वस्थ कर लिया जाता था। ऐसे स्वास्थ्य-वर्धक फलों में संतरा सबसे प्राचीन फल है।

संतरे का मूल उत्पत्ति-स्थल चीन है। भारत, मलाया और भूमध्यसागर के तटवर्ती देशों में संतरा ईसा-पूर्व पैदा किया जाता था। दूसरी सदी में फिलस्तीन, मिस्र और लेबनान में संतरे की बागवानी शुरू हो चुकी थी। सातवीं सदी में संतरा स्पेन जा पहुंचा। यहीं से कोलंबस संतरे के बीज विभिन्न भूखंडों में ले गया। फ्लोरिडा में १७ वीं सदी में तथा कैलीफोर्निया में १८ वीं सदी में संतरे के उद्यान लग गये। धीरे-धीरे इसका प्रसार दक्षिण-अमरीका, दक्षिण-अफ्रीका और आस्ट्रेलिया में हुआ। आजकल सभी देशों में संतरा पैदा होता है।

वनस्पति-विज्ञान में संतरा 'रूटेसी' कुल का है। इसका लैटिन नाम है साइट्रस ओरेंशियम। इस कुल के अन्य सदस्य हैं नीबू, नारंगी, चकोतरा, कैथा आदि।

संतरे की दो बहारें आती हैं। एक गरमी में, दूसरी जाड़े में। गरमी के संतरे अपेक्षतया अच्छे माने जाते हैं।

भारत में संतरे की खेती सर्वत्र की जाती है। प्रमुख उत्पादक राज्य हैं असम, बंगाल, मध्यप्रदेश, आंध्रप्रदेश और तमिलनाडु और महाराष्ट्र। नागपुरी संतरा स्वाद और मिठास में अपना सानी नहीं रखता।

संतरा मधुर, सुस्वाद, स्वास्थ्यवर्धक एवं पौष्टिक फल है। इसका रासायनिक विश्लेषण इस प्रकार है—जल ८०.८ प्रतिशत, प्रोटीन ०.९ प्र. श., कार्बोहाइड्रेट १०.६ प्र. श., चर्बी ०.३ प्र. श., फासफोरस .०२ प्र. श., कैलशियम .०६ प्र. श., लोहा .०००१ प्र. श.।

इनके अलावा संतरे में विटामिन 'ए', विटामिन 'बी-१', 'बी-२' और विटामिन 'सी' प्रचुर मात्रा में होते हैं। इन विटामिनों की उपस्थिति के कारण संतरा यूरोप में 'गोल्डन एपल' के नाम से मशहूर है।

आहारशास्त्रियों के अनुसार यदि किसी व्यक्ति के शरीर में विटामिन 'सी' की कमी हो जाए तो संतरे का रस बखूबी यह कमी दूर कर सकता है। स्नायु-रोग से पीड़ित लोगों के लिए संतरा वरदान सिद्ध हुआ है। इसके प्रयोग से स्नायु-दौर्बल्य से मुक्ति मिलती है। मसूड़ों के स्कर्वी नामक रोग में संतरा बहुत लाभप्रद है। उदरव्रण तथा पीलिया रोग में संतरा पथ्य एवं आहार का कार्य करता है।

कोणेश्वरम् मंदिर

जहां रावण पूजा करता था

त्रिकोमाली (श्रीलंका) कस्बे की धरती एक दिन कुदालों से खनखनाने लगी। फिर एकाएक कोणेश्वरम् मंदिर उजागर हो उठा।

लगभग नौ लाख वर्ष पूर्व रावण अपनी वृद्धा माता कैकसी के साथ इस मंदिर में शिव-पार्वती की पूजा करता था। एक बार कैकसी मंदिर न जा सकी, तो रावण मंदिर को ही उठाकर ले गया।

द्वापर-युग में जब प्रलयंकर बाढ़ आयी तो मंदिर डूब गया।

१३०० ई. पूर्व चोल राजवंश के सम्राट कुलाकोड्डन द्वारा मंदिर का पुर्नर्निर्माण कराया गया। फिर सत्रहवीं शताब्दी में पुर्तगाली हमलावरों ने कोणेश्वरम् मंदिर को नष्ट कर डाला, फिर भी एक शिलालेख बच रहा।

उसके कुछ अंश का हिंदी-अनुवाद यों है—"१३०० ई. पूर्व कुलाकोड्डन द्वारा निर्मित इस देवालय को लाल आंखों वाले (पुर्तगाली) नष्ट कर देंगे। तत्पश्चात लंका में बिल्ली-जैसी आंखों वाले (डच) आएंगे और उनके बाद धुएं-जैसी आंखों वाले (अंगरेज) लंका पर शासन करेंगे, पर अंत में विजय और शासन पर वाडूगरों (तेलुगु जाति) का ही अधिकार होगा।" लंका का अंतिम सम्राट (विक्रम-राज सिंह) तेलुगु जाति का ही था। ●

वैज्ञानिकों के अनुसार संतरे के नियमित प्रयोग से हृदय और गुर्दों की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।

संतरे में मौजूद विटामिन 'बी-१' तथा 'बी-२' गले, फेफड़ों और त्वचा को स्वस्थ रखते हैं। इसके नियमित सेवन से रोग-प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है।

संतरा शरद और हेमंत ऋतुओं में पेड़ों पर पकता है। आजकल वैज्ञानिक ढंग से इसके संरक्षण के कारण यह हर मौसम में मिल सकता है।

व्यावसायिक दृष्टि से भी संतरा बहुत उपयोगी फल है। इसके रस से स्क्वाश तथा अन्य पेय बनाये जाते हैं। संतरे के फूलों एवं फलों में सुगंध-ग्रंथियां (एरोमेटिक ग्लैंड्स) होती हैं, जिनसे इत्र निकाला जाता है। इसके सूखे छिलके मिठाई तथा दवाई बनाने में प्रयुक्त होते हैं। इसके बीजों से मारगेरिन तेल तथा खाद्य-तेल निकालते हैं। संतरे से नकली रेशम तथा रेयान रंगने के लिए 'टेक्सटाइल फिक्सेटिव डाई' बनाते हैं। संतरे के छिलकों में 'केरोटिन' रहता है, जिससे यह पशुओं के लिए विटामिन 'ए' का स्रोत बन गया है। छिलके सौंदर्य-प्रसाधन, अचार, मुरब्बे, जम, जेली के निर्माण में भी काम आते हैं। ग्रामों में आज भी जख्मों को सुखाने के लिए सूखे छिलकों का पाउडर इस्तेमाल करते हैं।

—पी. डब्ल्यू. डी. भवन नं. ११, अंजड़ ४५१/५५६, पश्चिमी निमाड़, म. प्र.

भारत का बेजोड़ जलतरंग-वादक उस्ताद यासीन खां

• रामसिंह यादव

देवास ! साहित्य और संगीत की संगम-स्थली, इंदौर-उज्जैन की सीमा से जुड़ा हुआ, आगरा-बंबई रोड पर, विशाल, रमणीक काली माई की पहाड़ी (टेकरी) के नीचे वसा हुआ है। यहां प्रायः निर्धनों के महल्ले मोहसिनपुरा में भारत के प्रसिद्ध जलतरंगवादक ७५ वर्षीय यासीन खां अतिशय सादगी का जीवन विता रहे हैं। आकाशवाणी पर उनका नाम तथा मधुर जलतरंगवादन सुनकर मझे उनसे मिलने की वड़ी इच्छा हुई। अतः मैं देवास गया।

मेरा अनुमान था कि स्वर और संगीत का यह साधक ठाट-बाट का जीवन विताता होगा, लेकिन जब मैं तंग गली वाले उस महल्ले में पहुंचा तो सब कुछ विपरीत ही पाया। एक अति साधारण मकान के पास पहुंचते ही जलतरंग और हारमोनियम की मिली-जुली स्वर-धारा कानों से टकरायी—गुजरी टोड़ी का अलाप . . . कोमल ऋषभ . . . कोमल गांधार . . . सुनकर खो-सा गया। कुछ ही क्षणों में मैं उनके कक्ष में पहुंच गया।

कच्चे, चूने से पुते कमरे में तीन-चार कुरसियां पड़ी थीं। एक तरफ सितार, सारंगी, सरोद, तबले, वायलिन, पखावज और मृदंग रखे हुए थे। पास ही खां साहव चीनी मिट्टी के छोटे-बड़े, पानी से आधे भरे ढाई दर्जन कतारबद्ध प्यालों के बीच बैठे हुए थे। वे जल-तरंग वजाने में लीन थे। उनका वड़ा लड़का कुरवानअली खां संगत कर रहा था।

थोड़ी देर वाद साज रुका। चेहरे पर मुसकान के साथ वे हमारी ओर मुखातिब हुए। खां साहव सफेद कुरता और सफेद पायजामा पहने थे। ऊपर जोधपुरी काला कोट। हाथों में दो पतली-पतली टहनियां-सी थीं। वे जैजैवंती—जैसे पिटे राग को नयी शैली में ढालने की कोशिश कर रहे थे। वंगाल भैरवी और अहिर भैरवी को नया ढंग देना चाह रहे थे। हमें देखकर उनकी गहरी आंखों में चमक आ गयी और गोरा चेहरा खिल उठा।

उन्होंने कहा, "मैं सीधा-सादा मामूली इनसान हूं। राजनीतिक तिकड़मवाजी और जी-हुजूरी से दूर हूं। और इसीलिए . . ." वे कहते-कहते रुक गये।

मेरी ओर चाय का प्याला बढ़ाते हुए खां साहव मुसकराने लगे, "अच्छा जी, आप जो भी पूछेंगे, बता दूंगा।"

"तो आपकी पैदाइश से ही क्यों न बात शुरू की जाए ?"

"मेरी पैदाइश देवास में ही हुई। मेरे वालिद हसनखां फौज में थे। दादा ग्वालियर से यहां आये थे। जब मैं बारह वर्ष का ही था तब वालिद साहब हमेशा के लिए हमसे विदा हो गये। मेरी जिंदगी का आरंभ मोटर-क्लीनर से हुआ था। देवास के महाराजा तुकोजी राव अपने जमाने के बहुत बड़े संगीतकार और कवि थे। वे साहित्यकारों, कलाकारों को प्रश्रय दिया करते थे। उनके दरबार में (१९२० के लगभग) एक बहुत बड़े संगीतज्ञ यासीन खां (मेरे ही नामराशि) थे। उनका गायन सुनने के लिए दूर-दूर के राजा-महाराजा आया करते थे। एक मोटर-क्लीनर और बाद में महाराजा के ड्राइवर के रूप में मेरा भी वहां आना-जाना था।

"एक दिन उस राजगायक की निगाह मुझ पर पड़ी। मैं उनके गीतों को मुग्ध होकर सुन रहा था। उन्होंने कहा, 'कल से तबले की संगत के लिए थोड़ा-सा वक्त दिया करो।' मैं हक्का-बक्का-सा रह गया! लेकिन दूसरे ही दिन से रोज मैं उनके साथ बैठने लगा। यहीं से मेरी संगीत की धारा शुरू हुई। कुछ ही दिनों में तबलावादन के साथ-साथ हारमोनियम व गायन भी सीख लिया। इसे मैं प्रारब्ध और पूर्वजन्म का पुण्य ही मानता हूं।"

"जलतरंग की ओर कैसे रुझान हुआ ?"

"मैं ज्यादा पढ़ा-लिखा तो था नहीं। ड्राइवरी करते-करते भाग्य ने साथ दिया। एक दिन ट्रक-मालिक बन गया। दो-चार नौकर मेरे यहां रहने लगे। संगीत के प्रति मेरा रुझान बढ़ता ही गया। संगीत-मेलनों में भाग लेता ही था। अनायास मेरी मुलाकात—संगीत-सम्राट रज्जब अली खां से हो गयी। तबला, हारमोनियम, सितार, सरोद, प्यानो और विभिन्न राग-रागिनियों के अतिरिक्त जलतरंग-वादन की तालीम मुझे रज्जबअली खां से ही मिली। जलतरंग ही एक ऐसा शुद्ध भारतीय साज था जिसका प्रचलन नहीं था—सिर्फ खां साहब ही बजाते थे। इस वाद्य को अधिक सम्मान नहीं मिला था। बस मैंने जलतरंग को अपना लिया। गायक तो मैं था ही, तीस साल तक खां साहब के साथ रहा और शास्त्रीय गायकी को जलतरंग से संबद्ध करने लगा। रज्जबअली खां न होते तो आज यासीन खां को और जलतरंग को कोई जानता ही नहीं।"

"आप रेडियो कलाकार होने पर गर्व करते हैं ?"

"घर-बार चला गया। ट्रक-मोटरों की मिल्कियत नहीं रही। तीस रुपये महीने की नौकरी करके गुजारा करना पड़ा, लेकिन इससे मुझे दुःख के बजाय सकून ही मिला। मजबूरन रेडियो पर भी आना पड़ा।"

"आपका विवाह कब हुआ ? उससे आपकी संगीत-साधना में अड़चन तो नहीं आयी ?"

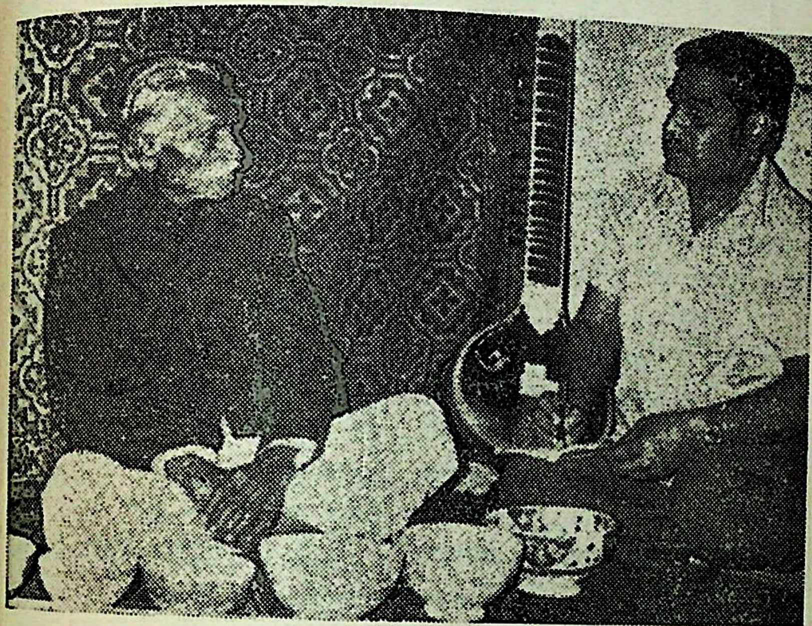
"मेरा विवाह कम उम्र में हो गया

था। मेरी दूसरी पत्नी गनीमतबाई और पुत्र कुरबानअली खां का हमेशा मुझे सहयोग मिला है। पुत्री रहमत का निकाह भी कर दिया है। रोजमर्रा की जिंदगी की भागदौड़ जारी है, फिर भी पांचों वक्त की नमाज पढ़ता हूं और संगीत-साधना के लिए भी समय निकाल लेता हूं।"

जो धर्म होना चाहिए वही मेरा धर्म है—मानवता।"

"आपके जीवन की कोई अविस्मरणीय घटना है?"

"मैं मेकेनिक का काम सिखानेवाले अपने उस्ताद राधाकिशन मिस्त्री के प्रति बहुत आस्था रखता था। कभी-कभी



जलतरंग के साथ चर्चा में तल्लीन उस्ताद यासीन खां और लेखक

धर्म का जिक्र छिड़ने पर वे बोले, "मुसलमान हूं, पर हिंदू धर्म में गहरी आस्था रखता हूं। हिंदू प्रोग्राम, जैसे रामनवमी, कृष्णजन्माष्टमी, गुरुपूर्णिमा आदि में हमेशा भाग लेता रहा हूं। और सच तो यह है कि कलाकार का

उन्हें एकनाथ, तुकाराम और ज्ञानेश्वर के गीत-भजन सुनाया करता। दूसरे कामों के बाद उनके नहाने की धोती धोकर लाता था। इससे मुझे बहुत सुख मिलता था। एक दिन धोती धोकर कुएं से ला रहा था कि सामने से आते मेरे बड़े

भाई तेवर वदलकर वोले, 'राधाकिशन की धोती धोते हो ? शर्म नहीं आती ?' मैंने निर्भीकता से कहा, 'अपनों से वड़ों और वह भी गुणवानों की सेवा करने से कुछ मिलता ही है, जाता कुछ नहीं है।' "

यासीन खां अपने अतीत की गहराइयों में डूब गये थे। उनका ध्यान हटाने के लिए मैंने उनसे संगीत-सम्मेलनों और कार्यक्रमों के बारे में पूछा। वे कुछ देर सोचते रहे, फिर उनकी आंखों में एक अजीव-सी चमक भर गयी। बोले, "इंदौर, भोपाल, वंवई, लखनऊ, दिल्ली, मद्रास और अहमदावाद आकाशवाणी केंद्रों के अतिरिक्त, १९६० के अखिल भारतीय दिल्ली आकाशवाणी संगीत-सम्मेलन, विष्णु दिगंवर पलुस्कर जयंती (१९६०), सप्रू हाउस, दिल्ली तथा अखिल भारतीय संगीत-सम्मेलन, लखनऊ में गया हूं और नामी-गिरामी कलाकारों की मौजूदगी में अपने 'आइटम' सफलता के साथ पेश कर चुका हूं।"

"खां साहव, आपकी इस शानदार सफलता का राज क्या है ?"

"मुकम्मल रियाज और उस मालिक कुदरत का हाथ। उस पर आदमी को भरोसा रखना चाहिए, वस।"

एक अन्य प्रश्न के उत्तर में यासीन खां ने बताया कि वे राग देसी, मधुवंती, मियां की टोड़ी, जैजैवंती, बागेश्री, हंस-ध्वनि, मालकोश, पूरिया, वंगाल भैरवी, गुजरी टोड़ी, चंद्रकौस, अहिर भैरव, शुद्ध सारंग, भीम पलास और पीलू सभी राग जलतरंग में उतार देते हैं। पहले राग का खाका पेश करते हैं, फिर गत। भारतीय शास्त्रीय संगीत को वे जलतरंग के माध्यम से देश-विदेश में पहुंचाने को बेताब हैं। हर राग को वे एक नया अर्थ, नयी शव्दावली देते हैं। हरेक जल से भरे चीनी के प्याले से निकलने वाली अभिव्यक्ति में पूर्णता होती है। जैसे-जैसे वे द्रुत की ओर बढ़ते हैं, हमें सहजता से लयात्मक कोमल और उत्प्रेरक दिव्य संगीत का एहसास होता है।

—१४, उर्दूपुरा, उज्जैन (म. प्र.)

मित्र : क्या आपका लोहेवाला संदूक खुला जिसकी चाबी खो गयी थी, और जिसे खोलने के लिए आप दिनभर परेशान थे ?

झनकू : हां भाई, बड़ी तरकीब से उसे खुलवाया।

मित्र : क्या लुहार बुलाया था ?

झनकू : नहीं जी ! जब सब तरह से हार गया, तब मैंने कह दिया कि इसमें मेरी पूर्व-प्रेमिका के पत्र रखे हैं। सुनते ही न जाने कहां से मेरी पत्नी में इतनी ताकत आ गयी कि एक ही झटके में उसने उसे तोड़ डाला !

इससे तो तभी भली थी---

नये मकान में दो खुले-खुले कमरे और बड़ी-सी जालीदार स्टैंडिंग रसोई! ऐसा लगा कि मेरे सपने साकार होने लगे। किराया अधिक था, अतः साथ वाला कमरा इन्होंने अपने मित्र को दे दिया। मित्र की खाने-पीने की व्यवस्था भी हमारे ही घर की गयी। नाश्ता लेकर इनके मित्र के कमरे में गयी तो उन्होंने सबके साथ बैठकर नाश्ता करने की बात सुझायी। ये मित्र के साथ खाना खाने लगे। बीच-बीच में इनके मित्र मुझसे मजाक भी कर लेते और फिर दोनों साथ दफ्तर चले जाते। मैं तो तंग आ गयी।

शादी हमारी हाल में ही हुई है। पलभर भी एक-दूसरे से दूर होना हममें से किसी को नहीं सुहाता, पर जब से इस मकान में आये हैं सुख सपना हो गया है। पुराना मकान एक कमरे का था, पर कितना सुख था उसमें! खाना खाते वक्त हर पहला कौर ये मेरे मुंह में डाला करते थे। खाना खत्म हो जाता, पर हमारी कभी खत्म न होने वाली बातें चलती रहतीं। और जब कभी ये मेरी बनायी सब्जी की प्रशंसा कर देते, तो लगता मेहनत सफल हो गयी। परंतु इस दो कमरों वाले मकान में . . .

काश, वह पुराना मकान फिर से मिल जाता!

—मंजु जेहन, चंडीगढ़

उनका आश्चर्य

एक महीने जब पति ने बतलाया कि उनका सारा वेतन आयकर के हवाले हो गया है तो मुझे पांव के नीचे से जमीन खिसकती जान पड़ी। हकलाते हुए केवल इतना पूछ सकी, "थोड़े रुपये भी नहीं मिलेंगे।" किंतु तुरंत ही अपने को संयत करते हुए बोल उठी, "न सही वेतन, इस बार दाल-रोटी से ही गुजारा कर लेंगे।"

पति चकित हो उठे। उन्होंने सोचा था कि शायद कुछ कहासुनी होगी। वे मेरी प्रतिक्रिया पर मंत्रमुग्ध-से मुझे निहारते रहे।



मैंने सारी फालतू शॉपिंग स्थगित कर दी तथा बैंक जाकर अपने हिसाब से कुछ रुपये, जो रचनाओं के पारिश्रमिक के बतौर मिले थे, निकलवाकर खर्च चलाया और अपने को आदर्श गृहिणी सिद्ध कर दिया।



मेरी यह सफलता आज भी उनके लिए रहस्य ही है। उन्हें आज भी नहीं पता है कि उनकी पत्नी एक मामूली-सी लेखिका भी है!

—पुष्पा गोयल, राउरकेला



अधूरी साध

कुछ बनने की मेरी साध आज भी वैसी ही अधूरी है जैसी बारह-तेरह वर्ष पहले थी। लेकिन तब अविवाहित होने के कारण 'समय' की मेरे पास कमी न थी। अब बच्चे तो दो ही हैं, लेकिन छोटे हैं। घर के कामों में ऐसे उलझी रहती हूं कि पढ़ने, लिखने को समय ही नहीं बचता। थककर रात को निद्रा की गोद का आश्रय लेना पड़ता है।

जब सर्विस और घर, दोनों के दायित्व निभाने पड़ते थे तो सोचती थी मेरे बश की बात नहीं। अब सर्विस छोड़कर ऐसा लगता है कि सारे संसार से मेरा संबंध छूट गया है।

—ओम वासुदेव, कुल्लू



काश ये व्यापारी न होते!

मेरे पति व्यापारी हैं। आज एक व्यापारी जितना व्यस्त होता है शायद ही कोई और होता हो।

मैं शहर में शिक्षित हुई, पर विवाहोपरांत मुझे गांव में आना पड़ा। लगा कि मेरी जिंदगी शायद घर की चारदीवारी में कैद हो गयी है। बाहर की दुनिया का पता मुझे सहज ही नहीं लगता। पति को घर की खुशी में शरीक होने का समय ही नहीं है। अकसर व्यंग्य कर देती हूं कि हमारा जीवन कैदी के समान है, जिसमें मनोरंजन की कभी आवश्यकता ही नहीं! यह कहते हुए भी मुझे महसूस होता है कि ये काफी मजबूर हैं, चाहते हुए भी कहीं घूमने-फिरने नहीं जा सकते।

सोचती हूं, काश, ये व्यापारी न होते! तब अपना जीवन एक पहेली न होकर जीता-जागता सुनहरा सपना होता!

—माया कोठारी, लक्ष्मनगढ़



ऊपरसे : मंजु जेहन, पुष्पा गोयल, माया कोठारी, ओम वासुदेव



ढहते हुए मानव मूल्यों की कहानी

पराधीनता, प्रायः व्यक्ति को उसके सांस्कृतिक और वास्तविक जीवन के यथार्थ से एक नशीली धार की तरह ही काटती रहती है। यह कटाव या अलगाव जब आत्मघाती सीमा तक पहुंच जाता है, तब देश, जाति, समाज, और उसकी जीवंत रक्त-शिराओं को एक नये और ताजे जीवन की तलाश होती है। विचारों की दुनिया में भी यह प्रक्रिया देर-सवेर, चाहे-अनचाहे एक ऐसी स्थिति पैदा करती है, जो लेखकों, चिंतकों, और मनीषियों की उस अछूती प्रतिमा को कुरेदती है, जो अपनी कृतियों के माध्यम से सदियों से गहराये अंधेरे को नये सूरज और सवेरे का पता देती है। शिवसागर मिश्र का नवीनतम उपन्यास 'अंधेरे का सूरज' ऐसी ही एक सशक्त कृति है। यह एक ही समाज में स्थित कई परिवारों की एक मोहक कथा है। क्या बड़ा, क्या छोटा ? क्या रिश्ता, क्या दायित्व ? क्या धर्म, क्या अधर्म ? क्या नैतिकता, क्या अनैतिकता ? ऐसे अनेक दायरों में समाज के ऊंचे और सामान्य चरित्रों को रचनाकार ने आर-पार देखा है। एक ओर रेखा-जैसी तरुणी—जो अंधेरों को भोगती हुई उजाले से आंखें मिलाती है। एक ओर मनोज—जो भोग और वासना को ही साधना मानता है। दूसरी ओर राजेश्वर और सियाराम—सत्ता और सुविधा की खोखली जिंदगी के प्रतीक। फिर है कर्ण—हर अंधेरे को भस्म करने वाला एक जवान निश्चय।

यह सारे पात्र इस उपन्यास के अपने यानी निजी पात्र हैं। यथार्थ के सांचे में ढले ये पात्र पाठकों को निश्चित ही आंदोलित कर सकेंगे। अगर आज भी लेखक का धर्म समाज और व्यक्ति को दिशा देनेवाला रह गया हो तो अंधेरे का सूरज वर्तमान लेखन के कुहासे में एक अलाव की तरह है, जिसकी ऊष्मा में आज के ठिठुरते और ढहते समाज के अंतस को अनुभव किया जा सकता है।

—रमानाथ अवस्थी

अंधेरे का सूरज
लेखक : शिवसागर मिश्र, प्रकाशक : पीताम्बर बुक डिपो, ८८८, ईस्ट पार्क रोड, करोलबाग, नयी दिल्ली, पृष्ठ : २५९, मूल्य : सात रुपये।

एक अन्य उपन्यास

दूसरा उपन्यास प्रेत एक ऐसे मध्यवर्गीय नायक का 'मोनोलोग' है, जो तरह-तरह की कुंठाओं का शिकार होकर उन अशरीरी प्रेतों से लड़ने के लिए कटिबद्ध है, जिन्होंने उसका सतत पीछा किया है। नायक को अपने पिता की मृत्यु की सूचना मिली है। विडंबना यह है कि वह चाहकर भी नहीं रो पाता। यह विवशता उसे कभी अतीत में खींच ले जाती है और कभी भविष्य में धकेल देती है। मायके से उसी दिन लौट रही पत्नी को यह दुखद सूचना देने के लिए स्वयं को तैयार करता नायक स्मृतियों के सागर में डूबने-उतराने लगता है। जीवन की छोटी-छोटी असंबद्ध घटनाओं को आक्रोश की एक अंतर्धारा में घुलामिलाकर लेखक ने एक सफल कृति की रचना की है, जिसकी तिक्तता पाठक को बेचैन किये बिना नहीं रहती।

प्रेत
लेखक : श्रवणकुमार, प्रकाशक : राजपाल ऐंड संस, कश्मीरी गेट दिल्ली, पृष्ठ : ६९, मूल्य : चार रुपये

तीन निबंध-संग्रह

हिंदी विभाग, उदयपुर विश्वविद्यालय के अध्ययन और अन्वेषण के अंतर्गत प्रकाशित 'साहित्यिक अनुसंधान के प्रतिमान' एक शोधात्मक ग्रंथ है, जिसमें विविध सूफी विद्वानों द्वारा लिखित पंद्रह निबंध संग्रहीत हैं। अनेक निबंधों में अनुसंधान परिषद के सदस्य एवं छात्रों ने आधुनिक साहित्य के विविध पक्षों पर गवेषणात्मक विचार प्रस्तुत किये हैं।

शेष दोनों संग्रहों में व्यक्तिगत निबंध संग्रहीत हैं। पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी लिखित 'अंतिम अध्याय' के नौ संस्मरणात्मक निबंधों में जीवन के अविस्मरणीय क्षणों का लेखा-जोखा है। कुछ निबंधों में बचपन के सरल-सहज प्रसंगों का सम्वेदनात्मक चित्रण है। प्रभाव और महत्व की दृष्टि से निबंध अच्छे हैं।

शब्द की लकीर के निबंधों को शब्द-चित्र भी कहा जा सकता है। बापू, गौतम, ब्रिगेडियर उस्मान, माखनलाल चतुर्वेदी, गालिब आदि पर लेखक का निजी दृष्टिकोण व्यक्त हुआ है। शैली रोचक और प्रवाहमयी है।

—डॉ. शशि शर्मा

साहित्यिक अनुसंधान के प्रतिमान
सम्पादक : डॉ. देवराज उपाध्याय, डॉ. रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' : प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३ दरियागंज, दिल्ली-६, पृष्ठ : १८२, मूल्य : १० रु.
अंतिम अध्याय
लेखक : पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी प्रकाशक : लोक चेतना प्रकाशन, जबलपुर, पृष्ठ : १२४, मूल्य : ५ रु.
शब्द की लकीरें
लेखक : डॉ. चन्द्रप्रकाश वर्मा। प्रकाशक : राजपाल ऐंड संस, कश्मीरी गेट दिल्ली, पृष्ठ : १२०, मूल्य : ५ रु.

तीन उपयोगी पुस्तकें

हिंदी साहित्य के आधुनिक युग का आरंभ उन्नीसवीं शती के उत्तरार्द्ध से माना जाता है। इस युग में भारतेंदु के अतिरिक्त जिन अन्य लेखकों ने हिंदी साहित्य को समृद्ध बनाया, उनमें पंडित बालकृष्ण भट्ट अग्रणी थे। वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार थे — कथा-लेखक, नाटककार, पत्रकार और समालोचक। 'पं. बालकृष्ण भट्ट—व्यक्तित्व और कृतित्व' शीर्षक पुस्तक एक शोध प्रबंध है, जिसमें लेखक ने अपने प्रपितामह के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया है। भारतेंदु युग की प्रामाणिक जानकारी देने वाला यह ग्रंथ हिंदी साहित्य के इतिहास के विद्यार्थियों के लिए उपयोगी होगा।

पं. बालकृष्ण भट्ट, व्यक्तित्व और कृतित्व
लेखक : मधुकर भट्ट, प्रकाशक : बालकृष्ण प्रकाशन वाराणसी, पृष्ठ : ४९६, मूल्य : तीस रुपये।

पिछले वर्षों इस देश में 'हरित-क्रांति' की बड़ी चर्चा रही है। इस हरित क्रांति का श्रेय सरकार की उस नयी कृषि नीति को दिया जाता है, जिसके अंतर्गत समुन्नत बीजों एवं आधुनिक यंत्रों द्वारा विस्तृत खेती की अपेक्षा गहन खेती पर सारा जोर दिया गया। लेखक के अनुसार इस नयी कृषि नीति के ही कारण सन '७२ में व्यापक सूखे की स्थिति के बावजूद सरकार के पास ९० लाख टन अन्न अनाज भंडारों में सुरक्षित था। 'कृषि में क्रांति' पुस्तक में सरकार की नयी कृषि नीति की विस्तृत जानकारी देते हुए उपज-वृद्धि के लिए अनेक उपयोगी सुझाव दिये गये हैं।

कृषि में क्रांति
लेखक : दयाकृष्ण, प्रकाशक : विजय प्रकाशन ई—२०१, न्यू राजेंद्र नगर नयी दिल्ली, पृष्ठ : १६२, मूल्य : दस रु.

स्वर्गीया श्रीमती कृष्णा देवी जैन की स्मृति में प्रकाशित स्मारिका मयराष्ट्र मानस मेरठ जिले के प्राचीन इतिहास एवं आधुनिक काल में उसके उत्तरोत्तर विकास की अच्छी जानकारी देती है। आधुनिक खोजों के आधार पर यह सिद्ध किया गया है कि मयराष्ट्र का उदय लगभग १ करोड़ वर्ष पूर्व हुआ था। यह क्षेत्र यायावर आर्यों का शिविर-स्थल भी रहा। इस ग्रंथ में इन्हीं सब बातों की रोचक जानकारी के साथ-साथ वर्तमान काल के प्रमुख व्यक्तियों का परिचय भी दिया है।

—डॉ. ऋतुशेखर

मयराष्ट्र मानस
सम्पादक : कृष्णचंद्र शर्मा, प्रकाशक : कृष्णादेवी शीतल प्रसाद जैन ट्रस्ट, सरस्वती परिषद, साकू नगर (सईना रोड) मेरठ, पृष्ठ : ३७२, मूल्य : तीस रुपये।

"समझ में नहीं आता कि मुर्गी के नन्हे बच्चे अंडे तोड़कर किस तरह इस दुनिया में आते हैं!"

"इससे भी हैरानी की बात तो यह है कि वे अंडों में घुसते किस तरह हैं!"

भोर को उगायें

आओ, अब गीतों की चूनरी बुनें
कब तक भीगे मन से चीथड़े चुनें ?
हर उलझन सुलझायें
गांठ-गांठ खोलें
तार-तार जीवन का
प्यार में भिगो लें
कब तक यों मौन बने टूटते रहें
जंग लगे स्वप्नों की बात भी सुनें ?
तुमने यों दुबकायी
रूप की किरन
दूर तक अंधेरे में
भर गयी घुटन
कितनी अब सांझ की उदासियां पियें
भोर को उगायें, अंधियार को धुनें
कंधों पर आ बैठे
ढेर-से अभाव
तन-मन का आपस में
दीखता दुराव
आओ, कुछ जीवन को इस तरह रचें
गीत में पगें तो संगीत में गुनें

—महावीर द्विवेदी

खोज

विकल होठों पर
कब किससे मुसकान पली है
थके-थके-से मेरे होंठ
वीतरागी बने
दो शब्द का 'सुख' कहीं नहीं मिलता।

शिकायत

मेरा प्रण है
मैं पाप कर लूं
तुम्हारा धर्म है
तुम पाप हर लो
मैं अपने वादे पर चल रहा हूं
देखो, तुम अपने वादे से टल रहे हो

—आलोक शाही

पहली नवंबर को कार्तिक शुक्ला षष्ठी। इस दिन सूर्यषष्ठी व्रत (छठ का व्रत) है। ३ को गोपाष्टमी। ४ को अक्षय-नवमी, अयोध्या-परिक्रमा, विष्णु-त्रिरात्रि व्रतारंभ। ६ को प्रबोधिनी एकादशी (देवोत्थान एकादशी) व्रत है। ८ को प्रदोष। ९ को वैकुंठ चतुर्दशी। १० को व्रत, स्नान, दान आदि के लिए पूर्णिमा; कार्तिकेय-दर्शन; पुष्कर-स्नान। ११ को मार्ग शीर्ष कृष्णपक्ष प्रारंभ होता है। इस दिन कार्तिक में व्रत करनेवाले पारण करेंगे। १३ को गणेशचतुर्थी व्रत। १६ को सूर्य-संक्रांति। प्रातः ५.४५ पर सूर्य वृश्चिक राशि में प्रवेश करेंगे। १७ को काल भैरवाष्टमी। २० को उत्पन्ना एकादशी व्रत। २२ को प्रदोष। २४ को अमावास्या। २५ को रुद्रोपवास (पीडिया) हैं। २६ को द्वितीया का चंद्र-दर्शन। २८ को गणेश-चतुर्थी। ३० को मार्गशीर्ष शुक्ला पंचमी, श्री राम-विवाह दिन, नागपंचमी, बलदेव-जयंती; इसे हलधर-जयंती भी कहते हैं।

इस मास में निम्नलिखित दिन विवाह के लिए शुभ हैं—ता. १७, १८, १९, २०, २१, २२, २५, २६, २७, २८, २९।

इस मास में जन्मे बालक

जिन बच्चों का जन्म निम्नलिखित तारीखों और समयों में हो, उनकी नक्षत्र-शांति जन्म के २७ वें दिन कराना उचित है —

आपका भवितव्य

• पंडित गोपेशकुमार ओझा

ता. ७ की रात्रि (८ को प्रातः) ३-५१ से ९ की रात्रि (१० को प्रातः) १-२२ तक; १६ को प्रातः १०-५९ से २४ को प्रातः ९-११ तक; २५ को सांय ४-४९ से २७ को रात्रि के १०- ३५ तक

२१ मार्च से २० अप्रैल तक

यद्यपि धनलाभ क लिए समय उत्तम है, तथापि आपके प्रयासों में कोई-न-कोई अड़चन उपस्थित होती रहेगी। जो व्यक्ति आपका प्रत्यक्ष विरोध कर रहे हैं, उनसे २१ के बाद शांति मिलेगी। यात्रा की योजना में २० के बाद परिवर्तन करना पड़ेगा। यदि किसी विशेष संवाद या पत्र की प्रतीक्षा है तो वह भी चतुर्थ सप्ताह में संपन्न होगी। पदोन्नति के लिए अभी ३-४ मास तक समय विशेष अनुकूल नहीं, परंतु सफलता के लक्षण २६ के बाद दृष्टिगोचर होने लगेंगे। शुभ ता. ४, ९, १०, १३ १६, १७, २५, २६।

२१ अप्रैल से २२ मई तक

अधिक व्यय की प्रवृत्ति से निवृत्ति पाने के लिए दिसंबर के तृतीय सप्ताह तक प्रतीक्षा कीजिए। २०-२१ को विशेष सावधानी वरतिए, कोई आकस्मिक हानि न हो जाए। मान, प्रतिष्ठा के लिए यह मास उत्तम है, किंतु विशेष लाभ के लिए तृतीय सप्ताह के वाद ही समय अनुकूल है। तभी संतान-संबंधी कार्य बनेंगे। नव-वयस्कों के विवाह-योग भी वनते हैं। कोई वाचाल व्यक्ति आपकी योजनाओं में विघ्न डालने की चेष्टा करेगा। उसकी उपेक्षा कीजिए। शुभ ता. ४, ७, ६, १२, १६, १८, २८, २६।

२३ मई से २१ जून तक

इस मास में विशेष धनलाभ है। शत्रुओं या प्रतिद्वंद्वियों से भी लाभ संभव है। स्वास्थ्य की ओर विशेष ध्यान दे। यदि आपके उद्योगों में रुकावट हो रही है तो २० तक प्रतीक्षा कीजिए। उसके बाद परिस्थिति अनुकूल हो जाएगी। जमीन, जायदाद संवंधी मामले भी तभी सुलझेंगे। वैवाहिक संवंध स्थिर करने या नवीन समागम के लिए प्रथम सप्ताह उत्तम है। नवीन वृत्ति के प्रत्याशियों को चतुर्थ सप्ताह या अग्रिम मास में कार्य मिलेगा। दिसंबर के तृतीय सप्ताह तक आय-योग विशेष है फिर व्ययाधिक्य होगा, इसलिए द्रव्य-संचय की ओर ध्यान दें। शुभ ता. २, ६, १०, १४, १६, १८, २३, २८।

२२ जून से २२ जुलाई तक

दीर्घकाल से चल रहे अधिक व्यय-योग से निवृत्ति होगी, किंतु शारीरिक श्रम और मानसिक आयास विशेष होगा, विशेषकर उन व्यक्तियों को जिनका जन्म २४ से २७ जून तक है। प्रथम तीन सप्ताह जमीन, जायदाद तथा कौटुंविक कार्यों की ओर विशेष ध्यान देना पड़ेगा। पदोन्नति तथा कार्य-विस्तार के लिए जो उद्योग चल रहे हैं, उनमें २६ तक रुकावट होगी। तत्पश्चात परिस्थिति अनुकूल हो जाएगी और मासांत या अग्रिम मास में फल-प्राप्ति होगी। मानसिक उथल-पुथल चलती रहेगी। आयोजनाएं बनाएंगे और २० के वाद उनमें परिवर्तन करेंगे। आय-योग उत्तम है। शुभ ता. ११; १३, १४, १७, १६, २०, २३, २५, ३०।

२३ जुलाई से २२ अगस्त तक

दीर्घकाल के लिए अधिक व्यय-योग प्रारंभ होने से सावधानी बरतें। प्रथम तीन सप्ताह में यात्रा का योग है। सुदूर यात्रा के लिए प्रयत्नशील व्यक्ति सफल होंगे। अध्ययन और पत्र-व्यवहार विशेष होगा। संतान या किसी नवीन समागम से हर्ष। जमीन, जायदाद या

गृह-संबंधी समस्याओं का समाधान २१ के वाद संभव । ८-९ के करीव इनको हल करने की चेष्टा न करें, अन्यथा असफलता होगी और व्यय भी विशेष होगा । प्रत्याशित विशेष धनागम की प्राप्ति २० के वाद होगी । शुभ ता. ५, १०, १४, १८, १६, २०, २२, २५, ३० ।

२३ अगस्त से २२ सितम्बर तक

इस मास में यात्रा तथा अधिक पत्र-व्यवहार का योग है, किंतु संतोषजनक पत्र-प्राप्ति २० के वाद होगी । योजनाएं वनेंगी और उनमें परिवर्तन होगा । १७ से २२ तक विशेष धन-व्यय योग है, अतः ऐसे कार्य से वचें जिसमें आर्थिक हानि की आशंका हो । गृहकार्यों तथा भोगोपकरणों पर विशेष व्यय होगा । ८, ९ को किसी प्रियजन के व्यवहार से यदि खेद का कारण उपस्थित हो तो उसकी उपेक्षा करें, परिस्थिति स्वयं अनुकूल हो जाएगी । प्रथम सप्ताह में नवीन व्यक्तियों से समागम होगा, जिससे प्रसन्नता होगी। मास के उत्तरार्ध में मांगलिक कार्यों में भाग लेंगे । शुभ ता. २, ६, १०, १४, १६, १८, २३, २८ ।

२३ सितम्बर से २२ अक्तूबर तक

आय के लिए समय उत्तम है, परंतु प्रतिद्वंद्वियों या साझे में कार्य करनेवालों से संघर्ष चलता रहेगा । १६ से २२ तक कलह से वचें । शुभ यात्रा का योग तथा पत्र-प्राप्ति से हर्ष । संतान या विद्या-संबंधी कार्यों से संतोष होगा । गृह-कार्य सुलझेंगे नवीन भोगोपकरणों की प्राप्ति होगी परिवार के किसी वयोवृद्ध के स्वास्थ्य से चिंता हो । सुदूर यात्रा के लिए प्रयत्नशील व्यक्ति २० के वाद सफल होंगे । दांपत्य-क्षेत्र में असौमनस्य या अस्वास्थ्य के कारण कुछ व्यग्रता होगी, जिससे निवृत्ति अग्रिम मास में होगी । शुभ ता. ४, ७, ९, १२, १६, १८, २८, २९ ।

२३ अक्तूबर से २१ नवम्बर तक

इस मास में वल और स्फूर्ति का विशेष संचार । जिस कार्य में भी आप साहसपूर्वक प्रवृत्त होंगे, उसमें सफल होंगे । नवीन वृत्ति के लिए प्रयत्नशील व्यक्तियों को वृत्ति प्राप्त होगी । भूसंपत्ति-कार्य वनेंगे और मांगलिक कार्य से हर्ष होगा । नवीन व्यक्तियों से संपर्क, यातायात, पत्र-व्यवहार, अभिनव कार्यक्रम आदि में समस्त मास व्यस्त रहेंगे । १६ को किसी विशेष संवाद-प्राप्ति या सुखद यात्रा से हर्ष हो । बौद्धिक कार्य के लिए समय विशेष अनुकूल है। शुभ ता. ४, ९, १०, १३, १६, १७, २५, २६ ।

२२ नवम्बर से २२ दिसम्बर तक

प्रथम सप्ताह में आप जिस व्यक्ति के भी संपर्क में आएंगे उसे प्रभावित कर सकेंगे । लेखक वर्ग यदि २६-२७ को नवीन

ग्रंथ-लेखन प्रारंभ करें तो उससे धन और सम्मान की प्राप्ति होगी। व्यापारिक या कार्यालय संबंधी पत्र-व्यवहार २० के बाद करें। तब परिस्थिति विशेष अनुकूल होगी। संतान संबंधी कार्यों की ओर विशेष ध्यान देना पड़ेगा। तत्संबंधी अड़चनों की निवृत्ति २५ के बाद होगी। किसी विशेष कार्य में सामान्य से अधिक व्यय, परंतु आय-योग भी उत्तम है। २१, २२ को जन्मे व्यक्तियों को मासांत में व्यग्रता रहेगी। शुभ ता. २, ६, ७, ११, १६, २०, २२, २५, ३०।

२३ दिसम्बर से २० जनवरी तक

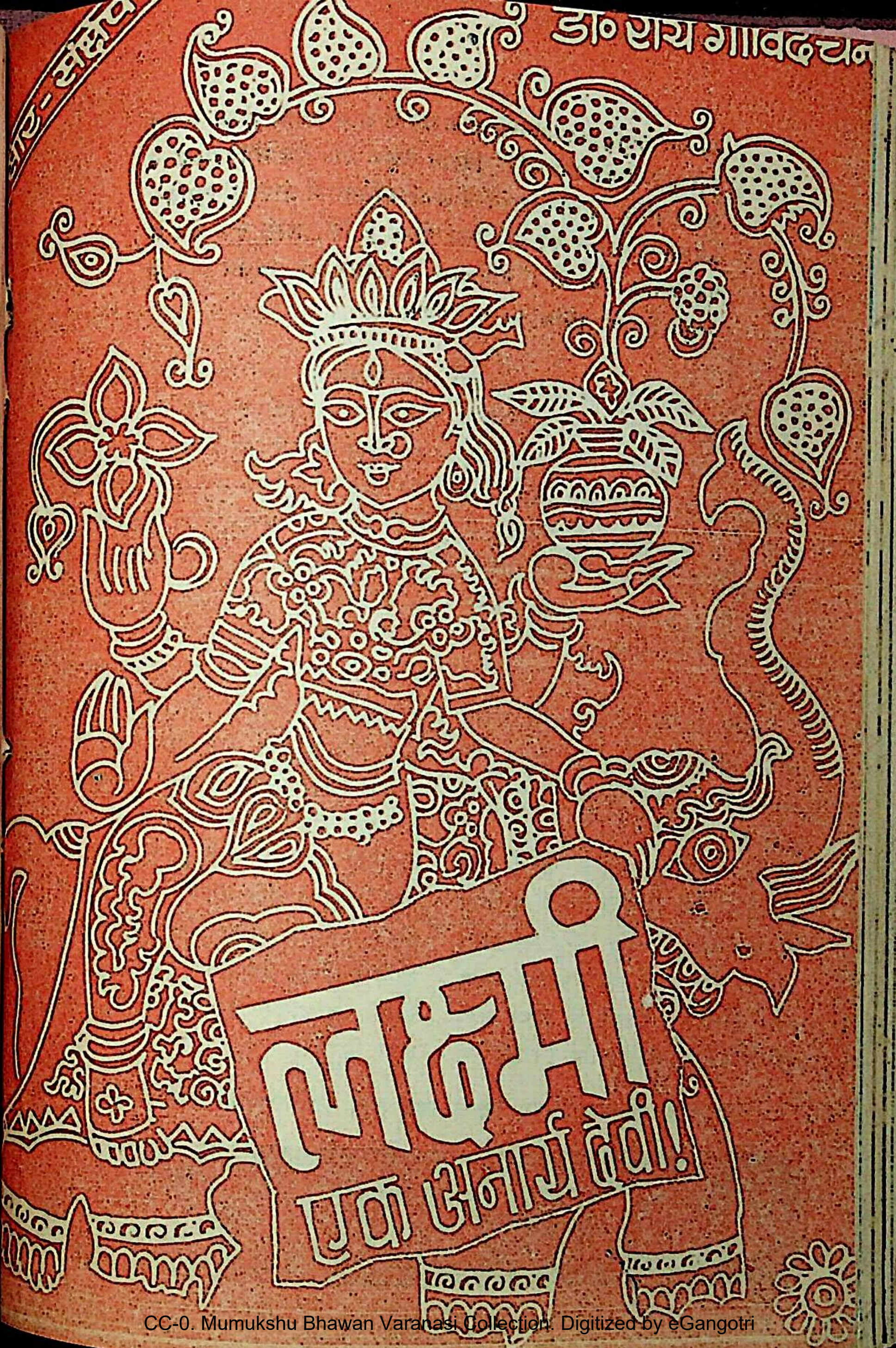
जमीन, जायदाद तथा गृह-संबंधी कार्यों की ओर विशेष ध्यान देना पड़ेगा, प्रारंभिक अड़चनों के बाद सफलता-प्राप्ति होगी। ५ के बाद आप जिन व्यक्तियों के संपर्क में आएंगे उन्हें विशेष प्रभावित कर सकेंगे। २० के बाद व्यययोग विशेष है, किंतु कहीं से विशेष प्राप्ति भी होगी। संतान संबंधी कार्यों से प्रसन्नता हो। विदेश-यात्रा के लिए प्रयत्नशील व्यक्ति तृतीय सप्ताह के बाद कृतकार्य होंगे। शत्रुओं तथा प्रतिद्वंद्वियों का जोर मास के पूर्वार्ध में अधिक। उसके बाद उनका पक्ष निर्बल हो जाएगा। शुभ ता. ५, ६, १०, ११, १३, १७, १६, २२।

२१ जनवरी से १९ फरवरी तक

यह मास प्रत्येक प्रकार की सफलताओं के लिए अनुकूल है, विशेषकर उनके लिए जिनका जन्म २४ से २८ जनवरी तक है। आय-योग भी उत्तम है। पदोन्नति तथा अधिकार-वृद्धि होगी। २० के बाद साझेदारी में कार्य करने वालों को विशेष लाभ। छोटी यात्रा संभावित, किंतु २० से २२ तक यात्रा में सावधानी बरतें। संतान या विद्या संबंधी कार्य मास के उत्तरार्ध में संपादित होंगे। भाइयों या पड़ोसियों से संघर्ष टाल जाएं। मास के उत्तरार्ध में भोगोपकरणों पर विशेष व्यय है। भूसंपत्ति संबंधी मामलों को इसी मास में सुलझा लें। आगे समय उतना अनुकूल नहीं है। शुभ ता. ५, ६, १०, ११, १३, १७, १६ २२।

२० फरवरी से २० मार्च तक

धनागम के लिए मास उत्तम है किंतु २५ के बाद रुके हुए धन की प्राप्ति का विशेष योग। विदेश-यात्रा के लिए प्रयत्नशील व्यक्ति कृतकार्य होंगे। जायदाद के मामलों में झंझट होगी, स्थिति अगले मास में सुधरेगी। साझेदारी के मामलों में गतिरोध। आय-योग उत्तम होते हुए शुभ कार्यों में व्यय भी है। जीर्ण रोगियों को वातव्याधि। तथा उदरविकार की संभावना। यदि किसी विशेष अधिकारी की सहायता अपेक्षित है तो २१ के बाद मिलिए। २० तक आकस्मिक धन-हानि से बचिए। शुभ से २२ ता. २, ६, ७, ११, १६, २०, २२, २५, ३०।


डॉ० राय गोविदचन
लक्ष्मी
एक अनार्य देवी!

श्री एवं समृद्धि की अधिष्ठात्री के रूप में आज सर्वत्र पूजित लक्ष्मी क्या अनार्यों की देवी थीं? विद्वान लेखक डॉ. राय गोविंदचन्द्र ने अपनी पुस्तक 'प्राचीन भारत में लक्ष्मी-प्रतिमा' में प्राप्त ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर यही सिद्ध किया है कि लक्ष्मी मूल रूप में एक अनार्य देवी थीं। दीपावली के अवसर पर विशेष रूप से प्रस्तुत है इसी पुस्तक का सार-संक्षेप!

भारत में प्रत्येक हिंदू के घर में दीवाली के दिन लक्ष्मी की पूजा होती है। कार्तिक अमावास्या की रात्रि दीपकों के आलोक से शरद पूर्णिमा की भांति खिल उठती है। जनसाधारण का विश्वास है कि दीवाली के दिन लक्ष्मी प्रत्येक गृह में पधारती हैं। उनके आगमन की प्रतीक्षा में लोग अपने घर स्वच्छ करते हैं, दीपक जलाते हैं।

आज दीवाली के पूजन हेतु लक्ष्मी की जो मूर्ति वनायी जाती है, उसका रूप विष्णुधर्मोत्तर पुराण में वर्णित रूप से भिन्न है।

डॉ. कुमारस्वामी ने लक्ष्मी की मूर्तियों को तीन भागों में विभाजित किया है—पद्मस्थिता, पद्मगुहा और पद्मवासा। गजलक्ष्मी की मूर्ति को उन्होंने अलग स्थान दिया है। लक्ष्मी की प्राप्त सभी मूर्तियों में कमल का प्राधान्य है। यदि हम इस चिह्न के साथ किसी देवी की मूर्ति की खोज मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, चान्हुदाड़ो या रोपड़ में करें तो शायद किसी तथ्य पर पहुंच सकें। अब यह मान लिया गया है कि भारत के प्राचीन नगर मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, अमरी, नाल, कुल्ली, चान्हुदाड़ो से पश्चिम की ग्यान, किश, उर इत्यादि नगरियों से वाणिज्य-संबंध था। अतः उस काल के भारत में एक वणिक समाज का होना अनिवार्य-सा है। इनके अपने कोई धन-प्रदायक देवी-देवता भी होने चाहिए। इस विषय में कुछ निश्चित रूप से कहना कठिन है, क्योंकि अभी तक यहां की लिपि पढ़ी नहीं गयी है, परंतु फिर भी यहां से प्राप्त कुछ मोहरों पर आकृतियां इस अनुमान को पुष्ट करती हैं कि सिंधु घाटी के वणिक वर्ग की कोई देवी ऐसी थी जिसने कालांतर में लक्ष्मी का रूप ग्रहण किया।

सिंधु-घाटी की मोहरों पर लक्ष्मी, गज तथा स्वस्तिक की आकृतियां



वैदिक युग के प्रारंभिक काल में लक्ष्मी की मूर्ति की कोई कल्पना नहीं प्राप्त होती।

वेदों में 'श्री' तथा 'लक्ष्मी' अपूर्व ऐश्वर्य के द्योतक शब्द थे। बाद में ये शब्द एक स्थूल रूपबोधक हो गये तथा जनता द्वारा पूजित एक विशेष देवी से इनका संबंध जोड़ दिया गया।

ऐसा अनुमान है कि ईसा-पूर्व तीसरी शताब्दी के पहले लक्ष्मी का मूर्त रूप निर्धारित हो चुका था, क्योंकि हम इन्हें भरहुत के कठघरों के स्तंभों पर कुछ विकसित रूपों में देखते हैं। उस युग में लक्ष्मी का गज तथा कमल से संबंध स्थापित हो चुका था और इनकी मूर्ति की कल्पना भी पूर्ण हो चुकी थी।

प्राप्त सामग्री के अध्ययन के उपरांत हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि श्री तथा लक्ष्मी का सम्मिश्रण श्रीसूक्त के समय तक हो चुका था तथा इस देवी का मूर्त रूप किसी जनता की देवी से रामायण-काल के पूर्व ही संबंधित हो गया था। उन जनता की देवी के चिह्नों में पद्म, गज, जल इत्यादि थे तथा वे सौंदर्य और धन की अधिष्ठात्री देवी थीं।

आदिवासियों की देवी!

भारत में यक्ष और नाग की पूजा प्राचीन समय से होती चली आयी है। जैसा फरग्यूसन ने लिखा है कि यहां के आदिवासियों का विश्वास था कि इसके पूजन से ही पानी बरसता है तथा अन्न उत्पन्न होता



जैन धर्म-ग्रंथों के अनुसार गजलक्ष्मी

है। ये विचार वैदिक नहीं हैं, जैसा डुलावाले पूस्सां ने लिखा है। इन विचारों के माननेवालों की एक पूर्ण विकसित सभ्यता थी, जैसा सिंधुघाटी की खुदाई से पता चला है। आर्य इन्हें शिश्न (लिंग) के पूजक मानते और इन्हें अपनी आहुताग्नि के पास भी नहीं फटकने देते थे। कालांतर में कदाचित इनके संपर्क में आने पर तथा इनसे वैवाहिक संबंध जुड़ जाने पर इनके देवता भी आर्य धर्म में ले लिये गये, परंतु रहे वे निम्न श्रेणी में। महादेव अथवा कुबेर के साथ बहुत दिनों तक ऐसा ही व्यवहार होता रहा। महाभारत में एक यक्षिणी के मंदिर की चर्चा राजगृह में मिलती है।

संभव है कि इन्हीं यक्षिणियों में एक लक्ष्मी भी हों, जो बाद में एक अलग देवी

बन गयी हों। हमें भरहुत में श्रीमां देवी मिलती हैं। श्री से लक्ष्मी का संबंध हो ही गया था। इस प्रकार यह अनुमान करना कि लक्ष्मी भी किसी यक्षिणी के रूप में आदिवासियों से पूजी जाती थीं, कुछ अनुचित न होगा।

लक्ष्मी: विदेशी आख्यायिकाओं में

दूसरे देशों में भी भारतीय सभ्यता के प्रसार के फलस्वरूप उन देशों में लक्ष्मी का जो स्वरूप और आख्यायिकाएं आज मिलती हैं उनसे पता चलता है कि बाली द्वीप में लोगों का विश्वास है कि हिंदेशिया के राजाओं की लक्ष्मी उनकी रानी के रूप में रहती थी, परंतु लक्ष्मी का जब विष्णु से प्रेम हो गया तो उस प्रेम के फलस्वरूप उनकी मृत्यु हो गयी। उन्हें पृथ्वी में गाड़ने के पश्चात उस स्थान पर कई प्रकार के पौधे जम गये। धान का पौधा उनकी नाभि से उत्पन्न हुआ। इस कारण वह सवसे श्रेष्ठ माना जाता है। सूडान में लक्ष्मी को धान उत्पन्न करनेवाली देवी मानते हैं। वे स्वर्ग से इस पृथ्वी पर प्रतिवर्ष आती हैं। वे देवी हैं तथा विद्याधरों से उनका संबंध है। पानी तथा लक्ष्मी का योग है। इस कारण पृथ्वी पर उनका गंधर्वों तथा यक्षों-जैसा प्रभाव है।

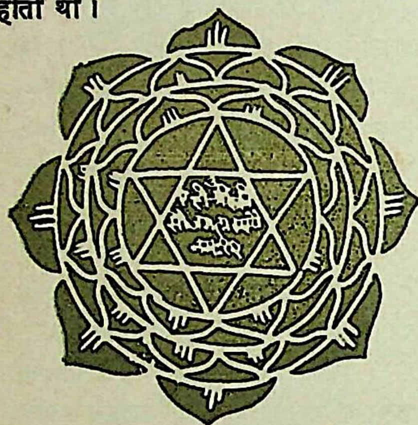
जावा में प्राचीन सुवर्ण आभूषणों पर 'श्री' शब्द खुदा रहता है। इसके आकार को देखकर ऐसा भान होता है जैसे कुंभ अथवा शंख हो। लगता है, वहां के निवासी लक्ष्मी के विषय में और बातें तो भूल गये परंतु सुवर्ण के देवता के रूप में उनका स्मरण करते रहे।

डच गायना में जो भारतमूलक हिंदू हैं, उनके रीति-रिवाज अब भी कुछ-कुछ वैसे ही हैं जैसे हम लोगों के। वे भी दीवाली की रात्रि को दरिद्रा देवी को सूप बजाकर घर से बाहर निकालते हैं। विदेशों में लक्ष्मी का जो स्वरूप गया है, उसके भी देखने से इसी बात की पुष्टि होती है कि पहले कोई यक्षिणी थीं और कदाचित इनका नाम मदिरा देवी था। इनका कौटिल्य के अर्थशास्त्र में हमें आदिस्वरूप में दर्शन होता है। वैदिक युग के अंत में इनका संबंध वैदिक शब्द 'श्री' तथा 'लक्ष्मी' से जोड़ दिया गया तथा इस प्रकार ये पुरुष की और बाद में विष्णु की पत्नी हो गयीं।

रहस्य—समुद्र से उत्पत्ति का

उत्तर-वैदिक काल से इनकी समुद्र से उत्पत्ति की कथा भी जुड़ गयी, जो किसी प्राचीन आदिवासियों की गाथा पर आधारित ज्ञात होती है, क्योंकि प्रमाणित हो चुका है कि प्रागैतिहासिक काल में ओरंगी, लोथल और भागन्नाव बंदरगाह थे। सिंधु-घाटी में व्यापारी समुद्र से धन तथा सुवर्ण लाते थे, इस कारण यह मान लेना स्वाभाविक था कि लक्ष्मी समुद्र से आती थी और समुद्र से ही उसका जन्म हुआ। बृहतकथा श्लोक-संग्रह में हमें सुंदर यक्षिणी की मूर्ति पूजन के हेतु मिलती है। मत्स्य-पुराण में हमें लक्ष्मी की मूर्ति के साथ ही यक्षिणी

की मूर्ति भी प्राप्त होती है। इससे ऐसा अनुमान होता है कि मत्स्य-पुराण के काल तक यक्षिणी की पूजा लक्ष्मी से अलग होने लगी, परंतु इन दोनों की प्राचीन एकता को लोग भूले नहीं। वात्स्यायन के कामसूत्र के समय तक कदाचित यक्षरात्रि में, जो कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा को मनायी जाती थी, यक्षिणी के रूप में लक्ष्मी की पूजा होती थी।



श्री महालक्ष्मी यंत्र

इस प्रकार ये तथ्य हमें इसी धारणा की ओर अग्रसर करते हैं कि लक्ष्मी अनार्यों की देवी थीं, जो कालांतर में हमारे धर्म में आ गयीं और आर्यों को इन्हें अनार्यों के संपर्क से अपनाना पड़ा। कभी इनको वरुण की स्त्री माना, कभी इंद्र की, कभी कुबेर की और अंत में आकर विष्णु की पत्नी। आज ये इसी रूप में पूजित हैं।

सिंधु-घाटी सभ्यता में लक्ष्मी-मूर्ति

आज से प्रायः पांच हजार वर्ष पूर्व के भारतीय नगरों के अवशेष सिंधु-घाटी, गुजरात, पंजाब इत्यादि स्थानों पर प्राप्त होने के कारण अब पश्चिम के इतिहासज्ञ भी यह बात मानने को बाध्य हो गये हैं कि सिंधु-घाटी की मूर्तियां ही भारतवासियों की सबसे प्राचीन मूर्तियां हैं तथा भारतीय मूर्तिकला का जन्म भारत में ही हुआ। भारत ने यूनान से मूर्ति-निर्माण करना नहीं सीखा। यों तो यहां से प्राप्त कांसे की नग्न मूर्तियों को भी लक्ष्मी की प्रतिमा माना जा सकता है, क्योंकि इनके दक्षिण कर में एक पात्र है, जिसे धन-पात्र का अनुमान किया जा सकता है। इनके गले के हार की दो कलियों को कमल की कलियां माना जा सकता है और इन्हीं दोनों वस्तुओं से लक्ष्मी का अटूट संबंध है। मूर्तिकला की दृष्टि से औरों की अपेक्षा इस अनुमान को काटना कठिन है। जैसा पहले लिखा जा चुका है, लक्ष्मी का अभिन्न संबंध पद्म, जल तथा गज से है। गज मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा की मोहरों पर मिलते हैं। प्राचीन समय में गज वरुण का वाहन माना जाता था। इंद्र से गज का संबंध ऐरावत के रूप में बाद में जुड़ा प्रतीत होता है।

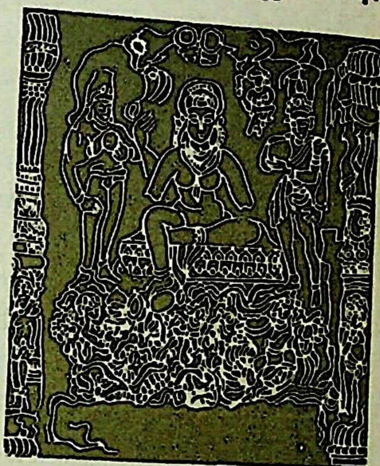
हाथी की आकृति बनी हुई मोहरें हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ो से प्राप्त हुई हैं। इनमें एक हाथी के पुट्ठे पर पद्म तथा दूसरे पर स्वस्तिक चिह्न भी बना हुआ प्रतीत होता है। ये दोनों चिह्न अभी तक लक्ष्मी से संबंधित हैं। इस कारण

गज का लक्ष्मी से कुछ संबंध उस प्राचीन काल में भी होना कुछ असंभव नहीं प्रतीत होता।

स्वस्तिक से गज का संबंध

स्वस्तिक से गज का भी कुछ संबंध प्रतीत होता है, क्योंकि हड़प्पा से प्राप्त एक मोहर पर एक ओर स्वस्तिक का चिह्न है तथा दूसरी ओर हड़प्पा लिपि के कुछ अक्षर हैं। सिंधु-सभ्यता की जो मोहरें मेसोपोटामिया से प्राप्त हुई हैं, उनमें भी हाथी की मोहरें हैं। इस कारण ऐसा अनुमान होता है कि गज चिह्न से व्यापारियों का भी कुछ संबंध था। इस प्रकार तीन तथ्य हमारे समक्ष प्रकाश में आते हैं। एक गज और स्वस्तिक का संबंध, दूसरा गज और व्यापारियों का संबंध, और तीसरा गज और स्वस्तिक से व्यापारियों का संबंध। सिंधु-सभ्यता की कुछ मोहरें ऐसी हैं जिनमें एक देवी के समक्ष एक आदमी (उपासक) हाथ जोड़े बैठा हुआ है। हड़प्पा से प्राप्त एक मोहर भी ऐसी ही है। इस मोहर की देवी अवश्य सिंधु-घाटी की ही कोई देवी प्रतीत होती है।

इसीसे मिलती एक और मोहर मोहन-जोदड़ो से प्राप्त हुई है। इसमें एक देवी की मूर्ति है। यह देवी एक गोल बावली से निकले हुए दो कमल-नालों के बीच में खड़ी है। इन कमल-नालों में कमल की कलियां लगी प्रतीत होती हैं। इन देवी के मस्तक के पीछे चोटी है तथा ऊपर की ओर तीन नोकोंवाले त्रिशूल का मुकुट है। इनके समक्ष एक पुरुष घुटना टेके वीर-आसन में बैठा उपासना कर रहा है। उसके पीछे एक बकरा गले में माला पहने खड़ा है। इस पुरुष के सिर पर भी उसी प्रकार का मुकुट और चोटी है जैसा देवी के सिर पर है। इस मोहर के नीचे के भाग में सात-आठ आदमी खड़े हैं। उनके मस्तक पर भी एक-एक नोक के मुकुट तथा एक-



एलोरा में अंकित गजलक्ष्मी की मूर्ति

एक चोटी है, जो नीचे तक लटक रही है। ये सातों पुरुष लंबा कुरता पहने दिखाये गये हैं। भारत में उपासना का यह दृश्य कला में हमें सर्वप्रथम यहां ही मिलता है। आज लक्ष्मी-पूजन के अवसर पर भी भीत पर जो चित्रकारी की जाती है, उसमें एक राजा और उसके सात लड़के बनाये जाते हैं। इस सात की संख्या का

क्या अभिप्राय है, कहा नहीं जा सकता। सिंधु-घाटी की इस मोहर पर भी सात ही आदमी हैं। बकरे की बलि आज भी कहीं-कहीं दी जाती है। इस कारण यह सोचना अनुचित नहीं है कि यहां भी बकरा बलि-प्रदान के हेतु ही माला पहना-कर खड़ा किया गया है। क्या यह लक्ष्मी की मूर्ति का प्राचीन स्वरूप हो सकता है? इसी प्रकार की एक और भी मोहर यहां से प्राप्त हुई है।

मोहनजोदड़ो की ऊपरी सतह से कुछ ऐसी मृण्मूर्तियां प्राप्त हुई हैं जिनके मस्तक के गहने के साथ एक दिउली कनपटी के पास बनी है। इनमें अब भी काजल की कालख लगी है, जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि ये दिउलियां दीपक की भांति व्यवहार में लायी जाती थीं। आज दीपावली के अवसर पर मृण्मूर्तियां ऐसी बनती हैं जो हाथ में दीपक लिये हुए रहती हैं। इन्हें पढ़े-लिखे लोग दीप-लक्ष्मी और अनपढ़ ग्वालिन कहते हैं। इनके हाथ की दिउली में दीपक जलाया जाता है और इनको लक्ष्मी के समक्ष रखा जाता है। इससे ज्ञात होता है कि इस प्रकार की मूर्तियां देवी-पूजन के हेतु सिंधु-घाटी में भी व्यवहार में लायी जाती थीं।

विद्वानों का मत है कि भारत के आदिवासी जगतमाता को योनि के रूप में तथा पुरुष को लिंग के रूप में और नागों, यक्षों तथा यक्षिणियों को मूर्त रूप में पूजते थे। पूजन के हेतु इन देवी-देवताओं का आर्य-धर्म में प्रवेश और इनकी पूजन-विधि का हिंदू-धर्म में समावेश विजित जातियों की आर्यों पर सांस्कृतिक विजय का सूचक है। बहुत दिनों तक आर्यों ने अपने यज्ञ-कर्म की विधि को विशुद्ध रखने का प्रयत्न किया होगा, लेकिन अंत में इन्हें आदिवासियों के पूजन तथा उनके देवताओं को अपनाना पड़ा। फिर भी आर्यों के यज्ञ में उन आदिवासियों के देवी-देवताओं के मूर्त रूप को स्थान प्राप्त नहीं हुआ। आज भी हम यह कहने लगते हैं कि यह सब हमारे आर्यों के देवी-देवता हैं तथा इनके मंदिरों में अनार्यों का प्रवेश निषेध है। इनका षोडशोपचार-पूजन भी हम वैदिक मंत्रों से करने लगे हैं।

हमारी लक्ष्मीजी कदाचित उपर्युक्त मोहरों पर भारत के आदिवासियों की देवी थीं, जो अब आर्य देवी लक्ष्मी के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित हैं तथा जिनकी स्तुति हम आज ऋग्वेद के श्रीसूक्त से करते हैं। इन देवी का संबंध कमल, स्वस्तिक तथा गज से बहुत प्राचीन था तथा सम्भवतः ये यक्षिणी के रूप में सिंधु-घाटी की सभ्यता में पूजी जाती थीं और बाद में इनका लक्ष्मी का रूप हो गया।

वैदिक युग में लक्ष्मी का स्वरूप

हमें ऋग्वेद में 'लक्ष्मी' तथा 'श्री' शब्द मिलते हैं, परंतु निराकार संज्ञा के रूप में अथवा अमूर्त विशेषण की भांति। अनुमान है कि 'श्री' शब्द का प्राचीन

अर्थ तेज, छटा, कांति था, जो व्यवहार में आने पर उन विभूतियों का भी द्योतक हो गया जिनके द्वारा तेज इत्यादि दृश्य होता है, जैसे 'संपदा' इत्यादि।

'लक्ष्मी' शब्द यहां संज्ञा के रूप में तो अवश्य आया है, परंतु प्रयुक्त सामान्य अर्थ में हुआ है। तब शायद यह शब्द ऐश्वर्य का द्योतक था। ऋग्वेद में हमें धन का कोई विशेष देवता भी नहीं मिलता। धन की याचना उषा, अश्विनीकुमारों, इंद्र तथा अग्नि आदि से की गयी है। ऋग्वेद में हमें देवियां भी प्राप्त होती हैं, परंतु उनमें भी लक्ष्मी का नाम नहीं आता। यजुर्वेद में 'श्री' तथा 'लक्ष्मी' परमपुरुष की सपत्नियों के रूप में प्रकाश में आती हैं। **'श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्'** (३१, २२) इस मंत्र से ऐसा ज्ञात होता है कि इस काल तक 'श्री' का अर्थ ब्रह्मश्री तथा 'लक्ष्मी' का अर्थ राज्यश्री हो चुका था। अथर्ववेद में 'श्री' शब्द भूति, संपत्ति-वृद्धि, ऐश्वर्य के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। अथर्ववेद में 'श्री' तथा 'लक्ष्मी' शब्दों के अर्थ में विशेष भेद दृष्टिगोचर नहीं होता। यहां बकरे से लक्ष्मी का संबंध स्पष्ट रूप से सामने आता है। यहां यह निर्देश प्राप्त होता है कि पंचौदन यज्ञ में जो बकरे की बलि देता है, वह अपने शत्रु की श्री को नष्ट करता है। बकरा मोहनजदड़ो की मोहरों पर एक देवी के समक्ष भी मिलता है। इस मंत्र में जिस जन-विश्वास की ध्वनि प्रस्फुटित होती है, उससे ज्ञात होता है कि लक्ष्मी को धन की प्राप्ति-हेतु पहले बकरे की बलि दी जाती थी।



बायें: गजलक्ष्मी की मृण्मय मूर्ति
दायें: तक्षशिला से प्राप्त लक्ष्मी-मूर्ति

अथर्ववेद में 'लक्ष्मी' शब्द चिह्न के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है तथा कर्णवेध संस्कार के मंत्रों में आता है। यह चिह्न स्वस्तिक का ही रूप हो सकता है, परंतु इस समय 'लक्ष्मी' शब्द किसी देवी का द्योतक था। अथर्ववेद में इस देवी को पापी इत्यादि शब्दों से संबोधित किया गया है तथा लोहा गरम कर उसे दागने के लिए कहा गया है।

अथर्ववेद में ही आगे के मंत्रों में हमें दो प्रकार की लक्ष्मी मिलती हैं—एक अच्छी और एक पापी। कदाचित अच्छी लक्ष्मी

आर्यों की श्री देवी थीं और पापी अनार्यों की। पुराण-काल में इसी का नाम लक्ष्मी और अलक्ष्मी हो गया। अनुमान है कि आदिवासियों की इस देवी को आर्य अपने घर में घुसने से निषेध करते थे, परंतु आगे चलकर उन्हें इस देवी को अपना लेना पड़ा। अथर्ववेद में भी 'श्री' शब्द किसी देवी विशेष का द्योतक ज्ञात नहीं होता। विद्वानों का मत है कि ऋग्वेद के पंचम मंडल के परिशिष्ट रूप में प्राप्त श्रीसूक्त परवर्तीकाल का है। इसमें 'लक्ष्मी' तथा 'श्री' एक-दूसरे के पर्यायवाची मिलते हैं। कदाचित उस समय तक आर्यों ने लक्ष्मी को अपनाना शुरू कर दिया था। यहां हमें 'श्री' अथवा 'लक्ष्मी' एक देवी के रूप में मिलती हैं। उनके रूप का भी वर्णन है। इसी सूक्त में मणिभद्र यक्ष का लक्ष्मी से संबंध ज्ञात होता है, साथ ही श्रीमां देवी से भी। श्रीमां देवी या सिरिमा देवता की मूर्ति भारहुत में मिली है।

अमावास्या को ही लक्ष्मी-पूजन क्यों ?

अथर्ववेद में हमें इस बात का भी संकेत मिलता है कि अमावास्या की तिथि लक्ष्मी-पूजन हेतु क्यों चुनी गयी। अमावास्या के दिन इंद्र इत्यादि देवता एक स्थान पर एकत्रित होते हैं, इस कारण अमावास्या की तिथि धन की देने वाली मानी गयी है। कदाचित इसीलिए लक्ष्मी का पूजन कार्तिक की अमावास्या को होता है।

महानारायण उपनिषद में लक्ष्मी को सूर्य-स्थित पुरुष की विभूति या पत्नी कहा गया है। इस पुरुष को, बाद में, विष्णु मान लिया गया। इस प्रकार कदाचित लक्ष्मी विष्णु की पत्नी बन गयीं। इसी तरह अथर्ववेदीय सीतोपनिषद में सीता को लक्ष्मी माना गया है। यहां वे भगवान के संकल्पानुसार संसार के रक्षा-हेतु विविध रूप धारण करती हैं।

सारांश में भारत में वैदिक युग के पश्चात श्री तथा लक्ष्मी शब्द धन प्रदान करने वाली किसी यक्षिणी (जनदेवी) के साथ जोड़ दिये गये और उनका उस काल का प्रचलित रूप अपना लिया गया।

प्राचीन बौद्ध तथा जैन-साहित्य में

बौद्ध तथा जैन धर्मों ने लोकसंग्रह के स्थान पर जीवन में त्याग को महत्त्व दिया है। इन धर्मों के आचार्यों ने लक्ष्मी की ओर से जनसाधारण का आकर्षण हटाने का यत्न किया, पर लक्ष्मी का पूजन, मानसिक तथा वाचिक, चलता ही रहा। मिलिंदपन्ह में लक्ष्मीपूजकों के पंथ का एक साधारण विवरण मिलता है। लक्ष्मी की ओर से जनसाधारण का मन नहीं हटाया जा सकता तथा ईसा-पूर्व दूसरी शताब्दी के भरहुत के कठघरे के स्तंभों पर एवं सांची के तोरणों पर लक्ष्मी विविध स्वरूपों में विद्यमान हैं।

जातकों को देखने से पता चलता है कि बौद्धों ने जनसाधारण के विश्वास से प्रभावित होकर इन्हें पीछे अपना लिया। फिर भी इनकी भर्त्सना की गयी, क्योंकि वे अपनी कृपा प्रदान करते समय मूर्खों

तथा विद्वानों में भेद नहीं करतीं। प्रायः विद्वानों की अपेक्षा मूर्ख इन्हें अधिक प्रिय होते हैं। जातक की एक कथा के अनुसार एक राजा आसा, सघ्घा, हिरी तथा सिरी के बीच विवाद निवटाते हैं। प्रभातकाल के तारे की भांति सुंदर सिरी कहती हैं कि मैं जिस पर प्रसन्न हो जाऊं, वह सभी सुख प्राप्त कर लेता है। दूसरी देवियां उनकी भर्त्सना करती हैं कि उनकी कृपा से आलसी और कुरूप भी सफलता प्राप्त कर लेते हैं। फलतः सिरी पराजित हो जाती हैं।

पुराणों में लक्ष्मी का स्वरूप

पुराण-काल में मूर्तियों के पूजन का विशेष प्रचार हो गया था तथा यज्ञ, हवन इत्यादि की ओर से लोगों का प्रेम कम हो चला था। यहां हमें लक्ष्मी के स्वरूप का विशद वर्णन एवं उनकी मूर्ति की पूजा का विधान भी मिलता है।

ब्रह्म-पुराण में वर्णित 'लक्ष्मी-तीर्थ' के प्रसंग में लक्ष्मी तथा दरिद्र का कथोपकथन वड़ा सुंदर है। लक्ष्मी का कहना है कि कुल, शील इत्यादि सव होते हुए भी मेरे विना देहधारी मनुष्य जीता हुआ भी मृतक के समान है। दरिद्र का उत्तर है कि हम जहां होते हैं वहां काम, क्रोध, मद, लोभ, मात्सर्य इत्यादि नहीं रहता, न वहां धन का उन्माद होता है, न ईर्ष्या होती है, न उद्धत वृत्ति। लक्ष्मी पुनः कहती हैं कि मेरी कृपा से सारे प्राणी पूज्य हो जाते हैं। इस पर दरिद्र कहता है कि मैं लज्जा से मरता हूं क्योंकि मैं तेरा ज्येष्ठ सुत हूं। तू पुरुषोत्तम को छोड़कर पाप से रमण करती है। अंततः ये दोनों अपना झगड़ा लेकर गौतमी के पास जाते हैं।

विष्णु-पुराण में दक्ष की कन्याओं में लक्ष्मी का नाम मिलता है। उनका विवाह धर्म के साथ हुआ था। शिव-पुराण में जलंधर-युद्ध प्रकरण में एक कथा के अनसार विष्णु लक्ष्मी-सहित जलंधर के यहां निवास करते थे।

श्रीमद्भागवत-पुराण में 'श्री' भगवान विष्णु की सेवा करती हुई वैकुंठ में शुक को दिखायी पड़ती हैं। भविष्य-पुराण में लक्ष्मी के संवंध में विशेष सामग्री प्राप्त नहीं होती। ब्रह्मवैवर्त-पुराण में कई प्रकार की लक्ष्मी का स्वरूप वर्णित है, यथा—स्वर्ग की लक्ष्मी, राज्यलक्ष्मी, गृहलक्ष्मी इत्यादि। इसी पुराण में इनके जन्म की एक और कथा मिलती है।

एक समय दुर्वासा के शाप से इंद्र की 'श्री' नष्ट हो गयी। लक्ष्मी रुष्ट होकर स्वर्ग से चली गयीं। फलतः देवता दुःखित होकर नारायण के पास गये। उनकी आज्ञा से समुद्र-मंथन हुआ और क्षीरसागर से लक्ष्मी की पुनः उत्पत्ति हुई।

एक और कथा के अनुसार एक वार लक्ष्मी ने कुशध्वज की कला के रूप में अवतार लिया। जब वे तपस्या रत थीं तव वहां रावण आया और उसने उनके साथ रमण करना चाहा। इस पर लक्ष्मी ने उसे शाप दिया कि वह सकुटुंव नष्ट हो जाएगा। इसके बाद लक्ष्मी ने

देह छोड़ दी और सीता के रूप में दूसरा जन्म लिया।

लिंग-पुराण में भी समुद्र-मंथन से लक्ष्मी की उत्पत्ति की कथा मिलती है, परंतु अलक्ष्मी की उत्पत्ति होने के वाद। इसी पुराण में लक्ष्मी दान का एक प्रकरण प्राप्त होता है। नारद-पुराण में लक्ष्मी को कमला कहा जाता है तथा उनका कुबेर से भी संबंध दर्शाया गया है। मार्कण्डेय-पुराण में लक्ष्मी को दत्तात्रेय की पत्नी कहा गया है। एक स्थान पर उन्हें पद्मिनी नाम से विद्या की देवी भी कहा गया है। अग्नि-पुराण में 'श्री' को विष्णु-पत्नी माना गया है। वाराह-पुराण में भी लक्ष्मी का उल्लेख है, किंतु २२ खंडों वाले स्कंद-पुराण में उनके संबंध में वहुत थोड़ी सामग्री प्राप्त होती है। वामन-पुराण, कूर्म-पुराण, मत्स्य-पुराण, गरुड़-पुराण, वायु-पुराण, विष्णुधर्मोत्तर-पुराण आदि में भी लक्ष्मी का पर्याप्त उल्लेख मिलता है।

पुराणों में 'लक्ष्मी' तथा 'श्री' में कोई भेद ज्ञात नहीं होता। यहां ये विष्णु-पत्नी, नारायण की पत्नी, परमपुरुष की पत्नी के रूप में प्रायः मिलती हैं। लक्ष्मी का यक्षों से संबंध टूट चुका था। आज उल्लू लक्ष्मी का वाहन माना जाता है तथा विष्णु की पत्नी होने के नाते गरुड़ को भी इनका वाहन माना जाता है, पर ये सब परवर्तीकाल की कल्पनाएं ज्ञात होती हैं।

संस्कृत साहित्य में लक्ष्मी

हमारे संस्कृत-साहित्य में 'लक्ष्मी' तथा 'श्री' शब्द प्रायः पर्यायवाची हैं। लक्ष्मी के स्वरूप की कल्पना एक अति सुंदर स्त्री के रूप में की गयी है। ये धन तथा राज्य की देवी मानी गयी हैं। इनकी मूर्ति की कल्पना विष्णु की मूर्ति के साथ तथा गजलक्ष्मी के रूप में भी मिलती है। वे कमल पर स्थित तथा कमल धारण किये हुए भी मिलती हैं।

ऊपर : मौर्यकालीन लक्ष्मी की मृण्मय मूर्ति
नीचे : आधुनिक लक्ष्मी की मृण्मूर्ति



मुद्राओं और अभिलेखों में लक्ष्मी

ईसा-पूर्व द्वितीय शताब्दी तक जन-साधारण में यह धारणा पूर्ण रूप से घर कर गयी थी कि लक्ष्मी ही सौभाग्य की देवी हैं। इस कारण उनकी पूजा होना स्वाभाविक था। प्रतीत होता है कि इस काल तक उन्हें राजा के ऐश्वर्य का प्रतीक भी माना जाने लगा था। इसी कारण इस काल के आसपास के सिक्कों पर इनकी मूर्ति भी बनने लगी थी।

इस प्रकार के सबसे प्राचीन सिक्के, जिन पर लक्ष्मी की मूर्ति अंकित है, उज्जैन के हैं। इन पर एक ओर सूर्य-अंकित ध्वज लिये एक पुरुष है और दूसरी ओर गज-लक्ष्मी की पद्म पर खड़ी मूर्तियां। तांबे के ढले हुए ये सिक्के प्रायः ईसा-पूर्व प्रथम अथवा द्वितीय शताब्दी के हैं। कौशांबी से प्राप्त एक सिक्के के एक ओर गजलक्ष्मी की खड़ी मूर्ति है। पांचाल राज्य के फाल्गुनी मित्र के तांबे के सिक्कों पर भी लक्ष्मी की मूर्ति है। डॉक्टर कुमारस्वामी ने भारतीय यूनानी नरेशों पंतालिओन तथा अगाथाक्लीज के सिक्कों पर स्त्री की मूर्ति को लक्ष्मी माना है। शक या इंडो-परशियन राजाओं के अनेक सिक्कों पर भी लक्ष्मी की मूर्ति मिलती है। सिंहली राजाओं ने भी सिक्कों पर गजलक्ष्मी की मूर्ति अंकित करवायी थी। चंद्रगुप्त प्रथम के सिक्कों पर सिंह पर सवार लक्ष्मी की मूर्ति है। इसी से मिलती-जुलती मूर्तियां कनिष्क के सिक्कों पर भी हैं।

मुस्लिम शासक के सिक्कों पर लक्ष्मी

लंका के पराक्रम-बाहु (११५३-८६ ई.) से लेकर भुवनैक बाहु (१२९६ ई.) तक के सिक्के चोल राजा राजराज के ढंग के हैं। इन पर भी लक्ष्मी की मूर्ति मिलती है, किंतु बहुत भोंडे रूप में। नेपाल के प्राचीन सिक्कों पर भी लक्ष्मी अंकित हैं। कान्यकुब्ज के जयचंद को परास्त करने के पश्चात मोहम्मद बिन साम ने भारत के मध्यदेश में जो सिक्के चलवाये, उनमें भी चतुर्भुजा लक्ष्मी की मूर्ति अंकित है।

अभिलेखों व तंत्र-ग्रंथों में लक्ष्मी

जहां तक भारतीय अभिलेखों का प्रश्न है, उनमें लक्ष्मी का स्वरूप पुराणों में वर्णित लक्ष्मी-स्वरूप से बहुत भिन्न नहीं है।

भारतीय तंत्र-ग्रंथों में लक्ष्मी का स्वरूप विष्णु की शक्ति के रूप में है। 'तंत्रसार' में भुवनेश्वरी को आदिशक्ति निरूपित करते हुए उन्हें लक्ष्मी-स्वरूपा भी कहा गया है। बौद्ध तंत्र-ग्रंथ—साधनमाला—में हमें लक्ष्मी का स्वरूप नहीं मिलता, पर उसमें वर्णित महासरस्वती का स्वरूप लक्ष्मी के काफी निकट है। इस प्रकार तंत्रों में प्राप्त लक्ष्मी का स्वरूप बहुत प्राचीन नहीं है।

प्राचीन लक्ष्मी की प्रतिमा का विकास

प्राचीन साहित्य से हमें ज्ञात होता है कि श्रीलक्ष्मी धन प्रदान करने वाली देवी थीं। उनका संबंध कमल, जल, गज तथा यक्षों से था। प्राचीन मूर्तियां भी उनके धन-धान्य आदि सर्वप्रदायी देवी

होने का संकेत करती है।

रूपड़ से प्राप्त एक अंगूठी के नगीने पर बनी मूर्ति मौर्यकालीन कही जा सकती है। इस प्रकार की मूर्ति तक्षशिला, पटना इत्यादि से भी मिली हैं। इनसे पता चलता है कि इस देवी की मान्यता दूर-दूर तक थी। भारहुत में राजलक्ष्मी की कई मूर्तियां हैं। सांची के द्वार-स्तंभों एवं तोरणों पर भी लक्ष्मी की विविध मूर्तियां हैं।

पांपीआई में लक्ष्मी की मूर्ति

हाथी-दांत की एक मूर्ति इटली के पांपीआई नगर से भी प्राप्त हुई है। डा. मोतीचंद्र इसे लक्ष्मी की मूर्ति मानते हैं। यह मूर्ति ईसा-पूर्व प्रथम शताव्दी की है।

शुंगकालीन अनेक मृण्मूर्तियां लक्ष्मी की ही ज्ञात होती हैं। अलंकारों से सुशोभित ये मूर्तियां पद्म पर स्थित हैं। मथुरा के चौरासी टीले से प्राप्त हड्डी की मूर्ति को भी डा. मोतीचंद्र ने लक्ष्मी की प्रतिमा वताया है।

यक्षिणी बनाम लक्ष्मी

भारत में विभिन्न स्थलों पर प्राप्त लक्ष्मी की मूर्तियों के अध्ययन से हमें पता चलता है कि पहले उनका रूप यक्षिणी के सदृश वनाया जाता था। इनमें तथा यक्षिणी में कोई भेद न था। इनके तीन स्वरूप प्राप्त होते हैं—पद्महस्ता, पद्मस्थिता तथा पद्मवासिनी। ये स्वरूप हमें भारहुत तथा सांची से प्राप्त होते हैं। मथुरा तथा तक्षशिला में प्राप्त लक्ष्मी की मूर्तियां एक हाथ से स्तन को दवाती अंकित हैं। इस का अर्थ शायद यह है कि ये सर्वप्रदाता माता हैं। इनका यह स्वरूप कदाचित कावुल में वना।

लक्ष्मी-पूजा की परंपरा

यों तो लक्ष्मी की पूजा वहुत दिनों पूर्व से जन-साधारण में होती थी परंतु गुप्तकाल में उनके पूजन का विशेष प्रचार हुआ। यह स्वाभाविक भी था, क्योंकि उस काल की विशेषता थी—साम्राज्य की स्थापना, लोकधर्मों का समन्वय, व्यापार से धनोपार्जन तथा सौंदर्योपासना।

अध्ययन से ज्ञात होता है कि वैदिक निराकार 'श्री' तथा 'लक्ष्मी' को पीछे चलकर साकार रूप दे दिया गया। संभवत: आदिवासियों की माता यक्षिणी को अपनाकर आर्यदेवी लक्ष्मी का रूप दिया गया। वाद में इन्हें विष्णु-पत्नी माना गया तथा मध्ययुग में वैष्णवी का रूप दिया गया। परंतु इनका प्राचीन स्वरूप तथा इनका पद्म, जल आदि से संवंध बना रहा। इनकी उत्पत्ति की कथा कई प्रकार से बन गयी। यह हमारी समन्वय की प्रवृत्ति का परिणाम है। इन्हें बौद्धों तथा जैनों ने भी अपनाया—इन आरोपों के वावजूद कि वे धर्म से पथ-भ्रष्ट करने वाली देवी हैं। बौद्ध विहारों में हारिति के साथ इनकी भी पूजा होती थी। आज तो इनकी पूजा जैनों और हिंदुओं के घरों में धूमधाम से होती है। अव इन्हें अनार्यों की देवी मानने को कोई हिंदू उद्यत नहीं हो सकता, चाहे इतिहास कुछ भी बताये। ●

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

महाशयजी

कथा : सरोजनी प्रीतम
चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

डरिए नहीं, यह कुत्ता बहुत समझदार है! इतना कि ...

आदमी को सूंघकर पहचान लेता है और शरीफ आदमी के पैर चाटने लगता है। क्यों न?

लेकिन आवारा आदमी को देखते ही काटने के लिए दौड़ पड़ता है

तब आप इसे बेच क्यों रहे हैं?

अजी साहब क्या बताएं, अब यह मुझे ही काटने दौड़ता है!



bajaj Deluxe pressure cooker
IS-2347



ISI

जनवरी १९७१

कादम्बिनी

मासिक प्रकाशन



1.25 रुपया

२८ , १९८८
५८

वर्ष ११ : अंक ३
जनवरी, १९७१

कादम्बिनी

मासिक प्रकाशन

संपादक :
रामानन्द 'दोषी'

आकल्पं कविनूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

कविताएँ

कथा-साहित्य

हास्य-व्यंग्य

शिकार

विविध

छायाएँ : मुखपृष्ठ—विद्याव्रत, पृष्ठ ३६—पी. के. छिब्बर, पृष्ठ ६९—जे. एस. पारीख, पृष्ठ ७०—छायाकेंद्र। पृष्ठ ३५ के चित्रकार हैं धीरज चौधरी

शुल्क :
एक वर्ष : १३ रु.   दो वर्ष : २४ रु.   तीन वर्ष : ३५ रु.

हिन्दुस्तान टाइम्स प्रकाशन, नयी दिल्ली-१

दोनों बहनें हैं?
नहीं, माँ और बेटी!

क्रेस्ट परमानेंट हेअर डायने
आप को सोचने पर मजबूर किया

क्रेस्ट बालों का कुदरती रंग वापिस ले आता है और आप फिर से अपनी जवानी की सूरत पा सकते हैं। क्रेस्ट खुद ही इस्तेमाल किया जा सकता है। इसका रंग न तो पानी से घुल जाता है, न ही ब्रुश करने से निकलता है।□ बालों की सफेद लड़ियों पर क्रेस्ट हेयर डाय स्टिक फेरिये। गीले, सूखे या तेल वाले बालों पर बराबर असर करता है। काले और गहरे भूरे, दो लोकप्रिय रंगों में स्टिक और डाय दोनों ही मिलते हैं।



साहिब सिंग का एक बढ़िया उत्पादन

केश-विन्यास के बारे में विशेष सलाह के लिए इस पते पर लिखिए:
क्रेस्ट ऐडवाइजरी सर्विस, पी. ओ. बाक्स ७४०, नयी दिल्ली


AI-1521

एकमात्र माल्ट टॉनिक जिस में विटामिन बी१२ सहित ६ विटामिन हैं

स्वादिष्ट

ऑस्टोमाल्ट

सन्तरे के खालिस रस से भरपूर

ज्यादा शक्ति के लिए
अच्छी भूख के लिए
स्वस्थ रक्त के लिए

ऑस्टोमाल्ट में चमकदार आँखों के लिए विटामिन ए है (इसकी आँखों में क्या शरारत भरी है!)

ऑस्टोमाल्ट में रक्त को साफ़ और स्वस्थ बनाने के लिए लौह है (अब इसके चेहरे पर लाली झलकती है)

ऑस्टोमाल्ट में भूख बढ़ाने के लिए रिबोफ़्लेविन और विटामिन बी १२ है; पाचन शक्ति के लिए विटामिन बी १ है (अब तो यह बड़े मज़े से खाना खाता है)

ऑस्टोमाल्ट में अत्यावश्यक शक्ति के लिए माल्ट है (यह कैसा चुस्त दिखता है! और इसे नींद भी अच्छी आती है)

ऑस्टोमाल्ट में मज़बूत दाँतों और दृढ़ हड्डियों के लिए विटामिन डी है (यह साइकिल लेना चाहता है—क्या तेज़ी से बढ़ रहा है!)

ऑस्टोमाल्ट में स्वाभाविक सुन्दर तेज के लिए निकोटिनामाइड है (यह नए सेलर सूट में कितना प्यारा लगता है!)



ग्लैक्सो का
ऑस्टोमाल्ट
शक्ति-वृद्धि का उत्तम साधन

ग्लैक्सो का उत्पादन

ASP/G/O-2

अब आप अपनी पसंद की पुस्तकें और भी कम मूल्य में प्राप्त कर सकते हैं !

स्टार पब्लिकेशंज़ की "अपने घर में अपनी लायब्रेरी योजना"

के सदस्य बनिये :

आप केवल इतना करें ...

१. नीचे लिखे पते पर सदस्यता-शुल्क का एक रुपया डाक-टिकट अथवा मनीआर्डर से भेज दीजिए। हम आपको हर मास ग्यारह रुपये मूल्य की नई-नई स्टार पॉकेट बुक्स 9) की वी. पी. से भेज देंगे और डाक खर्च के 2) भी अपने ज़िम्मे लेंगे। इस प्रकार 13) के बदले आपको 9) देने पड़ेंगे। स्टार-सीरीज़ में उपन्यास, शेरो-शायरी और अन्य कई विषयों पर लगभग 200 पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं और हर चार मास में बारह नई पुस्तकें प्रस्तुत की जाती हैं। इनके अतिरिक्त अब दूसरी सीरीज़ की पॉकेट-बुक्स भी इस योजना के अंतर्गत भेजी जाती हैं।

२. इस योजना के सदस्य बनकर आप बहुत कम खर्च से अपने घर में बहुत बड़ी लायब्रेरी बनाकर अपना और मित्रों का मनोरंजन करें। सदस्यता-शुल्क का एक रुपया पहली वी. पी. पी. में भी जोड़ा जा सकता है। सदस्य बनने के लिए 11) की पुस्तकों का नाम लिखकर आज ही भेजें।

सुविधाएँ :

- कथा-प्रधान मासिक 'आज-का-अदब' बिना मूल्य!
- डाक व्यय फ्री ! !
- वर्ष के आरंभ में रंगीन कलेंडर या डायरी फ्री ! ! !
- पहली वी. पी. पी. में प्लास्टिक का एक सुन्दर बुक-कवर फ्री ! ! ! !
- चार वी. पी. लगातार मंगाने पर एक अन्य पुस्तक फ्री ! ! ! ! !
- समय-समय पर अन्य कई उपहार ! ! ! ! ! !

पहली वी. पी. पी. के लिए पुस्तकें इन में से चुनें

- प्रायश्चित — राजवंश।
- जलती चट्टान — गुलशन नन्दा
- महफ़िलें शाम — आदिल रशीद
- सांझ और सवेरा — राजवंश
- चिंगारी — गुलशन नंदा
- भाग्य का सम्बल — गुरुवंत
- अभिमान — राजवंश
- प्यार और ममता — राजवंश
- योरुप के २८ दिन — अमरनाथ
- थके पाँव — भगवती चरण वर्मा
- उसके साजन — कुशवाहा कांत
- दीवान-ऐ-गालिब — शब्दार्थ सहित

प्रत्येक का मूल्य २/-

२५० अन्य पुस्तकों की सूची पत्र लिख कर मंगायें

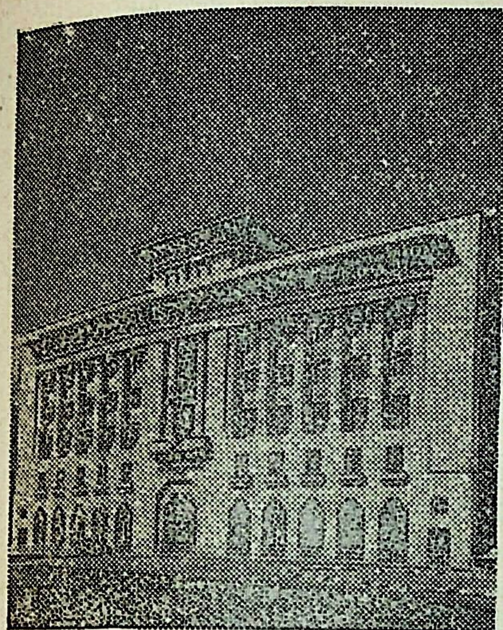
अपने घर में अपनी लायब्रेरी योजना



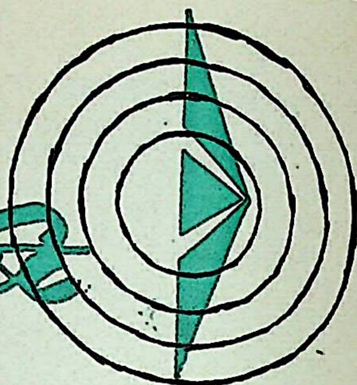
स्टार पब्लिकेशंज़

४/५ बी, आसफ़ अली रोड, नई दिल्ली-१

TRENDS



आप की दृष्टि



१९६७ तक नियमित रूप से 'कादम्बिनी' पढ़ता था, परंतु मुख्य कार्यकारी पार्षद बनने के पश्चात यह क्रम कुछ टूट-सा गया है। अब यदाकदा ही इसे पढ़ पाता हूँ। आज के युग में कामोत्तेजक, नग्न, अर्ध नग्न चित्रों से रहित सुरुचिपूर्ण पठनीय सामग्री से भरपूर पत्रिकाओं का लोकप्रिय होना प्रायः असंभव समझा जाता है। लेकिन 'कादम्बिनी' ने यह असंभव संभव करके दिखा दिया है।

दिसंवर अंक में 'वचन वीथी', 'शब्द सामर्थ्य', 'शाश्वत स्वर' सदैव की भाँति अत्यंत विचारोत्तेजक एवं ज्ञानवर्धक हैं। 'विंदु-विंदु विचार' तो अवश्य पढ़ता हूँ। सदैव ही मुझे ये नवीन अनुभूति-कारक सिद्ध हुए हैं। 'सुंदरकांड सुंदर क्यों?', 'चंद्रगुप्त मौर्य : वंश विचार,' 'प्राचीन भारत में विचार-स्वातंत्र्य', 'जहाँ कला, साहित्य एक हैं,' 'स्थापत्य की दृष्टि से स्तूप', 'दिल्ली : मेरी दिल्ली', 'अनर्थ का शिकार पंच 'म'कार, 'आदमी बतरह आलू', 'पाती परिकथा' आदि लेख खोजपूर्ण होने के साथ-साथ अत्यंत मनोरंजक भी हैं। 'अपने ही वारे में' काका साहब कालेलकर का लेख वैचारिक दृष्टि से अत्यंत महत्त्व का है। 'फिल्मी हीरो का जीव,' 'हँसने का मौसम' हास्य-व्यंग्य के अच्छे उदाहरण हैं। 'महकते जीवन फूल' तथा 'जीवन एक अनबूझ पहेली' मानव मन को श्रेष्ठ कार्यों की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा देने वाली रचनाएँ हैं।

श्री चंडीप्रसाद बछेती का लेख 'पहनो पुराना : पढ़ो नया' वस्तुतः एक विशेष दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। हमारे देश में पुस्तकें पढ़ने की प्रवृत्ति बहुत कम है, उस पर खरीद कर पढ़नेवालों की संख्या तो और भी कम है। यह लेख ऐसे लोगों को एक नयी दिशा प्रदान कर सकता है। 'प्रकृति का पालना : किन्नर प्रदेश' में हिमाचल प्रदेश के जनजीवन का रोचक वर्णन बरवस अपनी ओर आकर्षित करने में सफल हुआ है। इस में वर्णित 'मेघदूत' के प्रसंगों में कविकुल चूड़ामणि 'कालीदास की सहज कल्पना एवं देशकाल ज्ञान

की जितनी भूरि-भूरि सराहना की जाये कम है। इसी तरह 'कनाडा : एक अध्यापक की दृष्टि में' हमें अपने देश की शिक्षा-प्रणाली में अपेक्षित परिवर्तनों की प्रेरणा देता है। इस क्षेत्र में अभी तक कोई नवीन प्रयोग नहीं हो पाये हैं।

संस्कृत साहित्य के श्रेष्ठ महाकाव्य एवं अन्य ग्रंथों का सुंदर अनुवाद प्रत्येक अंक में प्रकाशित किया जाये तो अत्यंत उत्तम होगा। यदि 'कादम्बिनी' रहस्य, खोज, दुस्साहस एवं अति साहस की श्रेष्ठ तथा काल्पनिक कथाएँ प्रकाशित करे तो सस्ती-अश्लील पुस्तकों एवं पत्रिकाओं को किशोर-किशोरियों से छुटकारा मिल सकता है। कुल मिला कर अत्यंत पठनीय सामग्री प्रकाशित करने के लिए मैं 'कादम्बिनी' परिवार को हार्दिक बधाई देता हूँ।

—विजयकुमार मल्होत्रा, मुख्य कार्यकारी पार्षद, दिल्ली प्रशासन, दिल्ली

नवम्बर अंक में श्री भूषण वनमाली का लेख 'द्वारहीन द्वार : शून्य के पार' पढ़ा। दुर्भाग्यवश कुछ स्वार्थी लोगों के प्रयास से भारत की एकता दिन-प्रति-दिन खंडित होती चली जा रही है। पाकिस्तान का निर्माण तो हो ही चुका है, अब लोग प्रादेशिकता की भावनाओं को बल दे कर, बंगाल बंगालियों के लिए, पंजाब पंजाबियों के लिए आदि भावनाओं को प्रोत्साहन दे रहे हैं। सौभाग्यवश उत्तर प्रदेश, दिल्ली आदि कुछ राज्यों के पास क्षेत्रवाद को बढ़ावा देने वाला नारा नहीं

है। फिर भी अपनी संकुचित-प्रवृत्ति तथा धार्मिक तत्त्व भावना से अछूते रहने के कारण कुछ अविवेकी लोग जैन-अजैन संप्रदायों के बीच एक तरह के शीतयुद्ध को जन्म दे रहे हैं।

आप से निवेदन है कि इस तरह की भावनाओं को दबाने में अपने बहुमूल्य समय का सदुपयोग करें।

—कृष्णदास कपूर, ४५/६२ ए
गयाप्रसाद स्ट्रीट, कानपुर

(हमें खेद है कि आप ने जेन को जैन समझ लिया है। वास्तव में जेन मत का जैन धर्म से कोई संबंध नहीं है। जेन मत के अनुयायी जापान में हैं। जेन लोग ध्यान पर विशेष महत्त्व देते हैं। विद्वानों का मत है कि ध्यान से ही झेन यानी जेन शब्द बना है—सं.)

'तेंदुए-विलाव मेरे मित्र' के अंतर्गत रामेश वेदी ने बड़े रोचक संस्मरण प्रस्तुत किये हैं। देवेन मेवाड़ी का लेख भी सुंदर लगा। ऐसी रचनाओं को प्रकाश में लाने का आप का प्रयास स्तुत्य है।

—कैलाश साह, राजेन्द्रनगर,
नयी दिल्ली

भूल-सुधार

दिसम्बर अंक, पृष्ठ १९८ पर 'प्यास बढ़ती ही गई' के लेखक श्री सीताराम जाजू नहीं, श्री रामनिवास जाजू हैं—सं.

वचन-वीथी

● ईश्वर को पिता के रूप में स्वीकार किये बिना मनुष्यों में बंधुत्व संभव नहीं है।

—एच. एम. फील्ड

● प्रमुदित और सहृदय बने रहने का कर्तव्य पूरा नहीं हुआ तो कर्तव्य-पालन का सुख कहाँ से मिलेगा! —चार्ल्स बैक्सटन

● सभ्यता खेत में उगती है।

—द' ताकविल

● दंभी प्रायः संदेहशील होता है। —विलमौट

● जो दूर धुंधलके में छिपा है उस की क्या चिंता, सामने की खुली राह पर पाँव बढ़ाओ।

—कारलाइल

● हे प्रभु ! तू मुझे जंगली पशुओं में आततायी से और पालतू जानवरों में चापलूस से बचा ! —बेन जॉनसन

● क्षमा दूसरों के लिए है, अपने लिए नहीं।

—ऑसोनियस

● मितव्ययिता के बीज से स्वतंत्रता की फसल उगती है— एक सुनहरी फसल।

—आगेसिलॉस

● मैं ने जो दिया वह मेरे पास है, मैं ने जो खर्च किया वह मेरे पास था; किंतु मैं ने जो बटोरा वह गँवा दिया।

—कहावत

● जिस के मन में अपराध की भावना है वह निरंतर यही सोचता है कि लोगों की निगाह मेरे पाप पर है। —शेक्सपीयर

● घृणा हृदय का उन्माद है।

—बायरन

● एक हत्या करने वाला हत्यारा कहलाता है और एक लाख हत्याएँ करने वाला वीर!

—पोरटियस

● इतिहास के निर्माता उस को लिखने का समय नहीं निकाल पाते। —मेटरनिख

● हम बर्फ के बुत खड़े कर लेते हैं और जब वे पिघलते हैं तो हम रोते हैं। —हेडगो



शब्द-सामर्थ्य

बढ़ाइये

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइये और अगले पृष्ठ पर दिये गये उत्तर से मिलाइये

१. **अभ्यर्थना**—क. पुकार, ख. चापलूसी, ग. विनती, घ. आग्रह।

२. **समुदित**—क. प्रसन्न, ख. ऊपर उठा हुआ, ग. उचित, घ. पर्याप्त।

३. **परवर्ती**—क. बाद का, ख. परदेसी, ग. आने वाला, घ. बदलने वाला।

४. **आतप**—क. विषाद, ख. पछतावा, ग. लू, घ. धूप।

५. **बहिरर्थ**—क. बाहरी, ख. दिखावटी, ग. ऊपरी उद्देश्य, घ. फैला हुआ।

६. **तिरोभाव**—क. महँगाई, ख. लोप, ग. मुक्ति, घ. खंडन।

७. **अपलाभ**—क. टोटा, ख. लक्ष्य, ग. मुनाफाखोरी, घ. फिजूलखर्जी।

८. **आसंग**—क. लगाव, ख. बिछोह, ग. निर्मोह, घ. प्रीति।

९. **आशोधन**—क. उत्पत्ति, ख. सुधार, ग. तत्काल प्राप्त धन, घ. सहायता।

१०. **लोपांजन**—क. दिव्य दृष्टि, ख. अंतर्चक्षु, ग. अंजन जिसे लगाने से आदमी दिखायी न दे, घ. विघ्न।

११. **वंशावतंस**—क. वंश-परंपरा, ख. वंश की मर्यादा, ग. विरासत, घ. वंश का आभूषण।

१२. **अमार्ज्य**—क. अपरिवर्तनशील, ख. असमर्थ, ग. जिस का शोधन न हो सके, घ. दुराग्रही।

१३. **प्रोक्ति**—क. कथा, ख. उद्धरण, ग. कहावत, घ. आक्षेप।

१४. **आपन्न**—क. आपसी, ख. विरोधी, ग. निर्धन, घ. आपदग्रस्त।

१५. **भावित**—क. सोचा हुआ, ख. वांछनीय, ग. भावपूर्ण, घ. भविष्य।

१६. **भिनसार**—क. मक्खियों का भिनकना, ख. प्रातः, ग. पशु बाँधने की जगह, घ. सारहीन।

१७. **असंग**—क. गलत, ख. विपरीत, ग. अनासक्त, घ. तर्कहीन।

१८. **क्रोड**—क. करोड़, ख. कंधा, ग. किनारा, घ. गोद।

शब्द-सामर्थ्य के उत्तर

१. अभ्यर्थना — ग. विनती । अभ्यर्थना से किस देश को स्वतंत्रता मिली है !

२. समुदित—ख. ऊपर उठा हुआ, उत्पन्न । क्षितिज से सूर्य समुदित है ।

३. परवर्ती—क. बाद का । अशोक के परवर्ती राजा देश की एकता को अक्षुण्ण न रख सके ।

४. आतप—घ. धूप, गरमी, रोशनी । ग्रीष्म के आतप में जीव व्याकुल हो जाते हैं।

५. बहिरर्थ—ग. ऊपरी उद्देश्य । उस के कथन का बहिरर्थ स्पष्ट है ।

६. तिरोभाव—ख. लोप । आदर्शों का तिरोभाव मन को अस्थिर बना देता है ।

७. अपलाभ—ग. मुनाफाखोरी । व्यापार में अपलाभ अनुचित है ।

८. आसंग—क. लगाव । विषयों से आसंग मनुष्य को अधोगामी बनाता है।

९. आशोधन—ख. सुधार, अदल-बदल (मॉडीफिकेशन) । प्रस्ताव में आशोधन किया गया है ।

१०. लोपांजन—ग. अंजन जिसे लगाने से आदमी दिखायी न दे । 'बहुत दिनों तक दिखायी नहीं दिये, क्या लोपांजन लगाते रहे !'

११. वंशावतंस—घ. वंश का आभूषण अथवा श्रेष्ठ व्यक्ति । भारतेंदु वंशावतंस थे ।

१२. अमार्ज्य—ग. जिस का शोधन न हो सके (इनकॉरिजिबल) । यह एक भ्रांति है कि नयी पीढ़ी अमार्ज्य है।

१३. प्रोक्ति—ख. उद्धरण (कोटेशन) । प्रोक्ति तर्क का स्थान नहीं ले सकती ।

१४. आपन्न—घ. आपद्ग्रस्त । आपन्न व्यक्ति प्रायः संतुलन खो देता है ।

१५. भावित—क. सोचा हुआ । पुरुषार्थ ही भावित को यथार्थ में परिणत करता है ।

१६. भिनसार—ख. प्रातः । 'भा भिनसार किरन रवि फूटी'—जायसी ।

१७. असंग—ग. अनासक्त । सुख-दुख के प्रति असंग भाव भारतीय तत्त्व-ज्ञान का सार है ।

१८. क्रोड—घ. गोद । प्रकृति के क्रोड में असंख्य जीव पलते हैं ।

शाश्वत स्वर

यहूदी धर्मगुरु रबी वूल्फ के घर से चाँदी का एक कीमती बर-तन गायब हो गया था। वूल्फ की पत्नी को नौकरानी पर संदेह था, किंतु नौकरानी अपने को निर्दोष बताती रही। मालकिन ने यह मामला यहूदी धर्म-न्यायालय के सुपुर्द करने का फैसला कर लिया और वह घर से निकल पड़ी। यह देख कर रबी वूल्फ भी धर्माचार्य का चोगा पहन कर चलने को तैयार हो गये। पत्नी यह देख कर बोली, "आप के आने की जरूरत नहीं। धर्म-न्यायालय में क्या और कैसे बोलना चाहिए, यह सब मैं खूब जानती हूँ।"

रबी ने शांतिपूर्वक उसे उत्तर दिया, "प्रिये, तुम तो यह सब खूब जानती हो, लेकिन बेचारी अपढ़ नौकरानी यह सब नहीं जानती। मैं उस के वकील के रूप में न्यायालय जा रहा हूँ। उसे न्याय मिले, यह यदि मैं नहीं देखूंगा, तो कौन देखेगा?"



बिंदु बिंदु विचार

* तात्त्विक भी और लाक्षणिक भी —दोनों दृष्टियों से पंच-भूतों की कल्पना बड़ी सटीक है
* पंचभूतों में से एक है जल। मानव—शरीर एवं प्रकृति — के निर्माण में एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व
* जल को हम देव मानते हैं—एक सीमा तक वंदनीय, अनुकरणीय, हमारा; उस सीमा से परे—अतिकाय, भयकारी, इतर
* आओ, आज हम देव की परिक्रमा करें
* जल को हम जीवन मानते हैं—एक सीमा तक उन्नत, उदार, उपयोगी; उस सीमा से परे—उन्मत्त, उद्दंड, उद्ध्वस्त
* आओ, आज हम जीवन की परिक्रमा करें

* यह जल शांत है—तृषा-तृप्ति के लिए समर्पित, इसे प्रणाम करो
* यह जल उद्वेलित है—विनाश के लिए उद्यत, इसे पराजित करो
* यह जल अवरुद्ध है— इसे प्रवाह दो
* यह जल गतिभ्रष्ट है— इसे दिशा दो
* यह जल श्रम-स्वेद है— इसे आदर दो
* यह जल दुखाश्रु है —इसे पूजो

* जल की परिक्रमा इतनी ही है
* आदमी की परिक्रमा भी इतनी ही है
* परंतु परिक्रमा अलग चीज है, पहचान अलग चीज
* जल की पहचान अभी शेष है
* आदमी की पहचान भी अभी शेष है

* पहचान तो होगी गुण और स्वभाव से

* जल का गण है— जहाँ गढ़ा है, जहाँ कमी है, जहाँ कमजोरी है, वह सब से पहले उसे भरता है, उसे पूरता है, उस में सिमटता है। अपनी ऊँचाई बनाये रखने के लिए, वह निचाई की उपेक्षा नहीं करता। जल का तल सब के लिए समान है। धरा के तल का भेदभाव वह अमान्य करता है—अपनी उपस्थिति की न्यूनता अथवा उस के आधिक्य से। वह अपना आँचल समान फहराता है। तुम अपने आप उठे हुए हो—तुम पर वह कम है। तुम चोट खा कर दबे हुए हो—तुम पर वह अधिक है। जहाँ उस की आवश्यकता अधिक है, वहाँ वह सब से पहले पहुँचता है

* जल का स्वभाव है—किसी किनारे से या बीच से, जहाँ से भी तुम पात्र-भर जल निकालोगे—वहाँ वह रिक्तता रहने नहीं देगा। जब तक तुम उस में से बांटोगे —वह समान बँटेगा। एक अंग अथवा पार्श्व में रिक्तता रह जाये—यह होगा नहीं। कमी होगी तो पूरे विस्तार में होगी, स्थल-विशेष में नहीं —सर्वांगीण होगी, आंगिक नहीं। वह सब ओर से दौड़ कर उसे पूरी कर देगा। तुम चाहो तो जल को सोख सकते हो—उस में गढ़े नहीं डाल सकते—उस के तल को असमान नहीं कर सकते

* हाँ, यह जल है—यही देव है, यही जीवन है और यही इस की पहचान है

* पहचान आदमी की भी यही है

● श्रीप्रकाश

धर्म जिन्ना का

द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति पर अँगरेजों की पहले-जैसी स्थिति नहीं रही जब कि संसार-व्यापी साम्राज्य के वे अधिपति थे। भारत को स्वराज्य देने और उस का संविधान तैयार करने के लिए संविधान-परिषद बैठाने का निश्चय किया गया। परिषद का निर्वाचन प्रदेश की विभिन्न सभाओं द्वारा किया गया और दिसंबर, १९४६ में इस का काम शुरू हुआ। मुस्लिम लीग ने आरंभ में ही परिषद का बहिष्कार कर दिया। उस का कहना था कि मुसलमानों को अलग पाकिस्तान मिलना चाहिए, क्योंकि हिंदू और मुस्लिम दो पृथक 'राष्ट्र' हैं।

सुना है कि किसी उच्च स्तरीय राजकीय समिति में किसी अँगरेज सदस्य ने जिन्ना साहब से पूछा कि यह कैसे संभव है कि एक नगर की एक ही सड़क और गाँवों में दो राष्ट्र बगल-बगल रहें? जिन्ना साहब का उत्तर था कि सड़कों में और गाँवों में दो पृथक-पृथक राष्ट्र रह रहे हैं।

भारत के अँगरेज शासक जिन्ना साहब के समर्थक रहे और उन्हें हर प्रकार से उत्साहित करते रहे। जिन्ना साहब कांग्रेस को हिंदुओं की संस्था मानते थे और मौलाना अबुल कलाम आजाद तथा श्री रफी अहमद किदवई-जैसे मुसलमानों के लिए बहुत अशिष्ट और कटु अपशब्दों का प्रयोग करते थे।

१९४७ के आरंभ में श्री जवाहरलाल नेहरू सीमा प्रांत गये थे। तब उन्हीं स्थानों पर, जहाँ पहले गाँधीजी का तथा कांग्रेस के नेताओं का भव्य स्वागत हुआ करता था, उन पर पत्थर फेंके गये। बड़ी कठिनाई से वे वापस आ सके। खान अब्दुल गफ्फार खाँ ने अपनी आत्म-कथा में इस दुराचरण के लिए वहाँ के तत्कालीन अँगरेज शासकों को जिम्मेदार ठहराया है। संविधान-परिषद संयुक्त भारत के लिए संविधान बना रही थी। जवाहरलालजी को सीमा प्रांत में जो अनुभव हुआ उस से स्पष्ट था कि पाकिस्तान की स्थापना अवश्यंभावी है। उस के बाद हमारे देश का विभाजन हुआ। पश्चिम और पूर्व के कई प्रांतों को पृथक कर और कुछ को काट कर, नये राष्ट्र पाकिस्तान का निर्माण किया गया।

अभिन्न अंग बने

जिन्ना साहब 'मुस्लिम राज्य' और 'इस्लामी राज्य' में अंतर मानते थे। उन के विचार में 'मुस्लिम राज्य' वह था जहाँ मुसलमानों का ही आधिपत्य हो और 'इस्लामी राज्य' वह जहाँ इस्लाम मजहब के आदेशानुसार राज्य किया जाये। पर यह अंतर उन्हीं तक सीमित था। साधारण मुसलमान ही नहीं, पाकिस्तान के प्रधानमंत्री नवाबजादा लियाकत अली खाँ भी दोनों में कोई अंतर नहीं मानते थे और पाकिस्तान को 'इस्लामी राज्य' कहते थे। जिन्ना साहब स्वयं पाकिस्तान को मुस्लिम राज्य कहते थे, जैसा कि कराची में भारत के उच्च आयुक्त की हैसियत से उन से बात करते हुए मुझे मालूम हुआ।

अब हमारी संविधान - परिषद ने विभक्त भारत के लिए ही संविधान बनाना आरंभ किया। जिन्ना साहब भारत को 'हिंदुस्तान' कहते थे। हमें 'भारत' शब्द से बड़ी प्रीति थी। भरत के उत्तराधिकारी होने का हमें गर्व था, पर अँगरेजों ने हमारे देश का नाम 'इंडिया' कर रखा था, जो देश-विदेश में काफी प्रचलित था। हम ने भारत के साथ-साथ इस नाम को भी स्वीकार किया।

हमारी संविधान-परिषद के सामने जटिल समस्याएं थीं। हम अपने को किसी धर्म या समुदाय विशेष के नाम से नहीं पुकारना चाहते थे। हमारी आबादी में भिन्न-भिन्न धर्मों के अनुयायी हैं, जो न जाने कितने संप्रदायों और उपसंप्रदायों में विभाजित हैं। हमारी अभिलाषा थी कि सब को ही देश का समान नागरिक माना जाये और उन के अधिकार और कर्तव्य एक-से हों।

ऐसी अवस्था में हमारे संविधान-निर्माताओं के सामने एक ही मार्ग था कि वे अपने राज्य को 'भौतिक राज्य' (सेक्युलर स्टेट) घोषित करें। इस सिद्धांत को कार्यान्वित करने का परिणाम यह हुआ कि हमें अपने विद्यालयों से धार्मिक शिक्षा का बहिष्कार करना पड़ा। यह समझा गया कि धार्मिक विश्वास और आचरण व्यक्तिगत भावना है। यह मनुष्य और उस के कर्ता के बीच की बात है और इस की शिक्षा देने न देने का भार माता-पिता अर्थात प्रत्येक व्यक्ति के परिवार पर ही छोड़ देना चाहिए।

गीत

घर की देहरी से ले कर श्मशान तक
मंदिर के चरनामृत से मधुपान तक
मैं ने खोजा है
जीवन के चैन को
देवदास से ले कर वेद-पुरान तक

ताजमहल है मूल्य जहाँ पर प्यार का
कोकिल को सुरभित वसंत की चाह है
गोरे तन की काली हैं परछाइयाँ,
हर अंतर में छिपा जहाँ पर दाह है
विकल स्वरों से भँवरों की गुंजान तक
शांत झील से सागर के तूफान तक
मैं ने खोजा है
जीवन के चैन को
आर्द्र नयन से तरुणी की मुसकान तक

उतरा-उतरा रूप चाँद का, तारों का
जैसे सब का टूट चुका विश्वास है
तृषित दृष्टि पहुँची अपनी जिस छोर तक
हुआ वहाँ तक मृगतृष्णा का भास है
हर मरुथल से हरे-भरे उद्यान तक
स्वर्णिम स्वप्नों से टूटे अरमान तक
मैं ने खोजा है
जीवन के चैन को
प्रीत भरे संवादों से अपमान तक

—कन्हैयालाल बाजपेई—
(चौधरी महल्ला, बरेली)

यह स्मरण रखने की बात है कि उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम चरण में जब अँगरेजों का राज्य सुदृढ़ रूप से जम गया और बहुत-से ईसाई शिक्षालय देश में प्रचलित हो गये तब अन्य धर्मावलंबियों के हृदय में यह अभिलाषा उत्पन्न हुई कि हमारे धर्मों की शिक्षा के लिए भी विद्यालय होने चाहिएँ। उस समय जगह-जगह ऐसे शिक्षालय स्थापित किये गये जिन के नाम में हिंदू या मुसलमान शब्द लगा हुआ था। वैदिक तथा सनातन धर्म, जैन और बौद्ध नाम से पाठशालाएँ खुलीं। साथ ही बड़ी संख्या में ईसाई संस्थाएँ काम कर रही थीं। सभी स्थानों में धार्मिक वातावरण बनाये रखने का प्रयत्न किया जाता था।

धर्म या मजहब केवल विश्वासों के समूह नहीं होते, वे नैतिक सदाचार पर भी जोर देते हैं। भिन्न-भिन्न मजहबों में सदाचार के संबंध में कुछ पार्थक्य होते हुए भी सिद्धांततः सभी सत्य, भ्रातृभाव, दानशीलता, दया आदि गणों के अपनाने का उपदेश देते हैं।

धार्मिक संस्थाओं में ये गुण विशेष रूप से सिखलाये जाते हैं और विद्यार्थियों के हृदयों में इन का संचार किया जाता है। धर्म या मजहब को व्यक्तिगत मामला कहा जा सकता है, उस का वह सामाजिक रूप अधिक प्रभावशाली है, क्योंकि उस के द्वारा संगठित समाज के सदस्यों का परस्पर व्यवहार निर्धारित किया जाता

है। सब माता-पिता इस बात की चिंता नहीं करते कि घर के सब प्राणियों को प्रतिदिन एकत्र करके किसी प्रकार की प्रार्थना या धार्मिक कृत्य में उन्हें लगायें। ऐसी अवस्था में सार्वजनिक शिक्षालयों को अपना यह कर्तव्य स्वीकार करना ही होगा कि वे अपने विद्यार्थियों को नैतिक सदाचार की शिक्षा विविध बौद्धिक विषयों के साथ-साथ दें।

बीसवीं शताब्दी के आरंभ में स्वराज्य और 'भौतिकवाद' के आने के पहले हमारे नवयवक और नवयुवतियाँ शिक्षालयों से व्यापक धार्मिक भावनाएँ ले कर निकलती थीं। इन शिक्षालयों के अतिरिक्त देश में बहुत-से धर्मोपदेशकों ने आश्रम, मठ आदि की स्थापना की, जहाँ प्रवचनों द्वारा जन-साधारण को धार्मिक और नैतिक शिक्षा दी जाती थी। जो लोग पाठशालाओं आदि में शिक्षा नहीं पा सकते थे उन के लिए ये बड़े उपयोगी होते थे। ऐसे धर्मात्माओं को सुनने के लिए लोग बड़ी संख्या में उपस्थित होते थे।

'भौतिकवाद' के प्रादुर्भाव से धर्म और नैतिकता की भावना कम होती गयी। महात्मा गाँधी कहते थे कि मैं ईश्वर के अतिरिक्त और किसी से नहीं डरता। एक सार्वजनिक सभा में श्री जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि मैं ईश्वर से भी नहीं डरता। मैं ने उन से कहा कि आप-जैसे उच्च-पदस्थ व्यक्ति को जन-साधारण से ऐसा नहीं कहना चाहिए। आप बिना किसी से भय किये बड़ा शुद्ध आचरण कर सकते हैं, किंतु साधारण स्त्री-पुरुष के लिए आवश्यक है कि वह किसी लौकिक अथवा पारलौकिक शक्ति से भय करे जिस से वह ठीक रास्ते पर चले।

हम रोज ही देखते हैं कि अगर चौराहे पर पुलिसवाला नहीं रहता तो मोटर या गाड़ी वाले नजदीक के मोड़ से निकल जाना चाहते हैं। पुलिस के भय से ही वे ठीक रास्ते पर चलते हैं।

भगवान श्रीकृष्ण श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में कहते हैं—

न बुद्धिभेदं जनयेत् अज्ञानां कर्मसङ्गिनाम

(जन साधारण के मन को विचलित नहीं करना चाहिए)। महाभारत में लिखा है—'यदि निर्जन स्थान में भी कोई यह समझ कर कि मुझे कोई देख नहीं रहा है, अनुचित आचरण करे तो उसे यह जान लेना चाहिए कि सूर्य, चंद्र, वायु, जल, अग्नि आदि प्राकृतिक शक्तियाँ उसे देख रही हैं और आवश्यकतानुसार उस के विरुद्ध गवाही देंगी।' ऐसे विश्वास से मनुष्यों के हृदय में एक प्रकार का भय रहता है जिस से वे ठीक मार्ग पर चलते रहें। पारलौकिक शक्ति का भय पुलिस और मजिस्ट्रेट के भय से कहीं अधिक होता है।

आश्चर्य की बात है कि हमारे शासक और नेतागण 'भौतिक राज्य' की दुहाई देते हैं तथापि हमारे मंत्री, उच्च अधिकारी, प्रभावशाली और धनवान

लोग अपने लड़के-लड़कियों को ईसाई कानवेंट स्कूलों में भेजते हैं। मेरे मित्र श्री लालबहादुर शास्त्री ने जब अपने घर के बच्चों को कानवेंट-स्कूलों में भेजा तो मैं ने उन से कहा, "आप विद्यापीठ के स्नातक होते हुए ऐसा कर रहे हैं, यह आश्चर्य की बात है !" उन्होंने उत्तर दिया कि कानवेंट-स्कूलों में अन्य स्कूलों से पढ़ाई अच्छी होती है। यह घटना इस बात को प्रमाणित करती है कि धार्मिक शिक्षालयों को ऐसे लोग भी अधिक पसंद करते हैं जो 'भौतिकवाद' का प्रतिपादन करते हैं।

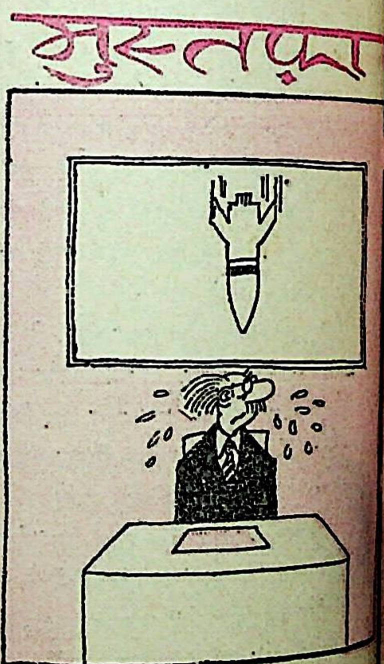
'भौतिकवाद' का विशेष रूप से हिंदुओं पर बुरा प्रभाव पड़ा है। देश के अधिकतर निवासी हिंदू हैं, जो अनेक जाति-उपजातियों, संप्रदाय उप-संप्रदायों में विभक्त हो गये हैं। उन के आपस के धार्मिक विचारों में समता नहीं है। एक ही कुटुंब के सदस्यगण भिन्न-भिन्न नामों से ईश्वर की आराधना करते हैं और भिन्न-भिन्न धार्मिक कृत्यों का पालन करते हैं। ऐसी अवस्था में उन्हें धार्मिक शिक्षा देना अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि सार्वजनिक संस्थाओं में उन्हें अपने धार्मिक मौलिक सिद्धांतों की ही शिक्षा दी जायेगी और नैतिक आचरण पर विशेष जोर दिया जायेगा। शिक्षालयों में धार्मिक और नैतिक शिक्षा के अभाव से जनसाधारण में भी धार्मिक और नैतिक बंधन शिथिल हो गये हैं।

'श्रीमद्भगवद्गीता' में कहा है—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः

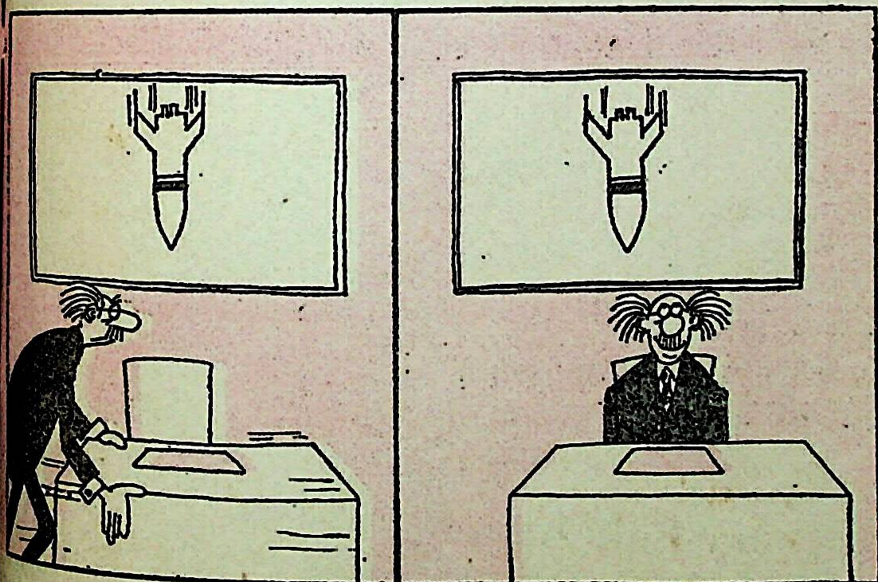
(जिस प्रकार से श्रेष्ठजन व्यवहार करते हैं वैसे ही छोटे लोग करते हैं।)

पहले यदि कोई अनुचित आचरण करता था तो उसे अनुचित मानता था, किंतु अब उसे अनुचित माना ही नहीं जाता। चोरबाजारी और अन्य प्रकार के दुराचरण में लज्जा अनुभव न कर लोग उन पर गर्व करते हैं। दूसरे लोग भी



उस की प्रशंसा करते हैं। ऐसे दुराचरणों के विरुद्ध कोई कितना ही शोर करे और उन्हें रोकने के लिए चाहे कितने ही कानून बनाये जायें किंतु वे तब तक दूर नहीं हो सकते जब तक सर्वसाधारण के हृदयों में उच्च आध्यात्मिक भावों का संचार नहीं कराया जाता। हमारे विद्यालयों में धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाती और धर्मोपदेशकों को उत्साहित नहीं किया जाता। यदि हम इस आवश्यक कार्य को माता-पिता और परिवारों के ऊपर ही छोड़ देंगे तो इस में संदेह नहीं कि जो धार्मिक शिक्षा दी जायेगी वह बहुत ही संकीर्ण और कट्टर प्रकार की होगी। उस से खराबी दूर होने के बदले और बढ़ेगी और सांप्रदायिक तनातनी तथा समाज-विरोधी कार्यों में वृद्धि होगी।

(सेवाश्रम, सिगरा, वाराणसी)



प्रतिभा और सौंदर्य

तुम्हारी कविता और सौंदर्य में से
कौन अधिक श्रेष्ठ है?

कविता दृष्टि मात्र से समझ में नहीं आती
उसे समझना या समझाना पड़ता है

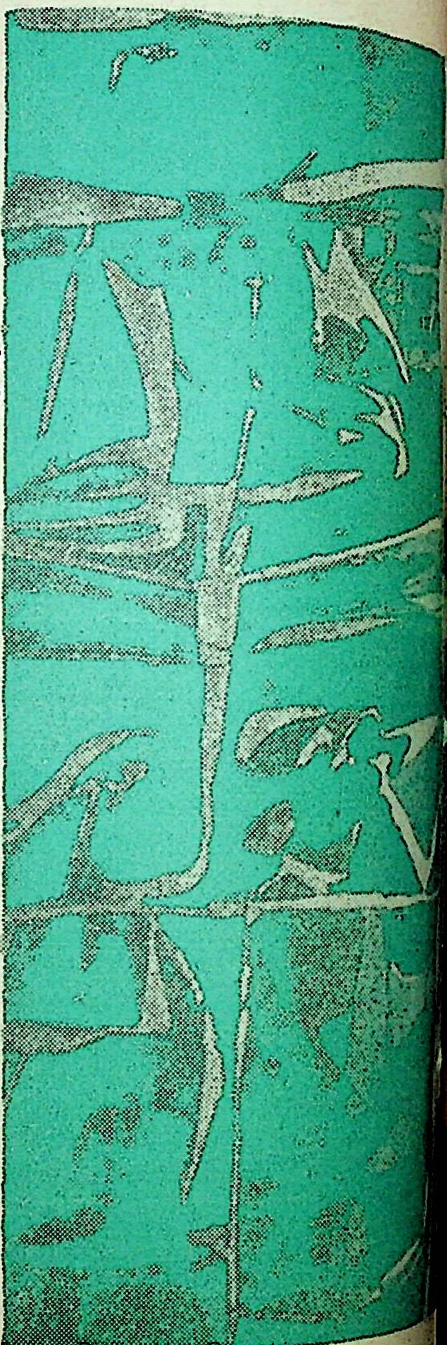
लेकिन खूबसूरती को
दलील देने की हाजत नहीं होती

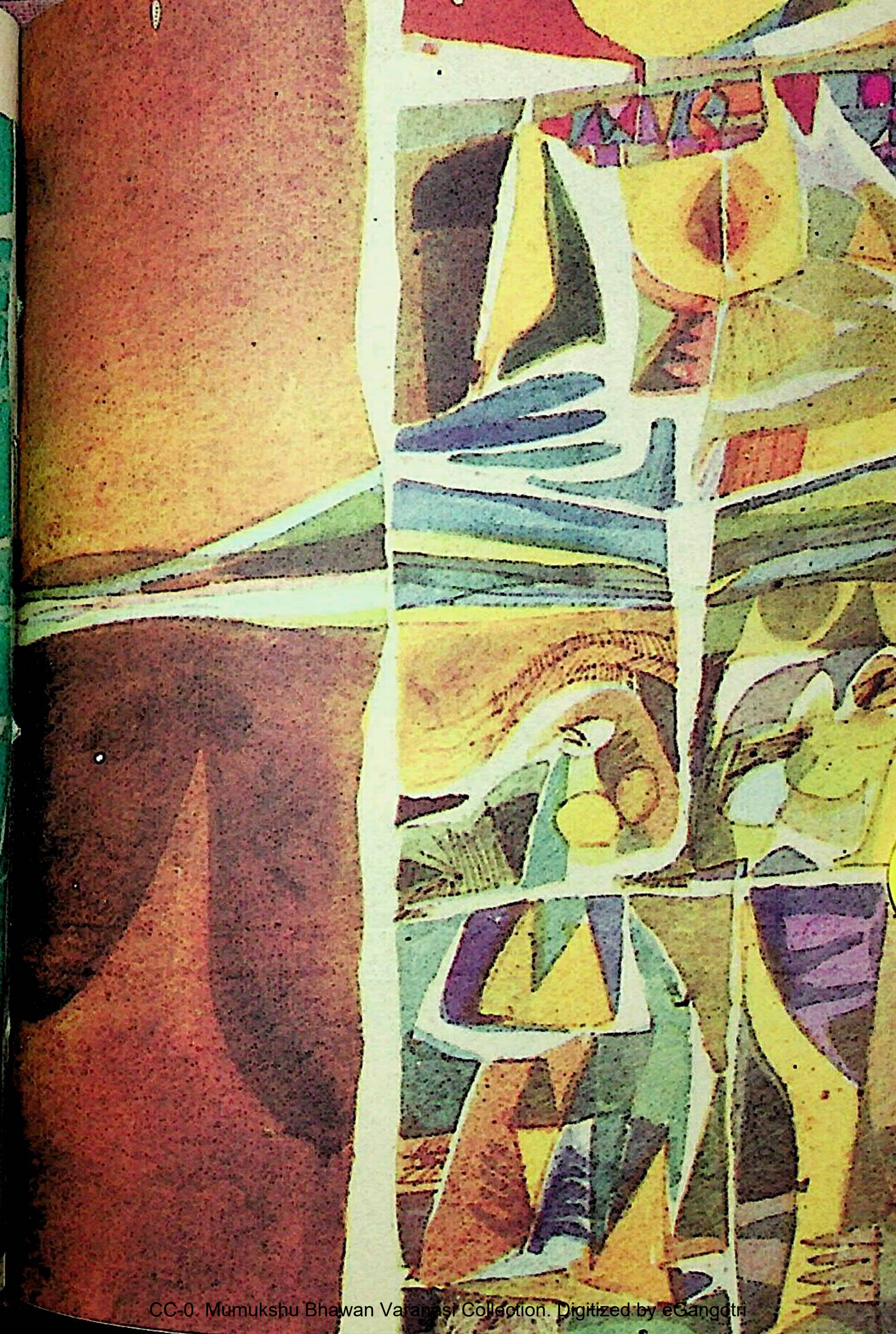
रूपसी नारी देखी नहीं
कि आँखें उसे पहचान लेती हैं
सौंदर्य के भीतर जो अर्थ भरा है
उसे बिना पढ़े ही जान लेती हैं

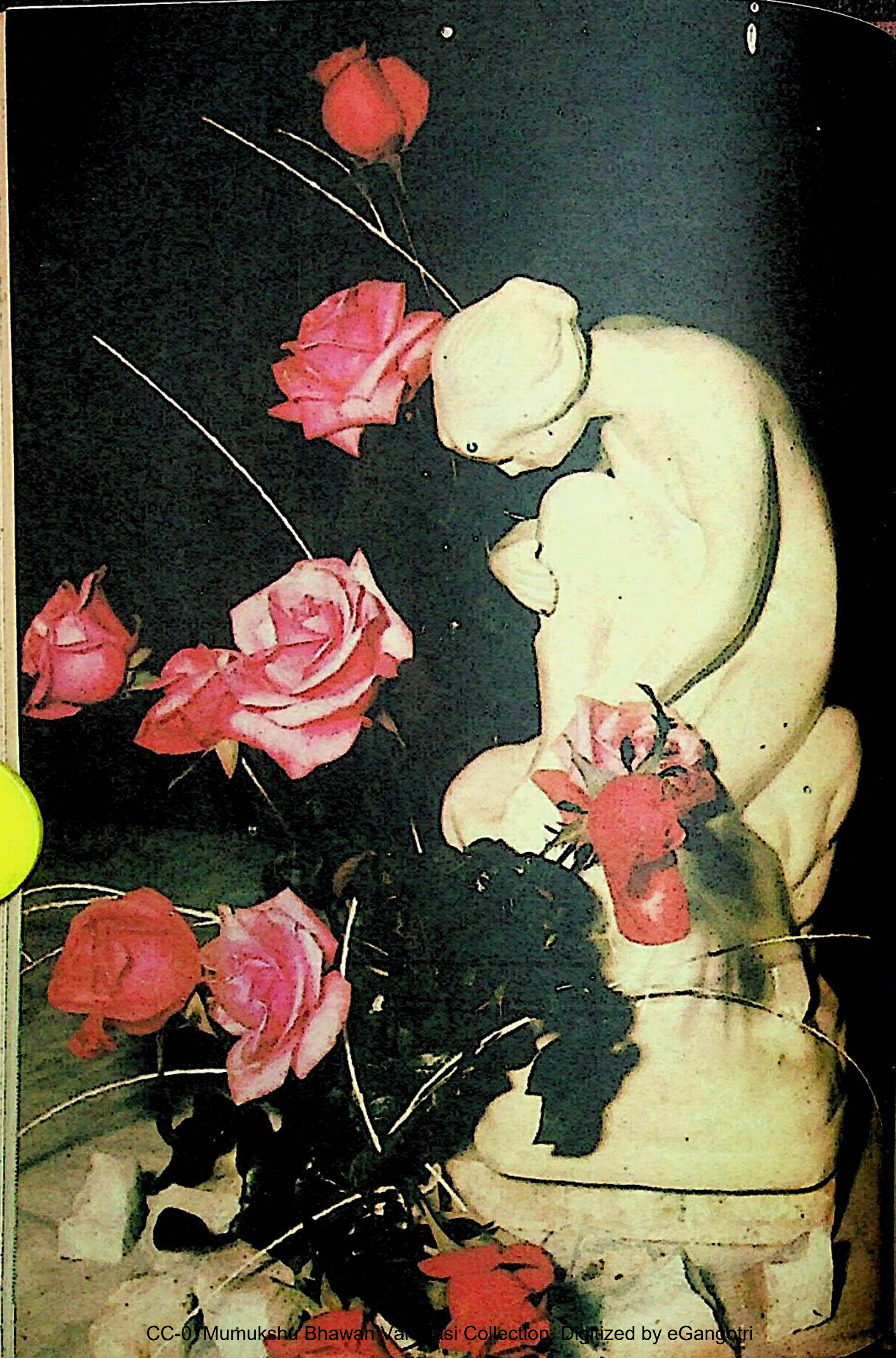
प्रसाद-गुण में सौंदर्य
कविता से अधिक प्रखर है
मगर एक बात और है
जो हृदय को जँचती है

प्रसन्न से प्रसन्न सुंदरता भी
विनाश को प्राप्त होती है
किंतु कविता गूढ़ होने पर भी
बचती है

—रामधारीसिंह दिनकर
(५, सफदरजंग लेन, नयी दिल्ली)







विनय

चाहे रहो कहीं
भूलो मुझे नहीं

मरते औ' जीते
अनगिन दिन बीते
हो न सके पूरे
अरमान अधूरे

विपदा बहुत सही
भूलो मुझे नहीं

हँस-हँस मैं रोया
चैन से न सोया
क्या कुछ सहा नहीं
लेकिन कहा नहीं

आँखें बहुत बहीं
भूलो मुझे नहीं

तैर रही सागर
जीवन की गागर
दो इसे सहारा
दूर है किनारा

मेरी विनय यही
भूलो मुझे नहीं

—रमानाथ अवस्थी
(आकाशवाणी, नयी दिल्ली–१)







दिल्ली : सैर

दिल्ली में बाउटे की पहाड़ी (रिज) पर वह इमारत जो पीरगैब नाम के एक पीर फकीर की दरगाह कहलाती है, फीरोजशाह तुगलक के कोशक शिकार या शिकारगढ़ का एक महल है। बादशाह को शिकार खेलने और शराब पीने का बहुत शौक था। शिकारमहलों में फीरोजशाह तुगलक के मनवहलाव के सब सामान होते। यहाँ वह राजकाज के धंधों से दूर हट कर नाच-गाने और शराब पीने में मस्त रहता। जब जी चाहता, आस-पास के जंगल में शिकार खेलने निकल जाता। उस की सवारी बड़े ठाट-बाट, धूम-धड़क्के से चलती । एक छोटा-सा लश्कर साथ होता। घुड़सवारों और सिपाहियों की पगड़ियों में भी और बल्लम-भालों में भी, जिन्हें शाही-नौकर उठा कर चलते, मोर के पर लगे होते। मोर का पर तुगलकों का सरकारी चिह्न था।

कारवाँ में एक बहुत बड़े सफेद गुंबद वाले तंबू को बहुत-से फर्राश उठाये चलते। तंबू के एक हिस्से में बादशाह का एक खास महल और दूसरे हिस्से में ड्योढ़ी, दरबार की जगह और दूसरे कमरे होते। यह शाही खेमा फीरोजशाह तुगलक के ही दिमाग की उपज थी। बादशाह ने कुछ ऐसी बड़ी-बड़ी आठ पावोंवाली चक्करदार देगें भी बनवायी थीं जिन में मनों गोश्त पकाया जा सकता था और जिन्हें सौ-सौ कहार उठा कर सवारी के साथ चलते। सवारी के पीछे शिकारियों के हाथों में शिकारी परिंदे होते और गलों में जंजीर-बँधे शिकारी कुत्ते और शिकारी चीते, जिन की आँखों पर पट्टियाँ बँधी होतीं।

फीरोजशाह तुगलक की दिल्ली में शिकार खेलने की कई जगहें थीं। दिल्ली यूनीवर्सिटी के पास बाउटे की पहाड़ी पर एक सिरे से दूसरे सिरे तक उस का शिकारगढ़ था। पहाड़ी पर बनी चौबुर्जी मसजिद और उस के पास वाली खंडर बावली, जिस के तहखाने से एक रास्ता हिंदूराव के अस्पताल तक चला गया था, कोशक

• महेश्वर दयाल

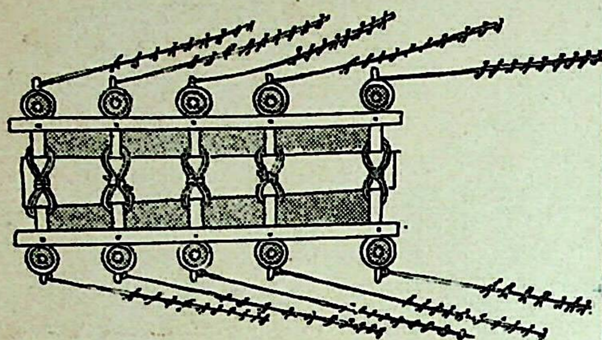
दिल्ली (१५)

फीरोज़शाह तुग़लक

शिकार के ही हिस्से हैं। बादशाह ने यहाँ सितारों का खेल या नजूम की विद्या की जानकारी के लिए जहानुमा नाम की एक इमारत बनवायी थी जिस की छत में इस तरह के छेद बनवाये थे जहाँ से आकाश में बिखरे तारों को अच्छी तरह देखा जा सके। पहाड़ी के नीचे, एक चारदीवारी के अंदर, दूर तक फैला एक जंगल और झील थी। झील को तो अब पाट कर श्रीराम इंस्टीट्यूट की इमारत बना दी गयी है, लेकिन टूटी-फूटी चारदीवारी आज भी कहीं-कहीं दिखायी देती है। अंगरेजों ने यहाँ अपने वाइसराय का पहला घर बनाया था और आजकल इस जगह दिल्ली यूनीवर्सिटी और कुछ कालिजों की इमारतें हैं।

पचकुइयाँ से थोड़ी दूर आगे चल कर पूसा रोड पर भूली-भटियारी का महल है। इसी महल को गयासुद्दीन तुगलक के बेटे खिजर खाँ ने अपनी चहेती रानी, गुजरात के राजा करन की बेटी, देवल रानी के लिए बनवाया था। लेकिन फीरोज-शाह तुगलक ने इसे अपना शिकारमहल बनवाया। महल में मोतियाखान (मोती-जैसे चमकदार पानी की खान) की झील से पानी लाया जाता था। मोतियाखान की झील तो अब कब की बंद हो चुकी है। अब तो यहाँ लोहे की बड़ी मंडी है। भूली-भटियारी के महल में आज से चालीस-पचास बरस पहले तक पवन-परीक्षा का मेला लगता था जिस में हजारों दिल्ली-वाले आते—ज्योतिषी, नजूमी, रम्माल झंडियाँ गाड़ कर, हवा की दिशा देख बताया करते कि इस साल फसल कैसी होगी !

रोशन चिराग देहली की दरगाह के पास मुहम्मद तुगलक का बनवाया एक सतपुला है। इस से थोड़ी दूर पर, खिड़की



अशोक की लाट को एक लड्ढे पर रस्सों से बांध कर दिल्ली लाया गया

नाम के गाँव में भी, फीरोजशाह तुगलक ने एक बहुत घने जंगल के चारों तरफ दीवार खिंचवा कर अपनी शिकार खेलने की जगह बनवायी। बादशाह का लाड़ला बेटा फतेहखान जब मरा तो वह अपना दुख-दर्द मिटाने के लिए इसी जंगल में शिकार खेलता रहता।

नयी दिल्ली में सरदार पटेल मार्ग के पास मालचा नाम की एक जगह है। यहाँ भी फीरोजशाह तुगलक का शिकार-महल था। महल से थोड़ी दूर एक तालाब था, जहाँ बादशाह ने मक्के के जमजम नाम के कुएँ का पानी मँगवा कर डलवाया था। अब तो इस जगह पर बड़ी-बड़ी शानदार कोठियाँ बन गयी हैं।

दिल्ली में वजीराबाद के पास, जमना के किनारे, शाहआलम नाम के एक फकीर की दरगाह और मसजिद है। इन इमारतों से लगा एक छोटा-सा पुल और ऊपर-तले रखे पत्थरों का जालीदार एक बाँध-सा बना है। फीरोजशाह ने यह इमारत इस तरह बनवायी थी कि बरसात में बहाव के साथ ढेर-सारी मछलियाँ आप-ही-आप आ कर फँस जातीं।

कहते हैं, जवानी के दिनों में एक बार जब कड़ाके का जाड़ा पड़ रहा था, शहजादा फीरोज शिकार खेलता हरियाने के जंगलों में निकल गया और रास्ता भूल गया। बहुत देर रात तक वह भूख-प्यास से तड़पता, इधर-उधर मारा-मारा भटकता फिरा। घोड़ा बाँध कर एक पेड़ के नीचे लेटा ही था कि लरस नाम के गाँव के दो गूजर, जिन के नाम सिद्धू और सहारन थे, उधर आ निकले। उन्होंने एक परदेशी को परेशान हाल में देखा तो उसे अपने घर ले आये। खाना खिलाया, दारू पिलायी। शराब के नशे में शहजादे ने इन दोनों गाँववालों को अपना नाम-पता बताया और दिल्ली दरबार की बातें सुनायीं। देहातियों ने यह जान कर कि यह परदेशी दिल्ली का शहजादा है, गयासुद्दीन तुगलक के भाई सिपहसालार रजब का बेटा और सुलतान मुहम्मद तुगलक का चचेरा भाई है, फूले न समाये। शाही

मेहमान की बड़ी आव-भगत की। फीरोज को बहुत दिन तक अपने घर में रखा और दिल्ली न जाने दिया। गाँव में रहते-रहते शहजादा फीरोज सिद्धू और सहारन के घरवालों से अच्छी तरह घल-मिल गया। उस की आँख सहारन की बहिन से लड़ गयी थी, इसलिए उस का मन भी दिल्ली जाने को न चाहता। उस ने गाँव की गूजरी से व्याह करने की ठान ली और अपनी माँ को दिल्ली खवर भेज दी। फीरोज की माँ बीवी नेला अवोहर के राजपूत राजा रानामल भट्टी की वेटी थी जिसे गयासुद्दीन तुगलक ने अपने भाई रजव से व्याहने के लिए सिर-धड़ की वाजी लगायी थी। फीरोज और गूजरी के प्रेम की खवर जव दिल्ली के महलों में पहुँची तो शहजादे की माँ ने वेटे की वात मान ली।

लरस गाँव की गूजरी दुलहन बन कर वड़े ठाट-वाट से दिल्ली आयी, लेकिन गाँव की छोरी का दिल्ली के महलों में मन न लगा। उसे अपना गाँव रह-रह कर याद आता। शहजादा फीरोज जव दिल्ली का सुल्तान वना तो उस ने छोटे लरस और वड़े लरस नाम के दोनों गाँवों को घेरे में ले कर गूजरी रानी के लिए हिसार फीरोज नाम का एक किला बनवाया। इस गूजरी-महल में अनगिनत कमरे थे। एक कमरे से दूसरे कमरे में जाने के लिए ऐसे टेढ़े-मेढ़े रास्ते वने थे कि यह महल भूलभुलैया कहलाने लगा। भूलभुलैयों में गूजरी रानी अपनी सहेलियों के साथ आँख-मिचौनी खेला करती।

गूजरी-महल में रौलचौल वढ़ी तो हिसार भी एक वड़ा शहर वन गया। यमन और खुरासान तक के मुसाफिर यहाँ आ कर ठहरा करते। लेकिन हिसार में पानी की वहुत कमी थी। एक सुराही पानी बहुत महँगे दामों मिलता। फीरोज-शाह तुगलक ने सतलज और जमना नदियों पर बाँध बाँधे और दो नहरें खोल कर हिसार, सिरसा और दिल्ली लाया। हिसार फीरोज में पानी आया तो हर तरफ हरियाली छा गयी। खेती-वारी भी अच्छी होने लगी। गूजरी-महल का बाग फल-फूलों से महकने लगा।

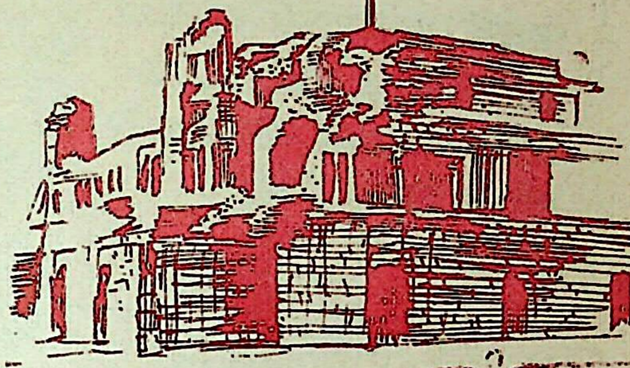
थोड़े दिन बाद गूजरी रानी के लड़का पैदा हुआ। बादशाह ने अपने शहज़ादे फतेहखान के नाम पर फतेहाबाद नाम का एक और शहर बसाया। यह शहजादा फीरोजशाह तुगलक का वड़ा लाड़ला था, लेकिन अचानक मर गया। बादशाह ने जो कब्र अपने लिए बनवायी थी, उस में अपने जवान वेटे को सुला दिया। उस के मकबरे के पास एक मसजिद और मदरसा बनवाया। हजरत मुहम्मद के चरणों के निशान, जो मक्का से एक बुजुर्ग अपने सिर पर रख कर लाये थे, अपने शहजादे की कब्र पर उस की छाती पर लगा दिये जो एक छोटे-से संगमरमर के तालाब में दिखायी देते हैं। फतेहखान का मकबरा दिल्ली में वाड़ा हिंदूराव में है और कदम-शरीफ कहलाता है। यहाँ हर साल मेला

लगता है। हजारों मुसलमान आते हैं।

फीरोजशाह तुगलक ने शहर तो बहुत-से बसाये, लेकिन जब उस ने उजड़ी दिल्ली को फिर से बसा कर अपने नये शहर का नाम फीरोजाबाद रखा और जमना के किनारे ठंडी हवाओं का लुत्फ उठाने के लिए एक शानदार किला बनवाया, जो कोटला फीरोजशाह कहलाया, तो उस के नये शहर और कोटले की धूम सारे संसार में मच गयी। यों तो तुगलक वंश के गयासुद्दीन तुगलक और मुहम्मद तुगलक ने भी दिल्ली में अपने शहर और किले बनवाये थे, लेकिन वे उजड़ चुके थे। तुगलकाबाद तो तभी से उजड़ने लगा जब निजामुद्दीन औलिया ने कहा कि 'इस बस्ती में या रहे गूजर या रहे ऊजड़' और मुहम्मद तुगलक ने अपने हाथों ही अपना शहर उजाड़ दिया था जब वह दिल्ली से उठ कर देवगिरि (दौलताबाद) चला गया था। जिया-उद्दीन बरनी (बरन का रहने वाला, बरन बुलंदशहर का पुराना नाम था), इब्नबतूता और दूसरे कई मुसलमान इतिहासकारों ने मुहम्मद तुगलक को निर्दय बादशाह लिखा है और फीरोज-शाह को नरमदिल सुलतान कहा है। उन का कहना है कि मुहम्मद तुगलक ने मौलवियों, मुल्लाओं, काजियों और मुसलमान अमीरों को चुन-चुन कर मरवाया और हिंदू-जैनियों की मदद की। लेकिन बहुत-से और इतिहासकारों का कहना है कि मुहम्मद तुगलक था तो पक्का मुसलमान, नमाज-रोजे का पाबंद, लेकिन उसे मजहब का कट्टरपन पसंद न था। वह सब दीन-धर्मों के विचार सुनना चाहता था। वह अपने युग से आगे की बातें सोचा करता। समाज में सुधार लाने के लिए बड़ी-बड़ी कार्रवाई करता। विज्ञान की जानकारी में अपना बहुत-सा समय लगाता। दिमागी तौर पर उस की उड़ानें बहुत ऊँची थीं। उसे संतों, दरवेशों, फकीरों, जोगियों, मुनियों की संगत अच्छी लगती थी। 'कल्पप्रदीप' नाम की एक पुस्तक पढ़ने से, जो योगिनीपत्तन (दिल्ली का एक पुराना नाम) में लिखी गयी, पता चलता है कि मुहम्मद तुगलक ने जैन-तीर्थों को हर आफत से बचाने के लिए फरमान जारी किये। उस ने एक बार जिन प्रभासूरि नाम के एक जैन मुनि को अपने साथ गद्दी पर बिठा कर सारी रात उन के विचार सुने। सवेरा होते ही बादशाह ने मुनि महाराज को एक हजार गायें, कंबल, अगरबत्तियाँ, काफूर, संदल और बहुत-सी सामग्री देनी चाही, लेकिन साधु ने बादशाह से कुछ न लिया। उन्होंने तो बस भगवान महावीर की वह मूर्ति, जो बहुत दिन से तुगलकाबाद के खजाने के किले में पड़ी थी, माँग ली और उसे सुलतानसराय नाम की जगह पर मंदिर में स्थापित कर दिया।

हिंदू-जैन अभिलेखों से यह भी पता चला है कि दिल्ली से दौलताबाद

जाते समय सुलतान मुहम्मद तुगलक ने हिंदुओं और जैनियों पर कोई अत्याचार नहीं किया। उन दिनों जब सब दिल्ली छोड़ कर जा रहे थे, बादशाह ने हिंदू व्यापारियों को अपने आराम के लिए नडायना (नरायना) और रायसीने के सारबान नाम के गाँव में (वह जगह जहाँ आजकल



कोटला फीरोजशाह: ऊपर अशोक-स्तंभ लगा है

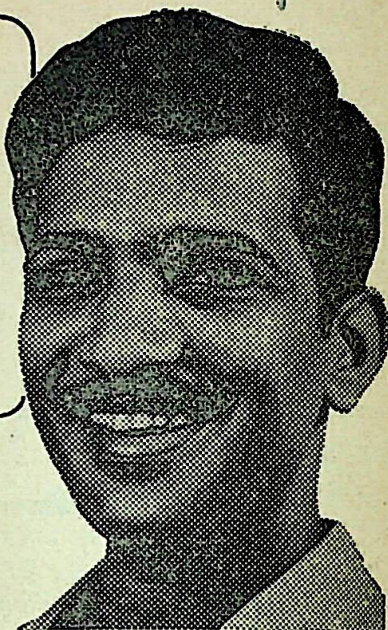
नेशनल म्यूजियम की इमारत है) कुएँ खुदवाने की इजाजत दी। ब्राह्मण कवियों ने मुहम्मद तुगलक की शान में गीत गाये। उसे एक विशाल दिलवाला आदिल बादशाह कह कर पुकारा जाता। एक बार किसी काजी ने मुहम्मद तुगलक से कुछ हिंदू और जैनियों की शिकायत की कि वे बादशाह के दुश्मन हैं और उसे मारना चाहते हैं। मुहम्मद तुगलक ने छान-बीन करके यह पता चला लिया कि काजी झूठा है। वही इन हिंदू और जैनियों को मरवाना चाहता है। बादशाह ने झूठी शिकायत पर इस काजी को मार डाला।

काजी, मौलवी, उलमा, शेखों को मुहम्मद तुगलक से चिढ़ हो गयी थी। वे उसे हिंदुओं का दोस्त तथा मुसलमानों का दुश्मन समझते थे। उन्हें मुहम्मद तुगलक का हिंदुओं के साथ होली खेलना, हिंदुओं की तरह अपनी माँ के चरण चूमना, नगरकोट जा कर ज्वालादेवी के मंदिर में छत्र चढ़ाना एक आँख न भाता था। मुहम्मद तुगलक के मरते ही उन की जान-में-जान आ गयी। पुरानी हवा एकदम बदल गयी। उन्होंने फीरोजशाह तुगलक को दिल्ली का सुलतान बनाने में पूरी मदद दी।

सुलतान फीरोजशाह ने गद्दी पर बैठते ही काजी, उलमा, शेख, मौलवियों से हर बात में राय लेनी शुरू कर दी। वह कोई काम इन के पूछे बिना नहीं करता। उस ने नये मंदिर तोड़े। ब्राह्मणों को मूर्ति पूजा करने पर जिंदा जलवा डालता। हिंदुओं पर जजिया (टैक्स) लगा कर बहुतों को मुसलमान बना लिया। उस ने मुसलमानों के उन परिवारों को, जिन्हें मुहम्मद तुगलक ने दंड दिया, बहुत-सा रुपया दे कर उन के आँसू पोंछे। अपने चचेरे भाई के गुनाह माफ कराने के

क्यों देर से असर करने वाले पुराने तरीके से इलाज किया जाये जबकि माइक्रोफ़ाइन्ड 'ऐस्प्रो' दर्द को जल्द ही खींच निकालता है।





बाम, लेप तथा साधारण गोलियां पुराने तरीके हो चुके हैं। उनका असर बहुत देर में होता है और आप देर तक दर्द से परेशान रहते हैं।

माइक्रोफ़ाइन्ड 'ऐस्प्रो' दर्द को रोकने का आधुनिक वैज्ञानिक इलाज है। माइक्रोफ़ाइन्ड 'ऐस्प्रो' साधारण दर्द विनाशकों की अपेक्षा दुगुना जल्द असर करता और आपको शीघ्र आराम पहुंचाता है।

खुराक : प्रौढ़ : दो टिकियां – आवश्यकता होने पर दो और लीजिये। **बच्चे :** एक टिकिया या डाक्टर की सलाह के अनुसार।



धीमा आराम
बड़े कण देर से घुलते हैं। दर्द के स्थान पर पहुंचने में अधिक समय लगता है। आप दर्द से व्यर्थ ही परेशान होते हैं।



शीघ्र आराम
बारीक कण शीघ्र घुल जाते हैं। दर्द के स्थान पर जल्द पहुंच जाते हैं। दर्द से शीघ्र आराम दिलाते हैं।



सिर्फ़ 'ऐस्प्रो' ही माइक्रोफ़ाइन्ड है इसलिए यह दर्द को *जल्दी* खींच निकालता है

निकोलस (N) उत्पादन

A.G.51(N) HN

लिए उन से माफीनामे लिखवा कर मुहम्मद तुगलक की कब्र में रखे। जो लोग दिल्ली छोड़ कर गये थे उन्हें वापस बुलवा लिया। अमीरों, दरबारियों और सिपाहियों को जागीरें देनी शुरू कर दीं। इन सब कामों से फीरोजशाह तुगलक की बसायी दिल्ली में दूर-दूर से खिंच कर मुसलमान आने लगे। दिल्ली में फिर से चहल-पहल हो गयी।

फीरोजशाह तुगलक नव्वे साल जिया। उस ने अपने राज के सैंतीस साल बड़ी मौज में काटे। जब भी चाहता, सवेरे के वक्त दरबार में आ बैठता। जी उकताने लगता तो महल से निकल कर परिंदों की उड़ान या घुड़दौड़ देखने चला जाता। उस ने अपने कोटले में तीन महल बनवाये थे जिन में से एक पर बाजदार घड़ियाल लटका रहता। यह भी फीरोजशाह के दिमाग की उपज थी। अंगूरी महल या किशमिशी महल में बादशाह अपने खान-मुलक अमीरों से बातचीत करता, जुमे की नमाज के बाद गाना-बजाना सुनता और पहलवानों की कुश्तियाँ भी देखता। दूसरे को चहचहे चोबेनमहल (लकड़ी का महल जिस में बुलबुलें चहचहातीं) के नाम से पुकारा जाता था। यहाँ शहजादे और बादशाह के खास-खास आदमी ही आ-जा सकते थे। तीसरा महल सब छोटे-बड़ों के लिए था। यहाँ ईद, नौरोज, शबे-रात के त्योहार मनाये जाते और फौजियों को जागीरें-इनाम भी बाँटे जाते।

फौज में भरती होने के लिए सैकड़ों आदमी रोज आने लगे। ऐसे लोग जिन्होंने कभी तलवार उठायी तक न थी, फौज में भरती होने की हर तरह की कोशिश करते। भरती होने के लिए रिश्वत भी दी जाने लगी। देश-भर में लड़ाइयाँ तो बंद-सी थीं। इसलिए फौजियों को खाने-पीने, मौज उड़ाने, सैर-सपाटों के सिवा और कोई काम न था। बादशाह की फौज में अस्सी हजार सवार थे जिन के घोड़ों की जाँच-पड़ताल होती थी। लेकिन ऐसे सिपाही भी थे जिन के पास मरियल घोड़े भी थे। लेकिन फौज के दीवानजी और उन के मुंशियों को घस दे देने से सब काम हो जाता था। फीरोजशाह तुगलक को इन बातों का पता था। लेकिन जब कोई इस बात की शिकायत करता तो वह हँस कर टाल जाता। सिराज लिखता है कि एक बार एक सिपाही को इस बात का डर लगा कि वह बादशाह की फौज में घुड़सवार हो कर तो भरती हो गया, लेकिन उस के पास घोड़ा ही नहीं है; कहीं ऐसा न हो कि नौकरी ही छूट जाये। उस ने अपने एक साथी को दुखड़ा सुना कर मदद माँगी। यह बात फैलते-फैलते बादशाह के कानों तक भी पहुँच गयी। उस ने सिपाही को दरबार में बुला कर पूछा—क्या बात है? तुम क्यों परेशान हो? सिपाही ने कहा—कल आखिरी तारीख है और मैं दीवाने अर्ज में जाँच-पड़ताल कराने अपना घोड़ा नहीं ले जा सकता।

बादशाह ने कहा—तो तुम दीवानजी के मुंशियों से मामला क्यों नहीं तय कर देते? सिपाही ने हाथ जोड़ कर अर्ज की—अगर मेरे पास एक टनका (सोने का सिक्का) होता तो काम बन जाता। लेकिन मेरे पल्ले तो कुछ भी नहीं है। बादशाह ने अपने खजांची से सिपाही को एक सोने का सिक्का दिलवा दिया।

फीरोजशाह के राज्य में गुलामों की भी गिनती बढ़ती चली गयी। उस के महलों और फौज में एक लाख अस्सी हजार गुलाम थे। बादशाह समझता था कि ये गुलाम आड़े वक्त काम आयेंगे, लेकिन उन सब ने आखिरी वक्त में धोखा दिया। गुलामों से हर तरह का काम लिया जाता था। इन में से कुछ तो इमारतें बनाने के काम में जवाब न रखते थे।

फीरोजशाह तुगलक और उस के वजीर खानजहाँ ने, जो तेलंगाने का रहने-वाला कन्नू नाम का एक हिंदू अमीर था, दिल्ली में बहुत-सी मसजिदें, सरायें, हौज, हमाम, पुल बनवाये और सैकड़ों बाग लगवाये। तुर्कमान दरवाजे के अंदर बुल-बुलीखाने के पास बनी कलाँ मसजिद (काली मसजिद), बेगमपुर, खिड़की और कालूसराय की मसजिदें वजीर खानजहाँ ने ही बनवायी थीं। कोटला फीरोजशाह में भी बादशाह ने एक शानदार जामा मसजिद बनवायी। एक बावली और तीन ऐसी लंबी-चौड़ी सुरंगें भी बनवायीं जिन में बेगमें डोलों में सवार हो कर एक जगह से दूसरी जगह तक आ-जा सकती थीं। एक सुरंग कोटले से जमना तक चली गयी थी। दूसरी सुरंग में से हो कर महरौली के कोटराय पिथौरा तक पहुँच जाते। तीसरी सुरंग से हो कर बाउटे की पहाड़ी पर बने शिकारगढ़ तक चले जाते।

फीरोजशाह कोटले में जो सब से अनोखी चीज थी, वह मगध के सम्राट अशोक की बनवायी सैकड़ों वर्ष पुरानी शिलालेख वाली लाट थी। इस लाट को फीरोजशाह तुगलक अंबाला के पास तोपरा गाँव से लाया था। लाट को लाने की कहानी शम्स शिराज कुछ इस तरह लिखता है—फीरोजशाह तुगलक ने ढिंढोरा पिटवाया कि आसपास रहने वाले लोग, चाहे वे पैदल हों या सवार, सब चले आयें और अपने साथ औजार और सेमल की रुई के गट्ठे लायें।

बादशाह ने रुई के हजारों गट्ठे स्तंभ के चारों तरफ बिछवाये, फिर उस की जड़ खुदवायी। स्तंभ इन रुई के गदेलों पर, जो चारों तरफ बिछे थे, आन पड़ा। जब स्तंभ गिर गया तो नींव में लगा चौकोर पत्थर, जिस पर लाट टिकी थी, निकाल लिया गया। स्तंभ को ऊपर से ले कर नीचे तक जंगली घास और कच्चे चमड़े में लपेटा गया ताकि रास्ते में हिलने-डुलने से टूट-टाट न जाये। फिर बादशाह ने बयालीस पहियों का एक बहुत बड़ा छकड़ा बनवा कर मँगवाया। छकड़े के हर पहिये में एक-एक रस्सा बँधा था।

हजारों आदमियों ने बड़ी मुश्किल से इस लाट को छकड़े पर चढ़ाया। पहिये में बँधे मोटे-मोटे रस्सों को दो सौ आदमी खींचते हुए छकड़े को जमना के किनारे तक लाये। बादशाह की सवारी भी वहीं आ गयी और किश्ती खेने वाले कुछ इतनी बड़ी किश्तियाँ बना कर लाये जिन में पाँच हजार मन से ले कर सात हजार मन तक अनाज लादा जा सकता था। लाट को बड़ी होशियारी, देखभाल और सँभाल कर इन किश्तियों के बेड़े पर लाद कर दिल्ली में कोटला फीरोजशाह तक लाये (उन दिनों जमना कोटले से लगी बहती थी)। लाट में बँधे रस्सों को चरखों में चढ़ा किले की दीवार से अंदर लाया गया।

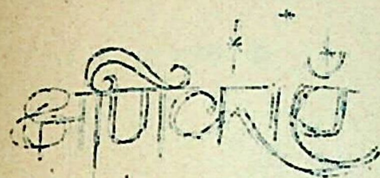
किले में पहुँच जाने के बाद लाट को खड़ा करने के लिए कोटला फीरोजशाह में जामा मसजिद के पास तीन खंड की एक इमारत बननी शुरू हुई। इमारत को बड़े नामी कारीगरों ने चूने-पत्थरों से बना कर इस में कई सीढ़ियाँ बनायीं। जब एक सीढ़ी बन चुकती तो लाट उस पर चढ़ा दी जाती। लाट जब ऊपर तक पहुँच गयी तो उसे खड़ा करने के लिए उस के एक सिरे पर मोटा रस्सा बाँधा गया और रस्से का दूसरा सिरा चरखियों से जोड़ा गया। चरखी के पहिये जब फिराये गये तो लाट आधा गज ऊँची उठ गयी। लाट के चारों तरफ बड़े-बड़े लट्ठे और रुई के गदेले डाल दिये जाते ताकि लाट को ठेस न पहुँचे। कई दिन तक लाट को उठाते रहे, फिर कहीं जा कर वह सीधी खड़ी हुई। लाट के चारों तरफ बड़े-बड़े लक्कड़ों का एक तरह का पिंजरा बना कर पाड़ बाँधी गयी, फिर कहीं जा कर लाट थमी और सीधी तीर की तरह खड़ी हो गयी।

जब लाट खड़ी हो गयी तो उस पर दो बुर्जियाँ बनायी गयीं और सब से ऊपर कलश चढ़ाया गया। फीरोजशाह ने इस लाट का नाम मीनारेजर्रीं रखा। इस पर अपनी बनायी एक दिशा बताने वाली घड़ी लटकायी। कहते हैं, १६११ तक लोगों ने इस लाट के कलश को देखा, लेकिन शायद फिर बिजली के गिरने या किसी तोप के गोले की चोट से वह गिर पड़ा।

फीरोजशाह तुगलक को अशोक की एक और लाट मेरठ में भी मिली थी जिसे ला कर उस ने बाउटे की पहाड़ी (रिज) पर अपने शिकारगढ़ की एक इमारत में खड़ा कर दिया था। मुगलों के बादशाह फर्रुखसियर के राज में बारूद में आग लग जाने से इस लाट के गिर कर पाँच टुकड़े हो गये थे, लेकिन अँगरेजों ने इन्हें जोड़ फिर से खड़ा कर दिया।

सम्राट अशोक की लाटों पर शिल्प-लेख पाली भाषा में हैं, लेकिन तुगलकों के राज से ले कर मुगलों के दौर तक इन्हें कोई न पढ़ सका। सब यही कहा करते थे कि ये लाटें पांडवों के राज में बनी थीं और ये भीम की लाठियाँ थीं जिन्हें ले कर वे गायें चराते थे।

(९६ बाबर रोड, नयी दिल्ली-१) ●



मुश्किल

अनंत भीड़ में
सत्य
कहीं गुम हो गया है
एक-से रंगों में
पहचानना
बड़ा मुश्किल हो गया है

—मधुसूदन शुक्ल 'सुधेश'

कभी न सोचा

लिखते तो रहे
लिखने के लिए
अथवा छपने के लिए
पर यह कभी न सोचा
लिखते हैं
किस सपने के लिए

—रमेश 'सजल'

आत्म-स्वीकृति

फूलों के रक्षार्थ
बाग में काँटे बो दिये
मैं ने फूल खो दिये

—प्रभुदयाल खट्टर

कुरबानी

अजी क्या कहें
हम सोने में सुहागे थे
भगतसिंह से भी
बहुत आगे थे
खा गये ताव
कुरबानी की हम ने भी
बिजली का एक तार
उखाड़ कर भागे थे

—राकेश

क्रांतिवीर

पैदा हुए हैं ऐसे वंशावतंस
प्रगति के नाम पर
कर रहे मूर्ति-ध्वंस
लुंठित हैं गाँधी, विवेक
रवि, आशुतोष
इन क्रांतिवीरों से
क्या बुरा था कंस!

—विष्णुकांत शास्त्री

सफर

हर रोज
शुरू करता हूँ
तेरी याद की खुशबू संग
सफर
मगर
कुछ ही फासले पर
भर लेता है बाँहों में
जंगली दफ्तर

—केदारनाथ कोमल

● श्यामलाल मांडावत

दृढ़ श्रम-नीति ज़रूरी

आज औद्योगिक अशांति देश की एक प्रमुख समस्या बन गयी है। यहाँ अर्थशास्त्र के प्राध्यापक एवं विद्वान लेखक ने इस का विश्लेषण करके बताया है कि श्रम-असंतोष का निराकरण किस तरह हो

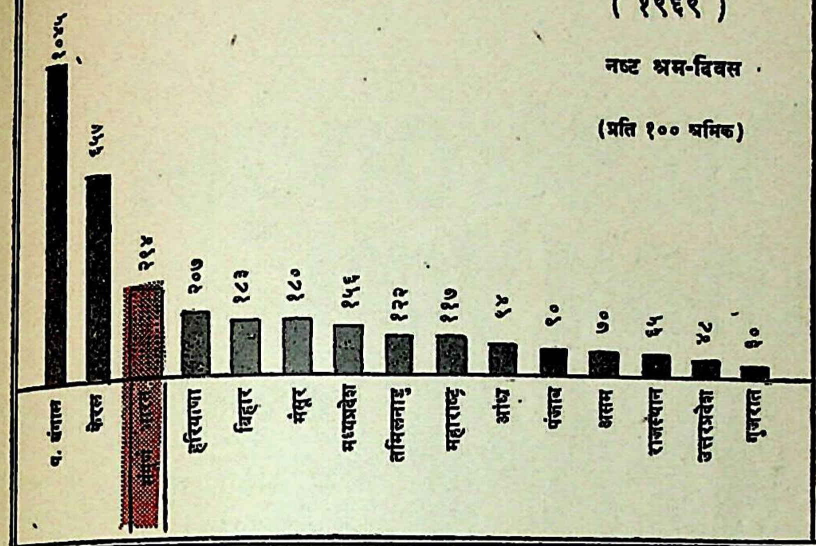
पिछले चार वर्षों से श्रम-असंतोष के कारण उत्पादन को होने वाली क्षति अपने ही कीर्तिमानों को लगातार तोड़ती जा रही है। यों तो हमारी नियोजित अर्थ-व्यवस्था में श्रम-असंतोष हमेशा रहा है, किंतु पिछले कुछ समय से उस में जो वृद्धि हुई है वह शोचनीय है।

सार्वजनिक क्षेत्र के बढ़ने का भी औद्योगिक शांति की दिशा में कोई अनुकूल प्रभाव देखने में नहीं आया है। इस के विपरीत गत वर्ष दुर्गापुर इस्पात कारखाने में हुई वारदातों से तो यही आभास होता है कि सार्वजनिक क्षेत्र के साथ श्रम-असंतोष ने कोई भेदभाव नहीं किया है।

अशांत औद्योगिक जनजीवन के दायरे बढ़ते चले गये हैं। कुछ ही समय पूर्व प्रकाशित तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि औद्योगिक दृष्टि से सर्वाधिक अशांत वर्षों में १९६८ ने यदि प्रथम स्थान प्राप्त किया है तो १९६९ उस से विशेष पीछे नहीं है। सन १९६६ तथा १९६७ में नष्ट होने वाले श्रम-दिनों की संख्या क्रमश: १३८.४६ लाख तथा १२७.४८ लाख रही थी। इस से पूर्व इतने अधिक स्तर पर औद्योगिक अशांति देखने में नहीं आयी थी।

१९६६ या १९६७ में नष्ट होने वाले श्रम-दिन अधिक समय तक कीर्तिमान न बने रहे। १९६८ में अखिल भारतीय स्तर पर निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र में सम्मिलित रूप से औद्योगिक अशांति के परिणामस्वरूप नष्ट होने वाले श्रम-दिनों की संख्या १७२ लाख तक पहुँच गयी। १९६८ में औद्योगिक झगडों की संख्या २,७७६ थी तथा इन में भाग लेने वाले श्रमिक लगभग १७ लाख थे।

बंद तथा घिरावों के प्रचलन के साथ,



जो कि १९६८ तक अपनी चरम सीमा तक पहुँच चुके थे, श्रम-असंतोष में होने वाली वृद्धि अप्रत्याशित नहीं थी। १९६९ में भी स्थिति में कोई महत्त्वपूर्ण सुधार नहीं हुआ क्योंकि इस वर्ष नष्ट होने वाले श्रम-दिवसों की संख्या १६७ लाख रही तथा औद्योगिक झगड़ों एवं उन में भाग लेने वाले श्रमिकों की संख्या क्रमशः २,२७० तथा १६ लाख रही। तुलनात्मक दृष्टि से दोनों वर्षों की औद्योगिक अशांति से होने वाली हानि में कोई विशेष अंतर नहीं दिखायी देता।

नष्ट होने वाले श्रम-दिवसों की इस संख्या में उन हड़तालों को सम्मिलित नहीं किया गया है जो राजनीतिक कारणों से होती हैं या जिन्हें सहानुभूति में किया जाता है। इस के अतिरिक्त कच्चे माल की कमी, मशीनों में गड़बड़ी तथा बिजली बंद हो जाने से काम रुकने से होने वाले नुकसान को भी इन तथ्यों से अलग रखा गया है; क्योंकि इन में श्रमिकों का कोई दोष नहीं होता। लेकिन देश के संपूर्ण औद्योगिक उत्पादन की प्रगति पर पड़ने वाले इन के कुप्रभाव उतने ही हैं जितने श्रमिकों द्वारा हड़ताल किये जाने पर कारखानों के बंद होने से हो सकते हैं। यदि इन सब बातों को सम्मिलित कर लिया जाये तो राष्ट्रीय स्तर पर औद्योगिक उत्पादन को पहुँचने वाली क्षति का आकार और भी बड़ा हो जायेगा।

राष्ट्रीय स्तर पर औद्योगिक अशांति के फलस्वरूप नष्ट होने वाले श्रम-दिनों को यदि राजकीय स्तर पर बाँटा जाये तो प. बंगाल में श्रम-दिनों का सर्वाधिक अप-

व्यय हुआ है। राष्ट्रीय स्तर पर १९६९ में औद्योगिक संस्थानों में काम करने वाले प्रति १.०० श्रमिकों पर नष्ट होने वाले श्रम-दिवसों की संख्या २९४ रही है। यही औसत प. बंगाल में औद्योगिक संस्थानों में काम करने वाले प्रति १०० श्रमिकों के संबंध में १०४५ रहा है, जो अन्य किसी भी राज्य के औसत नुकसान से कई गुना है। प. बंगाल का निकटतम अनुकरण केरल द्वारा किया गया। वहाँ नष्ट होने वाले श्रम-दिवसों का औसत ६५७ रहा है, जो राष्ट्रीय औसत के दोगुने से भी अधिक है। केरल तथा प. बंगाल में, जहाँ कम्युनिस्ट समर्थक श्रम-संघों का आधिक्य रहा है, श्रमिक असंतोष द्वारा होने वाला नुकसान भी सर्वाधिक हुआ है।

पश्चिमी बंगाल तथा केरल के अपवाद को छोड़ कर अन्य सभी प्रांतों में औद्योगिक अशांति के कारण नष्ट होने वाले श्रम-दिवसों की संख्या राष्ट्रीय औसत से कम ही रही है। गुजरात, जो कि पर्याप्त औद्योगिक प्रगति का प्रतिनिधित्व करता है, श्रम-असंतोष के फलस्वरूप नुकसान उठाने वाले राज्यों में अंतिम रहा है। वहाँ प्रति १०० श्रमिक नष्ट होने वाले श्रम-दिनों की संख्या १९६९ जैसे अशांत वर्ष में भी केवल ३० रही है, जो अखिल भारतीय स्तर पर नष्ट होने वाले श्रम-दिवसों का केवल १० प्रतिशत है।

औद्योगिक अशांति की दृष्टि से यदि प. बंगाल सब राज्यों का अगुआ रहा है तो स्वयं बंगाल में दुर्गापुर इस्पात कारखाना तथा उस से संबद्ध क्षेत्र असंतोष से सर्वाधिक अभिशप्त रहा है। १९६६ से अब तक दुर्गापुर में ५० हड़तालें हो चकी हैं। उस की तुलना में भिलाई तथा राउरकेला में तब क्रमशः एक तथा दो हड़तालें हुईं। हिंदुस्तान स्टील लि. के अध्यक्ष द्वारा हाल में बताये गये तथ्यों के अनुसार दुर्गापुर इस्पात कारखाने में पिछले १६ महीनों में (अप्रैल, १९७० तक) ५० घिराव, काम के घंटों के दौरान ३०० प्रदर्शन, काम करने से इनकार करने की ४,००० वारदातें, लगभग १,००० बार 'काम धीरे' करने तथा ४०० बार गैरकानूनी रूप से काम रोकने की वारदातें हो चुकी हैं। इन के अतिरिक्त चार 'बंदों' के कारण होने वाला नुकसान ५.५ लाख श्रम-घंटों के बराबर रहा है।

दुर्गापुर इस्पात कारखाने में एक दिन काम बंद रहने का अर्थ एक करोड़ रुपये का नुकसान है। १६ लाख टन उत्पादन करने की क्षमता रखने वाले दुर्गापुर कारखाने पर २७० करोड़ रु. का विनियोग हो चुका है। इस विनियोग के पुरस्कारस्वरूप अब तक दुर्गापुर इस्पात कारखाने में सार्वजनिक क्षेत्र को ८४ करोड़ रु. का घाटा सहन करना पड़ा है। भिलाई तथा राउरकेला में प्रति-व्यक्ति उत्पादन का स्तर ९८ टन तथा ५२ टन प्रति वर्ष रहा है, किंतु दुर्गापुर


आधुनिका की चाह
आधुनिक साड़ियां
हमारे पास सब प्रकार की साड़ियां ··· मनमोहक रंगों में
डिज़ाईन ४००० वर्ष पुरातन ···
किन्तु आने वाले कल जैसे नवीन·
राम चन्द्र
कृष्ण चन्द्र
साड़ी स्टोर
पूर्णतया वातानुकूलित
आर्य समाज रोड,
करोल बाग,
नई दिल्ली-५
फोन : ५६६३३०

में यही औसत केवल ४५ टन रह पाया है। दुर्गापुर की औद्योगिक बस्तियाँ बसने के बजाय उजड़ती जा रही हैं। १९६७-६८ में ५८ विनियोगकर्ताओं ने भूमि के लिए दुर्गापुर-विकास परिषद को प्रार्थना-पत्र दिये थे। अगले ही वर्ष यह संख्या घट कर केवल तीन रह गयी, जिन में से केवल एक ही विनियोगकर्ता ने नये विनियोग का साहस किया।

लगातार होने वाली हड़तालों के कारण इस्पात-उत्पादन में जो कमी आयी है, उसी के परिणामस्वरूप बाजार में पिछले एक वर्ष के दौरान उस के मूल्यों में ५० प्रतिशत से भी अधिक वृद्धि हो चुकी है। एक ओर लोहा निर्माण-कार्य का आधार बन चुका है, दूसरी ओर उस की पूर्ति में यह अव्यवस्था मूल्य-स्तर में अपरिमित वृद्धि कर उपभोक्ताओं को वेहद ऊँचे दाम देने के लिए बाध्य कर रही है।

निजी क्षेत्र के उद्योग-धंधों को भी औद्योगिक अशांति के परिणामस्वरूप हड़ताल या तालावंदी के रूप में काफी नुकसान उठाना पड़ा है। पश्चिमी बंगाल तथा विशेष रूप से कलकत्ता में कई निजी प्रतिष्ठान महीनों वंद पड़े रहे हैं। इस की वदौलत न केवल आम वस्तुओं के मूल्य-स्तर में वृद्धि हुई है, अपितु उन लाखों श्रमिकों को भी नुकसान हुआ है जो इन कारखानों के वंद रहने के कारण अपनी मजदूरी से भी वंचित रहे। किसी भी कारखाने के वंद रहने का नुकसान केवल एक पक्ष को नहीं होता।

यदि श्रम-असंतोष के बढ़ने का कारण श्रमिकों के साथ अन्याय में वृद्धि होना होता तो उस का कोई औचित्य हो सकता था, किंतु औद्योगिक अशांति के वर्तमान दौर के पीछे जो भी सवाल उभरे हैं वे एकदम छिछले एवं स्वार्थपरक रहे हैं। प. बंगाल के सर्वाधिक असंतोष-ग्रस्त क्षेत्र दुर्गापुर का ही उदाहरण इस संदर्भ में लिया जा सकता है। वहाँ निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र (जिस का कुल विनियोग लगभग ७०० करोड़ रु. है) द्वारा श्रमिकों को दी जाने वाली मजदूरी कभी तुलनात्मक दृष्टि से ऐसी नहीं थी कि उसे अन्याय-पूर्ण ठहराया जा सकता। यह सब होने के बाद भी कुछ श्रम-संघ अपने प्रभाव में अभिवृद्धि करने के उद्देश्य से कई बार अनुचित माँगें पेश करते रहे हैं।

विभिन्न श्रम-संघों के बीच आपसी प्रतिस्पर्धा इस ऊहापोह की स्थिति के लिए सब से अधिक जिम्मेदार रही है। 'इंटक' तथा 'एटक' के बीच विवाद हमेशा बना रहता है। 'इंटक' जहाँ सरकारी हस्तक्षेप का समर्थन करती है वहाँ 'एटक', जो साम्यवाद-समर्थक श्रम-संघ है, हमेशा इस का विरोध करती है। फिर चाहे वह दुर्गापुर इस्पात कारखाना हो या कोई और जगह, दोनों एक-दूसरे को नीचा दिखाने पर तुल जाते हैं।

सार्वजनिक क्षेत्र के कारखानों का प्रबंध भी औद्योगिक अशांति के लिए

जीवनोपयोगी साहित्य
(हरिकिशन दास अग्रवाल द्वारा लिखित)

	मूल्य
१. पीस आफ माइण्ड (अंग्रेजी)	३.००
२. क्वाइटर मोमेंटस (,,)	२.००
३. संसार का सार (हिन्दी)	३.००
४. ज्ञान साधना (,,)	२.००
५. विज्ञान से ज्ञान (,,)	१.००
६. वेदान्त नवनीत (,,)	१.५०
७. आध्यात्मिक पिक्टोरियल (अंग्रेजी-हिन्दी)	४.००
८. वेदान्त का सरलबोध (हिन्दी)	१.००
९. मुमुक्षु (उपन्यास) (,,)	५.००
१०. मन की शान्ति (,,)	४.००
११. हमारी परम्परा (,,)	२.००
१२. आराम सुख शान्ति और आनन्द (हिन्दी)	०.५०
१३. अपनी ओर इशारा (,,)	१.००
१४. अध्यात्मिक डायरी (हिन्दी-अंग्रेजी) १९७१	६-००
१५. व्यावहारिक जीवन और परमात्मा (हिन्दी)	१.००
१६. श्मशान यात्रा (,,)	०.५०
१७. मेरे १०८ गुरू (,,)	३.००
१८. सजगता (,,)	१.००
१९. वेदान्त का वैज्ञानिक मनन (,,)	१.००
२०. अविरोध-निरोध और स्व-बोध (प्रेस में)	१.००
२१. चिन्ता और निश्चिन्तता (,,)	१.००

नोट : कृपया पुस्तक विक्रेता पत्र-व्यवहार करें।

तुलसी मानस प्रकाशन
गुप्ता मिल्स स्टेट, रे रोड़, बंबई-१०

पर्याप्त उत्तरदायी रहा है। प्रतिनिधि श्रम-संघ को ले कर उठने वाले विवाद को सुलझाने में प्रबंधक वर्ग जब तत्परता नहीं दिखाता तब श्रमिक दल बना कर अपनी मनमानी पर उतर आते हैं। यहाँ तक कि सुरक्षा-दल के सदस्यों ने भी दुर्गापुर में अव्यवस्था फैलाने में ही योग दिया।

ऐसा प्रतीत होता है कि श्रमिकों को प्राप्त हड़ताल करने का अधिकार हमारे यहाँ दुरुपयोग का ही शिकार अधिक हुआ है। देश की आर्थिक स्थिति को दृष्टिगत रखते हुए श्रम-संघों ने कभी उत्तरदायित्व की भावना का परिचय नहीं दिया है। साम्यवादी प्रभाव-क्षेत्र में तो श्रमिकों की दशा इसीलिए अन्य क्षेत्रों की तुलना में और भी खराब रही है। श्रम-संघों को हमेशा यह भ्रांति बनी रही है कि महज हिंसात्मक प्रदर्शन या दबाव से मजदूरी बढ़वायी जा सकती है तथा उस के लिए उत्पादन बढ़ाने का उत्तर-दायित्व लेना आवश्यक नहीं है। देश में मजदूरी-प्रोत्साहित मुद्रा-स्फीति इसीलिए निरंतर उत्पादन-लागत को बढ़ा कर मूल्य-वृद्धि करने से बाज नहीं आयी है। औद्योगिक शांति-स्थापना के लिए हड़ताल के अधिकार के नियंत्रण तथा सार्वजनिक क्षेत्र में अधिक सक्रिय सचेष्ट एवं दृढ़ श्रम-नीति की सर्वाधिक आवश्यकता है।

(प्रवक्ता अर्थशास्त्र, राजकीय महाविद्यालय, बारां, राजस्थान)

●

महकते जीवन-फूल

• शंकरदेव विद्यालंकार

सन १९१६ की बात है। विनोबाजी काशी में विद्याभ्यास करते थे। वे एक ताला खरीदने गये। दुकानदार ने ताले की कीमत दस आने बतायी।

"यह ताला तीन आने से अधिक का नहीं मालूम पड़ता। परंतु तुम कहते हो तो तुम पर विश्वास रख कर दस आने देता हूँ।"

विनोबाजी प्रतिदिन भ्रमण के लिए इस दुकान के आगे से हो कर जाते थे। दुकानदार उन्हें देखा करता था। करीब पंद्रह दिन के बाद दुकानदार ने विनोबाजी को बुला कर कहा, "उस ताले की कीमत तीन आना ही थी। लो, यह सात आने वापस ले लो।"

विनोबाजी कहते हैं—"दुकानदार के शब्द सुन कर मेरी आँखों में आँसू आ गये। भगवान ने मुझे सत्यनिष्ठा का पाठ पढ़ाया। सत्यनिष्ठ मनुष्य को दूसरे पर विश्वास रखना ही चाहिए।"

देशबंधु चित्तरंजनदास के दादा की अतिथि-सेवा उदाहरणीय थी।

घरवालों को उन का यह आदेश था कि मेहमान के लिए घर के दरवाजे चौबीसों घंटे खुले रहने चाहिएँ। आगंतुकों के स्वागत के कारण उन की दादी को अकसर सोना भी मुश्किल हो जाता था।

आज्ञा का पालन ठीक प्रकार से होता है या नहीं, इस बात की जाँच करने के लिए दादा दूसरे गाँव चले गये और साधु के वेश में रात के दो बजे घर पर आये। दादी कार्यों से निवृत्त हो कर सोने की तैयारी कर रही थीं। साधु को देख कर बोलीं, "लो, यह मुआ मेहमान इतनी रात गये आ डटा!" ये शब्द सुन कर 'साधु' क्रोध से झल्ला उठे और पाँच वर्ष तक घर का त्याग कर दिया।

काका कालेलकर जापान गये थे। एक दुकान पर जा कर उन्होंने

कहा, "मुझे पुष्प-सज्जा के बारे में एक अच्छी किताब चाहिए।"

दुकानदार ने पुस्तक दी। पुस्तक उत्तम थी, परंतु उस की जिल्द अच्छी नहीं बँधी थी, अतः उन्होंने दूसरी प्रति माँगी। दूसरी कोई प्रति नहीं थी। अतः दुकानदार ने विवशता प्रकट की और बाद में अच्छी जिल्द की पुस्तक मँगवाने का वचन दिया।

काकासाहब के पास समय नहीं था, अतः वे खराब जिल्द की पुस्तक ही लेने को तैयार हो गये।

दुकानदार बोला, "क्षमा कीजिये, यह प्रति मैं आप को नहीं दे सकूँगा! यह पुस्तक मेरे देश का प्रतीक-रूप है। खराब जिल्द की पुस्तक द्वारा मैं अपने देश की प्रतिष्ठा पर आँच नहीं आने दूँगा। आप अपना पता लिख जाइये। कल ठीक बारह बजे पुस्तक आप को मिल जायेगी।"

अगले दिन ठीक समय पर अच्छी जिल्द की पुस्तक उन्हें मिल गयी। जापान की राष्ट्रभक्ति का यह एक ज्वलंत उदाहरण है।

संत फ्रांसिस अपने देश इटली में भ्रमण कर रहे थे। काँटों और पत्थरों की ठोकरों से उन के पैर फट गये। उन से खून निकलने लगा, फिर भी वे आगे बढ़ते गये।

एक गाँव में फ्रांसिस के एक पुराने दोस्त ने पैरों की अवस्था निहार कर उन्हें अपना घोड़ा दे दिया।

मार्ग में एक वृद्ध और उस की कन्या मिली। दुर्बलता के कारण वृद्ध बहुत धीमे-धीमे चल रहा था। फ्रांसिस ने पूछा, "आप के पास यात्रा के साधन नहीं है?" वृद्ध ने जवाब दिया, "नहीं, गरीब हूँ। साधन कहाँ से जुटाऊँ? जमाई कहता है, घोड़ा ला दीजिये, तभी आप की पुत्री को रख सकता हूँ। मेरे पास घोड़ा खरीदने का कोई साधन नहीं। अतः अपनी पुत्री को अपने घर ले जा रहा हूँ।"

फ्रांसिस ने सोचा—'मेरी अपेक्षा इस वृद्ध को घोड़े की अधिक आवश्यकता है।' अतः उन्होंने अपने सारे सामान के साथ घोड़ा वृद्ध को सौंप दिया।

देशबंधु चित्तरंजनदास के पिताजी सड़सठ हजार का कर्ज छोड़ कर परलोक सिधारे थे। उन्होंने अपने को दिवालिया भी घोषित किया था। कानून के अनुसार उसे भरने के लिए चितरंजनजी बाध्य नहीं थे। १८९३ में विलायत से लौट कर वे वकालत करने लगे। कठिनाइयों का पार नहीं था। पंद्रह वर्ष तक उन्होंने बड़ी मितव्ययिता से काम चलाया और पैसा एकत्र किया। एक दिन उन्होंने बाबू सुरेंद्रनाथ मल्लिक को पत्र लिखा—"मेरे स्वर्गीय पिताजी ने आप के दिवंगत पिता से सड़सठ हजार रुपये का कर्ज लिया था। प्रभु-कृपा से अब मैं उसे चुकाने में समर्थ हूँ।"

पत्र पढ़ कर मल्लिक महाशय आश्चर्य

विमूढ़ हो गये। पैसे चुकाने का समय भी बीत चुका था। किसी ने देशबंधु से पैसे माँगे भी नहीं थे, परंतु देशबंधु ने देनदारों का एक-एक पैसा चुका दिया।

जार्ज हर्बर्ट इंगलैंड के एक सुकवि हो गये हैं। उन्हें संगीत से भी बहुत प्रेम था। एक बार उच्चकोटि का एक संगीत-कार्यक्रम था। जार्ज हर्बर्ट संगीत का आनंद लेने के लिए घर से रवाना हुए। रास्ते में उन्होंने देखा कि एक गाड़ी खड्ड में उलट गयी है और घोड़ा कीचड़-भरे पानी में फँस गया है। गाड़ीवान की सहायता के लिए और कोई न था।

हर्बर्ट ने कोट उतारा, बाँहें चढ़ायीं और गाड़ीवान की मदद करने लगे। दोनों के प्रयत्न करने पर गाड़ी और घोड़े को बाहर निकाल लिया गया। गाड़ीवान को कुछ पैसे दे कर हर्बर्ट संगीत घर की ओर बढ़ने लगे। उन के कपड़े कीचड़ में सन गये थे।

मित्रगण हर्बर्ट को इस रूप में देख कर हैरान रह गये। हर्बर्ट ने संक्षेप में सारा किस्सा बताते हुए कहा, "इस घटना के कारण जो संगीत ले कर मैं आया हूँ उस की मधुरता को मैं ही जानता हूँ! यदि मैं उन अभागे प्राणियों को खड्ड में फँसा छोड़ कर आ गया होता तो मेरे अंतःकरण से विसंवादी स्वर निकलते रहते और मेरा जीवन-संगीत विच्छिन्न हो जाता।"

सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक चंद्रशेखर वेंकट रामन की पार्थिव काया का तिरोधान हो गया, किंतु उन की उपलब्धियाँ अनगिन पीढ़ियों को प्रेरणा देती रहेंगी

वे प्रकाश के हो गये

● निरंकार सिंह

अपनी वैज्ञानिक प्रतिभा तथा नवीन आविष्कारों से चंद्रशेखर वेंकट रामन ने उस समय भारत का मस्तक ऊँचा किया था जब हम परतंत्रता के बंधन में जकड़े हुए थे। विज्ञान उन का धर्म था। आखिरी सांस तक वे उस के प्रति निष्ठावान रहे। लोक-कल्याण की पुनीत भावना से प्रेरित हो कर उन्होंने अपना संपूर्ण जीवन समष्टि के हित में उत्सर्ग कर दिया। भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में उन की उपलब्धियाँ महान हैं। प्रकाश पर उन की अद्‌भुत खोज के कारण उन्हें भौतिक विज्ञान में नोबल पुरस्कार मिला था। ब्रिटेन, अमरीका, फ्रांस तथा रूस के वैज्ञानिक और शैक्षणिक संस्थानों ने उन्हें सम्मानित किया। ब्रिटेन की सुप्रसिद्ध रॉयल सोसाइटी ने उन्हें अपना फेलो चुना। रूस ने उन्हें 'लेनिन पुरस्कार' से सम्मानित किया। भारत ने उन्हें 'भारतरत्न' प्रदान किया।

२१ नवंबर, १९७० को उन का पार्थिव शरीर इस संसार से उठ गया, किंतु उन का यशःकाय सर्वदा विद्यमान रहेगा। उन की जीवन-साधना वैज्ञानिकों को सतत प्रेरणा देती रहेगी।

श्री रामन के अनुसंधानों की, जो विज्ञान-जगत को विरासत के रूप में मिले हैं, एक लंबी तालिका है। उन्होंने किसी विदेशी विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त नहीं की थी और न ही उन्होंने किसी विदेशी प्रयोगशाला में अनुसंधान-कार्य किया था।

उन्होंने अपनी महत्त्वपूर्ण गवेषणाओं के साधन भी भारत में ही जुटाये थे। साधारण साधनों और विपरीत परिस्थितियों में भी उच्च कोटि की गवेषणाओं में सफलता पाना उन की विशेषता थी।

श्री रामन का जन्म त्रिचनापल्ली में नवंबर, १८८८ में हुआ था। वे बचपन से ही प्रतिभा के धनी थे। बारह वर्ष की उम्र में उन्होंने मैट्रीकुलेशन परीक्षा पास कर ली थी। एम. एस-सी. परीक्षा में भौतिक विज्ञान ले कर मद्रास विश्वविद्यालय में प्रथम रहे।

उन के विद्यार्थी-जीवन की एक रोचक घटना है। जब वे बी. एस-सी. कक्षा में पहले दिन आये तो एक प्रोफेसर ने उन्हें छोटी कक्षा का विद्यार्थी समझ कर निकल जाने को कहा। बाद में जब प्रोफेसर को वास्तविकता का पता चला तो बड़ा आश्चर्य हुआ! उस समय रामन की अवस्था चौदह वर्ष की थी।

विद्यार्थी-जीवन में ही रामन को नये-नये प्रयोग करने की उत्कट इच्छा होती थी। सौभाग्य से प्रिंसिपल ने उन की विशिष्ट प्रतिभा को पहचान कर मनचाहे प्रयोग करने की छूट दे दी। रामन का अधिकांश समय तरह-तरह के प्रयोग करने में ही बीतता था।

दुबले-पतले और कम उम्र वाले रामन को घंटों पुस्तकालय में अध्ययन करते या प्रयोगशाला में खड़े-खड़े प्रयोग करते देख साथी और अध्यापक आश्चर्य में पड़ जाते थे। वस्तुतः उन के खोज-कार्यों का प्रारंभ विद्यार्थी-जीवन से ही होता है। उन्होंने वर्णपट-मापक (स्पेक्ट्रोमीटर) पर प्रयोग करते समय एक 'थीसिस' लिखी जो १९०६ में लंदन की 'फिलासोफिकल मैगजीन' में प्रकाशित हुई। उस समय उन की अवस्था केवल १८ वर्ष थी।

पढ़ाई के बाद रामन कलकत्ता में 'डिप्टी एकाउंटेंट जनरल' नियुक्त हो गये। कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री आशुतोष मुखर्जी ने रामन से भौतिक विज्ञान के प्रोफेसर का पद ग्रहण करने का अनुरोध किया। रामन ने अधिक वेतन वाला पद त्याग कर प्रोफेसर का पद ग्रहण कर लिया। १९३१ में वे इंगलैंड में हुई विश्वविद्यालय-कांग्रेस में कलकत्ता विश्वविद्यालय की ओर से प्रतिनिधि बना कर भेजे गये। वहाँ उन्होंने अपने व्याख्यानों द्वारा संसार-भर के वैज्ञानिकों के सम्मुख अपनी योग्यता का परिचय दिया। लौटने पर उन के सम्मान में कलकत्ता विश्वविद्यालय ने उन्हें डी. एस-सी. की उपाधि से विभूषित किया। उन की महत्त्वपूर्ण गवेषणाओं के कारण १९२३ में लंदन की रॉयल सोसाइटी ने उन्हें अपना सदस्य बनाया था।

उन्होंने देश के नवयुवकों में विज्ञान के प्रति प्रेम पैदा किया और उन्हें भरपूर प्रोत्साहित किया। बंगलौर में उन की अकादमी ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। उन की उत्कट कामना थी कि भारत में

वैज्ञानिक अनुसंधान अन्य प्रगतिशील देशों के समान बढ़ें। ऐसा न होते देख ही उन्होंने भारत सरकार की विज्ञान-संबंधी नीति की कड़ी आलोचना की थी।

उन्होंने प्रकाश के संबंध में एक विशिष्ट अनुसंधान किया था, जो उन्हीं के नाम से 'रामन-इफेक्ट' की संज्ञा से विख्यात हुआ। इसी खोज के लिए उन्हें 'नोवल पुरस्कार' मिला था। एक विदेशी ख्याति-प्राप्त वैज्ञानिक ने कहा था कि किसी एशियावासी को नोवल पुरस्कार की महत्त्वाकांक्षा नहीं करनी चाहिए, तव रामन ने कहा था—'अगले वर्ष मैं वैज्ञानिक जगत को हिला दूंगा।' और उन्होंने सचमुच अपने आविष्कार से दुनिया में तहलका मचा दिया।

'रामन-इफेक्ट' विभिन्न वस्तुओं की आंतरिक रचना का विशद चित्र अर्थात उस के गुणों का एक विस्तृत इतिहास प्रस्तुत करता है। उन के इस आविष्कार से अणुओं के अध्ययन, रंगीन फोटोग्राफी, संश्लेपणात्मक रवड़ आदि के निर्माण तथा अनेक कार्यों में वहुत मदद मिली। 'रामन-इफेक्ट' की सहायता से वस्तुओं की शुद्धता, प्रतिशत मात्रा और उन की पहचान की जाती है। क्रिस्टल भौतिकी, न्यूक्लियर भौतिकी तथा रसायन के तीनों महत्त्वपूर्ण अंगों—कार्वनिक, अकार्वनिक तथा भौतिक रसायन में इस का उपयोग किया जाता है। एक ब्रिटिश आलोचक ने कहा कि 'रामन-इफेक्ट' से अनेक खोजों का मार्ग उतना ही प्रशस्त हो गया है जितना कि एक्स-रे के आविष्कार तथा रेडियो-सक्रियता-संवंधी कार्यों से हुआ था।

रामन ने क्रिस्टल की वनावट के विषय में अनेक नवीन तथ्य ज्ञात किये, जिन के फलस्वरूप सैद्धांतिक और प्रायोगिक भौतिकी में वड़ी प्रगति हुई और परमाणुओं एवं वहुत-से अणुओं की संरचना तथा ज्यामितीय सजावट के विषय में बिलकुल सही ज्ञान प्राप्त करना संभव हो गया। उन्होंने स्वर और राग की दृष्टि से विदेशों में हेय समझे जाने वाले भारतीय वाद्य-यंत्रों की श्रेष्ठता भी विज्ञान द्वारा सिद्ध की।

रामन के अन्य आविष्कारों में चुंबकीय शक्ति, एक्स-रे, समुद्री जल तथा वर्ण और ध्वनि पर किये गये प्रयोग उल्लेखनीय हैं। १९६० में रामन ने एक अन्य महत्त्वपूर्ण खोज की। उन्होंने आँख के रेटिना (काला भाग) को देखने की विधि का आविष्कार किया। आज से लगभग तीन वर्ष पहले उन्होंने पृथ्वी के घूर्णन तथा वायुमंडल की स्थिरता से संवंधित अनुसंधान-कार्य किया। १९६८-६९ में फूलों के रंग पर खोज की। उन्होंने बताया कि फूलों के रंगीन होने का संबंध उन की प्रकाश-शोषण क्षमता से है। नीले से ले कर बैंगनी रंगों वाले फूलों में क्रमशः लाल, पीले और दो वर्णपटों के अनुकूल शोषण-क्षमता देखी गयी है। इसी प्रकार गुलाबी से ले कर गहरे लाल रंगों वाले फूलों में यही क्रम विद्यमान है। बहुत-से

फूलों में पुष्पवर्गीय अंश को सरलतापूर्वक अलग निकाला जा सकता है। इस के लिए केवल एसीटोन की प्रतिक्रिया करा देना काफी है। इस का वर्णक्रम भी वैसा ही मिलता है जैसा कि प्राकृतिक अवस्था में फूलों का वर्णक्रम होता है और काफी अवधि तक यह रंग यथावत रहता है।

अपने जीवन के अंतिम वर्षों में भी वे रामन रिसर्च इंस्टीट्यूट में अनुसंधान कर रहे थे। उस की स्थापना के अवसर पर उन्होंने ओजस्वी भाषण दिया—

"मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि वैज्ञानिक अन्वेषण-कार्य के लिए एक ऐसे संस्थान की स्थापना की जाये जो हमारे प्राचीन देश के गौरव के सर्वथा अनुकूल हो, जहाँ हमारे देश के जिज्ञासु अन्वेषक ब्रह्मांड के रहस्यों के उद्घाटन का प्रयत्न कर सकें और इस प्रकार ब्रह्मांड के नियंता परमपिता परमात्मा के गुणगान करने में समर्थ हो सकें। परंतु इस उद्देश्य की पूर्ति दैवी अनुकंपा से ही हो सकती है।"

(२६, ब्रोचा, बी. एच. यू. वाराणसी-५)

डॉ. सी. वी. रामन फूलों के बहुत शौकीन थे। फूल तोड़ना वे पाप समझते थे। ७ नवंबर, १९७० को उन का जन्म-दिवस था। चिकित्सकों और मित्रों ने उन का कमरा फूलों से सजाना चाहा, तो उन्होंने कहा, "फूलों को टहनियों पर ही रहने दीजिये। बिना तोड़े ही उन के सौंदर्य का आनंद लिया जा सकता है।"

अपने शोध-संस्थान में उन्होंने पुष्पवाटिकाएँ लगा रखी थीं।

४

डॉ. पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी से नागार्जुनजी की साहित्य-चर्चा हो रही थी, तभी एम. ए. (हिंदी) की दो छात्राएँ वहाँ आयीं। बख्शीजी ने उन्हें बताया कि ये नागार्जुनजी हैं जिन की कविताएँ आप लोगों के पाठ्यक्रम में हैं। तुरंत एक छात्रा ने नागार्जुनजी को नोटबुक देते हुए कहा, "कृपया इस में हस्ताक्षर कर दीजिये?"

नागार्जुनजी ने मुसकराते हुए हस्ताक्षर कर दिये और ये पंक्तियाँ लिख दीं—

अगर कीर्ति का फल चखना है
कलाकार ने फिर-फिर सोचा
आलोचक को खुश रखना है

मेरे जीवन के प्रेरक तीन ग्रंथ

● डॉ॰ चंद्रशेखर वेंकट रामन

मेरे जीवन पर इन तीन पुस्तकों का बड़ा प्रभाव पड़ा है—

(१) 'लाइट ऑव एशिया' (बुद्ध-चरित्र)—ब्रिटिश कवि एडविन आर्नल्ड-कृत इस काव्य-ग्रंथ में बुद्ध-चरित्र का वर्णन है। यह ग्रंथ कवि की जीवन-साधना का फल है। सिद्धार्थ के निर्वाण की गाथा ने मुझे बड़ा प्रभावित किया। इस के पढ़ने से मुझे प्राचीन भारत और उस के तत्त्व-चिंतन का कुछ ज्ञान हुआ। इस ग्रंथ से मुझे सत्य की खोज के लिए प्रेरणा मिली।

(२) 'द एलिमेंट ऑव यूक्लिड' (यूक्लिड के मूल-सिद्धांत)— प्रसिद्ध ज्यामितिज्ञ के इस ग्रंथ की छाप कई शताब्दियों तक रही है। इस से हमें बौद्धिक अनुशासन प्राप्त होता है। ज्यामिति का महत्त्व अपना ही है। शक्लें और रेखाएँ हमें असीम ज्ञान प्रदान करती हैं।

छात्रावस्था में मेरे लिए ज्यामिति सीखना एक बड़ी समस्या थी। मुझे उस की विधिवत्ता से घबराहट पैदा हो जाती थी। किंतु कुछ वर्ष बाद मेरी धारणा बदल गयी। सामान्यज्ञान के साथ ज्यामिति का असाधारण संबंध है। प्रत्येक धातु, स्फटिक, पत्ता, फूल, फल और पदार्थ मुझे ज्यामिति का संदेश देता है। यूक्लिड का ज्ञान मेरे लिए संगीत शास्त्र की भाँति है, जिस में मैं प्रकृति की लीला देखता हूँ। इस ने अज्ञान का परदा दूर करके मुझे सत, चित और आनंद का संदेश दिया है।

(३) 'द सेंसेशन ऑव टोन' (ध्वनि-संवेदन)—जरमन प्रोफेसर हैल्म हाल्ट्स टर्मन ल्युडविश का यह प्रसिद्ध ग्रंथ है। उन्नीसवीं शताब्दी में भौतिक विज्ञान को ऊँचे स्तर पर लाने का श्रेय प्रो. ल्युडविश को है। इस पुस्तक में संगीत और संगीत-वाद्यों का विश्लेषण किया गया है। विचारों की गहराई, अंतर्दर्शन और भाषा की सरलता ने सोने में सुगंध पैदा कर दी है। मेरे लिए इस पुस्तक ने वही काम किया जो श्रीकृष्ण ने अर्जुन को विश्वरूप दिखा कर किया था। मेरे बौद्धिक विकास में ल्युडविश की देन महान है। इस पुस्तक ने मेरी खोज की कई गुत्थियों को सुलझाने का काम किया है।

प्रस्तोता : डॉ॰ सीताराम सहगल

मौसम का सौंदर्य

एक व्यक्ति अपने मित्र को अपना कीमती संग्रह दिखा रहा था। चीनी मिट्टी का एक बहुमूल्य बरतन दिखाते हुए वह बोला कि इस के जोड़ का दूसरा बरतन संसार में कहीं नहीं है। इस पर मुझे तीन हजार रुपये खर्च करने पड़े।

मित्र ने आशंका व्यक्त की, "यदि यह बरतन गिर कर टूट जाये तो!"

"कोई बात नहीं, मैं ने इस का बीमा करा रखा है," उत्तर मिला।



एक आयरिश तरुण कुछ बैल बेचने बाजार जा रहा था। एक अँगरेज पर्यटक ने रास्ते में उस से पूछा, "क्यों, एक बैल का कितना दाम मिल जाता है?"

"दस पौंड," उत्तर मिला।

पर्यटक ने सुझाव दिया कि यदि तुम इन बैलों को इंगलैंड भेज दो तो तुम्हें दूना दाम मिलेगा।

आयरिश तरुण ने झट उत्तर दिया, "क्यों नहीं, क्यों नहीं, यदि मैं इस नदी को नरक भेज दूं तो एक-एक बूंद के लिए दस पौंड मिल जायेंगे।"



श्रीमती रैंडोल्फ चर्चिल ने बर्नार्ड शॉ को भोजन पर बुलाया। इस पर शॉ बिगड़ कर बोले, "नहीं, मुझे आप का निमंत्रण स्वीकार नहीं है। मैं ने ऐसा कोई अपराध नहीं किया कि आप मेरी जानी-मानी आदत पर चोट करें।" (वे भोजन के लिए किसी के घर नहीं जाते थे।)

श्रीमती चर्चिल ने तपाक से उत्तर दिया "आप की आदतों के बारे में मुझे कुछ पता नहीं, पर मुझे आशा है कि वे आप के आचरण-जैसी खराब तो न होंगी!"

बर्नार्ड शॉ मात खा गये और उन्होंने श्रीमती चर्चिल को एक लंबा माफीनामा लिख भेजा।

एक कलाकार ने युद्धक्षेत्र से लौट कर अपने चित्रों की प्रदर्शनी बिक्री की दृष्टि से लगायी। किसी धनी दर्शक ने एक चित्र की ओर इंगित करके पूछा, "यह क्या है ?"

कलाकार ने उत्तर दिया, "यह मेरी सर्वश्रेष्ठ कलाकृति है। इस में मैं ने युद्ध की संपूर्ण भीषणता चित्रित कर दी है।"

"तुम सफल रहे! मैं ने जीवन में कभी ऐसी भीषण कृति नहीं देखी थी!" दर्शक ने मुँह मोड़ कर कहा।



सतीश बाबू ने दंत-चिकित्सक को दो मिनट रुकने के लिए कहा और जेब से रुपये निकाल कर गिनने लगे। दंत-चिकित्सक ने कहा "ऐसी कोई जल्दी नहीं है, फीस बाद में ले लूँगा।"

"फीस दे भी कौन रहा है! इन्हें तो मैं अपनी सावधानी के लिए गिन रहा हूँ," सतीश बाबू ने बड़े इतमीनान से जवाब दिया।



वकील साहब को अकसर भूल जाने की आदत थी। एक बार वे एक अन्य शहर में अपने मुवक्किल से बातचीत करने पहुँचे, पर वहाँ जा कर वे मुवक्किल का नाम ही भूल गये। उन्होंने अपने मुंशी को तार भेजा—नाम क्या है ?

"लक्ष्मीनारायण"—मुंशी ने वकील साहब का ही नाम लिख भेजा।



एक डॉक्टर ने अपने सहयोगी से कहा, "आज सुबह एक मरीज को ऑपरेशन से पूर्व क्लोरोफार्म दिया, पर उसे चक्कर तक नहीं आया!"

"ऐसा क्यों हुआ होगा ?"

"बाद में पता चला कि वह मरीज राशन की दुकान करता है।"



ऐसे देखा नहीं करो

मन होता है पारा
ऐसे देखा नहीं करो

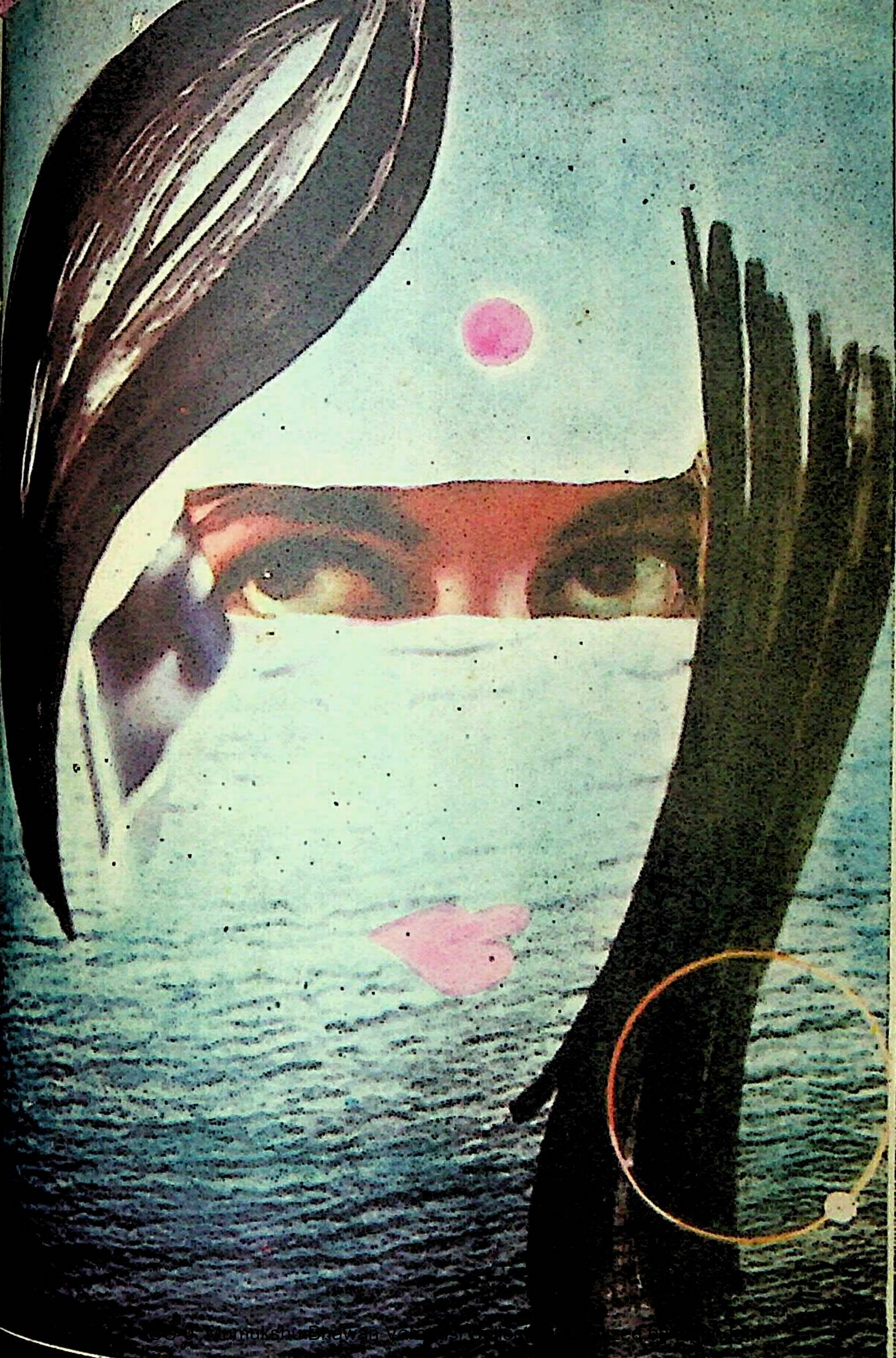
जाने तुम ने क्या कर डाला उलट-पुलट मौसम
कभी घाव ज्यादा दुखता है और कभी मरहम
जहाँ-जहाँ ज्यादा दुखता है
छू कर वहीं दुबारा
ऐसे देखा नहीं करो

ये मुसकान तुम्हारी डूबी हुई शरारत में
उलझा-उलझा ख़त हो जैसे साफ़ इबारत में
रह-रह कर दहकेगा
प्यासे होंठों पर अंगारा
ऐसे देखा नहीं करो

कौन बचाकर आँख सुबह की नींद उतार गया?
बूढ़े सूरज पर पीछे से सीटी मार गया?
मुझ पर शक पहले से है
तुम करके और इशारा
ऐसे देखा नहीं करो

होना-जाना क्या है जैसा कल था वैसा कल
मेरे सन्नाटे में बस ख़ामोशी की हलचल
अँधियारे की नेमप्लेट पर
लिख कर तुम 'उजियारा'
ऐसे देखा नहीं करो

—रामानन्द 'दोषी'





तो क्या बयान करते

हम थे उदासियाँ थीं खामोश गुलमुहर था
हम दर्द को न गाते तो क्या बयान करते

किस से बसंत माँगें हर चीज अनमनी है
ईमान को बचाओ तो जान पर बनी है
खुद जालसाज भीड़ों को हो गये समर्पित
मन को कहाँ-कहाँ तक हम सावधान करते

मन की दशा हुई यह हालाँकि हाल ही में
ज्यों दूध फट गया हो पहले उबाल ही में
अस्तित्व को असंगति के कर दिया हवाले
हम घाव-घाव जीवन पर क्या गुमान करते

जीवनविहीन हैं जब क्यों मौत से डरें हम
तुम संधिपत्र लाओ हस्ताक्षर करें हम
बिखरे बिसातियों के सामान की तरह जब
खुद बन गये तमाशा क्या और दान करते

—रामावतार त्यागी

(एम-६६वी, मालवीयनगर, नयी दिल्ली-१७)



एक लड़ाई भूख के खिलाफ़

कृषिक्रांति के अग्रदूत डॉ. बोरलौग

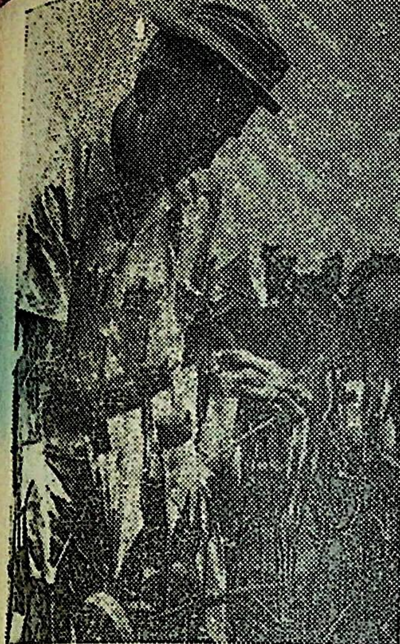
● तुरशनपाल पाठक



"शांति न मंदिर-मसजिद में मिलती है, न महलों और गुफाओं में ही। वह तो खेतों में अन्न के पौधों में वास करती है।"

इस वर्ष का नोबल शांति-पुरस्कार कृषि-वैज्ञानिक डॉ. नॉर्मन अर्नेस्ट बोरलौग को मिलने से जार्ज हरबर्ट का उपर्युक्त कथन पूरी तरह सार्थक हुआ है। विश्व इतिहास में यह पहला अवसर है जब किसी कृषि वैज्ञानिक को इस सम्मान से गौरवान्वित किया गया है। डॉ. बोरलौग ही वे व्यक्ति हैं जिन्हें भारतीय 'कृषिक्रांति' यानी 'हरितक्रांति' की सफलता का श्रेय दिया जा सकता है।

अंतरराष्ट्रीय मक्का तथा गेहूँ सुधार केंद्र (मेक्सिको शहर) के अध्यक्ष ५६ वर्षीय



डॉ. वोरलौग का जन्म क्रेसको, आयोवा, अमरीका में हुआ था। कृषि-अनुसंधान में उन की बचपन से ही रुचि थी। उन्होंने इस क्षेत्र में जो ऐतिहासिक कार्य किये उन का लाभ इस समय विश्व के उन्तीस विकासशील देशों ने उठाया है, जिस में भारत अग्रणी है। वे सर्वप्रथम सन १९६३ में भारत आये थे। तब से निरंतर उन का सहयोग भारतीय कृषि-वैज्ञानिकों को मिलता रहा है।

प्रथम भारत-यात्रा के समय वे 'बौने गेहूँ से अधिक पैदावार' का संदेश लाये थे। उन के बीजों को दिल्ली, पंतनगर, लुधियाना, पूसा तथा कानपुर आदि कृषि-अनुसंधान-केंद्रों में उगा कर परखा गया था, जो हर दृष्टि से सफल सिद्ध हुआ।

गेहूँ की 'सोनारा' तथा अन्य बौनी किस्मों की अधिक पैदावार से लोगों की दिलचस्पी में वृद्धि हुई, अतः भारत सरकार को १९६६ में १८,००० टन बीज आयात करना पड़ा था। १९६७ में तो मेक्सिकन-गेहूँ की चार रतुआ रोधी किस्में—'कल्याण सोना', 'सोनालिका,' 'सफेद लरमा' तथा 'छोटी लरमा' भारत में काफी प्रचलित होने लगी थीं।

१९६३ के वाद डॉ. वोरलौग नियमित रूप से गेहूँ के मौसम में भारत के विभिन्न क्षेत्रों के गेहुओं की जाँच-पड़ताल तथा प्रगति देखने के लिए आने लगे। सन १९६३ में ही उन के सम्मान में नयी दिल्ली में एक विशाल समारोह का आयोजन किया गया था जिस में भारतीय कृषि-वैज्ञानिक डॉ. जी. एस. सिरोही ने डॉ. वोरलौग से पूछा था कि आप के बौने गेहूँ का रंग लाल है, पौधा छोटा होने से भूसा भी कम होगा तथा इस किस्म को उपजाऊ जमीन के साथ-साथ खाद भी अधिक चाहिए और पानी भी; फिर भारत की स्थिति में यह लाभकर कैसे हो सकता है? तब डॉ. वोरलौग ने हँसते हुए बौनी किस्म के गेहूँ के पौधों का जो लाभ बताया, उसे सुन कर वैज्ञानिक चकित रह गये थे।

अब 'सोनारा—६४' का लाल रंग पूसा, नयी दिल्ली में एक्स-किरणों के प्रयोग से तथा पंजाब कृषि-विश्वविद्यालय ने अपनी अन्य विधि से बदल कर भारतीय गेहुँओं-जैसा बना दिया है और इस को अब

'सरवती सोनारा-६४' के नाम से संबोधित किया जाता है।

केवल सात वर्ष की अवधि में डॉ. बोरलौग का सपना भारत में आज साकार हो रहा है। इस का प्रमाण इस से अधिक और क्या हो सकता है कि भारत में सन १९५१ में गेहूँ की पैदावार केवल ७० लाख टन थी, जो १९६८-६९ में बढ़ कर १८० लाख टन हो गयी। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि यदि इसी गति से प्रगति होती रही तो भारत यथाशीघ्र अन्न निर्यात करने की स्थिति में आ जायेगा।

डॉ. बोरलौग को ही इस का भी श्रेय है कि पाकिस्तान ने गत वर्ष से चावल का निर्यात आरंभ कर दिया है। लगभग ६५ वर्ष तक चावल का आयात करने के वाद फिलिप्पीन ने भी अब आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली है। अफ़गानिस्तान ने भी गेहूँ के उत्पादन में वृद्धि के लिए नयी योजना तैयार की है।

भारतीय कृषि-अनुसंधान संस्थान के निदेशक डॉ. स्वामीनाथन ने डॉ. बोरलौग के विषय में सन १९६४ में ही कहा था, "उन की मानवता, भुखमरी को समूल नष्ट करने की उन की लगन, बच्चों की-सी सरलता और प्रभावशाली व्यवहार को देख कर मैं यह महसूस करता हूँ कि डॉ. वोरलौग-जैसे कृषि-वैज्ञानिक को यदि नोवल पुरस्कार से भी सम्मानित किया जायें तो मानव-समाज का उन के प्रति यह अल्प आभार प्रदर्शन ही होगा..."

१९६९ में पंजाब कृषि-विश्वविद्यालय ने डॉ. बोरलौग को डॉक्टरेट की मानद उपाधि से सम्मानित करके भारतीय वैज्ञानिकों की ओर से आभार प्रदर्शन किया था। उन्हें अब तक विश्व के लगभग एक दर्जन प्रमुख पुरस्कार मिल चुके हैं। १९६७ में ५४ राष्ट्रीय, राज्यीय तथा क्षेत्रीय कृषि-पत्रिकाओं की अमरीकी कृषि-संपादक संस्था ने उन्हें कृषि की विशिष्ट सेवा के लिए वार्षिक पुरस्कार से सम्मानित किया, तो 'नेशनल काउंसिल ऑव कार्मशियल प्लांट ब्रीड्र्स' ने फरवरी, १९६८ में अपना 'पाँचवाँ आनुवंशिकी तथा पादप-प्रजनन पुरस्कार' दिया। इसी वर्ष अप्रैल में उन्हें संयुक्त राज्य अमरीका की राष्ट्रीय विज्ञान-अकादमी का सदस्य चुना गया। जून, ६८ में 'इंडियन सोसाइटी ऑव जेनेटिक्स' तथा पादप-प्रजनन के वे सदस्य चुने गये और १४ अगस्त, १९६८ को पाकिस्तान की सर्वोच्च सम्माननीय पदवी 'सितारा-ए-इमतियाज' से विभूषित किया गये।

डॉ. वोरलौग ने मेक्सिकन गेहूँ की एक किस्म का नाम मेक्सिको के सोनारा राज्य के नाम पर 'सोनारा-६४' रख कर अपनी कर्मभूमि को विश्व में सम्मान दिलाया तो वहाँ के निवासियों ने भी १७ मई, १९६८ को वहाँ के एक सार्वजनिक मार्ग का नाम 'डॉ. नॉर्मन अर्नेस्ट बोरलौग मार्ग' रख कर उन्हें सम्मानित किया और मार्ग के किनारे लगाये गये नामपट्ट पर 'गेहूँ के देवदूत और याकुई क्षेत्र में कृषि

के उपकारक को कृतज्ञता के साथ' वाक्य लिख कर आभार प्रगट किया।

मेक्सिको के लोग अब सामान्यतः ऐसा कहते हैं कि कृषिक्रांति के लिए चार कारकों का योग होता है—बीज, पानी, खाद और डॉ. बोरलौग।

डॉ. वोरलौग के प्रयासों से पहले भारत की तरह मेक्सिको में भी संसार में सब से कम पैदावार ७०० से ८०० पौंड प्रति एकड़ होती थी, लेकिन अब २,००० से ३,००० पौंड प्रति एकड़ तक।

सितंवर १९५३ में 'अमरीकन इंस्टीट्यूट ऑव बॉयलॉजीकल साइंसेज', विसकोन्सिन के एक सम्मेलन में डॉ. बोरलौग ने 'गेहूँ के किट्ट रोगों के नियंत्रण की नयी विधि' पर अपना शोधपत्र पढ़ा था। बताया जाता है कि अधिक पैदावार वाला बौना गेहूँ इसी से विकसित हुआ।

गेहूँ उगाने के डॉ. बोरलौग के सूत्र में तीन मुख्य बातें हैं। ठीक प्रकार के बीज से पौधा उगाना, जिस भूमि पर बीज उगाया गया है उस की नियमित रूप से उर्वरता कायम रखना तथा पानी की व्यवस्था।

भारत में कृषि-भूमि से वर्षों से पोषक तत्त्व लिये जाते रहे हैं, अतः भमि की प्रकृति के अनसार ठीक बीज वो कर और उर्वरकों द्वारा भूमि में पोषक तत्त्व पहुँचा कर अधिक पैदावार ली जा सकती है। पानी के बिना तो पौधों तथा उर्वरकों—में से किसी से भी पोषक नहीं लिये जा सकते। इन सुधारों द्वारा भारत में चमत्कार हो सकता है। डॉ. वोरलौग ने कहा है—

"भारत का किसान सरकारी फार्मों पर प्रदर्शन देख कर इसलिए प्रभावित नहीं होता है क्योंकि वह समझता है कि सरकार के पास तो धन और खेती की सभी सुविधाएँ हैं अतः वहाँ पैदावार अधिक होना स्वाभाविक है, लेकिन हमारे खेतों पर सुविधाओं के अभाव में वह संभव नहीं है। इसलिए नये प्रयोग किसानों के खेतों पर करके दिखाने से विकास की लहर उसी प्रकार फैल जायेगी जिस प्रकार चिनगारी से जंगल में आग फैल जाती है।"

नोबल पुरस्कार की घोषणा के बाद अभी हाल में डॉ. बोरलौग ने कहा है कि जब तक जनसंख्या की वृद्धि नहीं रोकी जायेगी हरितक्रांति का पूरा-पूरा लाभ उठा पाना कठिन होगा। मैं आजकल गेहूँ का ऐसा बीज तैयार करने का प्रयास कर रहा हूँ जिस के खाने से महिलाओं में बच्चे पैदा करने की शक्ति कम हो जायेगी। (वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली-आयोग, शिक्षा-मंत्रालय, पश्चिमी खंड –७, रामकृष्णपुरम, नयी दिल्ली–२२)

पौधे मनुष्यों से बातें कर सकते हैं। खेद है कि वे केवल कानाफूसी करते हैं। इसलिए यदि आप उन की बात सुनना चाहते हैं तो आप को उन के बहुत निकट पहुँचना होगा। प्रयोगशाला में बैठ कर आप को यही प्रतीत होगा कि पौधे गूँगे हैं।—डॉ. नॉर्मन बोरलौग

दलिया बनाते हुए लगा कि शुचि किसी से बातें कर रही है। लेकिन हाथ रोक कर सुनने पर भी आवाज स्पष्ट सुनायी न दी। सच कहूँ तो थोड़ा डर भी लगा। लड़की ठीक अपने पापा पर गयी है। बुखार निन्यानवे से जरा ऊपर हुआ नहीं कि बड़बड़ाना शुरू कर देती है। अभी परसों ही तो बुखार नार्मल हुआ है। कहीं फिर...

कड़ाही उतार कर उठना ही पड़ा। जरा-सा फ्लू क्या हुआ, लड़की ने सब को नचा कर रख दिया है!

उस के कमरे में झाँक कर देखा कि वह बिस्तर पर बैठी हुई खिड़की से बाहर किसी से बातें कर रही है। मेरी चूड़ियों की खनक सुन कर मुड़ी, "मम्मी, मेरी सहेली आयी है। दरवाजा खोल दो, प्लीज!"

सदर दरवाजा खोलते हुए मैं ने देखा—एक सात-आठ साल की गोरी-चिट्टी लड़की शर्मीली मुसकान के साथ नमस्ते कर रही है। मुझे हँसी आ गयी। यह बित्ते-भर की लड़की इस की सहेली है! क्या कॉलिज की दर्जनों सहेलियाँ पहले ही कम थीं?

शुचि के कमरे में उसे छोड़ कर जा रही थी तो शुचि ने रोका, "मम्मी इसे पहचाना?"

"नहीं तो! देखा तो है पर नाम याद नहीं आ रहा।"

"यह सोनाली है, पॉल आंटी की... कालिज जाते हुए नर्सेज क्वार्टर्स से निकलती हूँ तो यह मुझे 'टा-टा' करती है। इधर आठ-दस दिन से मुझे देखा नहीं न! सो खोज-खबर लेने आयी है।"

उस के गाल थपथपा कर मैं रसोई-घर में लौट आयी। मुझे याद आया, आठ-दस साल पहले सुना था कि नर्सेज क्वार्टर्स में एक नवजात बालिका को शरण मिली है। माँ जन्म दे कर चल बसी थी और पिता अज्ञात था। इस बात को ले कर तब शहर में काफी चर्चा भी हुई थी। मैं तो उन दिनों रुचि की शादी के सिलसिले में व्यस्त थी। बस, कभी-कभी मिस पॉल के साथ गुड़िया-सी लड़की को देखती

कहानी

संवेदन

• मालती जोशी

तो सारी बातें याद हो आती थीं।

मिस पॉल से मेरा परिचय रुचि के जन्म के समय हुआ। समवयस्क होने के कारण हम दोनों की खूब पटती थी। एक ही महल्ले में रहने की वजह से बाद में भी हम लोगों ने हर बार उन्हीं को बुलवाया था और हर बार वे हम से भी अधिक उदास हो कर लौटी थीं। शुचि के बाद फिर झूला नहीं डल सका था ...

चाय और दलिया ले कर जब मैं कमरे में गयी तो देखा दोनों लड़कियाँ ताश खेलने में व्यस्त हैं। उम्र का व्यवधान उन्हें खल नहीं रहा था। मैं ने स्नेह से डपट कर ताश छीने और प्याले में चाय तैयार करते हुए कहा, "सोनाली, सहेली के साथ तुम्हें भी बीमारों का खाना मिल रहा है।"

वह लजीली-सी हँसी हँस कर रह गयी। "मिसेज क्लेमेंट, मिस पॉल ठीक हैं?" मैं ने पूछा।

"मम्मी! तुम तो बड़ी जल्दी भूल जाती हो! मिस



पॉल तो हनीमून पर गयी हैं।" शुचि ने याद दिलाया।

ठीक ही तो है! मुझे लगभग एक-डेढ़ महीने पहले 'रणजीत' में आयोजित शानदार दावत की याद आयी। बड़ी मजेदार शादी थी—पैंतालीस साल की दुलहन और बावन वर्ष का, तीन बच्चों का बाप, दूल्हा!

राजेश्वरदयालजी पिछले वर्ष बीमार पड़े थे। बड़े अस्पताल में उन्होंने इलाज करवाया था। तभी श्यामवर्णा, प्रसन्न-वदना मिस पॉल पर रीझ गये थे। इस स्वर्ण अवसर को मिस पॉल ने भी हाथ से न जाने दिया था ... उस दिन कितनी खुश नजर आ रही थीं! उन के सारे मित्र-परिवार के लिए सचमुच यह हर्ष का विषय था। केवल मिसेज क्लेमेंट की आँखें रह-रह कर भर आती थीं। पति की मृत्यु के बाद अकेलेपन से घबरा कर जब से उन्होंने अपना मकान अकेली रहनेवाली नर्सों को दिया था, तब से ही मिस पॉल उन की सहेली थीं। मिसेज क्लेमेंट के चेहरे पर उस दिन हर्ष और विषाद का अजीब सम्मिश्रण था—ठीक लड़की की माँ की तरह!

तभी कॉलबेल बजी। मेरा ध्यान फिर टूटा। शायद वे ऑफिस से लौट आये थे। दरवाजा खुलते ही वे रोज की तरह बेटी के हालचाल पूछने कमरे में नहीं गये। बरामदे में ही आरामकुरसी में धँसते हुए बोले, "कौन आया है?"

"उस की सहेली है। पता है कौन? मिस पॉल की गोद ली लड़की है न! उस की तबीयत का हाल पूछने आयी है।" मुझे अब भी इन दोनों की मैत्री एक विनोद की तरह लग रही थी।

"क्यों हर किसी लड़की से दोस्ती करती फिरती है?" उन्होंने अजीब-से चिड़चिड़े स्वर में कहा, "पता नहीं कौन है, कहाँ की है?"

मैं हैरान थी। इतनी हल्की बात उन के मुँह से कभी नहीं सुनी थी। गुस्सा भी आया, "इतनी-सी तो है बेचारी! फिर कैसी भी हो हमें क्या! हमें कौन अपना लड़का व्याहना है इस से!"

"व्याहने के लिए मेरे यहाँ लड़का नहीं है, यह बात मुझे बार-बार याद दिलाने की जरूरत नही।" उन्होंने गुस्से में कहा।

मैं भी भुनभुनाती रसोई घर में चली गयी। अच्छा न्याय है! दफ्तर में ठन गयी होगी किसी से और यहाँ आ कर गुस्सा निकाल रहे हैं!

चाय ले कर जब गयी तो देखा वे आँखें बंद करके लेटे हैं। बड़ी दया आयी। थक जाते हैं बेचारे! उम्र भी तो हो चली है। इतनी दूर तक साइकिल से आना कोई आसान थोड़े ही है!

उन्हें चाय दे कर खूंटी पर कोट टाँगने लगी तो खट् से एक लिफाफा गिर पड़ा। पता देखा—दिल्ली से आया था। शुचि के विवाह के लिए बातचीत चल रही थी। पिछले ही महीने वे लोग देख गये थे।

)

उन का उतरा हुआ चेहरा देख कर पत्र खोलने की इच्छा न हुई। पर उत्सुकता रोक नहीं पा रही थी।

पत्र पढ़ ही लिया। लड़के के पिता ने लिखा था—लड़की हमें पसंद है। अगर आप को आपत्ति न हो तो अगले हफ्ते ही सगाई की रस्म हो जाये। शादी गरमियों में उस की एम. ए. की परीक्षा के बाद होती रहेगी।

खुशी के मारे मेरे तो आँसू निकल आये। इसे कहते हैं तकदीर! एक ही लड़का देखा और बात पक्की हो गयी। रुचि के लिए तो दो-तीन दरवाजे खटखटाने भी पड़े थे। कहने के लिए रंग-रूप में इस से अधिक ही थी, कम नहीं!

और इन्हें देखो, ऐसा मुँह लटका कर बैठे हैं! चाहिए तो यह था कि ढेर-सी मिठाई ले कर घर में दाखिल होते, मुझे बधाई देते। यहाँ खुशी से मेरा दिल उछल रहा था पर कोई बाँटनेवाला न था। अब मैं लड़की से तो कहने से रही कि....

शाम को खाने के समय, उन्होंने मुँह खोला। पीठ थपथपाते हुए शुचि से बोले, "अब जल्दी से ठीक हो जाओ बेटे! अगले हफ्ते तुम्हारी सगाई आ रही है।"

शुचि ने पहले तो बड़ी-बड़ी आँखों से पापा को देखा, फिर उन की हथेली में ही मुँह छिपा लिया। उन का चेहरा पता नहीं कैसा हो गया कि रोटी का टुकड़ा मेरे गले में फंस कर रह गया!

फिर तो कुछ सोचने का समय ही न रहा। अगले आठ दिन मानो पँख लगा कर उड़ रहे थे। कितनी व्यवस्था करनी थी! दर्जी, हलवाई, सुनार और बजाजों की दुकानों के चक्कर लगा कर मैं पागल हुई जा रही थी। पड़ोसिनें छेड़तीं भी, "बहिनजी, यह सगाई है। आप तो शादी की-सी हायतोबा मचाये हुए हैं!"

कुछ तो ईर्ष्यावश भी कहतीं, "आप की तो मौज है। इस शादी से निपट लो, फिर तो आराम से बैठ कर भजन करना!"

कुछ इतने अच्छे दामाद की खोज पर बधाई देती नहीं थकतीं थीं। लड़का सचमुच हीरा था। सगाई के दिन तो मैं ने समधिन से कहा भी, "बहिनजी, होटल पहुँच कर नजर जरूर उतार दीजियेगा।"

होने वाले दामाद महाशय भी साथ-साथ चले आये थे और दोनों ओर की रस्में यहीं पूरी हो गयी थीं।

सगाई के दूसरे दिन मुझे ऐसी थकान थी मानो शादी से निपटी हूँ। दोपहर का खाना हमारे यहाँ खा कर शुचि को उस के ससुरालवाले अपने साथ 'गूजरीमल' ले गये थे। शाम को वहीं से फोन आ गया था कि वे लोग पिक्चर जा रहे हैं।

घर एकदम भाँय-भाँय कर उठा था। बरामदे में पास-पास कुरसियाँ लगा कर हम लोग बैठे थे। करने को बातें भी कर रहे थे, पर पता नहीं मन कितनी दूर-दूर थे। सहसा आवाज आयी, "आँटीजी ऽ!"

चौंक कर देखा—सोनाली थी!

"दीदी हैं घर में?"

"दीदी तो बेटा अपने दूल्हे के साथ घूमने गयी हैं।" मैं ने कहा।

"तो क्या दीदी की भी शादी हो गयी?" उस का चेहरा लटक आया था।

"नहीं बेटे, अभी तो सिर्फ सगाई हुई है," उन्होंने उसे खींच कर अपने पास बिठाते हुए कहा, "अरे भई, शुचि की सहेली को मिठाई तो खिलाओ!"

मैं मिठाई लेने अंदर चली गयी।

हम लोगों के पास मुश्किल से पंद्रह मिनट बैठ कर सोनाली चली गयी।

"आज तो बड़ा प्यार आ रहा था! उस दिन पता नहीं बेचारी के लिए क्या-क्या कह रहे थे!" मैं ने चिढ़ाया।

"सच बताऊँ, शाम के अंधेरे में ठीक रुचि-जैसी लग रही थी।" उन्होंने कहा।

खाक लग रही थी! कभी आँख भर कर लड़कियों को देखा भी है! अभी पूछूं कि दोनों में कौन अधिक गोरी है, तो बता न सकेंगे।

रात खाने पर सिर्फ खिचड़ी बनायी थी। हँसते हुए उन्होंने कहा, "आज लड़की नहीं है तो हमारे हिस्से में यही खाना है! उस की शादी के बाद यही हाल रहेगा?"

मुझे एकदम रोना आ गया। शुचि बीमार थी तब खुद ही कहते थे, भई, मैं बूढ़ा आदमी हूँ। शाम को मेरे लिए अंडवंड न पकाया करो।

मेरे रोने से वे घबराये। बोले, "अरे, मैं तो मजाक कर रहा था! उस की शादी की तो खुद मुझे ही जल्दी है।"

"ताकि आप को मुक्ति मिले और आराम से बैठे रहें इसीलिए न?"

वे हैरान हो कर मुझे देखते रहे। फिर चम्मच को थाली में घुमाने लगे। और उस दिन फिर खाना न खा सके।

बाद में मुझे बड़ी ग्लानि हुई। पर उस समय पता नहीं क्या हो गया था! अभी से सूना-सूना घर लग रहा था...

रोज की तरह रेडियो के पास बैठी रही। पढ़ना चाहा, स्वेटर भी उठाया, पर किसी काम में मन नहीं लगा। वे तो मेरे मूड से घबरा कर कब के बिस्तर पर लेट गये थे, और इधर दस ही नहीं बज रहे थे। उन लोगों पर बडी खीझ आ रही थी। अभी से लड़की पर हक जमा रहे हैं। शुचि के पिता पर गुस्सा आ रहा था, मना भी तो कर सकते थे। शुचि कैसे एकदम से तैयार हो गयी! मेरे साथ कहीं जाने के लिए घंटों खुशामद करवाती थी।

लगभग साढ़े दस बजे वे लोग आये। शुचि को सौंप कर, ढेरों माफी माँग होटल लौट गये। शुचि की आँखों से खुशी छलकी पड़ती थी। वह अंगूरी रंग की नयी साड़ी पहने थी। उस ने बताया कि सास ने अपनी पसंद की खरीद कर दी है। पर उस के शरमाने के ढंग से मैं समझ गयी कि किस की पसंद की है। मैं खड़ी रहती तो वह पता नहीं क्या-क्या बताती! पर नींद का बहाना बना कर मैं चली आयी। अपनी तरंग में उसे जरा भी ध्यान नहीं था कि मम्मी ने दिन कैसे

बिताया होगा! मुझे खीज आ रही थी।

दो-तीन घंटे बिस्तर पर ही करवटें बदलती रही। स्वयं पर ही अब कम आक्रोश न आ रहा था। क्या उस की खुशी से मुझे खुश न होना चाहिए था? फिर मैं उठ बैठी। शुचि के कमरे में बत्ती जल रही थी। जा कर देखा—अँगरेजी उपन्यास हाथों में अधखुला पड़ा है और वह गहरी नींद में सो रही है। बेडलैंप की रोशनी में उस का चेहरा बच्चों-जैसा लग रहा था...

मैं ने उसे चादर ओढ़ायी। धीरे-से मसहरी ठीक की। बेडलैंप बुझाया और फिर रोज की तरह कमरे की खिड़कियाँ देखने के लिए कमरे की बत्ती जलायी।

नयी साड़ी पलंग की पाटी पर झूल रही थी। कैसी अजीब लड़की है! कम-से-कम ससुरालवाले कपड़े तो जतन से रखने चाहिए थे! साड़ी तह कर अलमारी में रखने गयी तो बाप रे, वहाँ तो गदर मचा था! सात-आठ दिनों से मुझे देखने की भी फुरसत नहीं मिली थी।

कुरसियों पर पर्स, रूमाल, कार्डिगन, स्कार्फ बिखरे पड़े थे। चप्पलों का भी एक हुजूम था। मैं ने उन्हें तरतीब से रखा। ड्रेसिंग टेबल पर तेल की शीशी खुली रह गयी थी, उसे बंद किया। एक रेशमी पेटीकोट दराज से बाहर झाँक रहा था, उसे ठीक से रखा।

तभी अचानक कंधे पर स्पर्श से चौंकी। पीछे देखा—वे खड़े हैं।

"पागल हुई हो! रात के तीन बज रहे हैं!" करीब-करीब खींच कर ही वे मुझे बिस्तर तक ले गये।

पागल तो मैं सचमुच हो गयी थी। शादी तो अभी कोसों दूर थी पर मेरे मन में अभी से सन्नाटा छा रहा था। देखने के लिए घर में इतनी चहल-पहल थी। दिन-भर उस की सहेलियों की चुहल-भरी खिलखिलाहट घर में गूंजती रहती। पर मैं यही सोचती—उस के जाने के बाद तो कोई मुंह दिखाने भी न आयेगा।

बधाई देनेवाले पीछा नहीं छोड़ते थे।

—वाह बहिनजी! आप तो झंझटों से निपट गयीं। अब आप दोनों आराम से बैठ कर राम का नाम लीजिये।

मुझे बड़ी कोफ्त होती। छियालीस वर्ष की उम्र में झंझटों से मुक्त होना सुख की बात है! राम का नाम लेने की इतनी जल्दी भी न थी। अब तक मंदिरों की चौखटें पूजी हैं इन्हीं बच्चियों के लिए। अब भगवान से क्या माँगूंगी! मुझे शर्म आती कि भजन-कीर्तन में मेरा मन क्यों नहीं लगता! क्यों मुझे दिन-भर रसोई में खटने में, ढेर कपड़े धोने में, बिखरे हुए सामान को समेटने में आनंद आता है!

ऐसे ही दिन बीत रहे थे। उस दिन शायद 'सेकंड सैटरडे' था। वे घर पर थे। शुचि कॉलिज गयी थी। छत पर कपड़े सुखाते हुए मैं ने डाकिये को अंदर आते देखा। पर मुझे अब उस में कोई उत्सुकता नहीं रही थी। कोई बीमे-वीमे की चिट्ठी होगी, नहीं तो शुचि के लिए पत्र होगा!

दामाद साहब दो दिन भी तो खाली नहीं जाने देते। इन लड़कियों पर बड़ा गुस्सा आता है... रुचि का पत्र आये तीन-तीन महीने हो जाते हैं। हर बार एक ही कारण रहता कि समय नहीं मिलता। और यहाँ से उन के लिए हर तीसरे दिन पत्र जाता है!

"सुनो!" उन्होंने आवाज दी।

"आयी!" मैं जब ड्राईंग रूम में पहुँची तो वे कोई पत्र पढ़ रहे थे।

"तुम ने रुचि को पत्र लिखा था...?"

मेरे पाँव जम गये। जैसे चोरी पकड़ी गयी हो। छोकरी पर ऐसी चिढ़ आयी... मेरे पत्र का उत्तर उन के नाम क्यों दिया? मेम साहबा ने लिखा था—पापा आप मम्मी को समझा देना। मैं मजबूर हूँ। हरीश और मनीष को उन की दादी एक पल के लिए भी नहीं छोड़ सकतीं... कुमकुम के विना उस के डैडी नहीं रह सकते...

पत्र पूरा पढ़ने में अर्थ ही क्या था!

उसे लिफाफे में डालते हुए इन्होंने कहा, "मुझ से सलाह तो ले लेतीं! जब लड़की हम दे चुके तो बच्चों पर क्या हक रहा?" अपमान की व्यथा उन के चेहरे पर स्पष्ट झलक रही थी।

पता नहीं कितनी देर हम चुपचाप बैठे रहे! तभी फाटक खड़का—मिसेज क्लेमेंट के साथ मिस पॉल आ रही थीं। उन का स्वागत करते हुए देखा—शादी के बाद मिस पॉल का चेहरा एक नयी आभा से भर उठा है! मन में एक असंबद्ध विचार आया—जिस आयु में मेरे दांपत्य अध्याय का उपसंहार हो रहा है, इन्होंने वहीं से आरंभ किया है।

"रोजी जा रही है। सोचा, आप लोगों से मिलवाती चलूँ।" क्लेमेंट बोलीं।

"जी, आप ने बहुत अच्छा किया," मैं ने कहा। सहसा फिर मुझे याद आया, "हाँ, तो हास्पिटल का क्या किया?"

"स्तीफा दे दिया है। दरअसल मिस्टर सर्विस करवाना नहीं चाहते," मिस पॉल ने अनावश्यक रूप से शर्माते हुए कहा।

इस के बाद बातों का दौर चल पड़ा। मिस पॉल के प्रवास के विषय में, नये घर के विषय में, पति और बच्चों के विषय में। मिस पॉल के उत्साह का अंत न था। सहसा मुझे याद आया—

"सोनाली भी जबलपुर जायेगी न!"

एकाएक दोनों के चेहरे बुझ-से गये। मिसेज क्लेमेंट ने स्वर को यथाशक्ति संयमित रखते हुए कहा, "ऐसा है, इस के मिस्टर को तो कोई आपत्ति नहीं है पर फ़ेमिली में एडजस्ट होना..."

"हाँ, सो तो है। वैसे यहाँ आप हैं ही, चिंता क्या है?"

"ऑय एम अफ्रेड," मिसेज क्लेमेंट ने फिर खँखार कर कहा, "मैं घर बेचने का सोच रही हूँ। साठ से ऊपर हो चली। अकेले मैनेज करना भी कठिन है। मैं ब्रदर के पास इंदौर जाना चाहती हूँ, पर सोनाली वहाँ भी एडजस्ट नहीं हो पायेगी। अकेले रहने की आदत है न इसे!"

"फिर क्या कीजियेगा ?" मुझे उस लड़की पर तरस आया ।

"कहीं चर्च में या अनाथालय में रखना पड़ेगा। दो-तीन जगह लिख रही हूँ।"

मैं ने देखा इस अप्रिय चर्चा से मिस पॉल का चेहरा धुंधला पड़ता जा रहा है। विषय को बदलने की गरज से मैं ने कहा, "आप बैठिये मैं चाय ले आऊँ ?'

चाय के दौरान शुचि की सगाई की चर्चा छिड़ी। उन लोगों ने मुझे बधाई दी। हम ने लड़के की तसवीरें दिखायीं, सगाई का सामान दिखाया, नारी सुलभ-उत्सुकता से उन्होंने सब देखा । बार-बार तारीफ की। एक-दो घंटे बैठ कर जाते समय मिस पॉल ने मुझे जबलपुर का पता दिया तथा घर आने का निमंत्रण भी। फिर एक पैकेट मेरे हाथ में देते हुए कहा, "शादी में तो न आ सकूंगी। मेरी ओर से... "

मेरा मन अकारण भर आया । धन्यवाद देना भी कठिन लगा । तभी सुना, वे कह रहे हैं, "सिस्टर ! अगर सच-मुच कुछ देना चाहती हैं तो हमें सोनाली दे दीजिये !"

हम तीनों अवाक हो कर उन्हें देखती रहीं। वे दूर शून्य में पता नहीं क्या देख रहे थे। उस लंबे मौन को तोड़ा मिस पॉल ने, "भाई साहब ! आप तो गजब कर रहे हैं ! अच्छा है आप कोई लड़का..."

"सिस्टर," उन्होंने अत्यंत भीगी आवाज में कहा, "ईश्वर ने मेरे लिए हमेशा लड़कियाँ ही भेजी हैं—आप जानती तो हैं। फिर भाग्य से उलझने से क्या फायदा ! हाँ, आप इस प्रश्न पर विचार कर सकती हैं।"

वे तो अंदर चले गये। हम तीनों देर तक फाटक पर ही खड़ी रहीं। जाते हुए मिस पॉल ने मेरे दोनों हाथ थाम कर कहा, "भाभीजी ! आप नहीं जानतीं, आप ने मेरे दिल से एक बोझ उठा लिया है। मैं बता नहीं सकती," वे अधिक कुछ बोल न सकीं।

उन्हें विदा करके मैं घर में आयी। वे बेडरूम की खिड़की के पास खड़े थे। सोचा, उन से पूछूं कि आप को आज सहसा यह क्या हो गया था ! आप ने कहीं मेरे अंतर का आक्रोश तो नहीं सुन लिया ? पर मेरा यह मौन रुदन आप तक पहुँचा कैसे !

पीछे से जा कर धीरे से उन के कंधे पर हाथ रखा। उन्होंने मुड़ कर नहीं देखा। केवल अपने हाथों में मेरा हाथ ले लिया। उस स्पर्श के बाद कुछ पूछना शेष न रहा। मैं ने जान लिया कि यंत्रणा मैं ने अकेले ही नहीं झेली...

(१०५/१२, १४६४ क्वार्टर्स, दक्षिण तात्याटोपे नगर, भोपाल)

"आप का लड़का किस कक्षा में पढ़ता है ?"
"बी. एस.-सी. के दूसरे वर्ष में।"
"तब वह मेरे लड़के की तरह है—वह हाई स्कूल के दूसरे वर्ष में पढ़ता है।"

गया वर्ष

१

क्या याद रखें गये वर्ष का ?
परिचितों के व्रण
परिजनों के अतिक्रमण
सोखते रहे रक्त
करते रहे अशक्त
गुजर गया उदास जुलूस की तरह वक्त
व्यर्थ का विचार-विमर्ष क्या ?
क्या याद रखें गये वर्ष का ?

रास्ते में मिले
ऐसे भी सिलसिले
जैसे किसी मरु में
झरना-सा मचले
मन पर कुछ छायांकन अंकित हैं भले-भले !
वहुत नहीं इतना हर्ष क्या ?
क्या याद रखें गये वर्ष का ?

घटनाएँ बड़ी हैं
छोटे हैं आदमी
केवल क्षितिज देखती हैं
निगाहें सहमी,
प्रश्नों पर प्रश्नों की फाइलें जमीं
उत्तरों से होगा संघर्ष क्या ?
क्या याद रखें गये वर्ष का ?

—श्रीकांत जोशी
(जवाहरगंज, खंडवा म. प्र.)

२

पर्वत से गिर गया
एक और साल

लौट गयी दस्तकें दे-दे कर गंध
सोफे पर सो गया पथ का अनुबंध
वादे से फिर गया
एक और साल

पौरुष को ठग गया किस्मत का खेल
छूट गयी एक और सूरज की रेल
धुआँ कर गुजर गया
एक और साल

जीवन से कट गये पिछले कुछ मित्र
रद्दी में फिक गये तिथियों के चित्र
आँख से उतर गया
एक और साल

पर्वत से गिर गया
एक और साल

—शैलेन्द्र गोयल
(अँगरेजी विभाग, हिंदू कालिज, सोनीपत)

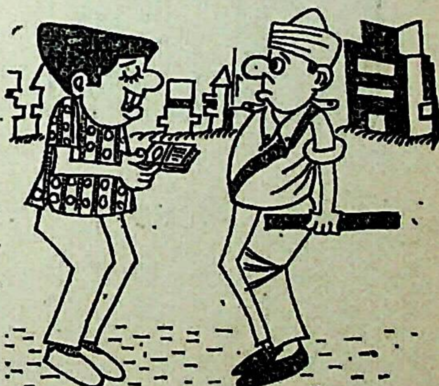
नया वर्ष



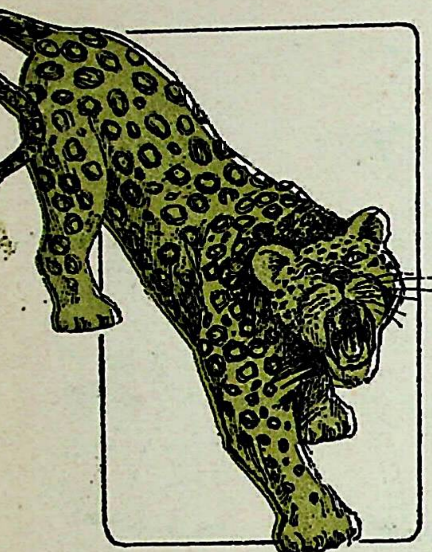
"नये वर्ष के उपलक्ष्य में मेरी एक अमूल्य भेंट—मेरी नवीनतम कविता !"



"अजी नय वर्ष के अवसर पर मेरे लिए एक नया बेलन तो ले ही आओ।"



"बोहनी तो अच्छी हुई ! नये साल पर जेब काटने से यह रकम मिली है।"





● एस॰ के॰ भार्गव

सात वर्ष पहले की बात है। राजस्थान में संगम नामक स्थान के पास एक नरभक्षी तेंदुए ने बड़ा उत्पात मचाया। थोड़े समय में ही पाँच व्यक्ति उस के शिकार हो गये। ग्रामीण इतने भयभीत हो गये कि सूर्यास्त से पहले ही वे अपने बाल-बच्चों तथा मवेशियों को झोपड़ियों में बंद करके बैठ जाते और दिन चढ़ने के बाद ही बाहर निकलते।

गाँव के कुछ लोग प्रसिद्ध शिकारी गोर्डन के पास गये। एक तो ग्रामीणों का अनुरोध, दूसरे शिकार का प्रलोभन—गोर्डन का मन मचल उठा। उसी समय वे गाँव की ओर चल पड़े। साथ में उन के तीनों शिकारी कुत्ते—बिल, मिकी और जैक भी थे।

तेंदुए को ललचाने के लिए पाँच तगड़े बछड़े नदी के समानांतर चार मील के क्षेत्र में जगह-जगह बँधवा दिये गये।

रात को गोर्डन डाक-बँगले में सोये। सुबह मालूम हुआ कि पाँचों बछड़े सही-सलामत थे। उन्हें मारने की बात तो दूर, तेंदुआ उन के आसपास भी नहीं आया था। पहले दिन वे इधर-उधर खोजते रहे, लेकिन तेंदुआ तो क्या उस के पैरों के निशान भी उन्हें न मिले।

दूसरे दिन गोर्डन फिर उस की खोज में निकले और इस बार भी निराश हो कर शाम को बँगले लौट आये।

तीसरे दिन तेंदुए ने उन्हें एक चुनौती-सी दे डाली। उस का छठा शिकार एक

स्त्री थी। वह अभागी रात को झोपड़ी से बाहर निकली ही थी कि उस नरभक्षी का शिकार बन गयी।

दिन निकलते ही गोर्डन तेंदुए के पैरों के निशान खोजते हुए बढ़े। कुत्तों को उन्होंने आगे कर दिया। उन के कोट की जेबों में कारतूस भरे पड़े थे और उन का हृदय उत्तेजना के कारण जोरों से धड़क रहा था।

कुत्ते अपने शिकार को सूँघते हुए बढ़ चले—खेतों को पार करते हुए, जंगलों और पहाड़ों की ओर! आधे घंटे तक खोजने के बाद झाड़ियों के बीच उन्हें स्त्री का अधखाया शरीर दिखायी दे गया। कुत्तों ने लाश के चारों ओर चक्कर लगाये, इधर-उधर कुछ सूँघा और चले गये।

थोड़ी देर बाद कुत्ते उन पर चढ़ गये। अब एक छोटी-सी घाटी उन के सामने थी—चारों ओर टूटी चट्टानें और पत्थरों के छोटे-बड़े ढोंके, छोटे-छोटे पेड़-पौधे तथा सूर्य के प्रखर ताप से कुम्हलाये हुए भूरे रंग के लंबे-लंबे घासों का झुरमुट!

चालीस गज दूर, एक ऊँची-सी चट्टान पर तेंदुआ खड़ा था। चमकती आँखों से वह एकटक कुत्तों को घूर रहा था। कुत्ते जोर से भौंकते हुए आगे लपके। गोर्डन ने राइफल सीधी की और निशाना ले कर घोड़ा दबा दिया।

दुर्भाग्य! निशाना चूक गया। तेंदुआ नीचे कूद पड़ा और कुत्तों को अपनी ओर बढ़ता देख धीरे-धीरे पीछे खिसकने लगा। कुत्तों की आड़ पड़ जाने से दोबारा गोली चलाने से कोई लाभ नहीं था। अतः वे कुत्तों को शिकार पर टूट पड़ने के लिए उत्साहित करते हुए उन के पीछे दौड़े।

चट्टानों के टूटने से एक पतला नाला बन गया था। तेंदुआ उसी की ओर बढ़ रहा था। नाले में उतर कर वह रुक गया। तेंदुए के पीछे काफी खुली जगह थी, लेकिन उस धूर्त ने यह अनुमान लगा लिया था कि खुली जगह की अपेक्षा वह सँकरी जगह अधिक निरापद है। जगह इतनी तंग थी कि एक बार में एक ही कुत्ता उस के निकट पहुँच सकता था।

बिल उस तंग जगह में फँस गया था। तभी तेंदुआ बड़े जोर से गुर्राया और उस की तरफ झपट पड़ा। मिकी, बिल के पीछे था और जैक नीचे-ही-नीचे दुबक कर सब से आगे पहुँचने की चेष्टा कर रहा था।

गोर्डन तेंदुए पर नजर गड़ाये आगे बढ़ रहे थे कि किसी चीज की ठोकर लगी और वे मुंह के बल जमीन पर गिर पड़े और राइफल उन के हाथ से छूट कर दो चट्टानों के बीच एक दरार में जा गिरी। उन्होंने जमीन पर पेट के बल लेट कर बड़ी मुश्किल से राइफल उठायी और आगे बढ़ गये। वे नाले के निकट की चट्टानों पर चढ़ गये और निशाना ले कर घोड़ा दबा दिया।

क्लिक—राइफल का लीवर रुक गया। वे आवाक खड़े रह गये। शायद जमीन पर

गिर जाने से उस में खराबी आ गयी थी।

नीचे, बिल अब तक मर चुका था। उस की गरदन से, जहाँ तेंदुए ने अपने पंजे गड़ाये थे, खून वह रहा था। जैक को तेंदुए तक पहुँचने में असुविधा थी। मिकी पीछे खड़ा भौंक रहा था।

गोर्डन तेंदुए के पीछे खुली जगह में कूद पड़े। जहाँ वे कूदे थे, तेंदुआ वहाँ से तीन फुट दूर नाले के अंदर था। अपने जख्मों की तनिक भी परवाह किये बिना कुत्तों के समान ही उन्होंने नाले में उतरने की कोशिश की। वे कई बार फिसले, आगे बढ़े और अंत में तेंदुए की पूँछ उन के हाथ आ गयी। मजबूती से उसे पकड़ कर उन्होंने पीछे की तरफ खींचना शुरू कर दिया। तेंदुआ छटपटाया। उस ने सारी ताकत लगा कर आगे बढ़ने की कोशिश की। इस रस्साकशी में जैक को मौका मिला और उस ने तेंदुए की नाक पर दाँत गड़ा दिये। क्रोध से चीखते हुए तेंदुए ने आगे बढ़ने की कोशिश की।

गोर्डन के हाथ से पूँछ फिसलती जान पड़ी। पूँछ को रस्सी की तरह एक बार बायीं कलाई में लपेट, चट्टानों में पैर अड़ा, सारी ताकत बटोर कर उसे अपनी ओर खींचा। तेंदुआ इस खिचाव को न सह सका और गोर्डन उसे धीरे-धीरे खींचते हुए पीछे खिसकने लगे। कुछ क्षण में वह उस तंग जगह से बाहर निकल चुका था।

अब तेंदुआ बड़ी तेजी से घूम कर उन की ओर लपका, किंतु बिना किसी भय के गोर्डन ने अपना संतुलन सँभ हुए दायें पैर के जूते की जोरदार ठोकर उस के मुँह पर मारी। वह चीत्कार कर पीछे हट गया।

तेंदुआ पुनः बौखला कर घूमा और उन की ओर झपटा। गोर्डन स्वयं को दूसरे पैर पर सँभालने की चेष्टा कर ही रहे थे कि तेंदुए ने लपक कर उन के आगे बढ़े पैर में अपने पैने पंजे गड़ा दिये। पंजे हड्डी तक जा पहुँचे और दूसरे ही क्षण खाल के स्थान पर सिर्फ हड्डियाँ रह गयीं।

तेंदुआ अपने नुकीले पंजे उन की गरदन की ओर बढ़ा रहा था कि मिकी बड़े वेग से उस पर झपटा। गोर्डन अभी तक एक ही पाँव पर संतुलन बनाये हुए थे।

मिकी के अचानक आक्रमण से तेंदुआ घबरा गया। गोर्डन के बचने के लिए यह पर्याप्त था। मिकी तेंदुए से अधिक तेज निकला। तेंदुआ जब तक सँभले, उस के पहले ही फुरती से लपक कर मिकी ने उस की गरदन में अपने दाँत गड़ा दिये! उस ने अपने दुश्मन का गला चीर डाला।

गोर्डन उठ खड़े हुए। तेंदुए की पूँछ उन के हाथ में थी। उन्होंने पहली बार अपने जख्म की पीड़ा महसूस की। कमीज फाड़ कर पट्टी बाँधी और सामने की ओर देखा—तेंदुए के निर्जीव शरीर के निकट मिकी और जैक सिर झुकाये बैठे थे।

(बालभारती, डूंगरगढ़, चूरू राजस्थान) ●

• जीवन मानवी

अलवर के रसखान

लोक-गायक अलीबख़्श

अलीबख्श अलवर रियासत के मुंडावर नामक स्थान के जागीरदार थे, परंतु जागीरदारी के वैभव में उन का मन न लगा। ब्रज-रज का आकर्षण उन के लिए वैभवपूर्ण अट्टालिकाओं से कहीं अधिक था। अतः मुंडावर के प्रशासन की उपेक्षा कर एक दिन वे घर से निकल पड़े। गृह-त्याग के पश्चात उन्हें एक ही धुन रही—नवीन लोकमंच की स्थापना और ख्यालों का प्रदर्शन! वे पढ़े-लिखे नहीं थे, परंतु मीरा की तरह 'संतन ढिग बैठ-बैठ' उस प्रेम-बेलि को उन्होंने बोया जिस के समक्ष सांसारिक सुख तुच्छ प्रतीत हुए।

ठेठ जन भाषा में उन्होंने कृष्ण का रूपांकन किया और उस के साथ-ही-साथ संगीत की पावन सरिता भी प्रवाहित की। घर-घर में उन के रचे कृष्ण-भक्ति के गीत गाये जाने लगे। यही कारण है कि अलीबख्श अलवर की सुप्रसिद्ध भक्त कवयित्रियों—सहजोबाई और दयाबाई—की परंपरा में बिठा दिये गये। आज भी कितने ही भक्त अलीबख्श के भजनों के माध्यम से अपनी आर्द्र पुकार अपने आराध्य देव तक पहुँचाते हैं।

रसखान कृष्ण की लकुटी और कामरिया पर तीनों लोकों का राज्य त्यागने को तत्पर थे, परंतु अलीबख्श का मन छैल-छबीले कृष्ण की छँदगारी छट देखने को लालायित रहता है—

दृग दामिनी-सी कामनी-सी पलक पट नैं
मेरो मन छल लीनौ छँदगारी छट नैं

इसी कारण अलीबख्श को अलवर का 'रसखान' कहा जाता है।

कृष्ण-लीला का भाव-पक्ष लोक-जीवन की उपज है। उस में कोई विशिष्टता या नवीनता दिखायी नहीं पड़ती,

परंतु इस का संगीत-पक्ष इतना सबल है कि जब तक गायक के पास मधुर-तीव्र स्वरवाला कंठ नहीं, तब तक कोई भी गायक दंगल में जम नहीं सकता। अलीबख्श के गीतों के गायक अलग ही होते हैं। गायक की आलाप से ऐसा अहसास होता है जैसे कोई शास्त्रीय संगीत गा रहा हो। इसलिए अलीबख्शी ख्यालों में आकर्षण का केंद्र उन की गायकी रही है। उन के भाव अपने हैं, संगीत अपना है और गायकी अपनी है। अतः जनजीवन में वे इतने लोकप्रिय हुए कि ख्यालों की एक नयी शैली चल पड़ी जो 'अलीबख्शी रंगत' नाम से मशहूर हुई। आज भी कहीं-कहीं अलीबख्शी ख्याल देखने को मिल जाते हैं।

अलीबख्श का दृष्टिकोण उदारवादी था। मुसलमान होते हुए भी हिंदुओं के देवी-देवताओं की आराधना उन की उदारता का परिचायक है। उन का व्यक्तित्व कबीर-जैसा था। फक्कड़ तो वे थे ही, साथ-ही-साथ निर्भीकता भी उन की प्रकृति का अंग थी। हिंदू-मुसलमान और ईसाई-धर्म में प्रचलित ढोंग और पाखंडों की ओर उन्होंने भी स्पष्ट इंगित किया है और जो मार्ग बतलाया है वह 'प्रेम' ही है—

कहो कैसे घर जाऊँ, गैलहू न पावै रे
पंडित पुस्तक पत्रा बाँचै, अटपट सगुन सुनावै रे
ये धर्महार धोखे से मार, जीमन की तुरत जँचावै रे।
य मुल्ला मसला कहैं मतलबी, घर घर पीठ जमावै रे।
ये मुसलमान को माल ठगैं, दावत को दाव लगावै रे।
पन्थ पादरी नैं ना पायौ, नाहक मगज पचावै रे।
बेद-पुराण, कुरान, अंग्रेजी एक को एक मिटावै रे।
ये तीनों आपस में झगड़ें, ना कोई न्याव चुकावै रे।
कहे अलीबख्श बिन ग्यान गरीबी प्रेम-पन्थ ना पावै रे।।

जैसा पहले कहा गया है कि अलीबख्श मुख्यतः कृष्ण-भक्त कवि थे। उन्होंने कृष्ण-चरित्र के आधार पर 'कृष्ण लीला' ख्याल लिखा जिस में कृष्ण की बाल-लीलाओं से ले कर मथुरा चले जाने तक की कथा वर्णित है। भाषा और शैली परिष्कृत नहीं, परंतु भावों का वैभव किसी भी तरह कम नहीं। रागिनियों की संगीतात्मकता तो भावोत्कर्ष में पूर्ण सहायक रही है। कृष्ण के 'बाल-हठ' का चित्रण अलीबख्श ने कितने मार्मिक शब्दों में किया है—

मन मोहन मचला ना माने
हमको खेलन से मतलब ऊँच नीच हम क्या जाने।
चित चाहे चन्दा से खेलूँ, हट पकड़ी भगवाना ने।
कहे अलीबख्श रे मन, उठ चल नन्दगाँव बरसाने।।

कृष्ण जब किशोरावस्था में आ गये तो मार्ग में मिलने वाली गोपिकाओं से दधि-माखन लूट-लूट कर खाने लगे। दधि लूटने का दृश्य 'रास लीला' में बड़ी कुशलता से चित्रित हुआ है जिस में संगीत, नृत्य और वादन का सौंदर्य देखते ही बनता है। अलीवख्श की रागिनी में रास-जैसी अभिनेयता के साथ-साथ अनठा भाषा-चमत्कार भी देखने को मिलता है—

झगड़त कर पकरत नागर नट,
लिपट गयो लटपटियो लटपट।
बट छोड़ मोहन हट, मत रोके पनघट।
कान्ह कँवर झटपट बंसीवट, घेर लिये
सिगरे घट औघट।
अरे कान्ह नादान जमना तट छोड़ छैल
मोरी गैल अलग हट।।
अलीवख्श तेरी उमर गई है घट, सोयो
बहुत ले ले करवट।
मन मूरख अजहूँ तो चेत, दिन रैन काट
रघुपत रट रट।।

गोपिकाओं के मोहन, कान्ह कुँवर, एक दिन मथुरा चले गये तो उन की क्या दशा हुई? एक गोपी दूसरी से कहती है—

सखि! साँवरा बिन नींद न आवै,
मेरो तड़फ-तड़फ जिया जावै री।
या मोरा मेरो मरम न जान्यौ पीहू पीहू
सबद सनावै।
पापी पपइया प्रान हरत है, कोयलिया
किल्लावै।।
सखि! साँवरा बिन...

भाव पुराने हैं, परंतु लोकगायक के मुख से निसृत होने के कारण स्वाभाविकता से दूर नहीं हैं। प्रिय के वियोग में सुखद वस्तुएं प्रतिकूल दीखने लगती हैं। कोयल की प्रिय कूक 'किल्लाने' में बदल जाती है। इस तरह प्रिय के अभाव के प्रभाव को दर्शानि में कवि ने मार्मिकता को सुरक्षित बनाये रखा है।

अलीवख्श के ख्याल राजस्थानी ख्याल परंपरा में महत्त्वपूर्ण कड़ी हैं, उन के अध्ययन के अभाव में 'राजस्थानी ख्यालों' का किसी भी प्रकार का अध्ययन अपूर्ण सिद्ध होगा।

(प्राध्यापक, राजकीय महाविद्यालय,
सरदार शहर, राज.)

पति ने अखबार में से समाचार सुनाया—"आजकल पुराने दिल की जगह नये दिल बड़ी आसानी से बदले जा सकते हैं।"

"मुझे नया दिल नहीं, नयी साड़ी चाहिए," पत्नी ने फरमाइश की।

संस्मरण

● ज्ञान पंडित

खेमकरन-मोर्चा हवाई कार्रवाई

आठ सितंबर, १९६५ की शाम को पौने छह बजे हवाईअड्डे के मेस में रेडियो पर अँगरेजी संगीत चल रहा था। इधर-उधर आराम-कुरसियों पर लड़ाई की वरदी में तीन अफसर बैठे थे। साथ के ड्यूटी-रूम में एक अफसर मेज पर झुक कर जासूसी उपन्यास पढ़ने में मग्न था। पास के एक और कमरे से वायरलेस रेडियो पर बातचीत सुनायी पड़ रही थी। वातावरण में तंद्रा थी। कोई सोच भी न सकता था कि यहाँ मौत के आधुनिक सामान से भरे विमान हैंगरों में छिपे हैं। तभी एक सिपाही ने आ कर उपन्यास में खोये हुए अफसर से कहा, "कमांडर

साहब ने याद किया है।" उस व्यक्ति ने निशान लगा कर पुस्तक बंद की और साथ के क़मरे में बैठे अफसरों को इशारा किया। वे भी कमांडर के कमरे में पहुँचे।

कमांडर मझले कद का था। कन-पटियों पर बाल सफेद हो चले थे, परंतु उस की हर गति में सैनिक की चुस्ती थी। जैसे ही चारों अंदर आये, उस ने कहा, "दरवाजा बंद कर दो और इधर बैठ जाओ।"

दरवाजा बंद हो जाने पर उस ने दीवार से एक परदा हटाया। नीचे युद्ध-स्थल का नक्शा था। अपनी छड़ी से नक्शे पर भिन्न-भिन्न स्थानों की ओर संकेत करते हुए वह धीमे, पर दृढ़ स्वर में कहने लगा—"यह खेमकरन है जहाँ लड़ाई चल रही है। यह कसूर है और यह है रायविंड। जासूसों ने रिपोर्ट दी है कि टैंकों, गोले-बारूद और पेट्रोल से भरी शत्रु की रेलगाड़ियाँ कराची और लाहौर से चल कर रायविंड पहुँच रही हैं। यहाँ से पटरी बदल कर ये रेलें कसूर पहुँचती हैं। अब खेमकरन केवल सात मील रह जाता है। इसलिए खेमकरन की लड़ाई में शत्रु के लिए रायविंड और कसूर का बड़ा महत्त्व है।"

"क्या सारी सेना पहुँच चुकी है?"

"अभी नहीं विशनोई, पर यदि शत्रु की गतिविधि में बाधा न डाली गयी तो उस की पूरी शक्ति खेमकरन में इकट्ठी हो जायेगी। लगता है शत्रु खेमकरन पर आक्रमण करके इस रास्ते से अमृतसर पहुँचना चाहता है। यह दूसरा रास्ता उसे व्यास के पुल तक ले जायेगा। यह तीसरा रास्ता हरीकेपत्तन हो कर लुधि-याना पहुँचता है। यदि शत्रु को खेमकरन के पास रोक कर उस के प्रयत्न विफल न किये गये तो जम्मू-कश्मीर का रास्ता कट जायेगा। लाहौर और फीरोजपुर में लड़ रही हमारी सेना को सामान पहुँचाना



दूरबीन से शत्रु पर नजर

कठिन हो जायेगा।"

इतना कह कर कमांडर चुप हो गया ताकि सभी इस कथन का महत्त्व समझ लें। फिर नक्शे से हट मेज के एक कोने से टेक लगा कर बोला, "आज दिन में भी शत्रु ने छोटा-सा आक्रमण किया था। हमारे टैंक और हथियारबंद दस्ते युद्ध-स्थल पर पूरी शक्ति में एकत्र नहीं हो पाये। बड़ी मुश्किल से आर. सी. एल. के प्रयोग से इस आक्रमण को रोका गया। यदि शत्रु की पूरी शक्ति इकट्ठी हो गयी और उस ने कल आक्रमण कर दिया तो हमारी सेना को काफी पीछे हट कर मोर्चे बनाने पड़ेंगे। इस बात का भार हमें सौंपा गया है कि शत्रु का सामान, सेना और टैंकों को खेमकरन की ओर बढ़ने से रोकें।"

"लक्ष्य क्या है ?" फ्लाइट लेफ्टिनेंट मेनन ने पूछा।

"रायविंड पर आक्रमण और कसूर जाने वाली जो भी गाड़ी दिखायी दे उसे बरबाद कर देना। रायविंड, लाहौर से कराची जाने वाली बड़ी रेलवे-लाइन का स्टेशन है। यहाँ हमला करने से पश्चिमी पाकिस्तान के यातायात की कड़ी टूट जायेगी।"

"और कुछ ?"

"समय और गोले बच जायें तो टैंकों के बढ़ते हुए दस्तों पर आक्रमण होगा।"

"उड़ान सीधी लक्ष्य की ओर होगी ?"

"नहीं। शत्रु को धोखा देने के लिए तुम पहले पठानकोट की ओर उड़ोगे।" उठ कर कमांडर ने नक्शे में छड़ी से एक स्थान की ओर संकेत किया और फिर छड़ी से नक्शे पर भिन्न स्थल दिखाते हुए कहा, "यहाँ पहुँच कर तुम बायीं ओर मुड़ जाना और उड़ान की ऊँचाई सौ फुट कर देना जिस से शत्रु का रडार तुम्हारी चाल न समझ पाये। फिर इस सड़क के साथ-साथ उड़ कर दूसरे स्थान से दाहिनी ओर घूम जाना। यह कसूर है जो तुम्हें अपने बायीं ओर दिखायी देगा। फिर रेल की पटरी के साथ-साथ रायविंड की ओर बढ़ना होगा।"

सभी ने अपने-अपने नक्शों पर निशान लगा लिये।

बिशनोई ने पूछा, "रणस्थल कहाँ है ?"

"यह"—कमांडर ने नक्शे पर छड़ी से एक जगह दिखाते हुए कहा।

"इस उड़ान का नेता होगा मेनन, क्योंकि वह इस स्थान पर उड़ानें भरता रहा है। खुल्लर नंबर दो पर रहेगा। नागी नंबर तीन पर होगा।" फिर बिशनोई की ओर देख कर कमांडर ने कहा, "तुम्हें नंबर चार पर चौकसी करनी होगी। शत्रु के विमान दिखायी दें तो मेनन को सूचना देना। जब तक लक्ष्य पर पहुँच न जाओ, रेडियो पर बातचीत बंद रहेगी।"

"हमारे पहचान का शब्द क्या है ?"

"चेतक—और कुछ ?"

सभी चुप रहे। कमांडर ने छड़ी



युद्ध-क्षेत्र का एक दृश्य—शत्रु का एक ध्वस्त विमान

मेज पर रख दी, उठ कर नक्शे पर परदा डाल दिया और घूम कर उन चारों को देखा। फिर एकाएक मुसकरा कर उस ने वातावरण का तनाव मिटा दिया और कहा, "अच्छा, झपट पड़ो। गुड लक?"

फौजी सलाम करके चारों बाहर निकले। पूरी जंगी वरदी में थे ही। सीधे भाग कर अपने-अपने विमान में चढ़ गये। चालक-कुरसी पर बैठ कर उन्होंने विमान का दरवाजा बंद किया और एक-एक करके बैटरी, पेट्रोल, रडार, राकेट और गोलियाँ चलाने के यंत्रों का विधिवत निरीक्षण किया। एक मिनट बाद मेनन ने रेडियो पर पूछा, "खुल्लर, तैयार हो.?"

"जी," उत्तर मिला।

"नागी, तैयार हो?"

"जी।"

"बिशनोई, तैयार हो?"

"जी।"

अब मेनन ने कंट्रोल से कहा, "हम सब तैयार हैं। अनुमति दो।"

"सड़क नं. दो पर पहुँचो। रास्ता साफ है।"

मेनन वायुयान को चला कर नंबर दो सड़क पर पहुँचा। सड़क पर पहुँच कर इंजन की गति पूरी तेज कर दी।

विमान ऊपर उठा। मेनन ने घड़ी देखी, पूरे छह बजे थे। उस के तीनों साथी भी आ मिले और उस से सौ गज पीछे उड़ने लगे। थोड़ी ही देर में वे पहले मोड़ तक पहुँच गये। मेनन ने विमान की ऊँचाई एकदम कम की और सौ फुट पर ला कर उसे बायीं ओर मोड़ा। नीचे सड़क दिखायी दे रही थी। चारों विमान इतने नीचे आ गये थे कि उन के इंजनों से निकलती हुई हवा से टहनियाँ झुकी जाती थीं। निर्धारित स्थान से उन्होंने दाहिने हाथ का मोड़ काटा। तभी एक ओर पाँच-छह मील दूर कसूर का रेलवे-स्टेशन दिखायी दिया। फिर रेल की पटरी की सीध ले कर मेनन अपने यान को भूमि से केवल पचास फुट पर ले आया। नीचे मानो धरती उड़ी चली जा रही थी। किसी स्थान पर दृष्टि जमाना असंभव था। कुछ क्षणों में ही वे रायविंड स्टेशन के पास जा पहुँचे। मेनन ने घड़ी देखी। छह बज कर आठ मिनट थे।

डूबते सूरज की रोशनी में मेनन ने रेलवे-इंजन का धुआँ देखा। इंजन का मुँह कसूर की ओर था और रेलगाड़ी रायविंड स्टेशन के पास ही थी। उस ने धीमे स्वर में रेडियो की चुप्पी तोड़ते हुए कहा, "लक्ष्य है कसूर जाने वाली रेलगाड़ी।" चारों विमान तीर की भाँति रेलवे-स्टेशन के ऊपर से निकल गये। शत्रु की विमानभेदी तोपें गरज उठीं। परंतु विमान बहुत कम ऊँचाई पर थे और शत्रु के गोले बहुत ऊपर जा कर फटे। क्षणों में ही चारों विमान शत्रु की दृष्टि से ओझल हो गये।

नेतृत्व मेनन के हाथ में था। रेलगाड़ी देखते ही वह आक्रमण का ढंग सोचने लगा। तोपों के फायर से उसे पता चल गया था कि दो चौकियों से गोले चलाये गये हैं। उसे विश्वास था कि शत्रु सचेत है। उस ने सोचा कि यदि अभी लौट कर आक्रमण किया तो शत्रु तैयार मिलेगा। अतः उस ने निश्चय किया कि लक्ष्य से कुछ और दूर जा कर थोड़ी देर बाद किसी दूसरी दिशा से धावा बोला जाये। ऐसा करने से एक तो शत्रु समझेगा कि विमान किसी दूसरे लक्ष्य की ओर चले गये हैं और फिर आक्रमण के समय उसे दोबारा तोपें घुमा कर निशाना साधना पड़ेगा। इतनी देर में आक्रमण पूरा हो जायेगा। अपनी आक्रमण-शैली से मेनन ने यान बायीं ओर घुमाया और यान की ऊँचाई घटा कर चालीस फुट कर दी। तीनों साथी उस की हर गति का अनुसरण कर रहे थे। जैसे ही दूर रायविंड के स्टेशन की छत दिखायी दी, उस ने रेडियो पर कहा, "मैं लक्ष्य के दाहिने छोर पर आक्रमण करूँगा और नं. चार उस के बायें छोर पर। नं. दो और तीन अपना-अपना स्थान सँभालेंगे।" घूम कर लौटने से चारों विमान ऐसी स्थिति में थे कि सारी रेलगाड़ी उन की मार में आ गयी थी। स्टेशन से एक मील पर मेनन ने अपने यान को तेजी से ऊपर चढ़ाना आरंभ किया और दो हजार फुट पर ले आया। इस समय ऊँचाई पर जाने के कारण

उस के और साथियों के विमानों की गति बहुत मंद हो गयी थी और उन पर बड़ी सरलता से निशाना लगाया जा सकता था। परंतु कुछ तो समय बीत जाने से और कुछ दिशा-परिवर्तन के कारण पाकिस्तानी तोपची इस मौके का लाभ न उठा सके। जब तक उन्होंने तोपें घुमा कर पहला फायर किया, चारों यान डुब्बी लगा रहे थे और उन की गति तीन सौ मील से बढ़ कर छह सौ मील हो चुकी थी।

मेनन सब से आगे था। उस ने रेलगाड़ी के बायें छोर पर छह सौ फुट नीचे आ कर दो राकेट छोड़े और झट अपने विमान को ऊपर बढ़ा दिया। सब से पीछे उड़ने वाले विशनोई ने देखा कि रेल का इंजन और दो तीन डब्बे पटरी से उछल कर दूर जा गिरे हैं और उन में आग लग गयी है। नं. दो पर खुल्लर था उस ने चार सौ फुट से इंजन और रेल के मध्य भाग के दाहिने हाथ के डब्बों पर राकेट छोड़े। इन में संभवत: गोला-बारूद भरा था। राकेट लगते ही ये डब्बे धमाके से फट गये और धू-धू कर जलने लगे। अभी शत्रु की तोपें खल्लर पर निशाना साध ही रही थीं कि नागी ने रेल के दाहिने भाग पर राकेट दाग दिये जिस से डब्बे उलट गये और जलने लगे। बिशनोई यह सब कुछ देख रहा था और अब उस ने अपनी बारी पर रेल के दाहिने छोर पर आक्रमण किया। राकेट ठीक निशाने पर पड़े और उन से लपटें निकलने लगीं।

मेनन सब से आगे होने के कारण आक्रमण का परिणाम न देख पाया था। यह काम विशनोई का था। उस ने कहा, "नं. चार नेता से।"

"कहो," मेनन ने कहा।

"सभी राकेट निशाने पर लगे हैं। रेलगाड़ी नष्ट हो गयी है।"

"स्टेशन पर गोला-बारूद होगा। पेट्रोल की एक पूरी रेल खड़ी है। एक हमला और।"

वे घूम कर फिर स्टेशन की ओर आये। इस बार शत्रु सचेत था और उस ने तड़ातड़ गोले दागे। पर ये चारों वीर गोलों की फैलती हुई मार का ध्यान छोड़ पेट्रोल की गाड़ी और स्टेशन पर झपटे। कुछ राकेट निशाने पर लगे। पेट्रोल के डब्बे फट कर जलने लगे। फटते हुए बारूद के धमाकों से स्टेशन हिल गया। आग की लपटों और धुएँ ने सारे स्टेशन को निगल लिया।

अब स्टेशन से आगे बढ़ते ही मेनन ने अपने सभी यंत्रों की फिर परीक्षा की। पेट्रोल काफी था। चार राकेट बचे थे और यान के पंखों में चारों तोपों की गोलियाँ भी पूरी थीं। फिर उस ने रेडियो पर पूछा, "नं. दो कैसे हो?"

"सब ठीक। चार राकेट और गोलियाँ बाकी हैं।"

"नं. तीन?"

"राकेट समाप्त। गोलियाँ पूरी।"

"नं. चार?"

"राकेट समाप्त, गोलियों की पेटियाँ भरी हैं।"

"चलो कसूर की रेल-पटरी पर।" और चारों विमान फिर नीची उड़ान भरते हुए कसूर की रेल-पटरी पर उस स्थान की ओर बढ़े जहाँ मेनन ने नक्शे पर 'रणस्थल' का निशान लगाया था। थोड़ी ही देर में बिशनोई ने कहा, "बायीं ओर मिट्टी उड़ रही है।"

"शत्रु के टैंक और सशस्त्र गाड़ियाँ होंगी," मेनन बोला। फिर अपने विमान को घुमाते हुए उस ने कहा, "मैं और नं. दो राकेटों से शत्रु के टैंकों पर आक्रमण करेंगे। नं. तीन और चार सशस्त्र गाड़ियों पर गोलियाँ चलायेंगे।"

तभी उन्हें शत्रु के टैंक दिखायी दिये। यान को ऊपर ले जाते हुए मेनन ने कहा, "मैं पाँच टैंकों वाले गुट पर झपटूँगा। नं. दो, तुम तीन टैंकों की टोली को सँभालना"। फिर मेनन ने डव्बी मारी। शत्रु ने विमानभेदी गोलों और गोलियों की बौछार कर दी। पर मेनन ने निशाना साध कर सारे राकेट दाग दिये। तीन राकेट निशाने पर लगे और टैंकों में आग लग गयी। तभी उस ने खुल्लर से पूछा, "नं. दो, क्या रिपोर्ट है?"

"राकेट तो छोड़े, पर उन का परिणाम नहीं देख सका। दो तो जरूर निशाने पर लगे थे।"

उधर बिशनोई और नागी भी एक बार गोली चला कर ऊपर उभर आये थे। मेनन ने कहा, "दो, तीन और चार, तुम तीनों सशस्त्र गाड़ियों पर एक आक्रमण और करो। मैं माल और सेना ले जाने वाले शत्रु के ट्रकों की खबर लेता हूँ।"

आज्ञा का पालन करते हुए तीनों वीर फिर उस गोली और राकेट-भरे वातावरण में घुसे, जहाँ लोहे के उड़ते हुए टुकड़ों के रूप में मृत्यु नाच रही थी। उन्होंने सारी गोलियाँ समाप्त कर दीं। अंतिम डुव्बी से उभरे तो वाइस गाड़ियाँ जल रही थीं। उधर मेनन ट्रकों पर लपका। उन की सीध ले कर डुव्बी लगाते हुए अपनी चारों तोपों से गोलियाँ बरसाने लगा। ड्राइवर और सैनिक कूद कर छिपने की कोशिश करते हुए भुन गये। एक बार घूम कर मेनन ने फिर आक्रमण किया और उस की गोलियों से तीस ट्रकों में आग लग गयी। उन में भरा गोला-बारूद धमाके से फटने लगा। एक बार और आक्रमण के लिए घूमना चाहता था, पर उस ने देखा कि यान में पेट्रोल बहुत कम रह गया है। यंत्र देखे तो दाहिने पंख में लगा पेट्रोल-भंडार लगभग खाली हो चुका था। तभी उस ने सुना, "नं. दो लीडर से। नं. दो लीडर से।"

"क्या बात है?"

"मेरे पेट्रोल का बड़ा भंडार समाप्त हो गया है। शायद गोली लगी है"

"सभी सीधे अड्डे की ओर..."

सारे यान अड्डे की ओर तीर की तरह बढ़े। तभी मेनन ने देखा कि उस का गति-सूचक यंत्र गोली लगने से निकम्मा

हो गया है।

अड्डे के पास पहुँच कर मेनन ने कंट्रोल से कहा, "चेतक बोल रहा हूँ।"

"पहचान लिया।"

"पहले नं. दो उतरेगा। उस के पास पेट्रोल कम है।"

"नं. दो सीधे लाओ। और आगे ... गति तीन सौ मील—नीचे उतरो।"

आदेश मानते हुए खुल्लर ने अपना विमान अड्डे पर उतार कर एक ओर खड़ा कर दिया। पेट्रोल देखा तो पसीना छूट गया। केवल बीस गैलन रह गया था।

फिर मेनन ने कहा, "मेरा गति-सूचक यंत्र काम नहीं करता।"

कंट्रोल ने कहा, "नं. तीन और नं. चार, तुम नं. एक के दोनों ओर उड़ो। नं. एक, तुम अपनी गति इन के बराबर रखना।"

इस तरह दोनों विमानों के बीच मेनन उतरा। फिर नागी और बिशनोई भी उतर आये। मेनन ने घड़ी देखी, साढ़े छह बजे थे।

उधर पाकिस्तानी कमांडर ब्रिगेडियर शमीम शिविर में अपने अफसरों को अगले दिन की योजना समझा रहा था।

"आप के छोटे हमले से भारत की फौज पीछे हट रही है। अब यह जरूरी है कि हम बढ़ कर जल्द-से-जल्द बड़ा हमला शुरू कर दुश्मन को खत्म कर दें।"

फिर स्वर में गर्व भर कर कहने लगा, "कल सवेरे टैंकों की पूरी रेजीमेंट कसूर से चल कर हम से आ मिलेगी। गोला-बारूद, पेट्रोल और रसद भी पूरी तादाद में पहुँच जायेगी। सवेरे सूरज की पहली किरण के साथ ही दुश्मन पर पूरे जोश और पूरी ताकत से हमला होगा। हमें दुश्मन को रौंद कर कल शाम अमृतसर पहुँच जाना है। यह काम मुश्किल नहीं, क्योंकि दुश्मन के हौसले पस्त हो चुके हैं।"

फिर नक्शे की ओर बढ़ कर बोला, "पहला हमला मगरबी बाजू से होगा।"

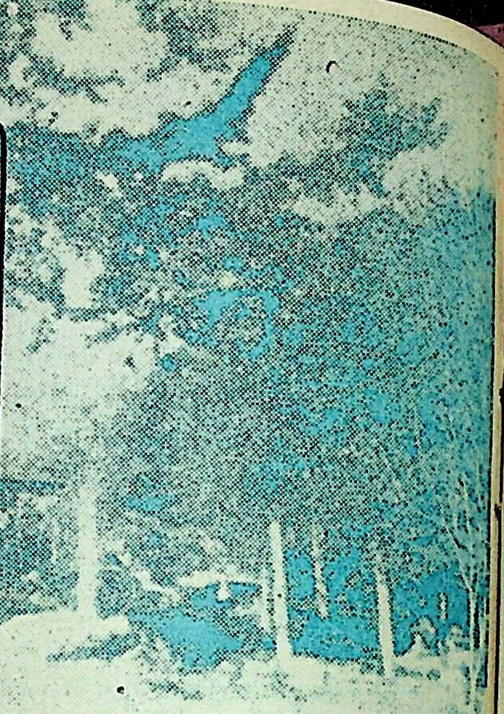
अभी उस ने इतना ही कहा था कि एक संदेशवाहक ने आ कर सलाम किया और एक पत्र कमांडर के हाथ में दिया।

मुसकराते हुए शमीम बोला, "शायद मेजर जनरल का मुबारकनामा है।" उस ने पत्र पढ़ना आरंभ किया। पत्र में रायविंड पर भारतीय वाययानों के आक्रमण का ब्योरा था और लिखा था कि गोले-बारूद और पेट्रोल के भंडार नष्ट हो गये हैं। टैंक भी निकम्मे हो गये हैं। अतः यह कुमुक आज रात या कल सवेरे तक युद्धस्थल पर नहीं पहुँच पायेगी।

ब्रिगेडियर शमीम के चेहरे की मुसकराहट उड़ गयी और माथे पर परेशानी झलकने लगी। उसे आगे बढ़ कर भारतीय सेना को कुचल देने का स्वप्न लुप्त होता दिखायी दिया और लगा, जैसे शत्रु उस के चंगुल से निकल गया है।

आधे घंटे के इस हवाई आक्रमण ने युद्ध का पासा पलट दिया था।

(२०४–'ए' ब्लाक, कर्जन रोड अपार्टमेंट, कस्तूरबा गाँधी मार्ग, नयी दिल्ली)

मनाली का शापग्रस्त चीनी

● रामलखन सिंह

मनाली, १९ अक्तूबर १९७० ! एक दिन स्थानीय वनस्पति का अध्ययन करने रेस्ट-हाउस से व्यास नदी की ओर जा रहा था। सहसा एक पेड़ पर दृष्टि पड़ी और एक प्रश्न उभर आया था—क्या यह वही चीनी वृक्ष है ?

देर तक देखता रहा। दबे पाँव फिर इस के निकट गया। तभी इस की कुछ पत्तियाँ उड़ती हुई पैरों के पास आ गिरीं ! मैं ने झपट कर उन्हें उठा लिया—

हाँ, हाँ ! यह वही पेड़ है, जिस के परिवार के अन्य सदस्य इस धरती से सदा के लिए उठ चुके हैं और जो स्वयं भी महाविनाश के उसी अंत की ओर बढ़ रहा है !

उसी आवेग में मैं ने उस के चारों ओर

घूम कर देखा—एक ओर सेब का बाग, दूसरी ओर देवदार का घना वन, तीसरी ओर पर्यटक-आवास-गृह और चौथी ओर काली, लंबी, सपाट सड़क...

सभी कुछ दीखा, पर इस का सहोदर नहीं मिला। मैं वृक्ष की ओर निर्निमेष देखता रहा। मुझे लगा जैसे वृक्ष कह रहा हो—गत साठ-सत्तर साल से मैं अकेलेपन की यातना झेल रहा हूँ।

जिंगों वाइलोवा इस का नाम है। यह मूलतः चीन का निवासी है। जब सृष्टि की संरचना हो रही थी, तभी इस के पूर्वजों का जन्म हुआ था।

प्रकृति का विकास-क्रम तब बड़ी तेजी से चल रहा था। अर्धविकसित इकाइयाँ मिट रही थीं, नये जीव अस्तित्व में आ रहे थे। एक ओर मेढक पानी से उछल कर भूमि पर आ गया था, बंदर की पूँछ घिस रही थी और मनुष्य को आकार मिल रहा था, तो दूसरी ओर वानस्पतिक जीवन भी 'बैक्टीरिया' की सीढ़ी से चढ़ कर हरी पत्तियों वाले पौधों तक आ पहुँचा था। पेड़ अपना भोजन बनाने लगे थे और वंश वृद्धि के लिए उन में फूल लगने लगे थे।

विकास के इसी क्रम में एक मंजिल आयी थी जब पौधों में फूल तो लगने लगे थे, किंतु ऐसे फूल नहीं जिस में नर-मादा तत्त्व एक ही फूल में विद्यमान हों। फूल या तो नर थे या मादा। फूल ही नहीं, पेड़ भी तब एक लिंगीय ही होते थे यानी एक पेड़ में सभी फूल नर तत्त्वों से युक्त तो दूसरे में मात्र मादा तत्त्वों से।

यह जिंगो वाइलोवा उसी काल का प्रतिनिधि है। देखने में जामुन-जैसा कद्दावर किंतु व्यवहार में विशुद्ध एक लिंगीय। इन के परिवार के अधिकांश सदस्य सदा के लिए नष्ट हो चुके हैं। डारविन के अनुसार इसे भी अब तक समाप्त हो चुकना चाहिए था, पर संयोगवश यह जिंदा है! वनस्पतिशास्त्री इसे 'जीवित-अवशेष' (लिविंग फासिल्स ऑव द वर्ल्ड) के नाम से संबोधित करते हैं।

अब भारत में इस के इने-गिने प्रतिनिधि रह गये हैं। एक देहरादून के 'वन संस्थान' में है और कुछ दार्जिलिंग की 'वन वाटिका' में।

जीवशास्त्रियों के अनुसार इस पृथ्वी पर अनेक प्रकार के जीव आये थे, पर आज उन के अवशेष मात्र रह गये हैं। उन के ढाँचे जिन चट्टानों पर मिलते हैं उन की उम्र से अनुमान लगाया जाता है कि आज से कितने हजार वर्ष पूर्व ऐसे जीव पाये जाते होंगे! चीन और जापान में इस चीनी पेड़ के अवशेष, लाखों वर्ष पुरानी चट्टानों में मिले हैं। इस से प्रमाणित होता है कि कभी सृष्टि के आरंभ में इस के पूर्वज जन्मे होंगे, जो क्रमशः अन्य विकसित पेड़ों के लिए स्थान छोड़ कर स्वयं इतिहास का विषय बन चुके हैं। उन अवशेषों को देख कर ही वैज्ञानिकों ने निर्धारित किया है कि यह 'फासिल्स-एज' के

सदस्य हैं और अभी तक इसे धरती से उठ जाना चाहिए था।

देर तक इस के बारे में रहा। इस में फूल तो लगते हैं, लेकिन सूख कर गिर जाने के लिए! इस की एक और विचित्रता है—पचास - साठ वर्ष के पहले इस में फूल ही नहीं लगते! इस उम्र तक मनुष्य की कमर झुक जाती है और यह है कि युवा रहता है।

मैं और निकट जा कर देखता हूँ— डाल सेव के पेड़ पर झुकी है, दूसरी सड़क के पार और पास ही देवदार का वृक्ष है! मनाली का सेब मूलतः अमरीकी निवासी है, देवदार विशुद्ध भारतीय और साथ खड़ा यह वृक्ष चीनी! कैसा सह-अस्तित्व है?

मैं सोच ही रहा था कि सड़क पर इस ओर आती एक तिब्वती बहिन दिखी। इस पेड़ के नीचे से गुजर रही थी तो एक अजीब-सा विचार आया—कहीं इस की तरह यह भी तो निष्कासित नहीं!

नहीं, नहीं, यह निष्कासित नहीं और न अनपयोगी है। अच्छा-भला कद्दावर पेड़ जिस की पत्तियों से इंफ्लूएंजा की अत्यंत लाभकारी दवा तैयार की जा सकती है!... रूसी वैज्ञानिक इसी उपयोग के लिए अपने देश में इस की वंशवृद्धि का प्रयत्न कर रहे हैं।

इस का कोई इतिहास उपलब्ध नहीं कि मनाली की घाटियों में यह कैसे आया? हो सकता है किसी चीनी पर्यटक के साथ अनजाने ही आ गया हो।

इस एकाकी वृक्ष पर बड़ी करुणा आयी। सोचा—स्थानीय वन-अधिकारी से अनुरोध करूँगा कि जब इस में फूल आयें तो उन्हें देख कर पता लगायें कि यह नर-वर्ग का है या मादा, जिस से इस के विपरीत वर्ग का पौधा दार्जिलिंग से मँगाने की व्यवस्था की जा सके और तब मनाली की इस घाटी में धूम-धाम से इस चीनी-दंपती का व्याह रचाया जाये!

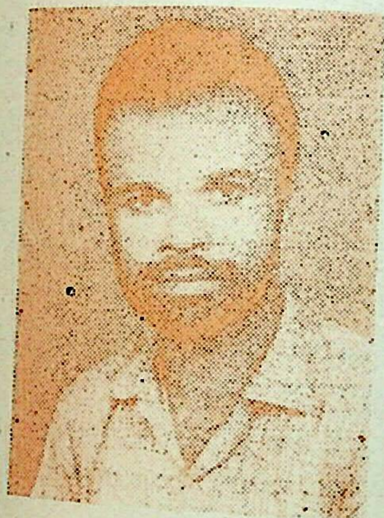
अनुमानतः यह नर पेड़ है; क्योंकि मादा पेड़ के निकट विचित्र-सी दुर्गंध रहती है। धरती पर गिर कर उस के फूल वातावरण में असह्य दुर्गंध भर देते हैं। अतः यदि भूले-भटके कहीं मादा जिंगो वाइलोवा मिलता भी है तो लोग नष्ट कर देते हैं। इस का वंश विलुप्त होने का एक कारण यह भी है। आम सड़क के किनारे खड़ा यह पेड़ काटा नहीं गया, इसलिए अवश्य ही यह नर-वर्ग का होगा।

सहज विनाश की ओर बढ़ रहे इस पेड़ का जीवन बचा सकने में एक और बाधा है। युवावस्था आने के पूर्व, पचास वर्ष तक, यह निर्धारित नहीं किया जा सकता कि यह पेड़ नर है या मादा! अतः दार्जिलिंग या देहरादून से ला कर यदि कोई एक-दो वर्ष का पौधा रोपित भी किया जाये तो इस का निश्चय नहीं कि युवा होने पर वह मादा ही निकलेगा। पूरे पचास वर्ष की प्रतीक्षा के पश्चात यदि वह भी नर निकला तो!

(इंडियन फारेस्ट कॉलिज, देहरादून)

• विमलकिशोर

नेपाल-यात्रा साइकिल से



सुगठित शरीर, उन्नत ललाट और आँखों में झलकता आत्मविश्वास ! यह विट्ठलराव महाडिक का व्यक्तित्व है। उन दिनों वह साइकिल द्वारा ग्वालियर से जमनोत्री और गंगोत्री-जैसे दुर्गम पहाड़ी स्थानों की यात्रा करके लौटा था। बात-चीत के दौरान उस ने बताया कि यात्रा से एक सप्ताह पूर्व मैं साइकिल की सफाई करता हूँ और पुरजे आदि जाँच लेता हूँ।

आत्म-प्रचार में महाडिक की कोई रुचि नहीं। उस का कहना है कि मैं तो अपनी खुशी के लिए सफर करता हूँ ताकि दुनिया को देखने-समझने की इच्छा पूरी हो सके। गंगोत्री-यात्रा के बाद इस बार नेपाल-यात्रा पर रवाना होने से पूर्व विट्ठलराव महाडिक वादा कर गया कि लौटने पर फिर मिलूंगा।

छह जून को नेपाल-यात्रा पर रवाना हो कर वह उनतीस जून को ग्वालियर लौट आया। एक सप्ताह बाद जब वह मुझ से

मिला तो बड़ा प्रसन्न था। बोला, "आप के लेख ने बड़ी मदद की। अपने साथ मैं वह अखबार ले गया था जिस में आप ने मेरे बारे में लिखा था। उसे दिखा कर मैं यह सिद्ध कर सका कि मैं ग्वालियर से ही आया हूँ और पहले भी साइकिल से लंबी यात्राएँ कर चुका हूँ।"

"क्या नेपालवालों की भाषा तुम्हारी समझ में आ गयी ?" मैं ने पूछा।

"वे तो खूब अच्छी हिंदी वोलते हैं। वैसे उन की भाषा अलग है, मैं उसे नहीं समझ सका।"

फिर विट्ठलराव ने भाषा-संबंधी एक घटना सुनायी—"साइकिल का टायर खराब हो जाने पर मैं जब टायर खरीदने काठमाँडू के वाजार में पहुँचा तो वहाँ कुछ चीनी छात्र मिले। उन्होंने मेरी वेश-भूषा देख कर मुझे घेर लिया और जब मैं ने अपनी यात्रा के संबंध में उन्हें बताया तो उन में से एक बोला, "शूरा मानुष छो।" नेपाली में कही गयी उस की बात मेरी समझ में नहीं आयी। मुझे लगा कि न जाने इस चीनी ने मुझ भारतीय से क्या कह दिया! पर दूसरे ने अँगरेजी में बताया कि मुझे 'शूरा' यानी 'वहादुर' कहा जा रहा है। यह देख कर मुझे प्रसन्नता हुई कि यहाँ हमारे यहाँ-जैसा अँगरेजी का बोलवाला नहीं है। दुकानों के नाम, कारों के नंबर, सड़कों के नाम—सब हिंदी में हैं।"

"हिंदी में!" मुझे आश्चर्य हुआ।

"जी हाँ, हिंदी में। लिपि हिंदी है, बोली नेपाली। जैसा अपने यहाँ मराठी में होता है।" उस ने नेपाल में खरीदे गये सामान की रसीदें दिखायीं जिन में हिंदी लिपि में ही छपा और लिखा था।

उस ने आगे वताया, "लोगों के नाम अपने यहाँ-जैसे ही होते हैं जैसे, आर. एन. झा और लवराज। ये दोनों लामीडांडा में वन-अधिकारी हैं। इन्होंने मुझे ठहरने आदि की सुविधा दी थी। दूसरे हैं चंदूलाल। इन की वसें और ट्रक चलते हैं और इन का दफ्तर इंद्र चौक काठमांडू में है। इन्होंने मुझे थानकोट से काठमांडू तक अपने ट्रक में पहुँचाया था। सड़कों के नाम हैं—शांतिपथ, कांतिपथ, धर्मपथ, गंगापथ, त्रिपुरेश्वर मार्ग आदि। भाषा भी थोड़ी कठिनाई से समझ में आ ही जाती है। फोन को वे लोग फुली कहते हैं, पचास पैसे को मोर, रुपये को मोरू बोलते हैं। वहाँ भारतीय रुपये पर पैंतीस पैसे अधिक मिलते हैं।"

मैं कुछ पूछूँ, उस के पहले वह स्वय बोला, "भारतीयों का व्यवहार बड़ा अजीब होता है। बूढ़ा नीलकंठ जाते समय मार्ग में भारतीय दूतावास भी गया और राजदूत से मिलने की इच्छा व्यक्त की। पर आज नहीं कल, और कल नहीं परसों के दौर के बाद एक दिन उन के पी. ए. (गुप्त साहब) वाहर आये और तरह-तरह के सवाल और शंकाएँ करने के बाद इनकार कर गये।

"फिर दूसरे सचिव (मलहोत्रा साहब) से भेंट हुई। जब मैं ने उन से कहा कि मैं राजदूत साहब से यहाँ हुई भेंट के प्रमाणस्वरूप डायरी में उन के हस्ताक्षर चाहता हूँ तो उन्होंने तीन दिन बाद आने के लिए कहा; क्योंकि राजदूत व्यस्त थे। अब बताइये, मैं बाहर से गया व्यक्ति और मेरे ही देश के लोगों का मुझ से ऐसा व्यवहार ! मैं तीन दिन और कैसे रुक सकता था।"

मैं ने पूछा, "तुम लौटे किस तरह ?"

महाडिक का मूड एकदम बदल गया। उस ने स्वाभाविक ढंग से अपने लौटने का वृत्तांत सुनाया। बिहार के बघा ग्राम के होटल-मालिक चंदरसिंह सरदार का नाम गिनाना वह नहीं भूला जिस ने घर ले जा कर उस की खातिर की और पुत्रवत स्नेह किया।

इस प्रकार २२ जून को नेपाल से चल कर महाडिक २९ जून को ग्वालियर लौट आया।

मैं ने जब पूछा कि गरमियों में इतनी लंबी साइकिल-यात्रा कष्टदायक नहीं होती तो उस ने बताया, "आप-जैसों के लिए, जो घर में ही रहते हैं, गरमी का मौसम कष्टदायक होता है। हमारे-जैसों के लिए तो गरमियों में यात्रा सुविधाजनक होती है। बरसात में यात्रा होती नहीं और सर्दियों में अधिक बोझ रखना पड़ता है। गरमियों में कम-से-कम सामान में यात्रा हो जाती है। कहीं ठहरने की जगह न मिले तो कहीं भी एक चादर लपेट कर पड़े रहो। हाँ, खाने-पीने का विशेष ध्यान रखना पड़ता है ताकि लू न लगे और पेट में गैस न बने। आलू, चावल-जैसे पदार्थ यात्रा में नहीं खाने चाहिएँ। लू से बचने के लिए दही के साथ साबूदाना खाने से ठंडक रहती है और वह हलका भी होता है।"

(१३।२८, बिरलानगर, ग्वालियर)

रात का वक्त था। हवलदार ने एक साइकिल-सवार को बिना रोशनी लगाये आते देखा। उस ने उसे रोका और पूछा, "यह साइकिल तुम्हारी है ?"

"जी नहीं।"

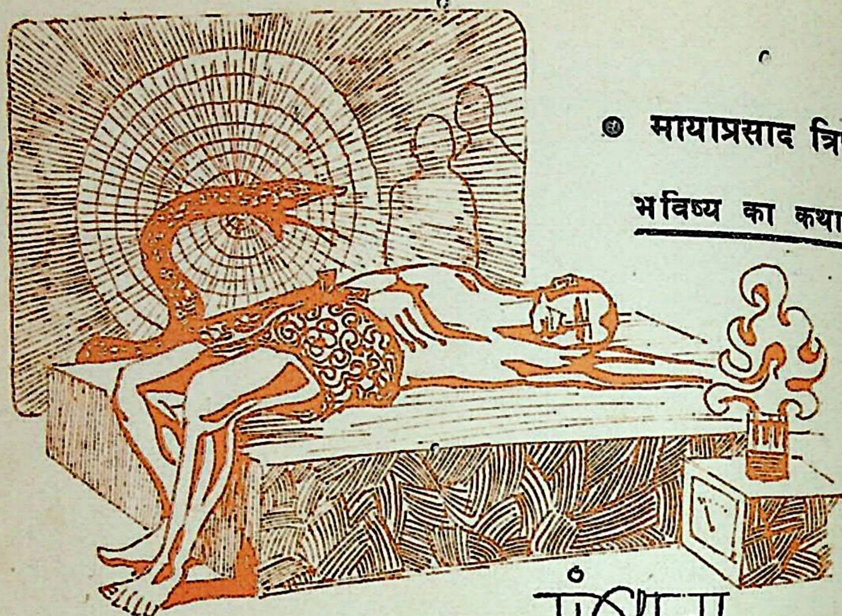
"तुम्हारा नाम ?"

"जी, वह मेरा है।"

★

एक छोटे लड़के को बार-बार दुकान के सामने चक्कर काटते देख फलवाले ने पूछा, "क्या आम चुराने की सोच रहा है ?"

"नहीं, मैं यह सोच रहा हूँ कि किस तरह मैं आम न चुराऊँ !"



● मायाप्रसाद त्रिपाठी

भविष्य का कथा-मंच

मुंबाता और मृत्यु और रहस्य

मुंबाता ताँबा और रेडियम के सुप्रसिद्ध व्यापारी थे। व्यापार की बारीकियों के साथ-साथ वे उन के वैज्ञानिक पहलुओं के मर्मज्ञ भी माने जाते थे। बंबई के देहात के बँगले में आये उन्हें अभी दो ही दिन बीते थे। वे यहाँ कीमती सामान या रुपया न रखते थे। एक दिन प्रातः पत्नी बच्चों के साथ सामान खरीदने बंबई गयी थीं। नौकर और चौकीदार भी घर में न थे। लौटने पर उन्होंने भयंकर दृश्य देखा—

मात्र तौलिया लपेटे मुंबाता खाट पर मरे पड़े थे। उन के पाँव नीचे लटक रहे थे। शरीर एकदम चेतनाशून्य था। कहीं कोई घाव का निशान दीखता न था।

कमरों में कहीं कोई परिवर्तन न था। बाथरूम में जाने पर नौकरों ने देखा कि उन का गाउन वहाँ टँगा हुआ था। विशेष शैंपू, टॉयलेट क्रीम आदि सब धरे पड़े थे। विद्युत-चुंबकीय मैसेजिंग और दैनिक डाएथर्मी (विशिष्ट शक्तिदायिनी व्यवस्था) के बटन ऑफ थे। केवल अल्ट्रासोनिक मैसेजिंग (अतिध्वनि-मर्दन) का बटन ऑन था। स्थिति देखते हुए लगता था कि वे स्नान की तैयारी कर चुके थे।

इस बीच पुलिस भी आ पहुँची थी। तत्काल पूछताछ आरंभ हो गयी। परंतु जाँच-पड़ताल के लिए वहाँ था ही कौन! श्रीमती मुंबाता ने पुलिस को बता ही दिया था कि घर में कोई भी आदमी न था। सब बाहर गये थे। माली और चौकीदार पहले आये और उन्होंने ही श्री मुंबाता को मृत पाया। उन्होंने रोते-रोते यह भी बताया कि घर की सारी चीजें ज्यों-की-त्यों रखी थीं। भीतर के कमरे में फोटो एलेक्ट्रिक सेल की घंटी के बजने का भी कोई संकेत न था।

पुलिस ने दरवाजों आदि की जाँच-पड़ताल शुरू की। उन से भी कोई बात प्रकट न हो सकी। माली-चौकीदार फाटक की छोटी खिड़की से बँगले के प्रांगण में घुसे अवश्य थे, पर उन्होंने उस पर विशेष ध्यान न दिया था। फाटक तो बंद था ही। पर जब श्रीमती मुंबाता और पुलिस ने साथ जा कर फाटक की जाँच की तो उन्होंने देखा कि जाते समय जो ताला खिड़की पर लगाया था, अब वहाँ न था। फाटक वाला ऊपर का ताला तो श्रीमती मुंबाता ने स्वयं अपनी कार के आने के समय खोला ही था। श्रीमती मुंबाता, माली, चौकीदार किसी ने खिड़की के ताले की ओर ध्यान न दिया था।

फाटक की खिड़की वाला ताला बहुत ढूंढ़ने पर बैठक की बगल वाले कमरे की मेज पर रखा मिला। उस में टूटने, तोड़ने आदि का कोई चिह्न न दिखायी पड़ रहा था। श्रीमती मुंबाता ने उस की ताली उस में लगाने की कई बार कोशिश की, पर व्यर्थ! सिपाही और इंसपेक्टर ने भी ताली लगाने की बहुत कोशिश की, पर वह लगती ही न थी। तो क्या ताले में कोई गड़बड़ी आ गयी थी? मुंबाता ने ही तो खोल कर उसे वहाँ नहीं रखा था? गड़बड़ी उन के खोलते समय तो नहीं आ गयी थी? भला उन के खोलने में कैसे आ सकती थी! कहीं ताला भीतर-ही-भीतर टूट तो नहीं गया था?

कुछ लोगों की फुसफुसाहटों से यह भी झलक रहा था कि कहीं चौकीदार या माली ने तो कोई कुचक्र नहीं रचा! वैसे ये दोनों मुंबाता-परिवार के बारह वर्ष से भी अधिक समय से परखे हुए विश्वासपात्र नौकर थे।

इतने सुप्रसिद्ध व्यक्ति की रहस्यमय मृत्यु की सूचना मिलते ही पुलिस अधीक्षक भी आ पहुँचा। उस ने बड़ी सावधानी से जाँच-पड़ताल शुरू की। पायदान पर तथा पहले कमरे में कीचड़ के कुछ निशान थे। परीक्षा करने पर विदित हुआ कि वे पुलिस के बूटों के न थे और न मुंबाता के जूतों के ही। अन्य लोगों के जूतों के भी नहीं। अब तो संदेह और विस्मय और भी बढ़ने लगा। पाँव के निशानों के विशेषज्ञों ने उन चिह्नों की और जाँच आरंभ कर दी।

पुलिस ने ताला और लाश कब्जे में ली। लाश शव-परीक्षा के लिए भेज दी गयी। ताले की परीक्षा पुलिस अधी-

क्षक ने स्वयं की। ताला बड़े अजीब ढंग का था। मुंबाता को छोड़ कर साधारण व्यक्ति से वह खुल भी नहीं सकता था।

शव-परीक्षा में रिपोर्ट से तथ्य प्रकाश में आया कि मृत्यु साँप के काटने से हुई थी !

उधर मेटालर्जिकल रेडियो-एक्टीवेशन टेस्ट तथा एक्सरे की सूक्ष्म जाँचों से पुलिस अधीक्षक को विदित हुआ कि ताला खोला नहीं गया था, वरन बड़े ही सूक्ष्म वैज्ञानिक ढंग से भीतर-ही-भीतर तोड़ दिया गया था। भीतर के स्प्रिंग-सहित कई पुरजे टूटे थे।

अब जो मामला सुलझा लग रहा था और भी उलझता जा रहा था। साँप के काटने और ताले के टूटने वाली बात में कोई सामंजस्य न वैठ पा रहा था। इन सब विचित्र परिस्थितियों और बातों के कारण पुलिस अधीक्षक ने मामले की पड़ताल पुनः नये सिरे से आरंभ की।

कई दिनों की जाँच-पड़ताल के बाद जब कुछ भी निर्धारित न हो पाया और रहस्य और बढ़ता ही गया तो पुलिस अधीक्षक ने अपने सर्वोच्च अधिकारी द्वारा इस की जाँच के लिए स्काटलैंड यॉर्ड के विशेषज्ञों को आमंत्रित करवाया।

स्काटलैंड यॉर्ड से तीन आदमियों का दल उपकरणों सहित भारत सरकार के आमंत्रण पर बंबई आ पहुँचा।

और उक्त पुलिस अधीक्षक को ले कर सारी परिस्थितियों के अध्ययन में पूरी तरह जुट गया।

यहाँ साइकोटेलीविजन (मानव मस्तिष्क पढ़नेवाला यंत्र) से काम नहीं चल सकता था, क्योंकि अभी तक की सारी तफतीशों से यह निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुका था कि मुंबाता की हत्या या मृत्य के समय कोई आदमी कम-से-कम तीन मील के दायरे में न था। वैसे भारतीय पुलिस अधीक्षक साइकोटेलीविजन लगा ही चुका था। उस से वहाँ के नौकरों तथा परिवार के तीनों सदस्यों—श्रीमती मुंबाता तथा दोनों बच्चों के मस्तिष्क से कोई बात न विदित हो पायी थी।

अब उन के सामने केवल एनीमल साइकोटेलीविजन, एर्वोरिना टेलीविजन (जिस से पौधों, वृक्षों आदि की आँख, कान, संवेदना-संस्थानों, जीवन-प्रक्रियाओं से उन के सामने वाले भूत के विविध चित्र एवं संकेत प्राप्त किये जा सकते थे) तथा पाँच-सात और अन्य साइबनेटिक और बॉयोनिक यंत्र शेष बच गये थे। स्कॉटलैंड यार्ड वालों के यही अभिनवतम विशिष्ट तथा जगद्विख्यात परीक्षण-उपादान थे। इन के अतिरिक्त थी—अपराध के अन्वेषण की उन की परंपरागत अप्रतिम प्रतिभा, सूक्ष्मातिसूक्ष्म सूझबूझ, न जाने कितने वर्षों का अनुभव और अद्भुत कार्यदक्षता!

अति सूक्ष्म परीक्षणों से ज्ञात हुआ कि पतली-पतली टहनियों और पतले-पतले वृक्षों पर कुछ ही पहले तीव्र विद्युत-चुंबकीय तरंगों ने काम किया था—वे तरंगें

उन पर फेंकी गयी थीं ! कहीं और से आयी थीं ! विद्युत-चुंबकीय क्षेत्र और उस की प्रतिक्रियाओं का प्रभाव उन में स्पष्ट उभर आया था । विद्युत-चुंबकीय तरगें सब से तीव्र शक्ति से किस दिशा से फेंकी गयी थीं या आयी थीं और शनैः-शनैः उन का अंत किस दिशा से कैसे हुआ—यह भी बहुत-कुछ ज्ञात हो गया ।

फिर वृक्षों के विशिष्ट संवेदना-संस्थानों (जिन्हें वे वृक्षों-उद्भिजों की आँख-कान कहते थे) से पता चला कि विविध वृक्षादि के उन संस्थानों पर तीन व्यक्तियों का धूमिल अक्स पड़ा हुआ था । उसी से यह भी प्रकट हुआ कि उन तीनों व्यक्तियों में से एक के हाथ में कोई छोटा-सा बक्स था । वह बहुत-कुछ घन के आकार-जैसा रहा होगा । उसी से पर्याप्त शक्तिशाली विद्युत-चुंबकीय तरंगें मुंबाता के घर की दिशा में फेंकी गयी थीं ।

इस प्रकार नये रहस्य प्रकट होने लगे और इतने अकाट्य प्रमाण मिलने लगे जिन के आधार पर तफतीश करने वालों को निश्चित प्रतीत होने लगा था कि कुछ आदमी बँगले में घुसे थे ।

पास-पड़ोस में स्थायी रूप से रहने वाले किसी जानवर, पशु, कुत्ते, आदि का कोई पतः न था । कुत्ता पालने की प्रथा अब सारे संसार से प्रायः उठ चुकी थी । भारत से भी अभिजातवर्ग से प्रायः वह विदा ले चुकी थी या ले रही थी । मुंबाता ने भी कोई कुत्ता, बिल्ली, खरगोश नहीं पाल रखा था ।

अतएव स्कॉटलैंड यार्ड के विशेषज्ञों के दल ने अब दूसरा मार्ग अपनाने की सोची । पास-पड़ोस और बँगले के कंपाउंड के भीतर वृक्षों तथा लताओं पर कई घोंसले दिखायी पड़ रहे थे । उन में बहुत-से पक्षी आ-जा रहे थे । चिड़ियों के कुछ छोटे बच्चे चींचीं कर रहे थे । पेड़ों के घोसलों में भी कुछ जीवों के रहने के चिह्न मिल रहे थे । चूहे आदि तो थे ही, किंतु इन छिपने वाले जीवों से कोई वास्तविक सहायता मिलने की आशा न दिखायी पड़ी । अतः पक्षियों से भरपूर सहायता लेने का निश्चय किया गया ।

उसी निश्चय के अनुसार कार्य आरंभ हुआ । पक्षियों की एनीमल साइकोटेलीविजन से जाँच शुरू हो गयी । एक-दो सप्ताह के भीतर उन के मस्तिष्कों के भी सैकड़ों चित्र लिये गये । उन्हें पूरा-पूरा पढ़ा गया । इन परीक्षणों ने भी फिर यही सिद्ध किया कि कुछ आदमी यहाँ घुसे थे और उन के एक हाथ में बक्सनुमा कोई चीज थी । उसी से शक्तिशाली विद्युत-चुंबकीय तरंगें फेंकी गयी थीं जिस से पक्षी घबरा उठे थे । उन की घबराहट का चित्र भी एनीमल साइको-टेलीविजन पर उभर कर आ गया था ।

अंत में इन सब से स्पष्ट हो गया कि वे तीनों व्यक्ति वहाँ अवश्य आये थे, किंतु वे वास्तविक भवन में कदापि नहीं घुसे थे और न मुंबाता के पास ही गये थे ।

फिर शव-परीक्षा की रिपोर्ट तो निश्चित बता रही थी कि उन्हें साँप ने काटा था। यह क्या रहस्य था ? क्या मुंवाता के शरीर में साँप का विष किसी प्रकार इंजेक्ट तो नहीं कर दिया गया था !

जब लोग एनीमल साइकोटेलीविजन परीक्षा में लगे थे तो वे वृक्षों, उद्भिजों से ज्ञात की गयी बातों की छानबीन में विशेष दत्तचित्त थे।

तीसरी बार बड़े धीरज से परीक्षा आरंभ की गयी। उस में अभी कुछ ही दिनों पहले के कई दौड़ते साँपों के चित्र साफ उभरे दिखायी पड़ रहे थे। फिर अन्य कई घोंसलों के पक्षियों की परीक्षा से विदित हुआ कि एक साँप मुंवाता के बाथरूम में घुसा था। फिर उस बाथरूम में उस ने क्या किया, किसी पक्षी के मस्तिष्क से न ज्ञात हो सका। हाँ, जब वह निकला तो कुछ पक्षियों ने बहुत दूर तक चीं-चीं कर झपट्टा मार कर उसे खदेड़ा था। इस समय तक विद्युत-चुंबकीय तरंगों का प्रभाव पक्षियों के मस्तिष्क से गायब हो चुका था। या तो आगंतुकों की मशीन में कोई गड़बड़ी आ गयी होगी या उन्होंने उसे बंद कर दिया होगा। खैर, उन पक्षियों के चित्रों से साँप के खदेड़ने की दिशा भी ज्ञात हो गयी थी। पर उस से कोई लाभ ? कुछ निश्चय न हो सका।

इतने दिनों की छानबीन में एक बात और देखी गयी कि कुछ कबूतर मुंबाता के भवन के एक कोने में बसेरा करते थे और वे बाथरूम के रोशनदान में अकसर आ बैठते थे। अब उन की भी विधिवत एनीमल साइकोटेलीविजन से परीक्षा आरंभ की गयी। एक, दो, तीन, चार कबूतरों की जाँच हो गयी, चित्र भी पढ़े गये पर रहस्य बना रहा।

अंत में एक कबूतर और शेष बच गया था। उस की भी उपर्युक्त संयंत्र से जाँच आरंभ हुई। संयोग से उस के मस्तिष्क के चित्रों से यह बात विदित हुई कि जिस समय मुंवाता बाथरूम में घुसे थे, वह कबूतर भी रोशनदान में बैठा इन्हीं को देख रहा था। उन्होंने अपने कपड़े उतारे और स्नान की तैयारी करने लगे। इसी बीच टब के एक कोने से अकस्मात साँप ने निकल कर उन्हें डस लिया और वे वहाँ से बाहर की ओर कोई बरतन पटकते हुए—यों ही लापरवाही से तौलिया लपेट कर अपने अंतर्गृह की ओर भागे थे।

अब घटनाओं का तारतम्य काफी सुलझा लग रहा था। मुंवाता ने तौलिया लपेटा था। लगता था वे संज्ञा-शून्य हो कर खाट पर गिर पड़े थे और पाँव नीचे लटक रहे थे। इस के बाद इसी मुद्रा में उन का प्राणांत हो गया था।

परंतु मुंबाता के इतने साफ-सुथरे भवन के इतने सुंदर, चिकने फर्श पर साँप आया कैसे ?

उस कबूतर की और जाँच से पता

चला कि उस पर शक्तिशाली विद्युत चुंबकीय तरंगों का बड़ा जबरदस्त प्रभाव पड़ा था। वह घबरा कर जैसे बाथरूम में मुंबाता के ऊपर उतरने को हो गया था। लेकिन उस के मस्तिष्क में तीनों आदमियों का, उन के बक्स या बक्सनुमा यंत्र का कोई चित्र न आया था।

इक्कीसवीं शती के उत्तरार्द्ध से ही मनुष्य अभीष्ट दिशा में विशिष्ट शक्तिशाली विद्युत-चुंबकीय तरंगों से नाना प्रकार के पशु-पक्षियों को मनमाने ढंग पर नियंत्रित करने, सामान्य नैसर्गिक योग्यता-क्षमता के अनुसार उन से काम लेने में सिद्धहस्त हो चुका था।

अतः सारी परिस्थितियों एवं घटनाओं की तर्कभूमि, पारस्परिक संवंध, ऊहापोह यह निर्विवाद सिद्ध कर रहे थे कि विद्युत-चुंवकीय तरंगों का उपयोग तीनों व्यक्तियों ने किसी साँप के यथापेक्षित परिचालन एवं नियंत्रण के लिए किया था। उन्हीं तरंगों से परिचालित हो कर उस ने बाथरूम में मुंबाता को डसा होगा और फिर उन्होंने बाथरूम का कोई बरतन उस की ओर फेंका होगा तो संभवतः घबराहट में निशाना चूक जाने के कारण साँप भाग निकला होगा और मुंबाता ने खाट पर पहुँचते-पहुँचते दम तोड़ दिया होगा या कम-से-कम उस पर गिर कर कुछ काल के लिए वेहोश हो गये होंगे।

बाथरूम में एक गहरा बरतन कोने में फेंका हुआ या छिटका हुआ-जैसा लग रहा था।

तदनंतर बहुसंख्यक वृक्षों, पक्षियों एवं सब कबूतरों की संवेदना एवं मानसिक चित्रों की चेतना की मात्रा तथा विद्युत-चुंबकीय प्रभाव को नापने वाले अति संवेदनशील नवीनतम अणुवीक्षण से जाँच करने पर उन तीनों आगंतुकों—हत्यारों की आकृति एवं उन के बक्स या यंत्र की भी शक्ल तीन-चार दिन के भीतर ही एकदम ठीक-ठीक निर्धारित हो गयी।

बाद में सारा भेद खुल गया कि वे तीनों ताँबे तथा रेडियम के बड़े व्यापारी थे। कई वर्षों से मुंबाता के करोड़ों रुपयों की खयानत किये वैठे थे और माँगने पर टालमटोल करते थे। शेष राशि के माँगने और वसूल करने के झगड़ों में वे घोर शत्रु बन वैठे थे।

-स्थानीय पुलिस अकाट्य प्रमाणों के कारण उन्हें पकड़ने में सफल हो गयी थी।

पाँच फरवरी २०८४ का यह सनसनीखेज हत्याकांड अब भी बंबईवालों की स्मृति में एकदम ताजा था और न्यायालय द्वारा उन तीनों को फाँसी की सजा मिलेगी, इस में किसी को रंचमात्र शंका न थी।

(द्वारा प्रिंसिपल, गर्ल्स कालिज,
ज्ञानपुर, वाराणसी)

● शशिकान्त शर्मा

सरकस में यों तो प्रायः हरेक करतब दर्शकों को मुग्ध करता है, किंतु कुछ खेल वास्तव में चकित और रोमांचित करते हैं। साथ ही वे सरकस को भी मशहूर बना देते हैं। ऐसे खेलों में 'जीप-जंप' या जीप कुदाने का खेल भी है, जिसे देख दिल दहल जाता है।

इस खेल में जीप को बीस-पचीस फुट तक कुदाया जाता है। जब जीप में बैठा आदमी अपनी जीप-सहित इतनी दूर की 'उड़ान' भरता है तो दर्शक सन्नाटे में आ जाते हैं।

प्रायः इस करतब को आदमी करके दिखाता है, परंतु जेमिनी सरकस में मैं ने एक महिला को यह करतब करते देखा। उस का नाम है हेमलता। कहते हैं कि भारत में यही एक महिला है जो इस भयंकर करतब को करती है।

उन दिनों यह सरकस दिल्ली में चल रहा था। जब हेमलता के जीप कुदाने की बारी आयी तो दर्शक साँस रोके बैठे थे। जीप सामने से दौड़ी और एक फर्राटा भरा...लेकिन यह क्या? दर्शकों में खलबली मच गयी। जीप पचीस फुट के बजाय साठ फुट तक

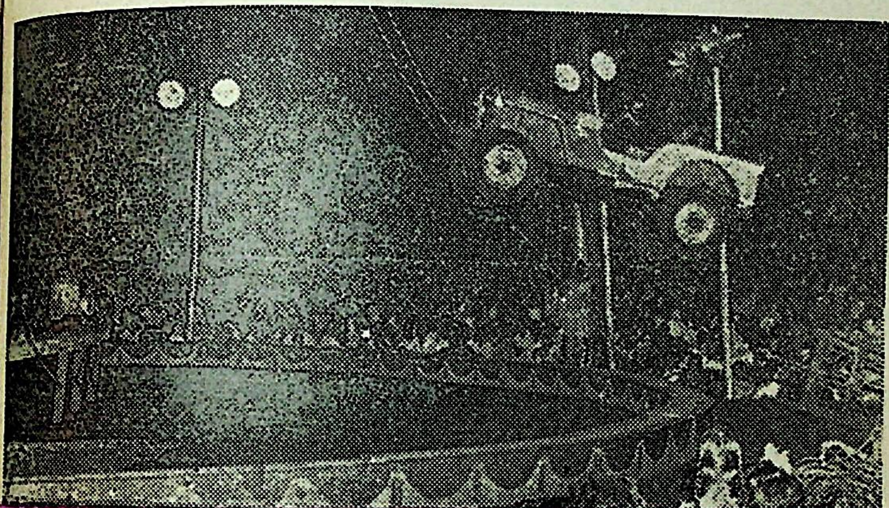
जीप कुदाने वाली महिला



छलाँग गयी। उस दिन हेमलता की जान जोखिम में पड़ गयी थी, किंतु खेल सफल रहा।

इस महिला के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए मैं ने उस से भेंट की। वास्तव में उस की जिंदगी वैसे ही

छोटे-छोटे खेल सीख और बाकायदा कसरतें कीं। जैसे-जैसे वह बड़ी होती गयी अपने गाँव और घर की याद भूलती गयी। उस के सामने एक ही लक्ष्य रह गया—कोई हैरतअंगेज करतब करके सरकस की मशहूर कलाकार बनना।



रोमांचकारी कारनामों से भरी थी जैसा कि वह खेल दिखाती थी।

दस वर्ष की उम्र में वह सरकस के मैदान में आयी। तब उसे इस बात का गुमान भी नहीं था कि किसी दिन वह इतनी मशहूर हो जायेगी! उस वक्त उस ने गरीबी और शौक के कारण सरकस की जिंदगी अपना ली थी। शुरू में उस ने

हेमलता ने अपने बचपन की वे तसवीरें दिखायीं जिन में उस ने कई आश्चर्यजनक कसरतें दिखा कर इनाम पाया था। परंतु उस की असली मंजिल तो कहीं और थी! कुछ साल बाद मशहूर सरकसों में जीप कुदाने का खेल शुरू किया गया। हेमलता को भी यह खेल सीखने की आकांक्षा हुई। उस ने सोचा—

जब दर्शक देखेंगे कि इतना खतरनाक खेल एक लड़की दिखा रही है तो वे दाँतों तले अँगुली दबा लेंगे!

उस ने सरकस के मालिक से जब यह बात कही तो वह मुसकरा कर टाल गया। उसे शक था, कोई लड़की इस भयानक खेल को सीख पायेगी! काफी आग्रह करने पर मालिक मान गया। अब हेमलता की खुशी का पारावार नहीं रहा।"

उस ने सीखना शुरू कर दिया। पहले कुछ दिक्कत जरूर हुई परंतु सीखते-सीखते काम आसान होता गया। मालिक अब उस से विशेष रूप से खुश था, क्योंकि वह जानता था कि एक लड़की द्वारा यह खेल दिखाये जाने पर दर्शक कितने रोमांचित होंगे। लोग सरकस पर टूट पड़ेंगे। इस देश में यह एक नयी बात होगी। किंतु एक दिन मालिक को बड़ी निराशा हुई। लड़की ने इस करतब को आगे सीखने से इनकार कर दिया। मालिक के पैरों तले से जमीन निकल गयी।

महीनों की मेहनत बेकार जा रही थी। आखिर इस लड़की को हो क्या गया? बहुत पूछने पर उस ने बताया कि वह इस खतरे को मोल नहीं लेना चाहती। यह कहते हुए उस की आँखों से आँसू बह चले।

यह लड़की सरकस की सफल कलाकार थी, इसलिए इस पर किसी तरह का दबाव भी नहीं डाला जा सकता था। परंतु सरकस का मालिक यह जानना चाहता था कि एकाएक लड़की ने काम सीखने से इनकार क्यों कर दिया! कितने ही दिनों तक रहस्य नहीं खुला।

एक दिन बातों-ही-बातों में मालिक का तीर निशाने पर बैठ ही गया। वह लड़की से इधर-उधर की बातें कर रहा था। एकाएक बात बदलते हुए बोला, "भई, ये देवी-देवता भी कभी-कभी आदमी को बहुत तंग करते हैं। परसों रात मुझे एक अजीब सपना दिखायी दिया। बताने में मुझे संकोच जरूर होता है, लेकिन वह तुम्हारे बारे में है, इसलिए कहना ही पड़ेगा।"

सपने के नाम से लड़की चौंकी। मालिक की तेज नजरों से यह छिपा नहीं रहा। आखिरकार लड़की ने अपना भेद खोल दिया। कुछ दिन पहले उस ने एक अजीब सपना देखा था—

सरकस का पंडाल दर्शकों से खचाखच भरा है। वह अपनी पोशाक में बड़ी शान से जीप दौड़ाती हुई आयी है, परंतु जीप ठीक जगह पर गिरने के बजाय बीच में ही गिर पड़ी है। देखते-देखते उस के प्राण-पखेरू उड़ गये...

और उसी समय उस की आँख खुल गयी। वह पसीने से तरबतर और बहुत घबरायी हुई थी। उसे यकीन हो गया कि अगर सीखने के बाद उस ने इस भयंकर करतब को किया तो वह जरूर मर जायेगी।

शायद वह इस घटना को भूल भी जाती, लेकिन तीसरे दिन उस ने एक और

अजीब सपना देखा! आधी रात को एक तेजस्वी देवी उस के सामने प्रकट हुई। उस ने करतब सीखने से मना किया और चेतावनी दी कि यदि यह खतरनाक प्रदर्शन किया तो वह किसी दिन प्राणों से हाथ धो बैठेगी।

हेमलता ने जब मेरे सामने इस घटना का वर्णन किया तो उस का सारा शरीर उस समय भी रोमांचित हो उठा। वह बोली, "मैं ऐसी ऊल-जलूल बातों पर विश्वास नहीं करती थी, परंतु इन सपनों ने मुझे आतंकित कर दिया। खैर, काफी समझाने के बाद लोगों ने मुझे यह करतब सीखने और इस का प्रदर्शन करने को मजबूर कर दिया। उन दिनों की घटनाएँ मुझे आतंकित जरूर कर देती हैं, पर मुझे अपनी देवी पर अखंड विश्वास है और ईश्वर की कृपा से मैं कई बार भयंकर दुर्घटनाओं के बावजूद सही सलामत बच गयी हूँ।"

हेमलता ने मध्यप्रदेश में हुए अपने एक प्रदर्शन का रोंगटे खड़े कर देने वाला वर्णन किया—

"प्रदर्शन से पहले मैं भली-चंगी थी। ट्रेनर ने जीप की पूरी तरह से जाँच कर ली। परंतु प्रदर्शन से आधा घंटा पहले मैं ने महसूस किया कि जैसे कोई मुझे पीछे धकेल रहा हो। एक गिलास पानी पी कर मैं ने मानसिक रूप से स्वस्थ होने की कोशिश की, परंतु मेरा दिल किसी भावी आशंका से धड़क रहा था।

"मैं प्रदर्शन के लिए मना भी कर देती, परंतु पहला दिन था। मेरे प्रदर्शन न करने से हजारों लोग निराश होते और सरकस की बदनामी होती।

"आखिरकार मैं ने खेल दिखाने का निश्चय तो कर लिया, परंतु अपने प्रदर्शन का कार्यक्रम अंत में रखवा लिया जिस से मुझे एक घंटा और मिल गया। प्रदर्शन से पहले देवी के सामने शीश नवा कर मैं जीप में आ कर बैठ गयी। इशारा मिलते ही जीप स्टार्ट की और ट्रायल के लिए उसे आगे बढ़ाया... परंतु यह क्या? जीप की आवाज के साथ किसी के रोने-सिसकने और फिर चीखने की आवाज सुनायी दी। इन आवाजों ने मुझे बहुत आतंकित कर दिया। फिर भी मैं ने दिल को थामा। सोच लिया कि जो होना है सो तो हो कर ही रहेगा।

"मैं ने जीप को गति दी और उसे कुदाना चाहा, परंतु हाथ से स्टियरिंग छूटता-सा लगा और जीप ने तेज आवाज के साथ एक भयंकर उछाल भरी। निर्धारित तख्ते पर गिरने के बजाय ज़ीप बगल में जा कर गिरी। मुझे चोटें तो बहुत आयीं, परंतु बच गयी।"

'जीप-जंप' वाकई खतरनाक है। कब हाथ से स्टियरिंग छूट जायेगा या ऐन मौके पर जीप में कोई खराबी आ जायेगी, कहा नहीं जा सकता!

सब से पहले प्रदर्शन के समय कैसा लगा था, यह पूछे जाने पर हेमलता ने कहा, "यद्यपि मुझे हर बार ही एक नया रोमांच

होता है, परंतु पहले प्रदर्शन की बात तो अनोखी ही थी। मैं उत्साह और सफलता के साथ करतब पूरा करके आयी तो पब्लिक और अखबारों ने मुझे इतनी शाबाशी दी कि मेरी आँखों में आँसू आ गये। सच, अगर इस करतब को करते हुए मेरी जान भी चली जाये तो क्या!

"यही बात मैं ने बंबई में सोची थी। मैं अस्पताल में पड़ी थी। कितने ही लोग मुझे देखने आ रहे थे। उस वक्त भी मैं सोच रही थी कि यदि मैं मर गयी होती तो कितनी धूम होती। अखबारों में बड़े अक्षरों में मेरा नाम छपता। बंबई में हुई दर्दनाक दुर्घटना अब भी मेरे मस्तिष्क में ताजी है। लोग कहते हैं कि दुर्घटना जीप खराब होने के कारण हुई थी, परंतु मैं निश्चयपूर्वक कह सकती हूँ कि दुर्घटनाएँ आगे भी होंगी, क्योंकि मैं ने देवी-देवताओं की बात जो नहीं मानी! सब कुछ ठीक होते हुए भी उस दिन मेरे साथ ऐसी दुर्घटना क्यों घटी? 'जीप-जंप' के समय मुझे लगा कि कोई मुझे स्टियरिंग से जबरदस्ती उठाने की कोशिश कर रहा है—और सच मानिये स्टियरिंग मेरे हाथों से छूट गया! यह बात किसी को मालूम नहीं पड़ी। सरकसवालों को तो यही मालूम पड़ा कि जीप में खराबी के कारण वह गलत जगह पर जा कर गिरी।

"दरअसल जीप कुदाने का रहस्य एक्सेलरेटर दबाने में छिपा है। यदि वह पूरे नियंत्रण में हो तो दुर्घटना की आशंका नहीं होती। उस पर जरा-सा नियंत्रण खोने से दुर्घटना हो जाती है। एक्सेलरेटर एक खास प्वाइंट तक दबाया जाता है। यह भी ध्यान रखा जाता है कि नियत स्थल पर जीप के पहुँचते ही एक्सेलरेटर सही ढंग से दब जाये।"

हेमलता इस बात पर विचार कर रही है कि 'जीप-जंप' को और भी भयंकर कैसे किया जा सकता है! अभी तक जीप की कुदान आगे की ओर होती है, परंतु हेमलता कोशिश कर रही है कि जीप पीछे की ओर चला कर कुदान भरी जाये। यह काम बेहद कठिन और खतरनाक है, लेकिन यदि संभव हो गया तो दर्शक दाँतों तले अँगुली दबा लेंगे!

(डी. १४/१६ माडलटाउन,
दिल्ली-९)

नाविक वित्तोरिओ कोमिति जब भी लंबी समुद्र-यात्रा से घर (इटली) लौटता, तो अपने चौदह बच्चों के नाम भूल जाता। काफी सोचने के बाद उस ने एक हल निकाला। उस ने चौदहों बच्चों (उम्र दो से उन्नीस साल) के नाम उन की कलाइयों पर गुदवा दिये।

अभ्रक : अनेक उपयोग

• संतोषकुमार भार्गव

अभ्रक उन खनिजों में से है जो आज मानव के लिए आवश्यक बन चुके हैं। इस का उपयोग सजावट की वस्तुओं, भवन-निर्माण की वस्तुओं तथा व्यावसायिक क्षेत्रों तक में होता है।

अभ्रक कई रूप में पाया जाता है। उन में एक है मस्कोवाइट। यह अल्यूमीनियम् तथा पोटेशियम का सिलिकेट-यौगिक होता है। दूसरा है, बायोटाइट। इस में अल्यूमीनियम, मैग्नीशियम तथा लोहा मिश्रित होता है। अभ्रक की तीसरी श्रेणी है फ्लोगोपाइट। इस में मैग्नीशियम रहता है। व्यापारिक दृष्टि से मस्कोवाइट अभ्रक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। लैपिडोलाइट और पैरोगोनाइट श्रेणी के अभ्रक भी पाये जाते हैं, पर उन का अधिक महत्त्व नहीं है।

अभ्रक एक जटिल यौगिक है। इस की संरचना निश्चित नहीं रहती। यह एक सिलिकेट-यौगिक है। पोटेशियम, सोडियम और लीथियम-जैसे क्षारीय पदार्थों से भी यह मिला हुआ रहता है। इस की कुछ श्रेणियों में बेरियम, मैग्नीशियम, फ्लोरीन आदि भी पाये जाते हैं।

आग्नेय चट्टानों में प्रायः अभ्रक पाया जाता है। वायु तथा धूप आदि से प्रभावित हो कर सिलिकेट खनिज भी अभ्रक के रूप में परिवर्तित होते रहते हैं।

अभ्रक के केलास अधिकतर षट्कोणीय तथा चतुर्भुज रूप में पाये जाते हैं। मस्कोवाइट के केलास का व्यास दस फुट तक पाया गया है। सामान्यतः अभ्रक के केलासों का व्यास केवल कुछ इंचों से ले कर एक फुट तक ही सीमित होता है।

मुख्य रूप से यह भारत में पाया जाता है। भारत में भी इस की सब से अधिक मात्रा बिहार, राजस्थान और तमिलनाडु से प्राप्त की जाती है। बिहार में अभ्रक की खानें ९५ से १२९.३ किलोमीटर तक लंबी और १९.५ से



"मुझे जब पत्नी को तंग करना होता है तो मैं उसे नयी साड़ी ला कर देता हूँ और घर के सारे शीशे छिपा देता हूँ।"

२७ किलोमीटर तक चौड़ी हैं। राजस्थान का स्थान दूसरा है। इस प्रदेश में अभ्रक की खानें जयपुर से उदयपुर तक फैली हुई हैं। तमिलनाडु में इस खनिज की खानें नेलोर जिले में हैं। मैसूर और उड़ीसा में भी अभ्रक की खानें हैं।

अभ्रक की खान कहाँ है, यह पता लगाना आसान नहीं है। भारत में इस का पता पुराने ढंग से ही लगाया जाता है। इस से कभी-कभी पृथ्वी की गहराई में दबी अभ्रक की परतें टूट भी जाती हैं। अब तक टूटी हुई परतें बेकार ही समझी जाती थीं, किंतु अब उन का भी उपयोग होने लगा है। उस टूट-फूट को पीस कर चूरा कर लिया जाता है और वह चूरा अधिकतर दीवारों की सजावट के मसालों में काम में लाया जाता है।

अभ्रक को खान में से निकालने के लिए प्रायः उस की चट्टानों को आरी से चीरा जाता है। इस के बाद पैने चाकू या छुरी से उस की और भी बारीक परतें अलग कर ली जाती हैं। अभ्रक की उन परतों को पारदर्शिता के हिसाब से घटिया-बढ़िया छाँट लेते हैं।

अभ्रक ऊष्मा तथा विद्युत का कुचालक है। यही गुण इस के व्यापारिक महत्त्व का आधार है। इस के एक ब्लाक से असंख्य बारीक परतें प्राप्त की जा सकती हैं। यहाँ तक कि एक इंच मोटे ब्लाक में से एक हजार तक परतें निकाली जा सकती हैं। इन परतों का उपयोग 'कंडेंसरों' के अंदर लगाने के लिए 'पार्टीशन' में किया जाता है।

पवन-मापी यंत्र (अनीमोमीटर) तथा नाजुक दर्पण भी अभ्रक की सहायता से बनाये जाते हैं। अभ्रक पर तेजाब का असर नहीं होता। अतः बॉयलर की जैकेट के आवरण बनाने में भी इस का उपयोग होता है। इन सब से बढ़ कर इस का अधिकतम उपयोग तो विद्युत-यंत्र तथा उपकरण, जैसे डायनमों आर्मेचर, हीटर, टेलीफोन के डायल आदि के बनाने में होता है। रेडियो, वायुयानों तथा मोटर-इंजन के पुरजों में भी अभ्रक का उपयोग

बढ़ता जा रहा है। लीथियम और रूबेडियम लवण बनाने में इस का प्रयोग किया जा रहा है। पोटेशियम के साथ मिला कर इस की खाद भी बनायी जाती है।

अभ्रक पारदर्शक होता है। साथ ही ताप के आकस्मिक उतार-चढ़ाव का भी इस पर अधिक असर नहीं होता। इसलिए इस की काफी मात्रा स्टोव, लैंप तथा गैस-बर्नर की चिमनियों में और भट्ठियों में अग्निनिरोधक पलस्तर करने के काम में आती है।

अभ्रक के चूरे (माइकानाइट) को दो-तिहाई भाग एस्फाल्ट में मिला कर कमरे की छत बनाने के काम में लेते हैं। रबड़ के टायर तथा रबड़ की विभिन्न वस्तुएँ बनाने में अभ्रक काम में आता है। रबड़ की वस्तुओं को साँचें में ढाल कर बनाते हैं। उस समय साँचे में पिघला हुआ रबड़ डालने से पहले अभ्रक का चूरा साँचे में छिड़क देते हैं। इस से ठंडी होने पर रबड़ की वह वस्तु साँचे की दीवारों से चिपकने नहीं पाती और आसानी से बाहर आ जाती है। कृत्रिम पत्थर के चौके बनाने में भी अभ्रक का उपयोग होता है। रंगीन पारदर्शक कागज, विभिन्न प्रकार के खिलौने, रंगमंच के परदों की सजावट तथा चमकीले पेंट-कलर भी अभ्रक की सहायता से बनाये जाते हैं।

अभ्रक की वरमीक्यूलाइन नामक नयी किस्म से इंसूलेटर बनाये जाते हैं। उस में विद्यमान लोहे के कारण ऊष्मा तथा वायु के प्रभाव से उस का रंग भी बदल जाता है। इस प्रकार के अभ्रक का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है।

चिकित्सा के क्षेत्र में भी अभ्रक का अपना विशेष स्थान है। आयुर्वेद-चिकित्सा में अभ्रक-भस्म काफी लोकप्रिय औषध है जो क्षय, प्रमेह, पथरी आदि रोगों के इलाज में प्रयुक्त होती है। वस्तुतः अभ्रक वर्तमान सभ्यता का एक आधार-स्तंभ है।

(द्वारा श्री आर. वी. भार्गव, बिसाऊ गेट, रामगढ़, जि. सीकर)

श्रीमानजी : मैं ने तुम्हें तार भेज कर सूचित किया था कि अपनी माँ को साथ मत लाना...फिर उन्हें क्यों लायी हो ?

श्रीमतीजी : वही पूछने के लिए अम्मा आयी हैं।

★

श्रीमतीजी ने पतिदेव का ध्यान अपने केश-विन्यास की ओर आकृष्ट करते हुए पूछा, "कानों को बालों से ढक कर कैसी लगती हूँ ?"

"कानों के बजाय मुँह को बालों से ढक लिया करो तो ज्यादा अच्छी लगोगी," जवाब मिला।

हास्य-व्यंग्य

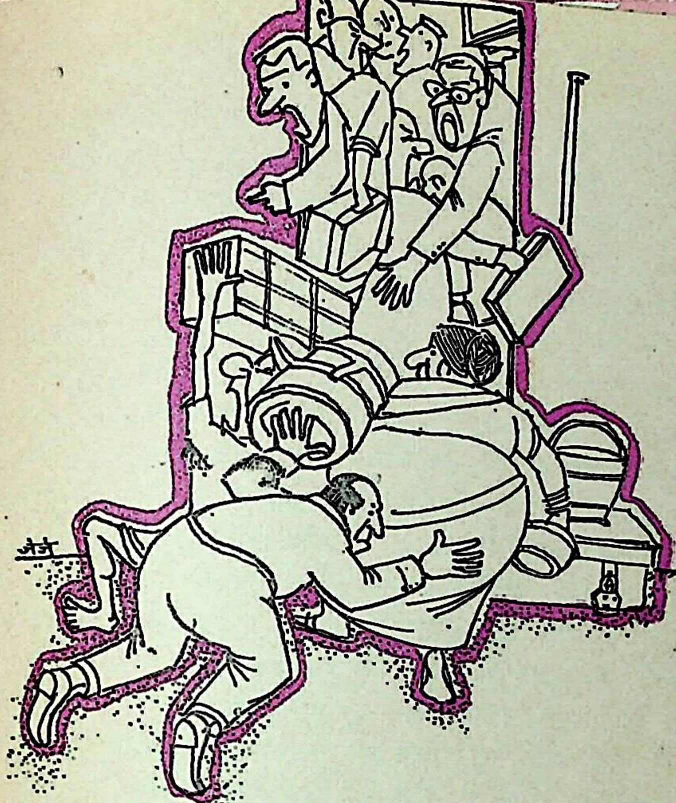
● रोशनलाल सुरीरवाला

आज्ञाकारी टिकटनारायण

कुछ अदद इनसान ऐसे होते हैं जो देखने में तो हुक्म के गलाम लगते हैं, पर हकीकत में ईंट के बादशाह होते हैं। वे आदेश तो शिरोधार्य कर लेते हैं पर काम में ऐसी टँगड़ी मारते हैं कि हुक्म देने वाले की तबीयत में मिर्चें लग जाती हैं और उस की बातों में चुनचुनाहट आने लगती हैं। श्रीयुत टिकटनारायण ऐसे कुछ अदद इनसानों के सिरमौर हैं। पंद्रह साल से वे एक सरकारी दफ्तर में कनफर्म्ड क्लर्क हैं। अपने काम में एकदम दक्ष। चीता से चतुर और सिंह से सावधान। पाँच मिनट पहले दफ्तर पहुँचते हैं और पाँच मिनट बाद उसे छोड़ते हैं।

एक बार बेटिकट सफर करते समय उन के माँ-बाप पकड़े गये थे। टिकटचेकर के टिकट काटते समय उन की माँ को प्रसव - पीड़ा आरंभ हो गयी थी। 'नारायण', 'नारायण' भजते किसी प्रकार सब-कुछ संपन्न हुआ था अतः उन का नाम 'टिकटनारायण' रखा गया (वैसे कायदे से उन का नाम 'बेटिकटनारायण' होना चाहिए था)। खैर, उन का रंग काला है, आँखें छोटी हैं, माथा चौड़ा है, नाक आवश्यकता से अधिक लंबी है, कान असाधारण रूप से बड़े हैं और सामने के दो चमकीले दाँत निचले ओठों को पार कर गये हैं। खोपड़ी पर उन की श्रीमतीजी अंकुश लिये सवार रहती हैं। मगर इस से क्या? वे शरीर से पतले और लंबे हैं तथा चाल से ऊँट की याद दिलाते हैं। उन की जाँघें और टखने घुटनों पर ऋजुकोण बनाने में असमर्थ हैं—मुश्किल से एक सौ पचहत्तर अंश का अधिककोण बना कर रह जाते हैं। दफ्तर में वे 'आज्ञाकारी' के नाम से प्रसिद्ध हैं। किसी ने भी उन्हें कोई काम बताया तो उन के श्रीमुख से 'जो आज्ञा' शब्द ही निकले। फिर यदि किसी कारण से काम चौपट हो जाता है और कोई नाराज होता है तो आप यथाशक्ति सतर हो इतना कहते हैं, "दफ्तर के काम में आप गलती नहीं निकाल सकते।"

श्रीयुत टिकटनारायण के हाथों उन के अफसरों को कई बार पटखनियाँ खानी



पड़ी हैं। कई पैंतरे और दाँव तो बहुचर्चित हो चुके हैं। एक बार नये अफसर ने आते ही टिकटनारायण को खुशखबरी दी, "टिकट बाबू, हमारे आते ही तुम्हारी पे रिवाइज हो रही है। तुम हमें कोई पिक्चर नहीं दिखलायेगा ?"

"जरूर सर, कब चलियेगा ?" टिकटनारायण बोले।

"जब तुम लिवा ले चलो।"

"कौन-सा शो, सर ?"

"जो तुम दिखलाये।"

"तब तो सर, एक प्रार्थना है—आप सपरिवार चलने की कृपा करें।"

"वेल, जब तुम कहेगा, हम विद फेमिली चलेगा।" साहब बड़े खुश हुए।

और तब एक दिन रात में नौ बजे दो ताँगों में लदा साहब का सजा-धजा परिवार सेकंड शो के लिए चल दिया। साइकिल पर टँगे टिकटनारायण पिक्चर की तारीफ करते जा रहे थे। निदेशन, अभिनय, संगीत, नृत्य और गीतों की प्रशंसा-सुरभि उन के श्याम-सरोरुह-मुख से धाराप्रवाह निकल रही थी। साहब के परिवारी जनों के मुखों में पानी आने लगा और उन्हें ताँगों की चाल धीमी मालूम होने लगी। किंतु रायल टॉकीज पहुँचने

पर देश के भविष्य की तरह चारों ओर अंधकार नजर आया तो टिकटनारायण ने साइकिल आगे बढ़ा दी। लौट कर ताँगेवालों से बोले, "रायल टॉकीज बंद है। घोड़े रूवी टॉकीज की ओर मोड़ दो, अभी तो वक्त है।"

और फिर टिकटनारायण ने पिक्चर की पुनर्प्रशंसा आरंभ कर दी, जैसे छोड़ी हुई कहानी का छोर पकड़ लिया हो। पर रूवी टॉकीज वंद था, नावल्टी भी बंद निकला! टिकटनारायण ने तब ताँगेवालों को आदेश दिया, "निशात टॉकीज चलो, जल्दी करो। न्यूजरील या नामावली निकल जाने से क्या होता है!" निशात टॉकीज भी बंद निकला तब टिकटनारायण ने साहव की ओर रुख किया और बड़ी मायूसी से बोले, "सर, आप कहें तो तसवीर-महल की ओर चलें! जरा दूर है, मगर इंटरवल के वाद तो पिक्चर पकड़ ही लेंगे!"

सहसा साहव का सारा परिवार फट पड़ा। रोष, निराशा और अपमान के भाव साकार हो उठे। साहव की संतानों के मुँह का पानी सूख गया और उन की आँखों में छलक आया। श्रीमतीजी साहव पर 'ऑन द स्पॉट' विगड़ पड़ीं। साहव टिकटनारायण पर पलट पड़े, "वेल मिस्टर टिकटनारायण, आइ शैल नैवर फारगेट दिस इनसल्ट! आइ विल सी यू!"

तव टिकटनारायण ने साइकिल एक ओर खड़ी कर गरदन तान ली। ऊपर का ओठ बायीं ओर से जरा-सा उठा और उन के मुँह से चुनौती-भरी तेज-तर्रार आवाज बाहर निकली, "सर, दफ्तर के काम में आप मेरी कोई गलती नहीं पकड़ सकते।"

टिकटनारायण का कहना था कि प्रख्यात लोकप्रिय नेता के निधन पर शहर के सभी सिनेमाघर वंद थे। यह जब साहव और उन के परिवार के किसी भी व्यक्ति को नहीं मालूम तो मुझे ही यह तथ्य कैसे मालूम हो सकता था!

एक बॉस ने टिकटनारायण को आदेश दिया कि उन के कुछ रिश्तेदारों को स्टेशन जा कर रेल में विठा आयें। टिकटनारायण ने आज्ञा शिरोधार्य की। ऐन वक्त पर वे बॉस की कोठी पहुँचे। प्रतीक्षामग्न रिश्तेदारों को साथ लिया और स्टेशन लपके। टिकट देने वाले वावू ने वताया कि गाड़ी प्लेटफार्म पर खड़ी मिलेगी। तव आप रिश्तेदारों को समझाने लगे, "आप लोगों के पास सामान ही क्या है, कमजोर न पड़ें। जो डव्बा सामने हो उसी में राकेट-रफ्तार से घुस पड़ें, बाकी मैं सँभाल लूँगा।"

टिकट-वावू की वात एकदम सही थी। प्लेटफार्म पर पहुँचे तो गाड़ी खड़ी थी। सामने के डव्वे से सवारियाँ उतरते ही टिकटनारायण ने रास्ता रोक लिया और सभी को अंदर पहुँचा दिया। वे लोग बड़े खुश हुए। एक सप्ताह बाद बॉस ने टिकटनारायण को याद किया, "तुम

कितने रद्दी आदमी हो! मेरे रिश्तेदारों को तुम ने किस गाड़ी में बैठा दिया ?"

"पता नहीं सर, गलती कहाँ हो गयी और कैसे हो गयी? मगर मेरे दफ्तर के काम में आप एक भी गलती नहीं पायेंगे।" गरदन ऊँची कर टिकटनारायण ने घोषणा की और अपनी कुरसी पर आ बैठे।

एक साहब को टिकटनारायण से घरेलू पत्र डलवाने का बड़ा शौक था। भला टिकटनारायण को इस में क्या एतराज था, वे सानंद आज्ञा-पालन करते। एक बार साहब ने बहुत-से पत्र टिकटनारायण को दिये। टिकटनारायण दफ्तर बंद होते ही डाकखाने की ओर चल दिये। सहसा एक दिन साहब ने पूछा, "क्या तुम ने सभी पत्र डाक में डाल दिये थे?"

"जी सर।"

"बात समझ में नहीं आती। सभी पत्र समय पर पहुँच जाने चाहिएँ थे। केवल चार आदमी आये और इतनी तैयारी थी। सब सत्यानाश हो गया।" साहब ने शंका की निगाह से टिकटनारायण की ओर एक बार फिर देखा, किंतु टिकटनारायण विरक्त मुद्रा में अविचल खड़े थे। बात वहीं समाप्त हो गयी।

घरेलू चिट्ठियाँ डलवाने का क्रम पुनः चल पड़ा। एक बार साहब ने तीस निमंत्रण-पत्र बाँटने को टिकटनारायण को दिये और कहा "तुम्हारे पास साइकिल तो है ही, कल तक बँट जाने चाहिएँ।"

आग-भरी गरमियों के विकट दिन! टिकटनारायण बड़े परेशान! 'मुझे डाकिया समझ रखा है,' उन्होंने निमंत्रण-पत्र को घूरते हुए अपने-आप से कहा। ऊपर का ओंठ बायीं ओर से तनिक उठ गया। घर जा कर उन्होंने पचीस रुपये अपनी जेब में डाले और निमंत्रण-पत्र बाँटने चल पड़े।

तीसरे दिन आगबबला बने साहब ने दफ्तर में प्रवेश किया और दहाड़ लगायी "मिस्टर टिकटनारायण किधर हैं?"

"मैं यह रहा, सर!"

"आप जरा मेरे केबिन में तशरीफ लाइये," साहब ने अंगारा फेंका।

सभी क्लर्क सहम गये किंतु निर्भीक टिकटनारायण साहब के सामने स्थिर-चित्त जा खड़े हुए। साहब ने क्रोध-वश दो मिनट का मौन रखा, फिर गरजे, "यह क्या शैतानी थी? मैं ने आप को तीस निमंत्रण-पत्र बाँटने को दिये थे और आदमी आये तीन सौ से ऊपर! मेरी सारी इज्जत धूल में मिल गयी!"

"आप ने उन के निमंत्रण-पत्र चेक किये थे, सर?"

"बिलकुल! सब के पास थे।"

"तब मैं क्या कर सकता था सर?"

"तुम्हीं ने गड़बड़ की। मैं ने सिर्फ आप को निमंत्रण-पत्र बाँटने को दिये थे और उन निमंत्रण-पत्रों की संख्या सिर्फ तीस थी," साहब ने दाँत भींच कर कहा।

"मैं कुछ नहीं कह सकता, सर!" टिकटनारायण ने साहब से निगाहें मिला कर कहा, "दफ्तर के काम में मेरी गलती

निकाल कर दिखायें!" साहब का टिकटनारायण से घरेलू पत्र डलवाने का शौक नेताओं से देश-हित की तरह छूट गया।

एक अधिकारी बड़े कंजूस आये। उन के लिए फल का अर्थ घर में काशीफल और बाहर बेर से था। गुड़ को मिठाई कहा करते थे। दफ्तर में किसी अतिथि के आने पर चपरासी को बुला कर वे कई चीजों का आर्डर देते, मगर चपरासी लौट कर न आता। इस अंतहीन क्रम के बीच साहब चपरासियों को गाली देते और अतिथि रूखा ही वापस हो जाता।

एक बार यह काम टिकटनारायण के सिर पड़ गया। संयोग की बात कि तीन अतिथि आये, तब टिकटनारायण वहीं खड़े थे। साहब ने हमेशा की तरह अपनी उदारवृत्ति का परिचय दे डाला, "मि. टिकटनारायण, हम लोगों के लिए मिठाई, नमकीन, चाय और फल तुरंत मँगवाओ— और हाँ, अपने लिए भी।"

"जो आज्ञा" कह टिकटनारायण दफ्तर से बाहर निकल आये और थोड़ी देर बाद साहब ने अप्रत्याशित घटना देखी। उन की मेज पर बढ़िया मिठाई और नमकीन से भरी प्लेटें आ गयीं। लाल-लाल सेब और रसीले अंगूर अलग थे। फर्स्ट क्लास बरतनों में चाय भी हाजिर थी। एक शेयर चार रुपये से कम न था। अतिथियों ने ओठों पर जीभ घुमा कर जो हाथ चलाये तो साहब बैठे न रह सके। उन की आतें-पीतें जल उठीं। केबिन से निकल वे टिकटनारायण की ओर लपके तो देखा कि जनाब अपने शेयर से जूझ रहे थे।

"मि. टिकटनारायण!" साहब बरसे।

"सर, यह कोई दफ्तर का काम नहीं है और इस समय लंच-टाइम है।" टिकटनारायण ने खड़े हो कर जैसे छाता तान लिया।

किंतु एक बॉस से टिकटनारायण का विचित्र पाला पड़ा। वे घर के लिए प्रत्येक चीज टिकटनारायण से ही मँगवाते। गेहूँ, दाल, साग, मिर्च-मसाले, लकड़ी, फल, फर्नीचर, रस्सी, कलई, ऊन, बल्ब, झाड़ू, जूते-सैंडिल सब टिकटनारायण के सिर! खाट में पाया डलवाने भी टिकटनारायण जाते और बाल्टी का पेंदा बदलवाने भी। स्कूल से बच्चे लेने भी टिकटनारायण को ही जाना पड़ता। लांड्री पर ड्राईक्लीनिंग कराने और रजाई में रुई भरवाने का काम भी टिकटनारायण को ही पूरा करना पड़ता। टिकटनारायण परेशान हो गये; किंतु विवश थे। उन्हें 'गृह-व्यवस्थापक' के इस पद से पिंड छुड़ाने का रास्ता नहीं मिल पा रहा था।

बॉस के सुपुत्र की शादी का दिन निकट आ गया। टिकटनारायण ने सभी प्रबंध किये, किंतु बरात का प्रस्थान बस के प्रश्न पर आ कर अटक गया। भरसक कोशिश करने पर भी जब आखिरी वक्त तक टिकटनारायण सरकारी या प्राइवेट बस पाने में असमर्थ रहे तो बॉस

ज्वालामखी-से फट पड़े, "मिस्टर टिकट-नारायण! यदि नौकरी सलामत चाहते हो तो कल सुबह छह बजे तक कोठी के सामने मुझे बस खड़ी मिलनी चाहिए जिस में पचास व्यक्ति दूल्हे को ले जा सकें। जाइये, बस के साथ ही सूरत दिखाइयेगा।"

दूसरे दिन सुबह छह बजे बॉस के घर में अजीब कुहराम मचा था। "कौन मर गया?" के दुखी स्वर चारों ओर उठ रहे थे। महिलाएँ रो रही थीं और बच्चे चीख रहे थे। प्रतिष्ठित बरातियों को पसीना आ रहा था और दूल्हे का दिल बैठा जा रहा था। बॉस की समझ में कुछ न आ रहा था। सहसा वे बाहर निकल कर आये तो बस को देख जैसे दहकते अंगारों पर नंगे पैर जा पड़े! टिकट-नारायण ने संक्षेप में समाधान प्रस्तुत कर दिया, "सर! नौकरी का डर, मरता क्या न करता!"

बॉस की आकृति भयंकर हो उठी। हाथों की मुट्ठियाँ भिंच गयीं, कनपटी की नसें तन गयीं, आँखों से अग्नि-ज्वालाएँ भड़क उठीं, जैसे मुख-गत अणुविस्फोट होने जा रहा था; किंतु टिकटनारायण इस उपक्रम में थे कि अगर बॉस कुछ कहें तो वे गरदन तान कर ऊपरी ओठ का बायाँ कोना उठा कर दफ्तर के काम में गलती निकालने की चुनौती दें। मगर बॉस को तो अब कालिया साँप सूँघ गया था और मिस्टर टिकटनारायण सनातन आज्ञाकारी की विनम्र मुद्रा में धीमे-धीमे पुनः लौट रहे थे।

बॉस की कोठी के सामने जो बस खड़ी थी, वह समूची अंधकार-से काले रंग में पुती थी। उस पर बड़े-बड़े सफेद अक्षरों में लिखा था, 'बैकुंठ-मेल!'

(रायल टॉकीज के पीछे, अलीगढ़)

आचार्य कृपलानी जब कांग्रेस के महासचिव चुने गये तो उन से कुछ प्रश्न पूछे गये—

"आप का जन्म कब हुआ?"

"जन्मपत्री खो गयी, अब गणना होना असंभव है।"

"आप का बचपन कैसा बीता?"

"गुलाम देश के गुलाम बच्चे की तरह।"

"पूर्व संस्कारों के बारे में कुछ बतायें।"

"मौसम को छोड़ मुझ पर कोई संस्कार या प्रभाव नहीं पड़ा।"

"आप का प्रिय शौक क्या है?"

"खुद पर और दूसरों पर हँसना।

● विराज

'सेंट लुई की आत्मा' में

आज के जेट-युग में लंबी उड़ानें हमें आश्चर्य में नहीं डालतीं, किंतु २३ वर्ष पूर्व जब एक सामान्य विमान द्वारा सब से पहले अमरीका से यूरोप तक बिना रुके ३६०० मील की उड़ान की गयी तो वह वास्तव में साहसपूर्ण और रोमांचक कार्य था

मई २१, १९२७ !

सवेरे के सात वजे थे। न्यूयार्क के सब से बड़े हवाईअड्डे 'रूजवेल्ट' पर कुहरा छाया था। शायद रात-भर बूंदें पड़ी थीं। हवाईअड्डे पर जगह-जगह कीचड़ हो गयी थी। इस समय हवाईअड्डे पर 'सेंट लुई की आत्मा' नामक विमान खड़ा था। उस का चालक चार्ल्स लिंडवर्ग बिना रुके अमरीका से यूरोप तक, अतलांतक महासागर के ऊपर से अपना विमान सब से पहले उड़ाने की तैयारी में था।

उड़ान की तैयारी पाँच दिन पहले पूरी हो चुकी थी, पर अतलांतक महासागर और अमरीका के समुद्र-तट पर मौसम खराव हो गया। फिर भी चार्ल्स लिंडवर्ग ने उड़ान करने का निश्चय कर डाला।

अधीरता और जल्दवाजी का एक कारण था। कई अमरीकी और फ्रांसीसी विमान-चालक सर्वप्रथम बिना रुके अतलांतक-पार उड़ने के लिए कटिबद्ध थे। इसलिए चार्ल्स लिंडवर्ग एक क्षण की भी देर करने को तैयार नहीं था। जो चालक न्यूयार्क और पेरिस के बीच बिना रुके सर्वप्रथम उड़ान करे, उसे पचीस हजार डालर का 'ओर्तीग पुरस्कार' दिये जाने की व्यवस्था थी।

न्ययार्क से पेरिस तक ३,६०० मील की इस उड़ान के लिए जरूरी था कि विमान ४५० गैलन पेट्रोल ले कर उड़े। इंजन भी ऐसा होना चाहिए कि वह चालीस घंटे बिना किसी

गड़बड़ी के चलता रहे।

पेट्रोल का भार ही इतना था कि लिंडवर्ग विमान में रेडियो तक नहीं रख पाया था। तव रेडियो भारी होते थे। उस ने एक इंजन वाला विमान वनवाया।

कुछ देर लिंडवर्ग विचारमग्न रहा। वह अपने मन में मौसम, हवा, विमान की शक्ति और बोझ का हिसाब लगाता रहा। जब विमान यहाँ ला कर खड़ा किया गया था, मंद-मंद हवा सामने की ओर बह रही थी। उड़ान शुरू करने के लिए यह अनुकूल थी, पर मिनटों में हवा का रुख पलट गया। पेट्रोल का वोझ भारक्षमता से अधिक था। गीली जमीन भी एक वाधा थी।

सोच-विचार कर लिंडवर्ग ने चालक-कक्ष में वैठ कर तुरंत इंजन चालू किया। पंखे को प्रति-मिनट जितने चक्कर काटने चाहिएँ, उस से वह तीस चक्कर कम काट रहा था। मिस्त्री ने कहा, "ऐसे मौसम में ये इंजन पूरे चक्कर कभी नहीं देते।" चालक-कक्ष की खिड़की से सिर निकाल कर उस ने संकेत किया कि विमान के पहियों के आगे-पीछे लगे लकड़ी के कुंदे हटा दिये जायें।

लिंडवर्ग ने थ्रोटल को पूरा खोल दिया। इंजन के तुमुल शोर और कंपन के साथ वह भारी विमान धीरे-धीरे सरकने लगा। लोगों ने उसे धक्का दे कर आगे बढ़ने में सहायता दी। अब विमान की चाल तेज होने लगी। लिंडबर्ग का सारा ध्यान सँकरे-से 'रन-वे' पर केंद्रित था।

५,००० फुट लंबे 'रन-वे' को आधा पार करते-करते लिंडवर्ग को विश्वास हो गया कि विमान ठीक से उड़ान कर लेगा।

पहिये ऊपर उठे। अब इंजन पूरी शक्ति पकड़ चुका था। लिंडवर्ग ने एक बार फिर पहियों को भूमि से छूने दिया और कुछ ही क्षण वाद फिर उठा दिया।

उड़ान का यह सव से संकटपूर्ण दौर था, जो सकुशल बीत गया। पर सतर्क रहने की अव भी आवश्यकता थी। सामने पहाड़ी थी और ऊपर उठ जाना जरूरी था। यह वाधा भी पार हो गयी। उसे यह देख कर वड़ा संतोष हुआ कि सब यंत्र ठीक काम कर रहे थे। विमान दो सौ फुट ऊँचा, १०५ मील प्रति-घंटे की चाल से, उत्तर-पूर्व की ओर उड़ रहा था।

पिछले वर्ष वसंत ऋतु की एक चाँदनी रात में डाक ले जाने वाले एक विमान को उड़ाते समय उस के मन में यह विचार आया था कि क्यों न वह अमरीका से यूरोप तक की—एक बहुत लंबी उड़ान करे! वह अधिक-से-अधिक दो हजार डालर जुटा सकता था, जब कि इतनी लंवी उड़ान करने में समर्थ विमान कम-से-कम पंद्रह हजार डालर में मिलता।

उस ने अनेक लोगों से अपनी योजना की चर्चा की और सहयोग माँगा। अंत में उसे अपने नगर सेंट लुई में ऐसे सहायक मिल गये जिन्होंने पंद्रह हजार डालर तक का बोझ उठाने का दायित्व लिया। एक

हजार डालर में लिंडबर्ग ने एक 'रायन एयरलाइंस' से यह विमान बनवाया और उस का नाम 'सेंट लुई की आत्मा' रखा।

पत्रकारों ने उसे बहुत परेशान किया। अपने विवरणों को रोचक बनाने के लिए उन्होंने उस की माँ को बार-बार टेलीफोन किये। उस से पूछा कि क्या आप को पता है कि आप का बेटा कितनी खतरनाक उड़ान पर जा रहा है?

पर जब वह लिंडबर्ग से मिली तो उसे पता चला कि काम खतरनाक जरूर है, फिर भी करने लायक है, तब उस ने उसे नहीं रोका।

रात में साढ़े बारह बजे तक तो वह विमान की साज-सँभाल में जुटा रहा। फिर अपने होटल में सोने के लिए पहुँचा। एक मित्र को उस ने दरवाजे पर बिठा दिया कि वह किसी को पास न फटकने दे। झपकी लगी ही थी कि दरवाजा खुला। लिंडबर्ग की आँख खुल गयी। वही मित्र हाजिर था जिसे उस ने बाहर पहरे पर बिठाया था। किसी भीषण दुर्घटना की आशंका से व्याकुल हो कर लिंडबर्ग ने पूछा, "क्या हुआ?"

"तुम चले जाओगे तब मैं क्या करूँगा?"

सिर्फ इतना कहने के लिए उस ने नींद तोड़ी है! लिंडबर्ग के क्रोध और खीझ की सीमा न रही। फिर नींद क्या आनी थी! उस ने यात्रा की तैयारी शुरू कर दी। उस रात वह सो नहीं पाया। इतनी लंबी यात्रा पर जाने के लिए यह कितनी बड़ी कमी थी!

यह पहली उड़ान विमान की मजबूती और विमान-चालक के साहस की ही परख थी। समय बीतने के साथ-साथ पेट्रोल का बोझ कम होने लगा। जब ३,६०० मील की उड़ान पूरी करके विमान पेरिस में 'ल बूर्जे' हवाईअड्डे पर उतरने को होगा तब अधिकांश पेट्रोल जल चुकेगा और भूमि पर उतरने में कोई कठिनाई नहीं होगी। पर अभी तो...

समुद्र के ऊपर उड़ान करने में लिंडबर्ग को खूब आनंद मिला। कभी वह ऊँचाई पर उड़ता और कभी विमान को जल की सतह से तीस फुट ऊपर तक उतार लाता। पर तीन घंटे बाद ही उसे ऊँघ अनुभव होने लगी। यह पिछली रात न सोने का ही परिणाम था।

नींद हटाने के लिए उस ने पानी पिया, यंत्र-फलकों को पढ़ने की ओर ध्यान लगाया, गद्दी पर अपना आसन बदला—ऊँघ कुछ कम हुई।

दोपहर को एक बजे के लगभग नोवास्कोशिया के पास आकाश में बादल भर उठे। वस्तुतः लगभग सौ मील प्रति-घंटे की चाल से उड़ता हुआ विमान इस मेघाच्छादित प्रदेश में आ पहुँचा था।

हवा आँधी बन उठी। उस के थपेड़ों से ही विमान लड़खड़ाने और चरमराने लगा। साढ़े पाँच घंटे की उड़ान में यद्यपि

छह मन पेट्रोल समाप्त हो गया था, तथापि अभी अट्ठाइस मन पेट्रोल का बोझ बाकी था, जो विमान के लिए इस आँधी में खतरनाक था। अनिष्ट की आशंका से लिंडवर्ग ने सुरक्षा-पेटी छाती पर बाँध ली। उस ने विमान की चाल घटा कर नब्बे मील प्रति-घंटे कर दी। मन में आया कि काश इस समय एक पैराशूट उस के पास होता!

लिंडवर्ग का विमान उत्तर की ओर बढ़ रहा था, जहाँ अभी तक शीत ऋतु थी। न्यूफाउंडलैंड पहुँच कर उसे आयरलैंड की ओर मुड़ना था। लिंडवर्ग को लालच हो आया कि यदि मार्ग से थोड़ा हट कर सेंट जोंस नगर के ऊपर से उड़ कर जा सके तो वहाँ के लोग अवश्य ही न्यूयार्क को उस की उड़ान की सूचना भेज देंगे। यद्यपि नोवास्कोशिया के पास तूफान से बचने के लिए चक्कर काटने में उस का काफी समय और पेट्रोल खर्च हो गया था, तथापि उस ने विमान सेंट जोंस की ओर मोड़ दिया। ब्रैटन अंतरीप और न्यूफाउंडलैंड के बीच लगभग दो सौ मील तक समुद्र है।

यह उड़ान उस की सहनशक्ति की ही परीक्षा थी। ऊँघ बरबस आने लगती। कुछ देर बाद लिंडबर्ग को पता चलता कि ऊँघ के कारण विमान पंद्रह या बीस अंश भटक गया है।

सेंट जोंस नगर पर वह शाम को लगभग साढ़े छह बजे पहुँचा। अतलांतक के इस पार उस की उड़ान में अमरीकी महाद्वीप पर पड़ने वाला यह नगर अंतिम था। कुछ समुद्री भाग पहाड़ों के बीच से हो कर नगर तक आया हुआ है। वहाँ बंदरगाहों में मछली पकड़ने वाली नौकाएँ खड़ी थीं। लिंडवर्ग ने झपट्टा-सा मारते हुए विमान को काफी नीचे उतारा। नागरिकों और नाविकों ने गोधूलि वेला में उड़ते विमान को कुछ क्षण तक देखा।

न्यूफाउंडलैंड से आगे लिंडवर्ग की उड़ान अतलांतक के ऊपर शुरू हुई। यह बहुत ठंडा प्रदेश है। समुद्र-तट के आसपास हिमशैल तैर रहे थे और उन से उठती हुई भाप घना कुहरा बनती जा रही थी। कुहरे से बचने के लिए लिंडबर्ग विमान को निरंतर ऊपर उठाने लगा। धुंध भी मानो विमान का पीछा कर रही हो! आठ सौ फुट से उठ कर विमान पाँच हजार फुट की ऊँचाई पर पहुँच गया था। धुंध अब विमान से केवल सौ फुट नीचे थी और बराबर उठने की कोशिश में थी। धुंध ने महासागर को तो छिपा ही रखा था, तारों को भी छिपा देना चाहती थी। तारों को बिना देखे रात में विमान कैसे चलाया जायेगा? यह भी भय था कि बादल जम कर बर्फ बन जाये और बर्फ पंखों तथा यंत्रों पर जम कर उन्हें बेकार कर दे!

भविष्यवाणी तो यही थी कि अतलांतक पर मौसम साफ होता जा रहा

है, फिर यह धुंध और बादल कैसे ! बादलों से ऊपर रहने के प्रयत्न में लिंडबर्ग विमान को ९,३०० फुट तक ले गया। इस से ऊपर ले जाने में अन्य कठिनाइयाँ थीं— सर्दी बढ़ जायेगी, हवा हलकी हो जायेगी जिस से सिर चकराने लगेगा, इंजन की शक्ति कम हो जायेगी, आदि।

विमान ऐसे बादलों के बीच में उड़ रहा था जो मुख्य मेघतल से हजारों फुट ऊँचे उठे हुए थे। उन के बीच में जहाँ-तहाँ पर्वतों की तरह दर्रे और घाटियाँ भी थीं। सर्दी और बादलों से बचने की ललक ने उस की नींद को भगा दिया।

सामने बादल आ गया जिस ने पल भर में तारों को ढक दिया। इस बादल में प्रवेश करते ही हवा विकट हो उठी। सब ओर अँधेरा-ही-अँधेरा! केवल विमान के यंत्र-फलक चमक रहे थे।

१०,५०० फुट की ऊँचाई पर एकाएक लिंडबर्ग को लगा कि ठंड बहुत बढ़ गयी है। यदि भाप विमान में घुस कर वर्फ बन गयी तो यंत्र काम करना बंद कर देंगे। लिंडबर्ग ने दस्ताना उतार कर बाँह खिड़की से निकाली तो हाथ में सुइयाँ-सी चुभ उठीं। उस ने टार्च के प्रकाश में देखा—पंख और उस की टेक पर बर्फ की परत जम गयी थी। इंजन में हवा खींचने वाली नलियाँ किसी भी क्षण बर्फ से रुँध सकती थीं।

लिंडबर्ग ने होशहवास नहीं खोया। यदि वह घबरा कर विमान को मोड़ने की कोशिश करता तो अधिक आशंका यह थी कि विमान नीचे ही गिर जाता, पर लिंडबर्ग ने धीरे-धीरे विमान को मोड़ा और नीचे उतारना शुरू किया। उसे उस वज्रमेघ में से उसी रास्ते वापस आना पड़ा। जब उसे तारे दिखायी पड़ने शुरू हुए तब उस की जान-में जान आयी। वह दक्षिण की ओर मुड़ा और उन तूफानी बर्फीले बादलों से दूर रहता हुआ लक्ष्य की ओर बढ़ा।

सवेरे चार बजे यह जानना कठिन था कि वह अब कहाँ है और उसे किस दिशा में विमान को बढ़ाना चाहिए। नियत मार्ग से बहुत अधिक उत्तर या बहुत अधिक दक्षिण की ओर हो जाने पर पेरिस पहुँचना संभव न होगा। रात में तूफानी मेघों से बचने के लिए उसे दक्षिण की ओर हटना पड़ा था। उसे पता नहीं था कि रात भर हवा किधर से किधर बही और उस ने उसे कहाँ धकेल दिया है!

एक बार तो लिंडबर्ग को लगा कि वह अचेत हो रहा है, साँस बंद हो रही है। उस ने आकुल हो कर भगवान से प्रार्थना की और साथ ही बेचैनी से सिर बाहर निकाल दिया। पवन के तेज ठंडे झोंके ने न केवल उस के फेफड़ों में साँस भर दी, अपितु उस की झँपती पलकें भी खोल दीं।

एक बार उसे लगा कि सामने बायीं ओर दूर हरी-भरी पहाड़ियों से भरा कोई द्वीप है। पर उस के मार्ग में तो आयर-

लैंड के सिवा और कोई द्वीप आना ही नहीं था और आयरलैंड इतनी जल्दी आ नहीं सकता! कुछ देर बाद वह द्वीप और पहाड़ियाँ देखते-देखते लुप्त हो गयीं और उन की जगह केवल धुंध और बादल रह गये। ओह यह मरीचिका थी!

लगभग साढ़े ग्यारह बजे समुद्र में नौकाएँ दिखायी पड़ीं। एकाएक विश्वास न हुआ—कहीं यह भी मरीचिका ही न हो—पर भली भाँति देख कर उसे तसल्ली हो गयी। आयरलैंड नजर आ रहा था।

लिंडवर्ग विमान को नीचे उतारता हुआ एक नौका से पचास फुट ऊपर तक ले आया। कोई नाविक खिड़की में से झाँक रहा था। लिंडवर्ग ने चिल्ला कर पूछा—"आयरलैंड किस तरफ है?" पता ही नहीं चला कि नाविक ने लिंडबर्ग की आवाज सुनी या नहीं।

आयरलैंड का समुद्र-तट स्पष्ट दिखायी पड़ने लगा। न जाने किस प्रकार उस का विमान अपने आप सही मार्ग पर चलता रहा! क्या हवा ही उस की गलतियाँ सुधारती रही? वह आयरलैंड पर ढाई घंटे पहले ही आ पहुँचा था।

आयरलैंड को नीचे देख लिंडवर्ग का हौसला बहुत बढ़ गया। उसे लगा कि अब उस ने मंजिल मार ली है। पर मंजिल अब भी छह सौ मील दूर थी!

विमान में पेट्रोल पाँच टंकियों में भरा था। विमान का संतुलन ठीक बनाये रखने के लिए वह बारी-बारी से हर टंकी का पेट्रोल इंजन में भेजता रहा था। अब उस ने निश्चय किया कि विमान की नाक में वनी टंकी का पेट्रोल बिलकुल समाप्त कर दिया जाये जिस से नाक वाला भाग हलका और पूँछ वाला भाग भारी रहे। उस ने नाक वाली टंकी का संबंध इंजन से जोड़ दिया और निश्चिंत बैठ गया।

वह आयरलैंड और इंगलैंड के बीच समद्र के ऊपर ही था कि इंजन ने एकाएक 'खाँसना' शुरू किया। कुछ ही क्षणों में वह 'फट-फट' की आवाज करके बंद हो गया। विमान गिरने लगा। पर समय रहते लिंडवर्ग समझ गया कि इंजन किसी खराबी के कारण बंद नहीं हुआ है—बंद होने का कारण था नाक वाली टंकी का पेट्रोल समाप्त हो जाना। उस ने तुरंत दूसरी टंकी का पेट्रोल चालू किया और बेकली से प्रतीक्षा करने लगा। यदि इंजन चालू न हुआ तो! समुद्र में नीचे एक जहाज दीख रहा था, पर वह इतनी दूर था कि लिंडबर्ग की सहायता नहीं कर सकता था।

बेचैनी से भरे कुछ क्षणों के बाद, जिन में 'सेंट लुई की आत्मा' निरंतर नीचे गिरता गया, इंजन फिर चालू हो गया। लिंडबर्ग ने विमान को सँभाल कर फिर सीधा कर लिया और इंगलैंड की ओर बढ़ चला। लगभग साढ़े छह बजे विमान इंगलैंड के ऊपर से गुजरा। लिंडबर्ग उसे उतार कर पाँच सौ फुट की नीचाई तक ले आया।

जब लिंडबर्ग फ्रांस पर पहुँचा तब सूर्यास्त होने लगा था। शेरबुर्ग नगर को उस ने गोधूलि के प्रकाश में देखा। पेरिस के हवाईअड्डे तक पहुँचते-पहुँचते काफी अँधेरा हो जायेगा —उस ने सोचा। अब लिंडबर्ग को पहली बार भूख-प्यास का अनुभव हुआ। उस ने एक लिफाफे में रखी सैंडविच खायी और पानी पिया।

उस ने सुना था कि 'ल बूर्जे' बहुत बड़ा हवाईअड्डा है, पर उसे खोजने में उसे थोड़ी-सी असुविधा हुई क्योंकि अड्डे पर प्रकाश का उचित प्रबंध नहीं था। अँधेरे में भूमि पर विमान उतारना भी कम कठिन नहीं रहा। लिंडबर्ग प्रत्याशित समय से लगभग ढाई घंटे पहले पेरिस पहुँच रहा था, अतः उसे आशा नहीं थी कि कोई भी व्यक्ति उसे वहाँ स्वागत के लिए तैयार मिलेगा।

पर सचाई यह थी कि आयरलैंड के ऊपर जब उस का विमान दिखायी पड़ा था, तभी से उस की खबर रेडियो से द्वारा नियमित रूप से प्रसारित हो रही थी। इंग-लैंड के ऊपर और फिर शेरबुर्ग के ऊपर से उस के गुजरने की सूचना भी रेडियो ने दे दी थी। पेरिसवासी उस के स्वागत के लिए इतनी बड़ी संख्या में उपस्थित थे कि हवाईअड्डे के पास मोटरों का शहर-सा बस गया था। भीड़ सँभालने के लिए पुलिस और सैनिकों का विशेष प्रबंध था। विमान के उतरते ही भीड़ बेकाबू हो उठी। हजारों लोग पुलिस का घेरा तोड़ हवाईअड्डे में घुस गये। लिंडबर्ग को, भूमि पर पैर रखने से पहले ही, भीड़ ने कंधों पर उठा लिया और उस की जय बोलते हुए लोग एक ओर को चल पड़े। स्मारिका बटोरने वाले लोगों ने इस ऐतिहासिक विमान का जरा-सा अंश हथियाने के लिए उस का कपड़ा और अल्यूमीनियम की परतें उखाड़नी शरू कर दीं। कुछ ही मिनटों में विमान का बाहरी कलेवर बुरी तरह टूट-फूट गया।

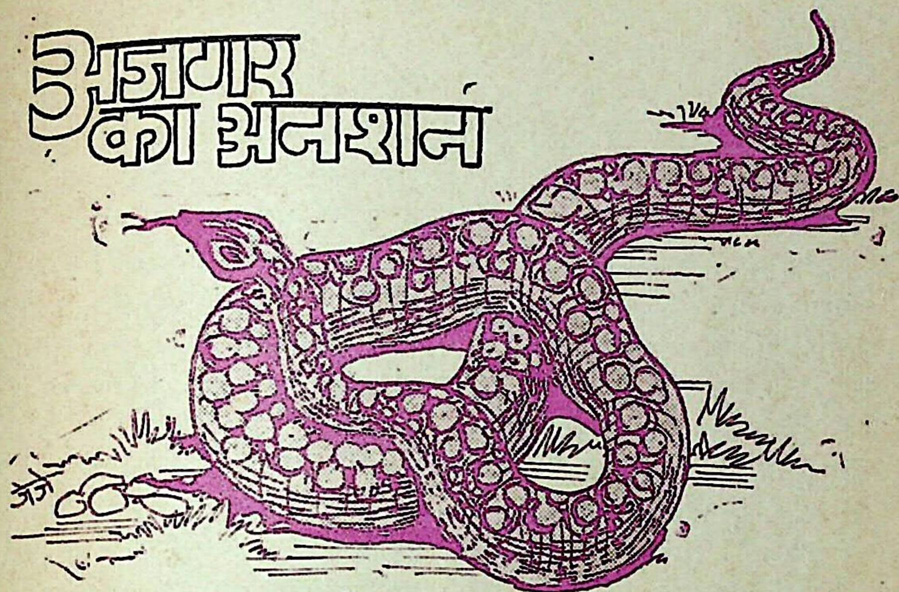
लिंडबर्ग का हाल शायद विमान से भी बुरा हुआ होता। जब भीड़ उसे कंधों पर उठाये लिये जा रही थी, तब दो फ्रांसीसी विमान-चालकों ने जान पर खेल कर लिंडबर्ग को सँभाल कर भूमि पर खड़ा किया और अँधेरे से बाहर निकाल लाये। इस पकड़-धकड़ में लिंडबर्ग का शिरस्त्राण कहीं गिर गया, जो किसी पत्रकार के हाथ लग गया। उस ने उसे पहन लिया। भीड़ उसी को लिंडबर्ग समझ कर अपने साथ ले गयी। इधर लिंडबर्ग को अमरीकी दूता-वास में पहुँचा दिया गया।

लिंडबर्ग की इस उड़ान का महत्त्व यह था कि इस ने यह सिद्ध कर दिया था कि भविष्य में लंबी दूरियों के लिए याता-यात का प्रमुख साधन विमान ही होगा।

(५२-ए, कमलानगर, दिल्ली-७)

"आप का नाटक सुखांत है या दुखांत ?"
"अगर हाउस फुल हो तो सुखांत नहीं तो दुखांत रहेगा।"

अजगर का अनशन



● डॉ० हरिनन्दन पाँडेय

लगभग तीन वर्ष पूर्व की घटना है। न्यूयार्क के एक चिड़ियाघर में बंदी अजगर जरीना ने अनशन कर रखा था। चिड़ियाघर में आते ही उस ने अनशन कर दिया था। जरीना इतना लंबा था कि दुमंजिले मकान की ऊँचाई उस से आसानी से नापी जा सकती थी। स्वस्थ पुरुष की जाँघ से कुछ मोटी उस की काया थी। वजन था करीब २४० पौंड। अनुमानतः उस में पाँच घोड़ों की ताकत थी। उस के भेड़िये-जैसे मुँह में एक कुत्ता आसानी से समा सकता था।

जरीना छह सप्ताह तक अनशन पर रहा। जब स्थिति गंभीर हो चली तो चिड़ियाघर के अधिकारी ने उसे कठघरे से बाहर निकाल कर जबरन उस का अनशन तुड़वाने की योजना बनायी। संध्या को चिड़ियाघर के सभी कर्मचारी आ जुटे। तीस पौंड खरगोश का मांस एक रस्से से दस फुट लंबे बाँस में बाँध दिया गया। एक ओर बारह हट्टे-कट्टे जवान थे और दूसरी ओर अकेला जरीना। वह कठघरे में कुंडली मारे बैठा था।

चिड़ियाघर के क्यूरेटर द्वारा दरवाजा खोले जाने पर जरीना ने आलस से अपना सिर उठाया। मानव और अजगर की आँखें एक-दूसरे से जा टकरायीं—एक की आँखों में विस्मय था और दूसरे की आँखों में

भय। दूसरे ही क्षण जरीना की कत्थई आँखों में कुटिलता दीख पड़ी। उस के भीमकाय शरीर में कंपन हुआ। तभी क्यूरेटर ने झट से एक थैले में जरीना का मुँह दवा लिया। तत्काल अन्य कर्मचारी भी मदद के लिए आ गये। परंतु ज्यों ही अजगर ने विशाल कमानी की तरह अपनी कुंडली खोली तो वह उन के चंगुल से मुक्त था। हाहाकार मच गया। कभी खींचना, कभी पकड़ना, कभी छूट जाने पर टटोलना और हाथ आने पर अजगर को दवोच लेना, यही संघर्ष चल रहा था। जरीना की दुम के तीव्र प्रहार से सभी कर्मचारी उछल कर गिर पड़ते थे।

परिस्थिति इतनी गंभीर हो गयी कि अजगर को कब्जे में लाना जिंदगी और मौत का प्रश्न बन गया। उस से पराजित हो जाने पर कठघरे से वाहर सही-सलामत निकल आना असंभव था। पाँच-छह नौजवान उस की पीठ पर चढ़े हुए थे और संघर्ष से चूर हो कर बुरी तरह हाँफ रहे थे। उन की आवाज से मालूम पड़ता था कि उन की जीभें तालू से जा सटी हैं और गले की नसें तड़क रही हैं।

दस मिनट बीत गये। पास खड़े फोटोग्राफर जान ले कर भाग खड़े हुए। लेकिन अजगर भी बुरी तरह हाँफ रहा था, आखिर उस ने हार मान ली। वह निर्जीव-सा दीखने लगा।

सब से पहले चिड़ियाघर के क्यूरेटर जरीना का मुँह दबाये लड़खड़ाते हुए कठघरे से बाहर निकले। शेष व्यक्ति जरीना का शरीर थामे बाहर आये और उसे धरती पर लिटा दिया। अजगर को अपने सहायक को सौंप कर क्यूरेटर ने उस में भोजन वाला बाँस डालने की तैयारी शुरू कर दी। जरीना के जवड़े को फैला कर गोश्त-सहित वाँस मुँह में डाल दिया गया। जरीना एक वार छटपटाया, परंतु दूसरे ही क्षण उसे वेहोशी आ गयी। वाँस उस के हलक में धँसा चला जा रहा था। उस के वाद गोश्त अंदर छोड़ दिया गया और बाँस खींच लिया गया। इतने कठोर संघर्ष के पश्चात जरीना का मरणव्रत भंग किया जा सका।

(बरियारपुर, मुजफ्फरपुर, बिहार)

स्पेन के सुप्रसिद्ध वायलिन-वादक सारासते के एक प्रोग्राम की किसी समालोचक ने यों प्रशंसा की—"कोई 'जीनियस' (मेधावी) ही इतना बढ़िया वायलिन बजा सकता है।"

इस पर सारासते ने टिप्पणी की—"जीनियस ! अजीब बात है ! मैं सैंतीस वर्ष तक प्रति-दिन चौदह घंटे वायलिन बजाने का अभ्यास करता रहा हूँ, और अब मुझे जीनियस कहा जा रहा है !"



पं॰ शंकरनाथ

रणजीतसिंह के ज्योतिषी मंत्री एवं सेनानी

● कु॰ न॰ नायर

नवीं शताब्दी में आदि शंकर ने अद्वैत दर्शन द्वारा उत्तर भारत में अपना बौद्धिक आधिपत्य स्थापित किया। उस के दस शताब्दी पश्चात केरल के एक इसी नाम के व्यक्ति ने ज्योतिष तथा कूटनीति के माध्यम से एक बार पुनः उत्तर को जीता। केरल में शंकरनाथ ज्योतिष्यार के नाम से प्रसिद्ध यह विद्वान उत्तर में पंडित शंकर-नाथ के नाम से विख्यात हुआ।

केरल के ताली परंबा तालुका में कारीवल्लूर ग्राम में एक सामंत परिवार में उन का जन्म हुआ था। उन की माता पार्वती काव्य में विशेष अभिरुचि रखती थीं। पिता अग्निशरनम नंबूदरी विख्यात विद्वान थे। विवाह के पश्चात लंबे अरसे तक इस दंपती को कोई संतान नहीं हुई।

१७८९ में शंकरनाथ का जन्म हुआ। उन की प्रारंभिक शिक्षा पारंपरिक ढंग से पिता तथा ग्राम्य अध्यापकों द्वारा हुई। वे विलक्षण बुद्धि के थे। अपनी किशोरा-वस्था में ही उन्होंने संस्कृत साहित्य तथा ज्योतिष का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। कम उम्र में ही पारिवारिक दायित्व उन

के कंधों पर आ पड़ा, किंतु ज्ञान-प्राप्ति तथा भ्रमण की उन में प्रबल इच्छा बनी रही। माँ से अनुमति प्राप्त कर युवा शंकरनाथ पैदल ही काशी के लिए रवाना हुए। इस यात्रा में उन की भेंट प्रसिद्ध योगी वरदाचार्य से हुई और शंकरनाथ उन के शिष्य बन गये। उन से धर्मशास्त्र, मंत्रशास्त्र, ज्योतिष आदि की शिक्षा ग्रहण की। उस काल में उन्हें कई दिन भूखे भी रहना पड़ा। मैसूर और कुर्ग की यात्रा करते हुए वे कांचीपुरम पहुँचे। वहाँ उन्होंने आत्मशुद्धि के लिए इकतालीस दिन का व्रत रखा।

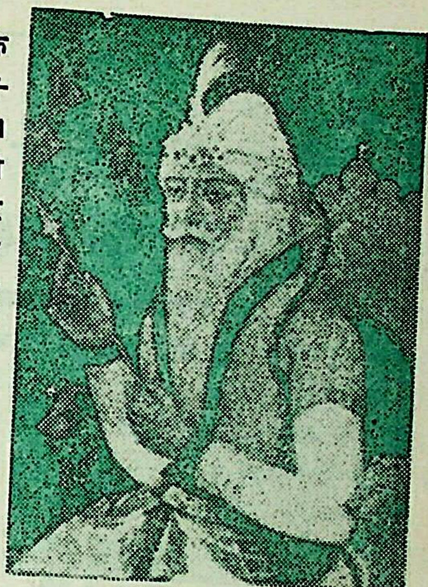
कांचीपुरम में एक देवदासी उन्हें चमत्कारी शक्तियों का योगी समझ कर नैवेद्य के कुछ अंश दे दिया करती थी। एक दिन पाल्लार नदी में स्नान करते हुए उन्हें कामाक्षी देवी की एक प्रतिमा मिली जिसे वे अपने साथ ले आये और सारे जीवन उस की पूजा करते रहे। यह प्रतिमा उन की मृत्यु के बाद उन्हीं के ग्राम के मंदिर में स्थापित कर दी गयी।

कई तीर्थों की यात्रा के पश्चात शंकरनाथ काशी पहुँचे। विश्वनाथ का दर्शन करने के पश्चात वे घर नहीं लौटे। काशी में वे वैदिक शास्त्रों के गहन अध्ययन में जुट गये। शीघ्र ही संपूर्ण उत्तर भारत में उन की ख्याति फैल गयी। उन की भविष्यवाणियों ने लोगों को उन की ओर आकर्षित किया। राजाओं और रईसों ने उन का सम्मान किया तथा उन्हें बुलाने के लिए पालकियाँ और सजे हुए हाथी तक भेजे। उन्हें बहुमूल्य वस्तुएँ भेंट में मिलीं, किंतु उन्होंने उन्हें धर्मार्थ संस्थाओं को दान कर दिया। हिमालय की एक छोटी-सी रियासत 'कोटे काँगड़ा' के महाराज शमशेरचंद ने, जो उन दिनों बनारस की यात्रा पर थे, शंकरनाथ की विद्वत्ता के बारे में सुना एवं उन से भेंट की। महाराज ने उन्हें अपना आध्यात्मिक गुरु माना और दरबार में प्रमुख ज्योतिषी के रूप में नियुक्त किया। तब शंकरनाथ २७ वर्ष के थे।

उस समय अँगरेज अपने प्रभाव-क्षेत्र को पंजाब तक बढ़ाने का प्रयत्न कर रहे थे। 'कोटे काँगड़ा' के महाराज अँगरेजों के मित्र थे किंतु उन्हीं के निकट संबंधी महाराज रणजीतसिंह ईस्ट इंडिया कंपनी का विरोध कर रहे थे। अँगरेज इस महान शासक और योद्धा से मैत्रीपूर्ण संबंध बनाने के हर संभव प्रयत्न कर रहे थे किंतु महाराज रणजीतसिंह उन के प्रलोभनों में नहीं आये। यहाँ तक कि उन्होंने अँगरेजों का अपने क्षेत्र में आना तक वर्जित कर दिया था। एक साहसी अँगरेज यात्री डॉ. मूरक्राफ्ट इस निषेधाज्ञा की परवाह न करते हुए पंजाब में घुस आया तो उसे गिरफ्तार कर मंडी के किले में कैद रखा गया। इस से अँगरेज क्रुद्ध हो गये और उन्होंने पंजाब के घेरे की तैयारियाँ शुरू कर दीं। 'कोटे काँगड़ा' के महाराज ने खतरे का आभास पा कर शंकरनाथ को

महाराज रणजीतसिंह के पास भेजा ताकि डॉ. मूरक्राफ्ट की मुक्ति के लिए वे महाराज रणजीतसिंह को राजी कर सकें। महाराज रणजीतसिंह ने शंकरनाथ की सलाह मान ली और बंदी को मुक्त कर दिया। शंकरनाथ की असाधारण योग्यता से प्रभावित हो कर महाराज रणजीतसिंह ने शंकरनाथ को अपनी मंत्रि-परिषद का सदस्य बना लिया।

शंकरनाथ का प्रभाव राजनीतिक क्षेत्र में स्थायी सिद्ध हुआ। उन्होंने महाराज तथा अँगरेजों के बीच संधि कराने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। अपनी पैनी दूरदर्शिता के बल पर शंकरनाथ ने अंततः संपूर्ण भारत पर अँगरेजी सत्ता के छा जाने की भविष्यवाणी की थी। राजनीतिक मामलों में उन की सलाह का इतना प्रभाव था कि जहाँ महाराज तथा सिख सरदार उन से सलाह किया करते थे, वहाँ अँगरेज भी उन की सलाह से अपने को लाभान्वित करते थे।



महाराज रणजीतसिंह



महाराज स्वाति तिरुन्नाल

गवर्नर-जनरल लार्ड विलियम बेंटिक, लुधियाना में अँगरेज पोलीटिकल एजेंट सर सी. वार्ड, आगरा के डिप्टी गवर्नर सर ज्री. आर. क्लार्क आदि उन का बहुत सम्मान करते थे। महाराज रणजीतसिंह ने उन

की सेवाओं के लिए उन्हें तथा उन के वंशजों को जागीरें प्रदान कीं।

सीमाओं पर अशांति के समय शंकरनाथ महाराज के साथ गये। अफगानों के साथ संघर्ष में किसी की तलवार से शंकरनाथ के एक गाल पर घाव हो गया। रणजीतसिंहजी उन की सहायता के लिए उन के पास पहुँचे और शत्रु के हाथ से तलवार छीन कर वहीं पर उस का वध कर दिया। यह तलवार बाद में शंकरनाथ को महाराज द्वारा भेंट कर दी गयी। आज भी वह उन के वंशजों के पास सुरक्षित है।

शंकरनाथ अपने परिवार के उन सदस्यों को भूले नहीं जिन्होंने मुसीबत में उन की सहायता की थी। उन्होंने अपनी माँ का हाल जानने के लिए कई संदेशवाहक भेजे और एक बड़ी धनराशि भी भेजी। कांचीपुरम में जिस देवदासी ने उन की सहायता की थी उसे भी उन्होंने पुरस्कृत किया।

वैदिक संस्कारों में उन की अगाध निष्ठा थी। लाहौर में उन्होंने दो बार चंद्रायण व्रत रखा और 'सर्वस्व-दान' के रूप में पचास हजार रुपये दान किये। अफगानों के साथ युद्ध-समाप्ति के बाद उन्होंने एक बार यज्ञ किया। अपने शिष्यों के साथ कुछ समय तक वे ज्वालामुखी (हिमाचलप्रदेश) में रहे। सूर्यग्रहण के अवसरों पर वे प्रायः कुरुक्षेत्र में गोदान, भूदान और अन्नदान किया करते थे।

शंकरनाथ की ख्याति चारों ओर फैल चुकी थी। त्रावणकोर के महाराज स्वाति तिरुन्नाल ने, जो स्वयं प्रसिद्ध विद्वान एवं कवि थे, शंकरनाथ को तिरुअनंतपुरम आने का निमंत्रण भेजा। महाराज रणजीतसिंह की अनुमति प्राप्त कर बहुमूल्य भेंटों के साथ वे तिरुअनंतपुरम के लिए रवाना हुए। अँगरेज अधिकारियों ने उन की सुरक्षित यात्रा के लिए सभी पड़ावों पर सुविधाएँ उपलब्ध करवा दीं।

१८२७ में वे तिरुअनंतपुरम पहुँचे। उन के साथ लायी गयी बहुमूल्य भेंटों में कई दुर्लभ संस्कृत-पांडुलिपियाँ भी थीं। इन में से एक 'देवी भगवतम्' थी जिस का उन्होंने मलयालम में अनुवाद किया, किंतु अपने अंत समय तक वे केवल आठ अध्यायों का अनुवाद कर सके थे। बाद में उन के पुत्र ने इसे पूरा किया।

महाराज स्वाति तिरुन्नाल ने पहले उन्हें द्वितीय न्यायाधीश के पद पर नियुक्त किया। बाद में वे त्रावणकोर के उच्च न्यायालय (सदर कोर्ट) के प्रमुख न्यायाधीश बने। इस उच्च पद पर वे अधिक दिन नहीं रहे। अपने विरोधियों के कुचक्र के कारण १८३४ में पदत्याग कर अपने गाँव चले गये। वहाँ वे अपनी माँ और रिश्तेदारों के साथ रहे। शीघ्र ही वे लाहौर लौट गये, जहाँ महाराज रणजीतसिंह ने उन्हें पुनः मंत्री नियुक्त किया।

महाराज रणजीतसिंह की मृत्यु के पश्चात महाराज कुड़कसिंह तथा उन के

उत्तराधिकारी महाराज शेरसिंह के शासन-काल में शंकरनाथ मंत्री के रूप में कार्य करते रहे। महाराज रणजीतसिंह के उत्तराधिकारी प्रशासनिक योग्यता में उन के समकक्ष नहीं थे। सिख सरदार, जो अब तक मजबूत हाथों के नीचे दबे हुए थे, विद्रोह कर बैठे और सारे पंजाब में अशांति भड़क उठी। शांत करने के सभी प्रयत्न निष्फल सिद्ध हुए। शंकरनाथ ने अपनी दूरदर्शिता से यह भाँप लिया कि अँगरेज पंजाब को हस्तगत कर लेंगे। अतः मंत्रिपद से इस्तीफा दे कर वे केरल लौट आये। उन की भविष्यवाणी सत्य निकली और १८४९ में अँगरेजों ने पंजाब को हस्तगत कर लिया।

त्रावणकोर में प्रमुख न्यायाधीश के पद पर रहते समय उन्होंने लक्ष्मी अम्मा नामक महिला से विवाह कर लिया था जिन से एक पुत्र और एक पुत्री पैदा हुए। १८४४ में पंजाब से लौटने पर महाराज स्वाति तिरुन्नाल ने उन्हें फौज-दारी कमिश्नर नियुक्त किया और वे तिरुअनंतपुरम में अपने परिवार के साथ बस गये।

अंतिम दिनों में अँगरेज उन के प्रति अनुदार हो गये थे। शंकरनाथ को रण-जीतसिंह ने दो गाँवों की जागीर दी थी। जब अँगरेजों ने पंजाब हथिया लिया तो इन गाँवों का लगान शंकरनाथ को मिलना बंद हो गया।

महाराज स्वाति तिरुन्नाल के उत्तरा-धिकारी महाराज उत्तरम तिरुन्नाल मार्तंड वर्मा के समय में भी शंकरनाथ फौजदारी कमिश्नर के रूप में कार्य करते रहे। सन १८५८ में एक दिन तिरुअनंतपुरम के श्रीपद्मनाथ मंदिर में एक उत्सव में भाग लेने की तैयारी करते समय अचानक उन्हें दौरा पड़ा और उन की मृत्यु हो गयी।

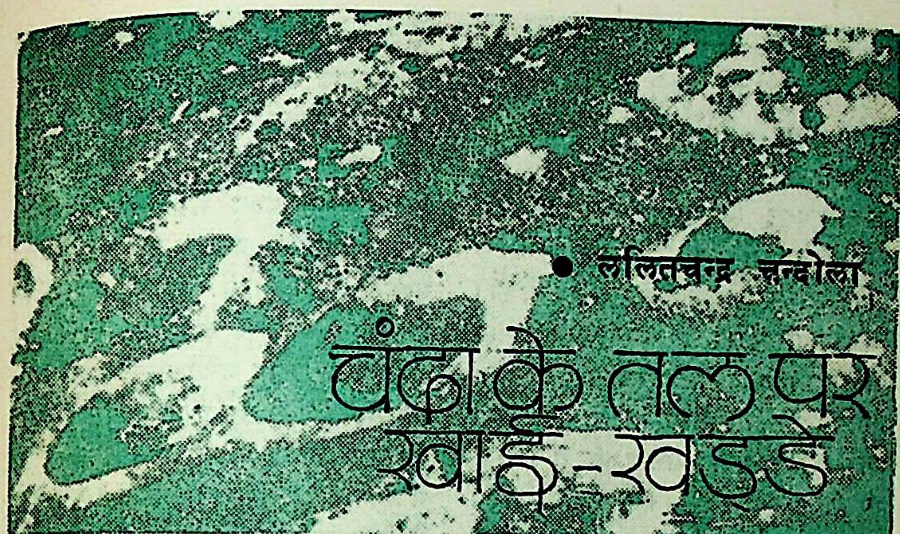
(द्वारा वि. द. पुरोहित, ई–१४६ बी. के. दत्त कॉलोनी, करबला, नयी दिल्ली-३)

विश्वप्रसिद्ध वायलिन-वादक पाब्लो कासल तिरासी वर्ष के हो गये थे। किसी ने उन से पूछा, "इस उम्र में भी आप को चार-पाँच घंटे रोज नियमित अभ्यास करने की क्या जरूरत है?"

"है...क्योंकि मैं तरक्की कर रहा हूँ," पाब्लो ने उत्तर दिया।

*

४,२१,०५,२६,३१,५७,८९,४७,३६८ को एक सेकंड में दूना किया जा सकता है....सिर्फ अंत के ८ को उठा कर सब से पहले रख दीजिये— संख्या दूनी हो जायेगी।



हिंदू ग्रंथों के अनुसार—इंद्र ने गौतम की पत्नी अहल्या के साथ छल किया। इस कुकृत्य में चंद्रमा की साँठ-गाँठ थी। ऋषि ने अपनी मृगछाला चंद्रमा के मुँह पर दे मारी जिस से वह कुरूप हो गया और उस के मुँह के गढ़े नहीं भर सके। चंद्र-तल पर गढ़ों के बारे में यह एक प्राचीन आख्यान है।

आधुनिक युग में खगोलविदों तथा वैज्ञानिकों ने चंद्रमा के बारे में जानकारी प्राप्त करने का निरंतर प्रयास किया है। दूरबीन से स्पष्ट हो गया है कि चंद्र-तल सपाट नहीं, वरन ऊँचा-नीचा तथा विवर-युक्त है।

वैज्ञानिक के लिए इतना ही पर्याप्त नहीं है। वह यह जानने का प्रयत्न कर रहा है कि ये गढ़े कैसे बने! पृथ्वी पर मृत या जीवित ज्वालामुखियों के मुँहों तथा चंद्र-विवरों की शक्ल में समानता दिखायी देती है। प्रश्न उठता है कि क्या पृथ्वी पर ज्वालामुखियों के विस्फोट के समान ही प्राकृतिक कारणों से चंद्रमा के गढ़े बने हैं? इस का उत्तर जानने से पहले हमें यह जानना चाहिए कि पृथ्वी पर ज्वालामुखी क्यों बनते हैं।

पृथ्वी का ऊपरी भाग ठोस चट्टानों का बना है। ये चट्टानें या तो थल पर दिखायी देती हैं या समुद्र के जल से ढकी होने के कारण दिखायी नहीं देतीं। इन चट्टानों के नीचे एक विराट तथा गरम क्रोड है, जो निकिल तथा लोहे-जैसे भारी तत्त्वों का बना है। अत्यधिक गरम

तथा विराट क्रोड ऊपर की हलकी चट्टानों को पिघला कर पृथ्वी के छिद्रों द्वारा उन्हें लावा के रूप में उगल देता है। यही ज्वालामुखी-विस्फोट है। स्पष्ट है कि ज्वालामुखी की उत्पत्ति के लिए यह आवश्यक है कि ग्रह या उपग्रह की आंतरिक एवं बाह्य चट्टानें विषम घनत्व की हों।

क्या चंद्रमा को दो विषम घनत्व के भागों में बाँटा जा सकता है? वैज्ञानिकों को ज्ञात हुआ है कि पूरे चंद्रमा का औसत घनत्व उतना ही है जितना पृथ्वी पर प्राप्त सतही चट्टानों का। इस का अर्थ यह है कि पृथ्वी तथा चंद्रमा के बाहरी आंतरिक भाग एक ही प्रकार के होंगे। चंद्रमा का क्रोड भी हलकी चट्टानों का बना होगा। ऐसी हालत में वहाँ ज्वालामुखी-क्रिया संभव नहीं है।

इस तथ्य की पुष्टि इस से हुई कि ज्वालामुखी के साथ-साथ भूकंप भी उत्पन्न होते हैं और चंद्रमा में भूकंपों का अभाव पाया गया है। 'इन गढ़ों की उत्पत्ति का कारण ज्वालामुखी-क्रिया है', इसे एक अन्य कारण से भी नहीं माना जा सकता —कारण है इन गढ़ों का बहुत बड़ा आकार होना। पृथ्वी पर ज्वालामुखी-जनित गढ़ों से ये चंद्र-गढ़े कई गुना बड़े हैं। इतने बड़े गढ़े ज्वालामुखी द्वारा नहीं बन सकते।

'ज्वालामुखी-सिद्धांत' की कमियों से पार पाने के लिए अमरीकी वैज्ञानिकों ने एक नया सिद्धांत —उल्का-सिद्धांत— प्रतिपादित किया। इस के अनुसार चंद्रतल पर गढ़े उस पर लगातार गिरने वाले ब्रह्मांडीय उल्का-पिंडों से बने हैं। उल्का-पिंड पृथ्वी पर भी गिरते रहते हैं, पर पृथ्वी के वायुमंडल में प्रवेश करते ही उल्काएँ जलने लगती हैं। अधिकांश उल्काएँ वायुमंडल में जल जाती हैं और वाष्प बन कर लुप्त हो जाती हैं। कभी-कभी कोई उल्का जलते-जलते पृथ्वी पर गिर पड़ती और उस पर गढ़ा बना देती है। अमरीका के अरिजोना में तथा भारत में लोनार (महाराष्ट्र) नामक स्थान पर उल्का-जनित गढ़े हैं। चंद्रमा में वातावरण तो है ही नहीं इसलिए उल्का जल कर नष्ट नहीं होती, वह चंद्र-तल तक पहुँच कर अपने वेग के कारण उस पर गढ़े बना देती है।

हाल ही समानव तथा मानवहीन उड़ानों द्वारा चंद्रमा के पृथ्वी-विमुख भाग के फोटो लिये जा चुके हैं। इन चित्रों द्वारा ज्ञात हुआ है कि चंद्रमा का परोक्ष भाग भी विवर-युक्त है तथा इन विवरों की संख्या उस भाग में कुछ ज्यादा है। 'उल्का-सिद्धांत' के मतानुयायियों ने दलील दी कि पृथ्वी-विमुख चंद्र-खंड के अंतरिक्ष की ओर अभिमुख होने के कारण उस में ज्यादा उल्काएँ गिरती हैं।

बाल्डविन ने भी 'उल्का-सिद्धांत' को आगे बढ़ाया। उस ने कहा कि उल्कापात से गढ़ा-निर्माण की क्रिया बिलकुल वैसी है जैसी वायुयान से गिराये बमों आदि

द्वारा गढ़े बनने की क्रिया। अधिक शक्ति का बम पृथ्वी में अधिक दूर तक धँसता है, इस कारण अधिक व्यास वाला गढ़ा बनाता है। बाल्डविन ने विभिन्न क्षमता के बमों द्वारा निर्मित गढ़ों की गहराई तथा व्यास में संबंध स्थापित किया। चंद्रमा के गढ़ों की गहराई तथा चौड़ाई में भी वही अनुपात पाया गया।

पर 'उल्का-सिद्धांत' भी कुछ तथ्यों की व्याख्या करने में असमर्थ रहा। वे तथ्य हैं—कई छोटे-बड़े गढ़ों का आसपास होना, एक बड़े गढ़े में छोटे गढ़े का बनना तथा सब से महत्त्वपूर्ण यह कि आसपास बने गढ़ों की दीवारों का सही-सलामत खड़ा रहना। उल्काओं से आसपास बने गढ़ों की दीवारें सुडौल नहीं रह पातीं।

उपर्युक्त दो सिद्धांतों की कमियों को देखते हुए पिछले साल ब्रिटिश वैज्ञानिक डॉ. एलन मिल्स ने 'बुद्बुद-सिद्धांत' प्रतिपादित किया है। इस वैज्ञानिक ने गढ़ों की उत्पत्ति का समय चंद्र-भूमि के ठोस बनने के बाद न ढूंढ कर, उस समय ढूंढ़ निकाला है जब चंद्रमा की उत्पत्ति स्वतंत्र रूप से 'पदार्थ-बादल' के ठोस हो जाने से हुई थी। ठोस होने की इस क्रिया में अंदर घिरी गैस बुद्बुदा कर बाहर निकलने लगी। गैस के इन बुद्बदों के बाहर निकलने से ही चंद्र-तल पर ये गढ़े बने। गैस के इन बुद्बुदों की तुलना किसी कड़ाही में बन रहे पुडिंग के अर्द्ध-तरल पदार्थ में बनने वाले छिद्रों से की जा सकती है।

चंद्रमा में गुरुत्वाकर्षण-शक्ति पृथ्वी की अपेक्षा छठा हिस्सा है। इस कारण गैस की निश्चित मात्रा के बाहर निकलने से जितना बड़ा गढ़ा पृथ्वी पर बनता है, चाँद पर उतनी ही गैस की मात्रा से छत्तीस गुना बड़ा गढ़ा बन जायगा। इस तरह चंद्र-गढ़ों का बड़ा होना तर्क-सम्मत हो जाता है। जहाँ तक आसपास दो गढ़ों का बिना टूटी दीवार के साथ खड़े रहने का प्रश्न है, डॉ. मिल्स ने प्रत्यक्ष प्रयोग द्वारा इसे सिद्ध कर दिया है। डॉ. मिल्स ने ऐसी मशीन बनायी है जो भिन्न-भिन्न प्रकार के गढ़े पलक झपकते बना देती है।

इतना ही नहीं, डॉ. मिल्स ने यह भी घोषणा की है कि अगर 'बुद्बुद-सिद्धांत' सही है तो चंद्रमा का आंतरिक भाग शहद के छत्ते की तरह खोखला होगा। इस तथ्य की पुष्टि तो तभी संभव हो पायेगी जब उत्खनन द्वारा चंद्र-गर्भ से चट्टानें प्राप्त की जायेंगी।

इस नये सिद्धांत से चंद्रमा के गढ़ों की ही नहीं, मंगल ग्रह पर पाये जाने वाले गढ़ों की उत्पत्ति की व्याख्या भी हो जाती है। अगर किसी अन्य ग्रह बृहस्पति, प्लूटो अथवा नेपच्यून में भी विवर मिले तो वैज्ञानिकों को आश्चर्य न होगा।

(डी–५१, एम. आई.जी. कालोनी,
गाँधीनगर, बाँद्रा पूर्व, बंबई–५१)

लज्जाहीन प्रेम से अधिक नारकीय कोई वस्तु मैं ने नहीं देखी।

—गेटे

सत्यकथा

● फ्रैंक लेजलो

सितंबर, १९४६ की सुबह! बुडापेस्ट रेलवे-स्टेशन पर मैं अपनी परेशानी छिपाने की भरसक कोशिश कर रहा था। 'यह आतंक मुझे ले डूबेगा'—यही चिंता खाये जा रही थी। मेरे भाग्य का निर्णय सिर्फ एक नाम के कारण होने वाला था और वह नाम था—ऑस्कर जनर!

दस दिन पहले मैं ने यह नाम सुना तक न था। मेरे एक पुराने मित्र को आस्ट्रिया से जाने वाले शरणार्थियों के बारे में पर्याप्त जानकारी थी। वह इन दिनों बुडापेस्ट में ही था। भेदियों की नजर बचा कर वह मेरे पास आया और बोला, "पुनर्वासितों की सूची में एक आदमी ने उस पत्र का उत्तर नहीं दिया है जिस में उसे सूचित किया गया था कि शरणार्थियों को आस्ट्रिया ले जाने वाली अंतिम गाड़ी में वह शामिल हो जाये। शायद वह मर चुका हो। पेशे से वह चित्रकार है, और नाम है—ऑस्कर जनर! क्या तुम खतरा ले कर आजाद होना पसंद करोगे? अगर हिम्मत है तो तुम इस मौके का फायदा उठाओ!"

मेरा नाम?

यह सच है कि मैं जल्द-से-जल्द अपने देश से फरार हो जाना चाहता था। जरमन कब्जे के समय फिर हंगरी की साम्यवादी सरकार की हुकूमत में मैं मित्रराष्ट्रों के जासूस के रूप में बुडापेस्ट में रहता था। हाल ही में रूसी शिकंजे ने मेरे कई साथियों को जकड़ लिया था। यह देख मैं भूमिगत हो गया।

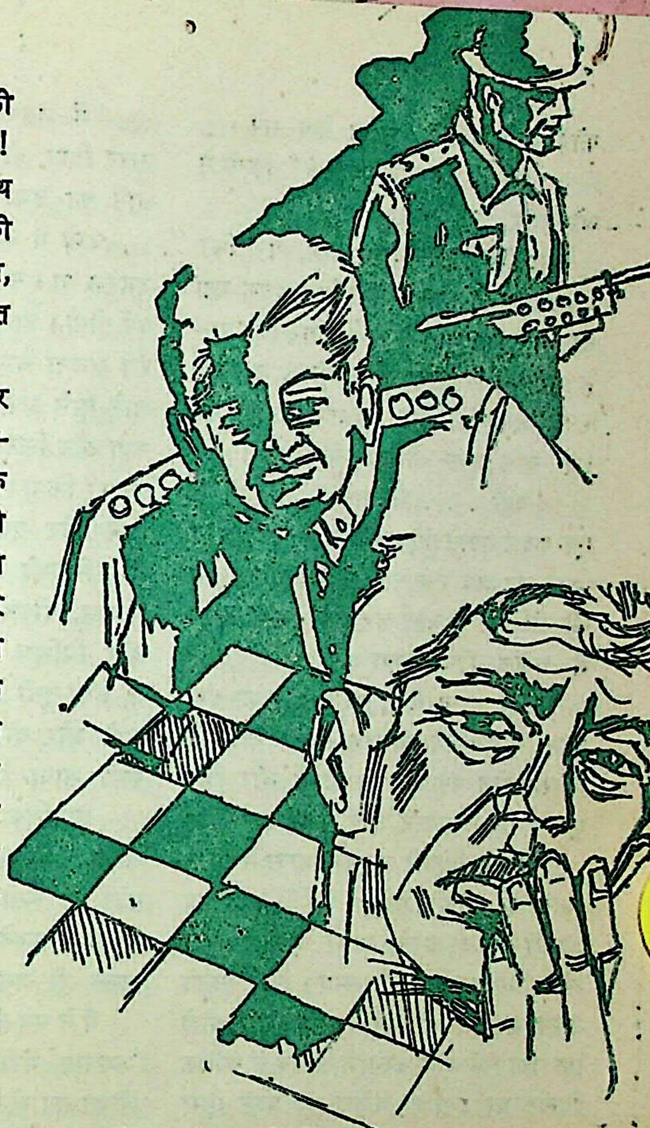
खुद को फ्रैंक लेजलो से ऑस्कर जनर में बदलने के लिए किसी पासपोर्ट की आवश्यकता मुझे न थी क्योंकि रूसियों ने बुडापेस्ट में लगभग हर घर के दस्तावेज नष्ट कर दिये थे। मेरे मित्र ने ऑस्कर जनर के बारे में टाइप किया विवरण मेरे सामने रखा और बोला, "अब तुम चित्रकार ऑस्कर जनर हो! इसे अच्छी तरह अपने दिमाग में बैठा लो। तुम्हें हर तरह से ऑस्कर जनर बनना है। साम्यवादी संरक्षकों के पास इस की प्रतिलिपियाँ होंगी। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि वह तुम्हारी बड़ी पक्की जाँच करेंगे। इन कागजों की अन्य प्रतिलिपियाँ तुम्हारे जत्थे के सुपरवाइजर के पास होंगी, पर वह ऑस्कर जनर को नहीं जानता। जब स्टेशन पर जनर का नाम पुकारा जाये तो तुरंत जवाब मत दे बैठना—कुछ देर प्रतीक्षा करना।"

"प्रतीक्षा करूँ!"

"और नहीं तो क्या—हो सकता

है कि ऐन मौके पर असली ऑस्कर जनर आ जाये ! अगर तुम दोनों ने एकसाथ जवाब दिया तो नकली ऑस्कर जनर का क्या होगा, यह तुम्हें बताने की जरूरत नहीं है।"

कुछ दिन तक मैं ऑस्कर जनर की जीवनी का अध्ययन करता रहा—यहाँ तक कि उस के बारे में मेरी जानकारी इतनी हो गयी जितनी कि खुद अपने बारे में हो सकती थी। मैं उस घर के बारे में विश्वासपूर्वक बता सकता था जहाँ उस का जन्म हुआ था। मैं उस की शैक्षणिक योग्यता के बारे में जानता था। उस के स्वभाव, रुचि, अरुचि—यहाँ तक कि उस की चित्रकारी के बारे में भी खासी जानकारी मैं ने प्राप्त कर ली। मैं यह भी जानता था कि उस की चित्रकारी के बारे में कलासमीक्षकों की क्या राय थी, उस के चित्र किन दामों में बिकते थे और उन्हें किस-किस ने खरीदा था !



चलने की रात से पूर्व मैं ने पुल पार किया और ऑस्कर जनर की जीवनी के कागजों को टुकड़े-टुकड़े करके उन्हें डेन्यूब की लहरों में बहा दिया।

एकाएक लाउडस्पीकर की आवाज ने मुझे अतीत से वर्तमान में ला खड़ा किया। वर्णमाला के अक्षरों के क्रम से किसी ने नाम पुकारने शुरू किये। मेरा पेट फूलने लगा। मैं ने हाथ जेब में डाल लिये ताकि

कोई उन्हें काँपते हुए न देख सके।

"जनर! ऑस्कर जनर!" किसी ने जोर-जोर से पुकारा।

मैं चिल्लाना चाहता था, पर फिर प्रतीक्षा करने लगा। मेरा दिल धड़क रहा था। मैं एकाग्र भाव से प्रार्थना कर रहा था— हे भगवान! दूसरा जनर मौजूद न हो!

"जनर!" फिर आवाज आयी, पर इस बार कुछ बेचैनी के साथ।

"यहाँ . . . मैं यहाँ हूँ!" मैं ने एक कदम बढ़ाते हुए नरमी से कहा। असली जनर का अब तक पता नहीं था। दस-दस की टोलियों में बाँट कर हमें रेल के डब्बों में धकेल दिया गया।

उसी समय मैं ने दूसरे डब्बे का दरवाजा खुलने की आवाज सुनी। गलियारे में बातचीत की आवाज आयी और फिर एक कर्नल ने हमारे डब्बे में प्रवेश किया।

उस ने बिगड़ी जरमन भाषा में पूछा, "शतरंज कौन खेलता है?" इस पर हमारी जाँच करने वाला अफसर मुड़ा और विस्मय से देखने लगा। फिर सहसा अपने अफसर को देख कर आदर से पीछे हट गया। मैं चूंकि दरवाजे के सब से अधिक निकट था इसलिए कर्नल का प्रश्न ऐसा लगा जैसे मुझ से ही किया गया हो।

"शतरंज कौन खेलता है?" उस ने फिर पूछा।

मैं ने पिछले दस वर्ष से शतरंज नहीं खेली थी . . . पर इस से क्या फर्क पड़ता है!

"मैं शतरंज खेल सकता हूँ," मैं ने उत्तर दिया और कर्नल ने मुझे अपने पीछे आने का इशारा किया।

डब्बे में दो कर्नल और एक दैत्यकाय जनरल था। कर्नल की उम्र लगभग पचास वर्ष होगी। वास्तव में वह जनरल ही शतरंज खेलना चाहता था क्योंकि उस ने मुझे लाने वाले अफसर की ओर देख कर कुछ कहा और फिर मुझे अपने सामने बैठने का इशारा किया। मेरे निकट ही दर्जनों सैंडविच और एक मिठाई का डब्बा रखा था। खिड़की के नीचे रखी छोटी मेज पर गिलास, वोदका, हंगरी की प्रसिद्ध ब्रांडी और विभिन्न शराबें रखी थीं। जनरल ने जँची-तुली नजरों से देखा और फिर खाने और वोदका की ओर संकेत करके रूसी भाषा में दहाड़ा—"शुरू करो!"

मानसिक यातना से ग्रस्त होने के बावजूद मैं खाता रहा। किसी भी क्षण कोई भी रूसी मेरा नाम पूछ सकता था या प्रश्न करने वाले आ सकते थे। गाड़ी चलते ही जनरल ने शतरंज बिछा दी।

मैं ने मन-ही-मन भगवान को पुकारा— 'भगवान, मेरी सहायता करो! यह मेरे जीवन का खेल है।' मैं एक भी ऐसे रूसी को नहीं जानता था जिसे हारने से घृणा न रही हो और मैं किसी ऐसे शतरंज के खिलाड़ी को भी नहीं जानता था जो देर तक खेलना पसंद करे, जब तक कि उस का विरोधी खेल को दिलचस्प न बनाये।

जैसे ही खेल शुरू हुआ, खेल की चालें

धीरे-धीरे मेरे दिमाग में आती गयीं। अन्य अफसर चुपचाप खेल देखते रहे। प्रकटत: वे जनरल को शतरंज का विशेषज्ञ समझ रहे थे और वास्तव में वह काफी अच्छा खिलाड़ी भी था, किंतु मैं उसे हर संभव लाभ पहुँचा कर खेलने पर मजबूर कर रहा था।

बार-बार मैं मन-ही-मन दोहराता जाता था—"मैं एक चित्रकार हूँ ! मेरा पिता एक . . . था . . . "

प्लेटफार्म पर एक तेज सीटी की आवाज गूँज गयी, पर गाड़ी नहीं हिली। एकाएक हमारे डब्बे के पास रूसियों के जोर-जोर से बोलने की आवाजें आने लगीं। चार रूसी अफसर तेज कदम बढ़ाते हुए गुजरे और बराबर वाले डब्बे के पास जा कर रुक गये। फिर मैं ने उन्हें डब्बे में बैठे लोगों को बाहर निकलने का आदेश देते सुना। डब्बे में पहुँच कर उन्होंने हँसी-मजाक शुरू कर दिया और उन के शराब के दौर चलने लगे। एक बार फिर तेज सीटी की आवाज हुई और एक झटके के साथ गाड़ी चल पड़ी।

गाड़ी की रफ्तार तेज होते ही मैं सोचने लगा कि पता नहीं अब कब देश की धरती देखने को मिले! लेकिन तुरंत ही महसूस हुआ कि यह दुख बिलकुल अनावश्यक है क्योंकि अब मैं ऑस्कर जनर था और अपने देश लौट रहा था।

गाड़ी केलन फोल्ड पर खड़ी हो गयी। यह पहली निरीक्षण-चौकी थी। अधिक देर तक रूसी इंस्पेक्टर और उस के दुभाषिये की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। गाड़ी के गलियारे में सशस्त्र रूसी सिपाहियों के साथ वे प्रश्न कर रहे थे और सामान की तलाशी ले रहे थे। रूसी अफसर एक चट्टान-जैसी शक्ल का, छोटा-सा आदमी था। वह एक स्त्री से पूछताछ कर रहा था। अब वह उस आदमी की तरफ आया जो मेरे डब्बे में खिड़की के पास बैठा था। मैं ने फिर से मन-ही-मन अभ्यास शुरू कर दिया—"मैं एक चित्रकार हूँ . . . मेरा नाम . . . मेरा नाम . . . "

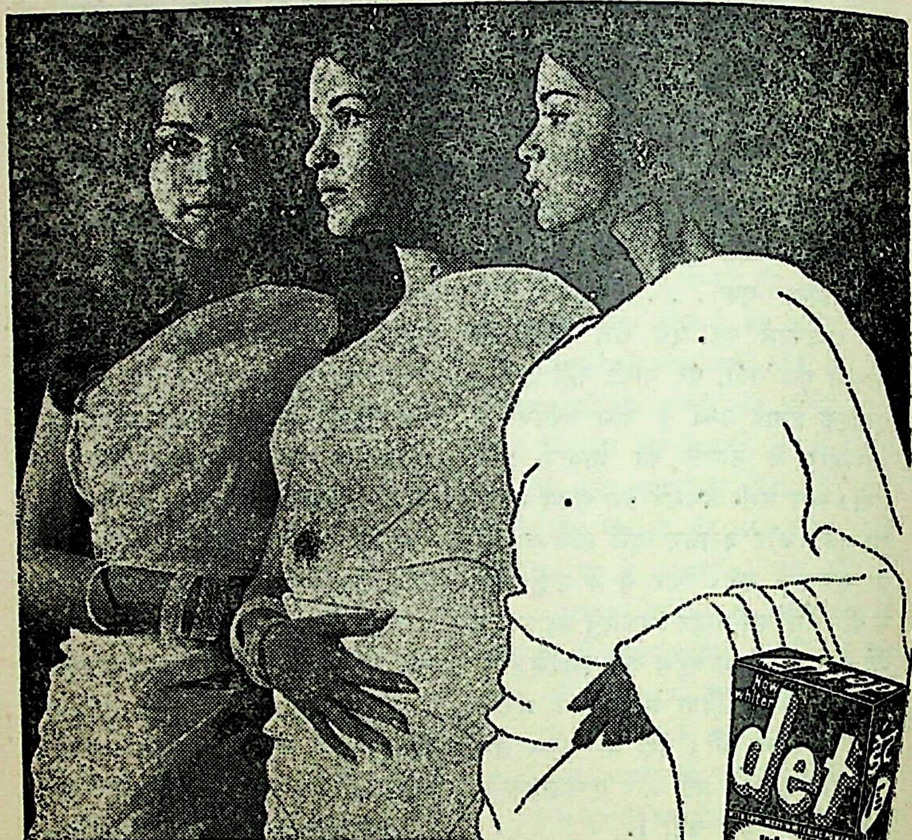
चेहरे पर पसीना चुहचुहा आया। एक अजीब-सी दहशत मुझे अपने बारे में हर चीज याद करने को विवश कर रही थी। पास ही प्रश्न करने वाले का कर्कश स्वर और दुभाषिये की आवाजें मुझे सुनायी दे रही थीं।

'मेरे भगवान! मेरा नाम क्या है . . . मैं एक चित्रकार हूँ . . . पर मेरा नाम. . . ' सब व्यर्थ था, नाम ही याद नहीं आ रहा था !

समय बीतता रहा। सहसा मैं चौंका—गेवर आ जाने के कारण गाड़ी की गति कम हो रही थी। गेवर दूसरी निरीक्षण-चौकी थी। मेरा दिमाग फिर घूमने लगा। डब्बे का दरवाजा खुला और आस्ट्रियन जत्थे का कमांडर अंदर आया। उस ने कहा, "इस आदमी से अभी तक प्रश्न नहीं किये गये हैं!"

मुझे परेशान होने की आवश्यकता

एक ही धुलाई में ३ तरह से काम करके...



डेट कहीं अधिक सफ़ेद धुलाई देता है

— अन्य पाउडरों के मुक़ाबले

देखिए, यह कैसे और क्यों होता है...

१ डेट का विशेष शोधक तत्व कपड़ों में शीघ्रता से प्रवेश कर अन्दर बैठी मैल को भी जड़ से हटा देता है— कपड़े साफ़ हो जाते हैं।

२ डेट मैल को निकाल देने के बाद उन्हें दुबारा जमने नहीं देता—कपड़े साफ़ हो कर साफ़ बने रहते हैं!

३ डेट अतिरिक्त सफ़ेदी देता है— कपड़े पहले से कहीं अधिक सफ़ेद और उजले निखर आते हैं! (नील या सफ़ेदी लाने वाले अन्य पदार्थ मिलाने की ज़रूरत नहीं)

आज ही खरीदिए- डेट!

स्वस्तिक ऑइल मिल्स, बम्बई

SHILPI HPMA 38A/70 HIN

न थी। एक भी शब्द बोले बिना जनरल उठा और उस ने अपना रीछ-जैसा पंजा अफसर के सीने पर रख उसे डब्बे से बाहर गलियारे में धकेल दिया! फिर वह दरवाजा बंद करके गरजा—"तुम्हारी चाल है हंगेरियन!"

"हंगेरियन!" अवश्य ही मैं हंगरी से आ रहा था, पर उस की जबान बहक जाने से मैं काँपने लगा। फिर एक-दो बार मैं ने अनुभव किया कि वह मुझे अजीब नजरों से देख रहा है, पर मेरे नोट करने पर हर बार उस ने अपनी नजरें शतरंज पर जमा लीं।

दूसरी बाजी शुरू होने से पहले जनरल ने कहा कि कुछ खा-पी लेना चाहिए। वोदका पीने के बाद मुझ में आत्मविश्वास की लहर दौड़ गयी। मैं ने अपने-आप को खेल में डुबो दिया। एकाएक मुझे अनुभव हुआ कि मैं जीत रहा हूँ। अंतिम चालें चली जा रही थीं कि गाड़ी की गति धीमी होने लगी। अंतिम निरीक्षण-चौकी आने वाली थी, और यहीं मेरी हार या जीत का फैसला होने वाला था!

इस बार दरजन-भर सिपाहियों ने, जिन के कंधों पर राइफलें थीं और पेटियों में दस्ती-बम लटक रहे थे, दुभाषियों और संरक्षक दस्तों के साथ हमारे डब्बे में केवल झाँका और आगे बढ़ गये। मेरे जत्थे के नाराज नेता ने अवश्य ही उस 'आस्ट्रियन' के बारे में उन लोगों से कह दिया होगा जो अफसरों के साथ बैठा था; क्योंकि एक संरक्षक जानकारी प्राप्त करने के लिए आया। उस ने अफसर को सैल्यूट किया और रूसी भाषा में मेरी ओर इशारा करते हुए जल्दी-जल्दी कुछ कहने लगा।

भय से मेरा मस्तिष्क निष्क्रिय हो गया—अवश्य ही जनरल उसे मुझ से प्रश्न करने की अनुमति दे देगा। मैं ने मन में दोहराना शुरू किया—"मैं एक चित्रकार हूँ . . . और मेरा नाम. . . ' लेकिन नाम मुझे फिर भी याद न आया।

जैसे ही संरक्षक बोला, जनरल का चेहरा धीरे-धीरे पीला पड़ने लगा। संरक्षक ने उसे इतना नाराज कर दिया कि मैं ने शायद ही किसी को यों नाराज देखा हो। जनरल ने मेरी ओर देखा। उस की आँखें चमक रही थीं। शतरंज उठा कर उस ने छोटी मेज पर रख दी और खड़ा हो गया।

'अब मेरा अंत निकट है! यहाँ तक आ जाने के बाद. . . ' मैं पूरी तरह निराश हो गया।

अपना हाथ जनरल इस प्रकार अपने शरीर के नीचे तक ले गया जैसे तलवार निकालने वाला हो। और जब वह हाथ घुमा कर ऊपर लाया तो संरक्षक के मुँह पर उस ने इतनी ताकत से घूँसा मारा कि वह गलियारे की दीवार से जा टकराया। इस के बाद जनरल ने इतनी जोर से दरवाजा बंद किया कि खिड़की तक हिल गयी। फिर वह अपनी सीट पर कुछ बड़बड़ाता हुआ आ बैठा, शतरंज उठायी

और मोहरों की जाँच करने के बाद बोला—"तुम्हारी चाल . . . ."

कैसी विचित्र स्थिति थी! अब शांति के कारण मेरा दिल फटा जा रहा था! 'फिर से आने का साहस अब कोई नहीं करेगा'—मुझे पूरा विश्वास था। जैसे ही गाड़ी ने गति पकड़ी, मेरा मन हलका हो गया। मैं पहली बार मुसकराया। मोहरों पर से नजर उठा कर जनरल भी मुसकराया और नवयुवक अफसर से बात करने लगा। अफसर ने मुझ से पूछा—"जनरल के साथ क्या तुम फिर कभी वियना में शतरंज का लुत्फ उठा सकोगे? तुम्हें वहाँ कहाँ ढूंढ़ा जाये?"

मेरे मुँह से वियना के प्रसिद्ध होटल का नाम निकल गया।

"और तुम्हारा नाम?"

कोई भय या संकट तो अब मेरे सिर पर था नहीं, सो मैं क्यों हिचकिचाता! और आप ही सोचिये— भला दो सीधे-सादे शब्दों का वह नाम मैं किस तरह भूल सकता था?

बड़े ही आत्मविश्वास से मैं ने जवाब दिया—ऑस्कर जनर'!

अवकाश प्राप्त करने का समय आया तो प्रमुख पादरी ने शिष्यों को बुलाया ताकि अपना उत्तराधिकारी चुन सके। उस ने शिष्यों को अलग-अलग बुला कर पूछताछ शुरू की।

पादरी पूछता, "इस से पूर्व कि मैं उत्तराधिकारी नियुक्त करूँ, मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या तुम मदिरापान करते हो?"

शिष्य 'नहीं' में सिर हिला कर चला जाता।

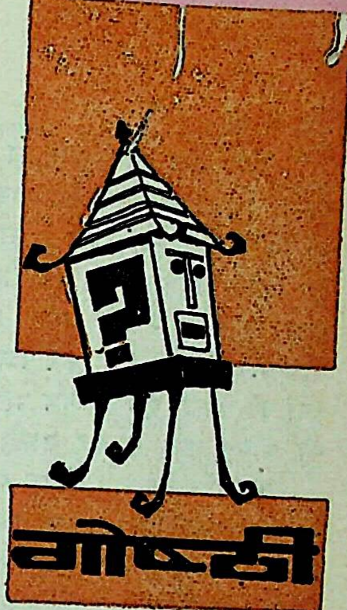
अंत में सब से छोटे शिष्य की बारी आयी।

"इस से पूर्व कि मैं उत्तर दूं, मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह पूछताछ भर है या निमंत्रण?" छोटे शिष्य ने पूछा।

*

एक दर्जी ने प्रख्यात अमरीकी साहित्यकार ऑलिवर हरफोर्ड को लिखा कि कुछ समय पूर्व मैं ने आप की सेवा में एक बिल भेजा था, परंतु खेद है कि आप ने उस पर कोई ध्यान नहीं दिया।

ऑलिवर ने उत्तर दिया, "इसी बिल के भुगतान के सिलसिले में मैं साहित्यिक मित्रों और प्रकाशकों के चक्कर लगा आया हूँ और इसी के कारण एक नौका-दौड़ में मैं सम्मिलित होने जा रहा था कि तुम्हारा पत्र मिला।"



देवेन्द्रकुमार भारल, भोपाल : वस्त्रों पर बातिक-मुद्रण किस प्रकार करते हैं? यह कला कितनी पुरानी है? वस्त्र-मुद्रण की अन्य प्रमुख पद्धतियों का परिचय दें।

वस्त्रों पर बातिक-मुद्रण मूलतः जावा की कला है। जावा की भाषा में 'बातिक' का अर्थ है 'मोम-चित्रकारी'। विशेष प्रकार का तरल मोम, 'जांतिग' नामक एक उपकरण की सहायता से, वस्त्र पर डिजाइन के रूप में लगाया जाता है। सूख कर यह मोम जम जाता है। फिर पूरे वस्त्र को किसी रंग में डुबोया जाता है। मोम वाली जगहों पर वस्त्र रंग नहीं पकड़ता। बाद में जब वस्त्र को खौलते पानी में डाला जाता है तो मोम पिघल कर निकल जाता है और डिजाइन मुद्रित रूप में सामने उभरती है। बातिक से मुख्यतः रेशमी और सूती वस्त्रों पर ही मुद्रण होता है किंतु ऊनी या मखमली वस्त्रों या चमड़े पर भी बातिक-मुद्रण हो सकता है। जावा में यह कला ईसा से कोई १,२०० वर्ष पहले विकसित हो गयी थी। यूरोपीय देशों ने बातिक-मुद्रण सत्रहवीं सदी में उन डच व्यापारियों से सीखा जो पूर्वी देशों की यात्राएँ अकसर किया करते थे।

बातिक के अलावा, वस्त्रों पर छपाई करने की तीन पद्धतियाँ मुख्य हैं— ब्लॉक-मुद्रण, रोलर-मुद्रण और पट-मुद्रण। इन में सब से प्राचीन है ब्लॉक-मुद्रण, जो ईसा से २,१०० वर्ष पहले ही विकसित हो चुका था। वस्त्र-मुद्रण के ये ब्लॉक बनते हैं लकड़ी, धातु या लिनोलियम से। वांछित डिजाइन का विपरीत अंकन खोद कर उभार लिया जाता है—यही ब्लॉक है। यह उभरा हुआ विपरीत अंकन जब रंग की लेई ले कर वस्त्र पर दबता है तो वांछित डिजाइन अंकित कर देता है। बहुरंगी डिजाइन के लिए हर रंग का अलग-अलग ब्लॉक बनता है। उन्हें बारी-बारी से इस्तेमाल करके, शुरू में हलके और अंत में गहरे रंग छापे जाते हैं। ब्लॉक-मुद्रण सधे हाथों से किया जाता है और

यंत्रों से भी।

रोलर द्वारा वस्त्र-मुद्रण का आविष्कार, १७८३ में, हेनरी बेल नामक एक अँगरेज ने किया था। ताँबे के रोलरों में ही वांछित डिजाइन का विपरीत अंकन खुदा रहता है। बड़ी मशीनें एकसाथ पंद्रह-सोलह रोलर चला कर पंद्रह-सोलह रंगों की छपाई, एक सौ गज प्रति मिनट की औसत गति से कर सकती हैं।

जब डिजाइन-वाले रोलर घूमते हैं, तो एक तरफ से वस्त्र उन पर दबता हुआ निकलने लगता है और दूसरी तरफ से, 'फीडिंग-रोलर' द्वारा, स्याही लगती रहती है। मुद्रण के रंग इस 'फीडिंग-रोलर' तक अन्य अनेक घूमते रोलरों के बीच पिस-पिस कर और मिलान में आ कर पहुँचते रहते हैं। डिजाइन वाले रोलर में रंग गलत जगहों पर न लग जाये, इस का 'डॉक्टर-ब्लेड' ध्यान रखता है।

यदि बड़े-बड़े और मोटे डिजाइन चटख रंगों में छापने हों, तो पट-मुद्रण (स्क्रीन-प्रिंटिंग) का सहारा लिया जाता है। इस में सब से पहले डिजाइन का स्टेंसिल काटा जाता है—हस्त-कौशल से या फोटो-पद्धति से। इस स्टेंसिल को विशेष तरह के नाजुक रेशम पर रख कर, रेशम के नीचे वह वस्तु रखी जाती है जिस पर मुद्रण करना हो। लकड़ी, प्लास्टिक, काँच, कार्ड-बोर्ड, कागज, एस्बेस्टास, वस्त्र आदि किसी भी वस्तु पर बढ़िया पट-मुद्रण हो सकता है। स्टेंसिल पर रंग बिखेर कर, रबड़ या लकड़ी के बने एक उपकरण से दबाव दिया जाता है, जिस से रंग स्टेंसिल और नाजुक रेशम के पार निकल नीचे की वस्तु पर अंकित हो जाता है।

कुमारी सरला खंडेलवाल, लखनऊ: अमर गायक सहगल का अवसान कब हुआ? उन का परिचय भी दें।

कुंदनलाल सहगल का अवसान १८ जनवरी, १९४७ को हुआ था। आज उन की प्रसिद्धि मुख्यतः गायक के ही रूप में है किंतु 'चंडीदास' फिल्म ने उन्हें गायक ही नहीं, नायक के भी रूप में असीम लोकप्रियता दी थी। बचपन में वे रामलीलाओं में सीता बनते थे। 'चंडीदास' में नायकत्व उन्हें मिला था 'पूरन भक्त' की अपनी उस छोटी-सी भूमिका के आधार पर जिस में उन्होंने साधु के वेश में एक गाना गाया था, जो हिट रहा था। 'देवदास' उन की सर्वश्रेष्ठ फिल्म थी। उन का जन्म हुआ था ११ अप्रैल, १९०१ के दिन।

रामलाल अग्रवाल, होशंगाबाद: मूर्तिकला की परिभाषा हो सकती है? मूर्तियाँ बनाने के प्रमुख तरीके क्या हैं?

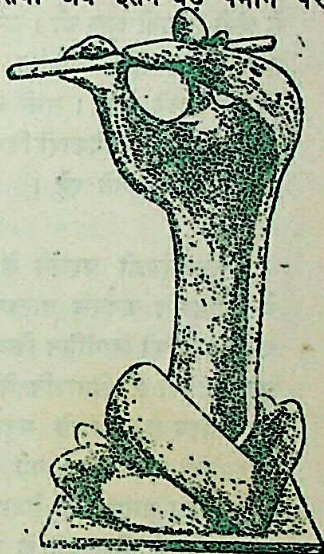
आकृतियों को तीन आयामों में रूपायित करने की कला ही मूर्तिकला है। चित्रकार या फोटोग्राफर अपनी कृतियाँ दो आयामों में पेश करता है—लंबाई और चौड़ाई, जब कि मूर्तिकार को तीसरे आयाम, गहराई पर भी पूरा काबू रखना पड़ता है।

मूर्तियाँ बनाने का सब से पुराना तरीका है नक्काशी, जिस का आविष्कारक

है आदि-मानव। किसी भी कठोर और नुकीली वस्तु से किसी भी अन्य कठोर या लगभग कठोर वस्तु पर निरंतर आघात करके आदि-मानव ने मूर्तियों की कतारें की कतारें बना कर स्वयं को व्यक्त किया। नक्काशी से ठीक विपरीत है मॉडलिंग। नक्काशी में फालतू हिस्से खोद-खोद कर निकाल दिये जाते हैं, जब कि मॉडलिंग में विभिन्न हिस्से ला-ला कर जोड़े जाते हैं। मिट्टी या मोम-जैसी लचीली चीजों की मूर्तियाँ मॉडलिंग से ही बनती हैं। तीसरा प्रमुख तरीका है ठुकाई। यह केवल धातुओं की मूर्तियाँ बनाने में उपयोगी है। वांछित आकार में धातु का टुकड़ा ले कर, पिटाई और ठुकाई द्वारा उसे क्रमशः रूपायित किया जाता है। सूजों इत्यादि से ठेल कर या कोंच कर मूर्ति में बारीकियाँ पैदा की जाती हैं। ठुकाई जितना ही महत्त्वपूर्ण तरीका है ढलाई। साँचों में से ढल कर निकली मूर्तियों का प्राथमिक रूप फूहड़ होता है। साँचों में फँसे रह गये बुलबुले, साँचे का खुरदुरापन तथा अन्य गड़बड़ियाँ मूर्ति में अंकित हो ही जाती हैं जिन्हें मूर्तिकार अपने हस्तकौशल से दूर करके, नक्काशी द्वारा विभिन्न बारीकियों को निखार देता है।

मूर्ति बनाने के जिस तरीके से लोग सर्वाधिक अपरिचित हैं, वह है 'अनुवेधन'। मूल कृति के प्रमुख बिंदुओं को किसी अन्य वस्तु पर अंकित करके, उस आधार पर नक्काशी, मॉडलिंग या ठुकाई द्वारा मूर्ति निर्मित की जाती है। जितने अधिक अंकन लिये जाते हैं, प्रतिमूर्ति उतनी ही अधिक मूल के अनुरूप होती है। बिंदुओं के अंकन के अलावा, गहराई आदि के नाप के लिए जगह-जगह छेद करना भी 'अनुवेधन' में शामिल है।

ढलाई और 'अनुवेधन' के कारण मूर्तियाँ अब इतने बड़े पैमाने पर और



संगीतकार : धनराज भगत

इतने मशीनी ढंग से तैयार होने लगी हैं कि नये मूर्तिकारों ने ऐसी मूर्तियों को कलाकृतियाँ मानने से ही इनकार कर दिया है। अर्वाचीन मूर्तिकला, आधुनिक चित्रकारी या पेंटिंग की ही शैली में, अमूर्त हो चली है। —भगीरथ

प्रसंग : उदयशंकर यूरोप में

सन १९३१ में उदयशंकर नृत्य-प्रदर्शन के लिए यूरोप गये। उन्होंने अमलानंदी को भी अपने साथ ले लिया और यूरोप के दो सौ नगरों में प्रदर्शन किया। दल में सोलह सदस्य थे।

जब नृत्य-दल बेल्जियम की सीमा पर पहुँचा तो अधिकारियों ने चुंगी माँगनी शुरू की। उन्हें बतलाया गया कि ये वाद्ययंत्र हैं, इन्हें बेचने नहीं ले जाया जा रहा है। अब अधिकारियों से विवाद चलने लगा। तभी दल के एक सदस्य तिमिरवरण सरोद बजाने लगे। अधिकारी विवाद भूल गये और मंत्रमुग्ध हो कर सरोद-वादन सुनते रहे।

●

नृत्य-मंडली प्रदर्शन के लिए चेकोस्लोवाकिया गयी। प्राग में सेनापति जनरल वाल्डमीर क्लैकैण्डिया ने भी अपने आवास पर मंडली को आमंत्रित किया। शीशे के सुंदर संदूक में एक पुस्तक सुरक्षित थी। सेनापति ने बतलाया, "यह पुस्तक मेरे जीवन का सर्वस्व है। पिछले महायुद्ध में मैं और मेरे सैनिक रूसियों द्वारा बंदी बना लिये गये। सब को मृत्यु-दंड का आदेश दिया गया। उस समय रूसी सेनापति एलेक्स अलाडिन ने मुझे यह पुस्तक पढ़ने को दी थी। इस के अध्ययन से मेरी आत्मा को बहुत बल मिला। फिर मैं ने अपने सभी साथियों को यह पुस्तक पढ़ने को दी। यह पुस्तक श्रीमद्‌भगवद्‌गीता का जरमन-अनुवाद है।"

●

प्राग में नृत्य-मंडली के सदस्यों को फूलों के जो गुलदस्ते उपहार में मिले उन में किसी-किसी में स्वर्णाक्षरों में देवनागरी लिपि में लिखा था---ॐ भगवते ब्रह्मणे नमः, ॐ भगवते गुरवे नमः, आदि।

—प्रस्तोता : संतकुमार टंडन 'रसिक'

निरगुन साधक नानक

• डॉ. महीपसिंह

मध्ययुग के भक्ति-आंदोलन के दो स्वरूप—निर्गुण और सगुण—केवल इस दृष्टि से भिन्न नहीं हैं कि ईश्वर के स्वरूप के संबंध में उन की धारणाओं में अंतर है। निर्गुण और सगुण कवियों का मूल अंतर उन की जीवन-दृष्टि में है। हमारे देश की चिंतन-धारा में दो प्रवृत्तियाँ समानांतर चलती रही हैं। एक प्रवृत्ति वह है जो अपनी सभी तत्कालीन समस्याओं का समाधान परंपरानुमोदित, शास्त्रोक्त ढंग से निकालने का प्रयत्न करती है। दूसरी प्रवृत्ति में स्वतंत्र चिंतन का विशेष महत्त्व है। परंपरा से प्राप्त थाती को वह अपनी पृष्ठभूमि तो बनाना चाहती है परंतु उस के साथ बंध कर चलना उसे स्वीकार्य नहीं है। उस का आधार, उस का अपना अनुभव और विवेक है—

तू कहता कागद की लेखी मैं कहता आखन की देखी। (कबीर)

जिहो डिट्ठा तिहो किहा। (गुरु नानक)

मध्यकाल की सगुण और निर्गुण भक्ति-धाराएँ इन दो प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करती हैं।

निर्गुण धारा के अधिकांश भक्त-कवि उन जातियों में से आये थे जिन्हें नीचा समझा जाता था। कबीर जुलाहा थे, रविदास चमार, दादू धुनिया, धन्ना जाट, सधना कसाई। इन की रचनाओं में या तो आक्रोश का अतिरेक है या अति विनम्रता है। गुरु नानक जिस कुल में उत्पन्न हुए थे वह सामाजिक दृष्टि से उच्च और सम्मान्य समझा जाता था। इसलिए गुरु नानक मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उस कुंठा से ग्रसित नहीं हुए जिस की छाया हमें अन्य संत कवियों पर दिखायी देती है।

कबीर को रामानंद का शिष्यत्व ग्रहण करने के लिए क्या नहीं करना पड़ा था! शायद यही कारण है कि अनेक निर्गुण संतों की वाणी में परंपरावादी पुरोहितों (और मुल्लाओं) के प्रति बड़ी तीखी उक्तियाँ हैं—

जे ब्रामन तू बामनी जाया। और राह तू

काहे न आया।। (कबीर)
पढ़ि-पढ़ि क्या तुम कीन्हा पंडित। अपना रूप न चीन्हा।। (पलटू)

गुरु नानक की रचनाओं में इस प्रकार की कटूक्तियाँ अधिक नहीं हैं। वे ब्राह्मण को कटु शब्द कहने की बजाय उसे कर्तव्य का बोध कराते हैं—

सो ब्राह्मणु जो ब्रह्म बीचारै, आपि तरै सगले कुल तारे। (धनासरी, म. १)
सो ब्राह्मणु जो बिंदै ब्रह्मु। जपुतपु संजमु कमावै करमु।।
सील संतोख का रखै धरमु। बंधन तोड़ै होवै मुकतु।। सोई ब्रह्मणु पूजण जुगतु।।
(सलोक वारां ते वधीक)

यही पद्धति वे 'जोगी' के संबंध में भी अपनाते हैं, मुसलमान के संबंध में भी और खत्री के संबंध में भी—

सो जोगी जो जुगति पछाणै।
गुर परसादी एको जाणै।।
दानसबंदु सोई दिलि धोवै।
मुसलमाणु सोई मलु खोवै।।
खत्री सो जु करमा का सूरु।
पुन दान का करै सरीरु।।
खेतु पछाणै बीजै दान।
सो खत्री दरगह परवाणु।।

गुरु नानक ने बड़ी गहराई से पहचाना कि उन के समसामयिक समाज को अतीत की परंपरा के रूप में जो कुछ भी प्राप्त हुआ है उस का वास्तविक संकट कहाँ है? इस संदर्भ में उन्होंने कुछ निष्कर्ष निकाले।

अपनी सांस्कृतिक विरासत का बहुत बड़ा भाग उपयोगी है और उस की रक्षा वांछनीय है। अपनी भाषा भूल जाने वाले सजातीय को फटकारते हुए उन्होंने कहा—तू ने अपनी भाषा छोड़ कर दूसरों की भाषा ग्रहण कर ली है—

खत्रीया तू धरमु छोडिया मलेछ भाखिआ गही। (राग धनासरी)

शासकों की कृपा प्राप्त करने के लिए उन के-जैसे नीले वस्त्र पहनने वालों को प्रताड़ित करते हुए उन्होंने कहा—इन्होंने नीले वस्त्र पहन कर अपना रहन-सहन तुर्कों-पठानों जैसा कर लिया है—

नील बसत्र ले कपड़े पहिरे तुरक पठाणी अमलु कीआ। (वार आसा)

उस युग में, जब विदेशी प्रभाव के कारण लोग अपने 'स्वत्व' को भूल रहे थे, गुरु नानक ने लोगों में सांस्कृतिक पुनर्जागरण किया। उन की भाषा, लिपि, विचार-पद्धति, आस्था के शब्द गुरु नानक की कविता के माध्यम से जनसामान्य के पास पहुँचे और उन्हें लगा कि वे राजनीतिक दृष्टि से चाहे बहुत-कुछ खो चुके हों परंतु सांस्कृतिक दृष्टि से उन के पास बहुत-कुछ है जिस के आधार पर वे स्वाभिमान से जी सकते हैं।

सांस्कृतिक पुनर्जागरण के इस कार्य में गुरु नानक ने मिथ्याडंबर को कभी प्रश्रय नहीं दिया। परंपरागत मान्यताओं, आस्थाओं और मूल्यों का निरंतर परीक्षण और संशोधन ही उन की उपादेयता को बनाये रख सकता है। अंधानुगमन में व्यक्ति

सार-तत्त्व तो खो देता है और पाखंडों और विसंगतियों का शिकार हो जाता है ।

निर्गुण काव्य-धारा में खंडन का स्वर बहुत प्रबल रहा है, परंतु गुरु नानक का दृष्टिकोण बहुत रचनात्मक था। वे जानते थे कि रूढ़ियों और संस्कारों में सदियों से ग्रसित व्यक्ति को संस्कारहीन कर देने की अपेक्षा उसे उसी में नये अर्थ और नये मूल्य के सृजन की अनुभूति कराना अधिक श्रेयस्कर होगा । इसीलिए उन्होंने कहा—यदि यज्ञोपवीत पहनना ही हो तो वह पहनो जो दया की कपास से, संतोष के सूत से, संयम की गाँठ से और सत्य की पूरन से बना हुआ हो। ऐसा जनेऊ न टूटता है, न इसे मल लगता है, न यह जलता है और न ही यह नष्ट होता है—

दइआ कपाह संतोखु सूतु जतु गंढी सतु वटु।
एहु जनेऊ का हुई त पांडे घतु।।
ना एहु तूटै ना मलु लगै न एहु जलै जानहु।
धंनु सु माणस नानका जो गलि चले पाई।।
(आसा दी वार)

और योग ? वह कंथा धारण करने में, हाथ में डंडा लेने, शरीर पर भस्म रमाने, कानों में मुद्रा पहनने, मूड़ मुड़वाने में और श्रृंगी बजाने में नहीं है। वास्तविक योग संसार में रहते हुए भी सांसारिक बुराइयों से दूर रहने में है। वास्तविक योगी सभी को समान मानता है—

जोगु न खिंथा जोगू न डंडे जोगू न भसम चढ़ाइऐ।
जोगु न मुन्दी मुन्डि मुडाइए जोगु न सिंगी वाइऐ।।
अंजन माहि निरंजनि रहीए जोगु जुगति ईव पाईऐ।।
गली जोगु न होई।
एक दृसटि करि समसरि जाणै जोगी कहीऐ सोई।। (राग रूही)

मुसलमान तो उस युग में शासक था। अपने आप को मुसलमान शब्द से संबोधित करना ही उस के लिए उच्चानुभूति का साधन था। परंतु गुरु नानक ने कहा—अपने आप को मुसलमान कहना तो बहुत मुश्किल काम है। अपने को मुसलमान तो वही कह सकता है जो अपने औलियों के बताये मजहब को प्रिय मानता है, अपनी कमाई को गरीबों में वितरित करता है, रब की रजा को सिर-माथे मानता है, उस के सामने खुद को मिटा देता है, सभी लोगों पर मेहरवान है—

मुसलमान कहावणु मुसकलु जा होइ ता मुसलमाणु कहावै।
अवलि अउलि दीनु करि मिठा मसकल-माना मालु मुसावै।।
होइ मुसलिमु दीन मुहाणै मरण जीवण का भरमु चुकावै।
रब की रजाइ मन्ने सिर उपरि करता मन्नै आपु गवावै।।
तउ नानक सरब जीआ मिहरंमति होई त मुसलमाण कहावै । (राग माझ)

(यहाँ यह बात विशेष रूप से दृष्टव्य है कि गुरु नानक ने मुसलमान से उस मज-

हब को मानने को कहा था जिस की व्याख्या मुसलमान संतों ने की थी न कि मुसलमान शासकों ने।)

गुरु नानक बार-बार काजी, ब्राह्मण और योगी को संबोधित करते और उसे उस के वास्तविक स्वरूप की पहचान कराते हैं। वे कहते हैं—काजी झूठ बोल कर हराम की कमाई खाता है। ब्राह्मण जीवों को दुख दे कर तीर्थों में स्नान करता घूमता है। योगी अंधा है। उसे युक्ति का पता नहीं। समाज के ये तीनों पथ-प्रदर्शक स्वयं अज्ञान के उजाड़ में पड़े हुए हैं। वास्तविक योगी वह है जो ईश्वर-प्राप्ति की युक्ति जानता है। वास्तविक काजी वह है जो सांसारिक ऐश्वर्य पाने की लालसा से अपने अहंकार को मिटा देता है। वास्तविक ब्राह्मण तो ब्रह्म का विचार करता है।

संपूर्ण-निर्गुण काव्य कथनी और करनी की एकता पर बल देता है। 'मन चंगा तो कठौती में गंगा' —यह सूक्त-वाक्य निर्गुण दृष्टि का प्रतिनिधि वाक्य है। परंतु नियति का यह विचित्र विद्रूप है कि यह अंतर कभी घटा नहीं, बल्कि बढ़ता ही गया है। गुरु नानक ने इस बात को बहुत अधिक गहराई से अनुभव किया था। उन्होंने अनुभव किया था कि 'करनी' के विषय में कहा तो जाता है परंतु इसे सत्य की प्राप्ति का एक साधन-मात्र माना जाता है, इसलिए अधिक आग्रह सत्य की व्याख्या पर ही लगा रहता है। सत्य से भी ऊपर है सत्याचार—

सचहु ओरै सभु को उपरि सचु आचार।।
(सिरी राग)

उन की वाणी में जगह-जगह इस आग्रह का अनुमोदन किया गया है। उन्होंने कहा—पढ़ना ही पर्याप्त नहीं है उसे उतनी गहराई से आत्मसात करना भी आवश्यक है—

पड़िआ बूझै सो परवाणु। (राग धनासरी)

यदि बौद्धिक पूर्णता प्राप्त करनी है तो उस में 'करनी' बहुत आवश्यक है। कितना भी ऊँचा ज्ञान क्यों न हो, करनी के अभाव में वह घटता ही जाता है—

जहि करणी तहि पूरी मत, करणी बाझहु
घटे घट।

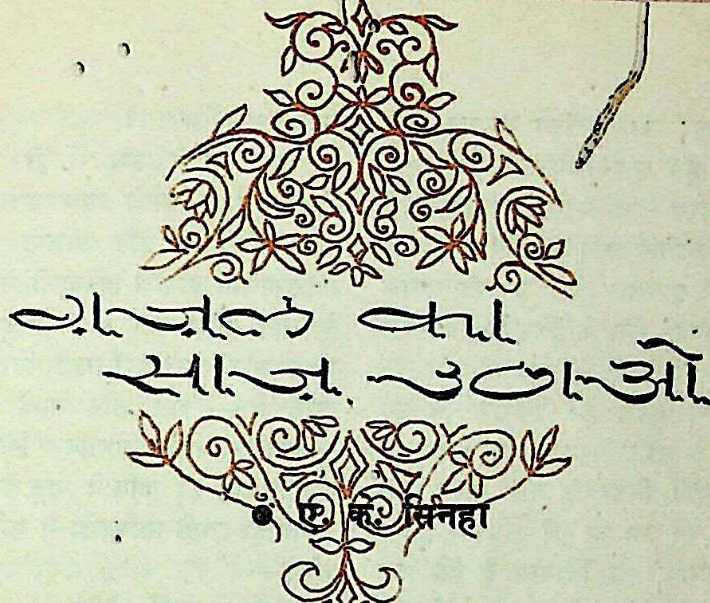
यदि अच्छे कर्म नहीं हैं तो केवल बड़ी बातों से बहिश्त नहीं मिलता—

गलो भिसति न जाइऐ सचु कमाइ।
(राग माझ)

गुरु नानक साधक के हाथ में रूढ़ियों, अंधविश्वासों, बिना समझे-बूझे शास्त्र-वचनों की डोर नहीं पकड़ाते। वे उस के हाथ में ज्ञान का दीपक देते हैं जिस के प्रकाश में वह सत्यासत्य का निर्णय कर सके। वे कहते हैं—पहले तथ्य को अच्छी तरह समझ लो, फिर उस का अनुगमन करो, पहले वस्तु को अच्छी तरह पहचान लो, फिर उस का व्यापार करो—

सुण मुधे हराणाखीए, गूढ़ा वैण अपरि।
पहिला वसथू पछाणकै तउ कीजै वापारु।।

(एच-१०८ शिवाजी पार्क,
दिल्ली-२६)



'फ़िराक' का स्थान आज उर्दू के सर्वश्रेष्ठ कवियों में है। उन्होंने प्रणय और पीड़ा, मानवता और विद्रोह के स्वरों को बड़ी सशक्त अभिव्यक्ति दी है। प्रस्तुत है उन के काव्य-सौंदर्य की एक झलक

इक मुद्दत से तेरी याद भी
आयी न हमें
और हम भूल गये हों तुझे
ऐसा भी नहीं
—'फ़िराक'

'फ़िराक' को 'फ़िराक' कहना ही अधिक उचित है, उमरखय्याम नहीं। 'फ़िराक' ने स्वयं 'फ़िराक' का सृजन किया, उसे अनभूतियों की गहराई तक पहुँचाया और कविता के माध्यम से उस की प्रभावपूर्ण अभिव्यंजना की। उन का जीवन गहन पीड़ा से आपूरित है और उन्होंने इस पीड़ा की मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति की है। प्रणय-विद्रोह के कवि 'फ़िराक' पैतृक गुण, धर्म और परिस्थितियों से प्रभावित नहीं हुए—

मुझ से अपना मजहब ले ले
और मुझे दे दे
तहजीब मुहब्बत की
इंसान करीने के

किसी अन्य के द्वारा प्रभावित नहीं वरन अपनी रचनाओं द्वारा उन्होंने स्वयं को प्रभावित किया है।

यद्यपि 'फ़िराक' को साहित्यिक जगत की मान्यता बहुत पहले मिल गयी थी तथापि भारतीय ज्ञानपीठ के पुरस्कार ने उन की श्रेष्ठ रचनाओं की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया है। उर्दू-साहित्य में महासिद्धि-प्राप्त इस महाकवि को देश

के साहित्य का सर्वोच्च सम्मान देना उपयुक्त है। कुछ आलोचकों के मतानुसार भारत - पाकिस्तान उपमहाद्वीप में उर्दू के जीवित कवियों में 'फिराक' ही सर्वाधिक सृजनक्षम हैं। उन की पुस्तक 'गुल-ए-नग्मा', जिस के लिए उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला है, ७० गजलों और २० नज्मों का संग्रह है। 'फिराक' ने उर्दू कविता के सभी विन्यासों का श्रेष्ठता के साथ प्रयोग किया है और गजल तथा रुबाइयों पर उन का पूर्ण अधिकार है।

'फिराक' का विश्वास है कि छोटे लोग कभी-कभी अति महान होते हैं। वे नायक-पूजा (हीरो-वर्शिप) के विरोधी हैं। उन्होंने साधारण मनुष्य से बेहतर होना पसंद नहीं किया—"महत्त्वपूर्ण सब से कम महत्त्वपूर्ण है। जहाँ से हम आगे बढ़े हैं अर्थात मासूमियत, शैशव तथा ग्राम्यवाद को जीवित रखना अनिवार्य है। निरक्षरता दैवी हो सकती है, प्रगति का अर्थ है जानने और न जानने के बीच सुमेल।" भोलेपन को 'फिराक' सर्वश्रेष्ठ गुण मानते हैं—

इक उम्र की छान-बीन से
बस यह हकीकत जानी है
इल्म और दानिश से बढ़ कर
इक बच्चे की नादानी है

बाल्यकाल में 'फिराक' अपनी माँ के प्रेमाधिक्य से मनोग्रस्त थे और उन्होंने उसे असह्य पाया। उन के अनुसार वे लोग महासौभाग्यशाली हैं जिन्हें कोई प्यार नहीं करता।

बहुत छोटी उम्र से ही 'फिराक' टोकरी बुनने वाली ग्राम्यबालाओं के दिव्य सौंदर्य के प्रति आकृष्ट रहे हैं। संध्याकालीन ग्रामीण हरियाली में लड़कों के साथ क्रीड़ोपरांत वे घंटों डूबते हुए सूरज और तारों-भरी रात को निहारा करते थे—"रात और तारों ने मुझे पुस्तकों से अधिक प्रभावित किया है।" अन्य किसी उर्दू कवि ने रात के बारे में शायद ही इतनी मार्मिकता से अभिव्यक्ति की है—

इक्का-दुक्का सदाये जंजीर
जिंदाँ में रात हो गयी है

चीनी आक्रमण के बाद उन्होंने कुछ गजलें लिखीं जो अपने करुण विषाद के लिए अपूर्व हैं—

गजल का साज उठाओ
बहुत उदास है रात
नवाये मीर सुनाओ
बहुत उदास है रात
इसी खँडहर में कहीं
कुछ दिये हैं टूटे हुए
उन्हीं से काम चलाओ
बहुत उदास है रात
सुना है ऐसे पहले भी बुझ
गये हैं चिराग
दिलों की खैर मनाओ
बहुत उदास है रात

'फिराक' के अनुसार कविता दुनिया के बारे में उभरी हुई तीव्रतर चेतनता

है। वे कहते हैं कि कविता हमें यह महसूस कराये कि संसार दैवी है।

'फिराक' अपने को एक हिंदू मानवतावादी बतलाते हैं। उन्होंने पृथ्वी की पवित्रता के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त की है। वे इस विचार को नहीं मानते कि कोई देवता या पैगंबर लौकिक जीवन के ऊपर है। प्रकृति स्वयमेव ईश्वर है। कोई दूसरा ईश्वर नहीं जो ब्रह्मांड का स्रष्टा या स्वामी है। मानव होने का अर्थ है दैवी होना। स्वाभाविक होना अच्छा होने से अधिक महान है। 'होना चाहिए' शब्द ठीक नहीं।

'फिराक' ने सौंदर्य के कोमल एवं सूक्ष्म अनुभूति-बोध को उभारा है। आलोचक 'न्याज' ने लिखा है कि यह कोई कल्पना नहीं कर सकता कि 'विचार' 'फिराक' के विचार से अधिक निर्मल हो सकता है। उन्होंने एक निराली, नवीन बिंब-सृष्टि की खोज की है और उर्दू कविता के परंपरागत संकेत-चिह्नों, जैसे—मयखाना, साकी, शराब का प्याला आदि का विरल प्रयोग किया है।

'फिराक' का वैवाहिक जीवन दुखी रहा। उन की पत्नी एक सीधी-सादी अनपढ़ स्त्री थीं। वे उन के स्वप्नों की रानी बन कर उन का मन रिझा नहीं सकीं। सौंदर्य एवं प्रेम के उपासक 'फिराक' को घोर निराशा हुई। नैराश्य के निराकरण के लिए प्यार की अभिव्यक्ति में ही सांत्वना प्राप्त करने की कोशिश की। उन्होंने इसे इतनी सुंदर, मार्मिक और स्फूर्तिजनक मौलिकता से अभिव्यक्त किया है जो उर्दू कविता में एक नयी चीज है। नारी-सौंदर्य का उन्होंने बेजोड़ वर्णन किया है। उन का हृदय स्वप्नों की दुनिया में एकाकी वास करता है—

इसी दिल की किस्मत में तन्हाइयाँ थीं
कभी जिस ने अपना पराया न जाना

★

मुहब्बत में मेरी तन्हाइयों के कै उनवान
तेरा आना, तेरा मिलना, तेरा उठना,
तेरा जाना

'फिराक' ने नारी को आदर्श रूप में चित्रित किया है। नारी की मनोरमता का वर्णन उन की स्वप्न-प्रेयसी की मनोहरता का प्रतीक है—

पड़ती है नजर जब तुम पर ऐ
जान-ए-बहार
संगीत के सरहदों को छू लेता हूँ

मनमोहक स्त्रियों के बारे में उन के कुछ शेर द्रष्टव्य हैं—

ये कौन मुसकराहटों का कारवाँ लिये हुए
शबाबो-शेरो-रंगो नूर का
धुआँ लिये हुए
दिल को तेरे तबस्सुम की याद
यूँ आये
कि जगमगा उठे मंदिर में
जिस तरह चिराग

विरह-वेदना 'फिराक' का प्रिय विषय है जिसे उन्होंने माधुर्य एवं नूतनता के साथ लिखा है—

अकसर यूँ ही याद आये तुम

आँखों में आँसू लबू पे तबस्सुम
तुम नहीं आये और रात
रह गयी राह देखती
तारों की महफिल आज
आँखें बिछा के रह गयी

*

सूनी-सूनी बिरह की घड़ियाँ
लुट गये दिन और छिन गयीं रातें

'फिराक' की आदर्श नारी केवल चिरकाल तक आनंद देने वाली, सौंदर्य का प्रतीक ही नहीं, बल्कि वह ऐसा ध्रुव-तारा है जिस के द्वारा वे अपनी जीवन-नौका को क्षुब्ध सागर में खेते हैं। वह ही उन के लक्ष्य और उद्देश्यों को निर्धारित करती है। वही उस मंजिल की ओर इशारा करती है जहाँ वे अभी पहुँच नहीं पाये। उन की निराशा बहुत गहरी है—

देख तारों भरी रात 'फिराक'
आँसू का कफस है दुनिया पर

मार्क्सवाद से प्रभावित 'फिराक' ने 'दास्ताने आदम', 'इन्कलाबे चीन', 'धरती की करवट' और 'जागते रहो' लिखा, जिस में उन्होंने मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण के विरुद्ध आवाज उठायी, क्रांति की पुकार की और नये समाज के आगमन की आशा व्यक्त की है। 'जागते रहो' में वे लिखते हैं—

उन वादियों से अब गुजरना है तुम्हें
जहाँ जिबरील के भी जलते हैं पर
जागते रहो

'देखते रहो' में वे लिखते हैं—

गम की पहर जो कटी नहीं
उड़ जायेंगे बन के धुआँ देखते रहो

*

दुनिया को हम करेंगे हँसी
से हसीन-तर
तुम जलवाहाए-लाला-रुखन
देखते रहो

'धरती की करवट' में 'फिराक' अपने अतीत से नाता तोड़ लेते हैं और एक नया मार्ग दिखाते हैं। वे विद्रोह और आशा के कवि-रूप में प्रकट होते हैं—

सूरज चाँद अँगड़ाई लेंगे
तारे अपनी गति बदलेंगे
पर्वत सागर लहरायेंगे
जब ये धरती करवट लेगी

*

सब की किस्मत चमक जायगी
कारीगर मजदूर किसान
भारत के बेचैन जवान
बड़े दबे बेनामोनिशान

*

धरती का तख्ता उलटेंगे
दुनिया में सर्वोदय होगा
नया समाज आँखें खोलेगा
नयी सभ्यता कायम होगी

'रोटियाँ' मार्क्सवाद के प्रभाव में हैं—

मिले चंद ही को तो लानत है रोटी
जो महँगी मिले तो मुसीबत है रोटी
न सब को मिले तो जलालत है रोटी

यद्यपि उन की कविता का विषय

(प्रेम और सौंदर्यानुराग) परंपरागत है तथापि वे उर्दू कविता की परंपराओं की सीमाओं को तोड़ कर बहुत आगे निकल गये हैं। उन्होंने उर्दू कविता को बहुत-सी उत्कृष्ट चीजें दी हैं। उन्होंने मध्यम एवं निम्न वर्ग के लोगों की बातचीत की भाषा का प्रयोग कविता को अत्यंत प्रभावकारी बनाने के लिए किया है। उन्होंने परंपरागत विशिष्ट काव्य, शब्द-चयन और शैली को तज् दिया है और दिल्ली, आगरा और लखनऊ में बोली जाने वाली उर्दू, हिंदी और हिंदुस्तानी शब्दावली का प्रयोग किया है। वे हिंदी और हिंदुस्तानी शब्दों का उदारता से प्रयोग करते हैं जिस के फलस्वरूप उर्दू और हिंदी के बीच की भिन्नता लुप्त हो जाती है—

चल गयी जाने कैसी हवा
आज बुझे दिल से भी उठा धुआँ

उर्दू कविता को 'फिराक' का सब से बड़ा योगदान है विचार एवं भावों के असाधारण तथा सूक्ष्म छायार्थ को व्यक्त करने के लिए साधारण शब्दों का प्रयोग।

उन की गजल के संबंध में 'न्याज' का मत है—"अपने समकालीन उर्दू कवियों में 'फिराक' सर्वोच्च स्थान लेते हैं। उन के पद्य की रचना और सजीलापन इतना निर्मल और मनमोहक है कि हम इसे बौद्धिक आनंद में परम एवं चरम मान सकते हैं।"

उन की रचना 'रूप', जिस में ३५० रुबाइयाँ हैं, १९४७ में प्रकाशित हुई। उस से उन्हें बड़ी लोकप्रियता मिली। 'रूप' को पढ़ कर 'न्याज' ने लिखा—"फिराक ने अपनी चतुष्पदियों में कला की सूक्ष्म बारीकियों को ढाला है। केवल पश्चिम तथा ईरान की संस्कृति और यूनान के बौद्धिक सौंदर्य का ही नहीं, अपितु प्राचीन हिंदू और बौद्ध कलाओं के संगीत और शोभा का भी संश्लेषण किया है।"

अंततोगत्वा 'फिराक' एक मानवतावादी हैं। उन के अनुसार हिंदू-मानवतावाद प्रकृति एवं हर प्रकार के जीव के प्रति श्रद्धा का पर्यायवाची है। श्रद्धा को वे ब्रह्मांड के प्रति अर्पित करते हैं।

'फिराक' अपने जीवन-काल में ही एक किस्सा बन गये हैं। उन का खरा व्यक्तित्व उन की अंतर्ज्ञानयुक्त स्वप्नदर्शी आँखों से दीप्तिमान हो उठता है। उन की उद्विग्नता और खौलता हुआ उबाल लोगों को आकर्षित करता है। ७४ वर्ष की अवस्था में उन की बुद्धि आज भी उतनी ही क्रियाशील है जितनी बीस या तीस वर्ष की उम्र में थी। उन का व्यंग्य विषाक्त एवं कराल होता है। वे चुटीली सूक्तियों का प्रयोग करते हैं जो अत्यंत विचारोत्तेजक होती हैं। बातचीत में वे बहुत ही आकर्षक हैं। उन्होंने ख्याति तथा सफलता से घृणा की है। अवसरवादिता के वे घोर विरोधी हैं।

(५५/२/१, पोस्ट-हैवी इलेक्ट्रिकल्स,
रानीपुर, हरद्वार)

● फ़रहत क़मर

छोटी-छोटी महानताएं

साधारणतः बड़ी बातों का संबंध बड़े लोगों से समझा जाता है, परंतु यह जरूरी नहीं। बड़ाई का संबंध पद या धन से न हो कर चरित्र से है और सच्चरित्रता साधारण व्यक्तियों में भी पायी जाती है। यहां कुछ ऐसे व्यक्तियों की बातें प्रस्तुत कर रहा हूं जो समाज की नजरों में चाहे बड़े न हों, पर वस्तुतः हैं महान।

कालिज में बहुत-से अध्यापकों ने पढ़ाया था, परंतु बाद में याद रह गये उर्दू के प्रोफेसर कैसर जैदी साहब ही। कभी-कभी उन से मिलने चला जाता तो उन की आकर्षक संगति तथा मनोरंजक बातों में दिन इस प्रकार गुजर जाता जैसे दो घंटे का हो। वे मुझे बड़ा स्नेह करते थे और मुझे भी ऐसा लगता जैसे मैं उन के परिवार का ही सदस्य होऊँ।

एक दिन हम बैठे थे। मेज पर कहीं से आया हुआ खुला लिफाफा पड़ा था। मेरी नजर उस पर पड़ी तो मुझे उस के टिकट बिलकुल साफ दिखायी दिये—मुहर हट कर लगी थी। मैं ने धीरे-धीरे वे टिकट उतार लिये और उन को देते हुए कहा, "लीजिये ये टिकट, बिलकुल साफ हैं!"

चश्मे के पीछे से झाँकती आँखों में रोष उभरा, परंतु सदा की भाँति अपने मनोभावों को संयम में रखते हुए गंभीर स्वर में बोले, "टिकट इस्तेमाल हो चुके हैं। यदि डाकखानेवालों की लापरवाही से फायदा उठा कर इन को दोबारा इस्तेमाल कर लिया जाये तो यह ईमानदारी तो न होगी।"

मैं चुपचाप सोच रहा था—नैतिकता और ईमानदारी बुद्धि तथा चतुराई का मिथ्या आवरण ओढ़ कर भ्रष्ट ही हो जाती है।

कुछ दिन पहले अपने जन्मस्थान जा रहा था। चाँदपुर बस-स्टाप पर उ. प्र. रोडवेज की एक-जैसी कई बसें खड़ी थीं। बस चलने को ही थी कि एक आवाज सुनायी दी—"इस सीट पर मेरा थैला रखा था।"

फिर कुछ और आवाजें—अनेक प्रश्न—और थैले की तलाश।

"उस में एक जोड़ी कपड़ा और खाना रखा था।"

थैला कहीं नहीं मिला।

"चलो मेरा थैला ही तो किसी ने उठा लिया, मैं ने तो किसी का नहीं उठाया। जाना था, चला गया!"

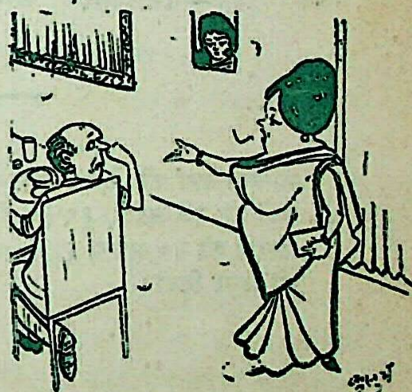
आवाज में कुछ ऐसी सरलता और संतोष था कि अब तक लापरवाह बैठा मैं मुड़ कर देखने को विवश हो गया। सीधे-सादे कपड़ों में अधेड़ उम्र का एक देहाती इतमीनान से बीड़ी सुलगा रहा था।

बस अड्डा छोड़ चुकी थी। असली बात का पता जल्दी लग गया। वास्तव में वह आदमी गलत बस में चढ़ गया। बस रुकी और वह उतर गया। पता नहीं उस का थैला मिला होगा कि नहीं, परंतु वह आज भी याद आता है।

बाजार सीताराम (दिल्ली) में मेरे एक मित्र रहते हैं। छोटा-सा घर, छोटी-सी नौकरी, परंतु स्वयं महान। बारिश होने के कारण मुझे एक शाम उन के यहाँ देर हो गयी। उन्होंने रात को वहीं ठहर जाने का आग्रह किया, जो मैं ने मान लिया।

रात के दस बजे थे। बारिश हलकी हो गयी थी। हमारे पास सिगरेटें नहीं थीं। लेने के लिए हम जीने से उतरे। नीचे ही पनवाड़ी की दुकान थी। वे वहाँ नहीं रुके, आगे बढ़ते गये। सड़क पर कीचड़ था और हम दोनों ही चप्पल पहने थे। सड़क पर चलना कठिन था, परंतु वे आगे बढ़ते गये। मैं ने जरा मजाक करते हुए कहा, "यह समय चहलकदमी के लिए ठीक नहीं है।"

"आओ तो सही," कह कर उन्होंने मेरा हाथ पकड़ लिया। मैं ने सोचा, शायद उन्हें कोई और काम होगा, परंतु ऐसी



"हमेशा मेरे बनाये खाने में मीन-मेख मत निकाला करो ... मैं पाक-शास्त्र की प्राध्यापिका हूँ, महाराजिन नहीं!"

कोई बात नहीं थी। गली के नुक्कड़ से उन्होंने सिगरेट का एक पैकेट लिया और वापस मुड़ गये। घर के जीने तक पहुँच कर जब मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि सिगरेट लेने के अलावा और कोई काम नहीं था तो मैं ने कहा, "यार तुम को लोग सच ही सनकी कहते हैं ! भला इतनी दूर जाने की क्या जरूरत थी ?"

"नहीं समझे ?" वे कुछ ठहर कर बोले, "नीचेवाले पनवाड़ी की ५०–६० रुपये रोज की बिक्री है। इसे एक पैकेट सिगरेट न बिकने से कोई फर्क नहीं पड़ता, परंतु बेचारे उन बड़े मियाँ के लिए, जो केवल एक पेटी लिये बैठे हैं, एक पैकेट बेचना महत्त्वपूर्ण है।"

नयी दिल्ली में रहते हैं मेरे एक लेखक मित्र—सफाईपसंद और नाजुकमिजाज। वे चाय को प्लेट में डाल कर पीना असभ्यता समझते हैं और चाय पीते हुए आवाज करना तो सहन ही नहीं कर सकते।

एक बार उन के घर गाँव से एक बूढ़े रिश्तेदार आये। चाय आयी तो उन्होंने प्लेट में उँड़ेल ली और लगे सुड़प-सुड़प करने। मैं चौकन्ना हो गया—इस बात की मेरे मित्र पर क्या प्रतिक्रिया होगी ? कहीं वे इन बुजुर्ग पर भी ऐसे ही न बरस पड़ें जैसे अपने साथियों पर।

परंतु एक अजीब बात हुई ! मेरे दोस्त ने अपनी चाय भी प्लेट में उँड़ेल ली और आवाज के साथ पीने लगे ! कहीं रिश्तेदार को अपने गलत व्यवहार पर लज्जा न हो, इसलिए उन्होंने भी वैसा ही किया।

(बाटला हाउस, जामियानगर,
नयी दिल्ली–२५)

कैलिफोर्निया की केनेथ कन्सन नामक महिला ने अपनी पहली पुत्री को २० अप्रैल, १९५७ को, दूसरी को २० अप्रैल, १९५८ को, तीसरी को २० अप्रैल, १९६० को तथा चौथी को २० अप्रैल, १९६१ को जन्म दिया।

*

नाई : बाल कैसे काटूँ साहब ?
ग्राहक : यह अगर मैं जानता होता तो तुम्हारे पास ही क्यों आता ?



मानवीय ५९७९

देर हो रही थी, अतः हम दोनों भाई जल्दी-जल्दी खा कर साइकिल पर स्कूल के लिए चल पड़े। बड़े भाई साइकिल चला रहे थे और मैं आगे बैठा था। थोड़ी ही दूर गये होंगे कि सामने से दो ट्रक बड़ी तेजी से एक ही दिशा में आते दीखे। दोनों एक-दूसरे से आगे निकलने की होड़ में थे। देखते-ही-देखते ट्रक हमारे एकदम करीब आ गये। बचने की कोई संभावना न देख कर हम ने आँखें बंद कर लीं। सड़क के दोनों ओर बीस-बीस फुट गहरे गढ़े थे, इसलिए इधर-उधर हम किसी तरह जा भी नहीं सकते थे।

अचानक एक ड्राइवर ने अपना ट्रक गढ़े की ओर मोड़ दिया। बचने की गुंजाइश तो थी ही नहीं, ट्रक गढ़े में जा गिरा। हम दोनों भय के मारे एक तरफ गिर पड़े। भारी भीड़ जमा हो गयी।

बाद में पुलिस ने दुर्घटनास्थल का निरीक्षण किया। ड्राइवर गंभीर रूप से घायल हुआ था। उस ने अपने बयान में कहा, "मुझे माल लेने के लिए जल्दी जाना था इसलिए दूसरे ट्रक से आगे निकल जाने की कोशिश की। दूसरा ट्रक-चालक भी रफ्तार में था। सड़क बहुत सँकरी थी। मुझे एक साइकिल पर दो बच्चे बैठे दीख गये। इन बच्चों को बचाने के लिए मैं ने ट्रक गढ़े की ओर मोड़ दिया। मेरा नुकसान तो बहुत हुआ, पर बच्चों की जान बच गयी। पता नहीं, उन बच्चों में से आगे चल कर कौन क्या बने!"

आज मैं एक गाँव में डॉक्टर हूँ। अच्छी प्रैक्टिस चलती है। आसपास के गाँवों में इज्जत है। उस ड्राइवर की जब भी याद आती है, श्रद्धा से सिर झुक जाता है।

—जनार्दन पांडेय, ग्राम—नसीरपुर, जिला—गाजीपुर (उ. प्र.)

मैं ने पटरी से लगी दुकान से चालीस पैसे की सिगरेट खरीदी। जेब से मैं ने रुपये निकाले और फिर दुकानदार को एक नोट दे कर कहा, "दो का नोट है, एक रुपया साठ पैसे वापस करो।"

दीये की फीकी रोशनी में नोट देख कर फिर उसे मुझे वापस करते हुए उस ने कहा, "आप ने पाँच का नोट दे दिया है।"

वाकई पाँच का नोट था! फिर मेरे द्वारा दो का नोट देने पर उस ने बाकी पैसे लौटाते हुए कहा, "बाबूजी, जब तक पुराने नोट बंद नहीं होते, तब तक नये और पुराने नोटों को अलग-अलग रखा कीजिये। हम लोग ऐसा ही करते हैं।" अपने देश के उस गरीब दुकानदार की ईमानदारी मैं आज भी नहीं भूल सका हूँ।

—रमेश खुराना स्वप्न, कानपुर

छोटे भाई विक्रम को बंदूक चलाने का शौक हो गया। दिन-भर चिड़िया मारने की बंदूक ले कर वह छोटे-छोटे शिकार की खोज में रहता। एक दिन उस ने नियमानुसार रात में बंदूक की जाँच की कि कहीं उस में गोली न रह गयी हो। फिर निश्चित हो उस ने बंदूक रख दी।

दूसरे दिन दोपहर में वह बंदूक ले कर बैठ गया। यह जान कर कि बंदूक तो खाली है, उस ने छोटे भाई प्रताप को डराने के लिए उस की आँख का निशाना साधा। पर घोड़ा दबाते समय न जाने क्या सोच कर उस ने निशाना दरवाजे की ओर कर दिया। एकदम गोली निकली और दरवाजे से जा टकरायी।

वास्तविकता यह थी कि पिताजी ने गोली भर कर बंदूक का प्रयोग किया था। विक्रम अगर उस दिन प्रताप पर से निशाना न हटाता तो गजब हो जाता!

—नीरजा देसाई, इटारसी (म. प्र.)

आठवीं कक्षा में पढ़ता था और बोर्डिंग-हाउस में रहता था। बिजली नहीं थी अतः गरमी में हम खुले में सोते थे। कुछ लड़कों की साइकिलें प्रायः बरामदे में बिना ताले के खड़ी रहती थीं।

मेरे मित्र कामताप्रसाद का शिवबहादुर नाम के लड़के से झगड़ा हो गया। दूसरे दिन छुट्टी थी। ज्यादातर लड़के घर चले गये। मैं, कामता, शिवबहादुर तथा कुछ अन्य लड़के ही रह गये।। कामता की सलाह पर आधी रात के लगभग हाथ में एक नुकीली कील लिये मैं शिवबहादुर की साइकिल में पंचर करने गया।

शिवबहादुर और कामता की ही साइकिलें खड़ी थीं। मैं ने तुरत शिवबहादुर की साइकिल के अगले पहिये में कील धँसा दी। सौभाग्य से कोई लड़का जागा नहीं। जब सारी हवा निकल गयी तो मैं ने इतमीनान से कई जगह कील धँसा दी।

सुबह मुझे कामता ने जगाया और अपनी साइकिल के बारे में पूछा।

घटना की छानबीन हुई और निष्कर्ष निकाला गया कि रात में कोई कामता की साइकिल चुरा कर ले गया। शिवबहादुर की साइकिल कुछ दूर पर एक पेड़ के सहारे खड़ी थी। अनुमानतः चोर पहले शिवबहादुर की साइकिल ले जा रहा था लेकिन पंचर होने के कारण उसे नहीं ले गया। उस की जगह वह कामता की साइकिल ले गया। शिवबहादुर की साइकिल मेरे ही कारण बची थी लेकिन मैं अहसान नहीं जता सकता था।

—सुशीलकुमार मलहोत्रा, दिल्ली कैंट

हमारे घर छोटी-छोटी मछलियाँ खरीद कर लायी गयीं। शाम के सात बजे होंगे। मेरी माँ मछलियों को आँगन में नल से धो कर अपने पास रखती जा रही थीं। एकाएक माँ का ध्यान गया कि जो भी मछली मैं धो कर रखती हूँ वह गायब हो जाती है! जैसे ही उन्होंने जरा-सा मुड़ कर पीछे देखा तो चिल्ला पड़ीं—करीब एक गज लंबा साँप वहाँ मौजूद था। साँप तो भाग गया, पर हैरत की बात यह है कि माँ के बिलकुल पास होने के बावजूद साँप ने उन्हें नहीं काटा, चोरी-चोरी मछलियाँ जरूर हड़पता रहा!

—संदीपकुमार मुखर्जी, नजीबाबाद (बिजनौर)

राजस्थान का पहला बाँध (जवाई बाँध) बन रहा था। बारूद से चट्टानें तोड़ी जा रही थीं। एक चट्टान का निचला भाग तो काफी टूट गया, पर ऊपर की सतह नहीं टूटी। इस से छिछली गुफा के ऊपर निकली हुई छत-सी बन गयी। दोपहर में मजदूर उस की छाया में बैठ खाना खाते और आराम करते थे।

एक दिन दो मजदूर वहाँ बैठे खाना खा रहे थे कि उन के गाँव के दो व्यक्ति उन से मिलने आये। मेहमानों को भी मजदूरों ने साथ बिठा लिया। कुछ देर बाद वे मेहमानों के लिए पानी लेने गये। लौटने पर उन्होंने देखा कि जो चट्टान इतने दिनों से उन पर छाया कर रही थी वह मेहमानों पर आ पड़ी थी। मेहमान उस के नीचे कुचल कर मर चुके थे। काल ही उन्हें वहाँ खींच लाया था।

—राकेश, जोधपुर

सार–संक्षेप

हिटलर की निर्मम तानाशाही से सारी दुनिया आतंकित थी। जरमन सेना में भी उस के विरोधियों की संख्या कम न थी, पर मित्रराष्ट्रों का सहयोग न मिल पाने के कारण षड्यंत्र की योजना सफल न हो पा रही थी। अंत में जरमन सेनापतियों ने अपने ही बलबूते पर १९३९ में हिटलर की हत्या की योजना तैयार कर ली। हिटलर के कमरे में नियत समय पर बम-विस्फोट किया गया, लेकिन भाग्य से हिटलर बच निकला। षड्यंत्र की विफलता के बाद हिटलर ने बड़ी क्रूरता से विरोधियों का दमन तथा नाश किया। लगभग सात हजार व्यक्ति गिरफ्तार किये गये और पाँच हजार लोगों की हत्या की गयी। हाल ही में ब्रिटिश विदेश-नीति के दस्तावेज (१९१९ से १९३९ तक) प्रकाशित हुए हैं। उन से इस संबंध में कुछ नये प्रामाणिक तथ्य सामने आये हैं जिन के आधार पर इस रोमांचकारी ऐतिहासिक षड्यंत्र का विवरण प्रस्तुत किया है राजेन्द्रमोहन अग्रवाल ने

हिटलर की हत्या

मित्रराष्ट्र ही नहीं, कुछ जरमन सेनापति भी हिटलर को समाप्त करके जरमनी को नाजीवाद के चंगल से छुड़ाना चाहते थे, लेकिन इतिहास का यह क्रूर व्यंग्य था कि मित्रराष्ट्रों ने जरमनी के नाजी-विरोधी सेनापतियों की बात सुनने और उन की मदद करने से इनकार कर दिया था। जरमन सेना के अधिकांश अधिकारी नाजीवाद को नापसंद करते थे। जब उन्होंने देखा कि हिटलर मनमाने ढंग से फैसले कर रहा है और उस की निगाह में आदमी के जीवन का कोई मूल्य नहीं रह गया है तो उन्होंने हिटलर के प्रबल विरोध का निश्चय किया।

कुछ जरमन सैनापतियों ने १९३० में ही ब्रिटेन और फ्रांस की सरकारों के सामने प्रस्ताव रखा था कि यदि आप ने दृढ़ नीति अपनायी तो हम हिटलर को बंदी बना लेंगे और सत्ता छीन लेंगे। १९३८ में इन जरमन सेनापतियों ने हिटलर के विरुद्ध षड्यंत्र आरंभ कर दिया। शायद हिटलर इस स्थिति को ताड़ गया और उस ने फौरन आस्ट्रिया पर हमला करने का आदेश जारी कर दिया। जरमन सेनापति स्वभाववश आज्ञापालन में लग गये और हिटलर एक के बाद एक देश पर आक्रमण का आदेश देता चला गया—चेकोस्लोवाकिया, पोलैंड, नार्वे, नीदरलैंड और अंततः फ्रांस तथा रूस पर।

मार्च, १९३८ में आस्ट्रिया पर जरमन आक्रमण के बाद भी जरमन सेनापतियों ने मित्रराष्ट्रों के सामने अपने प्रस्ताव को दोहराया, मगर मित्रराष्ट्र हिटलर से इस सीमा तक आतंकित हो चुके थे कि उन्हें

का षड्यंत्र

विश्वास ही न होता था कि हिटलर का विरोध उस के अपने ही सेनापति कर सकते हैं! उस के बाद म्यनिख संम्मेलन आयोजित हुआ और ब्रिटिश प्रधानमंत्री चेंबरलेन ने हिटलर के सामने घुटने टेक दिये। मित्रराष्ट्रों के इस कमजोर व्यवहार ने जरमन सेनापतियों को बहुत निराश किया और वे फिर मौन हो कर बैठ गये।

म्यूनिख की इस महान ऐतिहासिक भूल के बाद नाजी-विरोधी अभियान एक नये दौर में दाखिल हुआ। १९३९ में षड्-यंत्रकारियों ने एक बार फिर ब्रिटिश सरकार के दरवाजे खटखटाये। ब्रिटिश विदेश-नीति के दस्तावेज (१९१९ से १९३९ तक) हाल ही में प्रकाशित हुए हैं। इन में जरमन सेनापतियों के उन सब प्रयत्नों का उल्लेख मिलता है। इन दस्तावेजों के छठे खंड में जनरल जेम्स मार्शल कार्नवाल ने ७ जुलाई, १९३९ को लिखा है कि रूढ़ि-वादी दल के तत्कालीन प्रधान सचेतक जेम्स स्टअर्ट (जो अब लार्ड हैं) तथा नौ-सैनिक गुप्तचर-सेवा के निदेशक के साथ मैं एक तरुण जरमन स्टाफ-अधिकारी कर्नल वान श्वेरिन से मिला। श्वेरिन ने सर जेम्स से कहा कि यदि आप युद्धप्रिय नेताओं को अपने मंत्रिमंडल में शामिल कर लें तो हिटलर सहम जायेगा और उस की आँखें खुल जायेंगी। यहाँ श्वेरिन का इशारा विंस्टन चर्चिल की ओर था।

उस समय जरमनी के विदेश-मंत्रालय में नाजी-विरोधी तत्त्वों का नेता स्थायी अवरसचिव अर्नेस्ट वान वाइजसेकर था। अर्नेस्ट की नीति म्यूनिख-सम्मेलन में ब्रिटिश पलायन के बाद एकदम बदल गयी। उसे लगा कि अब ब्रिटेन और फ्रांस हिटलर के सामने घटने टेक चुके हैं अतः जरमन षड्यंत्रकारियों को भी संतोष करके चुप बैठ जाना चाहिए। सच बात तो यह है कि इन षड्यंत्रकारियों को मित्रराष्ट्रों की सहायता और उन के समर्थन की आवश्यकता थी। वे यह बात अच्छी तरह जानते और समझते थे कि जरमनी की जनता हिटलर की हत्या पर खश नहीं होगी। उस के लिए हिटलर जरमन शक्ति का प्रतीक बन चुका था। उसे लगता था कि इसी भाग्य-विधाता ने जरमनी को वर्साय-संधि के अपमान से मुक्त किया, जरमनी को संसार की एक महान शक्ति बनाया और वाइमर गणतंत्र की फूट समाप्त करके देश को एक सशक्त सरकार प्रदान की है।

स्वस्तिक के नीचे संगठित जरमनी की गतिविधियों को वहाँ की जनता ऐतिहासिक अभियान मानती थी। यही कारण है कि जिस समय नाजी-विरोधी नेता एडम वान ट्रौट जू सोल्ज एवं श्वेरिन ने मित्रराष्ट्रों के समर्थन की माँग की उस समय उन्होंने उन के सामने यह बात स्पष्ट कर दी थी कि यदि हम हिटलर के विरुद्ध षड्यंत्र करने और जरमनी की सत्ता हथियाने में सफल रहे तो हम से

यह आशा नहीं कि जायेगी कि हम वर्साय-संधि को फिर से मान्यता दें। वे जानते थे कि यदि उन्होंने ऐसा किया तो जरमन-जनता उन के विरुद्ध खड़ी हो जायेगी। लेकिन इन जरमन नेताओं के इस स्पष्टीकरण ने मित्रराष्ट्रों के मन में संदेह पैदा कर दिया कि जरमन सेनापति जरमनी के लिए अधिकाधिक रियायतें माँगते चले जा रहे हैं और ये बुनियादी तौर पर हिटलर के आतंक को समाप्त करने के बारे में चिंतित नहीं हैं।

यद्ध तेजी से आगे बढ़ता चला गया। युद्ध के उत्तरार्द्ध में भी नाजी-विरोधी तत्त्व हिटलर की हत्या के प्रयत्न में संलग्न रहे। वे अनेक बार अचूक साधन अपनाते लेकिन भाग्य हिटलर का साथ देता। इसी कारण अनेक षड्यंत्रकारियों के मन में यह आतंक बैठ गया कि हिटलर किन्हीं दैवी शक्तियों का स्वामी है और उस की हत्या नहीं की जा सकती। जरमन सेनापति षड्यंत्र कर रहे थे लेकिन उन के मन में डर बना था कि हिटलर की हत्या होते ही मित्रराष्ट्र षड्यंत्रकारियों से माँग करेंगे कि जरमनी को बिना किसी शर्त के आत्मसमर्पण करना चाहिए। इसी आशंका को दूर करने के लिए वे मित्रराष्ट्रों को यह समझाते रहे कि यह युद्ध जरमनी के नहीं, हिटलर के मस्तिष्क की उपज है, अतः हिटलर की हत्या के बाद युद्ध को सम्मानजनक रीति से समाप्त करने की घोषणा की जानी चाहिए और मित्र-राष्ट्रों को जरमनी की नयी क्रांतिकारी सरकार (जो हिटलर की हत्या के बाद बनती) के साथ मित्रों-जैसा व्यवहार करने का वचन देना चाहिए। लेकिन मित्रराष्ट्र इस तरह का वचन देने के लिए किसी भी तरह तैयार न हुए। इस के बावजूद नाजी-विरोधी नेता हिटलर की हत्या की चेष्टा करते रहे। उन के मन में यह बात बैठ चुकी थी कि जरमनी की प्रतिष्ठा के लिए हिटलर की हत्या के अलावा दूसरा कोई रास्ता नहीं है। वे यह भी जानते थे कि षड्यंत्र के विफल हो जाने के बाद जरमनी का इतिहास उन्हें देशद्रोही कहेगा, लेकिन यदि इस भय से हिटलर की हत्या का इरादा छोड़ देते हैं तो अपने ही अंतःकरण के प्रति विश्वासघात के अपराधी होंगे।

सन १९३८ में विख्यात नाजी-विरोधी जरमन नेता एडम वान ट्रौट पीकिंग विश्वविद्यालय में अध्ययन कर रहा था। एक फ्रांसीसी ने उस से पूछा कि जरमन जनता हिटलर के विरुद्ध विद्रोह क्यों नहीं कर देती? ट्रौट ने जरमनी के इतिहास का गहरा अध्ययन किया था। यह प्रश्न सुन कर उस ने कहा कि जरमनी का गत चार सौ वर्षों का इतिहास सैनिक सत्ता के प्रति वफादारी का इतिहास है। जरमन जनता विद्रोह की भाषा एकदम भूल चुकी है। उसे केवल सिखाया गया है—सरकार का आज्ञा-पालन! ट्रौट ने यह भी कहा था कि जरमनी में अब केवल

सैनिक विद्रोह ही सफल हो सकता है।

ट्रौट और अन्य नाजी-विरोधी नेताओं ने इस तथ्य को अच्छी तरह समझ लिया था। उन में से प्रायः सभी ने मोएलर वान डेन ब्रुख का 'द थर्ड रीश' पढ़ा था। नाजी मानते थे कि मोएलर ने इस में जिस रूढिवादी क्रांतिकारी का जिक्र किया है, वह हिटलर ही है; लेकिन नाजी-विरोधियों की मान्यता थी कि क्रांति तो अभी होनी है जिस में हिटलर को नष्ट किया जाना चाहिए। कुछ लोग कहते थे कि मोएलर का नाजियों के साथ संबंध है, लेकिन वास्तव में मोएलर नाजी-समर्थक नहीं था। नाजी खुद भी यह जानते थे। उन्होंने मोएलर के ग्रंथ का शीर्षक (द थर्ड रीश) चुरा कर अपनी सरकार के लिए इस्तेमाल करना शुरू कर दिया था, लेकिन इस नाम के लिए उन्होंने कभी भी मोएलर के प्रति कृतज्ञता प्रकट नहीं की। यह रचना १९२३ में प्रकाशित हुई और दो वर्ष बाद मोएलर ने आत्महत्या कर ली थी।

१९४२ बीत गया, पर षड्यंत्रकारी प्रयास में सफल न हो पा रहे थे। इस से उन में गहरी निराशा और आत्म-ग्लानि का भाव पनपने लगा था। अप्रैल, १९४३ में मित्रराष्ट्रों के एक विमान ने ट्यूनीशिया में हिटलर के सैनिक शिविर पर भारी बमवारी की। शिविर में जरमन सेना का कर्नल काउंट क्लास स्कैंक वान स्टाफेनबर्ग भी था। स्टाफेन बुरी तरह घायल हो गया। उसे ट्यूनीशिया के एक सैनिक अस्पताल में भरती किया गया, जहाँ उस का दाहिना हाथ काटना पड़ा। बायें हाथ की दो अँगुलियाँ गोली लगने से उड चुकी थीं और बायीं आँख भी जाती रही थी। गोलियों की मार से पाँव छलनी हो गये थे, मगर स्टाफेनबर्ग अनोखे साहस और संकल्प का धनी था। उस ने अस्पताल में ही बिस्तर पर लेटे-लेटे संकल्प किया—'मैं हिटलर की हत्या करके रहूँगा।' बड़ा विचित्र संकल्प था! एक हाथ, एक आँख और संकल्प—हिटलर की हत्या!

दाहिना हाथ कट जाने से वह बहुत परेशान था। षड्यंत्र करने के लिए जरूरी था कि लोगों के साथ पत्र-व्यवहार किया जाये और यह दायित्व किसी स्टेनोग्राफर को नहीं सौंपा जा सकता था। तब क्या हो? उस ने यह संकल्प हिटलर के प्रति किसी द्वेष के कारण नहीं, जरमनी की भलाई के लिए किया था।

दायें हाथ में सिर्फ तीन अँगुलिया बची थीं, मगर उस ने हार न मानी। धीरे-धीरे बायें हाथ से लिखने का अभ्यास कर लिया। अब स्टाफेनबर्ग ने सब से पहले हिटलर-विरोधी जरमन नेता मेजर जनरल हेनिंग वान ट्रेसकोव से संपर्क स्थापित किया। ट्रेसकोव उस समय तक हिटलर की हत्या के लगभग आधे दर्जन षड्यंत्रों में शामिल हो चुका था। उन में से अनेक में स्टाफेनबर्ग ने भी भाग लिया था। दोनों के बीच अच्छी घनिष्ठता थी।



विस्फोट के तीन घंटे बाद : हिटलर मुसोलिनी को दुर्घटना-स्थल दिखाते हुए

स्टाफेनबर्ग ने ट्रेसकोव को हिटलर की हत्या करने के संकल्प से अवगत कराया।

ट्रेसकोव ने षड्यंत्र की रूपरेखा बनाने का काम स्टाफेनबर्ग पर छोड़ दिया और स्वयं नाजी-विरोधी जनरलों के साथ संपर्क स्थापित करने लगा। वह जानता था कि जरमन सेना हिटलर के विरुद्ध किसी भी कार्रवाई के लिए तैयार न होगी, अतः उस ने कुछ हिटलर-विरोधी सेनापतियों—जनरल लुडविग बेक, पीटर योर्क वान वारतेनबर्ग, हंस ओस्टर, श्लाब्रेनडोर्फ, फील्ड मार्शल वान वित्जलेबेन और फ्रीडरिक उलब्रिख्त के साथ संपर्क स्थापित किया। इस तरह षड्यंत्र की रूपरेखा तैयार हुई। इतिहासकारों ने उसे जनरलों का षड्यंत्र कहा, लेकिन वास्तव में ऐसा कुछ नहीं था क्योंकि इन्हें सेना का समर्थन प्राप्त न था—बेक १९३८ में ही सेना से अवकाश ले चुका था और वित्जलेबन भी हिटलर के आदेश पर १९४२ में दूसरी बार सेना छोड़ चुका था। इन जनरलों को यह बात मालूम थी कि किसी प्रतिष्ठित जनरल के समर्थन के बिना जरमन सेना और जनता उन्हें स्वीकार नहीं करेगी। एसे जनरल की तलाश शुरू हुई। षड्यंत्रकारियों ने फील्ड मार्शल रोमेल के साथ संपर्क स्थापित किया और कहा कि हम हिटलर को बंदी बना कर आप को उस के स्थान पर नेता बनाना चाहते हैं। कहते हैं कि रोमेल ने उन्हें अपनी स्वीकृति दे दी

लेकिन उसे यह मालूम न था कि षड्यंत्रकारी हिटलर की हत्या करना चाहते हैं।

मित्रराष्ट्रों की सेनाएँ इंगलिश चैनेल के दोनों ओर भारी संख्या में इकट्ठी हो गयी थीं। उधर रूसी मोर्चे पर जरमन सैनिक बुरी तरह मारे जा रहे थे। ट्रेसकोव स्वयं रूसी-मोर्चे पर तैनात था और उस ने जरमन सैनिकों को बर्फ, तूफान और रूसी तोपों के धधकते गोलों से मरते देखा था। स्टाफेनबर्ग का संकल्प उस के लिए एक नयी आशा ले कर आया। वह शीघ्र अवकाश ले कर बर्लिन गया और अपने सहयोगी षड्यंत्रकारी जनरल उलब्रिख्त से मिला। उस ने तिकड़म लगा कर स्टाफेनबर्ग को होम-आर्मी-स्टाफ का अध्यक्ष नियुक्त करा दिया।

होम आर्मी स्टाफ का अध्यक्ष बनने के बाद स्टाफेनबर्ग ने 'ऑपरेशन वाकेराई' का पुनर्गठन किया और जब हिटलर ने यह योजना देखी तो उस के मुँह से अनायास स्टाफेनबर्ग की प्रशंसा के शब्द निकल पड़े —आखिर मेरी सेना में एक अधिकारी तो ऐसा आया जिस के पास बुद्धि है। संदेह नहीं कि स्टाफेनबर्ग बहुत ही चतुर व्यक्ति था। अब उस के पास सिवा चतुराई के रह ही क्या गया था—कमजोर पाँव, तीन अँगुलियों वाला हाथ और एक आँख! मगर उस की शक्ति के दो मूल स्रोत थे—तीव्र बुद्धिमत्ता तथा हिटलर की हत्या करने का दृढ़ संकल्प। बेचारे हिटलर को क्या मालूम था कि यह प्रशंसा उसे महँगी पड़ेगी! जिस व्यक्ति को वह सराह रहा है वही एक दिन उस की जान लेने पर उतारू हो जायेगा!

कर्नल स्टाफेनबर्ग ने केवल एक महीने के भीतर हत्या के षड्यंत्र की रूपरेखा तैयार कर ली और ऐसा तरुण खोज निकाला जो स्वयं हिटलर की हत्या के लिए तैयार ही नहीं, बेचैन भी था। इस का नाम था—ले. कर्नल एक्सेल वान डेम बुस्खे! एक जमाना था जब जरमन नौजवानों की तरह बुस्खे भी हिटलर को हीरो मानता और उस की पूजा किया करता था। मगर जब पोलैंड और रूस के मोर्चे पर उस ने हिटलर के अमानवीय अत्याचारों को अपनी आँखों से देखा तो उस के मन में घुटन होने लगी, उस का सिर चकराने लगा और एक दिन उस ने स्वयं से कहा—फ्यूहरर आदमी नहीं, शैतान है। वह लकड़बग्घा है, उस के मुँह में आदमी का खून लग गया है। वह जरमनी के लिए कलंक है। उस का शीघ्र अंत किया जाना चाहिए। उस ने निश्चय कर लिया कि हिटलर को मारने के लिए वह जान की बाजी लगा सकता है। जब स्टाफेनबर्ग ने उस से कहा कि तुम चाहो तो हिटलर की हत्या का श्रेय तुम्हें मिल सकता है तब उस के आनंद की सीमा न रही।

रूसी मोर्चे पर लड़ रहे नाजी सैनिकों के लिए नयी वरदी तैयार की गयी थी। हिटलर उस के नमूने का मुआयना करता

चाहता था। मुआयना कराने का काम स्टाफेनबर्ग के जिम्मे था। उस ने बुस्खे को बुला कर पूछा, "बोलो, तैयार हो? यह मौका है, सब से अच्छा मौका। इसे हाथ से न जाने दो।" बुस्खे ने स्वीकृति में सिर हिलाया और तय हो गया कि बुस्खे नयी वरदी को पहन कर हिटलर के सामने जायेगा और अपनी वरदी के नीचे बम छिपा लेगा, जो हिटलर के सामने पहुँचते ही फट जायेगा और उस से हिटलर का अंत हो जायेगा। उसे मालूम था कि विस्फोट से हिटलर की ही नहीं, स्वयं उस का भी अंत होगा। वह इसे 'आत्म-विस्फोट' कहा करता था और उसे इस कल्पना पर बहुत आनंद आता था कि 'मैं बम की तरह फट पड़ूँगा और हिटलर को भी मार डालूँगा!'

स्टाफेनबर्ग इस के द्वारा दो प्रयोजन सिद्ध करने का सपना देख रहा था— हिटलर की हत्या और हत्यारे की हत्या जिस से षड्यंत्र का भेद प्रकट करने वाला कोई भी शेष न रहे। वह मन-ही-मन बहुत खुश हुआ—'यह योजना एकदम अचूक है। अब हिटलर की रक्षा कोई भी नहीं कर सकता।'

नयी वरदी तैयार हो गयी और उसे गोदाम में रख दिया गया। बुस्खे उस के प्रदर्शन की तारीख तय होने की प्रतीक्षा करने लगा, मगर होनहार प्रबल होती है! उसी रात मित्रराष्ट्रों के बमवर्षक विमान ने बर्लिन पर भारी बमबारी की जिस से गोदाम में आग लग गयी और वहाँ रखी वरदियाँ भी नष्ट हो गयीं। स्टाफेनबर्ग और बस्खे को लगा जैसे गोदाम में नहीं उन के अरमानों में आग लग गयी हो! वे बहुत निराश हुए। अब उन के सामने और कोई विकल्प न रहा कि वरदी के दोबारा तैयार होने तक राह देखी जाये। कई कारणों से इस काम में देरी लग रही थी, अतः बुस्खे को वापस मोर्चे पर भेज दिया गया। दिसंबर में वरदी तैयार हो गयी और भस्मासुर बुस्खे उस का प्रदर्शन करने के लिए फिर से बर्लिन जा पहुँचा! उस का इस्पाती संकल्प अब तक तनिक भी ढीला न पड़ा था और न उसे अपनी जान की ही चिंता थी।

हिटलर को न जाने क्या सूझी! उस ने नयी वरदी का प्रदर्शन स्थगित कर दिया और आदेश जारी किया कि प्रदर्शन अब अगले साल जनवरी में होगा। बुस्खे को इस बार भी घोर निराशा हुई। उसे अब दूसरी बार मोर्चे पर लौट जाना पड़ा। वहाँ पहुँचते ही एक लड़ाई में वह बुरी तरह घायल हो गया और उस की एक टाँग जाती रही। इस दुर्घटना ने बुस्खे को पूरी तरह निराश कर दिया। वह समझ गया कि अब उसे वरदी के प्रदर्शन के लिए नहीं बुलाया जायेगा अतः संकल्प पूरा करने का अवसर कभी नहीं पा सकेगा। उस का संशय ठीक ही था। टाँग कट जाने के कारण उसे वरदी के प्रदर्शन के लिए नहीं चुना जा सकता था। इस दुर्घटना से स्टाफेनबर्ग

को भी कम आघात न पहुँचा, लेकिन उस ने हिम्मत न तोड़ी। इस काम के लिए जल्द ही एक दूसरा जवान ले. ईवाल्ड हेनरिस वान क्लीस्ट खोज निकाला। क्लीस्ट भी निराश नाजी था। वह हिटलर को मारने के लिए स्वयं मरने को तैयार था।

बहुत सोच-विचार के बाद हिटलर ने वरदी के प्रदर्शन के लिए ११ फरवरी, १९४४ का दिन चुना और तय किया कि उस मौके पर हेनरिख हिमलर भी हिटलर के साथ उपस्थित रहेगा। क्लीस्ट बहुत खुश था। सब से बड़ी खुशी उसे इस बात की थी कि उसे अब दोनों शैतानों—हिटलर और हिमलर—को एकसाथ मारने का गौरव मिलेगा। मगर हिटलर की तकदीर उस का साथ दे रही थी। न जाने क्या सूझा कि उस ने प्रदर्शन फिर रद्द कर दिया और कहा कि अब प्रदर्शन की कोई आवश्यकता नहीं है। क्लीस्ट बहुत निराश हुआ और उस से भी अधिक स्टाफेनबर्ग। ज्यों-ज्यों दिन बीतते गये, स्टाफेनबर्ग को लगा कि यह काम अब स्वयं उसे ही करना होगा!

स्टाफेनबर्ग ने एक बार ट्रेसकोव से कहा था कि मैं ने ईश्वर को साक्षी बना कर यह निश्चय किया है कि मैं यह काम जरूर करूँगा। यह (हिटलर) तो शैतान का अवतार है, मैं इसे मिटा कर ही रहूँगा।

कई महीने तक वह इस संकल्प की पूर्ति के लिए अवसर की तलाश में रहा। जून में उस के सामने ऐसा अवसर फिर आया और उस की पूर्ति के आसार नजर आने लगे।

हिटलर ने वाक्स-ग्रिनेडियर दस्तों के संगठन का आदेश दिया। होम-आर्मी-स्टाफ का अध्यक्ष होने के नाते दस्तों के संगठन का भार स्टाफेनबर्ग के कंधों पर आया। शीघ्र ही स्टाफेनबर्ग को हुक्म दिया गया कि वह रास्टेनबर्ग के वुल्फ्स लेयर (भेड़िये की माँद) में जा कर इस बारे में पूरी योजना हिटलर के सामने पेश करे। यह आदेश पा कर स्टाफेनबर्ग की बाछें खिल गयीं। उस ने तय कर लिया कि हिटलर की योजना पूरी हो या न हो, वह अपनी योजना इस बार अवश्य पूरी कर लेगा—उस ने एक अचूक योजना का निर्माण कर लिया है।

२० जुलाई को तड़के कर्नल काउंट क्लास वान स्टाफेनबर्ग हिटलर से मिलने की तैयारी में जुट गया। उस ने ब्रिटेन में बना हैक्साइट का करीब एक सेर का बम साथ लिया और उस में तीन फ्यूज तैयार किये। इन में से एक दस मिनट बाद, दूसरा आधे घंटे बाद और तीसरा दो घंटे बाद विस्फोट कर सकता था। स्टाफेनबर्ग ने बम को चमड़े के थैले में रख लिया।

स्टाफेनबर्ग जानता था कि हिटलर ने रक्षा के लिए कड़ी व्यवस्था कर रखी है। उसे मालूम था कि वह अपने सिर पर दो सेर वजन का कवच-बद्ध टोप हर समय पहने रहता है और उस की बास्कट भी

कवचनुमा है। खाने-पीने के मामले में हिटलर बहुत सतर्क रहता है। उस का निजी रसोइया ही उस के लिए भोजन तैयार कर सकता है, लेकिन हिटलर को उस पर भी भरोसा नहीं है। भोजन तैयार होने पर उस की डाक्टरी जाँच की जाती है और पहले उस में से थोड़ा-थोड़ा कुत्तों को खिलाया जाता है ताकि उस में जहर हो तो पता चल सके। हिटलर जहाँ सोता है उस के चारों ओर 'रीइंफोर्स्ड-कांक्रीट' का कवच-बद्ध बंकर है। बंकर की प्रत्येक दीवार अठारह फुट मोटी है। उस की उपस्थिति में केवल उस के विश्वस्त सैनिक ही शस्त्र ले कर चल सकते हैं। वह आम तौर पर सम्मेलनों को रद्द कर देता है और बिलकुल अंतिम घड़ी में अपने पहरेदारों तथा सुरक्षा-व्यवस्था को बदल देता है। हर घड़ी उसे भय लगा रहता है कि कहीं कोई उस की हत्या न कर दे!

मगर स्टाफेनबर्ग इस सारी सुरक्षा-व्यवस्था को वेध कर हिटलर को मारने की तैयारी कर चुका था। उस ने अपनी पत्नी काउंटेस नीना और चारों छोटे-छोटे बच्चों को देहात भेज दिया। इस के बाद वह स्वयं विमान ले कर रैंगसडोर्फ के लिए उड़ गया। वहाँ जनरल वैगनर था। प्रातः ठीक सात बजे वह विमान में घुसा और आराम से बैठ कर उस ने अपनी योजना पर मन-ही-मन विचार किया। वह सोचता चला गया—तीन चार घंटे में रास्टेनबर्ग पहुँच जाऊँगा और उस के थोड़ी देर बाद यह जान कर दुनिया अचरज में डूब जायेगी कि हिटलर मारा गया!

स्टाफेनबर्ग कोई गैर-जिम्मेदार षड्-यंत्रकारी न था। उसे अपने देश की चिंता थी और वह एक कुशल योजनाकार था। उसे भरोसा था कि वह हिटलर को अवश्य मार डालेगा। हिटलर की मृत्यु के बाद जरमनी के शासन की सारी रूपरेखा उस ने स्वयं तैयार की थी और सारी व्यवस्था पूरी करके ही वह वुल्फसलेयर की ओर गया था। हिटलर की हत्या के बाद बाहरी दुनिया के साथ जरमनी के संचार-संपर्क के माध्यम काटने का काम जनरल फैल्जीबेल को सौंपा गया था। उसे इस बात के लिए तैयार कर लिया गया था कि वह हिटलर की मृत्यु का समाचार समय से पहले जरमनी में भी नहीं फैलने देगा। फैल्जीबेल का सर्वप्रमुख कार्य यह था कि हिटलर के सब से अधिक बुद्धिमान, खतरनाक और तिकड़मी मित्र गोयबिल्स को उस की मृत्यु का समाचार न मिलने पाये।

उधर बर्लिन के सहयोगियों को हिदायत कर दी गयी थी कि वे यथाशीघ्र कार्रवाई शुरू कर दें और रिटायर्ड कर्नल-जनरल लुडविग बैक के नेतृत्व में क्रांतिकारी सरकार की घोषणा कर दें। वास्तव में राष्ट्रपति तो रोमेल को बनाया जाना था, लेकिन रोमेल तीन दिन पहले सत्रह जुलाई को ही बुरी तरह घायल हो चुका था। अतः राष्ट्रपति का कार्यभार रोमेल

के स्वस्थ होने तक बैंक को सँभालना था। यह तय कर लिया गया था कि नाजियों का पुराना शत्रु और लीपजिग का भूतपूर्व मेयर कार्ल फ्रेडरिक गोएरडेलर चांसलर-पद सँभाल लेगा।

यह व्यवस्था कर ली गयी थी कि हिटलर की मृत्यु का संदेश मिलते ही फील्डमार्शल एरविन वान वित्जलेबेन के प्रधान सेनापतित्व में आपरेशन वाकीराई के दस्ते चारों ओर फैल जायेंगे और सेना की विस्तृत सिगनल-व्यवस्था पर कब्जा कर लेंगे। इस के बाद जरमनी के दूसरे भागों और यूरोप के अधिकृत देशों में वियना, पेरिस, ओसलो और प्राहा नगरों में षड्यंत्रकारियों को हिदायतें दे कर नाजियों की धर-पकड़ शुरू कर दी जायेगी। गुप्तचरों और हिटलर के प्रिय गेस्टापो-सैनिकों को पकड़ कर जल में डाल दिया जायेगा और क्रांति का संचालन बैंडलेरस्ट्रास में होम-आर्मी के प्रधान कार्यालय से किया जायेगा। यदि अवसरवादी नाजीपंथी जनरल फ्रीडरिक फ्रॉम ने सहयोग देने से मना किया तो उसे गिरफ्तार कर लिया जायेगा और उस की कमान कर्नल जनरल होएपनर को दी जायेगी। होएपनर टैंक-दस्तों का बहुत कुशल कमांडर था और उसे हिटलर ने आज्ञा न मानने के अपराध में पद से हटा दिया था।

स्टाफेनबर्ग को अपने बम पर इतना विश्वास था कि उस ने वित्जलेबेन के हस्ताक्षर करा कर विद्रोह के आज्ञापत्र बैंडलेरस्ट्रास (बर्लिन का प्रधान सैनिक कार्यालय) की तिजोरियों में बड़े करीने के साथ रखवा दिये थे और यह व्यवस्था कर दी थी कि बम फटते ही वे आज्ञापत्र जारी कर दिये जायेंगे। कुछ प्रमुख विश्वसनीय कमांडरों को पहले से ही ये आदेश भेज दिये गये थे।

स्टाफेनबर्ग का विमान ठीक दस बजे हवाई पटरी पर उतरा। उस ने विमान-चालक को आदेश दिया कि वह बारह बजे बाद किसी भी समय उड़ान के लिए तैयार रहे। इतना कह कर वह प्रतीक्षा में खड़ी कार की ओर लपका और पीछे की सीट पर बैठ गया। कार उसे ले कर वुल्फसलेयर की ओर चल दी। लगभग आधे घंटे के भीतर स्टाफेनबर्ग वुल्फसलेयर के भीतर दाखिल हो गया। उस की कार तीन चौकियों से गुजरी और भीतरी वृत्त-स्पेरक्रीस-१ में जा पहुँची। कार को आगे ऐसे क्षेत्रों से गुजरना पड़ा जहाँ चारों ओर सुरंगें बिछी थीं, पिलबाक्स बने हुए थे और काँटेदार तार बिछे थे जिन में बिजली की धारा प्रवाहित थी। स्टाफेनबर्ग की यात्रा के बारे में प्रत्येक चौकी पर फोन से आगे खबर कर दी जाती और उस की कार को गुजरने दिया जाता।

अब वह अधिकारी सुरक्षा-चौकी पर जा पहुँचा और कैंप-कमांडर के सामने पेश होने के बाद नाश्ता करने के लिए

टी-हाउस चला गया। वहाँ से निबट कर स्टाफेनबर्ग जनरल फैल्जीवेल से मिलने गया और उस ने जनरल से कहा कि बम फटते ही रास्टेनबर्ग के साथ शेष जगत के संपर्क-सूत्र समाप्त कर देने हैं। जनरल फैल्जीवेल ने उसे विश्वास दिलाते हुए कहा, "यह काम हो जायेगा, लेकिन मुझे यह भरोसा नहीं है कि मैं संदेशों को एक-दो घंटे से अधिक समय तक रोके रह सकूँगा; क्योंकि यहाँ की संचार-व्यवस्था बहुत जटिल है। मैं उस सब को नष्ट नहीं कर पाऊँगा।"

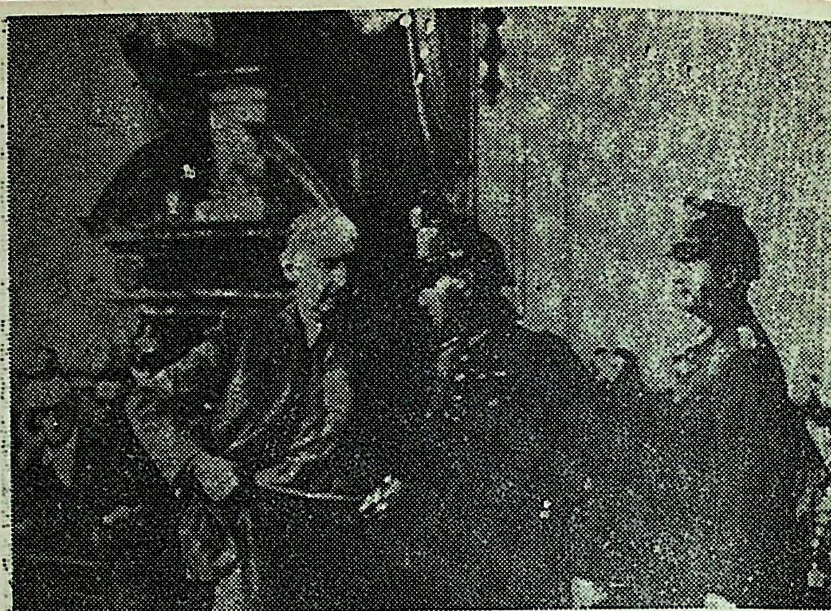
जनरल फैल्जीवेल से यह आश्वासन ले कर स्टाफेनबर्ग नाजी जनरल बुहले से मिला और अंत में हिटलर के संपर्क-सचिव फील्ड मार्शल कीटेल के कार्यालय में जा पहुँचा। कीटेल उसे देखते ही भुनभनाया, "तुम देर से पहुँचे हो इसलिए अपनी बात संक्षेप में ही कहो। तुम्हें मालूम है अब साढ़े बारह बज रहे हैं और तीन बजे इटली का अधिनायक मसोलिनी आने वाला है। तुम्हारी मलाकात के लिए बहुत थोड़ा समय बचा है। समझे? आओ, चलो!"

स्टाफेनबर्ग ने कीटेल के सामने सिर झुका कर उस की बात समझने का संकेत दिया और उस के पीछे-पीछे लकड़ी के लट्ठों से बनी बैरक की ओर चल दिया।

स्टाफेनबर्ग ने पहले से ही अपनी टोपी और पेटी कीटेल के कार्यालय के पिछवाड़े वाले कमरे में छोड़ दी थी। दो-चार कदम कीटेल के पीछे चलने पर वह सहसा रुका और बोला, "मुझे खेद है मैं अपनी पेटी और टोपी कमरे में ही छोड़ आया हूँ। आप धीरे-धीरे चलिये, मैं उन्हें ले कर अभी आता हूँ।" इस बहाने वह कमरे में लौटा। यहाँ उस ने थैला खोल कर बम के दस मिनट वाले फ्यूज की गरदन में चिमटी से छेद किया और जल्दी-जल्दी थैला बंद कर लिया। उधर कीटेल चिल्ला रहा था—जल्दी करो...

स्टाफेनबर्ग दौड़ कर कीटेल तथा बुहले के पास पहुँचा। कीटेल ने लँगड़ा कर चलते हुए स्टाफेनबर्ग से कहा, "लाओ, यह थैला मुझे दे दो," लेकिन उस ने बात हँस कर टाल दी। बुहले ने भी उस का थैला सँभालने का प्रस्ताव रखा, इसे भी स्टाफेनबर्ग ने मुसकरा कर अस्वीकार कर दिया। भला स्टाफेनबर्ग थैला किसी को कैसे दे सकता था? इस में ही उस का संकल्प कैद था, जो अब सिद्धि के समीप पहुँच चुका था।

अंगरक्षकों को पार करके ये तीनों व्यक्ति हिटलर के सुरक्षित-क्षेत्र में दाखिल हो कर हिटलर के सामने पहुँच गये। इस में केवल तीन मिनट का समय लगा अर्थात बम का फ्यूज चालू हुए तीन मिनट हो चुके थे। स्टाफेनबर्ग जानता था कि उस का बम निश्चित समय पर ही फटेगा अतः वह निश्चित था। उसे यों भी अब कोई चिंता न रही थी क्योंकि बम को



अदालत में रक्षकों ने तलाशी के लिए मार्शल वित्जलेबेन की पतलून के गेलिस उतार लिये

साथ ले कर वह हिटलर के सामने पहुँच चुका था। अब तो केवल विस्फोट की प्रतीक्षा थी।

हिटलर सम्मेलन-कक्ष के मध्य खड़ी मेज के सहारे अपने निश्चित स्थान पर बैठा था। मेज अठारह फुट लंबी, पाँच फुट चौड़ी थी। बरगद के मोटे-मोटे शहतीरों को जोड़ कर उसे बनाया गया था। उस के दोनों सिरे बरगद के चार-चार फुट चौड़े शहतीरों पर रखे थे। मेज पर नक्शा फैला था और हिटलर की पीठ दरवाजे की तरफ थी।

हिटलर भी बड़ा चमत्कारी आदमी था। पास की चीजें देखने में उसे कठिनाई होती थी, मगर वह था तानाशाह! उस के लिए यह लज्जा की बात होती कि वह आँखों पर चश्मा लगाये। अतः पढ़ते समय हमेशा आवर्द्धक लेंस (मैग्नीफाइंग ग्लास) इस्तेमाल करता था और आस-पास के लोगों से कहा करता था कि बारीक अक्षरों के लिए लेंस का इस्तेमाल जरूरी होता है। स्टाफेनबर्ग जब हॉल में घुसा तो उस ने देखा कि सैनिक हाई कमान का उपाध्यक्ष और युद्ध का प्रधान सेनापति ले. जनरल ह्यूसिंगर हिटलर को रूसी मोर्चे की स्थिति समझा रहा है।

कीटेल ने ह्यूसिंगर को बीच में टोक कर हिटलर को यह बताना चाहा कि स्टाफेनबर्ग किस सिलसिले में रिपोर्ट देने के लिए सेवा में हाजिर हुआ है।

हिटलर ने अपने तानाशाही-अंदाज में सिर हिलाया और कहा कि पहले हम जनरल ह्यूसिंगर की रिपोर्ट सुनना चाहते हैं। यह आदेश सुन कर कीटेल पीछे हट गया और हिटलर के बायीं ओर अपने नियत स्थान पर जा खड़ा हुआ। पूरे हॉल में केवल दो व्यक्ति कुरसियों पर बैठे थे—हिटलर और उस का स्टेनोग्राफर। शेष सब खड़े थे। कुछ लोगों ने मेज का सहारा ले रखा था और कुछ उस से दूर थे। हिटलर के दाहिनी तरफ जनरल ह्यूसिंगर था और उस के बाद क्रमशः जनरल कोरटेन और जनरल ब्रांट खड़े थे। स्टाफेनबर्ग इन दोनों के बीच में जा कर खड़ा हो गया और उस ने अपना थैला मेज के नीचे इस तरह रखा कि वह मेज़ के पाये और हिटलर के बीच में आ गया। स्टाफेनबर्ग ने थैला जानबूझ कर इस तरह रखा था जिस से बम फटते ही हिटलर उस की सीधी चपेट में आ कर तत्काल मर जाये। इस में अब शक ही क्या रह गया था! स्टाफेनबर्ग की प्रतिज्ञा पूरी होने की घड़ी बहुत करीब आ गयी थी।

बारह बज कर सैंतीस मिनट हो गये थे। बम का फ्यूज चालू हुए पाँच मिनट बीत चुके थे। अब सिर्फ पाँच मिनट की देरी थी। स्टाफेनबर्ग ने दस मिनट वाला फ्यूज लगा रखा था। अब एक मिनट और बीत गया। कीटेल ने देखा कि स्टाफेनबर्ग वहाँ नहीं है। यह देखते ही उसे बड़ी परेशानी हुई और वह उस की तलाश में हॉल से बाहर चला गया। वहाँ उस ने स्थानीय टेलीफोन-एक्सचेंज के साजेंट मेजर से पूछा कि तुम ने उस एक आँख वाले कर्नल को तो नहीं देखा जो अभी-अभी मेरे साथ भीतर गया था? साजेंट मेजर ने बताया कि वह बाहर की ओर गया है। कीटेल बड़ा परेशान था। उसे डर था कि अगर हिटलर ने स्टाफेनबर्ग को बलाया तो मैं क्या जवाब दूंगा! स्टाफेनबर्ग की अनुशासनहीनता का कारण खोजने के बजाय उस ने हॉल में लौटना आवश्यक समझा। अब बारह बज कर बयालीस मिनट हो चुके थे।

समय पूरा हो चुका था। कीटेल ने हॉल में घुसने के लिए ज्यों ही दरवाजा खोला, उसे हाल के भीतर तेज रोशनी दिखायी दी। एक भयंकर विस्फोट सुनायी पड़ा और लाश-जैसी कोई चीज दरवाजे के पास वाली दीवार से टकरायी! अंदर सब कुछ जल रहा था। कीटेल के मन में पल भर के लिए हिटलर का ध्यान आया लेकिन वह वहाँ रुका नहीं, दरवाजा बंद कर उलटे पाँव लौट पड़ा।

स्टाफेनबर्ग जनरल फैल्जीबेल के दफ्तर के सामने खड़ा उस से बातें कर रहा था। धमाका सुनते ही उस ने जनरल से कहा कि विस्फोट चालू हो गया है और वह तेजी से अपनी कार की ओर लपका। इस समय उस के दिमाग में केवल एक ही चिंता थी कि किसी तरह जल्द-से-जल्द बर्लिन पहुँच जाऊँ जिस से वहाँ क्रांति

का मार्गदर्शन कर सकूँ। यों तो नयी सरकार बैंक को बनानी थी लेकिन षड्यंत्र के पीछे सारा चिंतन स्टाफेनबर्ग का ही था।

स्टाफेनबर्ग कार में बैठ कर रवाना तो हो गया मगर अधिकारी-सुरक्षा-चौकी संतरी नें उसे रोक लिया। स्टाफेनबर्ग फुरती से कार में से उतरा और गार्ड-रूम में चौकी के प्रमुख अधिकारी के पास गया। उस ने अधिकारी से कहा कि मुझे फोन इस्तेमाल करने की इजाजत दी जाये। अधिकारी ने अनुमति दे दी। स्टाफेनबर्ग ने फोन पर किसी से बातचीत की और अधिकारी से कहा कि मुझे जाने की इजाजत मिल गयी है। अधिकारी ने सिर झुका कर संतरी को नाका खोलने का आदेश दिया और स्टाफेनबर्ग की कार आगे बढ़ी।

इस बीच वुल्फ्सलेयर के आदेश जारी हो चुके थे कि किसी को भी बाहर मत जाने दो। जब स्टाफेनबर्ग की कार अंतिम चौकी पर पहुँची तो वहाँ के वारंट-अधिकारी ने उसे रोक लिया। इस बार भी स्टाफेनबर्ग कार से उतरा और उस ने कप्तान वान मोएलेनडार्फ से फोन पर कहा, "मैं कर्नल स्टाफेनबर्ग बोल रहा हूँ। पूर्वी द्वार पर हूँ। कप्तान, आप को याद होगा, आज प्रातः हम लोगों ने साथ-साथ चाय पी थी ! मैं इस समय जल्दी में हूँ। जनरल फ्रॉम हवाईअड्डे पर मेरी राह देखता होगा, लेकिन आप के संतरी मुझे जाने नहीं देते !" क्षण भर दोनों ओर मौन रहा। उस के बाद स्टाफनबर्ग ने फोन रख दिया और वारंट-अधिकारी से कहा कि मुझे नाका पार करने की अनुमति मिल गयी है। वारंट-अधिकारी को सहसा विश्वास न हुआ। उस ने कप्तान मीएलेन-डार्फ से फोन पर पुष्टि करने के बाद ही नाका खोला।

अब तो स्टाफेनबर्ग का रास्ता साफ था। उस की कार तेजी से हवाई-पट्टी की ओर दौड़ी। वहाँ उस का विमान खड़ा था और उस का सहायक ले. वर्नर वान हैफ्टेन प्रतीक्षा कर रहा था। झटपट विमान की पिछली सीट पर बैठ कर स्टाफेनबर्ग हैफ्टेन-सहित बर्लिन के लिए रवाना हो गया। उसे यह सोच कर बहुत संतोष हुआ कि जनरल फैल्जीवेल ने हिटलर की मृत्यु का समाचार बाहर नहीं जाने दिया। उस ने योजना के अनुसार रास्टेनबर्ग और बाहरी दुनिया के बीच संचार के सारे साधनों को निष्क्रिय कर दिया और पूरे ढाई घंटे तक किसी प्रकार का कोई समाचार बाहर नहीं जा सका। वह जानता था कि विस्फोट हुआ है। उसे यह भी मालूम था कि हिटलर पर क्या बीती है, लेकिन उस ने सोचा कि विद्रोह तो शुरू हो ही गया है अतः उसे योजना के अनुसार अपना कार्य करना चाहिए।

बेंडलेरस्ट्राल में जनरल उलब्रिख्त और जनरल होस्पनर यह निश्चय

ही न कर पा रहे थे कि क्या किया जाये ! आर्मी हाईकमान के प्रमुख सिगनल-अधिकारी जनरल थीले ने उन्हें बताया था कि निश्चयपूर्वक यह नहीं कहा जा सकता कि हिटलर मर गया है । उस ने कहा कि मैं ने जनरल फैल्जीवेल के साथ बात की थी लेकिन मुझे साफ सुनायी नहीं दिया कि वह क्या कह रहा था । आखिर में तय हुआ कि जनरल थीले एक बार फिर जनरल फैल्जीवेल से संपर्क स्थापित करें और सही स्थिति का पता लगायें । पर यह संभव न हो सका, क्योंकि सारे संचार-साधन भंग हो चुके थे ।

डेढ़ बजे से चार बजे तक का बहुमूल्य समय नष्ट कर दिया गया, जिस के परिणामस्वरूप सारी योजना विफल होने लगी । जनरल वैक तो चार बजे तक बैंडलेरस्ट्रास पहुँचा ही नहीं और फील्ड मार्शल वित्जलेवेन उस के भी बाद आया। दोनों टालमटोल करते रहे । स्टाफेनवर्ग एक बज कर पैंतालीस मिनट पर बर्लिन पहुँच गया । उसे आशा थी कि अब तक सारा काम चालू हो चुका होगा लेकिन वहाँ तो कुछ भी नहीं हुआ था ! फिर भी स्टाफेनवर्ग निराश न हुआ, न उसे साथियों पर ही गुस्सा आया। उस ने तुरंत विद्रोह की घोषणा कर दी । उलब्रिख्त ने उसे बताया कि हिटलर की मृत्यु में शंका है । यह सुन कर स्टाफेनवर्ग फोन पर ही चीख उठा—'असंभव' और तेजी से बैंडलेरस्ट्रास जा पहुँचा । वहाँ उस ने साथियों को लॉगे-बैरक की सारी घटना का विवरण सुनाया ।

इस बीच बैंडलेरंस्ट्रास और वुल्फ्सेलेयर के बीच संचार-व्यवस्था चालू हो चकी थी । होम-आर्मी का प्रधान सेनापति जनरल फ्रॉम भी वुलफ्सलेयर में कीटेल के साथ बातें कर चुका था । कीटेल ने उसे बताया था कि हिटलर मरा नहीं, सिर्फ थोड़ा-सा घायल हुआ है । जनरल उलब्रिख्त ने जब यह बात स्टाफेनवर्ग को बतायी तो वह उछल पड़ा । बोला, "कीटेल झूठ बोल रहा है । विद्रोह को कुचलने के लिए वह समय चाह रहा है !" अब सब को विश्वास हो गया कि हिटलर की मृत्यु हो चकी है !

ऑपरेशन - वाकेराई की कार्रवाई के लिए आदेश जारी कर दिये गये। कर्नल स्टाफेनवर्ग जनरल उलब्रिख्त को साथ ले कर जनरल फ्रॉम के पास गया। वे चाहते थे कि जनरल फ्रॉम के आदेश से ही होम-आर्मी को गेस्टापो और नाजियों की गिरफ्तारी का काम सौंपा जाये जिस से किसी प्रकार की ढीलढाल न हो। उलब्रिख्त को देखते ही जनरल फ्रॉम कुरसी से उठा। उलब्रिख्त ने बैठते हुए कहा कि स्टाफेनवर्ग ने इस समाचार की पुष्टि की है कि हिटलर मर चुका है। यह सुनते ही फ्रॉम के चेहरे पर क्रोध के भाव उमड़ आये और उस ने स्टाफेनवर्ग की ओर मुँह करके बड़े जोर से कहा, "असंभव, एकदम असंभव! कीटेल ने मुझे अभी

बताया है कि हिटलर जिंदा है!"

स्टाफेनबर्ग ने मौक़े को हाथ से जाने देना मनासिब न समझा। वह चटपट बोला, "कीटेल झूठ कहता है। मैं ने अपनी आँखों से हिटलर की लाश देखी है!" यह सुनते ही फ्रॉम घबरा गया। उलब्रिख्त ने उसे बताया कि होम-आर्मी के सेनापतियों को विद्रोह का संदेश दिया जा चुका है। फ्रॉम होश में आ गया और मेज पर घूँसा मारते हुए कहा, "तुम सब ने अनुशासन भंग किया है। मैं तुम्हारी गिरफ्तारी का आदेश देता हूँ।"

स्टाफेनबर्ग ने देखा कि जनरल फ्रॉम रोब से काम ले कर सारा खेल बिगाड़ना चाहता है। वह कुरसी से उठ खड़ा हुआ और जनरल फ्रॉम की ओर घूरता हुआ बोला, "हेर जेनेरेलोबेर्स्ट, फ्यूहरर के सम्मेलन-कक्ष में वह बम मैं ने रखा था! उस ने हिटलर पर सीधी चोट की होगी। लॉगे-बैरक के उस कमरे में कोई भी जिंदा नहीं बच सकता था।"

फ्रॉम ने घृणा-भाव से स्टाफेनबर्ग की ओर देखा और बोला, "सुनो कर्नल, तुम ने अपने अधिकारी के सामने अपराध स्वीकार कर लिया है। तुम्हारा षड्यंत्र विफल हो चुका है। अब फौरन अपने माथे पर गोली मार कर आत्महत्या कर लो।" स्टाफेनबर्ग ने दृढ़ता से उत्तर दिया, "मैं ऐसा नहीं करूँगा!"

फ्रॉम का गला सूख गया था। उस ने मुश्किल से इतना कहा, "तुम सब बागी हो, मैं तुम्हें बंदी बनाये जाने का आदेश देता हूँ।" यह सुन कर उलब्रिख्त तपाक से बोला, "आप समझ नहीं पा रहे हैं हेर जेनेरेलोबेर्स्ट! शक्ति हमारे हाथों में है और हम आप को गिरफ्तार कर रहे हैं।" इतना सुनना था कि फ्रॉम अपनी पिस्तौल उठाने के लिए लपका। यह देख कर उलब्रिख्त और उस के सहायक कर्नल क्वर्नहाइम ने फ्रॉम को दबोच लिया। जनरल फ्रॉम को उस के पद से हटा दिया गया और उस की कुरसी पर योजना के अनसार होएपनर आ बैठा। जरमनी ही नहीं, यूरोप के उन सब देशों में जिन्हें जरमनी ने पराजित कर लिया था, गेस्टापो और गुप्तचर-सेना के अधिकारियों तथा सैनिकों को गिरफ्तार किया जाने लगा। हिटलर जिंदा हो या मर गया हो, विद्रोह चालू हो चुका था—विद्रोह!

होम-आर्मी पर नियंत्रण करने के बाद स्टाफेनबर्ग का ध्यान रेडियो-स्टेशन तथा गोयबिल्स की ओर गया। स्टाफेनबर्ग को विद्रोह में सब से अधिक वफादारी की आशा गार्ड्स बटालियन से थी, इसलिए उस ने इसी बटालियन के मेजर ओटो रेमर को जोसेफ गोयबिल्स की गिरफ्तारी का काम सौंपा। गोयबिल्स हिटलर का प्रचार-मंत्री था। मेजर रेमर उस के दफ्तर पहुँच कर उस से बोला, "हेर मिनिस्टर, मैं तुम्हें गिरफ्तार करने आया हूँ!" गोयबिल्स ने प्रशांत भाव से

पूछा, "क्यों? किस के आदेश से?" इस पर रेमर ने उत्तर दिया कि अपने वरिष्ठ सैनिक अधिकारियों के आदेश से, इसलिए कि हेर हिटलर की हत्या कर दी गयी है।

गोयबिल्स ने मेजर रेमर को बताया कि उसे गलत सूचना दी गयी है। हिटलर जीवित है। पर रेमर अपने आवेश को रोक न सका। वह उत्तेजित हो कर बोला, "गोयबिल्स, तू दुनिया का सब से झूठा आदमी है। मैं तेरा विश्वास करूँ? तेरा? और फिर दुनिया में विश्वास करना ही हो तो तेरा! झूठे!" गोयबिल्स को स्थिति की गंभीरता का भान हो गया। रेमर की वरदी पर एक सैनिक तमगा देख कर बोला, "यह तमगा तो तुम्हें स्वयं हिटलर ने ही प्रदान किया होगा न! तुम हिटलर की आवाज पहचानते हो?" रेमर भौचक्का रह गया। अब भी उसे गोयबिल्स पर यकीन न आया। अतः बोला, "यदि यह झूठ निकला तो मैं तुझे गोली मार दूंगा!"

गोयबिल्स सब कुछ शांति से सुनता रहा। उस ने फोन का चोंगा उठा कर हिटलर का नंबर माँगा। दो-तीन सेकंड के भीतर हिटलर बोलने लगा और गोयबिल्स ने उस से कहा कि जरा मेजर रेमर से बात कीजिये। मेजर रेमर ने जैसे ही फोन कान से लगाया कि हिटलर की आवाज आयी, "हेर मेजर!" रेमर की तो आँखें फटी-की-फटी रह गयीं। वह झट-से तन कर खड़ा हुआ और सलाम बजाने की मुद्रा में आ गया। उस के मुँह से सिर्फ इतना निकला, "मीन फ्यूहरर!" (मेरे स्वामी) रेमर को उत्तर मिला, "मेजर रेमर, मैं तुम्हें बर्लिन में विद्रोह के दमन का काम सौंपता हूँ। हेर गोयबिल्स, हेर हिमलर और जनरल राइनेक के सिवा और किसी का हुक्म मानने की जरूरत नहीं। मैं तुम्हें इसी समय कर्नल की पदवी प्रदान करता हूँ।"

मेजर रेमर अब कर्नल हो गया था। सत्ताइस वर्ष की अवस्था में कर्नल! इस से बढ़ कर और क्या उपलब्धि हो सकती है! उस ने गोयबिल्स से अपने आचरण के लिए क्षमा माँगी। वहाँ से निकल कर अपने सैनिक दस्तों की व्यूह-रचना की और उन्हें षड्यंत्रकारियों के पीछे लगा दिया। शाम के छह बजे थे। ज्वार अब उतरने लगा था।

सायं सात बज कर तीस मिनट पर फील्ड-मार्शल वित्जलेबेन बर्लिन पहुँचा। वह सीधा बेंडेलरस्ट्रास गया और उसे विद्रोह की विफलता के आसार साफ-साफ नजर आने लगे। यह जान कर उसे आश्चर्य हुआ कि स्टाफेनबर्ग ने रेडियो को अपने अधिकार में लेने की कोशिश नहीं की। ऐसा क्यों हुआ होगा? यह प्रश्न उसे देर तक परेशान करता रहा।

उधर स्टाफेनबर्ग फोन थामे बैठा था। हर क्षण वह कोई नया नंबर मिलाता और विद्रोह के आदेश जारी करता।

भारत में पहली बार !
नयी दीवारों के लिए नया पेण्ट—
डेकोप्लास्ट

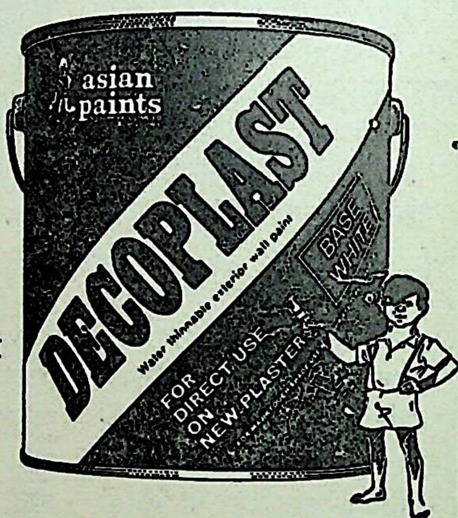
नये पलस्तर पर भी बिना प्राइमर के लगाया जा सकता है।

बरसात और धूप में बरसों क़ायम रहता है।

सीमेंट पेण्ट की तुलना में:

- ☐ ४०% कम मज़दूरी।
- ☐ रंगाई की ७ विधियों के बदले २ ही काफ़ी हैं।
- ☐ ५ गुनी ज़्यादा सतह की रंगाई।

डेकोप्लास्ट बेस व्हाइट में मैजिकटच मिलाकर ४० मनपसंन्द छटाएँ तुरंत ही तैयार की जा सकती हैं। इनके अलावा ५ पक्के गहरे रंग तैयार ही मिलते हैं।



जीवन में रंग भरना हो, तो एशियन पेण्ट्स

जब दूसरी ओर से शंका प्रकट की जाती तो वह उस का मजाक बनाता। यद्यपि अब उसे लग रहा था कि हो सकता है हिटलर बच गया हो, लेकिन इस से क्या होता है? स्टाफेनबर्ग को पूरा भरोसा था कि वह हिटलर से सत्ता छीन लेगा। मगर वहाँ सब समाप्त हो चुका था। स्टाफेनबर्ग को दूसरी ओर की कहानी मालूम न थी।

वह मान बैठा था कि उस का बम अचूक है और उस की मार से हिटलर किसी भी हालत में नहीं बच सकता, मगर विधाता को यह मंजूर न था! हुआ यह कि स्टाफेनबर्ग तो अपना थैला मेज के पाये और हिटलर के बीच में रख कर बाहर खिसक गया, मगर कोई दो मिनट बाद ही कर्नल ब्रांट रूसी मोर्चे के नक्शे अच्छी तरह समझाने के विचार से मेज की ओर आगे बढ़ा। ब्रांट का पाँव स्टाफेनबर्ग के थैले से टकरा गया। उसे उठा कर ब्रांट ने पाये की ओट में रख दिया। अब थैले और हिटलर के बीच में बरगद का चार फट मोटा शहतीर आ गया था। बस यही एक ऐसी घटना थी जिस ने षड्यंत्रकारियों की योजना विफल कर दी।

चार फुट मोटे शहतीर ने हिटलर की जान बचा ली, मगर हॉल में चारों ओर मांस भुनने की गंध भर गयी थी। कर्नल ब्रांट, जनरल श्मिट, जनरल कोरटेन और स्टेनोग्राफर बर्गर तत्क्षण मर गये और लगभग दो दर्जन अधिकारी बुरी तरह घायल हुए। वे आर्तस्वर में कराह रहे थे। हॉल के फर्श में बहुत बड़ा छेद हो गया और नक्शे वाली मेज पूरी तरह नष्ट हो गयी थी। छत घहरा कर लटक आयी और उस में से एक भारी शहतीर हिटलर की कमर पर आ कर गिरा जिस से उसे गंभीर चोट आयी।

हिटलर मरा तो नहीं, अधमरा जरूर हो गया था। उस का दाहिना कान धमाके से हमेशा के लिए बहरा हो गया। दोनों पाँवों के बाल पूरी तरह जल गये और दाहिने हाथ को लकवा मार गया जो कुछ समय बाद ठीक हो गया। इतना ही नहीं विस्फोट ने हिटलर को उड़ा दिया और वह दरवाजे के पास वाली दीवार से जा टकराया। जिस समय कीटेल ने (स्टाफेनबर्ग की तलाश में विफल रहने के बाद) हॉल का दरवाजा खोला था, उस ने लाश-जैसी चीज दीवार से टकराती देखी—वह हिटलर ही था।

कीटल ने स्टाफेनबर्ग को बताया था कि उसी दिन तीन बजे मुसोलिनी वहाँ आने वाला है। सूचना सही थी। ठीक तीन बजे मुसोलिनी वहाँ पहुँचा और हिटलर ने उस का स्वागत किया। बारह बज कर बयालीस मिनट पर हुए विस्फोट और हत्याकांड का ही नहीं, अपने घावों और कमर की भयंकर पीड़ा का भी हिटलर के चेहरे पर कोई निशान न



था। उस ने मुसोलिनी का स्वागत सीधे खड़े रह कर किया। मुसोलिनी कुछ ही समय के लिए वहाँ ठहरा था। हिटलर उसे विदा करने के लिए वुल्फसलेयर के रेलवे-स्टेशन तक गया। वहाँ से लौट कर हिटलर अपने टी-हाउस में पहुँचा।

इस समय शाम के चार बजे थे। ठीक इसी समय बर्लिन में विद्रोह शुरू हुआ था। कीटेल ने हिटलर को विद्रोह की सूचना दी। हिटलर यह सुन कर आग-बबूला हो गया। बम-विस्फोट के बाद से उस ने अपने रोष को दबाये रखा था, मगर विद्रोह के समाचार से वह भड़क उठा था। अब तक संचार-व्यवस्था भी चालू हो चुकी थी। उस ने तुरंत गोयबिल्स से फोन मिलाया। उसे बहुत गालियाँ दीं। और डपट कर कहा कि फ्यूहरर के जिंदा होने का समाचार रेडियो से क्यों प्रसारित नहीं किया? गोयबिल्स ने नम्रता से कहा कि मैं इस भूल के लिए लज्जित हूँ और कोर्यनिसबर्ग से दूसरा ट्रांसमिटर मँगा कर यह समाचार अभी प्रसारित करता हूँ।

इधर से निबट कर हिटलर स्वयं विद्रोह के दमन में लग गया और कीटेल के साथ स्वयं भी टेलीप्रिंटर और फोन से संदेश भेजने लगा। उस ने अपने गुप्त सैनिक-संगठन को आदेश दे दिया कि वह तुरंत बर्लिन पहुँच कर विद्रोहियों का सफाया करे। हिटलर ने हिमलर को होम-आर्मी का नया कमांडर नियुक्त किया और तुरंत विमान से बर्लिन भेज दिया।

हिटलर ने आदेश जारी कर दिये कि विद्रोहियों को जान से मार डालो। यह मत देखो कि कोई कितना बड़ा अधिकारी है। इस समय देश का भाग्य दाँव पर है।

मार्टिन बोरमाँ, विदेशमंत्री जोशिम वान रिबेनट्राप और गोयरिंग भी टी-हाउस में आ गये। रिबेनट्राप और गोयरिंग में खूब झड़प हुई और दोनों इस विद्रोह के लिए एक-दूसरे को जिम्मेदार ठहराने लगे। पहले तो हिटलर यह सब सुनता रहा, बाद में वह दोनों पर खूब बरसा और उस ने दोनों को गालियाँ देते हुए कहा कि इस लापरवाही के लिए मैं तुम्हें कभी क्षमा नहीं करूँगा।

फील्ड-मार्शल वित्जलेबेन, जिसे क्रांतिकारी सरकार का प्रधान सेनापति होना था, निराश हो कर अपने साथी वैगनर से मिलने गया और उस के बाद घर लौट कर गेस्टापो के हाथों अपनी गिरफ्तारी की प्रतीक्षा करने लगा। वैगनर जानता था कि गिरफ्तारी का अर्थ है भयंकर यातना, अतः उस ने आत्महत्या कर ली।

रात को नौ बजे के लगभग ड्यत्श-लैंडसेंडर रेडियो (जरमन रेडियो) से घोषणा हुई कि थोड़ी ही देर में हिटलर राष्ट्र के नाम संदेश प्रसारित करेगा। घोषणा सुनते ही षड्यंत्रकारियों के पाँवों के नीचे से जमीन खिसकने लगी। उन्हें लगा कि कर्नल स्टाफेनबर्ग ने उन्हें धोखे में रखा है। हिटलर तो जिंदा है और इस का मतलब यह है कि अब उन की जान सुरक्षित नहीं है!

विद्रोहियों ने बैंडलेरस्ट्रास की सुरक्षा का काम ले. कर्नल हरबर को सौंप रखा था। हरबर ने जब यह सुना कि हिटलर रेडियो से बोलने वाला है तो उस ने फौरन रंग बदलने का निश्चय कर लिया। उस ने अपने मातहत अधिकारियों को इकट्ठा किया और शस्त्र एकत्रित करके बैंडलेरस्ट्रास के भीतर प्रवेश करने का आदेश दिया। रात के साढ़े ग्यारह बजने में कुछ ही मिनट बाकी थे कि हरबर अपने सैनिकों को ले कर जनरल उलब्रिख्त के दफ्तर में जा घुसा। वहाँ उन्होंने उलब्रिख्त और स्टाफेनबर्ग के भाई बर्टहोल्ड को पकड़ लिया। इसी समय स्टाफेनबर्ग वहाँ पहुँचा। जब उस ने यह सब देखा तो वहाँ से भागने की कोशिश की। हरबर ने उस पर गोली चलायी जिस से उस की रही-सही बायीं बाँह भी बेकार हो गयी।

स्टाफेनबर्ग को पकड़ने के बाद हरबर ने बैंडलेरस्ट्रास के सभी विद्रोही अधिकारियों को बंदी बना लिया। वह जनरल फ्रॉम के कमरे की ओर गया और वहाँ उस ने फ्रॉम को विद्रोहियों के हाथों से मुक्त किया।

जनरल फ्रॉम ने रिहा होते ही विद्रोहियों की गिरफ्तारी का आदेश दे दिया। फ्रॉम ने अपने पुराने मित्र और क्रांतिकारी सरकार के मनोनीत राष्ट्रपति जनरल बैक को यह अवसर दिया कि वह चाहे

तो गोली मार कर आत्महत्या कर सकता है। बैक यह सुन कर बेहोश हो गया। जनरल फ्रॉम ने घोषणा की कि उस ने चार अधिकारियों का कोर्टमार्शल करके उन्हें मौत की सजा दी है—स्वर्नहाइम, उलब्रिख्त, स्टाफेनबर्ग और हेफ्टन। सैनिक उन चारों को बाहर मैदान में ले आये और कारों की रोशनी में खड़ा करके उन्हें गोली से उड़ा दिया गया।

फ्रॉम के दफ्तर में जनरल बैक आत्महत्या की कोशिश कर रहा था, मगर उस का हर निशाना चूक जाता, ठीक वैसे ही जैसे विद्रोह का निशाना चूक गया था। अंत में एक सैनिक ने बैक की मदद की और गोली मार कर उसे हमेशा के लिए सुला दिया। विद्रोह तो खत्म हो गया पर हिटलर बदला लेने पर उतर आया।

गेस्टापो ने सारा जरमनी छान मारा। गुप्तचरों ने षड्यंत्र की बारीक-से-बारीक तफसील खोज निकाली। सात हजार लोगों को गिरफ्तार किया गया और पाँच हजार को मार डाला गया। वैगनर और बैक के अलावा कुछ अन्य अधिकारियों ने भी आत्महत्या कर ली। इन में फील्ड-मार्शल वान क्लूज और मेजर जनरल वान ट्रेसकोव के नाम उल्लेखनीय हैं। ट्रेसकोव ने तो यह सोच कर आत्महत्या की कि यदि उसे सताया गया तो हो सकता है कि उस के मुँह से साथियों के नाम निकल पड़ें।

वित्जलेबेन और गोएरडेलर पर मुकदमा चला। जिस समय वित्जलेबेन को अदालत के सामने लाया गया, उस के बनावटी दाँत निकाल दिये गये और पतलून की पेटी खोल दी गयी। इन लोगों को पियानो के तार से लटका कर फाँसी दी गयी और फिल्में उतारी गयीं जो बाद में हिटलर को दिखायी गयीं। कुछ समय बाद जनरल रोमेल की भी हत्या कर दी गयी।

टामस लिप्टन ने ग्लासगो में अपनी छोटी-सी दुकान खोली तो उसे विज्ञापन करने का नशा चढ़ा। एक दिन लोगों ने देखा कि सड़क पर सुबह-सुबह सात दुबले-पतले आदमी धीमी चाल से चले जा रहे हैं। प्रत्येक के हाथ में एक-एक बोर्ड था और उस पर लिखा था—'हम लिप्टन के यहाँ जा रहे हैं।' शाम को सात मोटे-ताजे आदमी तेज चाल से जाते दीखे। उन के हाथों में जो बोर्ड थे उन पर लिखा था—'हम लिप्टन के यहाँ से आ रहे हैं।" अब लोगों की समझ में आया, यह टामस लिप्टन का विज्ञापन था!

एक बार लिप्टन जहाज में यात्रा कर रहा था। जहाज में छेद हो जाने से चाय की पेटियाँ समुद्र में फेंक देनी पड़ीं। ब्रश और काली स्याही से उस ने हर पेटी पर तुरंत लिख दिया—लिप्टन की चाय पियें। दूसरे दिन पेटियाँ अलग-अलग किनारों पर जा लगीं।

प्रेरणा के मोरपंख

कवि---डॉ. कर्णसिंह; अनु.---राजेंद्र मोहन कौशिक; प्रकाशक---भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली; पृष्ठ---७८; मूल्य---४.००

जैसा कि प्रकाशकीय वक्तव्य से प्रकट है, इस संकलन में डॉ. कर्णसिंह की अँगरेजी में विरचित कविताओं के हिंदी अनुवाद संग्रहीत हैं। डॉ. कर्णसिंह जम्मू-कश्मीर के युवराज, सदरे-रियासत, राज्यपाल और केंद्रीय मंत्रिमंडल के सदस्य के रूप में तो सारी भारतीय जनता के लिए सुपरिचित हैं ही, साहित्यिकों के लिए वे डोगरी के सुमधुर गीतों के रचयिता के रूप में भी परिचित हैं।

इस संकलन में अँगरेजी से हिंदी में अनूदित कविताएँ पढ़ने के बाद किसी भी निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन है। एक तो कविता का एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद ही काफी कठिन कार्य है, फिर भारतीय वातावरण, भारतीय भावभूमि और भारतीय संस्कार से संपन्न एक भारतीय कवि द्वारा एक अभारतीय भाषा में लिखी कविताओं को फिर से किसी भारतीय भाषा में रूपांतरित करना तो बेहद जोखिम का काम है। लगता है, इस संग्रह की कविताएँ मूल कविताओं का शब्दानुवाद होने के कारण मूल से सर्वथा पृथक हो गयी हैं। अगर कवि, अनुवादक और प्रकाशक अनुवाद की प्रामाणिकता के दावेदार हों तो मुझे मन मसोस कर कहना होगा कि ये कविताएँ स्तरहीन हैं।

पूरे संग्रह में एक कविता 'बाग में सागर किनारे' ऐसी है जिस के साथ डॉ. कर्णसिंह का नाम फबता है। बाकी रचनाओं में जहाँ-तहाँ कुछ बिंब बिखरे हैं लेकिन वे भी अनुवाद के लिए खोजे गये शब्दों की भीड़ में दब-से गये हैं। संग्रह के उत्तरार्ध में कुछ घटनापरक कविताएँ हैं। इन में श्री लालबहादुर शास्त्री के निधन पर लिखी शोक-कविता अच्छी बन पड़ी है।

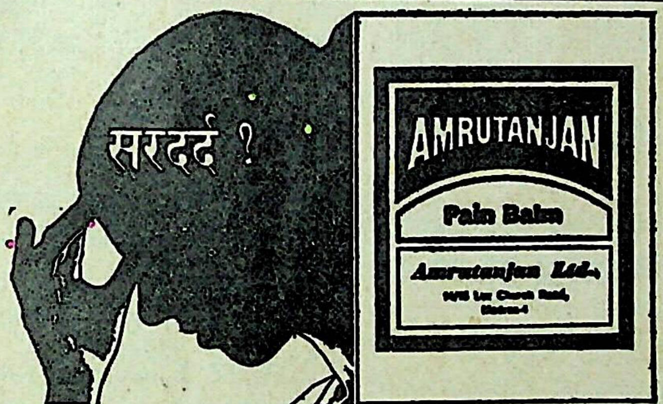
पुस्तक-वीथी

समीप और समीप

कवि — रमेश कौशिक; प्रकाशक—अक्षर प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली; पृष्ठ—८७; मूल्य—५.००

इस संग्रह की एक विशेषता तो यह है कि पुस्तक शीर्षस्थ हिंदी कवि श्री सुमित्रानंदन पंत को समर्पित है और इस की भूमिका वरिष्ठ कवि डॉ. बच्चन ने लिखी है। असल में हिंदी में शब्द-बोझिल और शिल्पहीन कविता के समारंभ का जितना श्रेय पंतजी को है, कविता को पथभ्रमित करने का उतना ही गौरव बच्चनजी को प्राप्त है।

बच्चनजी बहुत अच्छे कवि हैं, पर खराब कविता को प्रोत्साहन देना या तो उन की 'हावी' है या वे जानबूझ कर ऐसा करते हैं ताकि इतिहास यह कह सके कि बच्चनजी के बाद जो चर्चित बनी वह केवल खराब कविता थी। जहाँ तक मुझे याद है बच्चनजी ने किसी भी अच्छे



काव्य-संकलन की भूमिका या तो लिखी ही नहीं और अगर लिखनी पड़ी तो उस की कविताओं पर अपनी कविता के अनुकरण का तमाचा जड़ दिया।

लेकिन बच्चनजी ने इस संकलन की कविताओं की जब प्रशंसा की है तो समीक्षक के लिए कुछ भी कहने की गुंजाइश नहीं रह गयी। 'अस्तित्ववाद'-जैसी एक-दो छोटी कविताओं को छोड़ कर बाकी सभी कविताएँ ऐसी लगती हैं जैसे किसी एक ही टकसाल में ढले अल्युमिनियम के एक ही मूल्य के विभिन्न आकार के सिक्के हों।

कौशिकजी ने जो अच्छी कविताएँ लिखी थीं, वे इस संकलन में नहीं हैं।

प्रणाम

कवि—कन्हैयालाल सेठिया; प्रकाशक—आर्यावर्त्त प्रकाशन गृह, सुजानगढ़; पृष्ठ—४५, मूल्य — ४.००

इस पुस्तक में राजस्थान के हिंदी के सुपरिचित कवि श्री कन्हैयालाल सेठिया की ४४ रचनाएँ संकलित हैं। सभी कविताएँ मँजे हुए शिल्प से संपन्न हैं, लेकिन इन में बोझिलता अधिक है। कविता का एक कार्य जटिल दर्शन को सरल अभिव्यक्ति दे कर सहजग्राह्य बनाना है। सेठियाजी ने इस आवश्यकता को पूरा करना अपना दायित्व नहीं समझा। इस के बावजूद संग्रह की कविताएँ गंभीर पाठक के लिए अपना महत्त्व रखती हैं।

कर्ता बना सिद्ध कर्म ही
जब अकर्म बनता है
मुक्ति नहीं कुछ और मात्र वह
प्रज्ञा की थिरता है

ऐसी पंक्तियाँ मेरे कथन की साक्षी हो सकती हैं।

कुल मिला कर इस संग्रह को एक उपलब्धि माना जायेगा। इस के माध्यम से सेठियाजी का राजस्थान के हिंदी कवियों में एक विशिष्ट स्थान बनता है।

मुद्रण बहुत रमणीय हुआ है।

—रामावतार त्यागी,
एम—६६ बी, मालवीयनगर, नयी दिल्ली

प्राप्ति-स्वीकार

जेबकतरे : उपन्यासकार—अमृता प्रीतम; अनुवादक—केवल सूद; प्रकाशक—राजपाल एंड संस, कश्मीरीगेट, दिल्ली; पृष्ठ—१२५; मूल्य—४.००

नौकर : उपन्यासकार—शंभुनाथ 'आशुतोष'; प्रकाशक—विद्या मंदिर लिमिटेड, १२।९० कनॉट सर्कस, नयी दिल्ली; पृष्ठ—४५२; मूल्य—१५.००

एकवीरा : उपन्यासकार—विश्वनाथ सत्यनारायण; अनुवादक—अंबडिपूडि हनुमय्या; प्रकाशक—दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास; पृष्ठ—१९१; मूल्य—३.२५

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

श्रीमानजी





